



पत्रकारिता सबन्धी विधि पुस्तकों में प्रथम महत्व की एक उपयोगी पुस्तक

जी एल गर्ग की टिप्पणियों सहित  
प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867  
और साथ में प्रेस परिषद अधिनियम 1978

अद्यपर्यन्त यथासशोधित

मुद्रण यंत्र संचालन

पुस्तक प्रकाशन

सम्पादन-पत्र प्रकाशन

पत्रकारिता मानदंड

उच्चतम न्यायालय व  
विभिन्न उच्च न्यायालयों तथा प्रेस परिषद  
के निर्णयों से युक्त व्याख्यात्मक टिप्पणियाँ रेडी रिक्कोर के  
रूप में विभिन्न तालिकाएँ व प्रपत्र तथा साथ में  
कई प्रकार के इन्डेक्स दोनों अधिनियमों पर  
चुने हुए प्रश्न सहित ।

गोवर्धन लाल गर्ग

1989

प्रकाशक

अद्वितीय प्रकाशन

वासुदेव भवन, गगापुर सिटी ( राज ) 322 201  
दूरभाष 309/176

G L GARG KEE TIPPANIYO  
SAHIT PRESS AUR PUSTAK  
REGISTRIKARAN  
ADHINIYAM 1867

© सर्वाधिकार लेखक के पास  
सुरक्षित है।

लेखक

गोवधनलाल गग

वासुदेव भवन

मगापुर सिटी (राज) 322 201

दूरभाष 309, 176

प्रकाशक

(श्रीमती) सुशीलादेवी गग

स्वत्वाधिकारी

अद्वितीय प्रकाशन

वासुदेव भवन

मगापुर सिटी (राज) 322 201

दूरभाष 309, 176

मुद्रक

जयपुर प्रिंटस प्रा लि

एम घाई रोड, जयपुर

(राज) 302 001

दूरभाष 73822 62468

मूल्य रु 125/

(सजिल्द)

प्रथम संस्करण

अक्टूबर 1989

प्रतियां - 2000

इस पुस्तक के अर्थों को निम्नप्रकार  
उद्धरित किया जा सकता है -

“जी एल गग का प्र पु अधि  
प्रथम संस्करण 1989 देखिए पृ स ”

## ज्ञानव्य हो

इस पुस्तक में 'प्रेस परिपद अधि 1978',  
प्रेस परिपद जाच (प्रक्रिया) विनियम 1979 के  
मूल हिंदी पाठ व प्रेस परिपद को 'शिवायत कसे  
करें' नामक आलेख प्रेस परिपद की वार्षिक रपट  
1987 से तथा केन्द्रीय अधिसूचना दिनांकित  
जुलाई 15, 1981 का मूल हिंदी पाठ प्रेस परिपद  
की वार्षिक रपट 1981 से हूबहू लिया गया है।  
केन्द्रीय अधिसूचना दिनांकित मार्च 14, 1988\*  
का हिंदी अनुवाद स्वयं लेखक ने किया है।

प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि 1867\*  
का हिंदी मूल पाठ राजस्थान राजपत्र भाग 5(ब)  
दि 5 5 60 से लिया गया है जो 1 4 56 तक  
ही रूपभेदित था। हिंदी में अद्यप्यन्त यथा  
सशोधित प्रति उपलब्ध न होने के कारण रा-यो  
द्वारा किए गए सशोधना सहित इसकी अधिकांश  
घाराओं तथा प्रेस और रजिस्ट्रीकरण अपीलेंट बाड  
व्यवहार और प्रक्रिया आदेश 1961\* व समाचार-  
पत्रों का पंजीकरण (केन्द्रीय नियम) 1956\* के  
अध्यायी के मूल पाठों का हिंदी अनुवाद स्वयं लेखक  
ने किया है।

अत प्रतिनिध्याधिकार अधि 1957 की धारा  
52 (घार) के तहत यह कथन अवगत हो कि  
लेखक द्वारा \* से चिह्नित का हिंदी अनुवाद सरकार  
द्वारा प्रमाणित अनुवाद के रूप में प्राधिकृत या  
स्वीकृत नहीं है। अत लेखक का पाठकों से निवेदन  
है कि वे इन्हें लेखकीय टिप्पणियों के रूप में ही लें।

- लेखक

## आमुख

इस पुस्तक के लेखक श्री गावधनलाल गंग का मुझसे सवप्रथम परिचय सन् 1973 में हुआ था जब ये जयपुर में उच्च न्यायालय की पीठ स्थापित किये जाने की मांग को लेकर राज्य के वकीलो द्वारा चलाये जा रहे आन्दोलन के सिलसिले में अभिभाषक सघ गंगापुर सिटी के सचिव की हैसियत से आन्दोलन के लिए बनी सघप समिति की बैठकों में भाग्य करते थे। मैं उस समय इस सघप समिति में सयोजक अध्यक्ष पद पर कार्य कर रहा था। बाद में श्री गंग ने अपने द्वारा तैयार की गई एक मॉटवार्ता—“वकीला की बहानी वकीलो की जुबानी” जो साप्ताहिक हिंदुस्तान (8 सितम्बर, 1974) के साथ-साथ कई प्रतिष्ठित दैनिक समाचारपत्रों में भी प्रकाशित हुई थी, में मुझे भी शामिल किया था।

मैंने श्री गंग की इस पुस्तक की पाण्डुलिपि को पढ़ा है। पढ़ने के बाद मैं इस निष्पत्ति पर आया हूँ कि हिंदी में इस तरह की पुस्तक केवल विरले लोग ही लिख सकते हैं। पुस्तक को पढ़ने के बाद लेखक की प्रतिभा से प्रभावित हुए बिना नहीं रहा जा सकता। लेखक के इस दावे की कि इस विषय पर हिंदी में इस प्रकार की टीका पुस्तक अभी तक लिखी ही नहीं गयी, की पुष्टि में कम से कम मैं अपने बारे में कह सकता हूँ कि मैंने अपनी 25 वर्ष की अभिभाषकीय अवधि में अभी तक इस विषय पर इस प्रकार की अलग से विस्तृत टीका पुस्तक हिंदी में तो क्या अंग्रेजी में भी नहीं देखी। उपयुक्त ही यह होगा कि एक बेजोड़ विषय चयन करने के लिए भी इन्हे बधाई दी जाए।

वस्तुतः यह पुस्तक तैयार करके लेखक ने अभियोजन और बचाव पक्ष दोनों को ही एक एक तलवार सौंप दी है तो साथ में एक एक ढाल भी। यही पुस्तक निर्णायक पक्ष से तय करा सकेगी कि कौन दायी है और कौन निर्दोष।

जहाँ 'प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867' नये-नये समाचार-पत्रों व पत्रिकाओं के प्रकाशन को प्रोत्साहित करेगा वहाँ 'प्रेस परिष्कार अधिनियम 1978' ऐसे नये प्रकाशकों को साथ में, पुराने प्रकाशकों को भी पत्रकारिता का मानदण्ड बनाये रखने को प्रोत्साहित करेगा। कहीं ऐसा न हो कि लोग नये-नये

समाचारपत्र व पत्रिकाएँ तो निकालने लगे लेकिन वे पत्रकारिता के मानदंड की उपेक्षा कर बढे, इसी खतरे को भापते हुए श्री गग ने अपनी इस पुस्तक में इन दोनों अधिनियमों को एक साथ जो शामिल किया है, यह जहाँ श्री गग की दूर दृष्टि का प्रतीक है वहाँ यह इनकी पत्रकारिता के प्रति सत्यनिष्ठा को भी उजागर करता है। ठीक भी है जो नय-नय निर्माण हो वे विध्वंसकारी क्यों हो ?

मैं श्री गग के इस प्रयास को अतस्तल से प्रशंसा करता हूँ और इनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

महाधिवक्ता, राजस्थान  
स्टेशन रोड जयपुर  
अगस्त 18, 1989

दिनेशचंद स्वामी  
एडवोकेट, भू०पू० राज्यसभा सदस्य

## लेखकीय प्राक्कथन

प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 पर एक "टीका-पुस्तक" लिखने के लिए मैं विशेषकर निम्न दो बातों से प्रेरित हुआ -

- (क) विभिन्न पत्रकार अधिवेशनों में समय समय पर इस प्रकार की पुस्तक की आवश्यकता महसूस किये जाने पर
- (ख) सन् 1975-76 में आपात्काल के दौरान कायकारी मजिस्ट्रेटम द्वारा हजारों समाचारपत्रों विशेषकर सधु समाचारपत्रों के घोषणा-पत्र निरस्त किये जाने पर।

आपात्काल में जिन हजारों समाचारपत्रों के घोषणा-पत्र निरस्त किए गए थे उनमें से अधिकांश के घोषणा-पत्र कानूनन निरस्त करने योग्य ही थे। फल इतना ही पड़ा कि सरकार ने इन घोषणा पत्रों को आपात्काल में निरस्त करने का फसला लिया अर्थात् वे सामान्य स्थिति में भी निरस्त होने योग्य थे।

उक्त दो बातों से मैं सोचने लगा कि क्यों नहीं इस अधि पर एक ऐसी 'गाइड बुक' तैयार की जावे जो समाचारपत्रों के मालिकों का इस कानून के तहत अपने अपने समाचारपत्रों को 'अपटूडेड' रखने में सहायक सिद्ध हो। ऐसी 'साथी पुस्तक' का प्रकाशन विशेष कर हिंदी भाषा में इस पुस्तक से पूर्व मेरी निगाह में कहीं देखने को आया भी नहीं। ऐसे में तो मुझे इस पुस्तक की 'मार्केट वेल्यू' और भी अधिक नजर आई।

आज भी मेरा ऐसा मानना है कि हजारों समाचारपत्र/पत्रिकाओं के घोषणा-पत्र अब भी अक्षय चले आ रहे हैं जिन्हें कभी भी निरस्त किया जा सकता है अर्थात् ऐसे समाचारपत्रों के मालिकों पर डेमोकलस (एक अंग्रेजी उपन्यास का पात्र) की नगी तलवार निरंतर लटकी हुई है।

दूसरी तरफ यह भी एक सच है कि कई जिला/मिट्रोपालिटान/उपखंड मजिस्ट्रेट्स को इस बात का ज्ञान नहीं है कि घोषणा-पत्रों के प्रमाणिकरण के समय किन कानूनी प्रतियों को पूरा करना आवश्यक होता है तथा घोषणा-पत्रों को किन आधारों पर निरस्त किया जा सकता है। परिणाम यह होता है कि ऐसे मजिस्ट्रेट्स शुरू में ही घोषणा-पत्रों को गलत ढंग से प्रमाणित कर देते हैं और गलत आधारों पर घोषणा-पत्रों को निरस्त कर देते हैं।

इस सबका यह मतलब नहीं कि ऐसे मजिस्ट्रेट्स को कोई कानूनी ज्ञान नहीं। यह सब कुछ इस अधि पर एक 'टीका-पुस्तक' के अभाव के कारण हो रहा है।

कई प्रकाशक विशेषकर मध्यम व बड़े समाचारपत्रों के, प्रेस कानून के बारे में अपनी मूल्यांकन अधिकांश ही मापे हुए हैं जबकि वास्तविकता में स्थिति ठीक-तससे उलटी है। उनके प्रकाशन प्रेस कानूनों के संघर्ष में बहुत खामियां रखते हैं, बावजूद इस तथ्य के कि उनके प्रकाशन लाया गया था बजट रखते हैं। ऐसा ही बड़े-बड़े छापाखाना व पुस्तक प्रकाशकों के यहाँ भी हो रहा है।

पत्रकारिता में 25 वर्ष और कानून में 22 वर्ष का व्यावहारिक ज्ञान रखने के कारण मैं अधिकारिक रूप से कह सकता हूँ कि एक छोटी-सी लापरवाही समाचारपत्र प्रकाशन, मुद्रणयंत्र संचालन और पुस्तक प्रकाशन को धक्का पहुँचा सकती है। इन तीनों वर्गों को यह याद रखना चाहिए कि सफलता का रास्ता अपने से संबंधित कानूनी ज्ञान से निरंतर विज्ञान बने रहने का ही रास्ता है।

हिंदी में कानून संबंधी पुस्तक लिखना बड़ा कष्टसाध्य काम होता है क्योंकि नवीनतम कानूनी प्रावधानों का अधिकृत हिंदी अनुवाद मिलना मुश्किल होता है। इस पुस्तक के संघर्ष में, मेरे साथ भी यही हुआ। जिन जिन प्रावधानों का अधिकृत हिंदी अनुवाद मुझे मिला उनकी अद्ययत करने के लिए मुझे मेरी तरफ से हिंदी में अनुवाद करना पड़ा।

जो लोग हिंदी के मूल पाठों की विलम्बता से घबरे हुए प्रस्तुत विषय का मात्र सतही ज्ञान करना चाहते हैं, उन्हें मेरी सलाह है कि वे मात्र मेरी टिप्पणियाँ तथा मेरे द्वारा तयार की गई सामग्री, जैसे - सुभाषात्मक प्रपत्र व विभिन्न तालिकाएँ आदि ही पढ़ लें, उन्हें उनका उद्देश्य पूरा होता नजर आयेगा।

टिप्पणियाँ लिखते समय मैंने इस बात का विशेष ध्यान रखा है कि वे टिप्पणियाँ न केवल हिंदी के मूल पाठों से ही सगत हों बल्कि वे टिप्पणियाँ अंग्रेजी के मूल पाठों से भी सगत हों।

'प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रेशन अधि 1867 प्रेस से संबंधित सभी कानूनों में प्रथम महत्व का कानून है। विभिन्न प्रेस संबंधी कानूनों में से सिर्फ 'प्रेस परिषद् अधिनियम 1978 को ही मैंने इस कानून के साथ जो शामिल किया है उसके भी निम्न दो कारण हैं -

(क) यह विचार रखते हुए कि इस पुस्तक के जारी होने के पश्चात् निश्चित रूप से नए समाचारपत्रों/पत्रिकाओं की शुरुआत बढ़ेगी। सिर्फ नए समाचारपत्र/पत्रिकाओं की ही बढ़ोतरी क्या ही, इनके स्तर में भी तो बढ़ोतरी

होनी चाहिए और प्रेस परिषद् अधि यह सब कुछ प्रदान करता है। यदि एक पुस्तक नए समाचारपत्रों के प्रकाशन को प्रोत्साहित करती है तो उसे पीली पत्रकारिता अपनाने वालों को निरस्तहित भी करना चाहिए। वास्तव में, भारत में प्रेस के विकास के लिए नये नये समाचारपत्रों/पत्रिकाओं में बढोतरी होनी चाहिए बशर्ते वे पत्रकारिता का स्तर बनाये रहें।

(ख) विश्वविद्यालय व अन्य संस्थाएँ जो पत्रकारिता में डिप्लोमा या डिग्री का कोर्स आयोजित करते हैं उनको इन कोर्सों में 'पत्रकारिता से संबंधित भारतीय कानून' नामक एक प्रश्न पत्र रखना चाहिए, जिसके दो भाग हों। प्रथम भाग में प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि 1867 तथा प्रेस परिषद् अधि 1978 और इनके तहत बने नियम/विनियम शामिल हों। द्वितीय भाग में प्रतिलिप्याधिकार अधि 1957, सरकारी गोपनीयता अधि 1923, अदालत की अवमानना अधि 1971, और ससदीय कायबाही (प्रकाशन से सुरक्षा) अधि 1977 आदि शामिल हों। मैंने इस पुस्तक का इस प्रस्तावित प्रश्न-पत्र के प्रथम भाग की दृष्टि से भी एक आदेश पुस्तक बनाने का प्रयास किया है। यही कारण है कि मैंने इसमें इन दोनों अधिनियमों पर डेर सार चुने हुए प्रश्न भी दे दिये हैं।

चूँकि प्रेस पु अधि की विषयवस्तु - (i) मुद्रणपत्रों (ii) समाचारपत्रों और (iii) पुस्तकों को समेटे हुए हैं। इसलिए इन तीनों से सीधे संबंधित वग जमे नए मुद्रणपत्रों को खोलने के इच्छुक या वर्तमान में मुद्रणपत्रों के धारक, नए समाचारपत्रों/पत्रिकाओं को शुरू करने के इच्छुक या वर्तमान में समाचारपत्र/पत्रिकाओं के मालिक/प्रकाशक/संपादक/मुद्रक तथा नई पुस्तक प्रकाशित करने के इच्छुक या वर्तमान में पुस्तक प्रकाशन में कार्यरत लोगों के साथ साथ इस अधि की पालना कराने व इसका उल्लंघन करने वालों को दण्डित करने वाली मशीनरी से संबंधित लोग - जनसंपर्क अधिकारी, एडवोकेटस व जिला/उपखंड/मेट्रोपालिटान मजिस्ट्रेटस के लिए भी यह पुस्तक अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रेस अधि के शामिल किए जाने के कारण यह पुस्तक पत्रकारों के सभी वर्गों - भ्रमजीवी पत्रकार, संपादक सहायक, रिपोटर, स्टाफ लेखक, फोटोग्राफर, कानूनिस्ट आदि के साथ साथ सरकारी अफसर, जन प्रतिनिधियों व सामाजिक कार्यकर्ताओं में से वे लोग जो पीली पत्रकारिता से पीड़ित हैं, के लिए भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रेस की आजादी के पक्षधर - राजनीतिज्ञों, सामाजिक कार्यकर्ताओं व अन्य विचारकों के लिए तो यह पुस्तक एक अछि-खासी तथ्यात्मक जानकारी देने वाली सिद्ध होगी।



मेरा मानना है कि यदि मैं मात्र एडवोकेट ही होता अथवा मात्र पत्रकार ही होता तो ऐसी पुस्तक नहीं लिख पाता। यह सब कुछ एडवोकेट के साथ-साथ पत्रकार होने के कारण हुआ है। पत्रकार जगत व जनता के अर्थ लोग किस प्रकार की जानकारियाँ प्राप्त करना चाहते हैं, इन सबसे मैं पत्रकार होने के नाते ही विज्ञ हो पाया और उन जानकारियों को बानूनी दृष्टि से किस प्रकार प्रस्तुत किया जाय, इन सबसे मैं एडवोकेट होने के नाते ही विज्ञ हो पाया।

इस पुस्तक को तयार करने के दौरान मेरे से डिक्टेशन लेने, रफ कॉपी को फेर कर लेना तथा फिर उन्हें टाइप करने आदि का काय मेरे ज्येष्ठ पुत्र सद्भाव भाय, एम काम, पी जी डी जे ने किया। जब मैं कभी कुछ आलस्य करने लगता तो यही युवा मेरा उत्साहवधन करता और मुझे लिखने को बाध्य कर देता। ऐसे में, मैं इस युवा का आभार प्रकट किये बिना कैसे रह सकता हूँ। क्या एक पिता आसाधारण मामलों में अपने पुत्र के प्रति आभार प्रकट नहीं कर सकता ?

पाठकों के सम्मुख बड़ी नम्रता के साथ यह पुस्तक मैं इस आशा और विश्वास के साथ प्रस्तुत कर रहा हूँ कि पाठकगण मुझे अपने अमूल्य सुझावों से परिचित करायें जो इस पुस्तक के अगले संस्करण को और अधिक सवारने में मददगार सिद्ध हों।

श्री. एन. एन. एन.

वासुदेव भवन, गंगापुर सिटी

दूरभाष 309, 176

अगस्त 15, 1989

(गोबधनलाल गग)

संस्थापक संपादक - प्रजाजन (हि. द.)

## सक्षेपरणो की व्याख्या

अधि	धा	मुद्रण व रजिस्ट्रीकरण
- अधिनियम	- धारा	अपीलेंट बोर्ड (व्यवहार
आ वे	धा स	व प्रक्रिया) आदेश
- आदेश सख्या	- धारा सख्या	1961
आ प्रे	नि दि	मा व स
- आन्ध्र प्रदेश	- नियम दिनांक	- भारतीय दंड संहिता
आई एल आर	नि स	मा प्रे प
- इंडियन लॉ रिपोर्ट स	- नियम सख्या	- भारतीय प्रेस परिषद्
आर एल इन्सू	प व	म प्र
- राजस्थान ला वीक्ली	प व	- मध्यप्रदेश
आर एन आई	- पश्चिम बंगाल	मु पु अधि
- रजिस्ट्रार ऑफ यूज	पृ	- मुद्रण व पुस्तक
पेपस फार इंडिया	पृ स	रजिस्ट्रीकरण अधि
ए	- पृष्ठ सख्या	नियम 1867
ए आई आर	प्रे पु अधि	अथवा
- ऑल इंडिया रिपोटर	- प्रस और पुस्तक रजिस्ट्री	प्रेस और पुस्तक रजि
एस डी एम	करण अधिनियम 1867	स्ट्रीकरण अधिनियम
- सब डिविजनल मजिस्ट्रेट	अथवा	1867
फ स	मुद्रण व पुस्तक रजिस्ट्रीकरण	मु र अ बो (व्य प्र) आ
- क्रम सख्या	अधिनियम 1867	- मुद्रण व रजिस्ट्रीकरण
के नि	प्र न	अपीलेंट बोर्ड (व्यव
- समाचारपत्रों का पजी	- प्रश्न नम्बर	हार व प्रक्रिया आदेश
यन (केन्द्रीय) नियम	प्रे प	1961
1956	- प्रेस परिषद्	अथवा
श्री आर	पु प्र नियम	प्रेस और रजिस्ट्रीकरण
- श्रीमिनल रिपोर्ट्स	- पुस्तक प्रदान (सावजनिक	अपीलेंट बोर्ड (व्यव
श्री एल जे	पुस्तकालय) नियम 1955	हार व प्रक्रिया) आदेश
- श्रीमिनल लॉ जनल	पो आर ए बो	1961
स पो	- प्रेस एण्ड रजिस्ट्रीकरण	रा नि
स पो	अपीलेंट बोर्ड	राज नि
- सठपीठ	पो सी (पो ए) आर	- राजस्थान प्रेस एण्ड
ज प्र	- प्रेस बारन्सिल (प्रोसीजर	रजिस्ट्रेशन आफ बुक्स
- जनप्रतिनिधित्व	ऑफ इन्वॉयरी) रुल्स	रुल्स 1951
अधिनियम	1979	वि स
वे	प्रे अ बो (व्य प्र) आ	- विनियम सख्या
- देखिए	- प्रेस और रजिस्ट्रीकरण	वा रि
द प्र स	अपीलेंट बोर्ड (व्यवहार व	- वार्षिक रिपोर्ट
- दंड प्रक्रिया संहिता	प्रक्रिया) आदेश 1961	हि प्र
दि	अथवा	- हिमाचल प्रदेश
- दिनांक		

धारा सं		पृष्ठ सं
8	(न) वह व्यक्ति जिसका नाम सम्पादक के रूप में अनुद्धत प्रकाशित हो गया है मजिस्ट्रेट के सामने घोषणा कर सकेगा।	041
8	(ख) घोषणा का निरस्तीकरण	042
8	(ग) अधील	050

### भाग 3

#### पुस्तकों का परिदान

9	इस अधिनियम के प्रारम्भ के पश्चात् मुद्रित पुस्तकों की प्रतिया सरकार को मूल्य लिये बिना परिदत्त की जायेंगी	052
10	धारा 9 के अधीन परिदान की गई प्रतियों के लिये पावती	056
11	धारा 9 के अधीन परिदान की गई प्रतियों का व्यय	057
11	(क) भारत में मुद्रित समाचारपत्र की प्रतिया सरकार को मूल्य लिये बिना परिदत्त की जायेंगी	059
11	(ख) समाचारपत्रों की प्रतिया प्रेस रजिस्ट्रार को परिदत्त की जायेंगी	060

### भाग 4

#### शास्तियां

12	धारा 3 के नियम के प्रतिबूल मुद्रण के लिये शास्ति	062
13	धारा 4 द्वारा अपेक्षित घोषणा किये बिना मुद्रणपत्र रखने के लिये शास्ति	065
14	मिथ्या कथन करने के लिये दंड	066
15	नियमों के अनुवर्तन के बिना समाचारपत्र मुद्रित या प्रकाशित करने के लिये शास्ति	067
15	(क) धारा 8 के अधीन घोषणा करने में असफल रहने के लिये शास्ति	067
16	पुस्तकों का परिदान न करने या मुद्रक को मानचित्रों का प्रदाय न करने के लिये शास्ति	067
16	(क) सरकार को समाचारपत्रों की प्रतिया मूल्य लिये बिना परिदत्त करने में असफल रहने के लिये शास्ति	069
16	(ख) प्रेस रजिस्ट्रार को समाचारपत्रों की प्रतिया परिदत्त करने में असफलता के लिये शास्ति	069
17	जन्त की गई राशियों की बमूली और उनका व्यय	070

## भाग 5

धारा स	पुस्तकों का रजिस्ट्रीकरण	पृष्ठ स
18	पुस्तका के शापना का रजिस्ट्रीकरण	071
19	रजिस्ट्रीकृत शापन का प्रकाशन	072

## भाग 5 (क)

### समाचारपत्रों का रजिस्ट्रीकरण

19	(क) प्रेस रजिस्ट्रार तथा अन्य पदाधिकारियों की नियुक्ति	073
19	(ख) समाचारपत्रों का रजिस्ट्रार	073
19	(ग) रजिस्ट्रीकरण के प्रमाण-पत्र	074
19	(घ) समाचारपत्रों द्वारा दिये जाने वाले वार्षिक विवरण, इत्यादि	074
19	(ङ) समाचारपत्रों द्वारा दी जाने वाली विवरणियाँ और प्रतिवेदन	074
19	(च) अभिलेखों तथा दस्तावेजों तक पहुँच का अधिकार	074
19	(छ) वार्षिक प्रतिवेदन	075
19	(ज) रजिस्ट्रार के उद्धारणों की प्रतियाँ देना	075
19	(झ) शक्तियों का प्रत्यायोजन	075
19	(ञ) प्रेस रजिस्ट्रार तथा अन्य पदाधिकारी लोकसेवक होंगे	075
19	(ट) धारा 19 घ या 19 ङ इत्यादि के उल्लंघन के लिये शास्ति	075
19	(ठ) जानकारी के अनुचित संप्रकटीकरण के लिये शास्ति	076

## भाग 6

### प्रकीर्ण

20	नियम बनाने की शक्ति	080
	प्रकाशन	080
20	(क) केन्द्र सरकार की नियम बनाने की शक्ति	081
20	(ख) इस अधिनियम के तहत बने नियम निर्धारित कर सकते हैं कि इनका उल्लंघन दंडनीय होगा	083
21	किसी विशेष प्रकार की पुस्तका की इस अधिनियम के प्रवर्तन से अपवर्जित करने की शक्ति	084
22	(विस्तार)	085
23	(निरस्तित)	085

धारा स		पृष्ठ स
8	(क) वह व्यक्ति जिसका नाम सम्पादक के रूप में अशुद्धत प्रकाशित हो गया है मजिस्ट्रेट के सामने घोषणा कर सकेगा ।	041
8	(ख) घोषणा का निरस्तीकरण	042
8	(ग) अपील	050

### भाग 3

#### पुस्तकों का परिदान

9	इस अधिनियम के प्रारम्भ के पश्चात् मुद्रित पुस्तक की प्रतिया सरकार को मूल्य लिये बिना परिदत्त की जायेंगी	052
10	धारा 9 के अधीन परिदान की गई प्रतियों के लिये पावती	056
11	धारा 9 के अधीन परिदान की गई प्रतियों का व्ययन	057
11	(क) भारत में मुद्रित समाचारपत्र की प्रतिया सरकार को मूल्य लिये बिना परिदत्त की जायेंगी	059
11	(ख) समाचारपत्रों की प्रतिया प्रेस रजिस्ट्रार को परिदत्त की जायेंगी	060

### भाग 4

#### शास्तिया

12	धारा 3 के नियम के प्रतिकूल मुद्रण के लिये शास्ति	062
13	धारा 4 द्वारा अपेक्षित घोषणा किये बिना मुद्रणयत्र रखने के लिय शास्ति	065
14	भिष्या कथन करने के लिये दंड	066
15	नियमों के अनुवतन के बिना समाचारपत्र मुद्रित या प्रकाशित करने के लिये शास्ति	067
15	(क) धारा 8 के अधीन घोषणा करने में असफल रहने के लिये शास्ति	067
16	पुस्तकों का परिदान न करने या मुद्रक की मानचित्रों का प्रदाय न करने के लिये शास्ति	067
16	(क) सरकार को समाचारपत्रों की प्रतिया मूल्य लिये बिना परिदत्त करने में असफल रहन के लिये शास्ति	069
16	(ख) प्रेस रजिस्ट्रार को समाचारपत्रों की प्रतिया परिदत्त करने में असफलता के लिये शास्ति	069
17	जन्त की गई राशिया की दमूली और उनका ध्ययन	070

## भाग 5

धारा स	पुस्तकों का रजिस्ट्रीकरण	पृष्ठ स
18	पुस्तका के शापनो का रजिस्ट्रीकरण	071
19	रजिस्ट्रीकृत शापन का प्रकाशन	072

## भाग 5 (क)

### समाचारपत्रों का रजिस्ट्रीकरण

19	(क) प्रेस रजिस्ट्रार तथा अन्य पदाधिकारियों की नियुक्ति	073
19	(ख) समाचारपत्रों का रजिस्टर	073
19	(ग) रजिस्ट्रीकरण के प्रमाण-पत्र	074
19	(घ) समाचारपत्रों द्वारा दिये जाने वाले वार्षिक विवरण, इत्यादि	074
19	(ङ) समाचारपत्रों द्वारा दी जाने वाली विवरणियाँ और प्रतिवेदन	074
19	(च) अभिलेखों तथा दस्तावेजों तक पहुँच का अधिकार	074
19	(छ) वार्षिक प्रतिवेदन	075
19	(ज) रजिस्टर के उद्धरणों की प्रतियाँ देना	075
19	(झ) शक्तियों का प्रत्यायोजन	075
19	(झ) प्रेस रजिस्ट्रार तथा अन्य पदाधिकारी लोकसेवक होंगे	075
19	(ट) धारा 19 घ या 19 ङ इत्यादि के उल्लंघन के लिये शास्ति	075
19	(ठ) जानबूझी के अनुचित संप्रकटीकरण के लिये शास्ति	076

## भाग 6

### प्रकीर्ण

20	नियम बनाने की शक्ति प्रकाशन	080 080
20	(क) केन्द्र सरकार की नियम बनाने की शक्ति	081
20	(ख) इस अधिनियम के तहत बने नियम निर्धारित कर सकते हैं कि इनका उल्लंघन दंडनीय होगा	083
21	किसी विशेष प्रकार की पुस्तकों को इस अधिनियम के प्रबलन से अपवर्जित करने की शक्ति	084
22	(विस्तार)	085
23	(निरस्तित)	085

धारा स		पृष्ठ स
8	(क) वह व्यक्ति जिसका नाम सम्पादक के रूप में अशुद्धत प्रकाशित हो गया है रजिस्ट्रार के सामने घोषणा कर सकेगा।	041
8	(ख) घोषणा का निरस्तीकरण	042
8	(ग) अपील	050

### भाग 3

#### पुस्तकों का परिदान

9	इस अधिनियम के प्रारम्भ के पश्चात् मुद्रित पुस्तकों की प्रतियां सरकार को मूल्य लिये बिना परिदत्त की जायेंगी	052
10	धारा 9 के अधीन परिदान की गई प्रतियों के लिये पावती	056
11	धारा 9 के अधीन परिदान की गई प्रतियों का व्ययन	057
11	(क) भारत में मुद्रित समाचारपत्र की प्रतियां सरकार को मूल्य लिये बिना परिदत्त की जायेंगी	059
11	(ख) समाचारपत्रों की प्रतियां प्रेस रजिस्ट्रार को परिदत्त की जायेंगी	060

### भाग 4

#### शास्तिया

12	धारा 3 के नियम के प्रतिबूल मुद्रण के लिये शास्ति	062
13	धारा 4 द्वारा अपेक्षित घोषणा किये बिना मुद्रणयंत्र रखने के लिये शास्ति	065
14	मिथ्या कथन करने के लिये दंड	066
15	नियमों के अनुवर्तन के बिना समाचारपत्र मुद्रित या प्रकाशित करने के लिये शास्ति	067
15	(क) धारा 8 के अधीन घोषणा करने में असफल रहने के लिये शास्ति	067
16	पुस्तकों का परिदान न करने या मुद्रक को मानचित्रों का प्रदाय न करने के लिये शास्ति	067
16	(क) सरकार को समाचारपत्रों की प्रतियां मूल्य लिये बिना परिदत्त करने में असफल रहने के लिये शास्ति	069
16	(ख) प्रेस रजिस्ट्रार को समाचारपत्रों की प्रतियां परिदत्त करने में असफलता के लिये शास्ति	069
17	जन्त की गई राशियों की वसूली और उनका व्ययन	070

## भाग 5

धारा स	पुस्तको का रजिस्ट्रीकरण	पृष्ठ स
18	पुस्तका के पापना का रजिस्ट्रीकरण	071
19	रजिस्ट्रीकृत पापन का प्रकाशन	072

## भाग 5 (क)

### समाचारपत्रों का रजिस्ट्रीकरण

19	(क) प्रेस रजिस्ट्रार तथा अन्य पदाधिकारियों की नियुक्ति	073
19	(ख) समाचारपत्रों का रजिस्टर	073
19	(ग) रजिस्ट्रीकरण के प्रमाण-पत्र	074
19	(घ) समाचारपत्रों द्वारा दिये जाने वाले वार्षिक विवरण, इत्यादि	074
19	(ङ) समाचारपत्रों द्वारा दी जाने वाली विवरणियाँ और प्रतिवेदन	074
19	(च) अनिलेखों तथा दस्तावेजों तक पहुँच का अधिकार	074
19	(छ) वार्षिक प्रतिवेदन	075
19	(ज) रजिस्टर के उद्धरणों की प्रतियाँ देना	075
19	(झ) शक्तियों का प्रत्यायोजन	075
19	(ञ) प्रेस रजिस्ट्रार तथा अन्य पदाधिकारी लोकसेवक होंगे	075
19	(ट) धारा 19 घ या 19 ङ इत्यादि के उल्लंघन के लिये शास्ति	075
19	(ठ) जानकारी के अनुचित संप्रकटीकरण के लिये शास्ति	076

## भाग 6

### प्रकीर्ण

20	नियम बनाने की शक्ति	080
	प्रकाशन	080
20	(क) केन्द्र सरकार की नियम बनाने की शक्ति	081
20	(ख) इस अधिनियम के तहत बने नियम निर्धारित कर सकते हैं कि इनका उल्लंघन दंडनीय होगा	083
21	किसी विशेष प्रकार की पुस्तकों को इस अधिनियम के प्रवर्तन से अपवर्जित करने की शक्ति	084
22	(विस्तार)	085
23	(निरस्तित)	085



□3 प्रेस और रजिस्ट्रीकरण अपीलेंट बोर्ड (व्यवहार और प्रक्रिया)  
 आदेश 1961

प्रा स	पृष्ठ स
1 संक्षिप्त शीपक	114
2 परिभाषाएँ	114
3 अपील का प्रारूप	114
4 अपील बाहर अपीलों को निरस्त करना	114
5 रिवाइस मगान की शक्ति	114
6 सुनवाई की तिथि	115
7 अपील की सुनवाई	115
8 अपील में दिए गए आदेश की विषय-वस्तु	115
9 आदेश का संचारण	115
10 कानूनी अधिकारियों द्वारा प्रतिनिधित्व	115
11 नोटिस की सामील	115

□4 समाचारपत्रों का पंजीकरण (केन्द्रीय) नियम 1956

नि स	
1 सर्जिफ्त नाम और प्रारम्भ	116
2 परिभाषाएँ	116
3 घोषणा का प्रारूप	116
4 घोषणा की प्रतियों आदि को सबधित व्यक्ति और प्रेस रजिस्ट्रार को भेजा जाना	116
5 प्रेस रजिस्ट्रार को समाचारपत्र की प्रतियों को प्रदाय करना	116
6 वार्षिक विवरण	117
7 रजिस्टर का रस रखाव	118
8 प्रत्येक समाचारपत्र में विशिष्टियाँ प्रकाशित होना	118
9 रजिस्टर के उद्धरणों की प्रतियाँ देना	119
10 रजिस्ट्रीकरण का प्रमाण-पत्र	119
11 वार्षिक प्रतिवेदन शास्ति	119

## अध्याय 1

## प्रारम्भिक

पा स		पृष्ठ स
1	सन्निप्त नाम और विस्तार	139
2	परिभाषाएं	139
3	उन अधिनियमितियों के सबंध में अर्थात् वयन का नियम जिनका विस्तार जम्मू कश्मीर और सिक्किम राज्यों पर नहीं है।	140

## अध्याय 2

## प्रेस परिषद् की स्थापना

4	परिषद् का निगमन	140
5	परिषद् की संरचना	140
6	सदस्यों की पदावधि और निवृत्ति	142
7	सदस्यों की सेवा की शर्तें	143
8	परिषद् की समितियां	144
9	परिषद् और समितियों के अधिवेशन	144
10	त्रुटि के कारण ही अधिविधाय नहीं	144
11	परिषद् के कर्मचारीवृद्ध	144
12	परिषद् के आदेशों और अन्य लिखितों का अधिप्रमाणन	145

## अध्याय 3

## परिषद् की शक्तियां और कृत्य

13	परिषद् के उद्देश्य और कृत्य	145
14	परिनिर्दा करने की शक्ति	147
15	परिषद् की साधारण शक्तियां	147
16	फीसों का उद्ग्रहण	148
17	परिषद् को सदाय	149
18	परिषद् की निधि	149

पा स	पृष्ठ स
19 वजट	149
20 वार्षिक रिपोर्ट	149
21 अन्तरिम रिपोर्ट	150
22 लेखा और सपरीक्षा	150

#### अध्याय 4

##### प्रकीर्ण

23 सद्भावपूर्वक की गई कारवाइ के लिये सुरक्षा	150
24 सदस्य आदि लोकसबक होंगे	150
25 नियम बनाने की शक्ति	151
26 विनियम बनाने की शक्ति	152
27 1867 के अधिनियम 25 का संशोधन	152

#### □6 प्रेस परिपद की लेवी

प्रेस परिपद (संशोधन) नियम 1981	153
प्रेस परिपद (संशोधन) नियम 1988	203

#### □7 प्रेस परिपद (जाच प्रक्रिया) विनियम 1979

##### वि स

1 सक्षिप्त नाम और प्रारम्भ	155
2 परिभाषाएँ	155
3 अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन परिवाद की अन्तवस्तु	156
4 परिवाद वापिस करना	157
5 नोटिस जारी करना	158
6 लिखित कथन फाइल करना	158
7 अतिरिक्त विशिष्टियाँ आदि मगाने की शक्ति	159
8 ऐसे परिवाद को नामजूर करना जिसमें पहले जाच की जा चुकी है।	159
9 समिति द्वारा जाच	159
10 परिपद का विनिश्चय	159
11 पत्रकारों की उपस्थिति	160

12	सदस्या की कुछ मामला में विचार विमर्श करन तथा मत देने सबधी शक्ति पर निवचन	160
13	स्वप्रेरणा से वायबाही करने की शक्ति	160
14	धारा 13 के अधीन परिवादो के बारे में प्रक्रिया	160
15	इन विनियमों में जिन मामला को लक्षित नहीं किया गया है, उनके बारे में प्रक्रिया	160
<input type="checkbox"/>	8 प्रस परिपद के यहा शिकायत कैसे करें	161
<input type="checkbox"/>	9 भारतीय प्रेस परिपद द्वारा निर्णित प्रकरण	173
<input type="checkbox"/>	10 चुन हुए प्रश्न (प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि 1867 व प्रेस परिपद अधि 1978 पर)	184
<input type="checkbox"/>	11 सशोधन अधि और अनुकूलन आदेशों तथा केन्द्रीय नियमों को सशोधित करने वाले जी एम आर की सूचिया	194
<input type="checkbox"/>	12 'प्रे पु अधि पर वप ब्रम से तथा धाराक्रम से विधि प्रकरणों का देशना,	196
<input type="checkbox"/>	13 लोकसभा में प्रस्तुत प्रेम एण्ड रेगुलेशन ऑफ बुक्स सशोधन विधेयक 1988 (वतमान अधि से तुलना सहित)	205
<input type="checkbox"/>	14 भारत में प्रेस से संबधित कानून कसा हा (एक विचारात्तेजक लेख)	211

## देशना (इन्डेक्स)

- अ आ  
अवमानना  
- प्रस परिपद की 182  
अनुच्छेद 226  
- 33, 46  
अभिरक्षा  
- 35  
अंतरिम आदेश  
- 48  
अपीलेंट घोड  
- गठन 50, 51  
- व्यवहार व प्रक्रिया  
114 115  
अपील  
- 50 52, 114 115,  
101  
अपराधीमन  
- 64  
आर एन आई  
- 3, 73 76  
अपवजन  
- 84  
अमुविधा  
- 84  
अपराध  
- विधि शास्त्र 88  
- अ-वीक्षा 89  
- प्रिटी नही 90  
- सम्मन वरोज 90  
- जमानत 90  
- वापसी 92

- अपराधी  
- जाति, धम समुदाय  
177  
आ-वोलन  
- योजनाबद्ध 175  
इ उ  
इम्प्रिंट लाइन  
- 21, 63  
इतिहास  
- प्रे पु आध का  
xxiii  
उक्तावा  
- 64  
उद्धरण चिह्न  
- 180, 181

- क ख  
कायवाही  
- स्वत 88, 160  
- परिवाद पर 88  
- यायिक 148  
कायसेत्र  
- 175  
खडन  
- 176  
- प्रकाशन से इकार  
180  
- विलम्बित प्रकाशन  
182  
- अनिष्ट गुधार का  
प्रयत्न 182

- घ च  
घोषणा  
- मुद्रणयत्रपाल द्वारा  
12, 18, 94, 98  
- समाचारपत्र प्रकाशन  
के पूव 22, 27 120  
- नई घोषणा कब 23  
39, 40, 98  
- सपादक के रूप म  
अशुद्ध छपने पर 41,  
42, 99  
- निरस्तीकरण 42,  
50, 99, 100  
- अपील 50, 52,  
101 114, 115  
चित्र  
- सम्बद्धता 177

- ज त  
जन प्रतिनिधित्व अधि  
- 36  
जुर्माना  
- न अदायगी 91  
जांच प्रक्रिया  
- प्रेस परिपद द्वारा  
155 160  
तालिकाएँ  
- समयवधियों की 105  
- दंड सडों की 109  
- पीसा की 113  
- प्रस्तावित सशोधन व  
मोजूदा प्रावधान 206

द घ	
दावों की बहुतायत	
- 2	
दस्तावेज	
- ध्याख्या 7, 10	
- विजिटिंग कार्ड 84	
- दिनर ग्रामत्रण 84	
दंड प्रक्रिया संहिता	
- 5, 45 70, 79, 90, 92	
दंड	
- तालिका 109	
दवाव	
- 173	
देशहित	
- 176	
देरी	
- क्षमा करना 182	
धारणा	
- मुद्रक/प्रकाशक 34	
- अजनबी 36	
- सपादक 36	
- सखनीय 37	
- पुस्तकों 38	
- पम्पनेटस 38	

न प	
नियमन	
- 01	
निमंत्रण	
- 175	
नियतकालिक पत्रिका	
- 04	

नियम	
- राज्यों का शक्तियां	
80	
- राज्यों के नियम 80	
- केंद्र की शक्तियां 81, 151	
- राजस्वान नियम 81, 83	
नगरानी	
- 90	
प्रस्तापना	
- 01	
पुस्तक	
- परिभाषा 02	
- व्याख्या 3, 4	
- धारणा नहीं 38	
- रजिस्ट्रीकरण 71	
- मुद्रक द्वारा निशुल्क परिदान 52, 55	
- मुद्रक को लिखित रसीद 57	
- प्रकाशक द्वारा निशुल्क परिदान 62	
- परिदान की पूर्णता 68	
- परिदत्त पुस्तकों का ध्यान 57, 59	
पत्र	
- परिभाषा 02	
- व्याख्या 7, 10, 84	
प्रेस रजिस्ट्रार	
- परिभाषा 03	
- गठन 73	
- अधिकार, कत्तव्य, दायित्व 76	

प्रकाराए	
- बोन 10, 65	
- सीमित मात्र म 11	
- कत्तव्य 11, 77	
- शाक्तियां 78	
प्रशासकीय	
- कत्तव्य 17, 32	
- परेनानिया 46	
परिनिगदा	
- प्रेस परिपद् द्वारा 147	
परिवाद	
- मुद्रकालय के शुष्य म 18	
- प्रेस परिपद् का 156 स 159, 161, 172	
परिवाही	
- 155	
प्राधिकार	
- 22	
प्रत्यायोजन	
- 47 75	
प्रमाणीकरण	
- 17, 28, 30, 39, 40	
प्रतियां	
- प्रमाणित 32	
- अतिप्रमाणित 32	
- जमा करना 28, 31	
- निरीक्षण व प्रदाय 28, 32 39	
- प्रेस रजिस्ट्रार के यहाँ से 75, 119	
प्रतिष्ठित ध्यक्ति	
- 179	
- जनसेवक/सह्या 174	

प्रथम दृष्टया

- साक्ष्य 34

- अधिकार 49

पम्पलेट्स

- 17, 38, 64

- सत्य का दायित्व  
65

पत्रकारिता

- अनुचित 175

- वीर 173

प्रम परिपद निष्पत्ति

- धारा 13 के तहत  
173, 175

- धारा 14 के तहत  
175

पुन प्रकाशन

- 175

प्रमाण पत्र

- 74 119

प्रस्तावना

- 184

प्रतिस्पर्धा

- अनुचित 32

प्रश्न (पाम स)

- समाचारपत्र शुरू  
करने से पूर्व घोषणा  
का पाम I 120

- वार्षिक विवरण  
पाम II 122

- समाचारपत्र का  
रजिस्ट्रार पाम III  
130

- प्रतिबंध समाचारपत्रों  
के प्रकाश पाम IV  
131

- रजिस्ट्रेशन का प्रमाण  
पत्र पाम V 132

● ●

1 शीघ्र निष्कासन  
हेतु 93

2 मुद्रण यंत्र चालू  
करने के पूर्व घोषणा  
94

3 मुद्रण यंत्र धारक  
द्वारा विवरण 95

4 मुद्रण/प्रकाशन स्थान  
का अध्यायी परि  
बताने 97

5 मुद्रण/प्रकाशन नहीं  
रहने पर 98

6 संपादक के रूप में  
अभ्युक्त छानने पर 99

7 घोषणा निरस्ती  
करण का पारण  
बतामो नोटिस 99,  
100

8 घोषणा निरस्ती  
करण की सुनवाई  
या अवसर 100

9 निरस्तीकरण के  
विच्छेद ममोरे इम  
घाक अधीन 101

10 प्रकाशित मामलों के  
विच्छेद प्रेम परिपद  
में निश्चित 164

11 समाचारपत्र द्वारा  
जवाब 167

12 समाचारपत्र द्वारा  
निश्चित 169

13 समाचारपत्र की  
निकायन का जवाब  
171

● ● ●

- प्रेम रजिस्ट्रार द्वारा  
दस्तावेज से विवरण  
133

फ म स

फीस

- तालिका 113

- प्रेम परिपद को देय  
153 203

भारतीय दंड संहिता

- 7 70, 148, 150

माया

- 177 179

मजिस्ट्रेट

- परिभाषा 02

- व्याख्या 5 6

मुद्रण

- परिभाषा 03

- व्याख्या 4

- प्रबंधक 65, 66

- धारण का 63

मुद्रणात्मक

- व्याख्या 04

- प्रयोग 16, 66

- परिवर्तन 16

- स्वाधिरत्व 16

मूल

- अधिकार 45

- लावनाद 179

मिथ्याकरण

- 66

मगजीने

- 85

मानहानिजनक

- 173

मुद्रावत्रा

- 176

य र ल

याचिका

- 52

- पुनर्विचार 46

रजिस्टर

- परिभाषा 03

- समाचारपत्रों का 73

राज्यनामा

- 92

सोर्ससेवक

- 75, 150

लिखित रूपन

- 158

लिखीघाफ़ी

- 04

नेम

- पुनर्गत्यादन 179

ष

बभुमी

- भू राजस्व की तरह  
70, 149

- बरीस 51

बल्लभ्य

- अनुसरदायिकपूरा  
180

द्विगणितियां

- पुनर्गर्हो ब कर्नामि 08

- समाचारपत्रों में 21,  
118

व्यस्कता

- 6, 24

विश्रैता/वितरक

- 26

यादिक

- विवरण 74, 117

- प्रतिवेदन 75, 119

विज्ञापन

- सूची 174

- दवाव 173

- बनावटी 175

- मरुचिकर 175

- मसदाय 173

विवाद

- वाणिज्यिक 174

विशेषाधिकार

- 176

स श

स्वतंत्रता

- अभिव्यक्ति की 12

- प्रेम की 145

स्वस

- बदनाम 02

सपादक

- परिभाषा 02

- विशेषणा 6

- कौन हो सकता है 7

- वैधिक धर्मिक 37

- दायित्व 180

सपादकीय

- मापता 179

समापन

- प्रस्तावित 205

समाचार

- घटना के तुरन्त बाद  
181

- जनहित बनाम तत्  
परता 181

- का दायित्व 180

समाचारपत्र

- परिभाषा 02

- व्याख्या 04

- प्रकाशन नियम 18,  
20 से 27, 115 स  
133

- मुद्रक द्वारा निशुल्क  
परिदान 59, 60

- प्रकाशक द्वारा निशुल्क  
परिदान 60

- प्रकाशक के कर्तव्य  
77

- सस्करण 33

सदमाय

- 36 150

सवाददाता

- नियमित 181

स्व

- विवेक 42

- प्रेरणा 160

सगर

- 46 174

साइबेनोस्टाइटिस

- 65

सप्रबटीकरण

- 76

समापन

- 174



साहित्यिक चोरी	सदमं	— कारावास या जुर्माना
— 175	— अनुचित 178	या दोनों 87
सिविल प्रक्रिया संहिता	समस्याएँ	— जुर्माना भ्रष्टाचारा
— 148	— 192	वास 88
समयावधि	शीघ्र	शिकायत
— सज्जान की 91	— निष्वासन 29	— प्रेस परिपद्वो 161
— तालिका 105	— परिवर्तन 177	172
सरकारी तत्र	— मर्यादित 177	— जाच प्रक्रिया 155
— दुरुपयोग 179	— सवेत्नात्मक 178	से 160
साम्प्रदायिक	शास्तियां	— करने का अधिकार
— लेखन 173	— 62, 65 स 70, 75	178
— सपादकीय 179	— प्रकृति 85	ह
— भेंटवार्ताएँ 179	— जुर्माना 86	हयकडी
— स्वनिर्णय 177	— सम्पत्ति की जब्ती 86	— 173
सामान्य	— जुर्माना या साधारण	होती उरसव
— प्रकृति 178	कारावास 87	— 180
— धालोचना 178		

## प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम का संक्षिप्त इतिहास

पहली बार, तत्कालीन ईस्ट इण्डिया कम्पनी के निदेशकों के कोर्ट ने यह महसूस किया कि भारत में प्रकाशित प्रत्येक महत्त्वपूर्ण एवं रचिकर कृतियों की प्रतियां इंग्लैण्ड स्थित 'इण्डियन हाउस' के पुस्तकालय में निक्षेप (जमा) करने हेतु भेजी जाया करे। यह 19वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के निदेशकों के इस कोर्ट के आदेशों की पालना करने के लिए लंदन स्थित लोयल एसियास्टिक समिति न समय समय पर भारतीय प्रकाशकों को सेक्रेट्री आफ स्टेट फार इण्डिया के जरिये ऐसी हिदायतें भेजी।

प्रारम्भ में ये हिदायतें लोयल वगल के प्राप्त तक ही सीमित थीं लेकिन बाद में ये हिदायतें सम्पूर्ण भारत के प्रसंग में आने लगीं। सन् 1852 में इस प्रकार की प्रथम सूची बनाई गई जा की यद्यपि अपूर्ण थी। यह काय पूरी तरह स्वच्छिन्न था। इसलिए इसके सन्तोषप्रद परिणाम न आ सके।

अतः इस प्रेस पुब्लिशिंग के जरिये यह प्रस्तावित किया गया था कि इस मामले में एक बाध्यकारी तरीका स्थापित किया जावे। यह भी रखा गया था कि यह बिल अधिसूचना के जरिये साम्राज्य के किसी भी हिस्से में विस्तारित किया जा सकता है। प्रेस पुब्लिशिंग अधिनियम 22 मार्च, 1867 को लागू हुआ।

प्रारम्भ में इस अधिनियम के क्षेत्र में मुद्रण यंत्र और पुस्तकें ही शामिल की गई थीं। बाद में, समाचारपत्र भी इसमें शामिल कर लिये गये।

1955 के 55वें संशोधन अधिनियम और 1960 के 26वें संशोधन अधिनियम ने अपने संशोधन खण्डों के जरिये मूल प्रेस पुब्लिशिंग का बहुत अधिक प्रभावित किया है।

राज्य सरकारों द्वारा की गयी सिफारिशों और प्रेस विधियों की जांच करने हेतु केन्द्र सरकार द्वारा गठित प्रेस विधियां जांच समिति की सिफारिशों और प्रथम प्रेस कमीशन की सिफारिशों के आधार पर 1955 का 55वां संशोधन अधिनियम संसद द्वारा पारित किया गया।

मुद्रण अथवा प्रकाशन के स्थान में अगुवाई परिवर्तन, एक विशिष्ट अधि-  
 के अन्तर् प्रकाशन प्रारम्भ करना और समाचारपत्रों के सम्बन्ध में प्रेस रजिस्ट्रार  
 की स्थापना विषयक प्रावधान इस 1955 के 55वें संशोधन अधिनियम के प्रभाव  
 से आये। मन् 1955 के 55वें अधि की विशेषताओं में से एक विशेषता -  
 समाचारपत्रों के पञ्जीयन से सम्बन्धित भाग V का नामित करना है।

पहले से ही पूर्व प्रमाणित घोषणा को निरस्त करने, प्रेस और पञ्जीयन  
 अपीलेंट बोर्ड की स्थापना, किन मामलों में एक नवीन घोषणा आवश्यक है,  
 घोषणावर्ती का भारत में साधारणतः निवास और उसकी वयस्कता और  
 प्रे पु अधि से समाचारपत्रों के किसी वर्ग को भारत सरकार की पूर्व सलाह से  
 राज्य सरकारों द्वारा अपवर्जित करने विषयक विशिष्ट प्रावधान 1960 के 26वें  
 संशोधन अधिनियम के कारण प्रभाव में आये।

1965 के 16वें अधि 1968 के 30वें अधि और 1978 के 37वें अधि  
 ने भी प्रे पु अधि को प्रभावित किया। 1965 के 16वें अधि में प्रे पु अधि  
 सम्पूर्ण भारत में लागू कर दिया गया। इस संशोधन अधि के पूर्व यह जम्मू  
 और कश्मीर का छोड़ कर शेष भारत पर लागू था।

1978 के 37वें अधिनियम ने प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन अपीलेंट बोर्ड की  
 स्थापना के सम्बन्ध में प्रे पु अधि की धारा 8 ग को संशोधित किया। अब  
 भारतीय प्रेस परिषद् द्वारा अपने ही सदस्यों के बीच में से इस बोर्ड के चेयरमैन  
 और एक दूसरे सदस्य को मनोनित किया जाता है। वास्तव में, यह संशोधन  
 प्रेस की आजादी की धारणा को मजबूत करता है। अब, किसी समाचारपत्र के  
 सम्बन्ध में पक्षपातपूर्ण तरीके से घोषणा को निरस्त करना अथवा घोषणा का  
 प्रमाणित करने के लिए अस्वीकार करना उस तरह आसान काम नहीं है जिस  
 तरह पहले था क्योंकि भारत की प्रेस परिषद् में प्रेस से सम्बन्धित व्यक्ति बहुमत  
 में है जो कि इस अपीलेंट बोर्ड का गठन अपने ही सदस्यों के बीच में करता है।

यह दिखाई देता है कि मूल प्रे पु अधि 1867 विभिन्न संशोधन  
 अधिनियमों के कारण लगभग पूरी तरह बदला जा चुका है।

# मुद्रणयत्र तथा पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1867

(1867 का अधिनियम सख्या 25)

(22 मार्च, 1867)

एक अधिनियम -

मुद्रणयत्रों और समाचारपत्रों के विनियमन, भारत में मुद्रित पुस्तकों तथा समाचारपत्रों की प्रतियों के परिरक्षण तथा ऐसी पुस्तकों और समाचारपत्रों के रजिस्ट्रीकरण के लिये ।

प्रस्तावना -

चूँकि यह ईष्टकर है कि मुद्रणयत्रों और समाचारपत्रों के विनियमन, भारत में मुद्रित प्रत्येक पुस्तक तथा समाचारपत्र की प्रतियों के परिरक्षण तथा ऐसी पुस्तकों और समाचारपत्रों के रजिस्ट्रीकरण के लिये अपबन्ध किया जावे अतः एतद्वारा निम्नरूपेण अधिनियमित किया जाता है ।

## टिप्पणी

प्रस्तावना से उजागर होता है कि मु पु अधि निम्न विषयों तक ही सीमित हैं -

(i) मुद्रणयत्र (ii) समाचारपत्र और (iii) पुस्तकें ।

यह अधिनियम मुद्रणयत्रों और समाचारपत्रों के नियमन और पुस्तकों तथा समाचारपत्रों के पंजीयन तथा रख रखाव के उद्देश्य से प्राणयित है ।

## नियन्त्रणार्थ नहीं

यह अधिनियम मुद्रणयत्रों और समाचारपत्रों के मात्र नियमन के लिए है न कि इनके नियन्त्रण के लिए । नियमन का अर्थ, नियमों के तहत एकरूपता में व्यवस्थित करने को निर्देशित करता है । (1955 मध्य भारत बी एल जे ) (एल सी धार (392) ख पी )

## दावा की बहुतायत को रोकना

दावा की बहुतायत आर दायित्वों की अनिश्चितता का दूर करने की दृष्टि से यह विचार किया गया था कि स्टाफ के व्यक्तियों में से पत्र में प्रकाशित मामलों के लिए किसी एक व्यक्ति को जिम्मेदार माना जावे ताकि कोई भी पीडित व्यक्ति मु पु अधि के तहत उसका जुम्मेदार सिद्ध कर सके ताकि किय गये अपराध के लिए कौन जिम्मेदार है, इसकी जाच के लिए पीडित व्यक्ति इधर उधर भटक नहीं सके । (ए 1979 उच्चतम न्यायालय 154)

## स्थल का बदलाव

मु पु अधि एक समाचारपत्र के प्रकाशन स्थल के बदलाव का नहीं राकता है । (1966) मैसूर एल० आर (598)

## भाग 1

### प्रारम्भिक

#### 1 निवचन खण्ड

इस अधिनियम में जब तक कि विषय या प्रसंग में कोई बात विरुद्ध न हो

“पुस्तक” का अन्तर्गत किसी भाषा में का प्रत्येक ग्रन्थ ग्रन्थ का भाग या खण्ड और पुस्तिका और पृथक्तया मुद्रित संगीत मानचित्र चाट या रेखाक का प्रत्येक पात्रक है

“सम्पादक” से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो किसी समाचारपत्र में प्रकाशित विषयवस्तु का सवरण पर नियंत्रण रखता है,

“मजिस्ट्रेट” से ‘मजिस्ट्रेट की सम्पूर्ण शक्तिया का प्रयोग करने वाला कोई व्यक्ति अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत पुलिस का मजिस्ट्रेट है

समाचारपत्र” से सावजनिक समाचारों या सावजनिक समाचारों की आलोचनापत्रों को अन्तर्विष्ट करन वाली कोई मुद्रित नियतकालिक रखना अभिप्रेत है

“पत्र” से पुस्तक से भिन्न समाचारपत्र के सहित कोई दस्तावेज अभिप्रेत है

‘विहित’ से धारा 20 के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है

“प्रेस रजिस्ट्रार” से धारा 19 क के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त ‘समाचारपत्र रजिस्ट्रार, भारत’ अभिप्रेत है और इसके अतगत प्रेस रजिस्ट्रार के सब या किन्हीं कृत्यों का पालन करने के लिये केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त कोई अन्य व्यक्ति है,

“मुद्रण” के अतगत साइक्लोस्टाइल करना और लियोग्राफी करना है

“रजिस्ट्रार” से धारा 19 ख के अधीन रखा जाने वाला समाचारपत्रों का रजिस्ट्रार अभिप्रेत है ।

2 इस अधिनियम में विधि का कोई प्रसंग जा जम्मू कश्मीर में लागू नहीं है, वह उस राज्य के सम्बन्ध में उस राज्य में लागू मिली-जुली विधि के प्रसंग में यारयापित होगी ।

### राज्यों द्वारा सशोधन

#### महाराष्ट्र

महाराष्ट्र राज्य में इसकी प्रयुक्ति में मजिस्ट्रेट की परिभाषा अधिष्ठापित होगी - 1954 का बम्बई अधि 8, धारा 2 व अनुसूची भाग II (10-2-1954) (1961 का महाराष्ट्र अधि 07, धारा 2 (4 2 1961)

#### गुजरात

महाराष्ट्र जसा ही - 1961 का गुजरात अधि 23 धारा 2 (18 5-1961)

#### मसूर

“मजिस्ट्रेट की सम्पूर्ण शक्तियों का प्रयोग करने वाला कोई व्यक्ति अभिप्रेत है और इसमें अतगत पुलिस का मजिस्ट्रेट है” के शब्दा के स्थान पर “मजिस्ट्रेट से अभिप्राय यानि मजिस्ट्रेट होता है”, प्रतिस्थापित किया जावे - 1965 का मसूर अधि 13, धारा 66 व अनुसूची (1-10 1965)

### टिप्पणी

#### पुस्तक

“पुस्तक” और “मुद्रण” की जो अलग-अलग परिभाषाएँ दी हुई हैं, वह एक ऐसी पुस्तक का भाव देता है जो किसी भी भाषा में मुद्रण यंत्र से मुद्रित हो अथवा साइक्लोस्टाइल हो - अथवा लिथोग्राफी से

पम्फलेट्स, पृथकतया, मुद्रित संगीत, नक्शे, चाट या रेखाक का प्रत्येक पत्रक चाहे उनका मुद्रण अलग-अलग ही हुआ हो पुस्तक ही माने गए हैं ।

**पुस्तक की परिभाषा अपने आप में पूर्ण**

“पुस्तक” की परिभाषा अपने आप में पूर्ण है और इसकी परिभाषा में विशिष्टतः दिये गये दस्तावेजों के अलावा दूसरे दस्तावेज शामिल नहीं किये जा सकते । (ए 1940 पटना 613)

4 पेज का एक मानहानिजय लिफलेट जिसकी सिलाई नहीं की हुई है, एक पम्फलेट है, यह पुस्तक की परिभाषा में आता है । (ए 1958 राजस्थान 350)

एक मुद्रित लिफलेट जिसमें धार्मिक अपील करते हुए चर्चे के लिए निवेदन किया गया को पत्र माना गया (1973 इलाहाबाद श्रीमन्तल रिपोर्ट 475)

**पीरियोडिकल्स (नियतकालिक पत्रिका)**

एक नियतकालिक पत्रिका को एक पुस्तक और यहाँ तक की एक समाचारपत्र से भी अलग माना गया है । (1966 आर्ध्र डब्लू आर 332)

**समाचारपत्र**

समाचारपत्र और मुद्रण की जो अलग-अलग परिभाषाएँ दी हुई हैं वे संयुक्त रूप से ऐसे समाचारपत्र का भाव देती हैं जो कोई भी नियतकालिक जिसमें सावजनिक खबरें अथवा सावजनिक खबरों पर टिप्पणों की गईं हों और जो मुद्रणयत्र में मुद्रित हुईं हों अथवा साइक्लोस्टाइल्ड की हुईं हों अथवा लिथोग्राफी से मुद्रित की हुईं हों, समाचारपत्र है । (1973 इलाहाबाद डब्लू० आर) एच० सी०) 661

**मुद्रणयत्र से तात्पर्य**

मुद्रणयत्र की प्रस्तावना और इस अधि के विभिन्न स्थानों में आये शब्द मुद्रणयत्र की परिभाषा या व्याख्या स्वयं इस अधिनियम में नहीं की गई है । केवल शब्द — ‘मुद्रण’ का निवचन (व्याख्या) इस प्रकार किया गया है कि ‘मुद्रण’ का अर्थ तब तक साइक्लोस्टाइल करना और लिथोग्राफी करना है । लगता है मुद्रण का यह निवचन मुद्रण प्रेस का भी निवचन ही है । अतः साइक्लोस्टाइलिंग और लिथोग्राफी द्वारा किया

गया मुद्रण भी मुद्रणयंत्र के क्षेत्र में आता है। इस तर्क के आधार पर साइक्लोस्टाइलिंग मशीन अथवा लिथोग्राफी मशीन का धारक भी मुद्रक यंत्र का धारक समझा जावे।

## मजिस्ट्रेट

मुपु अधि में मजिस्ट्रेट की परिभाषा जहाँ तक प्रक्रियात्मक विधि का सवाल है, निश्चेषी (पूरा) नहीं है मुपु अधि द प्र स से शासित होता है (दे धारा 4(2) द प्र स) अतः मुपु अधि में दी गई मजिस्ट्रेट की परिभाषा द प्र स में दी गई मजिस्ट्रेट की परिभाषा के अधीन है।

द प्र स की धारा 3(4) के अनुसार निष्पादी (कायकारी) अथवा शासकीय प्रकृति के मामलों की सुनवाई एक निष्पादी मजिस्ट्रेट द्वारा होनी है। चूँकि मुपु अधि के तहत मामले शासकीय अथवा निष्पादी प्रकृति के हैं, अतः वे निष्पादी मजिस्ट्रेट द्वारा हल किए जायेंगे। शब्द 'निष्पादी मजिस्ट्रेट' द प्र स की धारा 20 में परिभाषित किया हुआ है।

नई द प्र स में पूर्व के प्रेसीडेन्सी क्षेत्रों के स्थान पर मेट्रोपोलिटान क्षेत्रों की व्यवस्था की हुई है और ये क्षेत्र दस लाख की आबादी से ऊपर के होते हैं।

दण्ड प्रक्रिया की धारा 3(3)(ग) के अनुसार पूर्व के प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट अथवा मुख्य प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट क्रमशः मेट्रोपोलिटान मजिस्ट्रेट अथवा मुख्य मेट्रोपोलिटान मजिस्ट्रेट कहलायेंगे, यही कारण है कि मद्रास, बम्बई, कलकत्ता और अहमदाबाद जो नई द प्र स के पहले प्रेसीडेन्सी कस्बे कहलाते थे, अब वे मेट्रोपोलिटान क्षेत्र कहलाते हैं और यहाँ के निष्पादी मजिस्ट्रेट मेट्रोपोलिटान या मुख्य मेट्रोपोलिटान मजिस्ट्रेट कहलाते हैं।

मुपु अधि में दी गई मजिस्ट्रेट की परिभाषा अपने आप में यह स्पष्ट करता है। ऐसा मजिस्ट्रेट, मजिस्ट्रेट की पूरा शक्ति स पूरा होना चाहिए। लगता है विधि निर्माताओं का आशय यह था कि मजिस्ट्रेट की शक्तियाँ प्रत्यायोजित (डेलिगेटड) नहीं होनी चाहिए।

साराशतः द प्र स के प्रावधानों के तहत मुपु अधि के प्रयोजनाथ "मजिस्ट्रेट" से निम्न आशयित है -



(1) नोन मेट्रोपोलिटान क्षेत्र के लिए  
निष्पादी (कायकारी) मजिस्ट्रेट  
जिला मजिस्ट्रेट  
उपखण्डीय मजिस्ट्रेट

(2) मेट्रोपोलिटान एरिया

राज्य सरकार द्वारा घोषित क्षेत्र जैसा कि द प्र स की धाराए 3

(4) (ख) और 20(5) में आशयित है, निष्पादी मजिस्ट्रेट की शक्तियाँ रखने वाला मेट्रोपोलिटान मजिस्ट्रेट -

पुलिस आयुक्त

संपादक

मु पु अधि में वधानिक सम्पादक की निम्न विशेषताएँ होती हैं -

(1) वह एक ऐसा व्यक्ति है जो समाचारपत्र में प्रकाशित सामग्री के मवरण पर नियंत्रण रखता है। (घा 1)

(2) वह एक ऐसा व्यक्ति है जो भारत में साधारणतया निवास करता है। (घा 5(8))

(3) वह ऐसा व्यक्ति है जिसने भारतीय वयस्कता अधि 1875 के उपबन्धों के अनुकूल या वयस्कता प्राप्ति के सबध में जिस विधि के अधीन है, उस विधि के अनुकूल वयस्कता प्राप्त करली है (धारा 5(8))

वर्णन या पद सारहीन

भारत में साधारणतया निवास सम्बन्धी प्रावधान 1960 के अधि 26 द्वारा लागू हुआ है। कानून सिर्फ "सम्पादक" को जानता है। यही कारण है "सम्पादक" शब्द के आग और पीछे किसी लगने वाले विशेषण से युक्त 'सम्पादक' शब्द जैसे प्रवच सम्पादक, उपसम्पादक आदि को कानून नहीं जानता।

जहाँ कोई व्यक्ति धारा 1 की शर्तों को पूरा नहीं करता और सम्पादक के कार्यों की पालना नहीं करता, चाहे उसका कोई भी पद हो या वह किसी भी रूप में वर्णित हो तो अधि के प्रावधान उस पर लागू नहीं होंगे। [ए 1979 उच्चतम न्यायालय 154(163)]

एक सम्पादक का शिक्षित और अशिक्षित होना कानून की निगाह में महत्वहीन है।

कौन सम्पादक हो सकता है

द प्र स की धारा 2 में कहा गया है कि जिन शब्दों और अभिव्यक्तियों की परिभाषाएं स्वयं द प्र स में नहीं दी गई हैं, उनकी परिभाषा भा द स में दी गई परिभाषाओं से अभिग्रहण करनी होगी। मु पु अधि द प्र स से शासित होता है अतः मु पु अधि अथवा द प्र स में जिन शब्दों और अभिव्यक्तियों की परिभाषा नहीं दी गई है उनकी परिभाषा भा द स से अभिग्रहित करनी होगी।

मु पु अधि में सम्पादक की परिभाषा में आया शब्द "व्यक्ति" स्वयं मु पु अधि यहाँ तक कि द प्र स में भी परिभाषित नहीं है अतः इसकी परिभाषा भा द स से अभिग्रहित करनी होगी।

भा द स की धारा 11 में 'व्यक्ति' की परिभाषा निम्न प्रकार दी गई है -

"व्यक्ति से अभिप्राय कोई भी कम्पनी या सघ या व्यक्तियों के किसी मण्डल चाहे वो निगमित हो या नहीं, से है।"

मु पु अधि में सम्पादक की परिभाषा और भा द स में दी गई व्यक्ति की परिभाषा मयुक्त रूप से यह आशय प्रकट करती है कि कोई भी कम्पनी, सघ या व्यक्तियों का कोई मण्डल चाहे निगमित हो या नहीं, सम्पादक हो सकता है।

पत्र

कोई भी दस्तावेज एक पत्र है। एक समाचारपत्र भी एक पत्र है लेकिन एक पुस्तक को एक पत्र नहीं कहा गया है।

"पत्र" "समाचारपत्र" का समानार्थी नहीं

1955 के अधि 55 द्वारा धारा 1 में पत्र की जो परिभाषा शामिल की गई है उससे अत्र यह नहीं कहा जा सकता कि शब्द "पत्र" जिसका प्रयोग धारा 3 में हुआ है, वह समाचारपत्र से समानार्थी है या इसके ऐसी सामग्री समाहित करनी चाहिए जो साहित्यिक या ऐतिहासिक या सांस्कृतिक मूल्यों से सम्बन्धित हो। (ए 1960 आ प्र 176, 177)

दस्तावेज से तात्पर्य

मु पु अधि में परिभाषित "पत्र" में आये शब्द "दस्तावेज" की परिभाषा भा द स में इस प्रकार दी हुई है - शब्द "दस्तावेज" ऐसी

किसी वर्णित या अभिव्यक्त सामग्री का भाव देता है जो किसी वस्तु पर शब्दा, अको या चिह्नो अथवा इनमे से एक से अधिक कोई अन्य साधन उस सामग्री के साक्ष्य के रूप में प्रयाग के लिए आशयित या जिसका प्रयोग किया जा सकता है, से है ।

### स्पष्टीकरण

यह निस्तार है कि किन साधनो द्वारा अथवा किन वस्तुओ पर शब्द, अक अथवा चिह्न बनाये गए है । और यह भी निस्तार है कि आशयित अथवा सम्भावित साक्ष्य का प्रयोग अदालत में किया जावे या नही ।

2 (1835 के अधिनियम 11 का निरसन) निरसन अधिनियम, 1870 (1870 का 14) द्वारा निरसित ।

## भाग - 2

### मुद्रणपत्रो तथा समाचारपत्रो के सम्बन्ध में

3 पुस्तकों तथा पत्रों में मुद्रित की जाने वाली विसिष्टियाँ

भारत के अन्दर मुद्रित प्रत्येक पुस्तक या पत्र पर मुद्रक का नाम तथा मुद्रण का स्थान और (यदि पुस्तक या पत्र प्रकाशित किया गया है, तो) प्रकाशक का नाम और प्रकाशन का स्थान सुपाठ्यत मुद्रित होगा ।

### टिप्पणो

यह एक वैधानिक प्रावधान है कि प्रत्येक मुद्रित पुस्तक अथवा पत्र पर मुद्रक और मुद्रण-स्थल का नाम तथा इसका ठीक-ठाक वर्णन सुपाठ्यत शब्दा में मुद्रित होना चाहिए और यदि पुस्तक या पत्र के प्रकाशित होने का मामला हो तो ऐसी दशा में प्रकाशक का नाम और प्रकाशन-स्थल का ब्यौरा भी सुपाठ्यत शब्दो में मुद्रित होना चाहिए ।

इस वैधानिक आदेश के उल्लंघन का परिणाम दो हजार रुपये से अनधिक जुर्माना अथवा 6 माह की अनधिक सजा अथवा ये दोनो ही हैं । (दे० धा० 12 मु पु)

**मनुष्य का नाम न कि दुकान का नाम**

धारा 3 यह अपेक्षा करती है कि उन व्यक्तियों का नाम जो पुस्तक या पत्र को मुद्रित और प्रकाशित करते हैं मुद्रित हो न कि दुकान का नाम मुद्रित हो। दुकान का नाम तो कभी भी इच्छा अनुसार बदला जा सकता है। बिना मानव नाम के "कुतुबखान" द्वारा प्रकाशित को पयाप्त नहीं माना गया। (ए आई आर 1960 इलाहाबाद 450)

**जनता को सूचना करना**

सशोधित अधिनियम जो मौजूदा में अस्तित्व में है के गठनकर्त्ताओं का आशय जनता को यह सूचित करना है कि पुस्तक, समाचारपत्र अथवा पत्र के मुद्रण व प्रकाशन के लिए कौन लाग जिम्मेदार है ताकि इसके मुद्रण व प्रकाशन से यदि कोई कानूनी परिणाम उत्पन्न होवे तो वे उसमें बच नहीं सकें। (1973 इलाहाबाद क्री० आर० 475) (487)

पुस्तक पर लेखक और प्रकाशक का नाम इस बात की धारणा पदा नहीं करता कि वे प्रकाशक हैं। (ए 1960 उडीसा 126) (127) (128)

**स्वेच्छाकारी वणन नहीं**

मुद्रक और प्रकाशक को यह छूट नहीं है कि वे अधिनियम की पालना में अपना मनमाना कोई वणन तय कर लें। उनको अधिनियम द्वारा निर्धारित वणन (प्रकार) ही प्रयोग में लेना चाहिए। एक मैनेजर प्रकाशक के रूप में महज इसलिए वर्णित नहीं हो सकता कि कई पत्रों का मैनेजर और प्रकाशक एक ही है। (1909) 10 क्री० एन० जे० 195 (198)

**धारा 3 और समाचारपत्र**

धारा 3 समाचारपत्रों को भी शामिल करती है। यही कारण है कि समाचारपत्रों पर मुद्रक का नाम सुपाठ्यत मुद्रित न करने की चूक एक दंडनीय अपराध है लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि मुद्रक का वास्तविक नाम दिया जावे। यही पर्याप्त है कि यह बता दिया जावे कि वह अमुक के नीचे यह व्यवसाय करता है और साधारणत जाना जाता है। (1893) (16) मद्रास 443 (445, 447)

## पब्लिक प्रोसीक्यूटर

बनाम

टी० अमृत्य के नियम

जस्टिस कृष्णा राव ने धारा 3 में सम्बंधित निम्न नियम फाजदारों अपील पब्लिक प्रोसीक्यूटर बनाम टी० अमृत्य ए०आई०आर० 1960 आंध्र प्रदेश 176 में निर्धारित किये हैं ।

### (1) दस्तावेज क्या हैं

एक टिकाऊ प्रारूप में दी गयी गूढ़वाचपरक (डसीफिरेबल) सूचना एक दस्तावेज है और यदि यह भारत में प्रकाशित हाती है तो यह धारा 3 के अन्तर् में आयेगा । 1955 के अधि० 55 की धारा 1 द्वारा शामिल पत्र की परिभाषा का दृष्टि में रखते हुए यह कहना नहीं चनेगा कि धारा 3 में आया शब्द "पत्र" 'समाचारपत्र' का समानार्थी है अथवा इसे ऐसी सामग्री से युक्त होना चाहिए जो साहित्यिक अथवा ऐतिहासिक अथवा सांस्कृतिक मूल्य की हो । यह मत है कि एक दिनर अथवा एक पार्टी चाहे वा किसी भी तरीके की हो, के लिए प्रत्येक मुद्रित सामग्री पत्र और यहाँ तक कि अब मुद्रित विजिटिंग कार्ड भी एक 'पत्र' है । इसलिए इन्हें धारा 3 के अनुसरण में मुद्रित किया जाना चाहिए । आम जनता का इससे जो परेशानी होती है, उसका उपचार धारा 21 में है जो राज्य सरकार का इस अधिनियम की कार्यावधि में पुस्तक और पत्रों के किमी बग को अपवर्जित करने की शक्तियाँ प्रदान करता है । (कडिका 4)

### (2) प्रकाशक कौन होता है

प्रकाशक वह व्यक्ति है जो मुद्रक से मिलकर पुस्तक या पत्र को तयार करवाता है और साथ ही इसे जनता के लिए जारी करता है ।

### (3) परिनियम के प्रयोजनों के अनुकूल अर्थ

किमी कानून को पेश करते वक्त विधान निर्मात्री सदन में जा बहस मुद्रावसा होता है, उसका किसी परिनियम में आये किसी शब्द के अर्थ पर कोई नियंत्रण नहीं हाता । यदि किसी परिनियम में आये किसी शब्द का अर्थ सदेहजनक अथवा अस्पष्ट हो तो उसका अर्थ परिनियम के प्रयोजना के अनुसरण में अभिग्रहित होना चाहिए ।

#### (4) प्रकाशक का कर्तव्य

प्रकाशक का कर्तव्य माना नहीं है कि वह मुद्रण की दृष्टि से उसका और प्रकाशन-स्थल का नाम दे। उसका यह भी कर्तव्य है कि वह यह देखे कि पुस्तक या पत्र धारा 3 के अनुकूल है या नहीं और यदि धारा 3 की अपेक्षाओं की पूर्ति नहीं होती हो तो वह इनके प्रकाशन से अपने आपको रोक ले। (कडिक 9)

एक मुद्रित लिफनेट जिसमें एक मस्था द्वारा पुलिसवालों को अपील की गई थी, में मान उन व्यक्तियों जिन्होंने इसको जारी किया था और वह शिविर जहाँ से यह जारी हुआ था का ही नाम बताया गया था लेकिन मुद्रक और प्रकाशक और मुद्रण व प्रकाशन स्थल का नाम उसमें मुद्रित नहीं था।

अतः यह निर्णित हुआ कि इस लिफनेट में धारा 3 की अपेक्षाओं की पूर्ति नहीं की गई थी।

#### एलेवेडर प्रकरण में प्रतिपादित नियम

एलेवेडर प्रकरण (ए आई आर 57 मद्रास 427) निम्न नियम प्रतिपादित करता है—

#### (1) धारा 3 का आशय

धारा 3 जो प्रत्येक पुस्तक अथवा पत्र पर मुद्रक, मुद्रण-स्थल, और प्रकाशक व प्रकाशन-स्थल का नाम सुपाठ्यत मुद्रित किये जाने की अपेक्षा करती है उसके पीछे यह आशय है कि जनता को यह अवगत कराया जावे कि इसका जिम्मेदार मुद्रक या प्रकाशक कौन है।

#### (2) शब्द—“प्रकाशक” एक सीमित भाव में

अधिनियम में प्रयोग में आया शब्द “प्रकाशक” एक सीमित भाव में है और यह पुस्तकों अथवा समाचारपत्रों के विक्रेता को शामिल नहीं करती है। धारा 12 सपठित धारा 3 यह स्पष्टतः बताती है कि ऐसे लोग प्रकाशकों में शामिल नहीं हैं लेकिन एक ऐसा आदमी जो पुस्तक मुद्रित करवाता है और जनता में इसको विमथाय जारी करता है, वह धारा 3 व 12 में एक प्रकाशक है (आई एल आर 23 कलकत्ता 414)

### (3) धारा 3 अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सकुचित नहीं करती

प्रेस की आजादी जिसका की आजकल अर्थ लगाया जाता है, वह हाल ही की उत्पन्न धारणा है, इसका वर्णन इंग्लिश पिटिशन ऑफ राइटस में नहीं मिलता। इस शब्द का शाब्दिक अर्थ सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना प्रकाशन की स्वतंत्रता मात्र है। यानि कोई अदावत इस प्रकार के प्रकाशन की आजादी पर रुकावट नहीं डाल सकती। लेकिन वास्तव में क्या छपा है, इसका अदालतें देख सकती हैं। इसी प्रकार का विचार अमेरिकन बिल ऑफ राइटस में मिलता है। इस प्रकार बोलने व लिखने की आजादी सारत प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष सेंसरशिप से मुक्त होने की आजादी है। अदालतों ने सविधान द्वारा संरक्षित मूलभूत मूल्यों के रक्षण प्रेस की आजादी को व्याख्यायित किया है।

धारा 3 किसी भी तरह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सकुचित नहीं करती सिफ मानहानिजन्य, राष्ट्र विरोधी, अलगाववादी, अश्लील व अदालत की अवमानना जैसे कृत्या से बचाने के लिए इस आजादी व दुरुपयोग पर रोक लगाती है। राज्य अपनी शासन शक्तियों के प्रयोग में इस धारा में वर्णित सूचनाओं से अवगत कराने पर जोर देता है। इस तरह से यह धारा भारतीय सविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) द्वारा गारंटीयुक्त मूल अधिकार से असंगत नहीं है।

### (4) मुद्रणयत्रपाल घोषणा करेगा

(1) ऐसी कोई व्यक्ति, पुस्तक या पत्राक मुद्रण के लिए कोई मुद्रण यत्र अपने कब्जे में न रखेगा जिसमें कि निम्नलिखित घोषणा उस जिला, प्रसीडेंसी या उपखण्ड मजिस्ट्रेट के समक्ष न की हो और हस्ताक्षरित न की हो जिम्मेव स्थानीय क्षेत्राधिकार के अन्दर कि ऐसा मुद्रणयत्र है

मैं कब घोषित करता हूँ कि मुद्रण के लिये मेरे पास एक मुद्रणयत्र है।'

और रिक्त स्थान में ऐसे स्थान का ठीक-ठीक अभिवर्णन करा जायेगा जहाँ कि ऐसा मुद्रणयत्र आस्थित है।

(2) जितनी बार वह स्थान जहाँ मुद्रणयत्र रखा है, बदला जाये, उतनी बार नई घोषणा आवश्यक होगी

परन्तु जबकि परिवर्तन साठ दिनों के अन्तर्गत किसी कालावधि के लिए है और वह स्थान जहाँ परिवर्तन के पश्चात् मुद्रणयत्र रखा गया है उप धारा (1) में निर्दिष्ट मजिस्ट्रेट के स्थानीय क्षेत्राधिकार के अन्दर है, तब यदि

(क) उम परिवतन से सम्बद्ध कयन उक्त मजिस्ट्रेट को परिवतन के चाबीस घटे के अन्दर दे दिया गया है, और

(ख) मुद्रण्यत्रपाल वही व्यक्ति चला आ रहा हो तो कोई नई घोषणा आवश्यक न होगी।

### राज्यों द्वारा सशोधन

#### हिमाचलप्रदेश

हिमाचलप्रदेश राज्य में इसकी प्रयुक्ति में पंजाब जैसे सशोधन ही हैं सिवाय उपधारा 3 में आए शब्द (अनलेश दी सिज्ञेशन इन फोस) के (- 1974 का हिप्र अधि 17 (27 8 1974))

#### पंजाब हरियाणा चण्डीगढ़

पंजाब, हरियाणा और केन्द्रशासित चण्डीगढ़ राज्यों में इसकी प्रयुक्ति में, धारा 4 में निम्न उपधाराएँ जैसी कि 1957 के पंजाब अधि 15 द्वारा पुन सस्थाकृत की हुई है जोड़ी हुई मानी जायेगी अर्थात् -

(3) ज्योंही पुस्तकें व पत्रों के मुद्रणार्थ एक मुद्रण्यत्र जो बंद पड़ा हुआ था, पुन काम करना चालू कर देता है, एक नया घोषणापत्र आवश्यक होगा जब तक कि भारतीय मुद्रण (घापातकाल शक्तिर्था) अधि 1931 की धारा 3 (3) या 5 (1) अथवा अन्य प्रबन्धीय विधि के तहत दिए गए आदेश की अनुपालना न करने के कारण उसका निवर्तन न हुआ हो।

(4) इस अधिनियम के उद्देश्यों के लिये एक मुद्रण्यत्र काम करने से बंद पड़ा माना जाएगा यदि उसमें 6 माह से अनवरत कोई पुस्तक या पत्र मुद्रित नहीं किए गए हैं - 1942 का पंजाब अधि 14 धारा - 2 (1 1-1943) 1966 का अधि 31, धारा 88 (1-11 1966)

#### तमिलनाडु

सम्पूर्ण तमिलनाडु में इसकी प्रयुक्ति में धारा 4 में उपधारा 2 के बाद निम्न उपधारा और अर्थात् -

(3) (क) जहाँ कोई मुद्रण्यत्र जिसके सम्बन्ध में इस धारा के तहत एक घोषणा की हुई है।

(1) इस घोषणा के 3 माह की अवधि में पुस्तकों या पत्रों का मुद्रण प्रारम्भ नहीं करता है तो एसी घोषणा शून्य होगी या



(11) उपखण्ड (1) में वर्णित अवधि के दौरान मुद्रण तो प्रारम्भ हो गया हो परन्तु 3 माह से अधिक की अवधि के लिए पुस्तकों और पत्रों का मुद्रण बंद पड़ा हो तो ऐसी घोषणा प्रभावशील नहीं रहेगी।

(ख) कोई भी मुद्रणयत्र जिसकी घोषणा इस धारा के तहत पेश की हुई है जो खण्ड (क) में शून्य या प्रभावहीन हो चुकी है एक नई घोषणा को पेश किए बिना पुस्तकों या पत्रों के मुद्रण हेतु प्रारम्भ या पुनः प्रारम्भ नहीं होगा - 1960 का तमिलनाडू अधि 14 धारा - 2 (14 9 1960) 1962 का 14 धारा - 2 और अनुसूची 1 - (9 1 1963)

### राज्य सशोधनों द्वारा नयी धारा

पंजाब हरियाणा चण्डीगढ़

पंजाब हरियाणा और केंद्रशासित चण्डीगढ़ राज्यों में इसकी प्रयुक्ति में, धारा 4 के बाद निम्न नई धारा जोड़ी जावे अर्थात् -

4क जहां एक मुद्रणयत्र के सम्बन्ध में धारा 4 के तहत कोई घोषणा प्रस्तुत की और हस्ताक्षरित की जाती है घोषणा (मुद्रणयत्र का वही व्यक्ति धारक हो के मामला को छोड़कर) स्वीकार नहीं की जावगी जब तक कि राज्य सरकार से या अथवा जाचापरात मजिस्ट्रेट सतुष्ट न हो कि जो मुद्रणयत्र प्रारम्भ होने को है उसका नाम पंजाब राज्य में पहले से ही अस्तित्व में आये हुए किसी दूसरे मुद्रणयत्र के नाम से हूबहू मिलता न हो - 1957 का पंजाब अधि 15 धारा 4 (13-7 1957) 1966 का अधि 31 धारा 88 (1 11 1966)

हिमाचलप्रदेश

हिमाचलप्रदेश राज्य में इसकी प्रयुक्ति में पंजाब राज्य जैसे ही सशोधन हैं सिवाय इसके कि इन सशोधनों में "पंजाब" शब्द के स्थान पर हिमाचलप्रदेश वर्णित किया गया जाता है - 1974 का हिप्र अधि 17, धारा 3 (27 8 1974)

### टिप्पणियाँ

धारा 4 यह आदेश देती है कि एक मुद्रणालय रखने के पूर्व उसके धारक का इस आशय की एक घोषणा प्रस्तुत व हस्ताक्षरित करनी होगी की वह अमुक स्थान पर एक मुद्रणालय रखता है। यह घोषणा उस जिला/मेट्रोपालिटान/उपखण्डीय मजिस्ट्रेट जिसके विक्षेत्र में यह मुद्रणालय स्थिति है, के सम्मुख पेश और हस्ताक्षरित करनी होगी।

द्वि आशय

यह धारा द्वि आशय रखती है। प्रथम, कायकारी प्राधिकारी यह जान मके कि यह मुद्रणालय कहा स्थित है और द्वितीय, वह यह भी जान सके कि इस मुद्रणालय का कौन व्यक्ति प्रभारी है। (ए 1931 अद्य 81 (82))

मजिस्ट्रेट के सम्मुख घोपणा

एक सक्षम मजिस्ट्रेट के सम्मुख मुद्रणालय रखने के लिए वैधानिक घोपणा आवश्यक है। (ए आई आर 1960 उटीसा 126 (127))

यद्यपि इस धारा मे इस प्रकार की घोपणा के लिए कोई विस्तृत प्रपत्र नहीं दिया गया है तब भी घोपणाकर्ता को जहा मुद्रणालय स्थित है, उसका ठीक ठीक वास्तविक विवरण और स्वयं धारक को अपना विश्वसनीय पता भी कानूनी पेचीदगियों मे बचने के लिए देना चाहिए। इस धारा के उल्लघन पर 2000/- रु तक का जुर्माना और 6 माह तक की सजा अथवा दोनों ही दी जा सकती हैं।

यहां "पत्र" से तात्पर्य न केवल "समाचारपत्र" ही नहीं बल्कि कोई दस्तावेज भी है। मात्र घोपणा प्रस्तुत करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि इस पर नीचे घोपणाकर्ता के हस्ताक्षर भी यह सहमति व्यक्त करने के लिए होने चाहिए कि घोपणाकर्ता घोपणा की विषयवस्तु से सहमत है।

राजस्थान मे मुद्रणालय के धारक को यदि मुद्रणालय किसी भवन के किसी भाग मे स्थित है तो घोपणा मे उस भाग का ठीक-ठाक वर्णन जा उस मजिस्ट्रेट के मत मे जिसके सम्मुख घोपणा की जाती है, उस स्थान को पहचानने मे पर्याप्त है भी देना होगा। (देखिये राजस्थान नियम 3)

यदि दो या दो स अधिक व्यक्ति एक ही मुद्रणालय के धारक होने की घोपणा करें तो जिला मजिस्ट्रेट प्रत्येक घोपणाकर्ता से यह अपेक्षा करता कि वह घोपणा मे यह वर्णित करे कि वह उस प्रेस का संयुक्त धारक है (देखिये राजस्थान नियम 3 स) मु पु अधि की धारा 4 स्पष्टतया धारा 5(2) मे वर्णित प्रावधान की तरह मजिस्ट्रेट के सम्मुख व्यक्ति अथवा किसी एजेंट द्वारा उपयुक्त होने के बारे मे नहीं बताती तबिन "मजिस्ट्रेट के सम्मुख" आया शब्द यह उजागर करता

दिखाई देता है कि इस धारा के गठनकर्त्ताओं का आशय यह रहा है कि घोषणा को पेश करना और हस्ताक्षरित करने का कार्य एक मजिस्ट्रेट के सम्मुख ही होना चाहिए। इस तक के आधार पर इस धारा के तहत डाक से घोषणा भेजना आशयित नहीं है। मु. पु. अधि की धारा 4(2) के तहत एक सामान्य नियम यह है कि ज्योही मुद्रणालय का स्थान बदला जावे तो एक नई घोषणा जरूरी होगी लेकिन ऐसे स्थान का अस्थाई परिवर्तन इसका अपवाद है। वशतें -

(i) यह परिवर्तन 60 दिनों से अधिक का न हो और

(ii) परिवर्तित स्थान उक्त धारा 1 में वर्णित मजिस्ट्रेट के स्थानीय क्षेत्राधिकार में आता हो और

(iii) मुद्रणालय का धारक पूर्ववत् ही हो और

(iv) ऐसे परिवर्तन की सूचना 24 घण्टों के भीतर वर्णित मजिस्ट्रेट को यहाँ भिजवा दी गई हो।

### स्वामित्व

ऐसी घोषणा के प्रस्तुतिकरण और सत्यापन के अभाव में मुद्रणालय के धारक के मुद्रणालय पर स्वामित्व को मान्यता नहीं दी जा सकती। (ए 1969 आ प्र 530 (532))

मुद्रणालय का घोषित धारक कोई जरूरी नहीं कि वह उसका ऐसा स्वामी भी हो जो किसी दूसरे को उसका स्वामित्व हस्तांतरित कर सके।

मुद्रणालय का स्वामित्व सामान्य विधि का विषय है। अतः ऐसी स्थिति में सामान्य विधि का अनुसरण करना चाहिए। (ए 1962 सुप्रीम कोर्ट 586 (588))

### मुद्रणालय का प्रयोग

कोई मुद्रणालय धारा 4 में आता है या नहीं यह इस बात पर निर्भर करता है कि यह मुद्रणाय है अथवा इसका धारक इसको मुद्रणाय रखने का आशय रखता है या नहीं। (ए 1931 पटना 351 (352))

### व्यक्ति अथवा परिसर में परिवर्तन

यदि घोषित मुद्रणालय उसी स्थान पर है जिसके सम्बन्ध में घोषणा की गई है चाहे उसका धारक बदल गया हो, कोई नई घोषणा की आवश्यकता नहीं है। (ए 1931 अघ 1981 (82))

जब एक बार धारा 4 में मुद्रणालय घोषित हो गया है तो उसी स्थानीय क्षेत्राधिकार में इसके परिसर में मामूली परिवर्तन नई घोषणा की आवश्यकता पैदा नहीं करता। (1889 पूना (त्री) न 9 पृ 49 (50))

### विषयवस्तु की जानकारी

धारा 4 की घोषणा किसी पम्फलेट की विषयवस्तु की घोषणाकर्ता की जानकारी में होने की साक्ष्य नहीं है यद्यपि इस पर ऐसे प्रश्न को तय करने के लिए अग्र सामग्री के साथ विचार किया जा सकता है। विषयवस्तु की जानकारी दूसरे तथ्यों की तरह ही सिद्ध किया जाना चाहिए। जस्टिस क्रम्प ने कहा है कि मुद्रणालय के धारक का मुद्रित सामग्री से कोई सम्बन्ध है, इसकी विस्तार में जाये बिना यह धारणा लेना असम्भव है कि वह अपनी प्रेस में मुद्रित प्रत्येक पुस्तक की विषयवस्तु को जानता है। (ए 1923 बम्बई 255 (258, 260))

एक आपत्तिजनक लेख के प्रकाशन के पूर्व लम्बे समय तक जेल में रहने वाला घोषणाकर्ता का मुद्रणालय पर नियन्त्रण नहीं माना जा सकता। अतः वह उस लेख के प्रकाशन के लिए दोष सिद्ध नहीं किया जा सकता। (मद्रास 714)

### घोषणा को प्राप्त करना एक प्रशासकीय कर्तव्य

धारा 4 में अपेक्षित घोषणा एक बार मजिस्ट्रेट के सम्मुख प्रस्तुत कर दी गई हो तो इस अधिनियम के तहत मजिस्ट्रेट को यह शक्ति नहीं है कि वह इसे निलम्बित अथवा निरस्त कर दे अथवा सम्बन्धित मुद्रणालय के स्वामित्व अथवा कब्जा सम्बन्धी प्रश्न को तय करे। धारा 4 में अपेक्षित घोषणा को प्राप्त करना पूर्णतया एक मन्त्रालयिक कार्य है न कि ऐसा न्यायिक कार्य जिसमें मजिस्ट्रेट को घोषणा पेश करने की स्वीकृति देने अथवा न देने सम्बन्धी जांच का अधिकार होता है। (ए 1964 गुजरात 278 (281))

### धारा 6 का प्रमाणीकरण धारा 4 पर लागू नहीं

मु. पु. अधि. की धारा 6 में एक घोषणा जो धारा 5 में प्रस्तुत हुई है, प्रमाणिकरण करने तत्सम्बन्धी प्रावधान धारा 4 में प्रस्तुत घोषणा पर लागू नहीं होते। (ए 1964 गुजरात 278 (281))

धारा 3 व 4 में कौन परिवार कर सकता है

धारा 3 व 4 के प्रावधानों को उल्लंघन करने सम्बन्धी अपराध मावजनिक नीति के विरुद्ध हैं अतः एक सामान्य व्यक्ति भी धारा 12 व 13 के तहत मुद्रणालय के प्रभारी व नियन्त्रक के विरुद्ध परिवार कर सकता है। (1973) 2 मैसूर एल जे 553 (556)

### 5 समाचारपत्र प्रकाशन सम्बन्धी नियम

कोई समाचारपत्र एतत्पश्चात् बनाये गये नियमों के अनुवर्तन क सिवाय भारत में प्रकाशित नहीं किया जायेगा।

(1) धारा 3 के प्रावधानों को घाघात पहुँचाये बिना ऐसे प्रत्येक समाचार पत्र की प्रत्येक प्रति में उसके मालिक व सम्पादक का नाम प्रकाशन की तिथि स्पष्टतः मुद्रित रूप में अन्तर्विष्ट होगी।

(2) ऐसे प्रत्येक समाचारपत्र का मुद्रक तथा प्रकाशक स्वयं या धारा 20 के अधीन बनाए गए नियमों के अनुकूल हम सम्बन्ध में प्राधिकृत अधिकता द्वारा उम जिला, प्रेसीडेंसी या उप-खण्ड मजिस्ट्रेट के समक्ष उपसजात होगा जिसके स्थानीय क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत ऐसा समाचारपत्र मुद्रित या प्रकाशित किया जायेगा और दो प्रतिमा में निम्नलिखित घोषणा करेगा

“मैं, क ख घोषित करता हूँ कि मैं नामक और

मैं यथास्थिति मुद्रित या प्रकाशित किये जाने वाले या मुद्रित और प्रकाशित किये जाने वाले समाचारपत्र का मुद्रक (या प्रकाशक या मुद्रक और प्रकाशक) हूँ।

और घोषणा के इस प्रारूप के परवर्ती रिक्त स्थान में उस परिसर का ठीक-ठाक पता भरा जायेगा जहाँ मुद्रण या प्रकाशन किया जाता है।

(2क) नियम (2) के अधीन प्रत्येक घोषणा में समाचारपत्र का नाम वह भाषा जिसमें उसका प्रकाशन होने वाला है तथा उसका प्रकाशन का काला बधीयता का उल्लेख होगा और ऐसी अन्य विशिष्टियाँ अन्तर्विष्ट होंगी जसों कि विहित की जावें।

2(ख) जब नियम 2 के तहत घोषणा करने वाला समाचारपत्र का मुद्रक या प्रकाशक उसका मालिक नहीं है तो घोषणा मालिक के नाम के बरान से युक्त होगी तथा घोषणा व साथ मालिक द्वारा लिखित में वह प्राधिकार भी हागा जिसमें उसे ऐसी घोषणा करने तथा उस पर हस्ताक्षर करने का प्राधिकार दिया गया हो।

2 (ग) समाचारपत्र प्रकाशित करने के पूर्व नियम-2 के तहत उस समाचारपत्र के सम्बन्ध में एक घोषणा और उसका धारा 6 तहत प्रमाणीकरण आवश्यक होगा।

2 (घ) जब किसी समाचारपत्र का शीपक या इसकी भाषा या इसके प्रकाशन की कालावधि परिवर्तित हो तो घोषणा प्रभावशील नहीं रहेगी और उस समाचारपत्र को जारी कर सकने के पूर्व एक नई घोषणा आवश्यक होगी।

2 (ङ) जितनी बार एक समाचारपत्र का स्वामित्व बदला जावे उतनी बार नई घोषणा आवश्यक होगी।

3 जितनी बार मुद्रण या प्रकाशन का स्थान बदला जाये, नई घोषणा आवश्यक होगी।

परन्तु जब कि परिवर्तन तीस दिन से अनधिक कालावधि के लिये है और परिवर्तन के बाद के मुद्रण या प्रकाशन का स्थान नियम (2) में निर्दिष्ट मजिस्ट्रेट के स्थानीय क्षेत्राधिकार में है, जब यदि

(क) उस परिवर्तन के सम्बन्ध में कथन उक्त मजिस्ट्रेट को परिवर्तन के चौबीस घंटे के अन्दर दे दिया जाता है, और

(ख) उस समाचारपत्र का मुद्रक या प्रकाशक या मुद्रक और प्रकाशक वही बना रहता है,

तो कोई नयी घोषणा आवश्यक न होगी।

4 जितनी बार मुद्रक या प्रकाशक जिसने यथा पूर्वोक्त घोषणा की हो, नब्बे दिन से अधिक अवधि के लिये भारत के बाहर जायेगा, या जहाँ ऐसा मुद्रक या प्रकाशक शारीरिक अक्षमता या किन्हीं कारणों से परिस्थितिवश वा उसकी नियुक्ति अवकाशजय न हो नब्बे दिन से अधिक अवधि के लिए अपने कर्तव्यों के निर्वाहन में असमर्थ हो तो एक नई घोषणा करना आवश्यक होगा।

5 जहाँ कि

(क) सप्ताह में एक या एक से अधिक बार प्रकाशित होने वाले समाचारपत्र की अवस्था में घोषणा के धारा 6 के तहत प्रमाणीकरण से 6 सप्ताह के अन्दर और

(ख) किसी अन्य समाचारपत्र की अवस्था में घोषणा के धारा 6 के तहत प्रमाणीकरण के तीन मास के अन्दर, समाचारपत्र का प्रकाशन आरम्भ नहीं हो जाता, वहाँ समाचारपत्र की बाबत की गई प्रत्येक घोषणा शून्य हो जायगी और प्रत्येक ऐसी अवस्था में समाचारपत्र के प्रकाशित प्रकाशित किये जा सकने के पूर्व नई घोषणा आवश्यक होगी।

(6) जहाँ कि तीन मास की किसी कालावधि में कोई दैनिक पाक्षिक, त्रिसाप्ताहिक, अर्धसाप्ताहिक या साप्ताहिक समाचारपत्र जिस सख्या में एक प्रकाशित करता है वह उस सख्या की भाँसे से कम है जितनी में कि तनिमित्त की गई घोषणा के अनुकूल वह प्रकाशित होना चाहिए था, वहाँ घोषणा प्रभाव शील न रहेगी और इसके पूर्व कि समाचारपत्र प्रकाशन जारी रखा जा सके, नई घोषणा आवश्यक होगी ।

(7) जहाँ कि किसी अथ समाचारपत्र ने अपना प्रकाशन बारह मास से अधिक कालावधि के लिए बंद रखा है वहाँ तनिमित्त की गई प्रत्येक घोषणा प्रभावशाली न रहेगी और इसके पूर्व कि समाचारपत्र पुनः प्रकाशित किया जा सके नई घोषणा आवश्यक होगी ।

(8) समाचारपत्र के सम्बन्ध में प्रत्येक विद्यमान घोषणा उस मजिस्ट्रेट द्वारा अपखण्डित कर दी जायेगी जिसके सामने उसी समाचारपत्र के सबंध में नई घोषणा की और हस्ताक्षरित की जाती है

परन्तु इस धारा द्वारा विहित घोषणा करने के लिए अनुना ऐस किसी व्यक्ति को नहीं दी जायगी जो भारत में साधारणतः निवास न करता हो अथवा जिसने भारतीय वयस्कता अधिनियम 1875 (1875 का 9) के उपबंधों के अनुकूल या वयस्कता प्राप्ति के सबंध में जिस विधि के वह अधीन है, उस विधि के अनुकूल वयस्कता प्राप्त नहीं कर ली है और न एसा कोई व्यक्ति किसी समाचारपत्र का संपादन करेगा ।

### राज्यों द्वारा सशोधन

पंजाब, हरियाणा और चण्डीगढ़

पंजाब हरियाणा और केन्द्रशासित चण्डीगढ़ राज्यों में इसकी प्रयुक्ति में 1942 के पंजाब अधि 14 द्वारा धारा 5 में शामिल उप धारा (2क) व धारा 5 के पंजाब अधि 15 (1957 का) की धारा 3 (13 7 1975) द्वारा निरमित्त कर दी गई थी - 1966 का अधि 31 धारा 88 (1 11 1966)

### टिप्पणियाँ

इस धारा में समाचारपत्रों के प्रकाशन सम्बन्धी विस्तृत नियम दिये गये हैं जिनकी अनुपालना के बिना कोई समाचारपत्र प्रकाशित नहीं होगा ।

मु पु अधि की धारायें 3 व 5 (1) सपठित के नि 8 अपेक्षा करती है कि प्रत्येक समाचारपत्र के प्रत्येक अंक की प्रत्येक प्रति पर निम्न विवरण सुपाठ्यत मुद्रित होगा -

- (1) मुद्रक का नाम
- (2) मुद्रण-स्थल यानि मुद्रणालय का नाम, इसके ठीक-ठाक वास्तविक वर्णन के साथ
- (3) प्रकाशक का नाम
- (4) प्रकाशन का स्थल
- (5) स्वामी का नाम
- (6) सम्पादक का नाम
- (7) इसके प्रकाशन की तिथि
- (8) फुटकर विन्नी मूत्य अथवा "यह नि शुल्क वितरण के लिए है", जसी भी अवस्था हो

धाराएँ 3 व 5(1) इस बात के लिए बाध्य नहीं करती कि उपरोक्त विवरण किसी विशेष पृष्ठ के विशेष स्थान पर ही प्रकाशित हो लेकिन इन धाराओं के कानून निर्माताओं का आशय यह दिखाई देता है कि यह विवरण उपयुक्त स्थान पर जो प्रथम पृष्ठ व अन्तिम पृष्ठ हो सकता है, पर मुद्रित होना चाहिए, ताकि पाठकगण इन नामों और स्थानों के बारे में आसानी से अच्छी तरह जान सकें ।

क्रम सख्या 1 से 6 के विवरण केन्द्रीय नियमों के नियम 8(2) द्वारा निर्धारित इम्प्रिन्ट लाइन में पहले से ही शामिल किये हुए हैं । नियम 8(2) निम्न प्रकार है -

प्रत्येक समाचारपत्र की प्रत्येक प्रति में निम्न प्रारूप में साफ तौर से मुद्रक, प्रकाशक, मालिक और सम्पादक का नाम और मुद्रण तथा प्रकाशन का स्थान मुद्रित होगा -

मालिक का नाम " की तरफ से (मुद्रक का नाम) द्वारा  
(मुद्रण यत्र का नाम) में मुद्रित और (प्रकाशक का नाम)  
द्वारा (प्रकाशन स्थल का नाम) से प्रकाशित ।

नोट -यह प्रारूप प्रत्येक समाचारपत्र की परिस्थितियों के अनुसार सशोधित किया जा सकता है, उदाहरणतया जहाँ मुद्रक, प्रकाशक और मालिक एक ही हो तो इम्प्रिन्ट लाइन द्वारा मुद्रित, प्रकाशित



श्रीर स्वामित्वाधीन ध्यापी जा सकती है। फिर भी, सम्पादक का नाम प्रत्येक मामले में अलग से दिया जावेगा। इन धाराओं की कार्यविधि को सहज ही नहीं लेना चाहिए। मुद्रक, मुद्रण-स्थल, प्रकाशक, प्रकाशन-स्थल, स्वामी और सम्पादक के स्थायी या डाक के ठीक-ठाक पते मुद्रित होने चाहिए। इन नामों के मुद्रण में किसी प्रकार की अस्पष्टता या द्विअर्थता नहीं होनी चाहिए। इन विवरणों के अप्रकाशन से 4000 रु तक जुर्माना और एक वर्ष तक की सजा अथवा दोनों (यानि धाराएँ 12 और 15 में प्रत्येक में 2000/ 2000/- तक का जुर्माना और 6 6 माह तक की सजा या दोनों) घोषणा का निरस्तीकरण इन सजाओं से अलग है, दिया जा सकता है।

प्रत्येक वर्ष के फरवरी माह के अन्तिम दिन के पश्चात् प्रकाशक प्रथम अंक में के नि 8(1) में दिये गये फाम IV के विवरणों को प्रकाशक प्रकाशित करेगा।

धारा 19 घ(ख) द्वारा फाम IV में अपेक्षित वार्षिक विवरणों के अप्रकाशन से धारा 19 ट के तहत 500 रु तक का जुर्माना किया जा सकता है।

### घोषणा को प्रस्तुत करना व हस्ताक्षरित करना

प्रत्येक समाचारपत्र का मुद्रक व प्रकाशक या इस सम्बन्ध में कोई अधिकृत एजेंट संबंधित राज्य सरकार द्वारा धारा 20 में बनाये गये यदि कोई नियम है तो उनके तहत जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखंडीय मजिस्ट्रेट जिसके कि स्थानीय क्षेत्राधिकार में ऐसा समाचारपत्र मुद्रित अथवा प्रकाशित होगा, के सम्मुख उपस्थित होगा और के नि 3 के निर्धारित फाम I में दो प्रतियों में घोषणा पत्र और हस्ताक्षरित करेगा।

धारा 5 (2 ग) के तहत किसी समाचारपत्र को प्रकाशित करने के पूर्व धारा 5 (2) के तहत घोषणा को प्रस्तुत करना और उसे धारा 6 में प्रमाणित कराना आवश्यक होगा।

### स्वामी द्वारा प्राधिकार

जब धारा 5 (2) के तहत घोषणा को पेश करने वाला समाचारपत्र का मुद्रक या प्रकाशक उस समाचारपत्र का मालिक नहीं हो तो घोषणा पत्र में मालिक का नाम विशेष रूप से उल्लेख में आयेगा और घोषणा पत्र के साथ मालिक द्वारा प्रदत्त इस आशय का लिखित

प्राधिकार की घोषणा प्रस्तुतकर्ता को ऐसी घोषणा पेश करने और हस्ताक्षरित करने का प्राधिकार है, सलग्न करना होगा ।

नई घोषणा कब आवश्यक होती है ?

(1) जब समाचारपत्र का नाम या इसकी भाषा या इसकी अवधिकालिका परिवर्तित हो ।

(ii) जब समाचारपत्र का स्वामित्व बदले ।

(iii) जब मुद्रण या प्रकाशन का स्थान बदले ।

### अपवाद

उपरोक्त नियम का एक निम्न अपवाद भी है -

(क) जब परिवर्तन तीस दिनों से अधिक का न हो ।

(ख) और परिवर्तित मुद्रण अथवा प्रकाशन का स्थान स्थानीय क्षेत्राधिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट के क्षेत्र में हो यदि

(ग) इस परिवर्तन से सम्बन्धित विवरण इस वर्णित मजिस्ट्रेट के यहाँ भिजवा दिया गया हो और

(घ) मुद्रक या प्रकाशक या मुद्रक व प्रकाशक समाचारपत्र का वही हो ।

(iv) (क) जब मुद्रक या प्रकाशक जिसने कि ऐसी घोषणा की है 90 दिनों से अधिक अवधि के लिए भारत छोड़कर चला गया हो या

(ख) जब मुद्रक या प्रकाशक शारीरिक अक्षमता या अन्यथा 90 दिनों से अधिक अवधि के लिए अपने व्यावसायिक दत्तव्यों को करने में असमर्थ हो । लेकिन यह अवधि उसकी नियुक्तिजन्य अवकाश नहीं होना चाहिए ।

(v) जब समाचारपत्र प्रारम्भ न हो -

(क) एक सप्ताह में अथवा कभी-कभी प्रकाशित होने वाले समाचारपत्र के मामले में घोषणा के प्रमाणित हान के 6 सप्ताह के अन्दर समाचारपत्र के प्रकाशन की शुरुआत न होने पर और

(ख) अन्य समाचारपत्र के मामले में घोषणा के प्रमाणीकरण के 3 महीनों के अन्दर उसके प्रकाशन की शुरुआत न होने पर ।

(vi) जब 3 मास की किसी अवधि में कार्दैनिक, पाक्षिक, त्रिसप्ताहिक, षडसाप्ताहिक या साप्ताहिक समाचारपत्र जिस काल में

अक प्रकाशित करता है वह उस सख्या के आधे से कम है जितने कि इस सम्बन्ध में की गई घोषणा के अनुसार प्रकाशित होने चाहिए थे ।

(vii) जब किसी अन्वय समाचारपत्र ने अपना प्रकाशन 12 मास की अवधि से अधिक अवधि के लिए बन्द रखा है ।

जब नई घोषणा आवश्यक होती है तो ऐसी स्थिति में कानून निर्माताओं की इच्छा यह उजागर दिखती है कि निकटस्थ पुरानी घोषणा प्रभावहीन हो जाएगी, बावजूद इस तथ्य के कि ऐसी इच्छा सम्बन्धित धारा में उजागर की गयी हो या नहीं ।

धारा 5 और के नि 3 के तहत फाम I यह दिखाते नजर आते हैं कि धारा 5 के प्रयोजनों के लिए सभी प्रकार की घोषणाएँ उदाहरणतः अभिनव घोषणा अथवा किसी भी प्रकार के परिवर्तन के सम्बन्ध में घोषणा अथवा नई घोषणा के लिए फाम I ही निर्धारित किया हुआ है ।

**घोषणाकर्ता की वयस्कता और उसका भारत में साधारणतः निवास**

धारा 5 की उपधारा 8 की शुरुआती कड़िका एक सामान्य नियम से सम्बन्धित है जिसमें कहा गया है कि समाचारपत्र के सम्बन्ध में प्रत्येक विद्यमान घोषणा उस मजिस्ट्रेट द्वारा निरस्त कर दी जाएगी जिसके सामने उसी समाचारपत्र के सम्बन्ध में नई घोषणा प्रस्तुत और हस्ताक्षरित की गई हो ।

इस उपधारा की अंतिम कड़िका एक "परन्तु" से सम्बन्धित है जो उपरोक्त सामान्य नियम का "परन्तु" दिखाई देता है जिसमें कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति इस धारा के तहत घोषणा करने को स्वीकृत नहीं होगा यदि —

(1) घोषणाकर्ता भारत में साधारणतः निवास नहीं करता हो या ।

2 (क) घोषणाकर्ता ने भारतीय वयस्कता अधिनियम 1875 के उपबन्धों के अनुकूल वयस्कता प्राप्त नहीं की हो या

(ख) उसने उस विधि के अनुकूल वयस्कता प्राप्त नहीं की जिस विधि में वह अधीन है ।

इस उपधारा से यह स्पष्ट नहीं होता है कि यह प्रावधान शुरुआती कड़िका में वर्णित नई घोषणा अथवा अभिनव घोषणा (यानि समाचार-

पत्र के मुद्रण व प्रकाशन के प्रारम्भ करने के पूर्व वाली घोषणा) या दोनो से सम्बन्धित है।

शुरूआती कन्डिका में आये शब्द "एक नई घोषणा" और इस धारा द्वारा निर्धारित घोषणा एक दूसरे से विरोधाभासी दिखाई देते हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि यह धारा स्वयं धारा 5 से अथवा धारा 5 की उपधारा 8 से तात्पर्य रखती है। यदि यह धारा 5 से सम्बन्ध रखती है तब तो यह अभिनव और नई घोषणा दोनो से ही सम्बन्ध रखती है और यदि यह सिर्फ धारा 5 की उपधारा 8 से ही तात्पर्य रखती है तो यह सिर्फ नई घोषणाओं पर ही लागू होगा।

अंतिम कन्डिका में जो भारत में साधारणतः निवास से सम्बन्धित है, के तत्काल बाद आया शब्द "अथवा" लगता है। इस उपधारा में गलती से वर्णित हो गया है। अतः सन्दर्भों को देखते हुए यहाँ शब्द "अथवा" से अर्थ "और" से लिया जाना चाहिए क्योंकि भारत में साधारणतः निवास और वयस्कता प्राप्ति सम्बन्धी प्रावधान इतने महत्त्वपूर्ण प्रावधान हैं कि कानून निर्माताओं का आशय इस रूप में लिया जाना चाहिए कि एक घोषणाकर्ता जो मुद्रक/प्रकाशक/मुद्रक व प्रकाशक कोई भी हो सकता है, को भारत का साधारणतः निवासी होने के साथ साथ उसका वयस्क होना भी जरूरी है। और यह प्रावधान अभिनव व नई दोनो ही प्रकार की घोषणाओं पर लागू होता है।

वयस्कता प्राप्ति से सम्बन्धित प्रावधान 1922 के अधिनियम 14 और भारत में साधारणतः निवास से सम्बन्धित प्रावधान 1960 के अधिनियम 26 द्वारा शामिल किए गए हैं। लेकिन वे नि 3 में निर्धारित फाम I को अभी तक तदानुसार सशोधित नहीं किया गया है। अतः फाम I की प्रविष्टियों के अतिरिक्त भी इस प्रकार का विवरण और दिया जाना चाहिए।

मु.पु. अधि की धारा 5 (8) के प्रयोजनों के लिए भारतीय वयस्कता अधिनियम 1875 के सम्बन्धित प्रावधान इस अधिनियम की द्वितीय कन्डिका की धाराएँ 3 (भारत में निवास कर रहे व्यक्तियों की वयस्कता आयु) और धारा 4 (वयस्कता की आयु की प्रणयना किस प्रकार की जानी है) में हैं।

भारतीय वयस्कता अधिनियम 1875 की द्वितीय कन्डिका में कहा गया है कि भारत में निवास कर रहा प्रत्येक व्यक्ति जब वयस्क माना जाएगा जब उसने अपनी आयु के 18 वर्ष पूरे कर लिए हों।

ऐसा न करने पर 31 दिसम्बर 1968 के बाद मुद्रणपत्र का धारक उस मुद्रणपत्र को अपने धब्बे में नहीं रख सकेगा तथा किसी समाचारपत्र का सम्पादक मुद्रक या प्रकाशक बने रहने से रुक जायेगा ।

यह धारा नई-नई शामिल की गयी है (देखिए 1965 का अधि 16 और 1968 का अधि 30) इस नई धारा में उपधारा - 1, मुद्रणालया व उपधारा-2 समाचारपत्रों से सम्बन्धित है ।

इस नयी धारा का समावेश इसलिए जरूरी हो गया था कि मु.पु. अधि की धारा - 1 में 'भारत' की परिभाषा में जो जम्मू, कश्मीर राज्य को अपवर्जित रखा गया था, वह तत्सम्बन्धी प्रावधान 1965 के अधि 16 द्वारा लाप कर दिया गया है । अब मु.पु. अधि सम्पूर्ण भारत पर लागू होता है । (देखिए धारा 22)

### (6) घोषणा का प्रमाणीकरण

यथापूर्वोक्त की धोर हस्ताक्षरित की गई प्रत्येक घोषणा की दो मूल प्रतियां में से प्रत्येक को वह मजिस्ट्रेट अपने हस्ताक्षर करके धार पदीय मुद्रा लगा कर प्रमाणीकृत करेगा जिसके सामने कि उक्त घोषणा की गई है ।

परन्तु जहाँ कि किसी समाचारपत्र की बाबत कोई घोषणा धारा 5 के अधिन की धोर हस्ताक्षरित की गई है वहाँ जब तक कि मजिस्ट्रेट का समाधान प्रेस रजिस्ट्रार से की गयी जाँच से न हो जाये कि प्रकाशित किये जाने के निये प्रस्थापित समाचारपत्र का नाम या तो वही या वसा ही नहीं है जो कि या तो उसी भाषा में या उसी राज्य में प्रकाशित किसी अन्य समाचार का है वह घोषणा उस समाचारपत्र की अवस्था में के सिवाय, जिसका स्वामी वही व्यक्ति है ऐसे प्रमाणीकृत न की जायगी ।

### निक्षेप

उक्त मूल प्रतियां में से एक मजिस्ट्रेट के कार्यालय के अभिलेख में निक्षेप की जायेगी और दूसरी उच्च न्यायालय के या उस स्थान के जहाँ उक्त घोषणा की गई है धारमिक क्षेत्राधिकार वाले प्रधान व्यवहार न्यायालय के अभिलेख में निक्षेप की जायेगी ।

### प्रतियों का निरीक्षण और प्रदाय

प्रत्येक मूल प्रति का मारसाधक पदाधिकारी एक रुपये की फीस दिये जाने पर उस मूल प्रति का निरीक्षण किसी व्यक्ति को करने देगा और उक्त घोषणा की ऐसी प्रति, जो कि उस न्यायालय की मुद्रा से अभिप्रमाणित है जिसकी

अभिरक्षा में मूल प्रति है दा रुपये की फीस के दिय जाने पर आवेदन करने वाले किसी व्यक्ति को देगा ।

मजिस्ट्रेट की पदीय मुद्रा से अभिप्रमाणित उस घापणा या घोपणा के प्रमाणीकरण को करने के अस्वीकारी आदेश की एक प्रति यथासमय घापणा करने और हस्ताक्षरित करने वाले व्यक्ति तथा प्रेस रजिस्ट्रार को भेजी जावेगी ।

### टिप्पणियाँ

धारा 6 इस प्रक्रिया को दर्शाती है कि एक घोपणा किस प्रकार प्रमाणित की जाती है । एक समाचारपत्र के सम्बन्ध में धारा 5 में प्रस्तुत व हस्ताक्षरित कोई घोपणा उस मजिस्ट्रेट द्वारा प्रमाणित होगी जो स्थानीय क्षेत्राधिकार रखता है । घोपणा के प्रमाणीकरण के पूर्व प्रेस रजिस्ट्रार से जाँच करने के बाद मजिस्ट्रेट का यह सतोप लेना आवश्यक है कि प्रस्तावित प्रकाशय समाचारपत्र का नाम या तो एक ही भाषा अथवा एक ही राज्य में किसी अन्य प्रकाशित समाचारपत्र के नाम से हूबहू नहीं मिलता हो ।

#### अपवाद

उपरोक्त नियम का एक अपवाद है — ऐसा समाचारपत्र जो एक ही व्यक्ति के स्वामित्व में हो —

धारा 6 अभिनव यहाँ तक कि नई घोपणाओं पर भी लागू होती है क्योंकि धारा 5 स्वयं अभिनव और नई दोनों घोपणाओं पर लागू होती है ।

#### शीर्षक (नाम) निष्कासन

धारा 6 आशय प्रकट करती है कि धारा 5 के तहत प्रस्तुत व हस्ताक्षरित घोपणा की प्राप्ति के बाद मजिस्ट्रेट प्रेस रजिस्ट्रार से यह जाँच करेगा कि प्रकाशन को प्रस्तावित समाचारपत्र या तो उसी भाषा में या एकही राज्य में प्रकाशित किसी अन्य समाचारपत्र के नाम से हूबहू नहीं मिलता है । इस प्रकार का निष्कासन प्रमाण-पत्र प्रेस रजिस्ट्रार से प्राप्त करने के बाद वह घोपणा को प्रमाणित करेगा अथवा नहीं ।

इस प्रकार का शीर्षक निष्कासन मजिस्ट्रेट के जरिये प्रेस रजिस्ट्रार से धारा 5 में घोपणा को प्रस्तुत व हस्ताक्षर करने के पूर्व भी शीर्षक

पुष्टि के रूप में प्राप्त किया जाकर घोषणा के साथ सलग्न किया जा सकता है। ऐसी दशा में, मजिस्ट्रेट के सम्मुख सिद्धाय घोषणा को प्रमाणित करने के अर्थ कोई विकल्प नहीं रहता है।

घोषणा के साथ इस प्रकार का शीपक निष्कासन प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करना धारा 6 में निहित आशय को फौत नहीं करता है।

### प्रमाणीकरण

इस प्रकार प्रस्तुत व हस्ताक्षरित प्रत्येक घोषणा की दोनों मूल प्रतियों में से हरेक को मजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर व पदीय मुद्रा के द्वारा प्रमाणित किया जाएगा।

धारा 6 विस्तार से यह नहीं बताती कि घोषणा को किस प्रकार प्रमाणित किया जावे। लेकिन मात्र शब्द — “प्रमाणित” अथवा इससे मिलता जुलता कोई दूसरा शब्द मजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर और अदालत की पदीय मुद्रा लगाने के पूर्व लिख देना मात्र इस धारा की भावना को पूरा नहीं करता। इस धारा की भावना को पूरी तरह कार्यान्वित करने के लिए एक छाटा सा निणय घोषणा फाम की पॉठ अथवा इसके हॉसिए पर लिखा जाना चाहिए।

इस प्रकार के संक्षिप्त निणय का प्रारूप निम्न प्रकार हो सकता है —

अदालत का नाम	"		
श्री	पुत्र	जाति	ग्राम
निवासी	स्वयं घोषणाकर्ता/या घोषणाकर्ता की तरफ से अधिकृत		
एजेन्ट मेरे सम्मुख	उपस्थित हुआ और मु	पु अधि की धारा	के
तहत उसने मेरे सम्मुख	यह घोषणा प्रस्तुत व	हस्ताक्षरित की।	

मैं सन्तुष्ट हूँ कि घोषणा के साथ प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा जारी शीपक निष्कासन प्रमाण-पत्र के सलग्न किये जाने अथवा प्रेस रजिस्ट्रार से यह जांच किये जान पर कि प्रकाशन के लिए प्रस्तावित समाचारपत्र का नाम या तो एक ही भाषा या एक ही राज्य में प्रकाशित किसी अन्य समाचारपत्र के नाम से हूबहू नहीं मिलता है।

मैं स्वामी द्वारा दिये गये प्राधिकार पत्र जिसके तहत इस घोषणा-कर्ता को यह घोषणा प्रस्तुत व हस्ताक्षरित करने का प्राधिकार दिया गया है का भी अवलोकन किया/अथवा घोषणाकर्ता स्वयं ही प्रस्तावित समाचारपत्र का स्वामी है अतः स्वामी से प्राधिकार अपेक्षित नहीं है।

अतः यह घोषणा मु. पु. अधि. की धारा 6 के तहत आज दिनांक माह सन् को मेरे हस्ताक्षर और इस अदालत की पदीय मुद्रा के तहत प्रमाणित किया जाता है।

पदीय मुद्रा

हस्ताक्षर मजिस्ट्रेट

दिनांक

मोहर

यदि मजिस्ट्रेट इस निष्कर्ष पर आता है कि घोषणा प्रमाणित नहीं की जानी चाहिए तो उसको घोषणा फाम की पीठ या उसके हॉसिए पर इसके कारणों का उल्लेख करते हुए तत्सम्बन्धी आदेश पारित करने चाहिए।

**अभिप्रमाणित प्रतियों का प्रेषण**

मजिस्ट्रेट को पदीय मुद्रा से अभिप्रमाणित उस घोषणा या घोषणा के प्रमाणीकरण, को करने के अस्वीकारी आदेश, की एक प्रति यथासम्भव घोषणा करने और हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति तथा प्रेस रजिस्ट्रार को भेजी जावेगी।

**निक्षेप (जमा करना)**

प्रमाणित मूल प्रतियों में से एक

(1) मजिस्ट्रेट के कार्यालय के अभिलेख में और

(ii) दूसरी उच्च न्यायालय के या उस स्थान के जहाँ उक्त घोषणा की गई है, के आरम्भिक क्षेत्राधिकार वाले प्रधान व्यवहार न्यायालय के अभिलेख में जमा की जावेगी।

यद्यपि धारा 5(2) और धारा 6 की तृतीय कठिका की अपेक्षाओं के अनुसार प्रमाणीकरण के लिए दो प्रतियों में घोषणा - एक उच्च-न्यायालय अथवा मूल क्षेत्राधिकार के मुख्य दीवानी अदालत के लिए तथा एक स्वयं मजिस्ट्रेट के ऑफिस के लिए प्रस्तुत करना पर्याप्त है। फिर भी घोषणा की दो अतिरिक्त प्रतियाँ और पेश करनी चाहिए ताकि ज्योंही घोषणा प्रमाणित हो तो उन दो अतिरिक्त प्रतियों को अभि-प्रमाणित किया जा सके। जिनमें से एक प्रेस रजिस्ट्रार के लिए और एक स्वयं घोषणाकर्ता के लिए दी जा सकती है। इन अतिरिक्त प्रतियों



के अभाव में मजिस्ट्रेट को ऐसी अभिप्रमाणित प्रतिया तयार करानी होगी जिसमें अनावश्यक समय भी लग सकता है जो स्वयं घोषणाकर्ता के हित में नहीं है ।

### प्रमाणित प्रति बनाम अभिप्रमाणित प्रति

धारा 6 यह उजागर करती नजर आती है कि एक घोषणा की प्रमाणित प्रति और उसी की एक अभिप्रमाणित प्रति में बहुत अंतर होता है ।

घोषणा की एक प्रमाणित प्रति वह मूल प्रति होती है जो घोषणाकर्ता द्वारा प्रस्तुत व हस्ताक्षरित होती है और जिस पर मजिस्ट्रेट इसकी विषयवस्तु पर सन्तुष्ट होने के बाद अपने हस्ताक्षर व पदीय मुद्रा चस्पा करता है जबकि एक अभिप्रमाणित प्रति उस मूल प्रमाणित प्रति की एक सत्यापित प्रति होती है ।

### प्रतियों का निरीक्षण व प्रदाय

कोई भी व्यक्ति उच्च न्यायालय या मूल क्षेत्राधिकार रखने वाली मुख्य दीवानी अदालत या मजिस्ट्रेट के अभिलेख में रखी हुई प्रमाणित घोषणा का निरीक्षण एक रूपया शुल्क की अदायगी पर तथा उसकी एक प्रति दो रु शुल्क की अदायगी पर प्राप्त कर सकता है ।

### अनुचित प्रतिस्पर्धा को रोकने

दो व्यक्तियों द्वारा एक ही नाम के दो समाचारपत्रों के बीच अनुचित प्रतिस्पर्धा को रोकना धारा 6 के 'परतु' का स्पष्ट आशय नजर आता है । यह 'परतु' वर्तमान में चल रहे एक समाचारपत्र की उसके नाम के सम्बन्ध में रक्षा भी करता है । (ए 1959 मद्रास 519)

### मजिस्ट्रेट का कर्तव्य मात्र प्रशासकीय

\* एक पत्र को प्रारम्भ करने और तत्सम्बन्धी घोषणा को पेश करने का अधिकार किसी प्राधिकार द्वारा लाइसेंस देने पर निभर नहीं है । इसका अर्थ यह हुआ कि सम्बन्धित मजिस्ट्रेट में किसी घोषणा को धारा 6 के "परतु" में वर्णित दशा को छोड़कर उसे अस्वीकार करने का स्वविवेक निहित नहीं है । मजिस्ट्रेट का कर्तव्य मात्र प्रशासकीय है कि वह घोषणा को रिकार्ड करे अथवा "परतु" में वर्णित समाचारपत्र होने पर उसे अस्वीकार करे । यदि जिस दिन याचिकाकर्ता ने अपने

जनल के सम्बन्ध में एक विशेष शीपक को लेकर एक घोषणा प्रस्तुत की है और उस दिन उसी नाम का कोई हूबहू समाचारपत्र प्रकाशित नहीं होता है तो उसको धारा 5 (2) के तहत घोषणा पेश करने का हक है और मजिस्ट्रेट को यह क्षेत्राधिकार नहीं है कि वह उसके और उसके प्रतिद्वन्दी जिसमें वाद में आवेदन किया है, के बीच तुलनात्मक गुणावगुणों का जायजा ले कि उनमें से कौन इस नाम का हकदार होगा। (ए 1959 मद्रास 519)

\* एक जिला मजिस्ट्रेट जब धारा 6 के तहत कार्य करता है तो वह फौजदारी अथवा दीवानी अदालत के क्षेत्राधिकार के रूप में काम नहीं करता और न किसी भी भाव में इसकी कार्यवाहियों को इस धारा के तहत न्यायिक कार्यवाही कहा जा सकता है। उसकी इस धारा में की गई कार्यवाही शुद्धत मन्त्रालयिक है। (19 श्री एल जे 621 (ख पी))

\* एक घोषणा का निरस्त करने से अस्वीकार करने का आदेश — अद्वैत न्यायिक नहीं है। अतः भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा कोई दखल नहीं दिया जा सकता है। (ए 1965 म प्र 128)

विद्यमान समाचारपत्र के नए सस्करण पर "परन्तु" लागू नहीं

घोषणा को प्रमाणित करने का मजिस्ट्रेट का आदेश अपने चरित्र में प्रशासकीय होता है। अतः यह मसला सिरस्योरी (रिट का एक रूप) लायक नहीं है। धारा 6 की अपेक्षा यह है कि प्रस्तावित पत्र का मालिक एक ऐसे पत्र को प्रकाशित नहीं करता होना चाहिए जिसका नाम "परन्तु" में वर्णित अन्य समाचारपत्र से हूबहू मिलता हो। "परन्तु" मुख्य धारा का एक अपवाद है और विद्यमान समाचारपत्र के किसी नए सस्करण पर लागू नहीं होता है (1966)। मैसूर एल जे 592

शीर्षक के चयन में सीमित सकोचन

एक समाचारपत्र के शीर्षक के चयन में धारा 6 के "परन्तु" में वर्णित दशा को छोड़कर अन्य किसी प्रकार का सकोचन नहीं है। इस तरह से यह सकोचन एक सीमित सकोचन ही कहलाएगा। (ए 1965 म प्र 128 (130))

### धारा 6 धारा 4 पर लागू नहीं

धारा 6 में प्रमाणिकरण के प्रावधान धारा 5 में प्रस्तुत की गई घोषणा पर लागू होते हैं न कि धारा 4 में प्रस्तुत की गई घोषणा पर। एक मुद्रणालय के धारक का मात्र यह दायित्व है कि वह धारा 4 के तहत घोषणा को प्रस्तुत व हस्ताक्षरित कर दे। उसकी इस घोषणा को धारा 6 के तहत प्रमाणित कराने की आवश्यकता नहीं है (ए 1964 गुजरात 278 ख पी)

### 7 घोषणा की कार्यालय वाली प्रति प्रथम दृष्टया साक्ष्य होगी

किसी भी बंध कायवाही में, चाहे वह व्यवहार हो या दण्डिक, यथापूर्वोक्त जसी घोषणा की ऐसी प्रति की, जो कि ऐसे किसी न्यायालय की मुद्रा द्वारा अभिप्रमाणित है जिसे कि ऐसी घोषणा को अपने अभिरक्षा में रखने के लिए इस अधिनियम के अधीन सशक्त किया गया है या किसी संपादक की अवस्था में उस समाचारपत्र की प्रति की, जिस पर उसका नाम संपादक के रूप में मुद्रित है पेशी जब तक प्रतिकूल सिद्ध न किया जाये उस व्यक्ति के खिलाफ जिसका नाम यथास्थिति ऐसी घोषणा पर हस्ताक्षरित है या ऐसे समाचारपत्र पर मुद्रित है इस बात का पर्याप्त साक्ष्य समझी जायेगी कि उक्त व्यक्ति ऐसे प्रत्येक समाचार पत्र के जिसका नाम घोषणा में वर्णित समाचारपत्र के नाम से मिलता है प्रत्येक प्रभाग का उन शब्दों के अनुसंधान (जो कि उस घोषणा के हो) प्रकाशक या मुद्रक या प्रकाशक और मुद्रक है या उस समाचारपत्र के, जिसकी प्रति पेश की गई है प्रत्येक धक के प्रत्येक प्रभाग का संपादक है।

### टिप्पणियाँ

#### मुद्रक और प्रकाशक के विरुद्ध धारणा

किसी कानूनी कायवाही उदाहरणतया फौजदारी या दीवानी में ऐसी अदालत जो प्रमाणित घोषणा की अभिरक्षा रखने के लिए सक्षम हो, द्वारा अपनी पदीय मुद्रा के तहत अभिप्रमाणित किसी प्रमाणित घोषणा की एक प्रति पेश किये जाने पर जब तक कि प्रतिकूल सिद्ध न किया जावे, उस व्यक्ति के खिलाफ जिसका नाम यथास्थिति ऐसी घोषणा पर हस्ताक्षरित है या ऐसे समाचारपत्र पर मुद्रित है, इस बात का प्रथम दृष्टया साक्ष्य समझी जावेगी कि वही ऐसे समाचारपत्र का प्रकाशक या मुद्रक या प्रकाशक और मुद्रक है।

“यहाँ” शब्द “अभिरक्षा” महत्त्वपूर्ण शब्द है। घोषणा की अभि-  
प्रमाणित प्रति एक उचित अभिरक्षा से और विधि प्रदत्त प्रक्रिया के  
तदानुकूल प्राप्त की जानी चाहिए।

### मुद्रक की अस्थायी उपस्थिति

धारा 7 में एक पजीकृत मुद्रक प्रत्येक कालावधिक कति के प्रत्येक  
प्रभाग का जिसका नाम घोषणा में वर्णित नाम से मिलता है जब तक  
कि अथवा सिद्ध न हो जाए, मुद्रक माना जाना चाहिए। मुद्रक की  
अस्थायी उपस्थिति अपेक्षित तथ्य को सिद्ध नहीं करती (1905) 2  
क्री एल जे 31 (33)

### जो कुछ छपा है, उसकी जानकारी

\* एक मुद्रक और प्रकाशक जिसने अधि के तहत घोषणा की है, के  
सम्बन्ध में यह धारणा ली जानी चाहिए कि उसने जो कुछ मुद्रित और  
प्रकाशित किया है, उससे वह जानकारी रखता है (1908) 7 क्री एल जे  
10 (18) (ख पी) कलकत्ता।

\* जहाँ एक व्यक्ति ने एक घोषणा पेश की है कि वह एक पत्र का  
मुद्रक और प्रकाशक है, धारणा यह है कि उस पत्र के अंक में क्या मुद्रित  
और प्रकाशित हुआ था, उससे वह जानकारी रखता है। घोषणा उस  
द्वारा पत्र के प्रत्येक समाचारों के प्रकाशन की प्रथम दृष्टया साक्ष्य है।  
उसको आपत्तिजनक सामग्री के प्रकाशन से महज इसलिए मुक्त नहीं  
किया जा सकता कि रोजमर्रा के काम में उसने सम्पादक को समाचारों  
के सवरण को कह दिया था (ए 1966 पजाब 93 (95)।

### सिद्ध करने का भार

\* धारा 7 मुद्रक को जुम्मेदार बनाती है चाहे आपराधिक लेख का  
लेखक कोई भी हो। प्रतिकूल सिद्ध करने का भार अभियुक्त पर है  
(1908) 8 क्री एल जे 438 (444) कलकत्ता

\* जब अभियोजन पक्ष यह सिद्ध नहीं कर पाये कि अमुक पुस्तक  
अमुक मुद्रणालय विशेष में मुद्रित हुई है तो मुद्रणालय का धारक मात्र  
इस साक्ष्य पर सिद्ध दोष नहीं किया जा सकता कि पुस्तक पर मुद्रण  
का यह विवरण छपा था कि यह कहीं मुद्रित हुई थी क्योंकि इससे धारा  
7 में कोई धारणा उत्पन्न नहीं होती और यह उसके विरुद्ध कोई साक्ष्य

नहीं है। धारा 7 में उत्पन्न धारणा उस व्यक्ति के विरुद्ध उत्पन्न होती है जिसे मुद्रक और प्रकाशक के रूप में बताया गया है (ए 1953 मद्रास 418 (419))।

### अजनबी के विरुद्ध कोई धारणा नहीं

मुद्रक, प्रकाशक और संपादक के विरुद्ध उनके उत्तरदायित्व को तय करने के लिए धारणा की अभिप्रमाणित प्रति पेश करने पर उनके विरुद्ध ऐसी धारणात्मक सिद्धी उत्पन्न होती है लेकिन ऐसी प्रति एक अजनबी पर उत्तरदायित्व डालने की दृष्टि सधारणात्मक सिद्धी नहीं है चाहे मुद्रक, प्रकाशक और संपादक के विरुद्ध कोई बीच या निणय बनता हो।

### मुपु अधि यनाम ज प्र अधि

\* जन प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 123 (4) के सम्बन्ध में धारा 7 में उत्पन्न धारणा की शक्ति परिस्थितियों के अनुसार बदल जाएगी। (ए 1971 उच्चतम न्यायलय 856 (859))।

\* यह मानते हुए कि धारा 7 के तहत धारणा चुनाव वायवाहियों पर भी आकर्षित होता है और इसका खण्डन न हुआ हो तब भी इसको इस रूप में प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए कि चुनाव याचिका का प्रतिवादी कथन को झूठा माने या उसे सत्य नहीं मानने का विश्वास रखता था।

### संपादक के विरुद्ध धारणा

इसी तरह जब समाचारपत्र की एक प्रति जिसमें एक सम्पादक का नाम संपादक के रूप में मुद्रित हुआ है, पेश करने पर उस सम्पादक के विरुद्ध धारा 7 में प्रथम दृष्टया धारणा उत्पन्न होती है कि वह उस पेश किए गए समाचारपत्र के अंक के प्रत्येक प्रभाग का सम्पादक है।

### सद्भाव से अस्थाई प्रबन्ध

धारा 5 में एक सम्पादक द्वारा किया गया घोषणा पत्र एक लेख के प्रकाशन के सम्बन्ध में प्रथम दृष्टया साक्ष्य है यदि यह साक्ष्य न आया हो कि उसने एक उपयुक्त व्यक्ति को अस्थाई प्रबन्ध सद्भाव से सभला दिया था और उसको अनुपस्थिति में उसकी जानकारों के बिना यह लेख प्रकाशित हुआ था। (1972 आर एल डब्लू 337)

## धारणा जो खण्डनीय है

एक खण्डनीय धारणा से अधिक कोई धारणा नहीं होती। यदि परिस्थितियाँ यह सिद्ध करें कि वास्तव में सम्पादक प्रकाशन के लिए जिम्मेदार नहीं था या उसे प्रकाशन की जानकारी नहीं थी तो धारणा खंडित मानी जायेगी (1972) 49 इ एल आर 160 (167) (उडोसा)।

सम्पादक के सिवाय और अन्य का अधिक अस्तित्व नहीं

\* मात्र मुख्य संपादक के नाम का बरण धारा 7 के प्रावधानों को आकर्षित नहीं करता। जहाँ तक सम्पादक की जिम्मेदारियों का सवाल है, सिवाय सम्पादक के अन्य किसी अधिक अस्तित्व को अधिनियम मान्यता नहीं देता (ए 1979 उच्चतम न्यायालय 154, 162)।

\* उच्च न्यायालय की अवमानना सबधी एक लेख समाचार के सम्पादक ने इस आशय का शपथ-पत्र प्रस्तुत किया कि उसे इस लेख की कोई जानकारी नहीं थी क्योंकि उसकी अनुपस्थिति में लेख को संयुक्त संपादक ने मुद्रणार्थ भेज दिया था। यह निराय हुआ कि धारा 7 में उत्पन्न धारणा कि वह समाचारपत्र के अंक के प्रत्येक प्रभाग का संपादक था, खंडित नहीं हुआ। अतः दोनों को अवमानना का दोषी पाया गया (ए 1949 लाहौर 266 (270))।

\* जब "एम" का नाम मानहानिजन्य लेख वाले पत्र में संपादक के रूप में मुद्रित किया गया और यहाँ तक कि "एम" ने यह भी स्वीकार किया कि लेख उसके द्वारा लिखा गया था। धारा 7 के तहत धारणा सिर्फ "एम" के विरुद्ध उत्पन्न होगी, यद्यपि संपादकीय मण्डल में अन्य तीन जन और दिखाए गए थे (ए 1968 उच्चतम न्यायालय 110 (111))।

\* पत्र का सम्पादक यद्यपि यहाँ तक कि वह अपने पत्र में प्रकाशित मानहानिजन्य कथन के लिए जिम्मेदार नहीं हो सकता, धारा 7 के कारण जिम्मेदार को आकर्षित करता है (ए 1968 कलकत्ता 296 (298))।

\* समाचारपत्र में अपमान लेख - अभियुक्त के संपादक व प्रकाशक होने सबधी प्रमाण में मुद्रणपत्र व पुस्तक रजिस्ट्रेशन अधिनियम की धारा 7 के तहत धारणा सबधी जानकारी पर्याप्त है (1962 (2) श्री एल जे 142 (केरल))।

### विषयवस्तु से विदित होना

समाचारपत्र की विषयवस्तु से विदित होना सबघी धारणा केवल उस सम्पादक के विरुद्ध उत्पन्न हो सकती है जिसका नाम समाचारपत्र में प्रकाशित घोषणा में आया है। कायकारी संपादक/समाचार सेवा सम्पादक जिसका नाम घोषणा में शामिल नहीं है, को मानहानि के लिए अन्वीक्षा हेतु सम्मन करने का आदेश अनुचित है।

### स्वामी पर बाध्यकारी नहीं

\* समाचारपत्र के अर्थ में प्रकाशित स्वामित्व व अन्य विशिष्टियों में "ए" को समाचारपत्र का स्वामी बताया गया है, धारा 7 में यह वर्णन स्वामी पर बाध्यकारी नहीं है। धारा 7 के अनुसार सम्पादक के नाम का मुद्रण सम्पादक के विरुद्ध इस सीमा तक कि वह प्रस्तुत अर्थ की प्रति के प्रत्येक प्रभाग का संपादक है, पर्याप्त साक्ष्य है। जहाँ तक 'ए' का सवाल है, उस पर इसका कोई प्रभावकारी असर नहीं है (ए 1959 राज 280 (286) ख पी।

### पुस्तकों के सबघ में धारणा नहीं

मु पु अधि में पुस्तकों के सबघ में ऐसे समान प्रावधान नहीं हैं। पुस्तकों में मुद्रित नाम प्रथमदृष्टया साक्ष्य के रूप में नहीं लिये जा सकते जब तक कि सबधित व्यक्तियों द्वारा इसका खडन नहीं कर दिया गया हो। परिवादी को यह खुला है कि वह अधि की धारा 18 में रखे गये रजिस्टर की प्रविष्टि की एक प्रति पेश करे। ऐसी कोई धारणा नहीं है कि जिसे लेखक के रूप में दर्शाया गया है, उसके द्वारा यह लिखी गयी है जब तक कि साक्ष्य अधि की धारा 87 सपठित धारा 57(3) द्वारा शामिल की गयी पुस्तकों के सीमित वर्ग में से किसी एक वर्ग में वह नहीं आती हो। जहाँ तक मुद्रकों और प्रकाशकों का सवाल है, परिवादियों को धारा 4 के तहत की गयी घोषणा की सत्यापित प्रति व धारा 18 में की गयी प्रविष्टियाँ को सिद्ध करने के लिये इहे साक्ष्य में मगाने के लिये कहना चाहिये (ए 1929 बम्बई 255)।

### पम्फलेट्स के मामले में कोई धारणा नहीं

अवधिकालिकाओं के मामले में धारा 7 में विषयवस्तु की जानकारी के बारे में उत्पन्न प्रारम्भिक धारणा उन पम्फलेट्स जिसमें

अलगाववादी सामग्री होने, का आरोप है, वे मामले में उत्पन्न नहीं होती (ए 1931 लाहौर 182(183) ।

8 उन व्यक्तियों द्वारा नई घोषणा जिन्होंने घोषणा हस्ताक्षरित की है तथा जो उसके पश्चात् मुद्रक या प्रकाशक नहीं रहे

यदि किसी व्यक्ति ने किसी समाचारपत्र के सम्बन्ध में कोई घोषणा धारा 5 के अधीन हस्ताक्षरित की है और वह घोषणा मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 6 के अधीन प्रमाणीकृत की गई है और उसके पश्चात् वह व्यक्ति ऐसी घोषणा में उल्लिखित समाचारपत्र का मुद्रक या प्रकाशक नहीं रहा है तो वह किसी जिला, प्रेसीडेंसी या उपखण्ड मजिस्ट्रेट के सामने उपसजात होगा और दो प्रतियों में निम्नलिखित घोषणा करेगा और हस्ताक्षरित करेगा -

“मैं व ख घोषित करता हूँ कि मैं नामक  
समाचारपत्र का मुद्रक या प्रकाशक या मुद्रक और प्रकाशक नहीं रहा हूँ ।”

#### प्रमाणीकरण और फाइल करना

पश्चात्पूर्ती घोषणा की प्रत्येक मूल प्रति को वह मजिस्ट्रेट अपने हस्ताक्षर और मुद्रा से प्रमाणीकृत करेगा जिसके सामने उक्त पश्चात्पूर्ती घोषणा की गई है और उक्त पश्चात्पूर्ती घोषणा की एक मूल प्रति पूर्ववती घोषणा की प्रत्येक मूल प्रति के साथ फाइल की जावेगी ।

#### प्रतियों का निरीक्षण और प्रदाय

पश्चात्पूर्ती घोषणा की प्रत्येक मूल प्रति का भारसाधक पदाधिकारी एक रुपये की फीस दिये जाने पर उस मूल प्रति का निरीक्षण किसी यकिन को करने देगा और उक्त पश्चात्पूर्ती घोषणा की ऐसी प्रति जो कि उस न्यायालय की मुद्रा से अभिप्रमाणित है, जिसकी अभिरक्षा में मूल प्रति है, दो रुपये की फीस के दिये जाने पर आवेदन करने वाले किसी व्यक्ति को देगा ।

#### प्रति को साक्ष्य के रूप में पेश करना

उन सब अधीनस्थों में जिनमें पूर्ववती घोषणा की यथापूर्वोक्त अभिप्रमाणित प्रति साक्ष्य में पेश की गई हो, पश्चात्पूर्ती घोषणा की यथापूर्वोक्त अभिप्रमाणित प्रति को साक्ष्य में पेश करना विधि पूरा होगा और पूर्ववती घोषणा इस बात का साक्ष्य नहीं समझी जायेगी कि घोषणा करने वाला उल्लिखित समाचारपत्र का मुद्रक या प्रकाशक ऐसी किसी कालावधि में था जो कि पश्चात्पूर्ती घोषणा की तारीख से बाद की है ।



मजिस्ट्रेट की पदीय मुद्रा से अभिप्रमाणित पश्चात्वर्ती घोषणा की एक प्रति प्रेस रजिस्ट्रार के पास भेजी जायेगी ।

### टिप्पणियाँ

यह धारा यह अपेक्षा करती है कि वह व्यक्ति जो धारा 6 के तहत घोषणा प्रमाणीकरण के बाद समाचारपत्र का मुद्रक अथवा प्रकाशक अथवा मुद्रक और प्रकाशक नहीं रहा, स्थानीय क्षेत्राधिकार रखने वाले मजिस्ट्रेट के सम्मुख उपस्थित होगा और दो प्रतियों में एक नई घोषणा प्रस्तुत व हस्ताक्षरित करते हुए घोषणा करेगा कि वह समाचारपत्र का मुद्रक अथवा प्रकाशक अथवा मुद्रक और प्रकाशक नहीं रहा है ।

इस प्रकार की पश्चात्वर्ती घोषणा की प्रत्येक मूल प्रति का प्रमाणीकरण धारा 6 की प्रथम कड़िका में वर्णित नियमों के अनुसार किया जायेगा और उक्त प्रमाणित घोषणा की एक मूल प्रति पूर्ववर्ती घोषणा की प्रत्येक मूल प्रति के साथ शामिल की जायेगी ।

इस पश्चात्वर्ती प्रमाणित घोषणा की विधिवत अभिप्रमाणित एक प्रति प्रेस रजिस्ट्रार को भेजी जायेगी ।

यहाँ “पूर्ववर्ती” का तात्पर्य वह अंतिम घोषणा है जिसके तहत समाचारपत्र प्रकाशित किया जा रहा है ।

ऐसी इस पश्चात्वर्ती घोषणा की प्रतियों के निरीक्षण और प्रदाय के नियम वही हैं जो धारा 6 की चौथी कड़िका में वर्णित हैं । इस पश्चात्वर्ती घोषणा के घोषणाकर्ता को यह वैधानिक अधिकार है कि वह किसी भी अवस्था में साक्ष्य के रूप में इस पश्चात्वर्ती घोषणा की एक अभिप्रमाणित प्रति प्रस्तुत करे ताकि पूर्ववर्ती घोषणा से उत्पन्न धारणा का खण्डन हो सके । यह सिद्ध माना जायेगा कि इस पश्चात्वर्ती घोषणा की तिथि के बाद किसी भी अवधि के लिए घोषणाकर्ता सम्बन्धित समाचारपत्र का मुद्रक अथवा प्रकाशक या मुद्रक और प्रकाशक जसी भी स्थिति हो, नहीं था ।

सामान्यतः शब्द “अवस्था” का सम्बन्ध सिर्फ फौजदारी प्रकरणों से होता है लेकिन यहाँ लगता है कि विधि निर्माताओं का आशय इसका सम्बन्ध दीवानी, फौजदारी अथवा अथ व अधिक कायवाही जसी भी है, से है । पूर्ववर्ती घोषणा से उत्पन्न धारणा को किन तरीकों से खण्डित किया जा सकता है, धारा 8 में से एक तरीका बताती है ।

8 (क) वह व्यक्ति जिसका नाम सम्पादक के रूप में अशुद्धत प्रकाशित हो गया है, मजिस्ट्रेट के सामने घोषणा कर सकेगा ।

यदि ऐसा कोई व्यक्ति, जिसका नाम समाचारपत्र की प्रति पर सम्पादक के रूप में छपा है, इस बात का दावा करता है कि वह उस संस्करण का सम्पादक नहीं था जिसमें उसका नाम इस रूप में छपा है तो वह इस बात के कि उसका नाम इस प्रकार प्रकाशित हुआ है पता लगने के दो सप्ताह के अंदर जिला, प्रमोड-सी या उपखण्ड मजिस्ट्रेट के सामने उपसजात होगा और यह घोषणा करेगा कि भेरा नाम उस अंक में उसके सम्पादक के रूप में अशुद्धत प्रकाशित किया गया था और यदि मजिस्ट्रेट का समाधान ऐसी जांच करने या कराने के बाद, जैसा कि वह आवश्यक समझे हो जाये कि ऐसी घोषणा सत्य है तो वह तदनुकूल प्रमाणित करेगा और उस प्रमाण पत्र के दे दिये जाने पर धारा 7 के उपबन्ध समाचारपत्र के उस संस्करण के सम्बन्ध में उस व्यक्ति को लागू नहीं होंगे ।

जहाँ कि मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि ऐसा व्यक्ति पर्याप्त कारणों से उस कालावधि के अंदर उपसजात होने और घोषणा करने से निवारित रहा है वहाँ वह इस धारा द्वारा समनुज्ञात कालावधि को बढ़ा सकेगा ।

### टिप्पणियाँ

यह धारा उन प्रावधानों से सम्बन्धित है जिनमें कहा गया है कि वह व्यक्ति जिसका नाम संपादक के रूप में अशुद्धत प्रकाशित हो गया था, प्रकाशन तिथि से जानकारी होने के दो सप्ताह के अंदर सक्षम मजिस्ट्रेट के सम्मुख इस आशय की घोषणा कर सकता है कि उसका अमुक अंक में उसके संपादक के रूप में नाम अशुद्धत प्रकाशित हो गया था ।

व्याकरण की दृष्टि से शब्द — “अशुद्धत ” का तात्पर्य “शुद्ध नहीं” यानि “यथायत नहीं” “ठीक ठाक नहीं” जिसका मतलब यह हुआ कि कुछ न कुछ तो अस्तित्व में है लेकिन वह तथ्यानुकूल नहीं है ।

लेकिन यहाँ शब्द “अशुद्धत ” का अर्थ “गलती से” दिखाई देता है । शब्दावली — “संपादक नहीं था” भी इसी आशय को उजागर करती है ।

यदि मजिस्ट्रेट जांचोपरांत इस निष्कर्ष पर आता है कि यह घोषणा सही है तो वह उसे तदानुसार सत्यापित करेगा ।

ऐसा प्रमाणपत्र देने पर धारा 7 में सम्पादक के विरुद्ध उत्पन्न धारणा समाचारपत्र के उस अंक के संबंध में लागू नहीं होगी। ऐसा व्यक्ति किसी भी वैधिक कायवाही में धारा 7 में उत्पन्न धारणा के खडनाथ ऐसे प्रमाण-पत्र को पेश कर सकता है।

### मजिस्ट्रेट का स्वविवेक

जब ऐसा व्यक्ति पर्याप्त कारणों से प्रकाशन से अपनी जानकारी की तिथि से दो सप्ताह के अंदर उपसजात होने और घोषणा करने से निवारित रहा हो तो मजिस्ट्रेट उसकी इस अवधि को बढ़ाने का स्वविवेक रखता है।

यह स्वविवेक स्वेच्छाचारी न होकर न्यायिक होना चाहिए।

जब किसी का नाम संपादक के रूप में दिखाया ही नहीं गया हो

जब एक व्यक्ति का नाम समाचारपत्र में उसके संपादक के रूप में मुद्रित हुआ हो तब ही धारा 7 में ऐसे संपादक के विरुद्ध खडनीय धारणा की और ध्यान खींचा जा सकता है लेकिन जब पत्र में उसका नाम सम्पादक के रूप में दिखाया ही नहीं गया हो तब धारा 7 में किसी धारणा की और ध्यान नहीं खींचा जा सकता और यह तय होना चाहिए कि वह प्रकाशन से कोई सम्बंध नहीं रखता। (ए 1959 उच्चतम न्यायालय 154 (159, 160))

### 8 (ख) घोषणा का निरस्तीकरण

प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा या अन्य तरीके से मजिस्ट्रेट का प्राथना-पत्र दिये जाने पर इस अधिनियम के तहत एक घोषणा को प्रमाणीकरण करने के लिए सक्षम मजिस्ट्रेट जब इस मत का हो कि किसी समाचारपत्र के सम्बंध में की गयी घोषणा निरस्त की जानी चाहिए तो वह सम्बंधित व्यक्ति को प्रस्तावित कायवाही के विरुद्ध कारण बताओ नोटिस देने के उपरांत इस विषय में जांच प्रारम्भ कर सकता है। और यदि कोई कारण ऐसे व्यक्ति द्वारा दिखाए गए हों ता उन पर विचारोपरांत और उसे मुनवाई का अवसर देने के उपरांत, यह सन्तुष्ट है कि—

(1) जिस समाचारपत्र के सम्बंध में घोषणा की गयी है, वह समाचारपत्र इस अधिनियम के प्रावधानों या इसके तहत बने नियमों के उल्लंघन में प्रकाशित हो रहा है या

(2) घोषणा में वर्णित मुद्रक या प्रकाशक समाचारपत्र का मुद्रक या प्रकाशक नहीं रहा हो या

(iii) घोषणा में वर्णित समाचारपत्र ऐसा शीघ्र रखता है जो या तो एक ही भाषा में या एक ही राज्य में प्रकाशित किसी दूसरे समाचारपत्र के नाम से हूबहू मिलता है या

(iv) घोषणा मिथ्या प्रतिनिधित्व या किसी सारत तथ्य के छिपाव पर या ऐसे किसी भ्रवधिपरक प्रकाशन जो एक समाचारपत्र न हो, के सम्बन्ध में की गयी हो मजिस्ट्रेट आदेश के द्वारा घोषणा निरस्त कर सकता है और यथासंभव एक प्रति घोषणा करने व हस्ताक्षरित करनेवाले व्यक्ति को और प्रेस रजिस्ट्रार को भी भेजेगा ।

### टिप्पणियाँ

यह धारा उन आधारों पर प्रकाश डालती है जिनको लेकर एक समाचारपत्र की घोषणा निरस्त की जा सकती है । यह धारा 1960 के अधिनियम 26 द्वारा शामिल की गई है ।

निम्न आधारों में से एक या एक से अधिक पर इस प्रकार का घोषणा पत्र निरस्त किया जा सकता —

(1) यदि वह घोषणा जिसके तहत समाचारपत्र प्रकाशित हो रहा है, समाचारपत्र स्वयं मुपु अधि के प्रावधानों के उल्लंघन में प्रकाशित हो रहा हो ।

जब एक समाचारपत्र जिसकी घोषणा की हुई है, प्रकाशित होने के बाद उसकी एक प्रति धारा-II क के तहत सरकार को प्रदाय नहीं की गई हो और जब प्रकाशक सालभर में एक भी अंक प्रकाशित करने में असफल रहा हो तो यह माना जाएगा कि प्रकाशक अब प्रकाशक नहीं रहा है और धारा 8 क में घोषणा काबिले निरस्त है । (1975 डब्ल्यू एल एन (यू सी) 528 (530) राज ।

(2) यदि ऐसा समाचारपत्र मुपु अधि की धारा 20 क के तहत बनाए गए केन्द्रीय नियमों के उल्लंघन में प्रकाशित हो रहा हो ।

(3) यदि ऐसा समाचारपत्र मुपु अधि की धारा 20 के तहत राज्य सरकार के द्वारा बनाए गए नियमों के उल्लंघन में प्रकाशित हो रहा हो ।

(4) यदि घोषणा में वर्णित समाचारपत्र का नाम या तो एक ही भाषा या एक ही राज्य में प्रकाशित किसी अन्य समाचारपत्र के नाम से हूबहू मिलता हो ।

(5) यदि इस प्रकार की घोषणा में वर्णित मुद्रक जब समाचार-पत्र का मुद्रक नहीं रहा हो।

(6) यदि इस प्रकार की घोषणा में वर्णित प्रकाशक जब समाचारपत्र का प्रकाशक नहीं रहा हो।

(7) यदि घोषणा मिथ्या प्रतिनिधित्व के आधार पर की गई हो अथवा।

(8) यदि घोषणा किसी सारत तथ्य के छुपाव पर की गई हो।

(9) यदि घोषणा एक ऐसे अवधिपरक प्रकाशन जो एक समाचारपत्र नहीं हो, के सम्बन्ध में की हुई हो।

### निरस्त करने को-कौन सक्षम

जो मजिस्ट्रेट मुपु अधि के तहत एक घोषणा को प्रमाणित करने के लिए सक्षम है, वही उस घोषणा को निरस्त करने के लिए सक्षम होता है।

### दो अवसर

यह एक वैधानिक प्रावधान है कि सम्बन्धित व्यक्ति को मजिस्ट्रेट निम्नप्रकार के दो अवसर प्रदान करेगा—

(1) प्रस्तावित कायवाही के विरुद्ध कारण बताओ नोटिस और  
(ii) सुनवाई का अवसर।

जब घोषणा में वर्णित परिसरों के नाम में प्रारम्भिक कमी थी और अधिकारियों ने घोषणा को स्वीकार कर लिया तथा 6 वर्ष तक प्रकाशन को चलने दिया। ऐसी परिस्थितियों में धारा 8 क के तहत बिना जाँच किए घोषणा को निरस्त करना न्यायोचित नहीं है। (1978 भार एल डब्ल्यू 17)।

जसा कि यह धारा आशय प्रकट करती है उसके अनुसार घोषणा को प्रस्तुत व हस्ताक्षरित करनेवाले को ऐसे नोटिस दिए जाने चाहिए लेकिन सामान्य बुद्धि का तकाजा है कि इस प्रकार का नोटिस सम्बन्धित समाचारपत्र के प्रकाशक को भी भेजा जाना चाहिए क्योंकि एक समाचारपत्र उसके प्रकाशक द्वारा ही सही रूप से चला माना जाता है।

### किसके आवेदन पर

इस धारा के तहत मजिस्ट्रेट निम्न स्रोतों से आवेदन होने पर कायवाही करने के लिये सक्षम है—

- (क) प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा अथवा
- (ख) किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अथवा
- (ग) अथवा ।

यहाँ लगता है कि शब्द "अथवा" अपने आप में स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा की जाने वाली स्वतः कायवाही को भी समेटे हुए है ।

यद्यपि प्रथम कडिका में आया शब्द "सक्ता" मजिस्ट्रेट को ऐसी कायवाही हल करने के लिये स्वविवेक प्रदान करता है । तब भी यह स्वविवेक स्वेच्छाचारी न होकर न्यायिक होना चाहिए ।

निरस्तीकरण आदेश की एक-एक प्रति यथासम्भव घोषणा को करने और हस्ताक्षरित करने वाले व्यक्ति और प्रेस रजिस्ट्रार को भेजी जानी चाहिए ।

जैसा कि सामान्य बुद्धि अपेक्षा करती है, इस प्रकार की एक प्रति सम्बंधित समाचारपत्र के प्रकाशक को भी भेजी जानी चाहिए ।

**संपादक के मूल अधिकार का उल्लंघन**

जब एक समाचारपत्र के संबंध में घोषणा को प्रस्तावित आर्नवाही के विरुद्ध कारण बताओ नोटिस दिये बिना इस आधार पर निरस्त कर दिया गया था कि समाचारपत्र का नाम उस विद्यमान समाचारपत्र के नाम से हूबहू मिलता था, ऐसी कायवाही गलत है और संपादक के समाचारपत्र के सम्पादक संबंधी व्यवसाय वर्षीय तद्वि समाचार के प्रकाशन के व्यापार के मूल अधिकार का उल्लंघन करता है । (प 1973 उच्चतम न्यायालय, 213 (215))

**जब द प्रेस को धारा 195 (1) (ग) श्रावण नहीं होती**

जब धारा 195 के अंतर्गत संपादक द्वारा प्रदत्त द्वारा मजिस्ट्रेट को की गयी घोषणा मिथ्या आरोपित है और धारा 8 अ के तहत कायवाही विचाराधीन हो तब धारा 195 के अंतर्गत मिथ्या घोषणा करने का आरोपित अपराध पक्षकार द्वारा नष्ट किया जाना जाता है मजिस्ट्रेट एक अदालत की तरह काम करता हुआ नहीं होता । (द प्रेस को धारा, 195(1)(ग) श्रावण नहीं होती । (प 1 एल जे 90 (93))

जब अनुच्छेद 226 आर्कापित नहीं होता

\* समाचार के शीपक का चुनाव - मजिस्ट्रेट घोषणा को प्रमाणित करने अथवा निरस्त करने का स्वविवेक रखता है - घोषणा को निरस्त करने का अस्वीकारी आदेश अद्वयायिक नहीं है - भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा कोई दखल नहीं। (ए 1965 म प्र 126)

\* धारा 8 ख के तहत मजिस्ट्रेट के आदेश के पुनर्विचार (रिव्यू) हेतु अनुच्छेद 226 के तहत प्रार्थना-पत्र - याचिकाकर्ता पीडित नहीं - याचिका यदि स्वीकार हो तो यह समावना है कि विरोधी पक्षार का धारा 8 ग में अपील करने का अधिकार प्रभावित होगा। (ए 1965 म प्र 128)

संसद हेतु पेश न करना - निरस्तीकरण का आधार नहीं

प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन अपीलेंट बोर्ड के तत्कालीन अध्यक्ष जस्टिस ए एन ग्रावर ने सम्पादक प्रजाजन बनाम जिलाधीश सवाईमाधोपुर के प्रकरण (अपील न 27/14/51 सेक्रे (पी आर ए बी) दि जनवरी 28, 1982) में विचार व्यक्त किया है कि मुपुअधि में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो घोषणा के निरस्तीकरण को इस धारा पर न्यायोचित ठहराता हो कि समाचारपत्र संसदसिप के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया था। उपरोक्त दिये गए कारणों व इस तथ्य का मद्देनजर रखते हुए कि विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा अपीलेंट को सुनवाई का उचित अवसर नहीं दिया गया था, अतः उसका घोषणा निरस्तीकरण का आदेश एतद्वारा निरस्त किया जाता है।

पुनर्विचार याचिका स्वीकार नहीं

एक पुनर्विचार याचिका इसलिए खारिज कर दी गयी थी कि बोर्ड का यह मत था कि जबतक एक ट्रिब्यूनल पर पुनर्विचार की शक्तियाँ स्पष्टतः प्रदत्त न की गयी हो अथवा न्यायिक या अद्वयायिक कार्यों को करनेवाला एक प्राधिकार न हो तब तक वह ऐसे किसी आदेश पर पुनर्विचार नहीं कर सकता जो पहले से ही गुणावगुण पर पारित हुआ हो। (प्रे प रिव्यू, ग्रंथ 3 न 4 पृ स 23)

प्रशासकीय परेशानियाँ - कोई आधार नहीं

संयुक्त मोर्चा (अलोगढ से एक साप्ताहिक) की घोषणा जुलाई 8, 1975 को जिला मजिस्ट्रेट द्वारा इन आधारों पर निरस्त कर दी गयी

थी कि पत्र का प्रकाशन जिला अलीगढ़ के शातिपूर्ण वातावरण को दूषित करनेवाला था और जिले की शातिपूर्ण स्थितियों को नष्ट कर सकता था व प्रशासकीय परेशानियाँ पैदा कर सकता था ।

निर्णय बोर्ड ने आदेश दिया कि मु.पु.अधि के सवधित प्रावधानों में घोषणा को ऐसे आधारों पर निरस्त करने की कोई आवश्यकता प्रतिपादित नहीं की गयी है अतः जिला मजिस्ट्रेट का आदेश पूर्णतः गैरकानूनी है अतः यह निरस्त किया जाता है ।

### समाचारपत्र को चलाने की शक्ति का प्रत्यायोजन

दरभंगा जिले के जिला मजिस्ट्रेट और उपखंड अधिकारी के विरुद्ध 6 मार्च, 1980 को दरभंगा जिले के श्री शीतेश चौधरी द्वारा प्रस्तुत अपील में कहा गया था कि जिला मजिस्ट्रेट/उपखंड अधिकारी दरभंगा से समाचारपत्र "विप्लवी दुनिया" की घोषणा प्रमाणित नहीं की यद्यपि भारत के समाचारपत्रों के पंजीयक द्वारा उसका नाम श्री मिश्रीलाल चौधरी के पक्ष में 27 जून, 1978 को पुष्ट किया जा चुका था । अपीलेंट के पितामह ने उचित तरीके से अपनी वृद्धावस्था को देखते हुए अपीलेंट को समाचारपत्र चलाने का प्राधिकार प्रत्यायोजित कर दिया था ।

उपखंड अधिकारी दरभंगा ने समाचारपत्रों के पंजीयक से कुछ मुद्दों को स्पष्ट कराने के लिए लिखा । बताया जाता है कि वहाँ से कोई जवाब नहीं आया । जिला मजिस्ट्रेट दरभंगा ने इस मामले को उपखंड अधिकारी के यहाँ फिर भेज दिया लेकिन उपखंड अधिकारी समाचारपत्रों के पंजीयक से निदेश प्राप्त करने का इन्तजार कर रहे थे ।

अपीलेंट के अनुसार जिला मजिस्ट्रेट और समाचारपत्रों के पंजीयक को घोषणा के प्रमाणीकरण के सम्बन्ध में कुछ नहीं करना था — जबकि उपखंड अधिकारी इस घोषणा को स्वीकार करने और अस्वीकार करने में सक्षम थे ।

निर्णय — बोर्ड का सोचना था कि अपीलेंट द्वारा उठाये गये मुद्दे विचारणीय थे और मु.पु.अधि के सगत प्रावधानों के तहत मामले को उपखंड अधिकारी द्वारा नहीं निपटाने के पीछे कोई न्यायोचित कारण नहीं था । अतः बोर्ड ने उपखंड अधिकारी दरभंगा को आदेश दिया कि वह अपीलेंट द्वारा पेश की गई घोषणा के प्रमाणीकरण के



प्रश्न पर 25 अगस्त 1982 से एक माह के अदर आदेश प्रसारित करें।  
(प्रे प रिब्यू, ग्रंथ 3 न 4 पृ स 23-24)

**यथास्थिति को कायम करने के लिए अन्तरिम आदेश**

एक अपील के विचाराधीन होने के दौरान बोड यह महसूस करे कि समाचार की घोषणा के निरस्त होने अथवा उसके निलम्बन होने के परिणामस्वरूप अपीलेंट को अपूर्णाय क्षति हाने की सम्भावना है तो वह स्थिति को कायम करने के लिए अन्तरिम आदेश दे सकता है।

इस प्रकार के कई आदेश बोड द्वारा कई अपीला में दिये जा चुके हैं। (प्रे प रिब्यू ग्रंथ 3 नम्बर 4 पृ स 24-25 और ग्रंथ 7 न-1, जनवरी 1986) पृ 44

**अनुसरण का उचित तरीका**

कई प्रकरणा में प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन अपीलेंट बोड ने विचार व्यक्त किया है कि जो समाचारपत्र पत्रकारिता की नतिवता का उल्लघन करते पाये जायें तो उनके विरुद्ध प्रेस परिपद् अधिनियम 1978 के प्रावधानों के तहत परिवाद पेश करने का उचित तरीका होता है न कि उनकी घोषणाओं को निरस्त करने का। (प्रे प रिब्यू के ग्रंथ 4 नम्बर-1 पृ स 20)

**स्वामित्व सम्बन्धी प्रथम दृष्टया स्थिति**

“ब” मूलतः साप्ताहिक “वी” का स्वामी था। यह वाद में दनिक हो गया। “ब” ने दैनिक समाचारपत्र का स्वामित्व “क” के नाम हस्तांतरित कर दिया। हस्तांतरण के साथ जो पत्र “ब” ने लगाया उसका यह ग्रंथ लेते हुए कि पूण स्वामित्व के लिए हस्तांतरण किया गया है, दनिक ‘वी’ के सम्बन्ध में घोषणा प्रमाणित कर दी गई जिसमें “क” को स्वामी और सम्पादक बताया गया और “ब” को मुद्रक और प्रकाशक। वह समाचारपत्र चलता रहा और प्रिंट लाइन में “क” को स्वामी और “ब” को मुद्रक और प्रकाशक बताया जाता रहा।

स्वामित्व सम्बन्धी विवाद उस समय उत्पन्न हुआ जब “ब” ने एक साप्ताहिक ‘वी’ के सम्बन्ध में घोषणा को प्रमाणिकरण करवाने हेतु घोषणा प्रस्तुत की। अगले दिन, यह घोषणा उपखण्ड मजिस्ट्रेट द्वारा प्रमाणित कर दी गयी। “क” ने भी दनिक समाचारपत्र के सबंध

मे घोषणा को प्रमाणित कराने के लिए घोषणा प्रस्तुत की और साथ से यह प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया कि "ब" नाम के बजाय उस स्वयं का नाम मुद्रक और प्रकाशक के रूप में शामिल किया जावे।

उपखण्ड अधिकारी इस मत के थे कि मु पु अधि के तहत उनकी अदालत को यह तय करने का क्षेत्राधिकार नहीं है कि क्या पत्र बेच दिया गया है और उसका स्वामी कौन है। एस डी एम ने आगे विचार व्यक्त किया कि "ब" का यह दावा कि उसका नाम मुद्रक और प्रकाशक के रूप में रखा जावे, स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि स्वामित्व का प्रश्न स्वयं विवादग्रस्त है और मामला क्षेत्राधिकार के बाहर का है और साप्ताहिक "बी" के सम्बन्ध में "ब" द्वारा प्रस्तुत घोषणा-पत्र स्वीकार किया जाता है और वाद में "क" द्वारा प्रस्तुत घोषणा-पत्र इस आधार पर निरस्त किया जाता है कि एक ही शीर्षक के तहत दो समाचारपत्र प्रकाशित नहीं किये जा सकते।

बोर्ड ने मत व्यक्त किया कि एस डी एम का इन विवादों से कोई मतलब नहीं था और उसे यह देखने का अधिकार था कि कौन अपनी घोषणा को प्रमाणित करवाने के लिए प्रथम दृष्टया अधिकार रखता है। इन तथ्यों को मद्देनजर रखते हुए कि "ब" अक्टूबर 1979 से 1 फरवरी 1982 की पूरी अवधि तक "ब" के किसी विरोध के बिना समाचारपत्र का स्वामी दिखाया जाता रहा है। अतः प्रथम दृष्टया स्वामित्व उसमें निहित होता है और घोषणा को प्रमाणित करवाने का उसका आवेदन चाहे मुद्रक और प्रकाशक के बदलने के बाद में ही पेश हुआ हो, फिर भी स्वीकार किया जाना चाहिए।

बोर्ड ने यह भी विचार व्यक्त किया कि सिर्फ मुद्रक और प्रकाशक ही प्रमाणीकरण के लिए प्रार्थना-पत्र पेश कर सकते हैं। "क" अपने स्वामित्व के अधिकार के प्रयोग में जो "ब" द्वारा प्रदत्त किया गया है, मुद्रक व प्रकाशक को बदलने का अधिकार रखता है जब तक स्वामित्व सम्बन्धी मामला दीवानी अदालत से तय नहीं हो जावे।

बोर्ड ने अपोल को स्वीकार करते हुए एस डी एम को निर्देश दिया कि "क" द्वारा प्रस्तुत घोषणा को प्रमाणित करने और साप्ताहिक "बी" के सम्बन्ध में ब को स्वीकृत घोषणा को निरस्त करे। बोर्ड ने साथ ही, यह भी स्पष्ट किया कि यह आदेश एक समक्ष न्यायालय द्वारा पक्षकारी के अधिकारों पर दिये गये निर्देशों को प्रभावित नहीं करेगा।

ऐसा होने पर, प्रमाणीकरण के मामले में, वाद में उचित कायवाही की जावेगी। (प्रे प रिब्यू ग्रय 4 न-1 पृ 20)

### स्वामित्व का विवाद-निरस्तीकरण का आधार नहीं

एक साप्ताहिक के स्वामित्व के प्रश्न के सम्बन्ध में सिर्फ विवाद घोषणा को निरस्त करने का उचित आधार नहीं है। साप्ताहिक के स्वामित्व का प्रश्न, वास्तव में, दीवानी अदालत द्वारा तय किये जाने का मामला है। (प्रे प रिब्यू ग्रय 7 न-1 (जनवरी 1986) पृ 44)

### 8 (ग) अपील

(1) धारा 6 के तहत एक घोषणा को प्रमाणीकरण करने के मजिस्ट्रेट के अस्वीकारी आदेश या धारा 8 में के तहत एक घोषणा को निरस्त करने के मजिस्ट्रेट के आदेश से पीड़ित कोई व्यक्ति उस तिथि के 60 दिवस के अन्दर जिस दिन ऐसा आदेश उस संचारित हुआ है अपीलेंट बोर्ड जो प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन अपीलेंट बोर्ड कहलाएगा, जिसमें भारतीय प्रेस परिषद् अधिनियम, 1978 की धारा 4 के तहत गठित भारतीय प्रेस परिषद् के द्वारा अपने सदस्यों के बीच में से चेरमैन और एक अन्य सदस्य मनोनीत किया गया है।

परन्तु अपीलेंट बोर्ड उपरोक्त अवधि के बाद भी एक अपील को दखल कर सकता है यदि वह सतुष्ट है कि अपीलेंट समय के अन्दर अपील को प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त कारणों से निवारित रहा है।

(2) इस धारा के तहत एक अपील की प्राप्ति पर अपीलेंट बोर्ड मजिस्ट्रेट से रिवाइड मगवाने और जसा वह सोचे आगे की जांच किए जाने पर उस आदेश जिससे विरुद्ध अपील की गयी है, को पुष्ट, सशोधित या निरस्त कर सकता है।

(3) उपधारा 2 के प्रावधानों को मद्देनजर रखते हुए अपीलेंट बोर्ड अपने आदेश से अपने व्यवहार व प्रक्रिया या निर्धारण कर सकता है।

(4) अपीलेंट बोर्ड का नियम अन्तिम होगा।

### टिप्पणियाँ

यह धारा इस प्रक्रिया पर प्रकाश डालती है कि धारा 6 के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा घोषणा को निरस्त करने से अस्वीकार करने के आदेश अथवा धारा 8 के तहत एक घोषणा को निरस्त करने के आदेश के विरुद्ध किस प्रकार अपील की जाती है।

इस प्रकार की अपील के लिए 60 दिवस की मियाद निर्धारित की हुई है। जिस दिन पीडित व्यक्ति को ऐसा आदेश संचारित हो, उस तिथि से 60 दिनों के अंदर यह अपील की जानी चाहिए।

यह अपील इस धारा के तहत गठित प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन अपीलेंट बोर्ड के यहाँ की जानी है।

यह एक वैधानिक प्रावधान है कि इस बोर्ड में भारतीय प्रेस परिषद् द्वारा अपने सदस्यों के बीच में से इसका अध्यक्ष और दूसरा सदस्य मनोनीत किया जावेगा।

प्रथम कड़िका में आया शब्द "सकता" का आशय यह है कि अपीलेंट बोर्ड उक्त मियाद समाप्त होने के बाद भी किसी अपील को दफ्तरी करने का स्वविवेक रखता है। यदि यह सन्तुष्ट है कि अपीलेंट समय के अंदर पर्याप्त कारणों से अपील पेश करने के लिए निवारित रहा है।

इस प्रकार का स्वविवेक स्वेच्छाचारी न होकर न्यायिक होना चाहिए।

इस धारा की उपधारा 3 में प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में अपीलेंट बोर्ड ने अपने कार्य-व्यवहार के लिए प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन ऑफ अपीलेंट बोर्ड (व्यवहार व प्रक्रिया आदेश) 1961 बनाया है।

यह अपीलेंट बोर्ड उस आदेश को जिसके विरुद्ध अपील की गई है, उसको पुष्ट, सशोधित अथवा निरस्त कर सकता है।

यह एक वैधानिक प्रावधान है कि इस बोर्ड का निर्णय इसके चेयरमैन अथवा दूसरे सदस्य द्वारा हस्ताक्षरित किया जावेगा। (नियम 8 मुर अ बो (व्य प्र)आ)

एक वकील को बोर्ड के सम्मुख उपसजात होने, वकालत करने और काय करने के लिए अनुमति दी हुई है।

यद्यपि उपधारा 4 में यह वर्णित किया गया है कि इस अपीलेंट बोर्ड का निर्णय अंतिम होगा जिसका अर्थ यह हुआ कि इस बोर्ड पर आगे और कोई अपीलीय प्राधिकार नहीं है तब भी उच्च न्यायालय अथवा उच्चतम न्यायालय के यहाँ न्याय द्वारा अपेक्षित होने पर वैधानिक याचिकाएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं।

### अपील सबसे पहले हो

जब एक प्रकरण में जिला मजिस्ट्रेट द्वारा घोषणा को प्रमाणित करने के लिए अस्वीकार आदेश पारित कर दिया गया था तो यह नियम दिया गया कि चूंकि इस प्रकार का आदेश एक अपील योग्य आदेश है। अतः रिट याचिका पेश करने के पूर्व अपील का उपचार पहले भोगना चाहिए। चूंकि अपील पेश नहीं की गयी थी अतः रिट याचिका स्वीकार योग्य नहीं है। (1971 आर एल डब्ल्यू 17)

### भाग - 3

## पुस्तको का परिदान

9 इस अधिनियम के प्रारम्भ के पश्चात् मुद्रित पुस्तकों की प्रतिमा सरकार को मूल्य लिये बिना परिदत्त की जायेंगी।

ऐसी प्रत्येक सम्पूर्ण पुस्तक की मुद्रित प्रतिमा, जो इस अधिनियम के प्रवर्तन में आने के पश्चात् भारत में मुद्रित की जाये, अपने म के सब मानचित्रों मुद्रणों या अन्य उत्कीरणों सहित जो कि उसकी सर्वोत्तम प्रतियों में की रीति में पूरे किये गये और रगे हुए हैं उसके मुद्रक या प्रकाशक (यदि पुस्तक प्रकाशित की जाय) के बीच के किसी वरार के होते हुए मुद्रक द्वारा ऐसे स्थान पर और ऐसे पदाधिकारी को जसाकि राज्य सरकार राजकीय गजट में अधिसूचना द्वारा समय समय पर निर्दिष्ट करे और सरकार राजकीय गजट में अधिसूचना द्वारा समय समय पर निर्दिष्ट करे और सरकार का कोई व्यय हुए बिना निम्नलिखित रूप में अर्थात्—

(क) हर अवस्था में, उस दिन के पश्चात् एक कलेन्डर मास के अन्दर जिस दिन कि ऐसी कोई पुस्तक मुद्रणालय से सबप्रथम परिदत्त की गई है, ऐसी एक प्रति और

(ख) यदि राज्य सरकार मुद्रक से दो से अनधिक अन्य ऐसी प्रतिमा परिदत्त करने की अपेक्षा ऐसे दिन से एक कलेन्डर वष के अन्दर करे तो जिस दिन कि राज्य सरकार द्वारा ऐसी कोई अधिसूचना मुद्रक से की गई हो, उस दिन के एक कलेन्डर मास के अन्दर ऐसी एक अपर प्रति या ऐसी दो प्रतिमा जसा कि राज्य सरकार निर्दिष्ट करे, परिदत्त की जायेगी और इस प्रकार परिदत्त प्रतिमा जिल्द बंधी, सिली हुई और टाकी हुई होगी और उस ही सर्वोत्तम कागज पर होगी जिस पर कि पुस्तक की कोई प्रति मुद्रित हुई है।

प्रकाशक या वह व्यक्ति, जिसने कि मुद्रक को नियोजित किया है, यथा पूर्वोक्त तयार किये हुए और रगे हुए उन सब मानचित्रों, मुद्रणों और उत्त्वरणों का परिदान उक्त मास के भवसान के पूर्व किसी युक्तियुक्त समय पर मुद्रक को करेगा जो कि उने उपरोक्त अपेक्षाओं का अनुपालन करने के लिए समय बनाने के लिए आवश्यक हो। इस धारा के पूर्ववर्ती भाग की कोई बात -

(1) किसी पुस्तक के किसी ऐसे द्वितीय या पश्चात्वर्ती सस्करण को जिस सस्करण में उस पुस्तक में के अनुलिपि मुद्रण या मानचित्रों, पुस्तक मुद्रणों या अम उत्त्वरणों में कोई परिवर्धन या परिवर्तन नहीं किये गये हैं और जिस पुस्तक के प्रथम या किसी पूर्वगामी सस्करण की प्रति इस अधिनियम के अधीन परिदान की जा चुकी है या

(11) इस अधिनियम की धारा 5 के अधीन बनाये गये नियमों के अनुवर्तन में प्रकाशित किसी समाचारपत्र को

## राज्यो द्वारा सशोधन

### आंध्रप्रदेश

मंसूर की तरह ही सिवाम इसके कि "ब्लॉक प्रिंट" की जगह "बुक प्रिंट" पढ़ें - 1960 का आंध्रप्रदेश अधि 8, धारा 27 (1 4 1960)

### गुजरात

महाराष्ट्र की तरह ही - 1961 का गुजरात अधि 23 (18-5 1961)

### केरल

मलाबार जिला - 1948 के मद्रास अधि 24 की धारा 19 लुप्त होगी और मुद्रणयंत्र व पुस्तक पजीयन अधि 1867 की मलाबार जिला में प्रयुक्ति उसी तरह रहेगी जैसे कि चर्चित धारा अधिनियमित ही नहीं हो - 1956 का केरल का एल ओ (1 11-1956)

### महाराष्ट्र

महाराष्ट्र राज्य में इसकी प्रयुक्ति में, धारा 9 में -

(क) पाश्व टिप्पड में जोड़ा जावे शब्द - "और अधिसूचित पुस्तकालयों को और

(ख) प्रथम कडिका के बाद निम्न नयी कडिका शामिल की जावे अर्थात्-

पुस्तक की प्रतियों की ऐसी सख्या जो 5 से अधिक नहीं हो मुक्त द्वारा ऐसे सावजनिक पुस्तकालयों को जिनकी अधिसूचना राज्य सरकार राजपत्र में समय-समय पर निदिष्ट करे उस दिन के पश्चात् एक कलेडर मास के अन्दर जिस दिन कि ऐसी कोई पुस्तक मुद्रणालय से सर्वप्रथम परिदत्त की गई है निःशुल्क प्रदाय होगी - (1948 का इन्वर्ड अधि 61 धारा 2 (3 12 1948) सपठित 1961 का महाराष्ट्र अधि 7 (4 2 1961) की धारा-2

### मैसूर

मैसूर राज्य में इसकी प्रयुक्ति में, धारा 9 में -

(1) कठिका - 1 के खण्ड (क) में निम्न प्रस्थापित किया जावे -

(क) हर अवस्था में उस दिन के पश्चात् एक कलेडर मास के अन्दर जिस दिन कि ऐसी कोई पुस्तक मुद्रणालय से सर्वप्रथम परिदत्त की गई है ऐसी 3 प्रतियाँ और

(2) अन्तिम कठिका के खण्ड (1) में निम्न प्रतिस्थापित किया जावे -

(1) किसी पुस्तक के किसी ऐसे दूसरे या अनुवर्ती सस्करण को जिस सस्करण में उस पुस्तक में के अनुलिपि मुद्रण या मानचित्रों ब्लाक मुद्रणों या चर्चों उत्किरणों में कोई परिवर्धन या परिवर्तन नहीं किए गए हैं और उस पुस्तक के प्रथम या कुछ पूर्ववर्ती सस्करण की तीन प्रतियाँ इस अधिनियम या 1965 के मसूर अधि 10 की धारा 5 के तहत प्रदत्त हो चुकी हो (1-4 1966)

### तमिलनाडु

तमिलनाडु राज्य में इसकी प्रयुक्ति में, धारा 9 में -

(क) प्रथम कठिका के खण्ड (क) में एक ऐसी प्रति' के स्थान पर 'एसी पाँच प्रतियाँ' प्रस्थापित की जावें और

(ख) अन्तिम कठिका के खण्ड (1) में 'प्रथम की एक प्रति' के स्थान पर प्रथम की पाँच प्रतियाँ 'प्रस्थापित की जावे' - 1948 का तमिलनाडु अधि 24, धारा 19 ।

### पश्चिम बंगाल

पश्चिम बंगाल में इसकी प्रयुक्ति में, प्रथम 4 कठिका का खण्ड (क) निम्न प्रकार से प्रतिस्थापित होगा -

(क) हर अवस्था में, उस दिन के पश्चात् एक कलेडर मास के अन्दर जिस दिन कि ऐसी कोई पुस्तक मुद्रणालय से सर्वप्रथम परिदत्त की गई हो, ऐसी तीन

प्रतियां और - 1979 का प ब अधि 39 धारा 24 (अभी तक प्रवृत्तनीय नहीं) ।

### टिप्पणियाँ

यह एक वैधानिक प्रावधान है कि एक पुस्तक के मुद्रक को अपनी मुद्रित पुस्तक की प्रतियां जसा कि राज्य सरकार समय-समय पर निर्दिष्ट करे कि यह प्रति अमुक स्थान पर अमुक ऑफिसर के यहाँ प्रदाय की जावे, नि शुल्क प्रदाय करनी होगी । यह धारा निम्न नियम प्रतिपादित करती है -

(1) मुद्रित पुस्तक के मुद्रणालय से छपते ही पहली बार बाहर होने से एक कलेन्डर माह के अन्दर मुद्रक अपने आप मुद्रित पुस्तक की एक प्रति नि शुल्क प्रदाय करेगा ।

(2) यदि राज्य सरकार इस दिन से एक कलेन्डर वष के दौरान मुद्रित पुस्तक की दो से अधिक अतिरिक्त प्रतियों की अपेक्षा करे तो इस अपेक्षा के दिन से एक कलेन्डर माह के अन्दर मुद्रक उस दूसरी प्रति अथवा अन्य दो प्रतियों को जैसा कि अपेक्षित हो, प्रदाय करेगा ।

(3) इस प्रकार परिदत्त प्रतियाँ जिल्द बधी, सिली हुई और टाकी हुई होगी और उस ही सर्वोत्तम कागज पर होगी जिस पर कि पुस्तक की कोई प्रति मुद्रित हुई है ।

(4) इस प्रकार परिदत्त प्रतियां यथापूर्वोक्त तैयार किये हुए और रगे हुए उन सब मानचित्रो, मुद्रणो और उत्किरणो के साथ होनी चाहिए ।

(5) यदि पुस्तक प्रकाशित भी हुई है यानि उसका प्रकाशक भी है तो मुद्रक और प्रकाशक के बीच यदि कोई ऐसा ठहराव जिसमे मुद्रक को इस वैधानिक कर्तव्य की पालना करने से मुक्त रखा गया था, तब भी मुद्रक इस वैधानिक कर्तव्य से मुक्त नहीं हो सकेगा ।

(6) प्रकाशक या वह व्यक्ति जिसने कि मुद्रक को नियोजित किया है, यथापूर्वोक्त तयार किये हुए और रगे हुए उन सब मानचित्रो, मुद्रणो, और उत्किरणो का परिदान उक्त मास के अवसान के पूर्व किसी युक्तियुक्त समय पर मुद्रक को करेगा जो कि उसे उपरोक्त अपेक्षाओं का अनुपालन करने के लिए समर्थ बनाने के लिए आवश्यक है ।



**अपवाद**

उपरोक्त वर्णित प्रावधान यानि मुद्रित पुस्तक/एँ का नि शुल्क प्रदाय निम्न अवस्थाओं में लागू नहीं होगा -

(1) इस अधि के तहत पहले से ही परिदत्त किसी पुस्तक के किसी ऐसे द्वितीय या पश्चातवर्ती सस्करण को, जिस सस्करण में उस पुस्तक में के अनुलिपि मुद्रणो या मानचित्रो, पुस्तक मुद्रणो या अन्य उत्किरणो में कोई परिवर्धन या परिवर्तन नहीं किये गये हैं अथवा

(11) इस अधि की धारा 5 के अधीन बनाये गये नियमों के अनुवर्तन में प्रकाशित किसी समाचारपत्र पर ।

**राज्यों के नियम**

राजस्थान के नियमों में धारा 9(क) में अपेक्षित उस ऑफिसर का नाम खोला गया है जिसको मुद्रक द्वारा मुद्रित पुस्तक की एक प्रति नि शुल्क प्रदान करनी है -

(1) निदेशक जनसम्पक, राजस्थान, जयपुर ।

धारा 9(ख) के प्रयोजनायं निम्न नाम हैं -

(2) जिला मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्र में मुद्रणालय स्थित है ।

(3) अतिरिक्त पुलिस महानिरीक्षक - श्रीमनल इवेस्टीगेशन डिपार्टमेंट एण्ड इंटेलीजेन्स ब्रान्च राजस्थान, जयपुर । (दे 1951 के राज नियम 5 और सशोधित अधिसूचना न एफ (2)(11)36/पव/51 दि 24 6-53 राज, राजपत्र भाग IV (व) दिनांक 27 6 53 में प्रकाशित) ।

**विधि प्रकरण**

पत्र की एक सिंगल सीट जिसमें कुछ ताजा मुद्दों पर एक लेख था - इसको एक ऐसी पुस्तक नहीं माना गया जिसकी प्रति अधि के तहत सवधित ऑफिसर को नि शुल्क प्रदाय करना अपेक्षित है । (ए 1940 पटना 613 (614) ।

(10) धारा 9 के अधीन परिदान की गई प्रतियों के लिए पावती

वह पदाधिकारी जिसकी पूर्वगामी अंतिम धारा के अधीन पुस्तक परिदान की गई है उसके लिए मुद्रक को लिखित पावती देगा ।

## राज्यों द्वारा सशोधन

### महाराष्ट्र

महाराष्ट्र राज्य में इसकी प्रयुक्ति में, धारा 10 में "ऑफिसर" शब्द के बाद शब्द शामिल किए जावें - "या पुस्तकालय का प्रभारी व्यक्ति जैसी भी स्थिति हो" - 1948 का बम्बई अधि 61 (13 12 1948) सपठित 1961 का महाराष्ट्र अधि 7 (4 2-1961) 1961 का महाराष्ट्र अधि 7 धारा 2 (4 2 1961) ।

### गुजरात

महाराष्ट्र की तरह ही - 1961 का गुजरात अधि 23 धारा 2 (18-5 64) ।

## टिप्पणियाँ

धारा 9 के तहत राज्य सरकार द्वारा नियुक्त ऑफिसर मुद्रक द्वारा उसको प्रदत्त पुस्तक की प्रतियों की लिखित रसीद मुद्रक को देगा ।

### राज्यों के नियम

#### राजस्थान

रा नि 6 मु पु अधि की धारा 9 में अपेक्षित रसीद का निम्न प्रारूप निर्धारित करता है -

मु पु अधि 1867 की धारा 9 के खण्ड (क) (ख) में अपेक्षित पुस्तक की एक प्रति मुद्रक (नाम) द्वारा मुझे (ऑफिसर का नाम) को प्रदत्त की गयी, उसकी एतद्द्वारा प्राप्ति में स्वीकार करता हूँ ।

### हस्ताक्षर

#### (11) धारा 9 के अधीन परिदान की गई प्रतियों का व्ययन

इस अधिनियम की धारा 9 की प्रथम कठिका के खण्ड (क) के अनुसरण में परिदान की गई प्रति का व्ययन इस प्रकार किया जायेगा जैसा कि राज्य सरकार समय-समय पर अवधारण करे । उक्त कठिका के खण्ड (ख) के अनुसरण में परिदान की गई प्रतियाँ केन्द्रीय सरकार को पारेषित की जायेंगी ।

## राज्यों द्वारा सशोधन

## मसूर

धारा - II में प्रथम वाक्य के स्थान पर निम्न प्रतिस्थापित किया जावे -  
 इस अधिनियम की धारा 9 की प्रथम कड़िका के खण्ड (क) के अनुसरण में प्रदत्त  
 तीन प्रतियां में से एक प्रति मसूर सावजनिक पुस्तकालय अधि 1965 में सर्दमित  
 राज्य केन्द्रीय पुस्तकालय बंगलोर को भेजा जाएगी और शेष दो प्रतियां ऐसी  
 रीति से निबटायी जायेंगी जैसा कि राज्य सरकार समय-समय पर तय करें - 1965  
 का मसूर अधि 10 धारा 51 (1 4 1965)

## महाराष्ट्र प्रदेश

सिवाय अधि का नाम, मसूर की तरह ही भाग इस तरह पढ़ा जावे -  
 महाराष्ट्र प्रदेश सावजनिक पुस्तकालय अधि 1960 धारा 27 के खण्ड (क) में  
 सर्दमित भा प्र केन्द्रीय पुस्तकालय हैदराबाद - 1960 का महाराष्ट्र प्रदेश अधि  
 धारा 27 (1 4 1960) ।

## केरल

दखिए केरल के नीचे धारा 9 के तहत राज्य सशोधन ।

## तमिलनाडु

तमिलनाडु राज्य में इसकी प्रयुक्ति में, धारा 11 में प्रथम वाक्य में निम्न  
 वाक्य प्रतिस्थापित किया जावे अर्थात् -

इस अधि की धारा 9 की प्रथम कड़िका के खण्ड (क) के अनुसरण में  
 प्रदत्त पाँच प्रतियों में से मद्रास सावजनिक पुस्तकालय अधि 1948 की धारा 4  
 खण्ड (क) में सर्दमित चार प्रतियां केन्द्रीय पुस्तकालय को भेजी जाएगी और  
 पाँचवीं प्रति ऐसी रीति से निबटायी जाएगी जैसा कि राज्य सरकार समय-समय  
 पर तय करे - 1948 तमिलनाडु अधि 10 धारा 19 ।

## पश्चिम बंगाल

पश्चिम बंगाल राज्य में इसकी प्रयुक्ति में, धारा 11 में प्रथम कड़िका के  
 स्थान पर निम्न प्रकार प्रतिस्थापित किया जावे -

इस अधि की धारा 9 की प्रथम कड़िका के खण्ड (क) के अनुसरण में  
 परिदान की हुई तीन प्रतियों में से एक प्रति ऐसी रीति से निबटानी होगी जसा  
 कि सरकार समय-समय पर तय करे' 1979 का पश्चिम बंगाल अधि 39 धारा  
 24 (अभी तक प्रवर्तनीय नहीं) ।

## टिप्पणियाँ

यह धारा उन नियमों पर प्रकाश डालती है जिनके तहत धारा 9 में प्राप्त प्रतियों को निवटाया जाता है।

(1) धारा 9 (क) में प्रदत्त प्रति समय-समय पर राज्य सरकार द्वारा तय किए जाने के अनुसार निवटायी जाएगी।

(ii) धारा 9 (ख) में प्रदत्त प्रति/या केन्द्रीय सरकार को हस्तान्तरित की जावेगी।

## राज्यों के नियम

### राजस्थान

(1) रा नि '8क' के अनुसार धारा 9 (क) के तहत निदेशक जनसम्पर्क द्वारा प्राप्त पुस्तकें, नियम 8 में सर्दभित्त पुस्तक सूची में उसको समावेश करने के बाद महाराजा सावजनिक पुस्तकालय जयपुर को भेजी जावेगी।

परन्तु जो पुस्तकें राज्य सरकार के ध्यान में लाने को अपेक्षित हों, उन्हें गृह विभाग में राजस्थान सरकार के सचिव को भेजी जावेगी।

(ii) इसी तरह रा नि 8 ख के अनुसार प्रत्येक जिला मजिस्ट्रेट और अतिरिक्त पुलिस महानिरीक्षक धारा 9 (ख) में उनको प्राप्त पुस्तकों को राजस्थान सरकार के गृह विभाग के सचिव को केन्द्र सरकार को हस्तान्तरित करने हेतु भेजेंगे।

नियम 8 क और 8 ख सशोधित अधिसूचना 24-6-53 द्वारा शामिल किए गए हैं।

**11 (क)** भारत में मुद्रित समाचारपत्र की प्रतियाँ सरकार से मूल्य लिये बिना परिदत्त की जावेंगी।

भारत में प्रत्येक समाचारपत्र का मुद्रक ऐसे समाचारपत्र के प्रत्येक सस्करण की दो प्रतियाँ उनके प्रकाशित होते ही ऐसे स्थान पर और ऐसे पदाधिकारी को जसा कि राज्य सरकार राजकीय गजट की अधिसूचना द्वारा समय-समय पर निर्दिष्ट करे और सरकार को कोई व्यय कराय बिना परिदत्त करेगा।

## राज्यों द्वारा सशोधन

## महाराष्ट्र

महाराष्ट्र राज्य में इसकी प्रयुक्ति में धारा 11 ब में शब्द — “दो के स्थान पर शब्द — ‘तीन’ प्रतिस्थापित किया जावे — 1951 का बम्बई अधि 6 सप्टिम्बर 1961 का महाराष्ट्र अधि 7 (4 2 1961) 1961 का महाराष्ट्र अधि 7 धारा — 2 (4 2-1961) ।

## गुजरात

महाराष्ट्र की तरह ही — 1961 का गुजरात अधि 23 धारा 2 (18 5-1961) ।

## मसूर

मसूर राज्य में इसकी प्रयुक्ति में धारा 11 ब में शब्द “दो” के स्थान पर शब्द ‘तीन’ प्रतिस्थापित किया जावे — 1972 का मसूर अधि 10, धारा 2 (अभी तक प्रवर्तनीय नहीं) ।

## टिप्पणियाँ

यह एक वधानिक प्रावधान है कि प्रत्येक समाचारपत्र का मुद्रक ज्योही समाचारपत्र प्रकाशित हो उस स्थान व उस ऑफीसर के यहाँ जसा कि राज्य सरकार निर्दिष्ट करे, ऐसे समाचारपत्र के प्रत्येक अंक की दो प्रतियाँ नि शुल्क भेजेगा ।

## राज्यों के नियम

## राजस्थान

रा नि 4 के अनुसार समाचारपत्र का प्रत्येक मुद्रक समाचारपत्र की एक-एक प्रति निम्ना को नि शुल्क भेजेगा —

- (1) निदेशक जनसम्पर्क, राजस्थान, जयपुर ।
- (2) अतिरिक्त महापुलिस निरीक्षक सी भाई डी, भाई बी, राजस्थान ।
- (3) जिला मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्र में मुद्रणालय स्थित है ।

11 (ख) समाचारपत्रों की प्रतियाँ प्रेस रजिस्ट्रार को परिदत्त की जायेगी ऐसे कि—हीं नियमों के अधीन रहते हुए, जैसे कि इस अधिनियम के अधीन बनाये जायें, भारत के प्रत्येक समाचारपत्र का प्रकाशक ऐसे समाचारपत्र के प्रत्येक

सस्करण की एक प्रति उसके प्रकाशित होते ही प्रेस रजिस्ट्रार को कोई व्यय कराये बिना परिदत्त करेगा ।

### टिप्पणियाँ

प्रत्येक समाचारपत्र का प्रकाशक ज्योंही समाचारपत्र प्रकाशित होता है, त्याही ऐसे समाचारपत्र के प्रत्येक अंक की एक प्रति प्रेस रजिस्ट्रार को नि शुल्क भेजेगा ।

इस सम्बन्ध में के नि 5 निम्न नियम प्रदान करता है -

(i) प्रत्येक प्रकाशक अपने समाचारपत्र के अंक के प्रकाशन के 48 घण्टों के अन्दर उसकी एक प्रति डाक अथवा स-देशवाहक के द्वारा प्रेस रजिस्ट्रार को भेजेगा ।

(ii) जब एक ही समान घोषणा के तहत एक समाचारपत्र के एक से अधिक सस्करण प्रकाशित होते हों और वे फुटकर विक्रय मूल्य अथवा पृष्ठों की सख्या के सम्बन्ध में एक-दूसरे से भिन्न हों, तो प्रत्येक सस्करण के अंक की एक-एक प्रति भी प्रकाशक के द्वारा प्रेस रजिस्ट्रार को भेजी जावेगी ।

(iii) हिन्दी, उर्दू अथवा अंग्रेजी में और दो भाषाओं में प्रकाशित वह समाचारपत्र जिनकी एक भाषा हिन्दी, उर्दू व अंग्रेजी में से एक हो, वाले समाचारपत्रों के अंकों की प्रतियां प्रेस रजिस्ट्रार नई दिल्ली को भेजी जावेंगी -

(iv) निम्न क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशित समाचारपत्रों के अंकों की प्रतियां निम्नानुसार पत्र सूचना कार्यालय के क्षेत्रीय अधिकारी को भेजी जावेगी ।

भाषा	पसूका का क्षेत्रीय अधिकारी
पंजाबी	जालंधर
बंगाली, उडिया और असमी	कलकत्ता
तमिल	मद्रास
तेलगू	हैदराबाद
मलयालम	एरनाकुलम
मराठी व गुजराती	अहमदाबाद
कन्नड	बंगलौर
कोकाणी	बम्बई
पुतगाली	बम्बई

ऐसे क्षेत्रीय दफ्तर प्रेस रजिस्ट्रार की ओर से ऐसे समाचारपत्रों की प्राप्ति लेंगे ।

(v) किसी अन्य भाषा में प्रकाशित समाचारपत्रों के अको की प्रतियाँ प्रेस रजिस्ट्रार नई दिल्ली को भेजी जावेंगी ।

### पु प्र नियम

20 मई, 1954 से भारत में प्रकाशित पुस्तकों यहाँ तक कि समाचार-पत्र के प्रत्येक प्रकाशन की एक एक प्रतियाँ पुस्तक प्रदान (सावजनिक पुस्तकालय, अधिनियम 1954) 1954 का अधि 27 के तहत बने पुस्तक प्रदान (सावजनिक पुस्तकालय नियम) 1955 की धारा 3 के तहत निम्नो को प्रदाय की जावेगी —

- (1) नेशनल लाइब्रेरी वेलीविडेर, कलकत्ता-27
- (2) कोनिमेरा पब्लिक लाइब्रेरी एममोर, मद्रास 8
- (3) दी सेटल लाइब्रेरी टाउन हॉल, बम्बई-1

## भाग 4

### शास्तियाँ

#### (12) धारा 3 के नियम के प्रतिफूल मुद्रण के लिए शास्ति

जो कोई किसी पुस्तक या पत्र को इस अधिनियम की धारा 3 में अन्तर्विष्ट नियम के अनुवर्तन से अथवा मुद्रित या प्रकाशित करेगा वह मजिस्ट्रेट के सामने सिद्ध दाय होने पर दो हजार रुपये से अधिक जुमाने से, या छ मास से अधिक अवधि के लिए साधारण कारावास से या दोनों से दण्डित किया जायगा ।

राज्यों के सशोधनों के लिए देखिए पृष्ठ 67

#### विधि प्रकरण

न्यायमूर्ति एम सी देसाई ने अब्दुल हकीम बनाम स्टेट (ए 1960 इलाहाबाद 450) नामक निगरानी प्रकरण में धारा 3 व 12 के संघर्ष में निम्न नियम प्रतिपादित किये हैं ।

### (क) किसी ग्रन्थ व्यक्ति के नाम का मुद्रण

एक पुस्तक का मुद्रक पुस्तक पर मुद्रण-स्थल व अपना नाम मुद्रित नहीं करके किसी दूसरे का नाम व अन्य किसी दूसरे स्थान का नाम मुद्रित करता है तो मुद्रक धारा 12 के तहत अपराध करता है ।

### (ख) एक ही स्थल पर मुद्रण

यदि पूरा ग्रन्थ किसी एक व्यक्ति द्वारा एक स्थान पर मुद्रित होता है तो पूरा ग्रन्थ एक पुस्तक है और यदि मुद्रक व मुद्रण स्थल का नाम इसके किसी भी स्थान पर सुपाठ्यत मुद्रित किया जाता है तो धारा 3 की पालना पूरी मानी जायेगी । ऐसे नाम पुस्तक के एक ही स्थान न कि दो या दो से अधिक स्थानों पर मुद्रित किये जाने की अपेक्षा है । पुस्तक की परिभाषा में एक ग्रन्थ का भाग शामिल है लेकिन जब ग्रन्थ के विभिन्न भाग विभिन्न लोगों द्वारा विभिन्न स्थानों पर मुद्रित किये जाते हों तो प्रत्येक ग्रन्थ या एक ग्रन्थ का प्रत्येक भाग एक व्यक्ति द्वारा इस स्थान पर मुद्रित किया जाना एक पुस्तक है । जब प्रार्थी द्वारा बाहर और अंदर दोनों के आवरण अपने मुद्रणालय में छापे गये हो तो यह नहीं कहा जा सकता कि वे दो अलग-अलग पुस्तकें बनती हो तथा पूर्व-वर्ती में पश्चातवर्ती में मुद्रित इम्प्रिंट लाइन से अलग इम्प्रिंट लाइन अपनी चाहिये ।

यह तथ्य कि बाहरी आवरण में भीतरी आवरण में मुद्रित मुद्रक व मुद्रणालय के नाम से भिन्न मुद्रक व मुद्रणालय का नाम मुद्रित है, आम जनता में यह धारणा बना सकता है कि बाहरी आवरण उस स्थान पर व उस व्यक्ति द्वारा मुद्रित हुआ है जिनका उसमें नाम वरिणित हुआ है । ऐसी दशा में, आम जनता में ऐसी धारणा फैलाकर मुद्रक धोखा देने का अपराधी तो हो सकता है परन्तु वह धारा 3 में दोषी नहीं हो सकता ।

एक पुस्तक जिसमें नाम है, किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी भी स्थान पर मुद्रित हो सकती है । यदि प्रार्थी ने अपना व मुद्रण-स्थल का नाम भीतरी आवरण में मुद्रित नहीं किया है तो उसको धारा 3 का उल्लघन-कर्ता इस आधार पर तो माना जा सकता है कि उसने मुद्रक व मुद्रण-स्थल का नाम किसी भी तरह मुद्रित नहीं किया न कि इस आधार पर कि उसने बाहरी आवरण पर ऐसे व्यक्ति का जो मुद्रक नहीं था और ऐसे मुद्रण-स्थल का जो मुद्रण स्थल नहीं था, नाम मुद्रित किया था ।



**(ग) मुद्रण बर्नाम प्रकाशन**

धारा 3 केवल पुस्तक के मुद्रण के प्रसंग में है न कि इसके प्रकाशन के प्रसंग में। अतः धारा 12 में शब्दावली "पुस्तक - धारा 3 में अन्तर्विष्ट नियम के अनुवर्तन से अन्यथा या प्रकाशित" का कोई अर्थ नहीं रह जाता। अतः धारा 12 में भाये शब्द "या प्रकाशित" की उपस्था होनी चाहिए। अतः एक पुस्तक का प्रकाशन जो धारा 3 में अन्तर्विष्ट नियम की अनुपालना में मुद्रित न हुई हो, धारा 3 सपठित 12 में कोई अपराध नहीं है।

**(घ) यदि पहले से ही उल्लघन तो कोई उपसाधा नहीं**

एक पुस्तक का प्रकाशन जो यद्यपि मुद्रण के नाम से मुद्रण के मामले में धारा 3 की अपेक्षाओं को पूरा नहीं करता, जो धारा 3 के उल्लघन को उकसाने वाला नहीं माना जा सकता जब किसी दूसरे मुद्रक द्वारा पहले से ही उसका उल्लघन किया जा चुका हो।

**दो मुद्रणालयों में पेम्फलेट्स का मुद्रण**

पेम्फलेट्स का एक भाग एक मुद्रणालय में व दूसरा भाग दूसरे मुद्रणालय में मुद्रित हुआ। पूर्ववर्ती मुद्रणालय के धारक का नाम पुस्तक में मुद्रक के रूप में दिखायी नहीं दिया।

यह नियम हुआ कि अभियुक्त धारा 3 में सजा पाने योग्य है (1912) 13 की एन जे 139 (ख पी) बम्बई।

**अपराधी मन की सिद्धि जरूरी नहीं**

मुद्रक और मुद्रण स्थल के नाम से मुद्रण की चूक मुद्रणालय के मालिक की तरफ से वधानिक कर्तव्य का उल्लघन है। अपराध पूरा हो चुका है। अपराधी मन की सिद्धि जरूरी नहीं। मुद्रणालय का संक्षेपण/प्रारम्भिक अक्षर पर्याप्त नहीं है (1962) (1) की एल जे 824 (826) मनीपुर।

\* धारा 3 और 12 का संबंध अभिप्राय से नहीं है। यदि धारा 3 में अन्तर्विष्ट नियम की पालना नहीं की जाती है तो एक अपराध सम्पन्न माना जायेगा और वह धारा 12 में दृढनीय है। (1909) 10 की ल जे 195 (198) ए 1933 रगून 4 (4)

साइक्लोस्टाइल मशीन की सहायता से

साइक्लोस्टाइल मशीन की सहायता से एक अवधिकालिक समाचारपत्र की प्रतियाँ निकालना — प्रतियों पर प्रकाशक का नाम नहीं और उस स्थान का नाम भी नहीं जहाँ वे मुद्रित हुईं तो यह निराय हुआ कि धारा 12 के तहत सिद्ध दोषी उचित थी। (ए 1931 पटना 351 (352), 1973 इलाहाबाद क्री आर 475 (479, 480, 481)।

वितरण प्रकाशन के तुल्य

जब एक व्यक्ति सड़को पर एक विशेष मुद्रित पेम्फलेट्स या पत्र जिनमें विशेष बठक की सूचना है, बाटता है तो वह धारा 12 के तहत इस आधार पर दोषी नहीं है कि धारा 12 के तहत पेम्फलेट्स का बाटना पुस्तक या पत्र के प्रकाशक के तुल्य है (ए 1937 बम्बई 28 (29, 30)।

प्रवचक के जरिए मुद्रण कार्य

मुद्रणालय का मालिक जो अपने प्रवचक के माफत मुद्रण व्यवसाय करता है, उसे धारा 3 के उल्लंघन में पुस्तको को मुद्रित करते हुए माना जाना चाहिये यद्यपि यहाँ तक कि उसे मुद्रणालय के प्रवच में कुछ भी करना नहीं था। (ए 1933 रगून 4 (4)।

जब एक लेखक दायित्व से बच नहीं सकता

मुद्रित पेम्फलेट का एक लेखक जो शिक्षित व्यक्ति है और जो यह भी स्वीकार करता है कि पेम्फलेट्स में लिखित सामग्री उसने लिखी है, वह मात्र यह कहने से अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो सकता कि वह मुद्रणालय से मवधित नहीं है और न उसका सबध इसके वास्तविक मुद्रण से है (ए 1970 आसाम 128 (129)।

प्रकाशक कौन है

एक प्रकाशक वह व्यक्ति है जो प्रत्येक या पेम्पलेट्स का मुद्रण व वितरण सावजनिक उपभोग के लिए करता है (ए 1966 पजाब 342 (343)।

13 धारा 4 द्वारा अर्पणित घोषणा किये बिना मुद्रण यंत्र रखने के लिए शास्ति जो कोई इस अधिनियम की धारा 4 में अर्णविष्ट किसी उपबध के उल्लंघन में यथापूर्वोक्त जसा कोई मुद्रणयंत्र अपने कब्जे में रहेगा वह मजिस्ट्रेट के सामने

सिद्ध दोष होने पर दो हजार रुपये से अनधिक जुमनि से या छ मास से अनधिक अवधि के लिये साधारण वारावास से या दोनों से दंडित किया जायेगा ।

राज्य सशोषणों के लिए पृष्ठ नं 67 देखिए ।

### विधि प्रकरण

बया मुद्रणालय मुद्रण के लिए ठीक था

धारा 13 के तहत सिद्ध दोष करने के लिए यह योजना आवश्यक है कि मुद्रणालय पुस्तकों व पत्रों के मुद्रण वाय करने की पर्याप्त रूप से ठीक अवस्था में थी (ए 1929 कलकत्ता 635 (636) ।

14 मिथ्या कथन करने के लिए दंड

जो कोई व्यक्ति इस अधिनियम के प्राधिकार के अधीन कोई घोषणा या कथन करने में कोई एमा कथन करेगा जो मिथ्या है और (जिसके मिथ्या होने का उसे जान या विश्वास है या जिसके सत्य होने में वह विश्वास नहीं करता है) वह मजिस्ट्रेट के सामने सिद्ध दोष होने पर दो हजार रुपये से अनधिक जुमनि से छ मास से अनधिक अवधि के लिए वारावास से दंडित किया जायेगा ।

राज्य सशोषणों के लिए देखिए पृष्ठ 67 ।

### विधि प्रकरण

जब प्रबंधक और संपादक के विरुद्ध अभियोजन नहीं

अब मुद्रक और प्रकाशक धारा 19 घ के तहत घोषणा करने के उसके कर्तव्य को पूरा करने से मना कर रहा था तो प्रबंधक और संपादक ने प्रकाशक के रूप में धारा 19 घ के तहत घोषणा प्रस्तुत कर दी । चूंकि घोषणा पेश करके प्रबंधक और संपादक ने मुद्रक को कोई क्षति या हानि नहीं पहुँचाई इसलिए उनके विरुद्ध धारा 14 में मिथ्या कथन करने के लिए कोई अभियोजन नहीं चलाया जा सकता (1975 श्री एल जे 90 (95) ।

मात्र मिथ्या कथन पेश करना धारा 14 में दण्डनीय नहीं

मात्र लिखित मिथ्या कथन या घोषणा मजिस्ट्रेट को पेश करना कोई अपराध नहीं है ।

ऐसे घोषणाकर्ता को धारा 14 सपठित धारा 4 में दण्डनीय करने के लिए ऐसे घोषणाकर्ता द्वारा यह मजिस्ट्रेट के सम्मुख प्रस्तुत व हस्ताक्षरित होनी चाहिए । (ए 1923 लाहौर 440)

15 नियमों के अनुवर्तन के बिना समाचारपत्र मुद्रित या प्रकाशित करने के लिए शास्ति

(1) जो कोई एतदपूर्व विहित नियमों का अनुवर्तन किये बिना किसी समाचारपत्र का सम्पादन मुद्रण या प्रकाशन करेगा या जो कोई इस बात को जानते हुए कि किसी समाचारपत्र के सम्बन्ध में उक्त नियमों का पालन नहीं किया गया है उस समाचारपत्र का सम्पादन, मुद्रण या प्रकाशन करेगा या उसका सम्पादन, मुद्रण या प्रकाशन करायेगा वह मजिस्ट्रेट के सामने सिद्धदोष होने पर दो हजार रुपये से अनधिक जुर्माने से या छ मास से अनधिक अवधि के लिए कारावास से या दोनों से दंडित किया जायेगा ।

राज्य सशोधन के लिए देखिए पृष्ठ स 67 ।

15 क धारा 8 के अधीन घोषणा करने में असफल रहने के लिए शास्ति

यदि ऐसा कोई व्यक्ति जो किसी समाचारपत्र का मुद्रक या प्रकाशक रहने से परिवर्तित हो गया है धारा 8 के अनुवर्तन में घोषणा करने में असफल रहता है या उपेक्षा करता है तो वह मजिस्ट्रेट के सामने सिद्धदोष होने पर दो सौ रुपये से अनधिक जुमाने से दण्डनीय होगा ।

(2) जहाँ अपराध एवं समाचारपत्र के संबंध में उपधारा (1) के तहत किया जाता है मजिस्ट्रेट उपरोक्त उपधारा में दिए गए दण्ड के साथ उस समाचारपत्र के सम्बन्ध में घोषणा को भी निरस्त कर सकता है ।

राज्यों द्वारा सशोधन (धाराएं 12 से 15 क)

पंजाब, हरियाणा और चंडीगढ़

पंजाब, हरियाणा और केन्द्रशासित चंडीगढ़ राज्यों में इन धाराओं की प्रयुक्ति में प्रत्येक धारा में से शब्द "मजिस्ट्रेट के सामने" लोप किए जावें (देखिए 1964 का पंजाब अधि 25 धारा 2 व अनुसूची, भाग II (2 10 1964) 1966 का अधि 31 धारा 88 (1 11 1966))

16 पुस्तकों का परिदान न करने या मुद्रक को मानचित्रों का प्रदाय न करने के लिए शास्ति

यदि ऐसी किसी पुस्तक का कोई मुद्रक, जैसा कि इस अधिनियम की धारा 9 में निम्नलिखित है उस धारा के अनुसरण में उस पुस्तक की प्रतियाँ परिदान करने में उपेक्षा करे तो वह ऐसी प्रत्येक नूक के निये दण्ड स्वरूप पचास रुपये से अनधिक इतनी राशि जितनी कि उस स्थान में क्षेत्राधिकार रखने वाला म

जहाँ कि वह पुस्तक मुद्रित हुई थी उस परिस्थिति या म चूक के लिये युक्तियुक्त शास्ति उस पदाधिकारी के जिसको प्रतियाँ परिदत्त की जानी चाहिए थी, या उस पदाधिकारी द्वारा तन्निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के भावेदन पर भवधारित कर और इतनी राशि के अतिरिक्त, इतनी धपर राशि जिसे कि वह मजिस्ट्रेट उन प्रतियों का मूल्य भवधारित करे, जो कि मुद्रक द्वारा परिदत्त की जानी चाहिये थी, जम्ती के रूप में सरकार को देगा ।

यदि कोई प्रकाशक या अन्य व्यक्ति जो कि किसी ऐसे मुद्रक को नियोजित करता है वे मानचित्र मुद्रण या उत्कीरण जो कि मुद्रक को उस धारा के उपबन्धों का अनुवर्तन करने में समय बनाने के लिये आवश्यक है इस अधिनियम की धारा 9 की द्वितीय कड़िका में विहित रीति में परिदत्त करने में उपेक्षा करे तो ऐसा प्रकाशक या अन्य व्यक्ति ऐसी प्रत्येक चूक के लिये दण्डस्वरूप पचास रुपये से अधिका इतनी राशि, जितनी कि यथा पूर्वोक्त जसा मजिस्ट्रेट उन परिस्थितियों में उस चूक के लिये युक्तियुक्त शास्ति यथा पूर्वोक्त जैसे भावेदन पर भवधारित करे, और इतनी राशि के अतिरिक्त इतनी धपर राशि, जिस कि वह मजिस्ट्रेट उन मानचित्रों, मुद्रणों या उत्कीरणों का मूल्य भवधारित करे जो कि ऐसे प्रकाशक या अन्य व्यक्ति द्वारा परिदत्त किये जाने चाहिए वे जम्ती के रूप में सरकार को देगा ।

## राज्यों द्वारा सशोधन

### महाराष्ट्र

महाराष्ट्र राज्य में इसकी प्रयुक्ति में धारा 16 में (क) प्रथम कड़िका में शब्द (इन दिनों बिहाफ) के बाद शब्द 'या उस पुस्तकालय प्रभारी के भावेदन पर जिसको पुस्तक की एक प्रति प्रदत्त की जानी चाहिए' शामिल किए जाए और (ख) द्वितीय कड़िका में शब्द 'द्वितीय' के स्थान पर शब्द 'तीन' प्रतिस्थापित किया जावे - 1948 का बम्बई अधि 61 धारा 4 (3 12 1948) सपडित 1961 का महाराष्ट्र अधि 7 (4 2 1961) 1961 का महाराष्ट्र अधि 7 धारा 2 (4 2 61)

### गुजरात

महाराष्ट्र जसा ही - 1961 का गुजरात अधि 23, धारा 2 (18 5 1961)

## विधि प्रकरण

कब पुस्तक का प्रदान पूरा होता है

मुद्रणालय से बाहर पुस्तक प्रदान उस समय पूरा नहीं होता जब पुस्तक छप चुकी होती है बल्कि उस समय होता है जब किसी प्रति का

मुद्रणालय से बाहर वास्तविक प्रदान हो उसके पूर्व मुद्रण कार्य पूरा हो सका हो। (ए 1927 इलाहाबाद 237)।

धारा 16 क्या प्रावधान नहीं करती

धारा 16 सिद्धदोष और कारावास का प्रावधान नहीं करती।  
(ए 1940 पटना 613) 614)

16 (क) सरकार को समाचारपत्रों की प्रतियाँ मूल्य लिये बिना परिदत्त करने में असफल रहने के लिए शास्ति

यदि भारत में प्रकाशित किसी समाचारपत्र को कोई मुद्रक धारा 11क के अनुवतन में उसकी प्रतियों का परिदान करने में उपक्षा करता है तो उस पदाधिकारी के, जिसको प्रतियाँ परिदान की जानी चाहिये थीं या उस पदाधिकारी द्वारा तन्निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के परिवाद पर वह उस स्थान में क्षत्राधिकार रखने वाले मजिस्ट्रेट द्वारा सिद्धदोष किये जाने पर, जहाँकि वह समाचारपत्र मुद्रित किया गया था, ऐसी प्रत्येक चूक के लिए पचास रुपये तक के जुमनि से दण्डनीय होगा।

### विधि प्रकरण

धारा 8 ख, 11 क - 16 क के बीच संघ

प्रकाशक द्वारा सरकार को समाचारपत्र की प्रतियों का प्रदान न होना - धारा 11क के प्रावधानों की पालना नहीं - यह कहा जा सकता है कि समाचारपत्र अधि के प्रावधानों के उल्लंघन में प्रकाशित हो रहा है - प्रकरण धारा 8ख, खण्ड (1) क तहत आता है और घोषणा का निरस्तीकरण वध है - प्रकाशक के विरुद्ध प्रशासकीय कायवाही घोषणा के निरस्तीकरण के साथ साथ उसके विरुद्ध धारा 16क में भी अभियोजन चलाया जा सकता है। 1975 डब्लू एल एन (यूसी) (530) राजस्थान।

16 (ख) प्रस रजिस्ट्रार को समाचारपत्रों की प्रतियाँ परिदत्त करने में असफलता के लिए शास्ति

यदि भारत में प्रकाशित किसी समाचारपत्र का कोई प्रकाशक धारा 11ख के अनुवतन में उसकी प्रतियाँ का परिदान करने में उपक्षा करता है तो प्रस रजिस्ट्रार के परिवाद पर वह उस स्थान में क्षत्राधिकार रखने वाले मजिस्ट्रेट द्वारा

- (10) यह बात कि क्या सस्करण प्रथम, द्वितीय या तृतीय सक्षयक है ।
- (11) उस सस्करण में जितनी प्रतियाँ छपी हैं उनकी संख्या ।
- (12) यह बात कि पुस्तक मुद्रित की गई है, साइक्लोस्टाइल की गई है या लियोग्राफ की गई है ।
- (13) वह मूल्य जिस पर पुस्तक सावजनिक रूप से बेची जाती है ।
- (14) प्रतिलिप्याधिकार के या ऐसे प्रतिलिप्याधिकार के किसी भाग के स्वत्वधारी का नाम और निवास स्थान ।

प्रत्येक पुस्तक की प्रवस्था में धारा 9 की प्रथम कड़िका के खंड (क) के अनुसरण में उसकी प्रति के परिदान के पश्चात् यथासाध्य शीघ्र ऐसा ज्ञापन तैयार किया और रजिस्ट्रीकृत किया जायेगा ।

### टिप्पणियाँ

यह धारा उन पुस्तकों के पंजीयन संबंधी प्रक्रिया पर प्रकाश डालती है जिनका धारा 9(क) के तहत परिदान हो चुका है । राज्य सरकार द्वारा नियुक्त एक अधिकारी इन पुस्तकों का ज्ञापन — 'सूचीपत्र' अपने कार्यालय में करवाने का प्रबन्ध करेगा । धारा 9(क) में पुस्तक का परिदान प्राप्त होने पर यथाशक्य धारा 18 के मद न० 1 से 14 की विशिष्टियों का इस सूचीपत्र में दर्ज किया जावेगा ।

### राजस्थान नियम

धारा 9 क और धारा 18 के प्रयोजनाय निम्न अधिकारी को राजस्थान सरकार द्वारा नियुक्त किया गया है । (रा नि 5 और 8)

“निदेशक — जनसम्पर्क, राजस्थान, जयपुर” ।

### 19 रजिस्ट्रीकृत ज्ञापन का प्रकाशन

प्रत्येक तिमासे में उक्त 'सूची' में रजिस्ट्रीकृत ज्ञापन ऐसे तिमासे के समाप्त होने के पश्चात् यथाशीघ्र राजकीय गजट में प्रकाशित किया जायेगा और इस प्रकार प्रकाशित ज्ञापन की एक प्रतिलिपि केन्द्रीय सरकार को भेजी जावेगी ।

### टिप्पणियाँ

धारा 18 में पंजीकृत पुस्तक का ज्ञापन — 'सूचीपत्र' राजकीय गजट में हर तिमाही प्रकाशित होगा और इस तरह प्रकाशित इस ज्ञापन की एक प्रति केन्द्रीय सरकार को भेजी जावेगी ।

## मान नियम

निदेशक, जनसम्पक, राजस्थान, गजट में इस तरह प्रकाशित इस की एक प्रति राजस्थान सरकार के गृह विभाग के सचिव को यह सरकार को प्रेषण हेतु भेजेंगे।

## भाग 5 क

# समाचारपत्रों का रजिस्ट्रीकरण

### (19 क) प्रेस रजिस्ट्रार तथा अन्य पदाधिकारियों की नियुक्ति

केन्द्रीय सरकार भारत के समाचारपत्रों का एक रजिस्ट्रार तथा प्रेस रजिस्ट्रार के साधारण अधीक्षण और नियंत्रण के अधीन अन्य ऐसे पदाधिकारी, जैसे कि इस अधिनियम के द्वारा या अधीन उनको समनुद्दिष्ट कृत्यों का पालन, करने के प्रयोजन के लिए आवश्यक हो, नियुक्त कर सकेगी, और साधारण या विशेष आदेश द्वारा इस अधिनियम के अधीन उनके द्वारा पालन किये जाने वाले कृत्यों के वितरण या आवंटन का उपबन्ध कर सकेगी।

### (19 ख) समाचारपत्रों का रजिस्ट्रीकरण

(1) प्रेस रजिस्ट्रार समाचारपत्रों का रजिस्टर विहित रीति में रखेगा।

(2) जहाँ तक साम्य है रजिस्टर के अन्तर्गत भारत में प्रकाशित प्रत्येक समाचारपत्र के समय में निम्नलिखित विशिष्टियाँ होगी, अर्थात्—

(क) समाचारपत्र का नाम,

(ख) वह भाषा जिसमें समाचारपत्र प्रकाशित किया जाता है

(ग) समाचारपत्र के प्रकाशन की कालावधि, यथा,

(घ) समाचारपत्र के संपादक मुद्रक और प्रकाशक का नाम,

(ङ) मुद्रण और प्रकाशन का स्थान,

(च) प्रति सप्ताह पृष्ठों की औसत संख्या

(छ) वर्ष में प्रकाशन के दिनों की संख्या,

(ज) मुद्रित प्रतियाँ की औसत संख्या, जनता को बेची गई प्रतियों की औसत संख्या तथा जनता को मूल्य लिये बिना वितरित प्रतियाँ की औसत संख्या, यह औसत ऐसी कालावधि की बाबत निकाली जायगी जैसे कि विहित की गई



(क) प्रत्येक प्रति का पुटकर विक्रय मूल्य,

(ख) समाचारपत्र के स्वामिया का नाम और पते और स्वामित्व सबधी ऐसी विशिष्टियाँ जैसी की विहित की जायें,

(ग) अथ कोई विशिष्टियाँ जो कि विहित की जायें ।

(3) प्रस रजिस्ट्रार उपरोक्त विशिष्टिया के सबध म समय-समय पर जानकारी प्राप्त होने पर रजिस्टर म सुमगत प्रविष्टियाँ करायेगा और रजिस्टर का अद्यतन रखने के लिये उसमें ऐसे आवश्यक परिवर्तन और शुद्धियाँ कर सकेगा जैसे कि अपेक्षित हों ।

### (19 ग) रजिस्ट्रीकरण के प्रमाण-पत्र

प्रस रजिस्ट्रार धारा 6 के अधीन किसी समाचारपत्र व सबध म घोषणा की एक प्रति मजिस्ट्रेट स प्राप्त होने तथा ऐसे समाचारपत्र के प्रकाशन होने पर तत्पश्चात यथासाध्य शीघ्र उस समाचारपत्र क संग्रह म रजिस्ट्रीकरण का एक प्रमाण-पत्र उस समाचारपत्र के प्रकाशक को देगा ।

### (19 घ) समाचारपत्रों द्वारा दिये जाने वाले वार्षिक विवरण, इत्यादि

प्रत्येक समाचारपत्र के प्रकाशक का यह कर्तव्य होगा कि वह -

(क) प्रेस रजिस्ट्रार को उस समाचारपत्र के सबध म ऐसे समय पर और धारा 19 ख की उपधारा 2 म निर्दिष्ट विशिष्टियाँ म से ऐसी विशिष्टियो वाला, जसी कि विहित की जाये एक वार्षिक विवरण द ।

(ख) समाचारपत्रों मे ऐसे समय पर और धारा 19 ख की उपधारा (2) में निर्दिष्ट समाचारपत्र सबधी ऐसी विशिष्टियाँ प्रकाशित करे जसी की प्रस रजिस्ट्रार द्वारा इन निमित्त उल्लिखित की गई हो ।

### (19 ङ) समाचारपत्रों द्वारा की जाने वाली विवरणियाँ और प्रतिवेदन

प्रत्येक समाचारपत्र का प्रकाशक धारा 19 ख की उप धारा (2) म निर्दिष्ट किसी विशिष्टि के सबध मे ऐसी विवरणियाँ, आंकड़े तथा अथ जानकारी प्रस रजिस्ट्रार को देगा जसी कि प्रेस रजिस्ट्रार समय-समय पर अपेक्षित करे ।

### (19 च) अमिलेखों तथा दस्तावेजों तक पहुँच का अधिकार

प्रेस रजिस्ट्रार या उसके द्वारा तन्निमित्त लिखित रूप म प्राधिकृत किसी गजटेट पदाधिकारी की पहुँच इस प्रयोजन के लिये कि वह किसी समाचारपत्र के

सबध को कोई जानकारी इस अधिनियम के अधीन एवत्रित करे उस समाचारपत्र के सबध रखने वाले किसी सुसंगत अभिलेख या दस्तावेज तक होगी और वह किसी युक्तियुक्त समय में ऐसे किसी परिसर में प्रवेश कर सकेगा जिसकी बाबत उसका विश्वास है कि उसके अन्दर उसे अभिलेख या ऐसी दस्तावेज है या वह सुसंगत अभिलेखों या दस्तावेजों की नकल कर सकेगा या वह इस अधिनियम के अधीन जो जानकारी दी जानी अपेक्षित है उसे अभिप्राप्त करने के लिये आवश्यक कोई प्रश्न पूछ सकेगा ।

### (19 घ) वार्षिक प्रतिवेदन

प्रेस रजिस्ट्रार ने भारत के समाचारपत्रों के सबध में गत वर्ष में जा भी जानकारी अभिप्राप्त की है उसका सार अन्तर्विष्ट रखन वाला और ऐस समाचार पत्रों के कम्पत्त वा विवरण देने वाला वार्षिक प्रतिवेदन ऐस प्रारूप में और प्रत्येक वर्ष ऐसे समय पर, जसा कि विहित किया जाये, तयार करेगा और उसकी प्रतियाँ केन्द्रीय सरकार को भेजी जायेंगी ।

### (19 ज) रजिस्ट्रार के उद्धरणों की प्रतियाँ देना

प्रेस रजिस्ट्रार रजिस्ट्रार के किसी उद्धरण की प्रति के प्रदाय के लिए किसी व्यक्ति के आवेदन पर और ऐसी फीस दिये जाने पर, जसी कि विहित की जाये, ऐसी प्रति आवेदन को ऐसे प्रारूप में और ऐसी रीति में देगा जैसा या जैसी कि विहित किया या की जाये ।

### (19 झ) शक्तियों का प्रत्यायोजन

इस अधिनियम के और तद्धीन बनाये गये विनियमों के अधीन रहते हुए प्रेस रजिस्ट्रार इस अधिनियम के अधीन अपनी शक्तियों में से सबको या किसी को अपने अधीनस्थ किसी पदाधिकारी को प्रत्यायोजित कर सकेगा ।

### (19 ञ) प्रेस रजिस्ट्रार तथा अन्य पदाधिकारी लोकसेवक होंगे

प्रेस रजिस्ट्रार तथा इस अधिनियम के अधीन नियुक्त किय गये सब पदाधिकारी भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 21 के अर्थ में लोकसेवक समझे जायेंगे ।

### (19 ट) धारा 19 घ या 19 झ इत्यादि के उल्लंघन के लिये शास्ति

यदि किसी समाचारपत्र का प्रकाशक—

(क) धारा 19 घ या धारा 19 झ के उपबन्धों का अनुबन्धन करने से इनकार करता है या करने में उपेक्षा करता है, या

(ख) समाचारपत्र में धारा 19 घ के खंड के (ख) के अनुसरण में उस समाचारपत्र के सवध में कोई ऐसी विशिष्टियाँ प्रकाशित करता है। जिनकी बाबत वह विश्वास करने का उसके पास कारण है कि वह मिथ्या है, तो वह ऐसे जुमाने से जो पाँच सौ रुपये तक का हो सकेगा दण्डनीय होगा।

(19 ठ) जानकारी के अनुचित संप्रकटीकरण के लिए शास्ति

यदि इस अधिनियम के अधीन जानकारी सग्रह के सवध में काम में लगाने वाला कोई व्यक्ति इस अधिनियम के अधीन की गई कोई जानकारी या किसी विवरणों में अन्तर्विष्ट बातें इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के निष्पादन से या इस अधिनियम में या भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अधीन किसी अपराध के लिए अभियोजन करने के प्रयोजनों में अथवा काम में प्रकट करता है तो वह ऐसी अवधि के कारावास से जो छ मास तक का हो सकेगा, या जुमाने से, जो एक हजार रुपये तक हो सकेगा या दोनों से दण्डनीय होगा।

### टिप्पणियाँ (धाराएँ 19 क से 19 ठ)

धारा 19 क - एक ऐसी सस्था जिसका नाम भारत के समाचार-पत्रों के पजीयक (आर एन आई) है, की स्थापना से, धाराएँ 19 घ से 19 ज - आर एन आई के वधानिक अधिकारों, कर्तव्यों व दायित्वों से, धाराएँ 19 ख व 19 ग समाचारपत्रों के पजीयक सम्बन्धी प्रक्रिया से, धाराएँ 19 घ और 19 ड प्रकाशक के वधानिक कर्तव्यों और 19 ट उनके उल्लंघन की शास्तियों से तथा 19 ठ जानकारी के समुचित संप्रकटीकरण के लिए शास्ति के सामान्य शास्ति दंड से सवध रखती है।

आर एन आई की स्थापना और इसके अधिकार, कर्तव्य व दायित्व

(1) मु पु अधि के भाग 5 क के प्रयोजनाथ केन्द्रीय सरकार समाचारपत्रों के पजीयक की नियुक्ति करेगी।

(2) आर एन आई अपने अधीनस्थ किसी अधिकारी को अपनी सभी या कोई भी शक्ति प्रत्योजित कर सकेगी।

(3) मु पु अधि के तहत नियुक्त आर एन आई और सभी अफसर द प्र स की धारा 21 के अर्थ में लाकसेवक माने जाएंगे।

(4) किसी समाचारपत्र के सवध में सूचना एकत्रित करने के प्रयोजनाथ -

\* आर एन आई प्रकाशक के कब्जे में रखे किसी भी सगत अभिलेख या दस्तावेज तक अपनी पहुँच रखेगा।

\* आर एन आई उस परिसर में वहाँ ऐसे अभिलेख या दस्तावेज रखे जाने का इसे विश्वास हो, एक युक्तियुक्त समय में प्रवेश ले सकेगा।

\* आर एन आई सगत अभिलेख या दस्तावेज का निरीक्षण कर सकेगा या उनकी प्रतियाँ ले सकेगा या मु. पु. अधि. के तहत अपक्षित किसी सूचना के लिए कोई आवश्यक प्रश्न पूछ सकेगा।

(5) यदि कोई व्यक्ति आवेदन पर धारा 19 ख के तहत रखे गये रजिस्टर के किसी उद्धरण की प्रति लेना चाहे तो आर एन आई उसे ऐसी प्रति प्रदान करेगा।

~/(6) आर एन आई प्रत्येक वर्ष की 30 अप्रैल या इसके पूर्व समाचारपत्रों से संबंधित सूचना और सारिकाएँ विशेष कर इनकी विभिन्न श्रेणियों में प्रसार की प्रवृत्ति और एक से अधिक समाचारपत्रों के सामाजिक स्वामित्व के निर्देशन में प्रवृत्ति से युक्त एक वार्षिक प्रतिवेदन केन्द्र सरकार को प्रस्तुत करेगा (धारा 19 छ सपठित के नि. 11)।

ऐसी रिपोर्ट प्राप्त होने पर, केन्द्र सरकार द्वारा ससद में पेश करने के काम आयेगी।

(7) आर एन आई समाचारपत्रों का एक अद्यतन रजिस्टर रखेगी जिसमें धारा 19 ख की उपधारा 2 के मद स. क. से. ट. की विशिष्टियाँ समावेश होंगी।

(8) प्रकाशक को फाम V में समाचार पत्रों का प्रमाण पत्र जारी करने हेतु आर एन आई को सबसे पहले यह देखना है कि आया धारा 6 में प्रमाणित घोषणा की एक प्रति और ऐसे समाचारपत्रों के प्रकाशित प्रथम अंक की एक प्रति आर एन आई को पहुँच गयी है या नहीं (धारा 19 ग सपठित के नि. 10)।

### प्रकाशक के वैधानिक कर्तव्य

प्रत्येक समाचारपत्र का प्रकाशक निम्न वैधानिक कर्तव्य रखता है—

(i) संबंधित वर्ष के अगले प्रत्येक वर्ष के फरवरी माह के अंतिम दिन तक या इसके पूर्व आर एन आई को फाम II में वार्षिक विवरण भेजना (धारा 19 घ (क) सपठित के नि. 6 (1)।

(ii) प्रत्येक वर्ष की फरवरी माह के अंतिम दिन के पश्चात् प्रकाशक प्रथम अंक में फाम IV में निर्धारित की हुई विशिष्टियों का प्रकाशन करना (धारा 19 ख सपठित के नि. 8)।

(iii) समय 2 पर आर एन आई द्वारा अपेक्षित विवरण, साक्ष्यकी और अन्य सूचना भेजना (धारा 19 अ) आर एन आई प्रत्येक दैनिक समाचारपत्र के प्रकाशक से यह अपेक्षा करता है कि प्रत्येक वर्ष की 28 फरवरी तक फाम ए आर 4 भर कर भेजे ।

(iv) प्रकाशन के 48 घंटा के अंदर समाचारपत्र के प्रत्येक अंक की एक प्रति डाक अथवा सदेशवाहक द्वारा आर एन आई को भिजवाना (के नि 5) ।

(v) समाचारपत्र के फुटवर विषय मूल्य के परिवर्तन की सूचना ऐसे परिवर्तन के 48 घंटा के अंदर आर एन आई को देना (के नि 6) ।

(vi) पहले से ही जारी समाचारपत्र पजीयन प्रमाण पत्र की विशिष्टियों में यदि कोई परिवर्तन हो तो ऐसे प्रमाण पत्र को पुनः जारी करवाने हेतु आर एन आई को लौटाना (के नि 10 (3)) ।

प्रकाशक के वैधानिक कर्तव्यों की पालना न करने पर शस्तियाँ

मुपु अधि में एक अलग से भाग यानि भाग IV शास्तियों के सबध में दिया हुआ है । धाराएं 19 ट और 19 ठ भी यहाँ शास्ति सबधी दख है ।

धारा 19 ट के अनुसार निम्न में से कोई भी अवस्था प्रकाशक को 500/- रु से अनधिक के जुर्माने से दंडित करा सकती है -

(i) जब प्रकाशक आर एन आई को धारा 19 (घ) (क) में अपेक्षित वार्षिक विवरण भेजने को मना कर दे या ऐसा करने में लापरवाही बरते ।

(ii) जब प्रकाशक प्रत्येक वर्ष के फरवरी माह के अंतिम दिन के बाद प्रकाश्य प्रथम अंक में धारा 19 (घ) (ख) में अपेक्षित फाम IV में निर्धारित की हुई विशिष्टियाँ प्रकाशित करने से मना कर दे या ऐसा करने में लापरवाही बरते ।

(iii) जब धारा 19 अ में आशयित किसी सूचना को आर एन आई को भेजने से प्रकाशक मना कर दे या ऐसा करने में लापरवाही बरते ।

(iv) जब प्रकाशक धारा 19 घ के खड ख की पालना में समाचारपत्र के सबध में ऐसी सूचना समाचारपत्र में प्रकाशित करे जिसे वह मिथ्या मानने का विश्वास रखता हो ।

जानकारी के अनुचित संप्रकटीकरण के लिए शास्ति

धारा 19 ठ के अनुसार निम्न में से कोई भी दशा निम्न से सबधित व्यक्ति को 6 मास से अनधिक वा कारावास या 1000/ रु से अनधिक वा जुर्माना या दोनों से दंडित करा सकती है ।

जब मु पु अधि के तहत सूचना एक्त्रीकरण के वाय में लगा हुआ एक व्यक्ति अपने कर्तव्यों की पालना के बजाय कामत (जानबूझकर) ।

(i) मु पु अधि के तहत दिये गये वा भेजे गये किसी विवरण की विषय वस्तु वा किसी सूचना को प्रकट करता है अथवा

(ii) मु पु अधि वा भा द स के तहत किसी अपराध में अभि-योजन करने के प्रयोजनार्थ ऐसा कामत प्रकट करता है ।

### विधि प्रकरण

वार्षिक प्रतिवेदन बनाम रिटन

प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रतिवेदन में एक व्यक्ति को एक समाचारपत्र के संपादक के रूप में दिखाया गया जो वार्षिक प्रतिवेदन धारा 19 घ(ख) के तहत प्रकाशित रिटन में जिसमें ऐसे व्यक्ति का नाम न होकर किसी दूसरे का नाम है, के प्रभाव को नगण्य नहीं कर सकता । (ए 1971 उच्चतम न्यायालय 856 (859, 860) ।

जब मुद्रक और प्रकाशक पुन हस्ताक्षर करने से मना कर दे

जब समाचारपत्र के मुद्रक और प्रकाशक ने पुन हस्ताक्षर करने व मुद्रक और प्रकाशक की हैसियत से अपने कर्तव्यों की पालना करने से मना कर दिया तब पत्र के प्रबधक व संपादक ने धारा 19 घ में प्रकाशक के नाम से घोषणा प्रस्तुत की तो प्रबधक और संपादक भा द स की धारा न तो 465 में और न धारा 471 में दंड योग्य माने गये । (1975 श्री एल जे 90 (95) ।

जब द प्र स की धारा 195(1) आकषित नहीं होती

जब मजिस्ट्रेट धारा 19 घ में संपादक और प्रबधक द्वारा की गयी घोषणा को प्राप्त करता है तो वह अदालत की तरह काम नहीं करता अत मिथ्या घोषणा करने का आरोपित अपराध सबधित पक्षकार द्वारा किया नहीं माना जाता क्योंकि द प्र स की धारा 195(1) यहा आकषित नहीं होती । (1975 श्री एल जे 90(95) ।

## भाग 5

## प्रकीर्ण

## 20 नियम बनाने की शक्ति

केन्द्रीय सरकार द्वारा धारा 20 क के अधीन बनाये गये नियमों से सगत ऐसे नियम जैसे कि हम अधिनियम के उद्देश्यों को कार्यान्वित करने के लिये आवश्यक या वाछनीय हो, बनाने की और ऐसे नियमों को समय-समय पर निरस्त परिवर्तित करने या परिवर्धित करने की शक्ति राज्य सरकार को प्राप्त होगी।

ऐसे सार नियम और उनके समस्त निरस्तन तथा परिवर्तन और उनमें किये गये परिवर्धन राजकीय गजट में प्रकाशित किये जायेंगे।

## टिप्पणियाँ

मु पु अधि को धारा 20 के तहत राज्य सरकार मु पु अधि के उद्देश्यों को कार्यान्वित करने के लिए नियम बनाने तथा उन्हें राजकीय गजट में प्रकाशित कराने को सक्षम है।

ऐसे नियम धारा 20 क के तहत केन्द्र सरकार द्वारा बनाये गये नियमों से असगत नहीं होने चाहिए।

राज्य सरकार के ऐसे नियमों की अनुपस्थिति में मु पु अधि के उद्देश्यों की कार्यान्वित इन केन्द्रीय नियमों से शासित होगी।

## राज्यों के नियम

कृते आंध्रप्रदेश - प्रस रजिस्ट्रेशन ऑफ बुक्स रूल्स, 1960 (दे आंध्रप्रदेश गजट 24 II 1960 भाग II पृष्ठ 541)।

कृते बिहार - प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन (बिहार) रूल्स 1957 (दे बिहार गजट 20 3 1957 भाग II (न 2)।

कृते गुजरात - प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन रूल्स 1968 (दे गुजरात सरकार गजट 10 10 68 भाग IV क, पृष्ठ 693)।

कृते जम्मू-कश्मीर - रजिस्ट्रेशन ऑफ बुक्स रूल्स (दे जम्मू कश्मीर गजट 31 12 1963, भाग III अतिरिक्त। (न 39 ठ)।

कृते मध्यप्रदेश - प्रस एण्ड रजिस्ट्रेशन रूल्स 1954, (दे म प्र गजट 20 10 1954, भाग IV (ग) पृ 438)।

कृते महाराष्ट्र - प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन ऑफ बुक्स रूल्स 1923 (दे महाराष्ट्र सरकार गजट 1963 भाग IV ख पृष्ठ 412 ।

कृते राजस्थान - राजस्थान प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन ऑफ बुक्स रूल्स 1951 । ये नियम तत्काल प्रभाव से सम्पूर्ण राज पर लागू हो गये । (दे अधिसूचना दि जयपुर जून 28, 1951 न एफ 2 (II) (36) पत्र 51 गह विभाग (प्रकाशन) राजस्थान राजपत्र मे दिनांक जुलाई 7, 1951 को भाग IV (ख) पृष्ठ 205 पर सवप्रथम प्रकाशित ।

जहाँ नियम नहीं

केरल - निदेशक, जनसम्पर्क (ग) विभाग त्रिवेन्द्रम ने अपने पत्र क्रमांक 1989 दिनांक 27 1 1986 द्वारा लेखक को सूचित किया कि मु पु अधि की धारा 20 के तहत यहाँ कोई नियम नहीं बनाये गये हैं ।

कर्नाटक - सूचना व प्रचार विभाग, कर्नाटक ने अपने पत्र दिनांक 29 नवम्बर, '85 को लेखक को सूचित किया कि मु पु अधि की धारा 20 के तहत यहाँ कोई नियम नहीं बनाये गये हैं ।

20क केन्द्र सरकार की नियम बनाने की शक्ति

केन्द्र सरकार राजकीय गजट मे एक अधिसूचना के जरिये नियम बना सकती है -

(क) वह विशिष्टियाँ विहित करने वाले, जो धारा 5 के अधीन की गई और हस्ताक्षरित घोषणा मे अर्तविष्ट हो सवेगी, और वह प्रारूप तथा रीति जिसमे समाचार के मुद्रक प्रकाशक मालिक और सम्पादक का नाम तथा इसके मुद्रण का स्थान व प्रकाशन का स्थान ऐसे समाचारपत्र की प्रत्येक प्रति पर मुद्रित हो सकेगा ।

(ख) वह रीति विहित करने वाले जिसमे कि मजिस्ट्रेट की पदीय मुद्रा से अधिप्रमाणित किसी घोषणा या घोषणा क प्रमाणिकरण की अस्वीकारी के आदेश की प्रतियाँ घोषणा को पेश करने व हस्ताक्षरित करने वाले व्यक्ति तथा प्रेस रजिस्ट्रार को भेजी जा सकेंगी ।

(ग) वह रीति विहित करने वाले जिसके अनुसार किमी समाचारपत्र की प्रतियाँ प्रेस रजिस्ट्रार को धारा 11 ख के अधीन भेजी जा सकेंगी ।

(घ) वह रीति, जिसमें कि रजिस्टर धारा 19 ख के अधीन रखा जा सकेगा और वे विशिष्टियाँ, जो कि उसमे अर्तविष्ट हो सकेगी, विहित करने वाले ।



(ड) ऐसे विशिष्टियाँ विहित करने वाले, जो कि उस वापिक विवरण में प्रतिलिपि हो सकेगी जो कि समाचारपत्र के प्रकाशक द्वारा प्रेस रजिस्ट्रार को दिया जाना है।

(घ) वह प्रारूप तथा रीति विहित करने वाले जिसमें धारा 19 घ के खण्ड (क) के अधीन कोई वापिक विवरण या धारा 19 (ड) के अधीन कोई वापिक विवरणी भाषाओं या अन्य जानकारी प्रेस रजिस्ट्रार को भेजी जा सकेगी।

(छ) रजिस्ट्रार के उद्देश्यों की प्रतियाँ देने की फीस और वह रीति जिसमें ऐसी प्रतियाँ दी जा सकेंगी विहित करने वाले।

(ज) वह रीति विहित करने वाले, जिसमें कि समाचारपत्र के संबंध में रजिस्ट्रीकरण का प्रमाणपत्र दिया जा सकेगा।

(झ) वह प्रारूप जिसमें और वह समय जिसके अन्तर्गत वापिक प्रतिवेदन प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा तयार किये जा सकेंगे और केन्द्रीय सरकार को भेज जा सकेंगे विहित करने वाले।

(2) इस धारा के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम बनाये जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र सदन के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जायेगा। यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी। यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उक्त नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाए तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तन रूप में ही प्रभावी होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाए कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा। किंतु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उनके अधीन पहले की गई किसी बात की विधि मायता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

### टिप्पणियाँ

मु. पु. अधि. 20 क के तहत केन्द्र सरकार स्वयं धारा 20 क की उपधारा-1 के मद न. क से झ. म. वर्णित विशिष्टियों पर नियम बनाने को सक्षम है।

ये नियम राजकीय राजपत्र में एक अधिसूचना के जरिये बनाये जाने चाहिये।

धारा 20 क की उपधारा 2 जो 1960 के अधि. 26 (1-10 60 से प्रभावशील) द्वारा प्रतिस्थापित की गई है, में बताया गया है कि ये

नियम ससद द्वारा किस प्रकार पारित किये जायेंगे । यह एक वैधानिक प्रावधान है जिसके उल्लघन से इन नियमों को असंवैधानिक करार दिया जा सकता है ।

धारा 20 क 1955 के अधि 55 (1-7-1956 से प्रभावशील) द्वारा शामिल की गई है ।

धारा 20 क में प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में केन्द्र सरकार ने केन्द्रीय नियम अर्थात् समाचारपत्रों का पजीयन (केन्द्रीय) नियम 1956 बनाये हैं । (द अधिसूचना दिनांकित नई दिल्ली-2, जून 22, 1956/एस आर ओ 1519) भारत सरकार का गजट 1956 अतिरिक्त भाग II धारा 3 पृष्ठ 1537 में प्रकाशित ।

इसके नियम न 2 के अनुसार, ये नियम 1-7-1956 से लागू हो गये हैं ।

20ख इस अधिनियम के तहत बने नियम निर्धारित कर सकते हैं कि इनका उल्लघन दंडनीय होगा ।

इस अधिनियम के कि-ही प्रावधानों के तहत बना कोई नियम निर्धारित कर सकता है कि इनका उल्लघन 100/ रु से अधिक जुर्माना से दंडनीय होगा ।

### टिप्पणियाँ

यह धारा 1960 के अधि 26 (1-10-1960 से प्रभावशील) द्वारा शामिल की हुई है । यह धारा प्रावधान करती है कि इस अधि के किसी भी प्रावधान के तहत बना कोई भी नियम यह प्रावधान कर सकता है कि उनका उल्लघन 100 रु से अधिक जुर्माना में दंडनीय है जिसका तात्पर्य यह हुआ कि 1-10-60 या इसके बाद केन्द्र सरकार यहाँ तक कि राज्य सरकार यह प्रावधान कर सकती है कि उनके द्वारा बनाये गये नियमों का उल्लघन 100/ रु से अधिक के जुर्माने से दंडनीय होगा ।

केन्द्रीय नियम ऐसी किसी शास्ति का प्रावधान नहीं रखते ।

राजस्थान नियम

राजस्थान नियम भी ऐसी किसी शास्ति का प्रावधान नहीं रखते ।

21 किसी विशेष प्रकार की पुस्तकों को इस अधिनियम के प्रवर्तन से अपवर्जित करने की शक्ति

राज्य सरकार किसी विशेष प्रकार की पुस्तकों या पत्रों को इस अधिनियम के सम्पूर्ण भाग या इसके किसी भाग या भागों के प्रवर्तन से राजकीय गजट में अधिसूचना द्वारा अपवर्जित कर सकेगी ।

परंतु समाचारपत्रों के किसी वर्ग के संबंध में ऐसी कोई अधिसूचना केन्द्र सरकार की सलाह के बिना जारी नहीं की जायेगी ।

### टिप्पणियाँ

यह धारा राज्य सरकार को मुद्रण अधि के किसी भाग या भागों की पूर्ण व आंशिक कार्यावृत्ति से पुस्तकों व पत्रों के किसी वर्ग को अपवर्जित करने की शक्ति प्रदान करती है ।

(i) ऐसी शक्ति राजकीय गजट में एक अधिसूचना के जरिये काम में ली जानी चाहिए और -

(ii) समाचारपत्रों के मामले में ऐसी अधिसूचना केन्द्रीय सरकार में सलाह लिये बिना जारी नहीं करनी चाहिए ।

### विधि प्रकरण

धारा 3 जय जनसाधारण को अनुविधा का उपचार धारा 21 में

धारा 21 के कारण एक विजिटिंग कांड और यहाँ तक कि डिनर पार्टी का दिया गया एक आम त्रण पत्र भी दस्तावेज है और ये धारा 3 के क्षेत्र में आयेंगे । आम जनता को इसमें जो परेशानी होती है, उसका उपचार धारा 21 में है जो राज्य सरकारों को इस अधिनियम की कार्यावृत्ति से पुस्तकों और पत्रों के किसी वर्ग को अपवर्जित करने की शक्तियाँ प्रदान करता है । (ए 1960 आ-घ्नप्रदेश 176 (177))

### राजस्थान नियम

रा नि 9 के अनुसार जब सरकार द्वारा जारी एक सूचना के अनुसार मुद्रण अधि की धारा 21 के तहत द प्र स की धारा 91 (क) (अब धारा 95) के तहत ज्वन की हुई किसी पुस्तक को मुद्रण अधि के भाग V की कार्यावृत्ति से अपवर्जित कर दिया गया हो तो ऐसी पुस्तक के सदभ में धारा 18 के तहत पुस्तकों के "सूचीपत्र" में की गयी प्रविष्टियाँ (यदि कोई हुई हो तो) लोप हो जायेगी ।

### कॉलेज व स्कूल की मैगजीनों

मु पु अधि के तहत कॉलेज व स्कूल की मैगजीनों को घोषणा पेश करने में अपवर्जित रखा गया है। (दे अधिसूचना जयपुर जून 8, 1955/न एफ 35 (5) गृह II/55 राजस्थान राजपत्र दिनांक जून 18, 1955 भाग I (ख) पृष्ठ 221 में प्रकाशित।

### 22 विस्तार

इस अधिनियम का विस्तार समस्त भारत पर है।

### टिप्पणियाँ

सशोधन अधिनियम (1965 का अधि 16) के पूर्व शब्द "भारत" जिसका प्रयोग निवचन खंड में किया गया था, की परिभाषा यो थी— "भारत से अथ जम्मू व कश्मीर राज्य को छोड़कर भारत की सीमा से है।" लेकिन इस सशोधन अधिनियम के द्वारा यह परिभाषा लोप कर दी गयी। इस सशोधन अधि के पूर्व धारा 22 में भी यह था कि इस अधि का विस्तार समस्त भारत पर होगा सिवाय जम्मू कश्मीर राज्य को छोड़कर परन्तु इस सशोधन अधि द्वारा धारा 22 में से "सिवाय जम्मू-कश्मीर राज्य को छोड़कर" नामक शब्दावली लोप कर दी गयी है जिसका अर्थ यह हुआ कि मु पु अधि सम्पूर्ण भारत पर लागू होता है।

मु पु अधि जहा तक समाचारपत्रों का सवाल है सन् 1983 से सिक्किम राज्य पर भी लागू कर दिया गया है।

### सामान्य टिप्पणियाँ

23 (प्रारम्भ) निरसन अधिनियम, 1870 (1870 का 14) द्वारा निरस्त।

### मु पु अधि के तहत शास्तियों की प्रकृति

धाराओं 12 से 16 ख और 19 ट, 19 ठ और 20 ख मु पु अधि के तहत विभिन्न प्रकार के अपराधों के लिए विभिन्न प्रकार की शास्तियों से सम्बन्धित है।

इन धाराओं में शास्तियों की निम्न प्रकृति पायी जाती है—

- (i) जुर्माना
- (ii) सम्पत्ति की जब्ती
- (iii) जुर्माना या साधारण कारावास या दोनों
- (iv) कारावास या जुर्माना या दोनों
- (v) जुर्माना और कारावास

## जुर्माना

प्रत्येक चूक के लिए निम्न स्थितियों में 50/- रुपये से अधिक का जुर्माना लगाया जा सकता है -

(i) धारा 11 व की पालना में यानि मुद्रक द्वारा सरकार को मुद्रित समाचारपत्र की प्रतियाँ नि शुल्क भेजना, की अवहेलना करने पर । (दे धारा 16 क)

(ii) धारा 11 ख यानि प्रकाशक द्वारा प्रकाशित समाचारपत्र की प्रतिया प्रेस रजिस्ट्रार को नि शुल्क भेजना, की अवहेलना करने पर । (दे धारा 16 ख)

मु पु अधि के तहत बने नियमों में कोई भी नियम में यह प्रावधान रखा जा सकता है कि इनका उल्लघन 100/- रुपये के अनधिक जुर्माने से दण्डनीय होगा । (दे धारा 20 ख)

धारा 8 के तहत घोपणा करने में यानि उन व्यक्तियों द्वारा नई घोपणा जि होने घोपणा हस्ताक्षरित की है जो उसके पश्चात् मुद्रक और प्रकाशक नहीं रहे हैं, ऐसा करने में असफल होने पर 200/- रुपये से अनधिक का जुर्माना लगाया जा सकता है । (दे धारा 15 क)

निम्न दशाओं में 500/- रुपये से अनधिक का जुर्माना लगाया जा सकता है -

(i) धारा 19 घ (क) यानि समाचारपत्र के प्रकाशक द्वारा वार्षिक विवरण भेजना, के उल्लघन किये जाने पर । (दे धारा 19 ट)

(ii) धारा 19 घ (ख) यानि समाचारपत्र में निर्दिष्ट समय पर निर्दिष्ट विशिष्टियाँ प्रकाशित करने के उल्लघन करने पर । (दे धारा 19 ट)

(iii) धारा 19 ग यानि समाचारपत्र के प्रकाशक द्वारा रिटर्न्स और रिपोट्स भेजना, का उल्लघन करने पर । (देखिये धारा 19 ट)

(iv) धारा 19 घ के खण्ड (ख) की पालना के नाम पर मिथ्या विवरण समाचारपत्र में प्रकाशित करना । (देखिये धारा 19 ट)

## सम्पत्ति की जब्ती

50/- रुपये से अनधिक की राशि और पुस्तका व नक्शा का विनिश्चय किया हुआ मूल्य जैसा भी मामला हो, सरकार द्वारा जब्त किया जायेगा ।

(i) धारा 19 के तहत यानि मुद्रित पुस्तको की प्रतियों के सरकार को नि शुल्क प्रदाय करना, की अवहेलना करने पर । (देखिये धारा 16)

(ii) धारा 9 के तहत यानि प्रकाशक द्वारा मुद्रक को नकशे आदि प्रदाय न करना । (दे धारा 16)

**जुर्माना या साधारण कारावास या दोनों**

2,000/- रु से अनधिक का जुर्माना या छह माह से अनधिक का साधारण कारावास या दोनो निम्न दशाओ मे लगाये जा सकते है -

(i) धारा 3 के नियम यानि पुस्तको व पत्रो पर विशिष्टिया मुद्रित करने, का उल्लघन करने पर । (दे धारा 12)

(ii) धारा 4 के नियम यानि मुद्रणालय के धारक द्वारा घोषणा करना, का उल्लघन करने पर । (दे धारा 13)

(iii) जो कोई एतत्पूण विहित नियमो का अनुवतन किये बिना किसी समाचारपत्र का सम्पादन, मुद्रण या प्रकाशन करेगा । (दे धारा 15 (1))

**यथा यहा घोषणा का निरस्तीकरण शास्ति प्रकृति का है ।**

धारा 15 (1) के तहत शास्ति के साथ-साथ एक समाचारपत्र का घोषणा-पत्र भी निरस्त किया जा सकता है ।

यहा यह प्रश्न उठता है कि धारा 15 (2) मे घोषणा निरस्तीकरण का प्रावधान एक दण्डनीय प्रकृति का है या शासकीय कायवाही है । ऐसा दिखायी देता है, यह शासकीय कायवाही है ।

**कारावास या जुर्माना या दोनो**

छह माह से अनधिक का कारावास या 1,000/- रु से अनधिक का जुर्माना या दोनो निम्न दशाओ मे लगाया जा सकता है -

(i) मु पु अधि के तहत सूचना सग्रह के काय मे लगे हुए किसी व्यक्ति द्वारा उस सूचना को अनुचित रूप से प्रकट करना ।

(ii) इस प्रकार की सूचना के सप्रवटीकरण के पीछे इस व्यक्ति का प्रयोजन मु पु अधि अथवा भा द स के तहत व्यक्ति विशेष के विरुद्ध अभियोजन चलवाना रहा हो ।

### जुर्माना अथवा कारावास

2,000/- रु से अनधिक का जुर्माना अथवा छह माह से अनधिक का कारावास उस समय दिया जा सकता है जब कोई मु पु अधि के प्राधिकार के तहत मिथ्या कथन अथवा घोषणा करे। (दे धारा 14)

### स्वत कार्यवाही बनाम परिवाद पर कायवाही

धारा 16 की प्रथम व द्वितीय कड़िका में चूक के लिए युक्तियुक्त शास्ति और प्रतियों या नक्शों के मूल्य का युक्तियुक्त मूल्य जसा भी मामला हो, उस अधिकारी जिसको कि प्रतियाँ भेजनी हैं द्वारा सबके पहले मजिस्ट्रेट को लिखने पर किया जा सकता है।

यह एक वधानिक प्रावधान है कि धारा 16 क के तहत जब तक सम्बन्धित अधिकारी द्वारा जिसे की प्रतियाँ भेजनी हैं, मजिस्ट्रेट को लिखित परिवाद न करे तब तक कोई कायवाही नहीं की जा सकती।

इस तरह धारा 16 ख के तहत भी जब तक प्रेस रजिस्ट्रार मजिस्ट्रेट को परिवाद न करे तब तक कोई कायवाही नहीं की जा सकती है। दोनों ही धाराएँ 16 और 16 क के तहत यह अधिकारी इस उद्देश्य के लिए किसी दूसरे को अधिकृत कर सकता है।

यह उजागर होता है कि जहाँ दो धाराएँ 12 से 15 क के तहत मजिस्ट्रेट स्वतः कायवाही कर सकता है वहाँ धाराएँ 16 से 16 ख के तहत वह स्वतः कायवाही नहीं कर सकता है।

शब्द "कारावास" जब इसके आगे पीछे कोई विशेषण नहीं हो तो इसका अर्थ साधारण यहाँ तक कि सश्रम (कठोर) कारावास से भी माना जाना चाहिए। चूकि मु पु अधि के तहत शब्द "कारावास" के आगे पीछे कोई विशेषण नहीं है, इसलिए इस अधिनियम के तहत सश्रम कारावास भी दिया जा सकता है।

### अपराधो का विधिसास्त्र

इन धाराओं से उत्पन्न अपकृत्य (दोष) या तो आपराधिक अभिप्राय से या किसी विशेष चीज को करने या नहीं करने के पूरण आपराधिक दायित्व के प्रति प्रमाद से उत्पन्न हुए हैं।

अभिप्राय दो चीजों से सिमटता पाया जाता है - यह दूर-दृष्टि कि कुछ विशेष परिणाम इस कृत्य से अनुसरित होंगे और उन

परिणामों की इच्छा जिसे अभिप्राय ने कृत्य करने को उकसाया। (होम्स, दो कामन लॉ, 53)

प्रमाद एक सदोष सापरवाही है। ग्रिल बनाम जनरल आईरन स्कूल कोलियरी व मे न्यायाधीश विलियम कहते हैं—ऐसी सावधानी की अनुपस्थिति जिसे प्रतिवादी प्रयोग में लाने का कर्तव्य रखता था। (1866) एल आर आई सी पी पृष्ठ स 612)।

प्रमाद दो प्रकार का होता है, एक असावधानीयुक्त और दूसरा असावधानी मुक्त। ध्यानावत प्रमाद साधारणतः जानबूझकर “प्रमाद” अथवा “अविचारित” से संबोधित होता है। “असावधानी प्रमाद” को साधारण प्रमाद कहा जा सकता है। ध्यानावत प्रमाद में अपकार (क्षति) समाहित रूप में पहले से ही दिखायी देती है जबकि असावधानी प्रमाद में ऐसा न तो दिखायी देता है और न ऐसी कोई इच्छा की हुई होती है। (सामण्ड का विधि शास्त्र—11वा सस्करण पृष्ठ 422)

कईपों द्वारा यह माना गया है कि प्रमाद का अस्तित्व आवश्यक रूप में “असावधानी” में है। (दे आस्टिन, लेक्चर XX)

अभिप्राय की तुलना में, प्रमाद आवश्यक रूप से व्यक्तिनिष्ठ है। प्रमाद घोर, साधारण या मामूली हो सकता है। मजिस्ट्रेट का जुर्माना या कारावास या दोनों से ही दंडित करने का स्वविवेक प्रमाद की मात्रा के तदानुसार कुछ सीमा तक प्रयोग में लाया जा सकता है।

**मु पु अधि के तहत अपराधों की अन्वीक्षा**

स्वयं मु पु अधि इस बात पर चुप है कि इसके तहत किये गये अपराधों की अन्वीक्षा के लिए क्या प्रक्रिया अपनायी जायेगी। ऐसी स्थिति में द प्र स में निर्धारित अन्वीक्षा की प्रक्रिया इन अपराधों की अन्वीक्षा में अपनायी जावेगी। द प्र स की धारा 4 में द प्र स द्वारा निर्धारित प्रक्रिया भा द स के तहत किये गये अपराधों और यहाँ तक कि “अन्य विधियों” के तहत किये अपराधों पर भी लागू होती है। यहाँ “अन्य विधियों” में मु पु अधि भी शामिल है। इसी धारा 4 के अन्तिम भाग के अनुसार द प्र स की प्रक्रिया मु पु अधि पर लागू नहीं होती यदि स्वयं मु पु अधि द्वारा या किसी अन्य ऐसी विधि जो विशेषकर मु पु अधि के लिए ही बनायी गयी हो, द्वारा ऐसी प्रक्रिया बनायी गयी होती।



कोई भी मामूली (प्रिटी) अपराध नहीं

मुपु अधि के तहत कोई-सा भी अपराध द प्र स की धारा 206 के खण्ड-2 में परिभाषित — मामूली अपराध के क्षेत्र में नहीं आता क्योंकि स्वयं मुपु अधिनियम अपराधी की अनुपस्थिति में उसके दोष के लिये उसको दंडित करने का कोई प्रावधान नहीं रखता। इस प्रकार के प्रयाजन के लिये अथ “दूसरी विधि (जिसका तात्पर्य यहाँ मुपु अधि से है)” में ऐसा प्रावधान होना पूर्व शत है।

**सम्मन केसेज**

मुपु अधिनियम में कोई भी दंडनीय अपराध 2 वर्ष से अधिक कारावास का नहीं है। अतः ऐसा अपराध द प्र स की धारा-2 के तहत सम्मन केस की परिभाषा में आता है। यही कारण है कि सम्मन केस के लिए द प्र स में निर्धारित की गई प्रक्रिया इन अपराधों पर भी लागू होगी।

**असंज्ञेय व काबिले जमानत** — मुपु अधि के तहत कोई-सा भी अपराध सज्ञेय (पुलिस द्वारा हस्तक्षेप योग्य) नहीं है। द प्र स की धारा 2(ग) में सज्ञेय अपराध की परिभाषा दी गयी है।

सज्ञेय अपराध से अथ एक ऐसे अपराध से लिया गया है जिसमें पुलिस बिना अधिपत्र (वारंट) के मुलजिम को गिरफ्तार कर सकती है।

अथ विधियों के संवध में अपराधों का वर्गीकरण जो द प्र स में किया गया है, उस प्रथम अनुसूची के अनुसार मुपु अधि के तहत प्रत्येक अपराध असंज्ञेय और काबिले जमानत है क्योंकि मुपु अधि के तहत प्रत्येक अपराध 3 वर्ष के कारावास से कम कारावास के है।

**निगरानी**

द प्र स की धारा 372 के तहत किसी भी फौजदारी अदालत के निष्णय व आदेश के विरुद्ध अपील नहीं होगी सिवाय इसके कि ऐसा प्रावधान द प्र स या अथ विधि में उल्लिखित हो। चूँकि मुपु अधि में अपीला से संबंधित कोई प्रावधान नहीं है अतः इस अधि के तहत अपराध अपील योग्य नहीं है। अतः ऐसी स्थिति में ऐसे अपराधों में अदालत मातहत के विरुद्ध उच्च न्यायालय या स्थानीय क्षेत्र के सत्र न्यायाधीश के यहाँ सिर्फ निगरानी ही की जा सकती है।

चूकि धारा 397 की व्याख्या मे कायकारी मजिस्ट्रेट को भी अदालत मातहत माना गया है और मुपु अधि के तहत अपराधो की अवीक्षा कायकारी मजिस्ट्रेट करता है इसलिए इसके निणयो या आदेशो के विरुद्ध निगरानी स्था क्षेत्र के सत्र न्यायाधीश या सबधित उच्च न्यायालय के यहाँ होगी । वैसे कायकारी मजिस्ट्रेट जब मुपु अधि के तहत दंड पारित करता है तो वह न्यायिक अधिकारी की भूमिका निभाता है ।

नई द प्र स के तहत किसी भी अन्तरिम आदेश के विरुद्ध निगरानी नही होगी ।

**जुर्माना की "न अदायगी" के लिए कारावास**

स्वय मु पु अधि जुर्माना की "न अदायगी के लिए कारावास सम्बन्धी प्रावधानो पर चुप है ।

द प्र स की धारा 29 व 30 जो ऐसे प्रावधान रखती है, वे सिर्फ न्यायिक अदालतो पर लागू होती नजर आती है । चूकि मु पु अधि के भाग 4 के तहत दण्ड देते समय मजिस्ट्रेट जो काय करता है उस समय वह एक न्यायिक अफसर की तरह काय करता है, ऐसी स्थिति मे दण्ड प्रक्रिया सहिता मे जुर्माना की चूक के लिए जो प्रावधान हैं वे मुपु अधि के भाग 4 पर भी लागू होंगे ।

दण्ड प्र स की धारा 30 के प्रकाश मे मुपु अधि के भाग 4 के तहत मजिस्ट्रेट दण्ड देते समय जुर्माने की चूक के लिए उस सजा की चौथाई सजा तक दे सकता है जो उसे मुपु अधि के तहत मूलत देने का हक है ।

मुपु अधि के तहत अधिक से अधिक सजा 6 माह की है जो एक मजिस्ट्रेट दे सकता है । अत जुर्माना की चूक के लिए मजिस्ट्रेट डेढ माह तक का सजा दे सकता है ।

जुर्माने की चूक के लिए जो सजा दी जायेगी वह अपराध के लिए दी गई मूल सजा से अतिरिक्त हो सकती है ।

**सजान की मियाद (अधधि)**

मुपु अधि अपराधो के सजान के लिए अधधि सम्बन्धी प्रावधाना पर चुप है । ऐसे प्रावधान द प्र स के अध्याय 36 मे मिलते हैं । द प्र स की धारायें 467 व 468 की बनावट कायकारी मजिस्ट्रेट द्वारा अवीक्षा किये जाने वाले प्रकरणों पर भी लागू होती नजर आती है

मुपु अधि के अपराधा के सज्ञान की अधि द प्र स की धारा 468(2) (क) (ख) द्वारा निम्न प्रकार सचालित होगी -

(क) छह माह - यदि अपराध सिफ जुर्माना से दडनीय हो ।

(ख) एक वष - यदि अपराध एक वष से अनधिक कारावास का हो ।

### अभिसधय (राजीनामा) योग्य नहीं

मुपु अधि स्वय अपराधो के राजीनामा सबधी प्रावधानो पर चुप है । ऐसे प्रावधानो के अभाव मे, द प्र म की धारा 320 यहा लागू नहीं होगी बयाकि यह धारा भा द स वे ही कुछ प्रकरणो पर लागू हाती है ।

द प्र स की धारा 320 का खण्ड 9 भी इस प्रकार का आशय रखता है जिसमे कहा गया है - कोई भी अपराध इस धारा द्वारा वर्णित अपराधा के सिवाय अभिसधय योग्य नहीं है ।

### प्रकरणों की वापसी

द प्र स की धारा 321 न्यायालय की सहमति से अभियोजन से प्रकरणो को वापिस लेने की प्रक्रिया के सबध मे बताती है । यदि वापसी चार्ज (आरोप) लगाने के पूव होती है तो अभियुक्त डिस्चाज (आरोप रहित) माना जायेगा यदि वापसी आरोप लगाने के बाद होती है तो अभियुक्त दोषमुक्त (बरी) होने का हकदार है ।

अदालत वापसी की सहमति देने क पूव उस जन-अभियोजक को जो केद्र सरकार द्वारा नियुक्त नहीं किया गया है, को यह निर्देश दे सकती है कि वह निम्न दशाआ से जय अभियोजन की वापसी वाले प्रकरण मे केद्र सरकार की वापसी लेने की स्वीकृति पेश करें ।

(1) जब ऐसा अपराध एक ऐसी विधि के विरुद्ध हो जिसमे केद्र की कायकारी शक्तियाँ विस्तारित होती हो अथवा

(ii) अपराध ऐसे व्यक्ति द्वारा जिसने केद्र सरकार की सेवा मे रहते हुए अपने सरकारी कतव्यो की पालना के नाम पर यह किया है ।

सुभायात्मक प्रपत्र (1)

प्रस्तावित समाचारपत्र के मालिक/प्रकाशक द्वारा शीर्षक  
(निष्कासन) पुष्टि हेतु आवेदन पत्र

भारत के समाचारपत्रों के पंजीयक,  
पश्चिम खड 8 रामकृष्णपुरम,  
नई दिल्ली 110066

जरिये -

जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखड मजिस्ट्रेट

श्रीमान्जी,

मैं	पुत्र श्री	जाति
आयु	निवासी	तहसील
जिला	राज्य	एक समाचारपत्र

प्रकाशित करने का आशय रखता हूँ। इस प्रस्तावित समाचारपत्र के  
सबध मे आवश्यक जानकारी निम्न प्रकार है -

(1) निम्न मे से कोई एक शीपक (बेकल्पिता दिखाते हुए वरीयता  
क्रम में) माप द्वारा पुष्ट होना है -

(1) -	" (ii)	(iii)
(iv)	(v)	-

(2) भाषा

(3) नियतकालिका " "

(4) प्रकाशन-स्थल " "

(क) गाव/बम्बा/महर ---

(ख) तहसील " "

(ग) जिला " " "

(घ) राज्य " " " " "

कृपया उपरोक्त वर्णित शीपको मे किसी एक शीपक की पुष्टि करने का कष्ट करें ताकि मैं मुद्रणयत्र व पुस्तक पजीकरण अधिनियम 1867 की धारा 5 के तहत घोषणा प्रस्तुत कर सकूँ।

स्थान

भवदीय

दिनांक

(प्रस्तावित समाचारपत्र के मालिक/प्रकाशक के हस्ताक्षर)

डाक का पूरा पता

नोट - इस प्रकार का आवेदन-पत्र दा प्रतिया मे प्रस्तावित समाचारपत्र के मालिक/प्रकाशक अथवा इस संबंध म उसके द्वारा प्राधिवृत किसी एजेंट द्वारा स्वयं उपस्थित होकर प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

सुभावात्मक प्रपत्र (2)

मुद्रणयत्र के धारक द्वारा घोषणा  
(देखिये मु पु अधिनियम 1867 की धारा 4(1))

(मुद्रणयत्र) मसस

के मामले म

जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखंड मजिस्ट्रेट

विषय - मुद्रण हेतु मुद्रणयत्र रखने तत्संबंधी घोषणा

मैं " पुत्र श्री जाति  
आयु निवासी तहसील  
जिला राज्य घोषणा करता हूँ  
कि निम्न स्थान पर मैं एक मुद्रणयत्र मुद्रणाय रखता हूँ। (जहाँ मुद्रण-  
यत्र स्थित है, उस स्थान का ठीक ठीक वर्णन दीजिये।)

मुद्रणयत्र की स्थिति

- 1 गाव/कस्बा/शहर
- 2 बाड/गली
- 3 तहसील

4 जिला

5 राज्य

6 घमुक के परिसर मे (स्वय का या किराये का)

(क) पूव दिशा मे

(ख) पश्चिम दिशा मे "

(ग) उत्तर दिशा मे

(घ) दक्षिण दिशा मे

7 डाक का पता (मुद्रणयत्र के नाम सहित)

मैं यह भी घोषणा करता हूँ कि उपरोक्त वर्णित कथन मेरी व्यक्तिगत जानकारी के अधिकतम विश्वास से सही है। इसमे कुछ भी छुपाया नही गया है।

स्थान

मुद्रणयत्र के धारक के हस्ताक्षर

दिनांक

पद

"

सुभावात्मक प्रपत्र (3)

मुद्रणयत्र के धारक द्वारा विवरण

(देखिए मु पु अधिनियम 1867 की धारा 4 (2) क)  
 (मुद्रण यत्र का नाम) मैसस के मामले मे  
 जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखण्ड मजिस्ट्रेट

" "

"

## विषय - मुद्रणयत्र के स्थान में अस्थायी परिवर्तन

श्रीमान्जी,

मैं पुत्र श्री जाति  
 ग्राम्यु- - निवासी तहसील राज्य  
 सूचना देता हूँ कि मैंने मेरे मुद्रणयत्र की स्थिति निम्न प्रकार से अस्थायी रूप से परिवर्तित की है -

परिवर्तित स्थान परिवर्तन के पूर्व का स्थान

- |                            |   |   |
|----------------------------|---|---|
| (1) गाँव/कस्बा/शहर         | - | " |
| (2) बाड/गली                |   |   |
| (3) तहसील                  |   | - |
| (4) जिला                   |   |   |
| (5) राज्य                  |   |   |
| (6) अमुक के परिसर में      | - |   |
| (7) जिसका हद्ददरवा         |   | " |
| (क) पूव दिशा मे            |   |   |
| (ख) पश्चिम दिशा मे         |   |   |
| (ग) उत्तर दिशा मे          |   |   |
| (घ) दक्षिण दिशा मे         |   |   |
| (8) ठाक का पता             |   |   |
| मुद्रणयत्र के नाम सहित     |   | - |
| (9) परिवर्तन की तिथि व समय |   |   |

मैं आपको आश्वस्त करता हूँ कि यह परिवर्तन 60 दिवस से अधिक के लिए नहीं है।

स्थान " (मुद्रणयत्र के धारक के हस्ताक्षर)  
 दिनांक पद

नोट - यह विवरण तत्सवधी परिवर्तन क 24 घण्टो के अन्दर क्षेत्राधिकार रखने वाले मजिस्ट्रेट के यहा दो प्रतियो म भिजवाया जाना है।

**सुभावात्मक प्रपत्र (4)**

(समाचारपत्र का नाम)  
द्वारा विवरण

के मुद्रक/प्रकाशक

(देखिए मु पु अधिनियम 1867 की धारा 5 (3) (क)

जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखंड मजिस्ट्रेट

विषय - मुद्रण का स्थान अथवा/और प्रकाशन स्थल का अस्थायी परिवर्तन

मैं  
आयु  
जिला ..  
हू कि मैंने उपरोक्त नाम के समाचारपत्र का मुद्रण/प्रकाशन-स्थल निम्न प्रकार से अस्थायी रूप से परिवर्तित किया है -

पुत्र श्री  
निवासी  
राज्य

जाति  
तहसील  
आपको सूचना देता

	क		ख	
	परिवर्तित मुद्रण का स्थान	परिवर्तन के पूर्व	परिवर्तित प्रकाशन स्थल	परिवर्तन के पूर्व
1 गाँव/बस्वा/शहर	....	.. ..	.. ..	..
2 बाड/गली	.. ..	....	..	
3 तहसील	..	....	..	
4 जिला	..	.. ..		..
5 राज्य	.. ..	.. ..	..	
6 समुक्त के परिसर में	....	....	.. ..	.. ..
7 जमका हद्ददरवा	..	.....		.....
(क) पूर्व दिशा में	.. ..	..	.. ..	.....
(ख) पश्चिम दिशा में	.....	.. ..	.. ..	.....
(ग) दक्षिण दिशा में	.. ..	.....	.. ..	.....
(घ) उत्तर दिशा में	.. ..	.....	.....	.....



8	डाक वा पता	-	-
9	परिवर्तन की तिथि व समय		

मैं आपको आश्चर्य करता हूँ कि यह परिवर्तन 60 दिनों से अधिक के लिए नहीं है।

स्थान "

"

दिनांक

(मुद्रक या/और प्रकाशक के हस्ताक्षर)

नोट - तत्संबंधी परिवर्तन के 24 घण्टों के अन्दर यह विवरण क्षेत्राधिकार रखने वाले मजिस्ट्रेट के यहाँ भिजवाया जाना है।

### सुझावार्थक प्रपत्र (5)

उन व्यक्तियों द्वारा नई घोषणा जिन्होंने घोषणा हस्ताक्षरित की है तथा जो उसके पश्चात् मुद्रक या प्रकाशक नहीं रहे हैं (देखिए मु पु अधिनियम 1867 की धारा 8)

(समाचारपत्र का नाम)

के मामले में

जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखंड मजिस्ट्रेट

"

"

प्रसंग - धारा 5 के तहत प्रस्तुत व हस्ताक्षरित घोषणा जो दिनांक को प्रमाणित हुई।

श्रीमान्जी,

उपरोक्त वर्णित प्रमाणित घोषणा के प्रसंग में मैं

पुत्र श्री

जाति

आयु

निवासी

"

घोषणा करता हूँ कि मैं (समाचारपत्र का नाम)

नाम)

का मुद्रक या प्रकाशक या मुद्रक और प्रकाशक नहीं रहा।

स्थान

(घोषणाकर्ता के हस्ताक्षर)

दिनांक

"

पद

"

नोट - घोषणाकर्ता मजिस्ट्रेट के सम्मुख स्वयं उपस्थित होकर यह घोषणा दो प्रतियों में प्रस्तुत व हस्ताक्षरित करेगा।

सुभावात्मक प्रपत्र (6)

उस व्यक्ति द्वारा घोषणा जिसका नाम सम्पादक के रूप में  
अशुद्धत प्रकाशित हो गया है

(देखिए मु पु अधि 1867 की धारा 8 क)

(समाचारपत्र का नाम)

के मामले में

जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखंड मजिस्ट्रेट

प्रसंग - (स्थान)

से प्रकाशित (समाचारपत्र का

नाम)

के अंक सख्या

दिनांक

श्रीमान्जी,

मैं

पुत्र श्री

..

जाति

आयु

निवासी

घोषणा करता हूँ कि (समाचारपत्र का नाम) .. के अंक

सख्या दिनांक

में सम्पादक के रूप में मेरा नाम

गलत छप गया है। वास्तविकता यह है कि इस सवधित अंक का मैं  
सम्पादक नहीं था।

कृपया जाच करके तदनुसार तस्दीक करने का कष्ट करें।

स्थान ..

(घोषणाकर्ता के हस्ताक्षर)

दिनांक

डाक का पता

नोट —जब घोषणाकर्ता इस तथ्य से विज्ञ हो कि उसका नाम इस तरह प्रकाशित  
हो गया है तो वह विज्ञता के दो सप्ताह के अंदर मजिस्ट्रेट के सम्मुख  
उपस्थित होकर इस तरह की घोषणा प्रस्तुत कर सकता है।

सुभावात्मक प्रपत्र (7)

कार्यालय - जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखंड मजिस्ट्रेट

क्रमांक

दिनांक

प्रकाशक/मुद्रक/संपादक

विषय -मु पु अधि 1867 की धारा 8 ख के तहत कारण बताओ नोटिस  
सूचित हो कि श्री .. द्वारा प्रस्तुत परिवाद/  
प्रापना-पत्र अथवा\* अथवा पर, मैं यह मत रखता हूँ कि (स्थान का नाम)

से प्रकाशित (समाचारपत्र का नाम)

के संबन्ध में आपके द्वारा दिनांक  
घोषणा जो मेरे या श्रीनहीं निरस्त कर दिया जावे। अतः आपको प्रस्तावित कायवाही के विरुद्ध  
कारण बताने के लिए अवसर दिया जा रहा है कि  
अदर कारण बताएँ कि संबन्धित घोषणा क्यों न निरस्त कर दी जावे।को प्रस्तुत व हस्ताक्षरित  
द्वारा प्रमाणित हुई, की क्यों  
दिवसों के

\*

उस परिवाद/प्रार्थना-पत्र की एक प्रति आपके अवलोकनाय यहाँ  
सलग्न की जा रही है जिसके आधारे पर यह नोटिस दिया जा रहा है।

पदीय मुद्रा

(मजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर)

नोट — जो लागू न हो, उसे काट दें।

सुभावात्मक प्रपत्र (8)

कार्यालय - जिला/मेट्रोपोलिटान/उपखंड मजिस्ट्रेट

श्रेणिका

दिनांक

प्रकाशक/मुद्रक/संपादक,

..

...

विषय मुपु अधि 1867 की धारा 8 ख के तहत सुनवाई का अवसर

मुपु अधि 1867 की धारा 8 ख के तहत एक कारण बताओ  
नोटिस दिनांक - (स्थान का नाम)

से प्रकाशित (समाचारपत्र का नाम)

के संबन्ध में

दिनांक " को आपके द्वारा प्रस्तुत व हस्ताक्षरित तथा मेरे  
द्वारा या श्री " द्वारा प्रमाणित घोषणा की क्यों



उक्त मजिस्ट्रेट साहेब के आदेश दिनांकित के विरुद्ध अपील जिसमें धारा 6 के तहत घोषणा को प्रमाणित करने के लिए मना कर दिया अथवा धारा 8 ख के तहत घोषणा को निरस्त कर दिया ।

श्रीमान्जी,

उपरोक्त वर्णित अपीलाट निम्न अपील पेश करता है -

(1) यह दिनांक को आर एन आई से पुष्ट प्रस्तावित समाचारपत्र का नाम (भाषा) (नियत कालिका) के मुद्रक या प्रकाशक या मुद्रक और प्रकाशक की हैसियत से अपीलाट ने मु पु अधि की धारा 6 के तहत एक घोषणा प्रमाणित कराने हेतु उक्त मजिस्ट्रेट साहेब के सम्मुख धारा 5 के तहत प्रस्तुत व हस्ताक्षरित की ।

अथवा

यह कि राज्यान्तगत (प्रकाशन-स्थल) (जिला) से दिनांक से (समाचारपत्र का नाम, भाषा और नियत-कालिका) मेरे द्वारा मुद्रित/प्रकाशित/संपादित होता आ रहा है । यह समाचारपत्र भारत के समाचारपत्रों के पजीयक से पजीयत सरया से भी पजीयत है ।

(2) यह है कि उक्त मजिस्ट्रेट साहेब ने अपने आदेश क्रमांक दिनांक द्वारा मु पु अधिनियम के प्रावधानों के विरुद्ध गर कानूनी और पक्षपात पूर्ण तरीके से दिनांक को उक्त घोषणा को प्रमाणित करने से मना कर दिया । अतः यह आदेश निरस्त फरमाया जावे ।

अथवा

यह है कि उक्त मजिस्ट्रेट साहेब ने अपने आदेश क्रमांक दिनांक द्वारा अपीलेट के " " (समाचारपत्र का नाम, भाषा और नियतकालिका) को गरकानूनी और पक्षपातपूर्ण तरीके से निरस्त कर दिया ।

उक्त आदेश के विरुद्ध अपीलाट अपील के निम्न आधार प्रस्तुत करता है -

(क) यह है कि उपरोक्त मजिस्ट्रेट साहेब का उपरोक्त आदेश मु पु अधिनियम, 1867 के प्रावधानों के विरुद्ध है अतः यह निरस्त योग्य है ।

(ख) यह है कि मु पु अधि की धारा 8 ख के तहत अपीलान्ट को सुनवाई का कोई अवसर नहीं दिया गया ।

(ग) यह है कि उपरोक्त मजिस्ट्रेट साहेब ने मु पु अधि , 1867 की धारा 5(8) की व्याख्या गलत की है । इस धारा में तो सिर्फ यह प्रावधान है कि समाचारपत्र के सबध में प्रत्येक विद्यमान घोषणा उस मजिस्ट्रेट द्वारा अपखण्डित कर दी जायेगी जिसके सामने उसी समाचारपत्र के सबध में नई घोषणा की और हस्ताक्षरित की जाती है । अपीलान्ट का प्रकरण तो विलकुल इससे भिन्न है । अपीलान्ट ने अपने विद्यमान समाचारपत्र के सबध में कोई नयी घोषणा प्रस्तुत नहीं की अतः उस पर यह धारा कसे लागू हो सकती है अतः उक्त मजिस्ट्रेट साहेब अपीलान्ट की विद्यमान घोषणा को अपखण्डित कर ही नहीं सकते ।

(घ) यह है कि मु पु अधि के तहत सिर्फ धारा 8 ख ही एक ऐसी धारा है जिसके तहत विद्यमान समाचारपत्र की घोषणा इस अधि के प्रावधानों के उल्लंघन किये जाने पर विखण्डित की जा सकती है । 'अपीलान्ट ने इस अधिनियम के किसी भी प्रावधान का उल्लंघन नहीं किया है ।

(ङ) यह है कि इस अधिनियम के तहत समाचारपत्रों की नियमितता के सबध में एक विशिष्ट प्रावधान (धारा) है जो अपीलान्ट के समाचारपत्र पर लागू होती है । इस प्रावधान के तहत " " की अधि में अपीलान्ट द्वारा प्रकाश्य अको में से अक प्रकाशित करने पर ही अपीलान्ट के समाचारपत्र की नियमितता कायम मान लेनी चाहिये थी । लेकिन अपीलान्ट ने तो इस अधि के लिए अपेक्षित अको के बजाय प्रकाशित अक प्रस्तुत किये हैं ।

ऐसी दशा में, उक्त मजिस्ट्रेट साहेब द्वारा उक्त सबधित अधि के लिए अपीलान्ट से " " --अको के प्रकाशन की अपेक्षा करना कानून गलत है ।

अथवा

(च) " " " " " " " "

(छ) " " " " " " " "

(3) यह है कि उक्त मजिस्ट्रेट साहेब का उक्त आदेश दिनांक  
 " अपीलाट को दिनांक को साधारण/  
 पजीकृत डाक से मिला ।

(4) यह है कि अपील प्रस्तुत किये जाने के लिए समयावधि  
 समाप्त होने जा रही थी । अतः यह अपील समयावधि के अंदर ही  
 प्रस्तुत की जा रही है ।

### अथवा

अपील अवधि बाहर इसलिए पेश की जा रही है क्योंकि अपीलाट  
 समय के अंदर अपील को प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त कारणों से  
 निवारित रहा है । (पर्याप्त कारणों को दिखाने विषयक एक शपथ-पत्र  
 श्री द्वारा तस्दीकशुदा यहा सलग्न है ।

(5) यह है कि यदि अपीलाट को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर  
 दिया गया तो हरवक्त बहस आपकी सेवा में प्रस्तुत किये जायेंगे ।

अतः अपीलाट विनम्र निवेदन करता है कि श्रीमान् अपील की  
 सुनवाई करके उक्त मजिस्ट्रेट साहेब के उक्त आदेश प्रमाण  
 दिनांक को निरस्त फरमाने तथा प्रकरण की परिस्थितियों  
 में जो आदेश आप उपयुक्त समझें, वह प्रदान करने का कष्ट करें ।

उस आदेश की तस्दीकशुदा एक प्रति जिसके विरुद्ध यह अपील  
 प्रस्तुत की जा रही है, यहा सलग्न है ।

दिनांक

हस्ताक्षर अपीलाट

स्थान

(नाम, पद और पता)

नोट - ज्ञातव्य है कि मेमोरेडम आफ अपील के लिए यह कोई निर्धारित  
 प्रपत्र नहीं है, यह मात्र सुझावात्मक है अतः अनावश्यक को बाटते हुए तथा  
 आवश्यक को जोड़ते हुए अपने वेस में उठाये जा रहे मुद्दा को ध्यान में रखकर नये  
 सिरे से मेमोरेडम ऑफ अपील वर्गीकृत (मदो के क्रम) रूप में लिखी जानी  
 चाहिए ।

विभिन्न समयावधियों की तालिका

धारा	विवरण	समयावधि	समय जहाँ से अवधि शुरू होती है।	किसको
1	2	3	4	5
<b>मु० पु० अधि० के तहत</b>				
4(2) (ब)	जब मुद्रण यंत्र के स्थान का परिवर्तन 60 दिनों से अधिक हेतु न हो, मुद्रणयंत्रपाल द्वारा विवरण।	24 घण्टे	ज्योंही मुद्रणयंत्र का स्थान बदला जावे।	स्थानीय क्षेत्राधिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट
5(3) (क)	जब समाचारपत्र का प्रकाशन अथवा मुद्रण और प्रकाशन का स्थल 60 दिनों से अधिक हेतु नहीं हो। समाचारपत्र के मुद्रक या प्रकाशक और मुद्रक और प्रकाशक द्वारा विवरण।	24 घण्टे	ज्योंही ऐसा परिवर्तन हो।	स्थानीय क्षेत्राधिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट
5(5) (क)	एक सप्ताह में एक या एक से अधिक बार समाचारपत्र के प्रकाशन का प्रारम्भ होना।	6 सप्ताह	ज्योंही धारा 6 के तहत घोषणा प्रमाणित हो।	स्थानीय क्षेत्राधिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट
5(5) (ख)	किसी दूसरे प्रकार के समाचारपत्र के प्रकाशन का प्रारम्भ होना।	3 मास	ज्योंही धारा 6 के तहत घोषणा प्रमाणित हो।	स्थानीय क्षेत्राधिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट
8क	उस व्यक्ति द्वारा घोषणा जिसका नाम सम्पादक के रूप में अशुद्ध छपा हो और जो यह दावा करे कि वह अशुद्ध छपा का सम्पादक नहीं है।	2 सप्ताह	इस तथ्य से विज्ञ होने से कि उसका इस तरह नाम प्रकाशित हो गया है से	स्थानीय क्षेत्राधिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट



1	2	3	4	5
8ग	धारा 6 के सहित मजिस्ट्रेट द्वारा प्रमाणीकरण के लिए भ्रष्टाचारी आदेश के विरुद्ध अपील धारा 8 का के सहित मजिस्ट्रेट द्वारा घोषणा को निरस्त करने के आदेश के विरुद्ध अपील	60 दिन 60 दिन	जब इस तरह का आदेश पीठित व्यक्ति को सचा रित हो, से	प्रेस एण्ड रजि ट्रेशन अधीनत बोर्ड
9(क)	मुद्रक द्वारा मुद्रित पुस्तक की एक प्रति का नि शुल्क परिदान ।	एक काल्डर मास के अंदर	जब ऐसी पुस्तक मुद्रण यंत्र से सब प्रथम परिदत्त की गयी हो, के पश्चात् वाले दिन से ।	ऐसा स्थान पर और ऐसे पदाधि कारी को जसा कि राज्य सरकार समय 2 पर निर्दिष्ट करें ।
9(ख)	यदि राज्य सरकार मुद्रक से दो से अनधिक भय ऐसी प्रतियाँ परिदत्त करने की अपेक्षा ऐसे दिन से एक काल्डर वय के अंदर करे तो प्रकाशक द्वारा (क) और (ख) में अपेक्षित सारे नवशे मुद्रक को प्रदाय करने	एक काल्डर मास के अंदर युक्तियुक्त समय	जिस दिन कि राज्य सरकार द्वारा ऐसी कोई अधियाचना मुद्रक म की गई है स उरोक्त माह की समाप्ति के पूर्व से	
11(क)	मुद्रक द्वारा मुद्रित समाचारपत्र के प्रत्येक अंक की दो प्रतियों का नि शुल्क परिदान ।	युक्तियुक्त समय	ज्योही यह प्रका शित हो से	
11(ख) के नि 5	प्रकाशक द्वारा मुद्रित समाचारपत्र क प्रत्येक अंक की एक प्रति का निःशुल्क परिदान ।	48 घण्टों के अंदर	ज्योही यह प्रका शित हो से	प्रेस रजिस्ट्रार आफ इण्डिया (धारा० एन० आई०)

1	2	3	4	5
20क (2)	धारा 20क (1) के अन्तर्गत बनाय गये नियम, बनते ही सत्र में चालू सदन के दोनों सदनों में रख जायेंगे।	30 दिन	नियम बनाये जाने के पश्चात् यथा शीघ्र	

के० नि० तहत

6(1)	प्रकाशक द्वारा भेजे जाने वाला वार्षिक विवरण	की प्रत्येक प्रतिलिपि फरवरी माह के प्रथम दिन या उसके पूर्व	प्रत्येक कलेडर वर्ष की प्रथम जनवरी से	प्रेस रजिस्ट्रार ऑफ इंडिया (धार० एन० आई०)
6(2)	प्रकाशक द्वारा समाचार पत्र के छुटकर मूल्य में परिवर्तन की सूचना	48 घण्टों के अन्तर	ऐसे परिवर्तन से	प्रेस रजिस्ट्रार ऑफ इंडिया (धार० एन० आई०)
8	समाचारपत्र से संबंधित विशिष्टियों का प्रकाशक द्वारा प्रत्येक समाचारपत्र में प्रकाशन	की प्रत्येक फरवरी माह की समाप्ति के बाद प्रथम प्रकाशन अंक में	अवधिकालिका के अनुसार परिवर्तनीय	
10	धार० एन० आई० द्वारा रजिस्ट्रेशन प्रमाणपत्र जारी करने।	की प्रत्येक प्रतिलिपि प्रेषण की प्रति प्राप्त करने के पश्चात् यथासंभव	घोषणा की प्रति को प्राप्त करने के समय से	प्रकाशक
11	प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा केन्द्रीय सरकार को वार्षिक प्रतिवेदन पेश करने	की प्रत्येक प्रतिलिपि 30 अप्रैल की या इसके पूर्व	संबंधित धारा में उचित	केन्द्रीय सरकार

1	2	3	4	5
पी० सी (पी ए) धार० के तहत				
3(च) (1)	एक समाचारपत्र अथवा समाचार अभिकरण के सबंध में किसी सामग्री के प्रकाशन या अप्रकाशन से संबंधित परिवाद के प्रकरण में			
	(क) दैनिक समाचार/अभिकरण साप्ताहिक	दो माह के अंदर	इसके प्रकाशन या अप्रकाशन से	भारतीय प्रेस परिषद् के यहाँ
	(ख) दूसरे प्रकरण में	4 माह के अंदर	इसके प्रकाशन या अप्रकाशन से।	"
3(घ) (11)	एक संपादक अथवा अथम जीवी पत्रकार जिसने कोई "यावतायिक प्रति धार किया हो के विरुद्ध परिवाद के प्रकरण में	4 माह के अंदर	अतिचार जिसके विरुद्ध परिवाद किया गया से	,
5	कारण बताओ नाटिस को जारी करना।	यथासभव लेकिन 15 दिन के बाद नहीं	परिवाद की प्राप्ति की तिथि से	समाचारपत्र, समाचार अभिकरण, संपादक या अथम अथम जीवी पत्रकार
6	समाचारपत्र, समाचार अभिकरण, सम्पादक अथवा अथम जीवी पत्रकार द्वारा अपने विरुद्ध किये गये परिवाद का जवाब दावा पेश करना	14 दिनों के भीतर	विनियम 5 के तहत परिवाद और नोटिस की प्रति की तामील की तिथि से	भारतीय प्रेस परिषद् को

विभिन्न दंड लडो की तालिका

(मु पु अधि 1867 के तहत)

दंड धारा	धारा जिसका उल्लंघन है जो	सजा	किसके द्वारा
1	2	3	4
12 धारा 3 के नियम के प्रतिकूल मुद्रण के लिए शास्ति	3 पुस्तको तथा पत्रो मे मुद्रित की जाने वाली विशिष्टियाँ	दो हजार रुपये से अनधिक जुमाने से, या छह माह से अनधिक अवधि के लिए साधारण कारावास से या दोनों से ।	उस क्षेत्र का मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्र मे मुद्रण या प्रकाशन हुआ है ।
13 धारा 4 द्वारा अपेक्षित घोषणा किये बिना मुद्रण यत्र रखने के लिए शास्ति	4 मुद्रणयत्रपाल द्वारा घोषणा करना	"	जिस मजिस्ट्रेट के क्षेत्राधिकार मे ऐसा मुद्रणयत्र स्थित हो ।
14 मिथ्या कथन करने के लिए दंड	इस अधिनियम के तहत प्राधिकार द्वारा	दो हजार रुपये से अनधिक जुमाने से और छह माह से अनधिक अवधि के लिए कारावास	मजिस्ट्रेट जिसके यहाँ ऐसी घोषणा अथवा कथन पेश किया जाना है ।
15 नियमो के अनुबन्धन के बिना समाचारपत्र संपादित, मुद्रित या प्रकाशित करने के लिए शास्ति	एतत्पूर्व विहित नियमो	दो हजार रुपये से अनधिक जुमाने से या छह माह से अनधिक अवधि के लिए कारावास से या दोनों से दंड	मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्राधिकार में ऐसा संपादन, मुद्रण और प्रकाशन होता है ।
		उक्त दंड के साथ साथ समाचार के सबध में की गई घोषणा को भी निरस्त किया जा सकता है ।	

1	2	3	4	5
पी० सी (पी ए) धार० के तहत				
3(घ) (1)	एक समाचारपत्र अथवा समाचार अभिकरण के सवध मे किसी सामग्री के प्रकाशन या अप्रकाशन से संबंधित परिवाद के प्रकरण मे			
	(क) दैनिक समाचार / अभिकरण साप्ताहिक	दो माह के अंदर	इसके प्रकाशन-या अप्रकाशन से	भारतीय प्रेस परिपद के यहाँ
	(ख) दूसरे प्रकरण मे	4 माह के अंदर	इसके प्रकाशन या अप्रकाशन से।	,
3(घ) (II)	एक संपादक अथवा अथम जीवी पत्रकार जिसने कोई व्यावसायिक प्रतिचार किया हो के विरुद्ध परिवाद के प्रकरण मे	4 माह के अंदर	प्रतिचार जिसके विरुद्ध परिवाद किया गया से	
5	कारण बताओ नाटिस को जारी करना।	यथासमय लेकिन 15 दिन के बाद नहीं	परिवाद की प्राप्ति की तिथि से	समाचारपत्र समाचार अभिकरण, संपादक या अथम अथम जीवी पत्रकार
6	समाचारपत्र, समाचार अभिकरण, संपादक अथवा अथम अथम जीवी पत्रकार द्वारा अपने विरुद्ध किये गये परिवाद का जवाब दावा पेश करना	14 दिनों के भीतर	विनियम 5 के तहत परिवाद और नोटिस की प्रति की तामील की तिथि से	भारतीय प्रेस परिपद को

विभिन्न दंड लड़ों की तालिका  
(मु पु अधि 1867 के तहत)

दंड धारा	धारा जिसका उल्लंघन है जो	सजा	किसके द्वारा
1	2	3	4
12 धारा 3 के नियम के प्रतिबन्धन मुद्रण के लिए शास्ति	3 पुस्तक तथा पत्रों में मुद्रित की जाने वाली विधिदृष्टियाँ	दो हजार रुपये से अनधिक जुर्माने से, या छह माह से अनधिक अवधि के लिए साधारण कारावास से या दोनों से।	उस क्षेत्र का मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्र में मुद्रण या प्रकाशन हुआ है।
13 धारा 4 द्वारा अपेक्षित घोषणा किये बिना मुद्रण पत्र रखने के लिए शास्ति	4 मुद्रणपत्रपाल द्वारा घोषणा करना	"	जिम मजिस्ट्रेट के क्षेत्राधिकार में ऐसा मुद्रणपत्र स्थित हो।
14 पिछ्या कथन करने के लिए दंड	इस अधिनियम के तहत प्राधिकार द्वारा	दो हजार रुपये से अनधिक जुर्माने से और छह माह से अनधिक अवधि के लिए कारावास	मजिस्ट्रेट जिसके यहाँ ऐसी घोषणा अप्रवा कथन पेश किया जाता है।
15 नियमों के अनुवर्तन के बिना समाचारपत्र संपादित, मुद्रित या प्रकाशित करने के लिए शास्ति	एतत्पूर्व विहित नियमों	दो हजार रुपये से अनधिक जुर्माने से या छह माह से अनधिक अवधि के लिए कारावास से या दोनों से दंड	मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्राधिकार में ऐसा संपादन मुद्रण और प्रकाशन होता है।
		उक्त दंड के साथ-साथ समाचार के संबंध में भी घोषणा की भी निरस्त किया जा सकता है।	

1	2	3	4
---	---	---	---

15क धारा 8 के अधीन घोषणा करने में असफल रहने के लिए शास्ति

8 उन व्यक्तियों द्वारा नई घोषणा जिन्होंने घोषणा हस्ताक्षरित की है तथा जो उसके पश्चात् मुद्रक या प्रकाशक नहीं रहे।

दा सौ रुपये से अनधिक जुर्माना

मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्राधिकार में ऐसा मुद्रण या प्रकाशन हो रहा है।

16 पुस्तकों का परिदान न करने या मुद्रक को मानचित्रों का प्रदाय न करने के लिए शास्ति

9 मुद्रक द्वारा मुद्रित पुस्तकों की प्रतियाँ सरकार को भूय लिए बिना परिदत्त की जायेगी।

पचास रुपये से अनधिक इतनी राशि जितनी कि मुक्तियुक्त समझी जावे और इतनी राशि के अतिरिक्त इतनी अथवा राशि जो उन प्रतियों का मूल्य अवधारित किया जावे मुद्रक से जन्ती के रूप में सरकार को देय।

मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्राधिकार में पुस्तक प्रकाशित हुई थी।

प्रकाशक द्वारा मुद्रक को मानचित्र आदि का प्रदाय करना।

पचास रुपये से अनधिक इतनी राशि जितनी कि मुक्तियुक्त समझी जावे और इतनी राशि के अतिरिक्त इतनी अथवा राशि जो उन मानचित्रों, मुद्रणों या उत्तरणा का मूल्य अवधारित करें प्रकाशक से जन्ती के रूप में सरकार को देय।

”

1	2	3	4
16क सरकार का समाचारपत्रों की प्रतिर्या मूल्य लिए बिना परिदत्त करने में असफल रहने के लिए शास्ति	11क (मुद्रक द्वारा) भारत में मुद्रित समाचारपत्र की नि शुल्क प्रति सर-कार का प्रदाय करना ।	प्रत्येक चूक के लिए 50 रु से अनधिक जुर्माना ।	वह मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्राधिकार में समाचारपत्र मुद्रित हुआ था ।
16ख प्रेस रजिस्ट्रार को समाचार-पत्रों की प्रतिर्या परिदत्त करने में असफलता के लिए शास्ति ।	11ख (प्रकाशक द्वारा) समाचारपत्रों की प्रतिर्या प्रेस रजिस्ट्रार को नि शुल्क प्रदाय करना ।	प्रत्येक चूक के लिए 50 रु से अनधिक जुर्माना ।	वह मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्राधिकार में समाचारपत्र प्रकाशित हुआ था ।
19ए धारा 19घ या 19ङ इत्यादि के उल्लंघन के लिए शास्ति	19ए(क) समाचारपत्र के प्रकाशक द्वारा वार्षिक विवरण आदि भेजना	रु 500/- से अनधिक जुर्माना	क्षेत्राधिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट
	(ख) समाचारपत्र में धमुक समय धमुक विशिष्टियां प्रकाशित करना ।	"	
	19ङ समाचारपत्र के प्रकाशक द्वारा दी जाने वाली विवरणियां धीरे प्रतिवेदन	रु 500/- से अनधिक जुर्माना	स्पानीय क्षेत्राधिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट



1	2	3	4
15क धारा 8 के अधीन घोषणा करने में असफल रहने के लिए शास्ति	8 उन व्यक्तियों द्वारा नई घोषणा जिन्होंने घोषणा हस्ताक्षरित की है तथा जो उसके पश्चात् मुद्रक या प्रकाशक नहीं रहे।	दा सौ रुपये से अनधिक जुर्माना	मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्राधिकार में ऐसा मुद्रक या प्रकाशक हो रहा है।
16 पुस्तक को परिदान न करने या मुद्रक को मानचित्र का प्रदाय न करने के लिए शास्ति	9 मुद्रक द्वारा मुद्रित पुस्तक की प्रतियाँ सरकार को मूल्य लिए बिना परिदत्त की जायेगी।	पचास रुपये से अनधिक इतनी राशि जितनी कि युक्तियुक्त समझी जावे और इतनी राशि के अतिरिक्त इतनी अथवा राशि जो उन प्रतियों का मूल्य भवधारित किया जावे, मुद्रक से जन्ती के रूप में सरकार को देय।	मजिस्ट्रेट जिसके क्षेत्राधिकार में पुस्तक प्रकाशित हुई थी।
	प्रकाशक द्वारा मुद्रक को मानचित्र आदि का प्रदाय करना।	पचास रुपये से अनधिक इतनी राशि जितनी कि युक्तियुक्त समझी जावे और इतनी राशि के अतिरिक्त इतनी अथवा राशि जो उन मानचित्रों, मुद्रणों या उत्कीरणों का मूल्य भवधारित करें प्रकाशक से जन्ती के रूप में सरकार को देय।	

विभिन्न फीसों की तालिका

धारा/नियम	विवरण	फीस
1	2	3

मु पु अधि के तहत

6 धीर 8

मजिस्ट्रेट आदि के यहाँ निशेषित  
(जमा) मूल प्रमाणित घोषणा  
का निरीक्षण

रु 1/- प्रति

उक्त मूल प्रति की एक प्रति  
प्रत्याप करना ।

रु 2/- प्रति

के नि के तहत

मु पु अधि की धारा 19A के  
तहत प्रस रजिस्ट्रार द्वारा रखे  
हुए रजिस्टर से उद्धरण देना ।

रु 5/- प्रत्येक  
समाचारपत्र के  
संबंध में

1	2	3	4
19ट(ग) समाचार के सबंध में मिथ्या विवरण प्रकाशित करना।	धारा 19घ(ख) के अनुसरण में	₹ 500/- से अधिक जुर्माना	स्थानीय क्षेत्रा धिकार रखने वाला मजिस्ट्रेट
19ठ जानकारी के अनुचित संप्रवर्णन के लिए शास्ति	मुपु अधि या भा दस के तहत अभियोजन करने के प्रयोजनाय मुपु अधि के तहत प्राप्त जानकारी का अनु चित संप्रवर्णन	छह माह का अन धिक कारावास या एक हजार ₹ से अधिक जुर्माना या दानो	
20(ख) इस अधि के तहत बने नियम निर्धारित कर सकते हैं कि इनका उल्लंघन दण्डनीय होगा।	-	₹ 100/- के अधिक जुर्माने से दण्डनीय	

विभिन्न फीसों की तालिका

धारा/नियम	विवरण	फीस
1	2	3

6 और 8	मु पु अधि के तहत मजिस्ट्रेट आदि के यहाँ निक्षेपित (जमा) मूल प्रमाणित घोषणा का निरीक्षण	र 1/- प्रति
--------	---	-------------

उक्त मूल प्रति की एक प्रति प्रदाय करना ।	र 2/- प्रति
---	-------------

9	के नि के तहत मु पु अधि की धारा 19ए के तहत प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा रखे हुए रजिस्टर से उद्धरण देना ।	र 5/- प्रत्येक समाचारपत्र के सबष मं
---	---	---

## मुद्रणयंत्र और रजिस्ट्रीकरण अपीलेंट बोर्ड (व्यवहार और प्रक्रिया)

आदेश 1961

भारत सरकार

नई दिल्ली - 2 अप्रैल 20 1961

## अधिसूचना

(भारत सरकार के गजट दिनांक अप्रैल 29 1961 के भाग 11 धारा 3 (1) पृष्ठ 743 में प्रकाशित)

जी एस आर 625 - मुद्रणयंत्र एवं पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 (1867 का 25वा) की धारा 8 ग की उपधारा 3 द्वारा प्रदत्त शक्तियां की पालना में, उक्त धारा के तहत गठित अपीलेंट बोर्ड अपने व्यवहार और प्रक्रिया को नियमित करने हेतु निम्न आदेश पारित करता है अर्थात् -

1 सक्षिप्त शीर्षक - इस आदेश का नाम मुद्रणयंत्र और रजिस्ट्रीकरण अपीलेंट बोर्ड (व्यवहार और प्रक्रिया) आदेश 1961 है।

2 परिभाषाएँ - इस आदेश में (क) अधिनियम से तात्पर्य मुद्रणयंत्र और रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 (1867 का 25वा) से है।

(ख) बोर्ड से तात्पर्य इस अधिनियम की धारा 8 ग के तहत गठित मुद्रणयंत्र और रजिस्ट्रीकरण अपीलेंट बोर्ड से है।

3 अपील का प्राप्ति - (1) इस अधिनियम की धारा 8 ग के तहत बाढ़ को पेश करने वाली प्रत्येक अपील अपीलेंट के इम्तासर युक्त, एक चापन के रूप में होगी और इस चापन के साथ उस आदेश की एक प्रति सलग्न की जावेगी जिसके विरुद्ध अपील की जाती है।

(2) इस चापन में अपीलेंट का पूरा नाम व पता होगा और उस आदेश जिसके विरुद्ध अपील की जा रही है के विरुद्ध आपत्तियां क धाराओं का वर्णन सक्षिप्त किया जावेगा।

4 अवधि बाहर अपीलों को निरस्त करना - जब अधिनियम की धारा 8 ग की उपधारा - 1 में निर्दिष्ट अवधि में अपील प्रस्तुत नहीं की गयी हो और बोर्ड सतुष्ट है कि अपीलेंट समयवधि में अपील पेश करने में किसी पर्याप्त कारण से निवारित नहीं रहा था तो बोर्ड अपील को निरस्त कर सकता है।

5 रिहाइस मगाने की शक्ति - यदि खंड 4 के तहत अपील निरस्त नहीं की गयी है तो बोर्ड उम मजिस्ट्रेट जिसके आदेश के विरुद्ध अपील पेश की गयी है के यहाँ से प्रकरण के रिहाइस को मगावेगा।

6 मुनवाई की तिथि - (1) प्रकरण के रिवाइस के प्राप्त हो जाने के बाद, बोर्ड अपील की मुनवाई की तिथि तय करेगा।

(2) अपील की मुनवाई की तिथि का एक नोटिस अपीलेट को दिया जावेगा और यह नोटिस अथ्य व्यक्ति जिस बोर्ड उपयुक्त समझे, को भी दिया जा सकता है।

7 अपील की मुनवाई - (1) अपील की मुनवाई की तिथि तय हो जाने पर या अपील की मुनवाई की तिथि प्रागे सरक जान की किसी तिथि पर बोर्ड उन उपस्थित यक्तियों को मुनेगा जिन्हें खंड 6 के उपखंड 2 के तहत नोटिस दिए गए हैं।

(2) उपखंड - 1 में उल्लिखित व्यक्तियों को मुनने और रिवाइस का प्रवलाकिन करन क बाद बोर्ड अपील को विनिश्चित कर सकता है।

8 अपील में दिए गए आवेश की विषय वस्तु - बोर्ड का आदेश लिखित होगा निष्पक्ष के आधारों का सन्निप्त रूप से वर्णित किया जावेगा और उस पर बोर्ड के अध्यक्ष तथा अथ्य सदस्य के हस्ताक्षर होंगे।

9 आदेश का संचारण - बोर्ड के आदेश का संचारण अपीलेट, प्रेस रजिस्ट्रार और मजिस्ट्रेट को किया जावेगा।

10 कानूनी अधिवक्ताओं द्वारा प्रतिनिधित्व - अपीलेट और अथ्य कोई व्यक्ति जिन्हें खंड 6 के उपखंड 2 के तहत नोटिस दिए गए हैं बोर्ड के सम्मुख अपनी ओर से उपसजात होन, बकालत करन और उस पर राय करने हेतु एक कानूनी अधिवक्ता नियुक्त कर सकते हैं।

11 नोटिस की तामील - इस आदेश के तहत बोर्ड के चेयरमन द्वारा या वह ऐसा निर्देश दे ता बोर्ड के किसी अथ्य सदस्य द्वारा संबंधित व्यक्ति को एक नोटिस जारी किया जा सकता है -

(क) उस व्यक्ति या उसकी तरफ से उपस्थित होने वाले कानूनी अधिवक्ता को डिलिवर या टेडर करके या

(ख) रजिस्टर्ड डाक द्वारा

### समाचारपत्रों का पंजीकरण (केन्द्रीय) नियम 1956

(भारत के असाधारण गजट माग II धारा 3 दिनांक 28 जून, 1956 में प्रकाशित)

एस आर ओ 1519 दिनांक 22 जून 1956 - मुद्रणयंत्र और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 (सन् 1867 का 25वा) की धारा 20(क) में प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करत हुए केन्द्र सरकार निम्न नियम बनाती है -

1 सक्षिप्त नाम और प्रारम्भ (1) इन नियमों का नाम समाचारपत्रों का रजिस्ट्रीकरण (केन्द्रीय) नियम 1956 है। (2) ये 1 जुलाई, 1956 से प्रवृत्त होंगे।

2 परिभाषाएँ - जब तक कि सदन से अथवा अपेक्षित न हो

(क) अधिनियम - से मुद्रणपत्र और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 अभिप्रेत है।

(ख) प्रारूप - से इन नियमों की अनुसूची में उल्लिखित प्रारूप अभिप्रेत है।

(ग) प्रकाशक - से समाचारपत्र का प्रकाशक अभिप्रेत है।

3 घोषणा का प्रारूप - अधिनियम की धारा 5 के तहत की गई प्रत्येक घोषणा प्रारूप - I में होगी और घोषणा करने वाला व्यक्ति इसके अन्दर पूर्ण और सत्य विवरण देगा।

4 घोषणा की प्रतियों आदि को सम्बन्धित व्यक्ति और प्रेस रजिस्ट्रार को भेजा जाना।

मजिस्ट्रेट की पदीय मुद्रा से सत्यापित प्रत्येक घोषणा की एक प्रति और किसी घोषणा की प्रमाणीकरण के लिए प्रत्येक अस्वीकारी आदेश की एक प्रति घोषणा को करने और हस्ताक्षरित करने वाले व्यक्ति को और प्रेस रजिस्ट्रार को पजीकृत डाक से मजिस्ट्रेट द्वारा भेजी जावेगी।

परन्तु यदि घोषणा करने और हस्ताक्षरित करने वाला व्यक्ति घोषणा को सत्यापित किये जाने के समय उपसजात है तो उस घोषणा की ऐसी प्रति या अस्वीकारी आदेश की ऐसी प्रति जसा भी मामला हो उसको व्यक्ति से भी जा सकती है।

5 प्रेस रजिस्ट्रार को समाचारपत्र की प्रतियों को प्रवाह करना -

(1) अपने समाचारपत्र के अंक के प्रकाशन के 48 घण्टों के अन्दर समाचारपत्र का प्रत्येक प्रकाशक अंक की एक प्रति डाक या सदेशवाहक के माध्यम से प्रेस रजिस्ट्रार को भेजेगा।

परन्तु जहाँ किसी समाचारपत्र का एक से अधिक सस्करण एक ही घोषणा के तहत प्रकाशित होता है और इन सस्करणों का फुटकर वित्री मूल्य या पृष्ठों की संख्या एक-दूसरे से भिन्न है तो प्रत्येक सस्करण की एक एक प्रति इसी तरीके से प्रेस रजिस्ट्रार को भेजी जावेगी।

(2) उपधारा (1) के उद्देश्यों के लिए -

(क) हिंदी, उर्दू या अंग्रेजी और दो भाषाओं जिनमें से एक भाषा हिंदी, उर्दू या अंग्रेजी है, में प्रकाशित समाचारपत्रों के अंकों की प्रतियां प्रेस रजिस्ट्रार नई दिल्ली का भेजी जायेगी,

(ख) निम्न कालम न० I की क्षेत्रीय भाषाओं में से किसी एक भाषा में प्रकाशित समाचारपत्रों के अंकों की प्रतियां सामने वाले कालम न० II में दिये गये स्थान-पत्र सूचना ब्यूरो, सूचना व प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार के क्षेत्रीय कार्यालय के प्रभारी अधिकारी के यहाँ भेजी जावेगी और वह अधिकारी ऐसे समाचारपत्र को प्रेस रजिस्ट्रार शिमला की ओर से प्राप्त करेगा ।

I	II
पंजाबी	जालंधर
बंगाली, उडिया, आसामी	कलकत्ता
तमिल	मद्रास
तलगु	हैदराबाद
मलयालम	एरनाकुलम
मराठी, गुजराती	अहमदाबाद
कन्नड	बंगलौर
कोकाडी	बम्बई
पुतगाली	बम्बई

(ग) किसी अन्य भाषा में प्रकाशित समाचार की प्रतियां प्रेस रजिस्ट्रार नई दिल्ली का भेजी जावेगी ।

6 वार्षिक विवरण - (1) हर एक प्रकाशक अपने समाचारपत्र या अपने समाचारपत्रों के प्रत्येक के संबंध में प्रेस रजिस्ट्रार को प्रत्येक क्वार्टर वष से संबंधित एक वार्षिक विवरण प्रारूप II में निहित विवरणों का भर कर भेजेगा जो आगे वाले वष के फरवरी माह के अन्तिम दिन तक या उसके पूर्व प्रेस रजिस्ट्रार के यहाँ पहुँच जाना चाहिये ।

नोट - फरवरी 1957 के अंतिम दिन तक या इसके पूर्व पहुँचने वाले वार्षिक विवरण में 1 जुलाई 1956 से 31 दिसम्बर 1956 तक की अवधि ही संबंधित रहेगी ।

(2) जब भी किसी विवरण में दिये गये समाचारपत्र के फुटकर विवरण मूल्य में कोई परिवर्तन हो तो प्रकाशक 48 घंटा के अन्दर ऐसे परिवर्तन की सूचना प्रेस रजिस्ट्रार को भेजगा ।



7 रजिस्टर का रख रखाव - (1) प्रेस रजिस्ट्रार प्रारूप - III में समाचारपत्रों का एक रजिस्टर रखा जायेगा।

(2) रजिस्टर के पृष्ठों के नम्बर एक के बाद एक के क्रम से हागे और किसी समाचारपत्र के सबंध में प्रविष्टियाँ नये पृष्ठ से प्रारम्भ होगी। जब एक समाचारपत्र के सबंध में प्रारूप न० 1 में वर्णित विवरण रजिस्टर में प्रविष्टि कर लिये गये हों तो प्रेस रजिस्ट्रार उस समाचारपत्र को पंजीकरण सत्यापित करेगा। रजिस्टर की प्रारम्भिक प्रविष्टियाँ और बाद के परिवर्तन यदि कोई हों, प्रेस रजिस्ट्रार के हस्ताक्षर से अधिकृत रूप से प्रमाणित की जायगी।

(3) प्रत्येक समाचार के सबंध में प्रेस रजिस्ट्रार रजिस्टर में सारभूत प्रविष्टियाँ दर्ज करायेगा और ऐसी प्रविष्टियाँ दर्ज करने के पूर्व वह समाचारपत्र द्वारा उसको भेजे गये विवरण या सत्यापन कर सकता है, जसा कि वह आवश्यक समझे।

### 8 प्रत्येक समाचारपत्र में विशिष्टियाँ प्रकाशित होना

(1) प्रकाशक अपने समाचारपत्र में प्रत्येक अंक में प्रत्येक प्रति का फुटकर विक्रय मूल्य या जब ऐसा फुटकर विक्रय मूल्य न हो तो 'यह निःशुल्क वितरण के लिये है', एक उपयुक्त स्थान पर प्रकाशित करेगा। प्रकाशक प्रारूप IV में उल्लिखित विशिष्टियों को भी प्रत्येक वर्ष के फरवरी माह के अंतिम दिन के बाद प्रकाश्य प्रथम अंक में प्रकाशित करेगा।

(2) प्रत्येक समाचारपत्र की प्रत्येक प्रति में निम्न प्रारूप में साफ रूप से मुद्रक, प्रकाशक मालिक और सम्पादक का नाम और मुद्रण तथा प्रकाशन का स्थान मुद्रित होगा -

(मालिक का नाम)	की तरफ से
(मुद्रक का नाम)	द्वारा (मुद्रणयंत्र का नाम)
म मुद्रित और (प्रकाशक का नाम)	
द्वारा (प्रकाशन-स्थल का नाम)	से प्रकाशित।
सम्पादक	

नोट — यह प्रारूप प्रत्येक समाचारपत्र की परिस्थितियों के अनुसार समायोजित किया जा सकता है, उदाहरणतया जहाँ मुद्रक, प्रकाशक और मालिक एक ही हों तो इम्प्रिंट लाइन द्वारा मुद्रित प्रकाशित और स्वामित्वाधीन छपी जा सकती है।

फिर भी सम्पादक का नाम प्रत्येक मामले में अलग से दिया जावेगा।

9 रजिस्टर के उद्धरणों की प्रतिमा देना - प्रत्येक समाचारपत्र के सब म रजिस्टर के उद्धरण प्राप्त करने विषयक आवेदन प्रेस रजिस्टार को किये जाने पर, वह पाँच रुपय के शुल्क के भुगतान पर आवेदक को उसके द्वारा विधिवत प्रमाणित उद्धरण रजिस्टर से भेजेगा ।

10 रजिस्ट्रीकरण का प्रमाणपत्र - जहाँ प्रकाशक मजिस्ट्रेट के सम्मुख घोषणा करता है, प्रेस रजिस्टार घोषणा की प्राप्ति प्राप्त करने के पश्चात् यथाशक्य प्रकाशक को प्राप्ति V म रजिस्ट्रीकरण का प्रमाणपत्र जारी करेगा ।

(2) समाचारपत्र के प्रकाशक द्वारा भेजी गयी सूचना की प्राप्ति और नियम 7(2) के तहत उस समाचारपत्र को रजिस्ट्रेशन नम्बर का आवंटन करने पर प्रेस रजिस्टार प्राप्ति V मे प्रकाशक को रजिस्ट्रेशन का प्रमाणपत्र जारी कर सकता है ।

(3) जहाँ उपनियम (1) या उपनियम (2) के तहत रजिस्ट्रेशन के प्रमाणपत्र म वर्णित विविधियों मे कोई परिवर्तन होता है तो प्रकाशक यथासभव प्रेस रजिस्टार को ऐसे परिवर्तन की सूचना देगा और ऐसे प्रमाणपत्र को वापिस भी करेगा, ऐसी सूचना और प्रमाण पत्र की प्राप्ति पर प्रेस रजिस्टार रजिस्टर मे सुसंगत प्रविष्टियों को दज करवायेगा और परिवर्तना के साथ प्रमाणपत्र को पुन जारी करेगा ।

(4) वह घोषणा जिसके तहत समाचारपत्र प्रकाशित किया जाता है शून्य हो जाती है या प्रेस रजिस्टार द्वारा रखे गये रजिस्टर मे से समाचारपत्र हटा लिया जाता है त्योंही रजिस्ट्रेशन का प्रमाणपत्र प्रभावहीन हो जायेगा ।

11 वार्षिक प्रतिवेदन - प्रेस रजिस्टार प्रत्येक वर्ष की 30 अप्रैल या इसके पूर्व भारत म प्रेस से गनधित सूचना और साक्ष्यकी विशयकर समाचारपत्रों की विभिन्न श्रेणियों मे प्रसार की प्रवृत्ति और एक स अधिक समाचारपत्र के सामान्य स्वामित्व के निदेशन म प्रवृत्ति स युक्त एक वार्षिक प्रतिवेदन के द्र सरकार को प्रस्तुत करेगा

परन्तु 30 अप्रैल 1957 या इसके पूर्व पेश किया जाने वाला वार्षिक प्रतिवेदन 1 जुलाई 1956 म 31 न्मिम्बर 1956 तक की अवधि ही से संबंधित रह सकता है ।

शास्ति - इन नियमों के किसी प्रावधाना का उल्लंघन अथ दंड से दंडनीय होगा जो कि एक सौ रुपया तक की सीमा तक हो सकता है ।

7 रजिस्टर का रख रखाव - (1) प्रेस रजिस्ट्रार प्रारूप - III में समाचारपत्रों का एक रजिस्टर रखगा।

(2) रजिस्टर के पृष्ठों के नम्बर एक के बाद एक के क्रम से हाथे और किसी समाचारपत्र के सबंध में प्रविष्टियाँ नये पृष्ठ से प्रारम्भ होंगी। जब एक समाचारपत्र के सबंध में प्रारूप न० 1 में वर्णित विवरण रजिस्टर में प्रविष्टि कर लिये गये हों तो प्रेस रजिस्ट्रार उस समाचारपत्र को पंजीकरण सत्यापन करेगा। रजिस्टर की प्रारम्भिक प्रविष्टियाँ और बाद के परिवर्तन यदि कोई हों प्रेस रजिस्ट्रार के हस्ताक्षरों से अधिकृत रूप से प्रमाणित की जायगी।

(3) प्रत्येक समाचार के सबंध में प्रेस रजिस्ट्रार रजिस्टर में सारभूत प्रविष्टियाँ दर्ज करायेगा और ऐसी प्रविष्टियाँ दर्ज करने के पूर्व वह समाचारपत्र द्वारा उसको भेजे गये विवरण का सत्यापन कर सकता है जसा कि वह आवश्यक समझे।

### 8 प्रत्येक समाचारपत्र में विशिष्टियाँ प्रकाशित होना

(1) प्रकाशक अपने समाचारपत्र के प्रत्येक अंक में प्रत्येक प्रति का फुटकर विहाय मूल्य या जब ऐसा फुटकर विक्रय मूल्य न हो तो 'यह निःशुल्क वितरण के लिये है', एक उपयुक्त स्थान पर प्रकाशित करेगा। प्रकाशक प्रारूप IV में उल्लिखित विशिष्टियों को भी प्रत्येक अंक के फरवरी माह के अन्तिम दिन के बाद प्रकाशक प्रथम अंक में प्रकाशित करेगा।

(2) प्रत्येक समाचारपत्र की प्रत्येक प्रति में निम्न प्रारूप में साफ रूप से मुद्रक, प्रकाशक मालिक और सम्पादक का नाम और मुद्रण तथा प्रकाशन का स्थान मुद्रित होगा -

(मालिक का नाम)	की तरफ से
(मुद्रक का नाम)	द्वारा (मुद्रणयत्र का नाम)
	में मुद्रित और (प्रकाशक का नाम)
द्वारा (प्रकाशन-स्थल का नाम)	से प्रकाशित।
सम्पादक	

नोट — यह प्रारूप प्रत्येक समाचारपत्र की परिस्थितियों के अनुसार संशोधित किया जा सकता है उदाहरणतया जहाँ मुद्रक, प्रकाशक और मालिक एक ही हों तो इम्प्रिंट लाइन द्वारा मुद्रित, प्रकाशित और स्वामित्वाधीन छापी जा सकती है।

9 रजिस्टर के उद्धरणों की प्रतिया देना - प्रत्येक समाचारपत्र के सबंध में रजिस्टर के उद्धरण प्राप्त करने विषयक आवेदन प्रेस रजिस्टार को किये जाने पर, वह पांच रुपये के शुल्क के मुगतान पर आवेदक का उसके द्वारा विधिवत प्रमाणित उद्धरण रजिस्टर से भेजेगा।

10 रजिस्ट्रीकरण का प्रमाणपत्र - जहाँ प्रकाशक मजिस्ट्रेट के सम्मुख घापरणा करता है, प्रेस रजिस्टार घापरणा की प्राप्ति प्राप्त करने के पश्चात् यथाशक्य प्रकाशक को प्रारूप V में रजिस्ट्रीकरण का प्रमाणपत्र जारी करेगा।

(2) समाचारपत्र के प्रकाशक द्वारा भेजी गयी सूचना की प्राप्ति और नियम 7(2) के तहत उस समाचारपत्र को रजिस्ट्रेशन नम्बर का भावटन करने पर, प्रेस रजिस्टार प्रारूप V में प्रकाशक को रजिस्ट्रेशन का प्रमाणपत्र जारी कर सकता है।

(3) जहां उपनियम (1) या उपनियम (2) के तहत रजिस्ट्रेशन के प्रमाणपत्र में बर्णित विधिद्वियों में कोई परिवर्तन होता है तो प्रकाशक यथासम्भव प्रेस रजिस्टार को ऐसे परिवर्तन की सूचना देगा और ऐसे प्रमाणपत्र को वापिस भी करेगा, ऐसी सूचना और प्रमाण-पत्र की प्राप्ति पर प्रेस रजिस्टार रजिस्टर में सुसंगत प्रविष्टियों को दर्ज करवायेगा और परिवर्तनों के साथ प्रमाणपत्र को पुनः जारी करेगा।

(4) वह घोषणा जिसके तहत समाचारपत्र प्रकाशित किया जाता है शून्य हो जाती है या प्रेस रजिस्टार द्वारा रखे गये रजिस्टर में से समाचारपत्र हटा लिया जाता है त्योंही रजिस्ट्रेशन का प्रमाणपत्र प्रभावहीन हो जायेगा।

11 वार्षिक प्रतिवेदन - प्रेस रजिस्टार प्रत्येक वर्ष की 30 अप्रैल या इसके पूर्व भारत में प्रेस से सम्बन्धित सूचना और साक्ष्यों विषयक समाचारपत्रों की विभिन्न श्रेणियों में प्रसार की प्रवृत्ति और एक से अधिक समाचारपत्र के सामान्य स्वामित्व के निदेशन में प्रवृत्ति से युक्त एक वार्षिक प्रतिवेदन केन्द्र सरकार को प्रस्तुत करेगा

परन्तु 30 अप्रैल 1957 या इसके पूर्व देश छोड़ा जाने वाला वार्षिक प्रतिवेदन 1 जुलाई 1956 ग 31 नवम्बर 1956 तक की अवधि ही से सम्बन्धित रह सकता है।

शास्ति - इन नियमों के किसी प्रावधानों का उल्लंघन अथवा दंड से दंडनीय होगा या कि एक से अधिक वर्षों की भीमा तक हो सकता है।

## अनुसूची घोषणा का फार्म

### फार्म I

(देखिए नियम 3)

मैं घोषणा करता हूँ कि मैं

(समाचारपत्र का नाम) जा (स्थान) से मुद्रित\* और

(स्थान) से प्रकाशित या (स्थान)

स मुद्रित\* और प्रकाशित किया जाना है का मुद्रक\* या प्रकाशक\* या मुद्रक\* और प्रकाशक हूँ और उपरोक्त वर्णित समाचारपत्र के सबंध में यहाँ निम्न दिये गये शर्तों पर मरी अधिकतम जानकारी व विश्वास के अनुसार सत्य है —

(1) समाचारपत्र का नाम

(2) मापा (ए) जिसमें समाचारपत्र प्रकाशित किया जाता/जाना है ।

(3) प्रकाशन का नियतकाल

(क) दैनिक सप्ताह में तीन बार दो बार, साप्ताहिक पत्रिका या अन्य प्रकार का

(ख) दैनिक पत्र के सबंध में कृपया लिखें कि प्रभात सस्करण या साय सस्करण है

(ग) दैनिक पत्र से भिन्न अन्य पत्रों के सबंध में कृपया इनके प्रकाशन के दिन/तारीख लिखें जिस पर इस प्रकाशित किया जाता/जाना है

(4) प्रत्येक प्रति की फुटकर प्रति

(क) यदि समाचारपत्र मुफ्त वितरण के लिए हो तो कृपया लिखें कि यह मुफ्त वितरण के लिए है

(ख) यदि इसका केवल वार्षिक चंदा है और फुटकर विक्रय मूल्य न लिया जाता हो तो वार्षिक चंदा लिखें

(5) प्रकाशक का नाम

राष्ट्रीयता

पता

- (6) प्रकाशन का स्थान  
(कृपया डाक का पूरा पता दें)
- (7) मुद्रक का नाम  
राष्ट्रीयता  
पता
- (8) मुद्रणालय/मुद्रणालया का/के नाम जहाँ वास्तव में मुद्रण का काम होता है  
और उस स्थान का सही विवरण जहाँ मुद्रणालय स्थित है
- (9) सम्पादक का नाम  
राष्ट्रीयता  
पता
- (10) स्वामी का/के नाम  
(क) कृपया उस/उन व्यक्तियाँ या फर्म, मयुक्त स्टाफ कम्पनी, यास, सहकारी समिति या संस्था के व्यौरा को लिखें जो समाचारपत्र का स्वामित्व रखता/रखते हैं  
(ख) कृपया लिखें क्या स्वामी अथवा कोई समाचारपत्र का स्वामित्व रखता है, यदि ऐसा हो तो, इसका नाम नियतकालीनता, भाषा और प्रकाशन का स्थान
- (11) कृपया लिखें क्या घोषणा-पत्र निम्न से संबंधित हैं—  
(क) एक नवीन समाचारपत्र या  
(ख) एक मौजूदा समाचारपत्र  
(ग) यदि घोषणा मद न० (ख) में आती हो तो ताजा घोषणा प्रस्तुत करने का कारण

दिनांक

हस्ताक्षर

नाम (मोटे अक्षरों में)

पद

नाट — मुद्रक और प्रकाशक द्वारा अलग-अलग घोषणा प्रस्तुत करनी चाहिए जब तक कि मुद्रक और प्रकाशक एक ही व्यक्ति न हों।

\*जा साधू न हों, उस नाट दें।

## फ़ॉर्म II

## (देखिए नियम 6(1))

नामक समाचारपत्र का 31 दिसम्बर, 19

तक की प्रवृत्ति का वार्षिक विवरण

क्रम सं	मद	•यूरो की तकसील	वर्ष के अंतगत होने वाले परिवर्तनों के •यूरे यदि कोई हो, और उन परिवर्तनों की तारीखें	अभ्युक्तिया
1	2	3	4	5

## 'क' सामान्य

- 1 किस घोषणा के अधीन समाचारपत्र प्रकाशित होता है।
- 2 समाचारपत्र की पंजीयन संख्या।
- 3 समाचारपत्र का नाम।
- 4 भाषा (ए) जिसमें/जिनमें समाचारपत्र प्रकाशित किया जाता है।
- 5 प्रकाशन का नियतकाल  
(क) दैनिक, सप्ताह में तीन बार  
दो बार साप्ताहिक पाक्षिक या अन्य प्रकार का।  
(ख) दैनिक पत्र के संबंध में कृपया  
लिखें कि प्रातः संस्करण या साध्य  
संस्करण है।

5

4

3

2

(ग) दत्तिया पत्र से मिले धन्य पत्रों के मध्य में दृष्टया उनसे प्रकाशन के निम्न धारियों विषयों ।

6 प्रकाशक का

(क) नाम

(ग) (i) क्या भारत का नागरिक है?

(ii) यदि विदेशी है तो मूल देश

(घ) पता (भारत में)

7 प्रकाशक का स्थान (दृष्टया डाक का पूरा पता दें) ।

8 मुद्रा या

(क) नाम

(घ) (i) क्या भारत का नागरिक है?

(ii) यदि विदेशी है तो मूल देश

(ग) पता (भारत में)

9 मुद्रापालक/मुद्रापालको का/का नाम जहाँ मुद्रा या काम होता है और उस स्थान का सही विवरण जहाँ मुद्रा तैयार किया है ।



1	2	3	4	5
10	महापद का (क) नाम (ख) (1) क्या भारत का नागरिक है? (2) यदि विदेशी है तो पूरा देश (ग) पता (भारत में)			
11	(क) समाचारपत्र के पृष्ठा का मात्रा संदीभोटरो म और उनका विकरण जस देसी ब्राउन झादि । (ख) दलिक, गप्ताह म ले बार, सप्ताह मे तीन बार प्रकाशित होने वाले पत्र और साप्ताहिक पत्रो न पृष्ठा की प्रति सप्ताह प्रोस्त सण्या । (ग) प्रय समाचारपत्रो के पृष्ठा की प्रति प्रक प्रोमन गण्या ।			
12	वय म प्रकाशन दिलों की गण्या ।			

जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर	जोड़
-------	-------	-------	--------	----	-----	-------	-------	---------	---------	--------	---------	------

मैं, \_\_\_\_\_ एतद्वारा घोषित करता हूँ कि ऊपर दिए हुए न्योरे मरी अधिकांश जानकारी और विवरण के अनुसार सत्य है ।  
(स्पष्ट धारों में नाम)

'त' मयत

13 (क) मुद्रित प्रतियों की प्रति प्रकाशन  
नियम प्रोगत मस्या ।

(ग) यदि समाचारपत्र प्रतिदिन  
प्रकाशित न होता हो तो इपया लिले  
दि महीना क बितने दिलो म समाचार  
पत्र प्रकाशित हुया घोर हर प्रकाशन  
नियम को बितनी प्रतिया छपी ।

14 कपी जो वाली प्रतियों की प्रति  
प्रकाशन दिवस प्रोगत मस्या ।

15 मुपन बितरित की जाने वाली प्रतियों  
की प्रति प्रकाशन दिवस प्रोगत मस्या  
(इसमें मास, वाउचर विनिमय,  
बोनस, नमूने घोर कायलिय की  
प्रतिया शामिल हैं ।

16 प्रत्येक प्रति की पुटकर कीमत

(क) यदि समाचारपत्र मुपत बितरण के लिए हो तो इपया लिखे कि यह "मुपन बितरण के लिए" है ।  
(ग) यदि इसका केवल वार्षिक चंग हो, घोर फुटकर मूल्य न लिया जाता हो तो वार्षिक चया लिखें ।

\* अद्यपयिक

२०२०२०

२०२०२०

२०२०२०

२०२०२०

२०२०

२०२०

\* अद्यपयिक

२०२०

२०२०

२०२०

२०२०

२०२०

२०२०

" का प्रकाशक मैं

म दिये गये व्योरे मेरी अधिकतम सूचना जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य और सही हूँ ।  
एतद्वारा घोषित करता हूँ कि इस विवरण

तारीख

प्रकाशक के हस्ताक्षर

सन्दी लेखापाल का प्रमाण पत्र ।

हमने के तक की बहियों और हिसाब किताब की जाच कर ली है तथा अपेक्षित सभी जानकारी और स्पष्टीकरण प्राप्त कर लिये हैं । हमारी राय में ऊपर दिया हुआ, सलगन विवरण हमारी अधिकतम जानकारी और विश्वास तथा हमें दिये गए स्पष्टीकरण और लेखा बहियों में दिखाये गये व्योरे के अनुसार, प्रकाशक की बहियों का तक वा सच्चा और सही विवरण प्रकट करता है ।

तारीख

हस्ताक्षर

(बड़े अक्षरों में नाम)

सन्दी लेखापाल

पंजीयन संख्या

\*अध्यापिक श्रोमत इस अधि क दौरान प्रकाशन दिवसों की कुल संख्या व आधार पर लगाना चाहिए ।

समाचारपत्र के मवध में जहाँ प्रति प्रकाशन दिवस मुद्रित प्रतियों की श्रोत संख्या 2 000 से अधिक न हो सन्दी लेखापाल का ऊपर निर्धारित रूप में प्रमाण पत्र आवश्यक नहीं । शिवा संस्थाएँ दात व समितियाँ या संस्थाएँ जो सामान्यतया बित्री के लिए नहीं अर्पित अपने सदस्यों के प्रयोग के लिए प्रतियाँ प्रकाशित करती हो उनके लिए भी इस प्रकार का प्रमाण-पत्र आवश्यक नहीं ।

नाम	वत्स	पूजी के शेषर का मूल्य	यथा इसका धन शेषरवास्तो स विवाह रक्त सक्षय, या अन्य किसी प्रकार से नोई रिरता है।
1	2	3	4

'ग' स्थागिध

17 (क) मयाधारण के स्थागियों के नाम और वे (उही ध्यतियों के ध्योरे देने की धारस्यवता है जो मयाधारण के ध्यागिक हों और पूजी के एक प्रतिगत से धधिक के साभुगर या शेषरवास्त हों।)

(ग) इसका गह नी लिखें -

(i) कि यदि इसकी कोई गमं है तो वह पूजीगत है या ध्यधीधृत है? और उन मागणरो के ध्योरे त्रिनाया पूजी में एक प्रतिगत से धधिक का हिसा है।

(ii) यदि इसकी गमुक्त स्टॉक कम्पनी है तो क्या वह रजिन्क लि० कम्पनी है या प्राइवेट लि० कम्पनी। कम्पनी के वेयरहोन, निभेन्स, शेड के सदस्यों और उन शेषरवास्तियों के नाम और वे त्रिनाया पूजी में एक प्रतिगत से धधिक है।

तारीख

प्रकाशक के हस्ताक्षर

सनदी लेखापाल का प्रमाण पत्र ।

हमने के तक की बहिया और हिसाब किताब की जाच बर ली है तथा अपेक्षित सभी जानकारी और स्पष्टीकरण प्राप्त कर लिय हैं । हमारी राय में ऊपर दिया हुआ/सलग्न विवरण, हमारी अधिकतम जानकारी और विश्वास तथा हमें दिये गए स्पष्टीकरण और लेखा बहियों में दिखाये गये ब्योरा के अनुसार, प्रकाशक को बित्रिया का तक का सच्चा और सही विश्लेषण प्रकट करता है ।

हस्ताक्षर

(बड़े अक्षरों में नाम)

सनदी लेखापाल

पजीयन सरया

तारीख

\*अध्यापिका प्रोसत इस अध्यापि के दौरान प्रकाशन दिवसों की कुल सरया के आधार पर लगाना चाहिए ।

समाचारपत्र के संबंध में जहाँ प्रति प्रकाशन दिवस मुद्रित प्रतियों की प्रोसत सरया 2 000 से अधिक न हो सनदी लेखापाल का ऊपर निर्धारित रूप में प्रमाण पत्र आवश्यक नहीं । शिक्षा सरयाएँ दातय समितियाँ या सरयाएँ जो सामान्यतया बित्री के लिए नहीं अपितु अपने सदस्यों के प्रयोग के लिए प्रतियाँ प्रकाशित करती हो उनके लिए भी इस प्रकार का प्रमाण पत्र आवश्यक नहीं ।

नाम	वत्सा	पूजी के योग्य का मूल्य	क्या इतना प य शय्यकारियों से निवाह रक्त संबंध, या अन्य किमी प्रकार से कोई रिश्ता है।
1	2	3	4

गण स्वामित्व

17 (क) गणधारण के स्वामियों के नाम और पते (उन्हीं व्यक्तियों के ज्योरे देने की आवश्यकता है जो गणधारण से मायिक हों और पूजी के एक प्रतिफल से अधिक के साझेदार या शेयरदार हों।)

(ग) कृपया यह भी लिखें -

(1) कि यदि स्वामी कोई पत्रों है तो वह पत्रों का है या अपजीकृत है? और उन गणधारणों के ज्योरे जिनका पूजी में एक प्रतिफल ग अधिनियम का हिसा दे।

(11) यदि स्वामी मरुक्त स्टॉक सम्पत्ती है तो क्या वह पब्लिक ट्रिंठ सम्पत्ती है या प्राइवेट ट्रिंठ सम्पत्ती। सम्पत्ती के वेयरतैम निदेशक, बोर्ड के सदस्यों और उन शरतकारियों के नाम और पते जिनका पूजी में एक प्रतिफल के मायिक हिस्सा है।

(111) यदि स्वामी सपुक्त स्टाक कपनी है और उसका प्रबंध प्रबंध एजेंट करता है तो लिखें कि क्या प्रबंध एजेंट कोई व्यक्ति फर्म या सपुक्त स्टाक कम्पनी है और नाग (क) या भाग (ख) के मद (1) और (11) में, जसी भी स्थिति हो उल्लिखित ब्यौरे दें ।

(112) यदि स्वामी कोई यास सह जारी समिति या सस्था है तो यास कायकारिणी के चेयरमेन और सदस्यों के नाम और पते ।

(113) किसी धन्य प्रकार का स्वामित्व हो तो उसका नाम एवं प्रत्येक स्वामी क शेयर का ब्यौरा ।

नोट - (1) समाचारपत्र का प्रभावी स्वामित्व प्रकट करने के लिये सनी सगत सूचना देनी चाहिये ।

(11) जो मदें आवश्यक न हों, उन्हें काट दें ।

18 नात बाडधारी म्दुगपत्रधारी, बधक ग्दही और अय प्रतिभूतिधारी जो बांभें, बधको और प्रतिभूतियो की कुल रकम या एक प्रतिशत से अधिक या स्वामी या सम्भेदार हो ।

नोट — उस मामले मे जहाँ स्टॉकधारी या प्रतिभूतिधारी कम्पनी की बहियो मे यासी या किसी अय यासवत् हैसियत से काम करता है तो उस ब्यक्ति या निगम का नाम लिखना चाहिए जिसकी ओर से वह यासी का काम कर रहा है ।

मे एतदद्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गये ब्योरे सत्य ह ।  
(बड़े अक्षरों मे नाम)

प्रकाशक के हस्ताक्षर

तारीख



## काम III

[ देखिए नियम 7 (1) ]

## समाचारपत्र का रजिस्टर

- 1 घोषणा नम्बर जिसके तहत समाचारपत्र प्रकाशित किया जाता है
- 2 समाचारपत्र का रजिस्ट्रेशन नम्बर
- 3 समाचारपत्र का नाम
- 4 भाषा/एँ जिसमें/जिनमें समाचारपत्र प्रकाशित होता है
- 5 (क) समाचारपत्र के प्रकाशन की नियतकालिका  
(ख) प्रकाशन के दिन (एँ) तिथि (ऐ) (प्रकाशन रोजाना प्रकाशित न होने के मामले में)
- 6 सम्पादक का नाम  
राष्ट्रीयता  
पता
- 7 मुद्रक का नाम  
राष्ट्रीयता  
पता
- 8 प्रकाशक का नाम—  
राष्ट्रीयता  
पता
- 9 (क) परिसर का ठीक-ठाक वर्णन जहाँ मुद्रण होता है  
(ख) प्रकाशन का स्थान
- 10 (क) प्रति सप्ताह पृष्ठों की औसत संख्या, दैनिक, द्विसाप्ताहिक त्रिसाप्ताहिक और साप्ताहिक समाचारपत्रों के मामले में  
(ख) अथ समाचारपत्रों के संघ में पृष्ठों की औसत संख्या
- 11 साल में प्रकाशन दिवसों की कुल संख्या

12 (क) मुद्रित प्रतियों की औसत मर्यादा

I

II

जनवरी से जून

जुलाई से दिसम्बर

(ख) विक्रीत प्रतियों की औसत संख्या

(ग) निशुल्क बाटी गयी प्रतियों की औसत संख्या

13 प्रत्येक प्रति का फुटकर विक्रय मूल्य

14 नाम व पता उन व्यक्तियों का जो समाचारपत्र का स्वामित्व रखते हैं और उनका जो कुल पूंजी के एक प्रश से अधिक हिस्से के अशुद्धारी या साभेदार है

#### फार्म IV

(देखिए नियम 8)

(समाचारपत्र का नाम) के संबन्ध में स्वामित्व व विवरण और अथ विशिष्टियां जिनका प्रकाशन प्रत्येक वर्ष फरवरी माह के अंतिम दिन के पश्चात् प्रकाश्य प्रथम अंक में प्रकाशित होना है।

1 प्रकाशन का स्थान

2 प्रकाशन की नियतकालिका

3 मुद्रक का नाम

राष्ट्रीयता

पता

4 प्रकाशक का नाम

राष्ट्रीयता

पता

5 सम्पादक का नाम

राष्ट्रीयता

पता

- 6 नाम व पता उन व्यक्तियों का जो समाचारपत्र का स्वामित्व रखते हैं और उनका जा कुल पूजा के एक प्र श मे अधिक हिस्से के अशधारी या साभेदार हैं

मैं एतद्वारा घोषणा करता हूँ कि उपरोक्त दी गई विधिष्टिया मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास से सत्य है ।

दिनांक

प्रकाशक के हस्ताक्षर

### फाम V

(देखिए नियम 10)

### रजिस्ट्रेशन का प्रमाण-पत्र

कार्यालय -- भारत के समाचारपत्रों के पजीयक

यह प्रमाणित किया जाता है कि (समाचारपत्र का नाम)

मुद्रणपत्र और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण

अधिनियम 1867 के तहत रजिस्ट्रीकृत किया जा चुका है ।

- ( 1 ) समाचारपत्र का नाम
- ( 2 ) समाचारपत्र का रजिस्ट्रेशन नम्बर
- ( 3 ) भाषा (ए) जिसमे/जिनमे यह प्रकाशित होता है
- ( 4 ) प्रकाशन की नियतकालिका और दिन (ए) तिथिया जिन पर यह प्रकाशित किया जाता है
- ( 5 ) समाचारपत्र का फुटकर विक्रय मूल्य
- ( 6 ) प्रकाशक का नाम  
राष्ट्रीयता  
पता

( 7 ) मुद्रक का नाम  
राष्ट्रीयता  
पता

( 8 ) संपादक का नाम  
राष्ट्रीयता  
पता

( 9 ) उस परिसर का ठीक-ठाक वर्णन जहा मुद्रण होता है

(10) प्रकाशन का स्थान

दिनांक - भारत के समाचारपत्रों के पजीयक

प्रपत्र ए आर० - 4

### दैनिक समाचारपत्र के सम्बन्ध में विवरण

प्रकाशक द्वारा भरा जाना और हस्ताक्षर करके भारत के समाचार-पत्रों के पजीयक पश्चिम खड - 8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली 110066 का प्रतिवप 28 फरवरी तक वापिस करना ।

### टिप्पणी

\*वृषया सिर्फ समाचारपत्र मे काम करने वाले व्यक्तियों की सख्या लिखें तथा अलग से उनकी सख्या लिखें जो दूसरे समाचारपत्रों के साथ सम्मिलित रूप से काम करते हैं ।

जहाँ किसी दैनिक समाचारपत्र के एक से अधिक समाचारपत्र अलग-अलग भाषाओं मे थे, उन प्रत्येक दैनिक के आकड़े भाषावार आधार पर दें ।

- I (1) नाम (बड़े अक्षरों मे)
- (2) भाषा (ए)
- (3) प्रात समाचारपत्र है या साध्य
- (4) प्रकाशन का स्थान
- (5) बीमत
- (6) प्रकाशक का नाम

- II (1) क्या समाचारपत्र का अपना मुद्रणालय है ?
- (2) समाचारपत्र का मुद्रण करने के लिये कौन सी किस्म की मशीनरी का प्रयोग किया जाता है। (रोटरी/मिलेण्डर/ट्रिडिल/ऑफसेट/अथ दूसरी किस्म)
- (3) क्या समाचारपत्र की अपनी कम्पोजिंग व्यवस्था है या यह बाहर किया जाता है। अपनी खुद की व्यवस्था के सबंध में कृपया लिखें कि क्या यह मोनोटाइप/लाइनोटाइप/इंटरटाइप/कलीग्राफी/हाथ द्वारा किया जाता है।
- (4) ब्लाक सैट बनाने के लिए क्या पत्र का अपना ससाधन विभाग है ?

### III समाचार सचयन

- 1 (क) क्या समाचारपत्र, समाचार एजेंसी/ भारतीय विदेशी एजेंसियों का ग्राहक है ? यदि ऐसा, तो कृपया भारतीय और विदेशी समाचार एजेंसियों के नाम तथा पूरा डाक पता पता अलग अलग दें (अगर जगह कम पड़ती है तो कृपया अलग शीट का प्रयोग करें)
- 2 (क) क्या समाचारपत्र केवल अपने भारत में विदेश में कुल लिये नियमित रूप से अपने विशेष सवाददाता/सवाददाता गए रखता है। (कृपया नियुक्त किये गये व्यक्तियों का स्थान और सख्या का विवरण दें।
- 3 (क) क्या समाचारपत्र कोई विशेष सवाददातागण या दूसरी श्रेणी के सवाददाता, जो पत्र में अशत काम कर रहे हैं, रखता है ?
- (ख) यदि ऐसा, तो भारत में कितने/ भारत में विदेश में कुल विदेश में कितने ? (कृपया स्थान लिखें)

4 उपरोक्त के अतिरिक्त समाचार-पत्र के कितने रिपोर्टर है ?

IV 1 \*संपादन/समाचारपत्र तैयार करने तथा अय पठन सामग्री के लिये नियुक्त व्यक्तियों (जैसे समाचार संपादकगण/उप संपादकगण और अय) की क्या सरया है ? (कृपया विस्तृत विश्लेषण दीजिये)

पुरुष

महिलाएँ

2 \*टीका, संपादकीय तथा अय दूसरी विशिष्टताएँ लिखने के लिए टीका लेखक नियुक्त किए गए व्यक्तियों की सरया संपादकीय लेखक क्या है ? (कृपया विस्तृत विश्लेषण दीजिये)

पुरुष

महिलाएँ

3 क्या समाचारपत्र किसी भारतीय/विदेशी विशिष्ट मध का ग्राहक है ? (यदि ऐसा, तो कृपया उनका पूरा डाक का पता लिखें)

भारतीय

विदेशी

4 उपरोक्त के अलावा समाचारपत्र ने कितने श्रेणियों के व्यक्ति नियुक्त किये हैं, जैसे -

छाया चित्रकार

मानचित्रकार

व्यंग चित्रकार "

अय

4 (क) \*संपादकीय विभाग का प्रभारी व्यक्ति क्या समाचारपत्र के प्रबन्ध से भी संबद्ध है ?

(ख) क्या उसका समाचारपत्र में कोई स्वामित्व लाभ है ? (कृपया विवरण दें)

V समाचारपत्र द्वारा नियुक्त पत्रकारों के अतिरिक्त अन्य कुल कितने कमचारी हैं ?

- ( I ) सामान्य (IV) मुद्रण  
( II ) प्रबंध ( V ) प्रसार  
( III ) विज्ञापन (VI) अन्य

कुल (I) से (VI)

प्रतिशत

	प्रतिशत		कुल
	बिक्री	विज्ञापन	
1 (क) बिक्री/विज्ञापन से प्राप्त समाचारपत्र की कुल आय का अनुपात			100
(ख) सरकारी/गैर सरकारी से प्राप्त विज्ञापन आय का अनुपात ।	सरकारी सावजनिक क्षेत्र उपक्रम शामिल कर	गैर सरकारी	कुल
2 समाचारपत्र में पठन सामग्री व विज्ञापन का औसत अनुपात क्या है ?	पठन सामग्री	विज्ञापन	कुल
3 समाचारपत्र में देशी समाचार व विदेशी समाचार का औसत अनुपात क्या है ? (कृपया बिना क्रम नमूना आधार पर प्राक्कलन कीजिये)	देशी समाचार	विदेशी	कुल
4 (क) प्रति एक पृष्ठों की औसत संख्या			
(ख) पृष्ठ क्षेत्र (वर्ग से.टी मी० में)			

दैनिक साप्ताहिक यदा-कदा

- 5 (क) क्या समाचारपत्र मे इनके लिए स्थान दिया जाता है - (कृपया यह भी लिखें कि यह दैनिक साप्ताहिक या/यदा-कदा विशिष्ट है।
- |            |
|------------|
| 1 खेल कूद  |
| 2 वारिणज्य |
| 3 चित्रपट  |
| 4 कला      |
| 5 महिलाएं  |

- (ख) समाचारपत्र के अपने अलग पत्रकार है ? यदि ऐसा, तो कृपया बिश्लेषण दीजिए -
- |            |
|------------|
| 1 खेल-कूद  |
| 2 वारिणज्य |
| 3 चित्रपट  |
| 4 कला      |

प्रति सप्ताह ग्रीसत सभ्या

- VI (1) क्या समाचारपत्र इन्हें प्रकाशित करता है -
- |                 |
|-----------------|
| (1) फोटो        |
| (2) व्यंग चित्र |
| (3) नक्शे       |
| (4) रेखाचित्र   |

VII क्या के लिए।

(जनवरी जून) समाचारपत्र का प्रति थक ग्रीसत प्रसार क्या है ?

(क) प्रकाशन के नगर सीमा भीतर प्रसार सभ्या

(ख) राज्य/क्षेत्र सीमा भीतर प्रसार सभ्या (प्रकाशन के नगर को छोड़कर)

(ग) राज्य/क्षेत्र के बाहर प्रसार सभ्या विन्तु भारत के भीतर (कृपया मुख्य पडौसी राज्य/क्षेत्र प्रत्येक भी प्रसार सभ्या प्रसंग प्रसंग दें)।



VIII वर्षानुसार पिछले 5 वर्षों के  
दौरान देहाती क्षेत्रों में विकास प्रसार प्रसार

क्रमांक	वर्ष	शहरी क्षेत्र में	देहाती क्षेत्र में	कुल
1				
2				
3				
4				
5				

- IX (1) क्या वर्ष के दौरान आपके समाचारपत्र का कोई नया संस्करण (एगो) निकाला गया ? (कृपया प्रकाशन के नगर के साथ साथ प्रकाशन चालू करने की यथाथ तिथि और संस्करण लिखें) ।
- (2) क्या स्वामी या कोई दूसरा समाचारपत्र/नियतकालिका पत्र है ? कृपया प्रत्येक का नाम, भाषा नियतकालिकता तथा प्रकाशन का नगर लिखें)
- (3) क्या वर्ष के दौरान स्वामी ने कोई दूसरा समाचारपत्र/नियतकालिक पत्र निकाला है ? यदि ऐसा, तो कृपया समाचारपत्र का नाम, नियतकालिकता, भाषा प्रकाशन का स्थान तथा समाचारपत्र के प्रसार के साथ-साथ समाचारपत्र का चालू करने की यथाथ तिथियाँ भी लिखें ।

५ क्या वप के दौरान किसी भी अवधि में समाचारपत्र का प्रकाशन निलम्बित रहा ? यदि ऐसा, तो कृपया ऐसे निलम्बन की यथाशक्ति तिथि तथा कारण लिखें ।

तारीख

प्रकाशक के हस्ताक्षर

## प्रेस परिषद् अधिनियम, 1978

1978 का अधिनियम संख्या 37 7 सितम्बर, 1978 (प्राधिकार से प्रकाशित भारत का राजपत्र असाधारण भाग II खण्ड I नई दिल्ली, शुक्रवार, सितम्बर 8, 1978)

भारत में प्रेस की स्वतंत्रता और समाचारपत्रों तथा समाचार एजेंसियों के स्तर को बनाए रखने और उनमें सुधार करने के प्रयोजन के लिए एक प्रेस परिषद् की स्थापना के लिए अधिनियम ।

भारत गणराज्य के उन्तीसवें वष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो -

### अध्याय 1

### प्रारम्भिक

#### 1 संक्षिप्त नाम और विस्तार

- (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम प्रेस परिषद् अधिनियम 1978 है ।
- (2) इसका विस्तार संपूर्ण भारत पर है ।

#### 2 परिभाषाएँ

इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अर्थ स्पष्ट न हो -

- (क) 'अध्यक्ष' में परिषद् का अध्यक्ष अभिप्रेत है
- (ख) परिषद् संघारा 4 के अधीन स्थापित भारतीय प्रेस परिषद् अभिप्रेत है,

(ग) 'सदस्य' से परिषद् का सदस्य अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत उसका अध्यक्ष भी है

(घ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाये गये नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है

(ङ) 'सम्पादक' और समाचारपत्र पदों के वही अर्थ हैं जो प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 में हैं और 'श्रमजीवी पत्रकार' पद का वही अर्थ है जो श्रमजीवी पत्रकार और श्रम समाचारपत्र नमचारी (सेवा की शर्तों) और प्रकीर्ण उपबन्ध अधिनियम 1955 में है।

(1867 का 25, 1955 का 45)

3 उन अधिनियमितियों के सम्बन्ध में अर्थावयन का नियम जिनका विस्तार जम्मू-कश्मीर और सिक्किम राज्यों पर नहीं है।

इस अधिनियम में किसी ऐसी विधि के प्रति निर्देश का, जो जम्मू-कश्मीर अथवा सिक्किम राज्यों में प्रवृत्त नहीं है, ऐसे राज्य के संबंध में अर्थावयन एक राज्य में प्रवृत्त विधि के प्रति तत्स्थानीय निर्देश से यदि कोई हो किया जाएगा।

## अध्याय 2

### प्रेस परिषद् की स्थापना

4 परिषद् का निगमन

(1) उस तारीख से, जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे भारतीय प्रेस परिषद् के नाम से एक परिषद् की स्थापना की जाएगी।

(2) उक्त परिषद् शाश्वत उत्तराधिकार और सामान्य मुद्रा वाली एक निगमित निकाय होगी और उक्त नाम से वह वाद लायेगी और उस पर वाद लाया जाएगा।

5 परिषद् की संरचना

(1) परिषद् एक अध्यक्ष और अट्ठाईस अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगी।

(2) अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होगा जो समिति द्वारा नामनिर्दिष्ट किया जाएगा और यह समिति राज्यसभा के सभापति लोकसभा के अध्यक्ष और उपधारा (6)

के अधीन परिपद के सदस्यो द्वारा निर्वाचित एक व्यक्ति स मिलकर बनेगी और इस प्रकार किया गया नामनिर्देशन उस तारीख से प्रभावी होगा जिसको केन्द्रीय सरकार द्वारा राजपत्र मे अधिसूचित किया जाता है ।

### (3) अथ सदस्यो म स -

(क) तेरह थमजीवी पत्रकार, एस प्रक्रिया के अनुसरण म नाम निर्दिष्ट किए जायेंगे जो विहित की जाए, जिनमे से छह समाचारपत्रों के सपादक होंगे और शेष सात सम्पादकों म भिन्न थमजीवी पत्रकार होंगे, किन्तु भारतीय भाषाओं मे प्रकाशित समाचारपत्रों के सबध मे ऐसे सपादको की और सपादको से भिन्न ऐसे थमजीवी पत्रकारो की सख्या क्रमश तीन और चार से कम नहीं होगी,

(ख) छह उन व्यक्तियो म म, जो समाचारपत्रो के स्वामी हो या समाचार पत्रो के प्रबध का कारोबार करते हा, एस प्रक्रिया के अनुसरण म नामनिर्दिष्ट किये जाएंग जो विहित की जाए किन्तु यह इस प्रकार किया जाएगा कि बडे समाचार पत्रों मध्यम समाचारपत्रों और छोटे समाचारपत्रों के प्रत्येक वग मे मे दो प्रति निधि होंगे,

(ग) एक उा व्यक्तिया में मे जो समाचार एजेन्सिया का प्रबध करते हो, ऐसी प्रक्रिया के अनुसरण म नाम निर्दिष्ट किया जाएगा जो विहित की जाए

(घ) तीन ऐसे व्यक्ति होंगे जिहें शिक्षा और विज्ञान, विधि और साहित्य तथा सस्कृति के बारे म विशेष पान या व्यावहारिक अनुभव हा और इनमे से क्रमश एक विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा एक भारत की विधिपरिपद द्वारा और एक साहित्य अकादमी द्वारा नाम निर्दिष्ट किया जाएगा,

(ङ) पाच मसद सदस्य हांग जिनमे से तान लोक सभा के अध्यक्ष द्वारा लोक सभा के सदस्यो म से नाम निर्दिष्ट किए जाएंगे और दा राज्यसभा के समापति द्वारा राज्य सभा के सदस्यों म से नाम निर्दिष्ट किए जाएंगे,

परन्तु कोई थमजीवी पत्रकार, जो किसी समाचारपत्र का स्वामी हो या उसके प्रबध का कारोबार करता हा खड (क) के अधीन नाम निर्देशन का पात्र न होगा ।

परन्तु यह और कि खण्ड (क) और (ख) के अधीन नाम निर्देशन इस प्रकार किये जाएंग कि नाम निर्देशित व्यक्तियो म एक से अधिक ऐसे व्यक्ति न हों जो किसी समाचारपत्र म या एक ही नियंत्रण या प्रबध के अधीन समाचारपत्रों मे किसी समूह म हितबद्ध हा ।

स्पष्टीकरण - खण्ड (ख) के प्रयोजना के लिए कोई 'समाचारपत्र' -

(i) "बड़ा समाचारपत्र" समझा जाएगा यदि उसके सभी मस्करणा का कुल परिचलन हर एक अक्षर की पचास हजार प्रतिमा से अधिक का हो,

(ii) "मध्य समाचारपत्र" समझा जाएगा यदि उसके सभी मस्करणा का कुल परिचलन हर एक अक्षर को पंद्रह हजार प्रतिमा से अधिक का हो किंतु पचास हजार प्रतिमा से अधिक का न हो।

(iii) "छोटा समाचारपत्र" समझा जाएगा यदि उसके सभी मस्करणा का कुल परिचलन हर एक अक्षर की पंद्रह हजार प्रतिमा से अधिक का न हो।

(4) उपधारा (3) के खण्ड (क) खण्ड (ख) या खण्ड (ग) के अधीन कोई नाम निर्देशन करने के पूर्व, प्रथम परिपद की दशा से केन्द्रीय सरकार और किसी पश्चातवर्ती परिपद की दशा में पूर्ववर्ती परिपद का निवृत्त होने वाला अध्यक्ष उक्त खण्ड (क) खण्ड (ख) या खण्ड (ग) में निर्दिष्ट प्रवर्गों के 'यक्तियों के ऐसे मगमों में, जो प्रथम परिपद की दशा में केन्द्रीय सरकार द्वारा और पश्चातवर्ती परिपदों की दशा में स्वयं परिपद द्वारा इस निमित्त अधिसूचित किए जाए नामनिर्दिष्ट किए जाने वाले सदस्यों की दुगुनी संख्या में नामों के पैनल विहित रीति से आमंत्रित करेगा।

परन्तु जहाँ उक्त खण्ड (ग) में निर्दिष्ट प्रवर्ग के व्यक्तियों का कोई मगम नहीं है वहाँ ऐसी समाचार एजेंसियों से, जो उपयुक्त रूप में अधिसूचित की जाए नामों के पैनल आमंत्रित किये जायेंगे।

(5) केन्द्रीय सरकार उपधारा (3) के अधीन सदस्यों के रूप में नाम निर्दिष्ट व्यक्तियों के नाम राजपत्र में अधिसूचित करेगी और ऐसा शतके नामनिर्देशन उस तारीख से प्रभावी होगा जिसको वह अधिसूचित किया जाता है।

(6) उपधारा (5) के अधीन अधिसूचित परिपद के सदस्य उपधारा (2) में निर्दिष्ट समिति का सदस्य होने के लिए एक 'यक्ति को अपने में से ऐसी प्रक्रिया के अनुसरण में निर्वाचित करेंगे जो विहित की जाए और ऐसे निर्वाचन के प्रयोजन के लिए परिपद के सदस्यों के अधिवेशन का सभापतित्व वह व्यक्ति करेगा जो उनके द्वारा अपने में से चुना गया है।

## 6 सदस्यों की पदावधि और निवृत्ति

(1) इस धारा में जसा उपबोधित है उसके सिवाय अन्यथा और अन्य सदस्य तीन वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करेंगे।

परन्तु अध्यक्ष, ऐसा पद, धारा 5 के उपबध के अनुसरण में परिपद के पुनर्गठित होने तक या छह मास की अवधि के लिए, इनमे मे जो भी पूर्वतर हा धारण करत रहेंगे ।

(2) यदि धारा 5 की उपधारा (3) के खण्ड (ब) खण्ड (ख) या खण्ड (ग) के अधीन सदस्य के रूप मे नाम निर्दिष्ट व्यक्ति धारा 14 की उपधारा (1) के उपबधो के अधीन परिनिर्दिष्ट किया जाता है तो वह परिपद का सदस्य नहीं रहेगा ।

(3) धारा 5 की उपधारा (3) के खण्ड (ड) के अधीन नामनिर्दिष्ट सदस्य की पदावधि उसी समय समाप्त हा जाणगी जब वह उस सदन का सदस्य न रह जाए जिससे वह नामनिर्दिष्ट किया गया था ।

(4) यदि कोई सदस्य किसी ऐसे प्रतिहेतु के बिना, जो परिपद की राय मे पर्याप्त हो, परिपद के तीन अमवर्ती अधिवेशनों म अनुपस्थित रहता है तो यह समझा जाएगा कि उसने अपना स्थान रिक्त कर दिया है ।

(5) अध्यक्ष के द्रीय सरकार को लिखित सूचना देकर अपना पद त्याग सकेगा और कोई भी अन्य सदस्य, अध्यक्ष को लिखित सूचना देकर अपना पद त्याग सकेगा और ऐसा त्यागपत्र यथास्थिति, के द्रीय सरकार या अध्यक्ष द्वारा स्वीकार कर लिए जान पर यह समझा जाएगा, कि यथास्थिति, अध्यक्ष या सदस्य ने अपना पद त्याग दिया है ।

(6) उपधारा (2), उपधारा (3) उपधारा (4) या उपधारा (5) के अधीन या अथवा होने वाली कोई रिक्ति यथाशक्य शीघ्र, उसी रीति से नाम निर्देशन द्वारा भरी जाएगी जिस रीति से पद रिक्त करने वाले सदस्य को नाम निर्दिष्ट किया गया था और इस प्रकार नामनिर्दिष्ट सदस्य उस शेष अवधि के लिए पद धारण करेगा जिसके लिए वह सदस्य जिसके स्थान पर वह नामनिर्दिष्ट किया गया है पद धारण करता ।

(7) निवृत्त होने वाला सदस्य अधिक से अधिक एक पदावधि के लिए पुन नामनिर्देशित किये जाने का पत्र हागा ।

सदस्यों की सेवा की शर्तें

7(1) अध्यक्ष पूराकालिक अधिकारी होगा और उस ऐसा वेतन दिया जाएगा जो के द्रीय सरकार ठीक समझे और अन्य सदस्य परिपद के अधिवेशनों म हाजिर हाने के लिए ऐसे भत्ते या फौम प्राप्त करेंग जा विहित की जाए ।

(2) उपधारा (1) के उपबधो के अधीन रहने हुए सदस्यों की सेवा की शर्तें एसी हागी जो विहित की जाए ।

(3) इसके द्वारा यह घोषित किया जाता है कि परिषद् के सदस्य का पद उसके धारण को मसद के दोनो म स किसी भी सदन का सदस्य चुने जाने या रहने के लिए अनहित नहीं करेगा ।

### परिषद् की समितियाँ

8(1) परिषद् इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के पालने के प्रयोजन के लिए अपने सदस्यों म से साधारण या विशेष प्रयाजन के लिए ऐसी समितियों का गठन कर सकेगी जसी वह आवश्यक समझे और इस प्रकार गठित प्रत्येक समिति ऐसे कृत्यों का पालन करेगी जो परिषद् उसे सौंपे ।

(2) परिषद् को उतनी सत्या म, जितनी ठीक समझे ऐसे अथ व्यक्तियों को, जो परिषद् के सदस्य नहीं हैं उपधारा (1) के अधीन गठित किसी समिति के सदस्यो के रूप में सहयोजित करने की शक्ति होगी ।

(3) किसी भी ऐसे सदस्य को उस समिति के किसी भी अधिवेशन म जिसमे उसे इस प्रकार सहयोजित किया गया है, हजरि होने का और वहाँ पर चर्चा में भाग लेने का अधिकार होगा किन्तु उसे मतदान का अधिकार नहीं होगा और वह किसी अथ प्रयोजन के लिए सदस्य नहीं होगा ।

### परिषद् और समितियों के अधिवेशन

(9) परिषद् या उसकी किसी समिति का अधिवेशन ऐसे समय और स्थान पर होगा और वह अपने अधिवेशनो मे कारोबार के सम्बन्ध म प्रक्रिया के ऐसे नियमों का पालन करेगी जा इस अधिनियम के अधीन बनाए गए विनियमों द्वारा उपबन्धित किए जाए ।

परिषद् के सदस्यों में रिक्तियाँ होने या उसके गठन म त्रुटि होने से परिषद् के कार्यों और कारवाहिमा का अधिधामाय न होगा ।

(10) परिषद् का कोई भी काय या उनकी कोई भी कायवाही परिषद् म कोई रिक्ति या उसके गठन म कोई त्रुटि के कारण ही अधिधामाय नहीं समझी जाएगी ।

### परिषद् के कर्मचारीवृन्द

11 (1) ऐसे नियमों के अधीन रहते हुए, जा केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित बनाए जायें परिषद् का एक सचिव और उसे अथ कर्मचारी नियुक्त कर सकेगी जिन्हें यह इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के दक्षतापूर्ण पालन के लिए आवश्यक समझे ।

(2) कमचारिया नी सेवा के निबन्धन और शर्तों के होगी जो विनियमों द्वारा अवधारित की जाए।

12 परिषद् के आदेशों और अन्य लिखितों का अधिप्रमाणन

परिषद् के सभी आदेशों और विनिश्चयों का अधिप्रमाणन अध्यक्ष या परिषद् द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी भी अन्य सदस्य के हस्ताक्षर से होगा और परिषद् द्वारा निकाली गई अन्य लिखितों का अधिप्रमाणन सचिव या परिषद् के किसी ऐसे अन्य अधिकारी के हस्ताक्षर से होगा जो इस निमित्त उसी चीज से प्राधिकृत हो।

### अध्याय 3

## परिषद् की शक्तियाँ और कृत्य

परिषद् के उद्देश्य और कृत्य

13 (1) परिषद् का उद्देश्य भारत में प्रेस की स्वतंत्रता और समाचारपत्रों तथा समाचार एजेंसियों के स्तर बनाए रखना तथा उन्हें सुधार करना होगा।

(2) परिषद् अपने उद्देश्यों को अग्रसर करने के लिए निम्नलिखित कृत्यों का पालन कर सकेगी अर्थात्—

(क) समाचारपत्रों तथा समाचार एजेंसियों द्वारा अपनी स्वतंत्रता बनाए रखने में उनकी सहायता करना।

(ख) समाचारपत्रों, समाचार एजेंसियों और पत्रकारों के लिए उच्च वृत्तिक स्तर के अनुसार एक आचारसंहिता बनाना।

(ग) यह सुनिश्चित करना कि समाचारपत्रों, समाचार एजेंसियों और पत्रकारों की ओर से लोक-सर्व के उच्च स्तर बनाए रखे जाएँ और नागरिक अधिकारों और उत्तरदायित्वों दोनों की सम्यक् भावना का पोषण करना।

(घ) उन सब व्यक्तियों ने जो पत्रकारिता की वृत्ति में लगे हुए हैं उत्तरदायित्व और लोक-सेवा की भावना प्रोत्साहित करना।

(ङ) ऐसी किसी भी बात पर जिससे लोकहित और लोक महत्व के समाचार के प्रदाय और प्रसार का निर्वहन सम्भाव्य हो, विचार करते रहना।



(च) भारत में किसी समाचारपत्र या समाचार एजेंसिया द्वारा किसी विदेशी स्रोत से प्राप्त सहायता के मामले का, जिनके अंतर्गत वे मामले भी हैं जो केन्द्रीय सरकार द्वारा उसे निर्देशित किए जाए या किसी व्यक्ति, व्यक्तियों के संगम या अन्य संगठन द्वारा उसकी जानकारी में लाए जाए, पुनर्विलोकन करते रहना ।

परन्तु इस खण्ड की कोई बात भारत में किसी भी समाचारपत्र या समाचार एजेंसी द्वारा किसी विदेशी स्रोत से प्राप्त सहायता के किसी मामले में किसी अन्य ऐसी रीति से जो केन्द्रीय सरकार ठीक ममक, कारवाई करने से केन्द्रीय सरकार को प्रवाहित न करेगी ।

(छ) विदेशी समाचारपत्रों के, जिनके अंतर्गत किसी राजद्रोहावास द्वारा या भारत में विदेशी राज्य के किसी प्रतिनिधि द्वारा निकाली गई पत्रिकाएँ भी हैं, अध्ययन का भार अपने ऊपर लेना, उनका परिचलन और प्रभाव ।

स्पष्टीकरण — इस खण्ड के प्रयाजन के लिए, 'विदेशी राज्य' पद का वही अर्थ होगा जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 87 (क) में है । (1908 का 5)

(ज) समाचारपत्र निकालने या उनके प्रकाशन में या समाचार एजेंसिया में लगे हुए व्यक्तियों के सभी वर्गों में उचित कृत्यिक सम्बन्ध की अभिवृद्धि करना ।

परन्तु इस खण्ड की कोई बात परिपद पर उन विवादों की बावत काइ कृत्य सौपने वाली नहीं समझी जाएगी जिन्हें औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 लागू है । (1947 का 14)

(झ) समाचारपत्रों और समाचार एजेंसियों के स्वामित्व के संवेदन या उनके अन्य पहलुओं से सम्बन्धित ऐसी घटना पर निगाह रखना जिनका प्रस की स्वतंत्रता पर प्रभाव पड़ सकता हो ।

(ड) ऐसे अध्ययन कार्य हाथ में लेना जो परिपद को सौंपे जाए और किसी ऐसे विषय के बारे में अपनी राय प्रकट करना जो केन्द्रीय सरकार द्वारा उसे निर्दिष्ट किया जाए ।

(ट) ऐसे अन्य राय करना जो उपयुक्त कृत्या के निवहन के आनुसंगिक या साधक हो ।

### परिनिदा करने की शक्ति

14 (1) जहाँ परिपद् को, उससे किए गए परिवाद के प्राप्त होने पर या अथवा, यह विश्वास करने का कारण हो कि किसी समाचारपत्र या समाचार एजेंसी ने पत्रकारिक सदाचार या लोक-रुचि के स्तर का अतिवृत्तन किया है या किसी संपादक या श्रमजीवी पत्रकार ने कोई वृत्तिक अवचार किया है, वहां परिपद् सम्बद्ध समाचारपत्र या समाचार एजेंसी, संपादक या पत्रकार को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् उस रीति से जाच कर सकेगी जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए विनियमों द्वारा उपबन्धित हो और यदि उसका समाधान हो जाता है कि ऐसा करना आवश्यक है तो, वह ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, यथास्थित उस समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, संपादक या पत्रकार को चेतावनी दे सकेगी, उसकी भत्सना कर सकेगी या उसकी परिनिदा कर सकेगी, या उस संपादक या पत्रकार के आचरण का अनुमोदन कर सकेगी ।

परन्तु यदि अध्यक्ष की राय में जाच करने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है तो परिपद् किसी परिवाद का सञ्ज्ञान नहीं कर सकेगी ।

(2) यदि परिपद् की यह राय है कि लोकहित में ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है, तो वह किसी समाचारपत्र से यह अपेक्षा कर सकेगी कि वह समाचारपत्र या समाचार एजेंसी, संपादक या उसमें कार्य करने वाले पत्रकार के विरुद्ध इस धारा के अधीन किसी जाच से सम्बन्धित किन्हीं विशिष्टियों को, जिनके अंतर्गत उस समाचारपत्र समाचार एजेंसी, संपादक या पत्रकार का नाम भी है । उसमें ऐसी रीति से जसी परिपद् ठीक समझे, प्रकाशित करे ।

(3) उपधारा (1) की किसी भी बात से यह नहीं समझा जाएगा कि वह परिपद् को किसी ऐसे मामले में जाच करने की शक्ति प्रदान करती है जिसके बारे में कोई कारवाई किसी न्यायालय में लम्बित हो ।

(4) यथास्थिति, उपधारा (2) के अधीन परिपद् का विनिश्चय अन्तिम होगा और उस किसी भी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जायेगा ।

### परिपद् की साधारण शक्तियां

15 इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के पालन या कोड जाच करने के प्रयोजन के लिए परिपद् को निम्नलिखित

मे सम्पूर्ण भारत मे वे ही शक्तियाँ होंगी जो वाद का विचारण करते समय सिविल न्यायालय मे सिविल प्रक्रिया महिता, 1908 के अधीन निहित है, अर्थात् —

(क) "यक्तियों को समन करना और हाजिर कराना तथा उसकी समय पर परीक्षा करना ।

(ख) दस्तावेजों का प्रकटीकरण और उनका निरीक्षण ।

(ग) साक्ष्य का शपथ पर लिया जाना ।

(घ) किसी न्यायालय या कार्यालय से किसी लोक अभिलेख या उसकी प्रतिलिपियाँ की अध्यक्षता करना ।

(ङ) साक्षियाँ या दस्तावेजों की परीक्षा के लिए बमोशन निकालना ।

(च) कोई अन्य विषय, जो विहित किया जाए ।

(2) उपधारा (1) की कोई बात किसी समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, सम्पादन या पत्रकार की, उस समाचारपत्र द्वारा प्रकाशित या उन समाचार एजेंसी सम्पादक या पत्रकार द्वारा प्राप्त या रिपोर्ट किए गए किसी समाचार या सूचना का स्रोत प्रकट करने के लिए विवश करने वाली नहीं समझी जायेगी ।

(3) परिषद् द्वारा की गई प्रत्येक जांच भारतीय दण्ड संहिता की धारा 193 की धारा 228 के अर्थ में न्यायिक कायदाही समझी जाएगी । (1860 का 45)

(4) यदि परिषद् अपने उद्देश्य को श्रियावित करने के प्रयोजन के लिए या अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का पालन करने के लिए आवश्यकता समझती है तो वह अपने किसी विनिश्चय मे या रिपोर्ट में किसी प्राधिकरण के, जिसके अन्तर्गत सरकार भी है, आचरण के सम्बन्ध में ऐसा मत प्रकट कर सकेगी जो वह ठीक समझे ।

### फीसों का उद्ग्रहण

16 (1) परिषद् इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का पालन करने के प्रयोजन के लिए फीस ऐसी दर पर और ऐसी रीति से, जो विहित की जाए, रजिस्ट्रीकृत समाचारपत्रों/समाचार एजेंसियों को उद्ग्रहीत कर सकेगी और विभिन्न समाचारपत्रों के लिए विभिन्न दरें, उनके प्रचार और अन्य बातों का ध्यान में रखते हुए, विहित की जा सकेंगी ।

(2) परिषद् को उपधारा (1) के अधीन सदेम-कोई फीस, भू-राजस्व के बकाया रूप में वसूल की जा सकेगी।

### परिषद् को सदाय

4435

17 केन्द्रीय सरकार, ससद् द्वारा इस निमित्त विधि द्वारा किए गए सयक विनियोग के पश्चात्, परिषद् को ऐसी धनराशियों का सदाय अनुदानों के रूप में कर सकेगी जो केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के अधीन परिषद् के कृत्यों के पालन के लिए आवश्यक समझे।

### परिषद् की निधि

18 (1) परिषद् की अपनी निधि हागी और परिषद् द्वारा संगृहीत फीस, और ऐसी जमा राशिया, जो समय समय पर उसे केन्द्रीय सरकार द्वारा सदत्त की जाए और सभी अनुदान तथा अग्रिम धन, जो किसी अथ प्राधिकरण या व्यक्ति द्वारा दिए गए हैं, निधि जमा किए जाएंगे, और परिषद् द्वारा सभी सदाय उस निधि में से किए जाएंगे।

(2) परिषद् का सब धन ऐसे ढको में निक्षिप्त किया जाएगा या ऐसी रीति से विनिहित किया जाएगा जो केन्द्रीय सरकार के अनुमोदन से परिषद् विनिश्चय करे।

(3) परिषद् ऐसी राशिया व्यय कर सकेगी जो वह इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के पालन के लिए ठीक समझे और ऐसी राशिया परिषद् की निधि में से सदाय व्यय मानी जाएगी।

### बजट

19 प्रत्येक वष में परिषद् ऐसे प्रारूप में और ऐसे समय पर, जो विहित किया जाए, आगामी वित्तीय वष के बारे में एक बजट तैयार करेगी जिसमें प्राक्कलित आय और व्यय दर्शित होंगे और उसकी प्रतियाँ केन्द्रीय सरकार को अग्रेपित की जाएगी।

### वार्षिक रिपोर्ट

20 परिषद् प्रत्येक वष एक बार ऐसे प्रारूप में और ऐस समय पर, जो विहित किया जाय एक वार्षिक रिपोर्ट तैयार करेगी, जिसमें पूव वष में किए गए अपने कायकलापो का सक्षेप और समाचारपत्रो तथा समाचार एजेसियो के स्तर और उन पर प्रभाव डालने वाली बाता का लेखा होगा और उसकी प्रतिया घारा 22 के अधीन विहित अपरीक्षित

लेखा विवरण सहित केन्द्रीय सरकार को अग्रेषित की जाएगी और वह सरकार उन्हें ससद के दोनों सदनों के समक्ष रखवाएगी ।

### अंतरिम रिपोर्ट

21 धारा 20 के उपबन्धा पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना परिपद एक वर्ष में किसी भी समय, उस वर्ष के दौरान अपने ऐसे त्रिया कलापो का सक्षेप देते हुए रिपोर्ट तैयार कर सकेगी जिन्हें वह लोक महत्त्व का समझे और उसकी प्रतियाँ केन्द्रीय सरकार को अग्रेषित की जायेंगी और सरकार उन्हें ससद के दोनों सदनों के समक्ष रखवाएगी ।

### लेखा और सपरीक्षा

22 परिपद के लेखे ऐसी रीति से रखे और सपरीक्षक किये जाएंगे जो भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक के परामर्श से विहित की जाए ।

## अध्याय 4

### प्रकीर्ण

#### सदभावपूर्वक की गई कारवाइ के लिए सरक्षण

23 (1) कोई भी वाद या अग्र्य विधिक कार्यवाही किसी भी ऐसी बात के बारे में, जो इस अधिनियम के अधीन सदभावपूर्वक की गई हो या की जाने के लिए आशयित हो, परिपद या उसके किसी भी सदस्य या परिपद के निदेश के अधीन काय करने वाले किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध न होगी ।

(2) कोई भी वाद या अग्र्य विधिक कार्यवाही किसी समाचारपत्र में परिपद के प्राधिकार से प्रकाशित किसी भी विषय के बारे में उस समाचारपत्र के विरुद्ध नहीं होगी ।

#### सदस्य आदि लोकसेवक होंगे

24 परिपद का प्रत्येक सदस्य और परिपद द्वारा नियुक्त प्रत्येक अधिकारी या अग्र्य कर्मचारी भारतीय दण्ड संहिता की धारा 21 के अग्र्य में लोकसेवक समझा जाएगा । (1860 का 45)

## नियम बनाने की शक्ति

25 (1) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बता सकेगी।

परन्तु जब परिषद् स्थापित कर दी गई हो तब ऐसे कोई भी नियम परिषद् से परामश किए बिना नहीं बनाये जायेंगे।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसे नियम निम्नलिखित सब विषयों के लिए या उनमें से किसी के लिए भी उपबन्ध कर सकेंगे अर्थात् —

(क) धारा 5 की उपधारा (3) के खण्ड (क) खण्ड (ख) और खण्ड (ग) के अधीन परिषद् के सदस्यों के नाम निर्देशक की प्रक्रिया, (ख) वह रीति जिससे धारा 5 की उपधारा (4) के अधीन नामों के पैनल आमंत्रित किए जा सकेंगे,

(ग) धारा 5 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट समिति के सदस्य की उक्त धारा की उपधारा (6) के अधीन निर्वाचित करने की प्रक्रिया,

(घ) वे भत्ते और फीसों जो परिषद् सदस्यों को परिषद् के अधिवेशनों में उपस्थित होने के लिए सदत्त की जायें और धारा 7 की उपधारा (1) और (2) के अधीन ऐसे सदस्यों की सेवा की अथ शर्तें,

(ङ) धारा 11 के अधीन परिषद् के सचिव और अन्य कमचारियों की नियुक्ति,

(च) धारा 15 की उपधारा (1) के खण्ड में निर्दिष्ट विषय,

(छ) वे दरें जिन पर परिषद् द्वारा धारा 16 के अधीन फीस उद्गृहीत की जा सकेगी और वह रीति जिससे ऐसी फीस उद्गृहीत की जा सकेगी,

(ज) वह प्रारूप जिसमें और वह समय जिसके भीतर वजत और वार्षिक रिपोर्ट क्रमशः धारा 19 और धारा 20 के अधीन परिषद् द्वारा तयार किए जाने हैं,

(झ) वह रीति जिससे परिषद् के लेखे रखे जायेंगे और धारा 22 के अधीन उनकी संपरीक्षा की जाएगी,

(2) इस धारा के अधीन बनाया या प्रत्येक नियम बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र ससद के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल 30 दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा। यह अवधि एक सत्र में

अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी। यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जायें तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तन रूप में ही प्रभावी होगा। यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जायें कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई बात की विधिमायता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

## 26 विनियम बनाने की शक्ति

परिषद् निम्नलिखित के लिए ऐसे विनियम बना सकेगी जो इस अधिनियम तथा इसके अधीन बनाए गए नियमों से असंगत न हों, अर्थात् —

(क) परिषद् या उसकी किसी समिति के अधिवेशनों और उनमें कामकाज की प्रक्रिया का धारा 9 के अधीन विनियम,

(ख) परिषद् द्वारा नियुक्त किए गए कर्मचारियों की सेवा के नियमों और शर्तों का धारा 11 की उपधारा (2) के अधीन निर्देश,

(ग) इस अधिनियम के अधीन कोई भी जांच की रीति का विनियम,

(घ) ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जिन्हें वह अधिरोपित करना ठीक समझे, परिषद् के अध्यक्ष या सचिव को धारा 18 की उपधारा (3) के अधीन अपनी शक्तियों में से किसी का प्रत्यायोजन,

(ङ) कोई अन्य विषय जिनके लिए इस अधिनियम के अधीन विनियमों द्वारा उपलब्ध किया जा सकता है,

परन्तु खण्ड (ख) के अधीन बनाए गए विनियम केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से ही बनाए जाएंगे।

## (1867 के अधिनियम 25 का सशोधन)

27 प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 की धारा 8 ग की उपधारा (1) में, “केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किए जाने वाले अध्यक्ष तथा एक अन्य सदस्य से मिलकर बनेगा” शब्दों के स्थान पर “प्रेस परिषद् द्वारा अपने सदस्यों में से नाम निर्दिष्ट किए जाने वाले अध्यक्ष तथा एक अन्य सदस्य से मिलकर बनेगा” शब्द और अत्र रखे जायेंगे।

## प्रेस परिषद् (सशोधन) नियम 1981

भारत सरकार

सूचना और प्रसारण मंत्रालय

नई दिल्ली 15 जुलाई, 1981

### अधिसूचना

स० का० नि० केन्द्रीय सरकार प्रेस परिषद् अधिनियम 1978 (1978 का 37) की धारा 25 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करत हुए प्रेस परिषद् नियम 1979 में निम्नलिखित संशोधन करती है अधिधानत -

1 (क) इन नियमों का नाम प्रेस परिषद् (सशोधन) नियम 1981 होगा।

(ख) यह सरकारी राजपत्र में प्रकाशन की तिथि से प्रवृत्त होगा।

2 प्रेस परिषद् नियम 1979 के नियम 10 (1) के खण्ड (क) से (घ) तक तथा तदाधीन स्पष्टीकरण में निम्नलिखित प्रतिस्थापित किये जायेंगे अधिधानत -

(क) 1,50,000 से अधिक परिसंचरण सरदा वाले पञ्जीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकायें—

(i) प्रत्येक दैनिक से 5 000 रुपये प्रतिवष।

(ii) प्रत्येक द्विसाप्ताहिक/साप्ताहिक से 3,000 रुपये प्रत्येक प्रतिवष।

(iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 2 000 रुपये प्रतिवष।

(iv) अन्य सभी श्रेणियों से 1,500 रुपये प्रतिवष।

(ख) 1,00,000 से अधिक तथा 1,50,000 तक परिसंचरण सख्या वाले पञ्जीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकायें—

(i) प्रत्येक दैनिक से 3,500 रुपये प्रतिवष।

(ii) प्रत्येक द्विसाप्ताहिक/साप्ताहिक से 2,000 रुपये प्रतिवष।

(iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 1,500 रुपये प्रतिवष।

(iv) अन्य सभी श्रेणियों से 1 000 रुपये प्रतिवष।



(ग) 50,000 से अधिक तथा 1,00,000 तक परिसंचरण सख्या वाले पञ्जीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकायें—

- (i) प्रत्येक दैनिक में 2 500 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (ii) प्रत्येक द्विसाप्ताहिक/साप्ताहिक से 1,500 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 1 000 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (iv) अन्य सभी श्रेणियाँ से 750 रुपये प्रतिवर्ष ।

(घ) 15,000 से अधिक तथा 50 000 तक परिसंचरण सख्या वाले पञ्जीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकायें—

- (i) प्रत्येक दैनिक से 1,000 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (ii) प्रत्येक द्विसाप्ताहिक/साप्ताहिक से 600 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 400 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (iv) अन्य सभी श्रेणियाँ से 300 रुपये प्रतिवर्ष ।

(ङ) 5,000 से अधिक तथा 15,000 तक परिसंचरण सख्या वाले पञ्जीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकायें—

- (i) प्रत्येक दैनिक से 200 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (ii) प्रत्येक द्विसाप्ताहिक/साप्ताहिक से 150 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 100 रुपये प्रतिवर्ष ।
- (iv) अन्य सभी श्रेणियाँ से 100 रुपये प्रतिवर्ष ।

(च) प्रथम श्रेणी के प्रत्येक समाचार अभिकरण से 5,000 रुपये प्रतिवर्ष ।

(छ) द्वितीय श्रेणी के प्रत्येक समाचार अभिकरण से 3 500 रुपये प्रतिवर्ष ।

(ज) अन्य सभी समाचार अभिकरणों से 2 500 रुपये प्रतिवर्ष ।

स्पष्टीकरण—इस नियम के अन्तर्गत स्वरूप पञ्जीकृत समाचारपत्रों तथा पत्रिकाओं की वितरण सख्या भारतीय समाचारपत्रों के पञ्जीकृत द्वारा उपलब्ध नवीनतम वितरण सख्या तथा श्रमजीवी पत्रकारों के वेतन बोर्ड की रिपोर्ट में सूचित समाचार अभिकरणों के वर्गीकरण के लक्षणों के अनुसार निर्धारित होगी ।

(फाइल सख्या 4/24/79 प्रेस)

ह०/

(पी के जलाली)

भारत सरकार के उप सचिव

## प्रेस परिषद् (जाँच प्रक्रिया) विनियम 1979 भारत के असाधारण राजपत्र भाग 3 खण्ड 4 में प्रकाशित

नई दिल्ली, नवम्बर 14, 1979

फा० स० 25/1/79-पी० सी० आइ० - भारतीय प्रेस परिषद् अधिनियम 1978 (1978 का 37) की धारा 26 के खण्ड (ग) तथा उसे समय बनाने वाली अथ शक्तियों का प्रयोग करते हुए निम्नलिखित विनियम बनाती है, अर्थात्

1 सक्षिप्त नाम और प्रारम्भ—(1) इन विनियमों का नाम प्रेस परिषद् (जाँच प्रक्रिया) विनियम, 1979 होगा।

(2) ये राजपत्र में प्रकाशन की तारीख से प्रवृत्त होंगे।

2 परिभाषाएँ—जब तक कि सदन से अथवा अपेक्षित न हो—

(क) "अधिनियम" से प्रेस परिषद् अधिनियम, 1978 (1978 का 37) अभिप्रेत है,

(ख) समिति से अधिनियम की धारा 13 (2) और 14 (1) के अधीन परिवारों की जाँच का प्रयोजन के लिए अधिनियम की धारा 8 (1) के अधीन परिषद् द्वारा गठित जाँच समिति अभिप्रेत है,

(ग) 'परिषद्' से अधिनियम के अधीन गठित भारतीय प्रेस परिषद् अभिप्रेत है,

(घ) "परिवादी" से अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन परिवारों के मामले में ऐसा कोई व्यक्ति या प्राधिकारी अभिप्रेत है जो किसी समाचारपत्र समाचार अभिकरण, सम्पादक या अथ अथमजीवी पत्रकार के सम्बन्ध में परिषद् को परिवाद प्रस्तुत करता है और अथ विषयों के सम्बन्ध में परिवारों की बाबत ऐसा कोई व्यक्ति अभिप्रेत है जो ऐसे किसी विषय के सम्बन्ध में परिषद् को परिवाद प्रस्तुत करता है जिसे ग्रहण करने की और जिसकी परीक्षा करने और जिस पर अपना मत व्यक्त करने की, परिषद् को अधिकारिता प्राप्त है और

(ङ) "विषय" से कोई लेख समाचार भद्र, समाचार रिपोर्ट या कोई अथ ऐसा विषय अभिप्रेत है जो किसी भी रीति से किसी समाचारपत्र द्वारा प्रकाशित

किया गया है या किसी समाचार अभिकरण द्वारा पारेषित किया गया है और इसके अंतर्गत कोई काटून चित्र, फोटोचित्र, सामग्री या कोई विज्ञापन शामिल है जो किसी समाचारपत्र में प्रकाशित हुआ है।

3 अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन किसी समाचारपत्र, समाचार अभिकरण, सम्पादक या अन्य श्रमजीवी पत्रकार के संबंध में परिवाद की अंतर्धस्तु—

(1) यदि कोई व्यक्ति अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन किसी समाचारपत्र या समाचार अभिकरण में किसी विषय के प्रकाशन या अप्रकाशन के सम्बंध में परिवाद को कोई परिवाद करता है तो,

(क) यह उस समाचारपत्र, समाचार अभिकरण सम्पादक या अन्य श्रमजीवी पत्रकार का नाम और पता देना जिसके विरुद्ध परिवाद किया गया है और यदि परिवाद किसी समाचारपत्र में किसी विषय के प्रकाशन से सम्बंधित है या किसी अभिकरण द्वारा पारेषण से संबंधित है तो परिवाद के साथ उस विषय की मूल कटिंग भी प्रस्तुत करेगा जिसकी बाबत परिवाद किया गया है। साथ ही ऐसी विशिष्टियाँ भी देगा जो परिवाद की विषयवस्तु से सुसंगत हैं और यदि परिवाद किसी विषय के अप्रकाशन से सम्बंधित है तो उस विषय को मूल रूप में या उमरी प्रति प्रस्तुत करेगा जिसके अप्रकाशन की बाबत परिवाद किया गया है।

(ख) इस बात का ब्यक्त करेगा कि किस रीति में परिवादित विषय का प्रकाशन या अप्रकाशन, अधिनियम की धारा 14 (1) के अर्थ में आपत्तिजनक है

(ग) परिवाद के समक्ष परिवाद फाइल करने से पूर्व संबंधित समाचारपत्र समाचार अभिकरण, सम्पादक या अन्य श्रमजीवी पत्रकार का ध्यान समाचारपत्र आदि में प्रकाशित विषय की ओर या ऐसे विषय के अप्रकाशन की ओर आकर्षित करेगा जो परिवादी की राय में आपत्तिजनक है और वह यथास्थिति, समाचारपत्र समाचार अभिकरण सम्पादक या श्रमजीवी पत्रकार को एही राय के आधार पर प्रस्तुत करेगा। परिवादी अपने परिवादके साथ ही उस पत्र की, जो उसने समाचारपत्र समाचार अभिकरण, संपादक या अन्य श्रमजीवी पत्रकार को लिखा है कोई प्रति और यदि उसका उसे कोई उत्तर प्राप्त हुआ है तो उसकी एक प्रति भी सलग्न करेगा परंतु अध्यक्ष इस शर्त का स्वविवेकानुसार अचित्यजन कर सकेंगे।

(घ) यदि परिवाद यह है कि किसी सम्पादक ने या किसी श्रमजीवी पत्रकार ने किसी समाचारपत्र में किसी विषय के प्रकाशन या अप्रकाशन से मित कोई वृत्तिक व्यवहार किया है तो, परिवादी उन तथ्यों के बारे में जो उसके

मतानुसार परिवार को यामोचित ठहराते हैं, स्पष्ट व्योरे उपबर्णित करेगा और एमे परिवार को उक्त खण्ड (ग) के उपवध भी लागू होंगे ।

(ड) प्रत्येक दशा मे, परिपद् के समक्ष सभी अय मुसगत तथ्य रखेगा, और

(च) (I) किसी समाचारपत्र या समाचार एजेंसी के सम्बन्ध मे किसी विषय के प्रकाशन या अप्रकाशन से सम्बन्धित किसी परिवार के मामले मे, परिवार सबधिन विषय के प्रकाशन या अप्रकाशन की तारीख से निम्नलिखित अवधियों के भीतर परिपद् को प्रस्तुत किया जायेगा अर्थात्—

(क) दैनिक समाचारपत्र, समाचार एजेंसियाँ और साप्ताहिक-दा मास के भीतर ।

(ख) अय सभी मामले मे—चार मास के भीतर परन्तु किसी पूर्वतर तारीख के मुसगत प्रकाशन का परिवारो मे सदम दिया जा सकेगा ।

(II) उक्त खण्ड (घ) के अधीन किसी सपादक या अमजीवी पत्रकार के विरुद्ध किसी परिवार के मामले मे परिवारित अवचार के चार मास के भीतर प्रस्तुत किया जाएगा

परन्तु यदि परिपद् का इस बाबत, समाधान हो जाता है कि परिवारो ने तत्काल कारवाई की है, किन्तु विनियम 3 (1) (च) के उपखण्ड (I) या उपखण्ड (II) के अधीन विहित अवधि के भीतर परिवार निवेशित करने मे विलम्ब उक्त उपखण्ड (ग) मे अधिकाधित शत के अनुपालन मे लगे समय के कारण या किसी अय पर्याप्त हेतुक के कारण हुआ है तो वह विलम्ब माफ कर देगी और परिवार ग्रहण कर सकेगी । माफ करने की शक्ति का प्रयोग अध्यक्ष, परिपद् के अनुमोदन के अधीन रहत हुए करेंगे ।

(2) परिवारो परिवार प्रस्तुत करत समय उनमे सबसे नीचे निम्नलिखित प्रभाव की उद्घापरणा करेगा

(I) यह कि उसके सर्वोत्तम जान और विश्वास क अनुसार उसने परिपद् के समक्ष सभी मुसगत तथ्य प्रस्तुत कर दिए हैं और परिवार मे अमिकयित किसी विषय के सबध मे किसी यामालय मे कोई कारवाई लम्बित नहीं है,

(II) यह कि यदि परिपद् के समक्ष जांच लम्बित रहने के दौरान परिवार मे अमिकयित कोई विषय किसी यामालय मे चल रही किसी कारवाई की विषयवस्तु हो जाता है ता वह उसकी सूचना परिपद् को तुरत दगा ।

4 परिवार बापित करना —(1) यदि परिवारो विनियम (3) अध्यक्ष पताओ वा अनुपालन नहीं करता है ता अध्यक्ष परिवार बापित कर सकेगा और,

परिवादी से यह माँग कर सवेगा कि वह 11वीं अध्यक्षता का अनुपालन करे और परिवाद को ऐसे समय के भीतर जो वह इस बाबत रिपत करे, पुन प्रस्तुत करे ।

(2) परिवादी का परिवाद धारित कर दिए जाने के कारण बताए जायेंगे ।

5 नोटिस जारी करना —यथासाध्य शीघ्र और परिवाद की प्राप्ति की तारीख से 15 दिन के पश्चात् अध्यक्ष के निर्देश के अधीन परिवाद की एक प्रति उस समाचारपत्र समाचार एजेंसी, सम्पादन या श्रमजीवी पत्रकार को भेजी जाएगी जिसके विरुद्ध विनियम 3 के अधीन परिवाद किया गया है । ऐसी प्रति के साथ ही एक नोटिस देकर तथा रिपति, समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, सम्पादन या श्रम श्रमजीवी पत्रकार से इस बाबत कारण बताने की अध्यक्षता की जाएगी कि अधिनियम की धारा 14 के अधीन कारवाई क्यों न की जाए परंतु समुचित मामलों में अध्यक्ष इसी सूचना के जारी किए जाने के लिए समय में वृद्धि, स्वविवेकानुसार कर सवेगा

परंतु यह और कि यदि अध्यक्ष को यह राय है कि जांच करने के लिए कोई पर्याप्त कारण नहीं है तो ऐसे समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, सम्पादन या श्रमजीवी पत्रकार को कारण बताने का नोटिस जारी न करने का विनिश्चय कर सपता है । अध्यक्ष परिपद के पहले अधिवेशन में "कारण बताओ नोटिस जारी न करने में विनिश्चय करने के कारण बताएगा और परिपद ऐसे आदेश पारित कर सवेगी जैसे वह ठीक समझे ।

(2) उक्त उप विनियम (1) के अधीन जारी की गई सूचना सम्बंधित समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, सम्पादन या श्रमजीवी पत्रकार को रिनस्टीट्यूट रसीदी डाक द्वारा, परिवाद में बताए गए पत्र पर, भेजी जाएगी ।

6 लिखित कथन फाइल करना —(1) जिस समाचारपत्र, समाचार पत्रिकरण सम्पादन या श्रम श्रमजीवी पत्रकार के विरुद्ध परिवाद किया गया है वह विनियम 5 के अधीन परिवाद की प्रति या नोटिस तारीख होने की तारीख से चौदह दिन के भीतर या एक अतिरिक्त समय के भीतर जो अध्यक्ष इस बाबत अनुमत करें परिवाद के उत्तर में कोई लिखित कथन प्रस्तुत कर सवेगा ।

(2) लिखित कथन प्राप्त होन पर उत्तरी एक प्रति परिवानी को, उत्तरी जानकारी के लिए अश्रेयित की जाएगी ।

(3) परिवाद या लिखित कथन प्राप्त होने के पश्चात्, अध्यक्ष यदि यह आवश्यक समझता है तो, एक निती विषय के स्पष्टीकरण के लिए जो किसी परिवाद या लिखित कथन के प्रकट दृष्टा है यथास्थिति, परिवानी से या प्रत्यार्थी समाचारपत्र, समाचार एजेंसी सम्पादन या श्रमजीवी पत्रकार के कोई अतिरिक्त

जानकारी माँग सकेगा और ऐसा करते समय वह ऐसे दस्तावेज या अन्य कथन भी माँग सकेगा जैसे वह आवश्यक समझे। उससे द्वारा माँगे गए सभी दस्तावेज और कथन अधिलेख के भाग रूप होंगे और वे जाँच के समय समिति के समक्ष रखे जायेंगे।

7 प्रतिरिक्त विशिष्टियाँ आदि भँगाने की शक्ति —समिति, परिवार और लिखित कथन पर विचार करने के पश्चात् मामले की विषयवस्तु से सुसंगत ऐसी प्रतिरिक्त विशिष्टियाँ या दस्तावेज, दोनों पक्षकारों से या किसी पत्रकार से माँग सकेगी जो वह आवश्यक समझे।

8 ऐसे परिवार की नामजूर करना जिसमें पहले जाच की जा चुकी है — (1) यदि परिवार में जाँच करने के दौरान किसी समय समिति को यह प्रतीत होता है कि परिवार की विषयवस्तु सारत वही है या उससे अलग आ जाती है जो किसी एक पूर्ववर्ती परिवार की थी जिस पर परिपद ने इन विनियमों के अधीन विचार किया था, तो समिति परिवारी की यदि वह चाहता है तो सुनवाई करेगी और यदि समिति आवश्यक समझती है तो यथास्थिति, समाचारपत्र, समाचार एजेंसी सम्पादक या अन्य अमजीवी पत्रकार की भी सुनवाई करेगी और अपनी सिफारिश परिपद से करेगी तथा परिपद ऐसे आदेश कर सकेगी जैसे वह आवश्यक समझे और वे पक्षकारों को सम्भव रूप से ससूचित किये जायेंगे।

9 समिति द्वारा जाच— (1) सुनवाई का समय, तारीख तथा स्थान की सूचना परिवारी तथा यथास्थिति समाचारपत्र, समाचार एजेंसी सम्पादक तथा अमजीवी पत्रकार को रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा दी जायेगी। समिति के समक्ष जाँच के दौरान पक्षकार अपने विषय के समर्थन में, सुसंगत साक्ष्य मौखिक या दस्तावेजी, प्रस्तुत कर सकेंगे तथा अपनी बात कह सकेंगे।

(2) जाँच की समाप्ति पर, समिति परिवार में अन्तर्विष्ट अभिकथनों पर कारणों सहित अपने निष्कर्षों की रिपोर्ट देगी और मामले का अधिलेख परिपद को भेजेगी।

10 परिपद का विनिश्चय—(1) परिपद मामले का अधिलेख देखने के बाद अपना विनिश्चय देते हुए आदेश पारित करेगी या समिति की ओर आगे ऐसी जाँच जती परिपद आवश्यक समझे, करने के लिए मामला वापस भेज सकेगी तथा उसकी रिपोर्ट प्राप्त होने पर मामला निपटा सकेगी।

(2) प्रत्येक मामला उपस्थित तथा परिपद के मत देने वाले सदस्यों के बहुमत से अवधारित किया जायेगा और मत बराबर होने पर अध्यक्ष का निर्णायक मत होगा और वह उसका प्रयोग करेगा।

परिवादी स यह माग कर सकेगा कि वह एसी अध्यक्षता का अनुपालन करे और परिवाद को ऐसे समय के भीतर जो वह इस बाबत नियत करे, पुन प्रस्तुत करे ।

(2) परिवादी को परिवाद वापिस कर दिए जाने के कारण बताए जायेंगे ।

5 नोटिस जारी करना — यथासाध्य शीघ्र और परिवाद की प्राप्ति की तारीख से 15 दिन के पश्चात् अध्यक्ष के निर्देश के अधीन परिवाद की एक प्रति उस समाचारपत्र समाचार एजेंसी, सम्पादक या श्रमजीवी पत्रकार को भेजी जाएगी जिसके विरुद्ध विनियम 3 के अधीन परिवाद किया गया है । एसी प्रति के साथ ही एक नोटिस देकर तथा स्थिति, समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, सम्पादक या श्रमजीवी पत्रकार से इस बाबत कारण बताने की अध्यक्षता की जाएगी कि अधिनियम की धारा 14 के अधीन कारवाई क्या न की जाए परंतु समुचित मामला में अध्यक्ष एसी सूचना के जारी किए जाने के लिए समय में वृद्धि, स्वविवेकानुसार कर सकेगा

परंतु यह और कि यदि अध्यक्ष की यह राय है कि जांच करन के लिए कोई पर्याप्त कारण नहीं है तो ऐसे समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, सम्पादक या श्रमजीवी पत्रकार को कारण बताने का नोटिस जारी न करने का विनिश्चय कर सकता है । अध्यक्ष परिपद के पहले अधिवेशन में 'कारण बताओ' नोटिस जारी न करने में विनिश्चय करने के कारण बताएगा और परिपद ऐसे आदेश पारित कर सकेगा जैसे वह ठीक समझे ।

(2) उक्त उप विनियम (1) के अधीन जारी की गई सूचना सम्बंधित समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, सम्पादक या श्रमजीवी पत्रकार को रजिस्ट्रीकृत रसीदी डाक द्वारा, परिवाद में बताए गए पते पर भेजी जाएगी ।

6 लिखित कथन फाइल करना — (1) जिस समाचारपत्र समाचार प्रतिकरण, सम्पादक या श्रमजीवी पत्रकार के विरुद्ध परिवाद किया गया है, वह विनियम 5 के अधीन परिवाद की प्रति या नोटिस तामील होने की तारीख से चौदह दिन के भीतर या उस अतिरिक्त समय के भीतर जो अध्यक्ष इस बाबत अनुज्ञात करें परिवाद के उत्तर में कोई लिखित कथन प्रस्तुत कर सकेगा ।

(2) लिखित कथन प्राप्त होने पर उसकी एक प्रति परिवादी को, उसकी जानकारी के लिए अग्रप्रेषित की जाएगी ।

(3) परिवाद या लिखित कथन प्राप्त होने के पश्चात्, अध्यक्ष यदि वह आवश्यक समझता है तो उस किसी विषय के स्पष्टीकरण के लिए जो किसी परिवाद या लिखित कथन से प्रकट हुआ है, यथास्थिति, परिवादी से या प्रत्यार्थी समाचारपत्र, समाचार एजेंसी सम्पादक या श्रमजीवी पत्रकार से कोई अतिरिक्त

जानकारी माँग सकेगा और ऐसा करते समय वह ऐसे दस्तावेज या अन्य कथन भी माँग सकेगा जैसे वह आवश्यक समझे । उसके द्वारा माँगे गए सभी दस्तावेज और कथन अभिलेख के माँग रूप होंगे और वे जाच के समय समिति के समक्ष रचे जायेंगे ।

7 अतिरिक्त विशिष्टियाँ आदि भंगाने की शक्ति —समिति, परिवाद और लिखित कथन पर विचार करने के पश्चात् मामले की विषयवस्तु से सुसंगत ऐसी अतिरिक्त विशिष्टियाँ या दस्तावेज दोना पक्षकारों से या किसी पत्रकार से माँग सकेगी जो वह आवश्यक समझे ।

8 ऐसे परिवाद को नामजूर करना जिसमें पहले जाच की जा चुकी है — (1) यदि परिवाद में जाच करने के दौरान किसी समय समिति को यह प्रतीत होता है कि परिवाद की विषयवस्तु सारत वही है या उसके अंतर्गत आ जाती है जो किसी एक पूर्ववर्ती परिवाद की थी जिसे पर परिपद ने इन विनियमों के अधीन विचार किया था, तो समिति परिवादी की, यदि वह चाहता है तो सुनवाई करेगी और यदि समिति आवश्यक समझती है तो, यथास्थिति, समाचारपत्र समाचार एजेंसी सम्पादक या अन्य थमजीवी पत्रकार की भी सुनवाई करेगी और अपनी सिफारिश परिपद से करेगी तथा परिपद ऐसे आदेश कर सकेगी जैसे वह आवश्यक समझे और वे पक्षकारों को सम्यक् रूप से समूचित किये जायेंगे ।

9 समिति द्वारा जाच— (1) सुनवाई का समय, तारीख तथा स्थान की सूचना परिवादी तथा यथास्थिति समाचारपत्र, समाचार एजेंसी, सम्पादक तथा थमजीवी पत्रकार को रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा दी जायेगी । समिति के समक्ष जाच के दौरान पक्षकार अपने विषय के समर्थन में सुसंगत साक्ष्य मौखिक या दस्तावेजी, प्रस्तुत कर सकेंगे तथा अपनी बात कह सकेंगे ।

(2) जाच की समाप्ति पर समिति परिवाद में अन्तर्विष्ट अभिकथनों पर कारणों सहित अपने निष्कर्षों की रिपोर्ट देगी और मामले का अभिलेख परिपद को भेजेगी ।

10 परिपद का विनिश्चय—(1) परिपद मामले का अभिलेख देखने के बाद अपना विनिश्चय दत्त हुए आदेश पारित करेगी या समिति की धार धारो ऐसी जाच जसी परिपद आवश्यक समझे, करने के लिए मामला वापस भेज सकेगी तथा उसकी रिपोर्ट प्राप्त होने पर मामला निपटा सकेगी ।

(2) प्रत्येक मामला उपस्थित तथा परिपद के मत देने वाले सदस्या के बहुमत से अवधारित किया जायेगा और मत बराबर होने पर, अध्यक्ष का निर्णायक मत हागा और वह उसका प्रयोग करेगा ।



(3) मामले में परिपद का आदेश पक्षकारों को लिखित रूप में सूचित किया जायेगा ।

11 पक्षकारों की उपस्थिति—इन विनियमों के अधीन किसी जांच में, संपादक समाचार एजेंसी या अन्य श्रमजीवी पत्रकार या सरकार सहित कोई प्राधिकारी या संपादक द्वारा समाचारपत्र, जिसके विरुद्ध परिवाद किया गया है, व्यक्तिगत रूप में या, यथास्थिति समिति अथवा परिपद की अनुमति से बाउसेल या सम्भवतः प्राधिकृत प्रतिनिधि द्वारा उपस्थित हो सकेगा ।

12 सदस्यों की कुछ मामलों में विचार विमर्श करने तथा मत देने संबंधी शक्ति पर नियन्त्रण—समिति का कोई भी सदस्य तथा परिपद का कोई भी सदस्य किसी ऐसे परिवाद पर, जो समिति या परिपद के अधिवेशन में विचाराधीन पेश है हो रहे विचार विमर्श में उस दशा में भाग नहीं ले सकेगा और न मत दे सकेगा । जब वह ऐसे मामले में व्यक्तिगत रूप से संबधित है या जिसमें उसका या उसका मागीदार का प्रत्यक्ष हित है, या जिसमें वह मुवकिल की ओर से वृत्तिक रूप में या यथास्थिति किसी समाचारपत्र समाचार एजेंसी सम्पादक या अन्य श्रमजीवी पत्रकार के अधिकारों या प्रतिनिधि के रूप में हित रखता है ।

13 स्वप्रेरणा से कारवाही करने की शक्ति—अध्यक्ष, किसी भी ऐसे मामले में सम्बध में जो अधिनियम की धारा 14 (1) के अंतर्गत आता है या अधिनियम की धारा 13 (2) के अंतर्गत आने वाले किसी भी मामले में संबधित है या उसके बारे में है, स्वप्रेरणा से यथास्थिति नोटिस जारी कर सकेगा या कारवाई कर सकेगा और तब नियम 4 के भागों इन नियमों में विहित प्रक्रिया का अनुसरण उसी प्रकार किया जायेगा जिस प्रकार कि विनियम 3 के अधीन परिवाद में किया जाता है ।

14 धारा 13 के अधीन परिवादों के बारे में प्रक्रिया—अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन परिवादों के बारे में इन नियमों द्वारा विहित प्रक्रिया, जहाँ तक हो उन परिवादों तथा अभ्यावेदनो पर भी लागू होगी जो धारा 13 के उपबन्धों के अंतर्गत आने वाले किसी विषय में संबध में परिपद प्राप्त करे ।

15 इन विनियमों में जिन मामलों को लक्षित नहीं किया गया है उनके बारे में प्रक्रिया—परिपद तथा समिति को किसी भी ऐसे मामले में जिसकी बाबत इन विनियमों में कोई उपबन्ध नहीं किया गया है या अपर्याप्त उपबन्ध किया गया है, के बारे में अपने विनियम और प्रक्रिया बनाने की शक्ति है और उपयुक्त मामलों में जांच बंद करने में करने की भी शक्ति है ।

## प्रेस परिषद् के यहाँ शिकायत कैसे करें

कोई भी व्यक्ति किसी समाचारपत्र के विरुद्ध पत्रकारिता के श्रेष्ठ तथा रुचि में भाग्य नतिक सिद्धांत के व्यवधान के विरुद्ध प्रेस परिषद् में शिकायत निवेशित कर सकता है। शिकायतकर्ता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वे उस समाचार से परिवेदित अथवा सीधे सम्बद्ध हों। आरोपित व्यवधान समाचारपत्र में किसी समाचार अथवा वक्तव्य के प्रकाशन अथवा अप्रकाशन अथवा अथ सामग्री जैसे चित्र चित्र माचित्र मनोरंजन सामग्री अथवा विज्ञापनों के रूप में हो सकत हैं। जनता में से कोई भी व्यक्ति पत्रकारों के व्यावसायिक दुरुचरण के विरुद्ध भी शिकायत कर सकता है चाहे वह व्यक्ति समाचारपत्र कार्यालय का कोई पत्रकार हो अथवा स्वतंत्र पत्रकार। किसी समाचार अभिकरण द्वारा पारेषित समाचार, जो किसी भी माध्यम से प्रसारित किया गया हो, के विरुद्ध भी शिकायत की जा सकती है।

अगामाय भारतीय राजपत्र में दिनांक 14 नवम्बर, 1979 को प्रकाशित प्रेस परिषद् (जांच प्रक्रिया) विनियम 1979 की धारा 3 (1)(च) के अंतर्गत परिषद् में शिकायत निवेशित करने हेतु कालबद्धता निर्धारित की गई है अधिधानत निकाय तथा साप्ताहिकों में किसी भी सामग्री के प्रकाशन अथवा अप्रकाशन अथवा समाचार अभिकरणों द्वारा सामग्री के प्रेषण के दो महीने के भीतर तथा अथ सभी के सम्बंध में चार महीने के भीतर यद्यपि शिकायत में सदमित सम्बद्ध पूर्व प्रकाशन लक्षित किये जा सकत हैं। किसी सम्पादक अथवा श्रमजीवी पत्रकार द्वारा व्यावसायिक दुरुचरण के विरुद्ध शिकायत चार महीने की अवधि में निवेशित कर दी जानी चाहिए।

### प्रथमतः सम्पादक को लिखना

जांच विनियमों के अंतर्गत यह आवश्यक है कि शिकायतकर्ता समाचारपत्र के सम्पादक को लिख कर उनका ध्यान प्रथमतः पत्रकारिता नीति अथवा जनरुचि के विरुद्ध आरोपित व्यवधान से सम्बद्ध समाचार को शोर आह्वय करे। ऐसे पूर्व सदभ किन्ही विषय को प्रथम दृष्टांत में निवटने का अवसर देते हैं तथा इस प्रकार परिषद् को शिकायत निवेशित किये जाने से पूर्व प्रतिवादी को प्रतिकारी कार्यवाही हेतु उचित अवसर प्रदान करत हैं। यह नियम आवश्यक है क्योंकि यह सम्पादक को दोषारोपक के परिचय तथा शिकायत के विवरण से अवगत कराता

है। यह संकल्पनीय है कि कुछ मामलों में शिकायतकर्ताओं को असत्य सूचना प्राप्त हुई हो भयवा तथ्यों का अपनिरूपण किया गया हो। दूसरी ओर यह एक अनवधान त्रुटि का मामला हो सकता है जिसे सम्पादक स्वीकार और सशोधित करने हेतु तत्पर हो। यदि भावी शिकायतकर्ता सतुष्ट हो तो मामला बहो समाप्त हो सकता है।

जहाँ समाचारपत्र के लक्षित किये जान के पश्चात् कोई व्यक्ति शिकायत का आगे बढ़ाने की इच्छा रखता है, उसे सम्पादक के साथ हुए पत्र-व्यवहार की प्रतियाँ भी शिकायत के साथ सलग्न करनी चाहिए, यदि सम्पादक को ओर से कोई उत्तर प्राप्त न हो तो यह तथ्य शिकायत में उल्लिखित करना चाहिए।

शिकायतकर्ता को अपनी शिकायत में उस समाचारपत्र सम्पादक अथवा पत्रकार का नाम तथा पता लिखना चाहिए जिसके विरुद्ध शिकायत की गई हो। शिकायत के साथ प्रकाशित समाचार की मूल कतरन भी प्रेषित की जानी चाहिए। शिकायतकर्ता को लिखना चाहिए कि शिकायती समाचार अथवा अनुच्छेद किस प्रकार आपत्तिजनक है। उन्हें अथ सम्बद्ध विवरण भी यदि कोई हो ता निवेशित करने चाहिए।

किसी सामग्री के अप्रकाशन की शिकायत के मामले में शिकायतकर्ता को लिखना चाहिए कि उसमें किस प्रकार पत्रकारिता नीति का विच्छेद हुआ है।

परिपद किसी ऐसे मामले पर विचार नहीं करती जो न्यायालय में यायाधीन हो। शिकायतकर्ता को धोषणा करनी होगी कि अपनी संपूर्ण जानकारी तथा विश्वास के अनुसार उन्होंने परिपद के समक्ष सम्पूर्ण सम्बद्ध तथ्य प्रस्तुत कर दिये हैं तथा शिकायत में कथित किसी विषय के सम्बन्ध में किसी न्यायालय में कोई मामला यायाधीन नहीं है। एक अथ धोषणा करना भी आवश्यक है कि "परिपद द्वारा जांच की अवधि में शिकायत में कथित मामला न्यायालय की किसी कायदाही का विषय बन जाता है तो वे इसकी सूचना परिपद को देंगे।"

(शिकायतकर्ता को अपने स्वयं के हित में सब प्रकरणों में पूर्ण शिकायत निवेशित करनी चाहिए अर्थात् उन्हें आक्षेपित समाचार की कतरन सलग्न करनी चाहिए सम्पादक का ध्यान आकृष्ट करना तथा उपरोक्त उल्लिखित आवश्यक धोषणायें भी अप्रप्रेषित करनी चाहिए। आगे, उन्हें प्रारम्भ में ही मामले का सम्पूर्ण विवरण प्रेषित करना चाहिये जिससे मामले पर शीघ्र कार्यवाही की जा सके। यदि किसी विशेष स्तर पर वह अपनी शिकायत आगे नहीं बढ़ाना चाहते तो शिकायतकर्ता को सुझाव दिया जाता है कि वह परिपद को तत्काल अपनी इच्छा से अवगत करायें।)

प्रेस की स्वतंत्रता को खतरा

मामाचारपत्र, पत्रकार अथवा कोई भी संस्थान अथवा व्यक्ति, केन्द्रीय अथवा राज्य सरकार अथवा किसी संगठन अथवा व्यक्ति के विरुद्ध प्रेस की स्वतंत्रता कायवाही में हस्तक्षेप अथवा प्रेस की स्वतंत्रता पर अतिशय के विरुद्ध शिकायत कर सकता है। ऐसी शिकायत में कथित अतिरिक्त का सम्पूर्ण विवरण होना चाहिए जिस पर परिपक्व पूर्वोलिखित जांच प्रक्रिया के अनुसरण में कार्य करेगी।

परिपक्व द्वारा व्यक्त विचार दो महत्वपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं अभिधानत (1) प्रेस की स्वतंत्रता का दुरुपयोग बिना किसी का ध्यान आकृष्ट किये अथवा तब तक सिद्ध नहीं होता जब तक कि कोई उस और ध्यान आकृष्ट न करे अथवा विरोध के बिना घटित नहीं हो सकता तथा (2) प्रेस को स्वयं के हित में अश्लील अथवा अशुभ प्रभावजनक लेख प्रकाशित नहीं करने चाहिए अर्थात् ऐसे लेखन जो स्वयं प्रेस सहित गठित परिपक्व जमी किसी निष्पक्ष निर्णायक समिति द्वारा पत्रकारिता नीतियों के माध्यमता प्राप्त मानकों से निम्न स्तर के माने गये हैं क्योंकि इससे प्रेस की अत्यधिक बहुमूल्य स्वतंत्रता का ही क्षय होगा।

कुछ मामलों में यह देखा गया है कि केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों विज्ञापन विकास, अखबारों कागज अथवा माध्यमता सुविधायें पुनः प्रदान करने हेतु प्रतिकारी कायवाही करती हैं। ऐसे मामलों में, शिकायतकर्ता का यह कतव्य है कि वह परिपक्व को इस विषय में तुरंत सूचित करे तथा यह भी कि वह शिकायत को परिपक्व द्वारा आगे बढ़ाने के इच्छुक है अथवा नहीं। यदि शिकायतकर्ता यह चाहते हैं कि उनकी शिकायतें परिपक्व द्वारा उचित गम्भीय सहित परिचालित की जायें तो यह कायवाही आवश्यक है। (भा. प्रे. प. की वा. रि. 1987 से साभार)



## सुभावात्मक प्रपत्र - 10

किसी समाचारपत्र में प्रकाशित किसी सामग्री अथवा किसी संपादक/श्रमजीवी पत्रकार से पीड़ित व्यक्ति,संगठन द्वारा प्रेस परिपद् में परिवाद

अध्यक्षजी

भारतीय प्रेस परिपद्

फरोदकोट हाउस (भूतल)

कापरनिक्स माग, नई दिल्ली 110001

(परिवादों का नाम मय पूरी पहचान के)

(व्यवसाय/पद)

(डाक का पूरा पता) "

— परिवादी

विरुद्ध

(समाचारपत्र/समाचार एजेंसी का नाम)

द्वारा पद

अथवा

(संपादक/श्रमजीवी पत्रकार का नाम)

पद

(समाचारपत्र/पत्रिका का नाम)

डाक का पूरा पता

— अपरिवादी

परिवाद अंतर्गत धारा 14 (1) प्रेस अधि 1978

संशोधित विनियम-3 प्रेस (जाँच प्रक्रिया) विनियम 1979

श्रीमान्जी

परिवादी अपरिवादी के विरुद्ध निम्न परिवाद प्रस्तुत करता है—

(1) यह है कि अपरिवादी (स्थान)

से प्रकाशित

(समाचारपत्र का नाम)

का संपादक है जो (दिनांक)

के इस समाचारपत्र की इम्प्रिंट लाइन में भी संपादक क रूप में दर्शाया गया है।

(2) यह है कि (समाचारपत्र का नाम)

के

(दिनांक)

के अंक में पृष्ठ संख्या

पर शीर्षक "

"

के नाम से एक लेख/समाचार/मद/रपट/वार्टून/चित्र/विज्ञापन प्रकाशित हुआ है जिसमें पत्रकारिक सदाचार/लोकवृत्ति के स्तर का अतिरल्लघन/वृत्तिक अवचार किया गया है।

(3) यह है कि उक्त सामग्री के प्रकाशन होने के बाद (दिनांक) को इसका एक खण्डन परिवादी ने अपरिवादी के पास प्रकाशनाथ भेजा जिसे भी अपरिवादी ने प्रकाशित नहीं किया और तो और अपरिवादी की ओर से परिवादी को कोई उत्तर भी प्राप्त नहीं हुआ। खण्डन का प्रकाशन न करना भी पत्रकारिक सदाचार का अतिरल्लघन है।

(4) यह है कि सम्बंधित सामग्री का प्रकाशन न तो लोकहित में आवश्यक था और न समीचीन।

(5) यह है कि परिवादी ने सम्बंधित सामग्री का प्रकाशन जानबूझकर परिवादी को बदनाम करने के लिए किया है जिससे परिवादी की मानहानि हुई है तथा परिवादी की उसके मित्रों रिश्तेदारों व अन्य परिचितों के बीच छवि गिरी है।

(6) यह है कि प्र प (जांच प्रक्रिया) विनियम 1979 के विनियम 3 (1) (च) के तहत यह परिवाद अदर अवधि है।

#### अथवा

यह है कि प्रे प (जांच प्रक्रिया) विनियम 1979 के नियम 3 (1) (च) के तहत निर्धारित अवधि के अदर यह परिवाद पेश नहीं किया जा सका क्योंकि (विलम्ब का पर्याप्त कारण बताएँ)

“ “ “  
विलम्ब माफ करने योग्य है।

(7) यह है कि प्रकाशित सामग्री की कटिंग तथा संपादक को भेजे गए खण्डन की एक प्रति व संपादक से हुए पत्र-व्यवहार की एक-एक प्रति के साथ साथ (निम्न दस्तावेजात) इस परिवाद के साथ सलग्न हैं।

अतः यह परिवाद ग्रहण किया जाकर इसका समाधान लिया जावे तथा आवश्यक जांचोपरान्त अपरिवादी के विरुद्ध कानून सम्मत निलय लेने की कृपा करें।

स्थान.....

दिनांक

“ “

“ “  
(हस्ताक्षर परिवादी)

## उद्घोषणा

(1) यह है कि मुझ परिवार के सर्वोत्तम पान और विश्वास के अनुसार मैंने श्रीमान् के समक्ष सभी सुसंगत तथ्य प्रस्तुत कर दिये हैं और

(2) इस परिवार में अभिकथित किसी विषय के संबंध में किसी न्यायालय में कोई कारवाई सम्भव नहीं है और

(3) यह है कि श्रीमान् के यहाँ जांच सम्भव रहने के दौरान परिवार में अभिकथित कोई विषय किसी न्यायालय में चल रही किसी कारवाई की विषय वस्तु हो जाता है तो परिवारी उसकी सूचना श्रीमान् को तुरन्त देगा ।

स्थान

दिनांक

(हस्ताक्षर परिवारी)

विशेष - (1) परिवारी को चाहिए कि वह अपनी समस्या के अनुरूप इस परिवार में परिवर्तन कर ले । यह परिवार सिर्फ एक सुझावार्थन मॉडल है ।

(ii) अच्छा हो परिवार की विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण वर्गीकृत रूप में ही हो तथा वह सुस्पष्ट व साफ-साफ अक्षरों में लिखी या टंकित की हुई हो ।

(iii) अच्छा हो, जितना अपरिवारी बनाए जाए, उनके लिए प्रतिवाद की एक-एक अतिरिक्त प्रतियाँ और साथ में सलग्न हो तथा ऐसी प्रतियों पर परिवारी द्वारा मूल परिवार से हू-बहू होने का सत्यापन भी अंकित हो ।

(iv) अच्छा हो हिंदी में परिवार भेजन के साथ साथ उसका अंग्रेजी भाषा में अनुवाद भी सलग्न हो ।

सुभावात्मक प्रपत्र - 11

किसी समाचारपत्र में प्रकाशित किसी सामग्री अथवा किसी संपादक/अभ्यक्षकी पत्रकार से पीडित व्यक्ति/संगठन द्वारा प्रेस परिषद में प्रस्तुत परिवाद के विरुद्ध 'लिखित-कथन' (जवाब)

अध्यक्षजी

भारतीय प्रेस परिषद

फरीदकोट हाउस (भूतल)

कापरनिक्स भाग, नई दिल्ली 110001

(परिवादी का नाम)

विरुद्ध

(अपरिवादो का नाम)

परिवाद प्रकरण संख्या

(परिषद द्वारा भेजे गए नोटिस में जो केस नम्बर दिया गया है, उसका मदन दें।)

लिखित कथन अन्तगत विनियम-6 प्रेस (जांच प्रक्रिया) विनियम 1979

धीमानुजी

अपरिवादा समित परिवाद के विरुद्ध निम्न 'लिखित-कथन' प्रस्तुत करता है-

(1) यह है कि परिवाद के मदन 1 में वर्णित दिनांक को (स्थान) से प्रकाशित समाचारपत्र का संपादक होता तथा इस दिनांक के अंक में (शीषक) " " ' से प्रकाशित सामग्री का प्रकाशन स्वीकार है। शेष तथ्य स्वीकार नहीं है।

(2) यह है कि परिवाद के मदन 3 में वर्णित संघन अपरिवादी को प्राप्त ही नहीं हुआ अतः उसके संघ में परिवादी को कोई जवाब देने व उसे प्रकाशित किये जान का सवाल ही नहीं उठता।

(3) यह है कि संबंधित सामग्री का प्रकाशन लोकहित में किया गया था। अतः इसके प्रकाशन में पत्रकारिक सदाचार/साक्षरि के स्तर का अति-संपन्न/वृत्तिक प्रवृत्ति लिए जाने का सवाल ही नहीं उठता।

(4) यह है कि परिवादी एक सोशलिस्ट है जिसके विरुद्ध इसके विभाग न आम जनता की कई शिकायतों व प्राप्त होने पर एक जांच समिति बठाई थी। उस जांच समिति की रिपोर्ट का सारत भाग प्रकाशित किया गया है जिसका प्रकाशन



समीचीन होने व साथ-साथ लोकहित में भी था। इस सामग्री के प्रकाशन में अपरिवादी की कोई दुर्भावना नहीं थी क्योंकि अपरिवादी की ओर से कुछ भी नमन मित्र नहीं लगाया गया है।

(5) यह है कि परिवार की जाँच कराने हेतु जो आघार दिए गए हैं, वे पर्याप्त नहीं हैं।

(6) यह है कि परिवार के मद में 6 में परिवार प्रस्तुत करने में जो बिलम्ब के कारण दिए गए हैं वे बनावटी हैं। सारे कारण साक्ष्य को मोहताज हैं। परिवार अधि बाहर हान के कारण नामजूर करने योग्य है।

(7) यह है कि यह लिखित-कथन अदर अधि प्रस्तुत है।

(8) यह है कि शप उज्जात वरवक्त बहस निवेदन किए जायेंगे।

अतः जवाब पेश कर निवेदन है कि परिवार का सक्षान नहीं लिया जाव। अपरिवादी के हक में प्राकृतिक याय की दृष्टि से यदि कोई अन्य अनुतोष देय हो तो वह भी अपरिवादी को दिलाया जाव।

स्थान

(हस्ताक्षर अपरिवादा)

दिनांक

डाक का पूरा पता

विशय - परिवार के सुझावात्मक मॉडल के फुटनोट्स में जिन चार बातों की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है उनका तदानुसार ध्यान 'लिखित कथन प्रस्तुत करते समय भी रखना वांछनीय है।

सुभावात्मक प्रपत्र-12

प्रेस की स्वतन्त्रता के हनन/उत्पीडन आदि को लेकर किसी समाचारपत्र द्वारा किसी व्यक्ति/भगठन के विरुद्ध शिकायत

अध्यक्षजी

भारतीय प्रेस परिषद्

फरीदकोट हाउस (भूतल)

कापरनिक्स माग, नई दिल्ली 110001

(परिवादी का नाम)

(पद)

(समाचारपत्र का नाम)

(प्रकाशन स्थल)

डाक का पता

- परिवादी

विरुद्ध

(नाम)

(पद)

(स्थान)

का नाम)

(डाक का पता)

..

- अपरिवादी

परिवाद अतगत धारा 13 (2) प्रे प अधि 1978 सपठित विनियम  
सहया 14 व 3 प्रे प (जांच प्रक्रिया) विनियम 1979

श्रीमान्जी

परिवादी, अपरिवादी के विरुद्ध निम्न परिवाद प्रस्तुत करता है —

(1) यह है कि परिवादी के समाचारपत्र

के दिनांक

"को (शीपक)

" के नाम से एक

समाचार पृष्ठ सुरया

पर प्रकाशित हुआ है।

(2) यह है कि उक्त समाचार से कुपित होकर अपरिवादी ने दिनांक

को कई व्यक्तियों के सम्मुख यह धमकी दी कि परिवादी को भूठे वेस में एसा पसाजंगा कि दात्री-नानी सब याद आ जाएगी। परिवादी से कहा गया कि इस समाचार का सडन इस आशय का वह स्वय निकाले कि यह समाचार भूठा था। परिवादी ने अपरिवादी से कहा कि यह अपने ही समाचार का स्वय बसे सण्डन कर सकता है जबकि उसने तो सारी जांच-पडताल के बाद इसे छपा है। यदि

अपरिवादी अपनी ओर से खण्डन देना चाहे ता उस प्रकाशित किया जा सकता है । इस पर अपरिवादी ने परिवादी को फौस गालिया दीं ।

(3) यह है कि अपरिवादी जिले में एक प्रभावशाली अकसर है और वह जिलाधीश पर दबाव डाल रहा है कि परिवादी के समाचारपत्र का घोषणा-पत्र निरस्त कर दे । इसके अलावा वह अपने कई लोगों से परिवादी को भाए दिन घमका रहा है जिसके कारण परिवादी के कायम व्यवधान भा पडा है ।

(4) यह है कि अपरिवादी के विरुद्ध परिवादी के अखबार में जो कुछ छपा है वह स्वच्छ पत्रकारिता के सिद्धान्तों के अनुसार छपा है ।

(5) यह है कि अपरिवादी का कृत्य प्रेस की स्वतंत्रता का हनन करने वाला है । दिनांक की घटना के बाद परिवादी अपने समाचार पत्र के प्रकाशन में मानसिक रूप से उत्पीडन महसूस कर रहा है ।

अतः यह परिवाद ग्रहण करे तथा आवश्यक जांच करने के बाद अपरिवादी के विरुद्ध कानून सम्मत नियम लेने की कृपा करे ।

स्थान

दिनांक

(हस्ताक्षर परिवादी)

### उद्घोषणा

(1) यह है कि मुझ परिवादी के सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के अनुसार मैंने श्रीमान् के समक्ष सभी सुसंगत तथ्य प्रस्तुत कर दिए हैं और

(2) इस परिवाद में अभिकथित किसी विषय के संबंध में किसी न्यायालय में कोई कारवाई लम्बित नहीं है और

(3) यह है कि श्रीमान् के यहाँ जांच लम्बित रहने के दौरान परिवाद में अभिकथित कोई विषय किसी न्यायालय में चल रही किसी कारवाई की विषय वस्तु हो जाता है तो परिवादी उसकी सूचना श्रीमान् को तुरंत देगा ।

स्थान

दिनांक

(हस्ताक्षर परिवादी)

विशेष - (1) चूंकि इस प्रकार की शिकायत के लिए कोई भवधि सीमा निर्धारित नहीं की गई है फिर भी ऐसी शिकायत एक युक्तियुक्त समय में ही प्रस्तुत की जानी चाहिए ।

(11) परिवाद के पूर्ववर्ती मॉडल में फुटनोट्स में त्रिन चार बातों की ओर ध्यान आकषिप्त किया गया है उनका तदनुसार ध्यान इस प्रकार की शिकायत करते समय भी रखना चाहिए ।

### सुभावात्मक प्रपत्र - 13

प्रेस की स्वतंत्रता के हनन/उत्पीडन आदि को लेकर किसी समाचारपत्र द्वारा किसी व्यक्ति/संगठन के विरुद्ध प्रेस परिपत्र में की गई शिकायत के विरुद्ध 'लिखित कथन' (जवाब)

अध्यक्षजी

भारतीय प्रेस परिपत्र

फरीदकोट हाउस (भूतल)

कापरनिक्स मार्ग, नई दिल्ली - 110001

(परिवादी का नाम)

विरुद्ध

(अपरिवादी का नाम)

परिवाद प्रकरण सत्या

(परिपत्र द्वारा भेजे गए नोटिस में जो केस नम्बर दिया गया है उसका सदम दें।)

लिखित कथन अन्तगत विनियम - 14, 3 व 6 प्रे प (जांच प्रक्रिया)  
विनियम 1979

श्रीमान्जी

अपरिवादी सदर्भित परिवाद के विरुद्ध निम्न लिखित कथन प्रस्तुत करता है -

(1) यह है कि परिवाद के मद न 1 में बर्णित दिनांक को (शीघ्र) के नाम से परिवादी के समाचारपत्र में एक समाचार का पृष्ठ सत्या पर प्रकाशित होना स्वीकार है परिवाद के शप मद स्वीकार नहीं है।

(2) यह है कि सबधित समाचार के प्रकाशन के बाद परिवाद के मद न 2 में बर्णित दिनांक को अपरिवादी ने परिवादी से मात्र यह कहा या कि परिवादी ने सारा समाचार मेरे विभाग में भर विरुद्ध वायरल लाँची के इशारे पर छापा है जो सरासर यगुनियाम व गलत है। यह समाचार मुझे बदनाम करने की नियत से छापा गया है। अपरिवादी ने परिवादी को न तो कभी कोई पत्रकी दी और न कभी कोई फौस गालियाँ दी और न कभी जिलाधीश से परिवादी के समाचारपत्र के घापणा-पत्र को निरस्त करने के लिए दबाव डाला और न अपरिवादी द्वारा ऐसा बतमान म किया या रहा है। अपरिवादी प्रत की स्वतंत्रता में पूरा-पूरा विश्वास करता है।

(3) यह है कि परिवादी ने परिवाद के मद न 2 में वर्णित दिनांक के छह माह बाद परिवाद पेश किया है जिसके कारण परिवादी एक युक्तियुक्त समय में श्रीमान् से अनुतोष प्राप्त करने का ह्जदार नहीं रहा ।

(4) यह है कि संबंधित समाचार के प्रकाशन के बाद दिनांक को अपरिवादी ने अपने वकील से मा द स की धारा 500 के तहत मानहानि करने के कारण परिवादी को एक रजिस्टर्ड नोटिस भिजवाया जिसका जवाब परिवादी ने तोड़ मरोड़ कर दिया ।

(5) यह है कि परिवादी चाहता था कि अपरिवादी परिवादी में विरुद्ध 'यायालय में कोई कारवाई नहीं कर, इसी उद्देश्य को लेकर परिवादी ने अपरिवादी को धमकाने की गरज से श्रीमान् के यहाँ यह परिवाद प्रस्तुत किया है ।

(6) यह है कि परिवाद में अभिव्यक्त विषय 'यायालय में लंबित हो चुका है । 'यायालय में अपरिवादी ने परिवादी के विरुद्ध मा द स की धारा 500 के तहत एव इस्तगाला पेश किया हुआ है जिसकी सुनवाई की प्रगती दिनांक है ।

(7) यह है कि परिवाद में वर्णित उद्धोषणा के मद न 3 में वर्णित कथन की परिवादी ने पालना नहीं की जबकि यह तथ्य परिवादी की जानकारी में था ।

(8) यह है कि परिवाद में जाँच कराने हेतु जो आघार दिए गये हैं वे पर्याप्त नहीं हैं ।

(9) यह है कि शेष आपत्तियाँ वरबत्त बहस निवेदन की जाएँगी ।

अतः जवाब पेश कर निवेदन है कि परिवाद को नामजूर किया जावे । अपरिवादी के हक में प्राकृतिक 'याय की दृष्टि से यदि कोई अन्य अनुतोष उत्पन्न होता हो तो वह भी अपरिवादी को दिलाई जावे ।

'यायालय की कारवाई दिनांकित की एक सत्य प्रतिलिपि साथ में संलग्न है ।

स्थान

(हस्ताक्षर अपरिवादी)

दिनांक

ठाक का पूरा पता

- - - -

बिशेष — परिवाद के सुझावत्मक मॉडल के फुटनोटस में जिन चार बातों की ओर ध्यान आकषिप्त किया गया है उनका तदनुसार ध्यान 'लिखित-कथन प्रस्तुत करते समय भी रखना बाध्यनीय है ।

## भारतीय प्रेस परिषद् द्वारा निर्मित प्रकरण धारा 13 के अन्तर्गत शिकायतें

- सरकार द्वारा विज्ञापनों का दबाव के रूप में प्रयोग प्रेस की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप का प्रयत्न है। (भा प्रे प, वा रि 1984, पृ स 40, नि दि 12 मार्च, 84)
- असहाय व्यापसगत - विज्ञापन देर से प्रकाशित होने से उसका महत्व ही समाप्त हो गया। अतः विज्ञापन विल अस्वीकृत करना व्यापसगत था। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 63)
- मानहानिजनक लेख के आधार पर विज्ञापना पर रोक असाय - गुजरात सरकार द्वारा इस तथ्य के आधार पर विज्ञापन निकासन रोक दिए गए कि शिकायतकर्ता का समाचारपत्र मानहानिजनक प्रवृत्ति के कुछ लेखों के प्रकाशन में सलग्न था। गुजरात सरकार के इस कदम को प्रेस परिषद् ने उचित नहीं माना तथा इसे प्रशासन द्वारा उत्पीडन का स्पष्ट मामला माना। (भा प्रे प, वा रि 1985, पृ स 22)
- पीतपत्रकारिता प्रेस परिषद् उचित वाक्पीठ - यदि कोई समाचारपत्र अनतिक कायवाही में सलग्न था तो राज्य सरकार को प्रेस परिषद् अधि नियम 1978 की धारा 14 के अन्तर्गत भारतीय प्रेस परिषद् से शिकायत करनी चाहिए थी। (भा प्रे प, वा रि 1985, पृ स 22)
- हथकड़ी लगाना व्यापचित नहीं था - यह पुलिस की प्रतिशोधात्मक कायवाही के संबंध में पत्रकार के उत्पीडन का मामला था। (भा प्रे प वा रि 1986, पृ स 21) शिकायतकर्ता को हथकड़ी लगाना अत्यधिक अनुचित था और गम्भीर रूप से निंदात्मक था। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 31) हथकड़ी लगाना स्पष्ट रूप से असायपूण था, जिससे प्रतिशोध उत्पन्न हुआ अतः स्पष्ट प्रवृत्ति शिकायतकर्ता को उत्पीडन करने की थी। (भा प्रे प वा रि 1986 पृ स 39) किसी पत्रकारिता सम्बन्धी अतिविधि के लिए साधारणतः पत्रकारों को हथकड़ी नहीं लगानी चाहिए। (भा प्रे प वा रि 1986, पृ स 90)
- साम्प्रदायिक लेखन के कारण प बंगाल सरकार द्वारा विज्ञापनों को रोकना जाना भा प्रे परिषद् ने व्यापचित माना। सरकारी अधिवक्ता के इस निवेशन को सतोपजनक रूप से रिकार्ड रखा गया कि जब राज्य सरकार

सतुष्ट हो जाय कि समाचारपत्र ने अपना रवैया वास्तव में बदल दिया है तथा समाचारपत्र ने साम्प्रदायिक खेत प्रशोधित करना रोक लिया है तब समाचारपत्र को विनापन पुनः जारी करने के प्रश्न पर विचार किया जा सकेगा। (भा प्रे प वा रि 1986 पृ स 68)

- शिकायतकर्ता के समाचारपत्र को विनापन विनापन की सूची से निकालने के आदेश शिकायतकर्ता को सुनवाई का उचित अवसर दिये बिना ही पारित कर दिए गए। परिपद ने मन व्यक्त किया कि आशोधित आदेश बिहार सरकार द्वारा वापिस लिये जाते चाहिए तथा विनापन पुनः जारी किए जाने चाहिए। राज्य सरकार के लिए शिकायतकर्ता को सुनवाई का उचित अवसर देने के पश्चात् शिकायतकर्ता के विरुद्ध ऐसी कार्यवाही आवश्यक हो सकती है। (भा प्रे प, वा रि 1956 पृ स 72)
- डीएवीपी के विरुद्ध सशोधित विवाद परिसंचरण और विनापन दर के प्रश्न से संबंध था। डीएवीपी ने विनापन निलम्बित कर दिया थे क्योंकि डीएवीपी का विचार था कि परिसंचरण सध्या गनत थी तथा उन्होंने अपनी नीति के अनुसार कार्यवाही की थी जो कि पक्षगतपूर्ण नहीं थी। इसे परिपद ने आणित्यिक प्रवृत्ति का विवाद माना और इससे प्रेस की स्वतंत्रता पर कोई प्रभाव पटना नहीं माना। (भा प्रे प वा रि 1987, पृ स 74)
- सपादक को जनसवकों अथवा सध्याओं के विरुद्ध आरोप लगाने से पूर्व उनकी सध्यात्मक यथायथा का उचित सत्यापन करना चाहिए। (भा प्रे प वा रि 1984, पृ स 66, नि दि 7 जून, 1984)
- शिकायत में कहा गया कि पश्चिम बंगाल के गृह विभाग ने मई, 1982 में एक गुप्त परिपत्र निष्कासित किया जिसमें पुलिस अधीक्षक से निम्न स्तर के पुलिस अधिकारियों को प्रेस में कोई भी समाचार न देने के निर्देश दिये गये थे और ऐसा अधोधित सेंसरशिप के अंतर्गत किया गया था।

परिपद ने मन प्रकट किया कि आशोधित गोपनीय परिपत्र का उद्देश्य यदि परोक्ष नहीं तो अपरोक्ष था जो प्रेस की स्वतंत्रता पर नियंत्रण था। यदि सरकार की सद्भावना स्वीकार की जाय तो वह आशोधित परिपत्र द्वारा प्रेस की स्वतंत्रता और इस प्रकार सूचना का प्रवाह रोकने के विचार से अत्यधिक प्रतिकूल है। इन परिस्थितियों में परिपद अनुभव करती है कि आशोधित परिपत्र तुरंत वापस ले लिया जाना चाहिए जिससे जिले में समाचारपत्र आसानी से सूचना अभिगम प्राप्त कर सके, अतः शिकायत के अनुमोदन का निर्णय किया गया। (भा प्रे प, वा रि 1984, पृ स 79, नि दि 6 10 84)

- पहले से प्रकाशित सामग्री का पुनः प्रकाशन - भारतीय प्रेस परिषद् का विचार था कि किसी समाचारपत्र में प्रकाशित टिप्पणियाँ और सपादकीय लेख किसी अन्य समाचारपत्र में उचित अभिस्वीकृत अथवा ग्रान्ता प्राप्त किये जाने पर प्रकाशित किये जा सकते हैं। (भा प्रे प वा रि 1984, पृ स 45, 49)
- नियंत्रण का आग्रह - सवेदनात्मक मामलों के संबंध में किसी लेख के लेखन और प्रकाशन के विषय में यह प्रमुखता से एच्चिद्धन है कि उचित नियंत्रण का प्रयोग किया जाना चाहिए तथा कोई लेख अथवा सपादकीय प्रकाशित नहीं होना चाहिए जिसे तनाव उत्पन्न हो अथवा स्थिति में अपवृद्धि हो। समाचारपत्रों और पत्रिकाओं पर विशेष उत्तरदायित्व है तथा उन्हें सब प्रकार की साम्प्रदायिकता, अनुचित और धार्मिक भावनाओं को शात करने तथा सब वर्गों के बीच स्वस्थ, प्रसन्न और शांतिपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखने चाहिए। (भा प्रे प, वा रि 1986 पृ स 53)
- जेन भैनुप्रल के आक्षेपित साविधिक प्रावधानों को बधता पर प्रे प कोई विचार व्यक्त नहीं कर सकती क्योंकि ऐसा विचार करना परिषद् के कार्य क्षेत्र के बाहर है (भा प्रे प, वा रि 1986 पृ स 86 87)

## धारा 14 के तहत शिकायतें

- बनावटी विज्ञापन - विज्ञापनदाता द्वारा बिना स्वीकृति व विज्ञापन प्रकाशित करना स्वीकृत पत्रकारिता नीति के नियमों का उल्लंघन है। (भा प्रे प वा रि 1984, पृ स 87, नि दि 6 10 84)
- समाचारपत्र की कुछ प्रतिमों में विज्ञापन प्रकाशित करना और कुछ में नहीं - अनुचित पत्रकारिता है (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 102)
- शिकायत के अनुसार आक्षेपित विज्ञापन अरुचिकर भाषा में लिखा गया था तथा उसमें अत्यधिक आपत्तिजनक परोक्ष संकेत शामिल थे। परिषद् ने एस विज्ञापन पर असंतोष व्यक्त किया। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 102, नि दि 24 3 87)
- साहित्यिक चोरी पर परिषद् द्वारा संबधित समाचारपत्र को सेद प्रकाशन का निर्देश। (भा प्रे प वा रि 1987, पृ स 115)
- योजनाबद्ध आंदोलन - परिषद् ने संबधित समाचारपत्र में प्रकाशित समाचारों को शिकायतकर्ता के विरुद्ध एक योजनाबद्ध आंदोलन के रूप में प्रनीत होना तथा इस आंदोलन को उद्देश्यपरक माना। किसी व्यक्ति अथवा संस्थान के विरुद्ध योजनाबद्ध उद्देश्यपरक आंदोलन साधारणतः अभिप्रेत और अनिष्ट निवारक नहीं है। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 291)



- सामान्यतया पत्रकारिता नीतियों के अनुरूप, सम्पादक को खडन प्रकाशित करना चाहिए हालांकि सम्पादक, यदि चाहे तो वह अपनी टिप्पणियां प्रकाशित कर सकते हैं। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 214, नि दि 25 3 87)
- यदि सम्पादक प्रत्युत्तर को आपत्तिजनक समझते थे तो उन्हें शिकायतकर्ता से पुन प्रेषित करने के लिए कहना चाहिए या अथवा उसमें सम्पादन करके उसे स्वयं प्रकाशित कर देना चाहिए था। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 225 नि दि 8 7 87)
- उत्तर का अधिकार स्थापित - अपने विरुद्ध प्रकाशित किसी समाचार का खडन पीडित व्यक्ति को बचाने का अधिकार है बशर्ते वह उचित और सौम्य हो यानि अरुचिपूर्ण नहीं हो। (भा प्रे प, वा रि 1984, पृ स 89, नि दि 6 10 84)
- सम्पादक द्वारा दिया स्पष्टीकरण कि लेख के सम्बद्ध समय में वह सम्पादक नहीं थे, अतः उन पर कोई उत्तरदायित्व नहीं था, वास्तव में कोई स्पष्टीकरण नहीं था क्योंकि शिकायत व्यक्तिगत रूप से उनके विरुद्ध नहीं थी बरन् समाचारपत्र के विरुद्ध थी (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 211)
- परिषद् सतुष्ट थी कि शिकायतकर्ता ने वर्तमान मामले में कोई खडन न भेजकर पूर्णरूप से याच किया था, ऐसे खडन से असत्य शरारतपूर्ण और निंदात्मक आरोपों का और प्रचार होगा। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 215, नि दि 29 10 1986)
- परिषद् की जांच समिति के समक्ष एक पक्ष द्वारा मुनवाई को भागे के लिए स्थगित करने की प्रार्थना की गयी। दूसरे पक्ष ने मुद्राबन्ध की मांग की। समिति ने मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचारोपरांत अनुभव किया कि मुद्राबन्ध के आवेदन पर किसी आदेश की आवश्यकता नहीं है। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 223 224, नि दि 29 12 86)
- मानहानिजय प्रकाशन - जहाँ तक पत्रकारिता नीतियों का संबंध है, यह सवमान्य है कि एक पत्रकार को मानहानि के विषय में प्रकाशित समाचार के परिणामों के लिए कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है तथा वह इनके लिये उतना ही उत्तरदायी होता है जितना कि एक साधारण नागरिक। (भा प्रे प वा रि 1984, पृ स 136 नि दि 12 3 84)
- प्रेस को राजनीतिक विषयों पर अभिव्यक्ति के अधिकार का उपयोग ऐसा नही होना चाहिये जो सम्पूर्ण दश के हित को गंभीर रूप से क्षति पहुँचाये।

संवेदनात्मक राजनीतिक समस्याओं पर यह ऐच्छित है कि अवरोध और सावधानी का अनुपालन किया जाना चाहिए। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 126)

- किसी अपराधी के उल्लेख में जाति का उल्लेख ऐच्छित नहीं है (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 138) पहचान के उद्देश्य के अतिरिक्त जब पहचान का प्रश्न संबद्ध होता है तो समाचार में अपराधियों की जाति, धर्म अथवा समुदाय का उल्लेख उचित और ऐच्छित नहीं है। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 140)
- यद्यपि किसी समुदाय विशेष की विधिसंगत परिवेदनाओं को भड़काने के लिए कठोर भाषा का प्रयोग करना क्षम्य हो सकता था लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए जिससे साम्प्रदायिक मनोभाव अथवा धरणा भड़के। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 145)
- संपादक से घटना की सत्यता के आश्वासन की अपेक्षा नहीं की जा सकती यद्यपि उन्हें जनहित में प्रकाशित समाचार की आधारभूत सामग्री के सम्बंध में पूर्ण आश्वासन होना चाहिए, कि वह जनहित में प्रकाशित किया गया था। (भा प्रे प, 1986, पृ स 156)
- शीपक में परिवर्तन - संपादक द्वारा लेखों में शीपक में परिवर्तन और स्वीकृति अथवा पुष्टि में सम्पूर्ण स्वनिर्णय का प्रयोग करना चाहिये। इस स्वनिर्णय का स्वच्छ और उचित प्रयोग आवश्यक है। लेख के लेखक के गंभीर पूर्वाग्रह के कारण स्वनिर्णय का प्रयोग नहीं किया जा सकता। संपादक, लेख के लेखक द्वारा दिये गये शीपक के स्थान पर ऐसा कोई शीपक नहीं दे सकते जो लेख के सार की पुष्टि नहीं करता हो अथवा जो लेख के उद्देश्य अथवा लक्ष्य को नष्ट कर दे। (भा प्रे प, वा रि 1985 पृ स 34 35)
- पत्रिका के हित अथवा पत्रकारिता के नियमों में आवश्यक होने पर संपादक किसी लेख के किसी भाग अथवा अंश को निकालने का स्वनिर्णय कर सकता है। लेकिन ऐसा उच्छेदन जानबूझकर अथवा हास्यास्पद रूप से नहीं होना चाहिये। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 98)
- समाचारों का मर्यादित शीपक ऐच्छित (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 100)
- चित्रों की सम्बद्धता - ऐसे चित्रों का प्रकाशन रोका जाना चाहिए जब तक कि उसका प्रकाशन जनहित में न हो और वह पत्रिका के चर्चा-बहानी,

समाचार ग्रथवा उसकी व्याप्ति से सम्बद्ध न हो। (भा प्रे प, वा रि 1986 पृ स 115, नि दि 28 29, भवदू 1986)

- सवेदनात्मक शीपक - आक्षेपित समाचार का शीपक मूल रिपोर्ट से नहीं लिया गया था तथा उसकी प्रकृति सवेदनात्मक थी। (भा प्रे प, वा रि 1987 पृ स 243, नि दि 8-7 1987)
- शिकायत करने के अधिकार को चुनौती - अब यह उचित रूप से स्थापित किया जा चुका है कि किसी जन कार्यालय के विरुद्ध किसी क्षति ग्रथवा गलत बात जिसमें जनता की विशेष रुचि हो सकती है के विषय में जनता के किसी व्यक्ति द्वारा उठाया जा सकता है। (भा प्रे प, वा रि 1986, पृ स 107)
- क्या किसी शिकायत के विषय के न्यायाधीन हो जाने के बावजूद भी उस शिकायत के नैतिक भ्रश/पत्रकारिता नीति के ऐसे नियम जिनमें न्यायालय को कुछ नहीं करना होता है, पर परिषद् विचार कर सकती है ?  
परिषद् ने निणय लिया कि प्रे प अधि की धारा 14(3) ऐसे मामले में, परिषद् को धारा 14(1) के तहत किसी जांच को भागे बढ़ाने की आज्ञा नहीं देती। (भा प्रे प वा रि 1986 पृ स 136 नि दि 8 मई 86)
- व्यक्तिगत रूप से शिकायतकर्ता का समाचार में कोई सदर्म नहीं था। परिषद् का मत था कि समाचार में शामिल आरोप सामान्य प्रकृति के थे तथा अस्पताल के प्रवध की सामान्य आलोचना के प्रकार के थे। परिसर ने शिकायत खारिज कर दी। (भा प्रे प वा रि 1986, पृ स 165)
- समाचार में शिकायतकर्ता की पत्नी का सदर्म पूरा अनुचित तथा अरुचिकर माना गया (भा प्रे प वा रि 1986, पृ स 185, तथा वा रि 1987, पृ स 213, नि दि 25 3 1987)
- उचित सामग्री के बिना प्रकाशन - किसी भी व्यक्ति के सम्मान को ठेस पहुँचाने वाले प्रकाशन की अनुशा प्रदान नहीं की जा सकती अब तक कि प्रकाशन पत्रकारिता नीति के अनुरूप न हो। (भा प्रे प वा रि 1986, पृ स 197 तथा वा रि 1987 पृ स 118)
- आक्षेपित लेख राजनीतिक टीका टिप्पणी की प्रकृति का था और शिकायतकर्ता की आलोचना सामान्य राजनीतिक प्रकृति की थी तथा अत्यधिक महत्वपूर्ण नहीं थी। (भा प्रे प, वा रि पृ स 203)
- प्रश्नगत समाचार के प्रकाशन के पूर्व सम्पादक को शिकायतकर्ता से तथ्यों की जांच कर लेनी चाहिए थी। प्रमुख रूप से यह अभिप्रेत था कि कोई समाचार जिसका किसी पर प्रभाव पड़ सकता हो। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 121)

- कानून के उल्लंघन सबधी कोई विषय यदि जनहित से सबध न हो अथवा जन शरारतो से सबध हो तो टिप्पणी तथा आलोचना उचित तथा उचित सामग्री पर आधारित होनी चाहिए। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 123)
- संपादकीय लिखने की दो मायता प्राप्त सीमायें हैं - (1) कानून को भंग नहीं किया जा सकता (11) पत्रकारिता नीति और नियमों का उल्लंघन नहीं किया जा सकता। (भा प्रे प वा रि 1987 पृ स 134) संपादकीय में सम्प्रदायों के नाम का उल्लेख अवाञ्छित था। (वा रि 1987, पृ स 146 नि दि 8 7 87)
- मूल तत्त्ववाद प्रतिपादित करने वाला लेख - जो साम्प्रदायिक गड़बड़ी का कारण हो सकता था। सम्प्रदाय के नाम का उल्लेख पत्रकारिता नीति के नियमों के विरुद्ध था (भा प्रे प वा रि 1987, पृ स 148 नि दि 8 7 87)
- एक समाचारपत्र से दूसरे समाचारपत्र में किसी लेख के पुनरुत्पादन पर दूसरे समाचारपत्र का सम्पादक सुरक्षित नहीं हो जाता कि सरकार ने पहले समाचारपत्र के सम्पादक को मूल लेख लिखने के विरुद्ध नहीं लिखा। हालांकि परिसद ने अनुभव किया कि कर्नाटक सरकार को मूल लेख के लेखक के सम्पादक के विरुद्ध कायवाही करनी चाहिए, ऐसा न करके कर्नाटक सरकार ने दोनों समाचारपत्रों के बीच विभेद किया है (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 150 नि दि 8 7 1987)
- यद्यपि सम्पादक अपने विचारों पर बल देने के सबध में कितना ही 'यायोचित' हो उसे भाषा के प्रयोग के सबध में सतक और रोधात्मक होना चाहिए जिससे साम्प्रदायिक भावनायें और साम्प्रदायिक मनोभाव न बढ़ें। (भा प्रे प वा रि 1987 पृ स 152, नि दि 8 7 1987)
- साम्प्रदायिक प्रकृति की मॅटवार्ता की रिपोर्ट का प्रकाशन तो पत्रकारिता नीतियों के विपरीत ही होगा (भा प्रे प वा रि 1987, पृ स 170, नि दि 5-6 अक्टू 1987)
- उचित मामलों में प्रेस अवश्य ही खुलकर सरकारी तंत्र के दुरुपयोग अथवा अनुचित तथा सरकारी दूरभाष अथवा गाडी इत्यादि पर धन व्यय करने की आलोचना कर सकती है (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 203, नि दि 24 3 87)
- उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित व्यक्तियों के विरुद्ध झूठे और आधारहीन आरोपों से उनकी नैतिकता और दश कायविधि पर प्रभाव पड़ता है तथा

इसे अधिक अनुचित और स्पष्टरूप से पत्रकारिता नीतियाँ का उल्लंघन समझा जाना चाहिए। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 211, नि दि 25 3 87) यदि टिप्पणियाँ और भालोचनाएँ 'यायोचित' हैं, तो शायद उनका संचरण पर टिप्पणी करना और भालोचना करना समाचारपत्र का कर्तव्य बन जाये। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 217) जब तक वध और यायोचित कारण न हों तब तक सम्पादक खटन प्रकाशित करने से इकार नहीं कर सकते। (पृ स 218, नि दि 25 3 87)

- बिना किसी यायोचित आधार के कोई अनुत्तरदायित्वपूर्ण वक्तव्य जिसमें भ्रष्टाचार का आरोप हो पत्रकारिता नीति और नियमों के उल्लंघन स्वरूप तथा मानहानिजनक होगा (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 273, नि दि 5 6 अक्टू 87)
- होली उत्सव मनोरंजन और विनोद का उत्सव है। उचित पत्रकारिता के नियमों के तहत हास्यास्पद लेख प्रकाशित किये जा सकते हैं। हालाँकि होली उत्सव, झरलीलता और चरित्र हनन का अवसर नहीं है। तथ्य यह है कि चाहे अनेक पत्र इनमें सलग्न हों परन्तु वह पत्रकारिता नीति के नियमों को परिवर्तित नहीं कर सकते। (भा प्रे प, वा रि 1987, पृ स 279, नि दि 5 6 अक्टू 87)

### साठे प्रकरण में उजागर सिद्धांत

तत्कालीन सूचना तथा प्रसारण मंत्री श्री बसंत साठे के एन वक्तव्य के प्रकाशन में हिंदुस्तान टाइम्स के सवाददाता द्वारा उचित सावधानी का प्रयोग नहीं करना माना गया जिसमें परिषद् द्वारा निम्न महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये गए (भा प्रे प, वा रि 1981, पृ स 90-105)

#### समाचार का दायित्व सम्पादक पर

सामान्यतः समाचारपत्र में जो भी समाचार प्रकाशित किया जाता है उसका दायित्व सम्पादक पर ही होता है तथा मंत्री महोदय के भाषण को विकृत रूप में निवेष्टित कराने वाले सवाददाता और सम्पादक के बीच कोई प्रभेद करना समभव नहीं है। यदि यह शिवायत सवाददाता के विरुद्ध ही समझी जाय तब भी वस्तुतः यह सम्पादक के विरुद्ध भी समझी जायेगी क्योंकि सवाददाता सम्पादक के सम्पूर्ण उत्तरदायित्व के अधीन ही कार्य करता है।

#### हबहब वक्तव्य पर ही उद्धरण चिह्न

वक्ता द्वारा कथित शब्दों को वस्तुतः उसी रूप में उद्धृत करने हेतु ही शब्दों को उद्धरण चिह्नों में रखा जाता है। यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रस्तुत

मामले में उद्धरण बिहो का प्रयोग पूरा रूप से अनुचित था तथा मंत्री महोदय ने शुद्ध भाषण के अनेकानेक पठन भी इसका समर्थन नहीं करते।

उद्धरण बिहो में समाहित अश की प्रकाशन के पूर्व जांच हो

प्रेस परिषद् के विभिन्न निष्णयो द्वारा यह निश्चित रूप से सिद्ध हो चुका है कि समाचारपत्रों में प्रकाशित होने वाली रिपोर्ट सत्य होनी चाहिए तथा तथ्यों को तोड़ मरोड़ कर अथवा विवृत रूप में प्रकाशित नहीं करना चाहिए। प्रश्नाथ भाषण की रिपोर्ट भेजने से पहले रिपोर्ट निवेशित करने वाले सवादादाता को भाषण के तथ्यों की जांच कर पाने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए थी, विशेषतः उस अश की जांच जो उद्धरण बिहो में रखा गया था।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि किसी ऐसे व्यक्ति, जो केन्द्र सरकार के मंत्रीमंडल के एक मंत्री के पद पर हो, के भाषण को अशुद्ध ढंग से अथवा विवृत रूप में प्रस्तुत करने से स्थिति बिगड़ सकती है।

### नियमित सवादादाताओं द्वारा प्रेषक समाचार

पिछली प्रेस परिषद् ने कुछ ऐसे मामलों पर विचार किया था, जिनमें यह प्रश्न उठा था कि जब किसी मायता प्राप्त सवादादाता के किसी गम्भीर मामले पर रिपोर्ट प्राप्त होती है तो उस समय सम्पादक का क्या उत्तरदायित्व अथवा कर्तव्य है। यह विचार व्यक्त किया गया था कि यदि सम्पादक के पास ऐसा कोई कारण नहीं था कि जिससे कि उसे थोड़ी सी आशंका हो कि उसके नियमित सवादादाता द्वारा भेजा गया समाचार अशुद्ध था तो वह उसे बिना अग्रिम जांच अथवा प्रमाणिकता के ही प्रकाशित कर सकते हैं तथा ऐसे में उनकी यह कारवाई अनुचित नहीं होगी। यह और भी अधिक लागू होगा यदि कोई समाचार किसी घटना के तुरंत बाद प्रकाशित किया गया हो। (नेशनल हेराल्ड का मामला— भा प्रे प तृतीय वा रि पृ स 15)

### जनहित बनाम तत्परता

क्या किसी गम्भीर विषय पर तत्परता से बिना तथ्यों की शुद्धि का पता लगाए किसी अश समाचारपत्र में प्रकाशित रिपोर्ट के आधार पर टिप्पणी करना उचित होगा के प्रश्न के उत्तर में परिषद् ने विचार व्यक्त किया कि जनहित के समाचार का शीघ्रता के साथ प्रसार करना औचित्यपूर्ण हो सकता है फिर भी यदि किसी जनहित के विषय पर जो एक रयाति प्राप्त व्यक्ति के सबष में हा बिना उसके तथ्यों की शुद्धि के बारे में आश्वस्त हुए तत्परता से तथा शीघ्रता के साथ विचारों की अभिव्यक्ति करना जनहित का पूरक नहीं होगा। (भा प्रे प, वा रि. 1981, पृ स 90 113)

### खडन का बिलम्बित प्रकाशन भत्सना योग्य

श्री प्रेस बुलेटिन ने अपने पत्र में अपराध विभाग, सी आई डी पुलिस बम्बई के सम्बन्ध में प्रकाशित समाचार का खडन साढ़े पांच माह की देरी से छापा जिसके सबब में परिपद ने विचार व्यक्त किया कि उपलब्ध सामग्री पर विचारों परात समिति का स्पष्ट रूप से यह विचार था कि इस विषय में प्रतिवादी सम्पादक दोषी थे तथा साढ़े पांच महीने पश्चात् खडन प्रकाशित करने के कारण वह भत्सना योग्य है। (भा प्रे प, वारि 1981, पृ स 135 136)

### देरी को क्षमा करना

एक मामले में शिकायत जो प्रेस परिपद (जाच प्रक्रिया) विनियम 1979 के विनियम 3 (1) (च) के परिवादों के अनुसार प्रकाशन के दो महीनों के भीतर निवेशित कराई जानी चाहिए थी, छह महीनों की श्रुति पर अप्रैल 1981 में निवेशित किये जाने के कारण समयरुद्ध पाई गई। तथापि शिकायतकर्ता ने शिकायत निवेशित करने में देरी अप्रदूत के संपादक के द्वारा अपने पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा पर आरोपित की और अनुरोध किया कि इस देरी को क्षमा कर दिया जाए। अध्यक्ष महोदय ने इस देर को क्षमा कर दिया। (भा प्रे प, वारि 1981 पृ स 147 148)

### अनिष्ट के सुधार हेतु पूर्ण प्रयत्न सख्त कारवाई लायक नहीं

प्रेस परिपद के नियमों द्वारा यह स्थापित होता है कि सामान्यतः जब कोई समाचारपत्र अपने मायता प्राप्त सवाददाता से कोई समाचार प्राप्त करके उसे प्रकाशित कर देता है, किन्तु यह पात होते ही कि यह समाचार अशुद्ध है वह स्पष्ट रूप से उसका खडन प्रकाशित कर देता है। तो उस पत्र के विरुद्ध सख्त कारवाई नहीं की जानी चाहिए, क्योंकि पत्र ने अनिष्ट के सुधार हेतु पूर्ण प्रयत्न कर लिये थे। (भा प्रे प वारि 1981, पृ स 150 153)

- परिपद की अवमानना - परिपद का समाचारपत्र में प्रकाशित नियम सम्पादक के पास प्रकाशन के लिए भेजे गए नियमों के प्रकरण से भिन्न पाया गया। अन्त में सम्पादक का अवज्ञाकारी कथन प्रकाशित था जिससे पाठकों के मन में अधिक्षेपित समाचारपत्र के नाम के सबब में भ्रान्ति उत्पन्न हो सकती थी। समाचारपत्र के इसी अंक में प्रेस परिपद बद करो" शीपक स सम्पादकीय लेख प्रकाशित किया गया।

परिपद के विचार में सम्पादक का व्यवहार निन्दनीय था क्योंकि उन्होंने न केवल परिपद के निर्देशों की अवमानना की थी, बरन ससद के अधिनियमों

के अन्तगत प्रेस की स्वतन्त्रता की रक्षा करने और भारत में समाचारपत्रों और समाचार अभिकरणों का स्तर सुधारने के उद्देश्य से स्थापित भारतीय प्रेस परिषद् जसी स्वतन्त्र सस्था के प्रति अत्यन्त आपत्तिजनक अपकर्षी सम्पादकीय लेख प्रकाशित किया था तदनुसार परिषद् ने "दी हितवाद" समाचारपत्र के सम्पादक को अधिक्षेपित किया तथा उन्हें अपने समाचारपत्र में प्रेस परिषद् का निर्णय प्रकाशित करने का निर्देश दिया। (मा प्रे प, वा रि 1981, पृ स 87 89)





## चुने हुए प्रश्न

जो प्रेस पुस्तक अधिनियम और भा. प्र. प. अधिनियम में निहित विधि प्रावधानों की जानकारी लेना चाहते हैं, निम्न प्रश्नावली से ज्ञात होगा कि उन्हें इन कानूनों का कितना ढेर सारा ज्ञान प्राप्त करना है।

### प्र. पु. अधिनियम के तहत प्रश्न

- प्रश्न - 1 प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 (यथा संशोधित) की उत्पत्ति और विकास का इतिहास पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालिये ?
- प्रश्न - 2 प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 किन लक्ष्यों व उद्देश्यों के लिये बनाया गया है, समझाइये ?
- प्रश्न - 3 "सारत विधि" और "प्रक्रियात्मक विधि" से आप क्या समझते हैं। प्रेस पु. अधिनियम "सारत विधि" है अथवा "प्रक्रियात्मक विधि"।
- प्रश्न - 4 'वैयक्तिक विधि' और 'स्थानीय विधि' से आप क्या समझते हैं। प्र. पु. अधिनियम इनमें से एक की परिधि में आता है या दोनों की परिधि में आता है ?
- प्रश्न - 5 प्र. पु. अधिनियम पर कौनसी 'प्रक्रियात्मक विधि' लागू होती है ?

## भाग 1

- प्रश्न - 6 विभिन्न विधि प्रकरणा के तहत निम्न में क्या शामिल और क्या आशयित है ?
- (i) पुस्तक (ii) मुद्रण (iii) पत्र (iv) मजिस्ट्रेट
- प्रश्न - 7 प्रेस पु. अधिनियम के लिए किस प्रकार के मजिस्ट्रेटस आशयित हैं ?
- प्रश्न - 8 "मेट्रोपोलिटान एरिया" और "नोन मेट्रोपोलिटान एरिया" से आप क्या समझते हैं कौन से क्षेत्र मेट्रोपोलिटान एरिया घोषित किये गये हैं ?
- प्रश्न - 9 'समवर्ती शक्तियाँ' और 'समवर्ती क्षेत्राधिकार' से क्या तात्पर्य है। क्या एच. नोन मेट्रोपोलिटान एरिया में जिला मजिस्ट्रेट और उपखण्ड मजिस्ट्रेट प्रेस पु. अधिनियम के तहत अपने अधिकारों का समवर्ती रूप से प्रयोग कर सकते हैं ?

प्रश्न - 10 प्रे पु अधि मे "वैधानिक सम्पादक" की क्या विशेषताएँ होती हैं ?

प्रश्न - 11 क्या कोई कम्पनी अथवा सघ अथवा व्यक्तियों का समूह (निगमित या अनिगमित) एक समाचारपत्र का सम्पादक हो सकता है ?

## भाग 2

प्रश्न - 12 प्रे पु अधि की धारा 3 व 4 के गठन के पीछे इसके गठनकर्त्ताओं का क्या आशय रहा है ?

प्रश्न - 13 क्या धारा 3 समाचारपत्रों को भी शामिल करती है। यदि विधि प्रकरण हो तो उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न - 14 "मुद्रक" और "प्रकाशक" में क्या अन्तर है ?

प्रश्न - 15 एक मुद्रण यंत्रपाल को मजिस्ट्रेट के सम्मुख किस रीति से घोषणा पेश व हस्ताक्षरित करनी होती है ?

प्रश्न - 16 प्रे पु अधि की धारा 3 व 4 के तहत कौन परिवाद कर सकता है। कोई विधि प्रकरण हो तो उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न - 17 'इम्प्रिंट लाइन' से आप क्या समझते हैं। क्या स्वयं प्रे पु अधि और इसके तहत बने नियमों में इस प्रकार की इम्प्रिंट लाइन का कोई प्रारूप निर्धारित किया हुआ है ?

प्रश्न - 18 प्रे पु अधि की धारा 4 के उपखण्ड 1 में प्रयोग किये गये शब्द 'घोषणा' और धारा 4 के उपखण्ड 2 के "परतु" में प्रयोग किये गये शब्द "विवरण" में क्या कोई अन्तर है ?

प्रश्न - 19 एक समाचार के सम्बन्ध में मजिस्ट्रेट को किस रीति से घोषणा को प्रमाणित करना होता है ?

प्रश्न - 20 क्या मजिस्ट्रेट घोषणा के प्रमाणीकरण के समय समाचारपत्र के स्वामित्व के सम्बन्ध में प्रश्न उठा सकता है। यदि कोई विधि प्रकरण हो तो उसका उल्लेख कीजिये।

प्रश्न - 21 समाचारपत्र के प्रकाशन के सम्बन्ध में बने नियमों की वर्गीकृत तरीक से लिखिये।

प्रश्न - 22 किन दशाओं में एक नई घोषणा आवश्यक होती है ?

प्रश्न - 23 प्रे पु अधि की धारा 5 (8) में 'घोषणाकर्त्ता की ब्यस्रता और साधारणतः निवास नामक शब्दावली का जो कुछ मामूली अन्तर

के साथ प्रयोग हुआ है उससे भाषका क्या तात्पर्य है। विस्तार से समझाइये ?

प्रश्न - 24 "शीपक निष्कासन" अथवा "शीपक पृष्टि" से भाषका क्या समझते हैं। प्रेस पुस्तिका के तहत एक समाचारपत्र के प्रकाशन से पूर्व घोषणा के प्रमाणीकरण के पूर्व मजिस्ट्रेट को किस प्रकार की सन्तुष्टि चाहिए ?

प्रश्न - 25 "प्रस्तुत करना और हस्ताक्षर करना" तथा "प्रमाणीकरण" से भाषका क्या समझते हैं। क्या इन दोनों के बीच कोई अन्तर है। प्रेस पुस्तिका की किस धारा अथवा किस धाराओं पर प्रमाणीकरण के प्रावधान लागू होते हैं ?

प्रश्न - 26 प्रेस पुस्तिका की धारा 6 के तहत 'प्रमाणित प्रति' और "अभिप्रमाणित प्रति" में क्या अन्तर है ?

प्रश्न - 27 जब एक मजिस्ट्रेट प्रेस पुस्तिका की धारा 6 के तहत कार्य करता है क्या वह एक "याचिका" के अन्तर्गत कार्य करता है ? विधि प्रक्रिया के साथ समझाइये ?

प्रश्न - 28 क्या एक समाचारपत्र का प्रस्तावित सम्पादक उस समाचारपत्र का सम्पादक बनने से पहले प्रेस पुस्तिका की धारा 6 और उस पर बने नियमों के तहत खवधानिक रूप से प्रमाणित कराने के लिए घोषणा प्रस्तुत करने और हस्ताक्षरित करने के लिए बाध्य है।

प्रश्न - 29 भाषका प्रथम दृष्टया साक्ष्य से क्या समझते हैं। एक समाचारपत्र के मामले में उसके मुद्रक, प्रकाशक और सम्पादक के विरुद्ध एक कानूनी कार्यवाही में क्या प्रस्तुत करने पर प्रथम दृष्टया धारणा उत्पन्न होती है। क्या एक समाचारपत्र के मालिक के विरुद्ध भी ऐसी प्रथम दृष्टया धारणा उत्पन्न हो सकती है। पुस्तकों और पम्पलेटों के मामले में क्या स्थिति बनेगी।

प्रश्न - 30 किस परिस्थिति में प्रेस पुस्तिका के तहत प्रथम दृष्टया धारणा का अर्थ क्या है ?

प्रश्न - 31 जब एक समाचारपत्र का मुद्रक अथवा प्रकाशक उसका मुद्रक अथवा प्रकाशक न रहे तो, उसे कानूनी दण्ड से बचने के लिए क्या करना चाहिए ? क्या इस उद्देश्य के लिए कोई अन्वय भी निर्धारित की गई है ?

- प्रश्न - 32 जब एक व्यक्ति का एक समाचारपत्र में सम्पादक के रूप में अशुद्ध नाम प्रकाशित कर दिया गया हो तो उसे क्या करना चाहिए ? क्या इस उद्देश्य के लिए अधि निश्चित की हुई है ?
- प्रश्न - 33 एक समाचारपत्र के सम्बन्ध में विन आचारों पर घोषणा को निरस्त किया जा सकता है। विधि प्रक्रिया के साथ वर्गीकृत रूप से समझाइये ?
- प्रश्न - 34 एक समाचारपत्र के सम्बन्ध में किस की प्राथमता पर घोषणा को निरस्त करने के लिए कौन सक्षम है ? ऐसी घोषणा को निरस्त करने के पूर्व क्या सावधानियाँ बरतनी चाहिए ?
- प्रश्न - 35 क्या प्रेस पु अधि की धारा 8 ग के तहत गठित अपीलेंट बोर्ड अपने सम्मुख विचाराधीन एक अपील में यथास्थिति को कायम करने के लिए अन्तरिम आदेश पारित कर सकता है। विधि प्रक्रिया के साथ समझाइये ?
- प्रश्न - 36 क्या प्रेस पु अधि की धारा 8 ग के तहत गुणावगुण के आचार पर पूर्व में विनिश्चित आदेश के विरुद्ध रिव्यू याचिका प्रस्तुत की जा सकती है।
- प्रश्न - 37 क्या प्रेस पु अधि की धारा 8 ख के तहत विनिश्चित आदेश के विरुद्ध निगरानी प्राथना-पत्र प्रस्तुत किया जा सकता है ?
- प्रश्न - 38 प्रेस पु अधि की धारा 8 ग के तहत प्रस्तुत की जाने वाली अपील के लिए किस प्रकार का आदेश चाहिए जिसके विरुद्ध अपील प्रस्तुत की जानी है ?
- प्रश्न - 39 क्या प्रेस पु अधि की धारा 8 ग के तहत प्रस्तुत की जाने वाली अपील के लिए कोई समयावधि निश्चित है। यदि ऐसा हो तो किन परिस्थितियों में उस समयावधि के समाप्त होने के बाद भी एक अपील को दखल किया जा सकता है ?
- प्रश्न - 40 क्या एक पीडित व्यक्ति प्रेस पु अधि की धारा 8 ग के तहत पहले अपील में न जाकर सीधे ही सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय में याचिका प्रस्तुत कर सकता है ? विधि प्रक्रिया के साथ समझाइये ?
- प्रश्न - 41 प्रेस पु अधि की धारा 8 ख के तहत पारित आदेश के विरुद्ध इसी अधिनियम की धारा 8 ग की धारणा अपेक्षाओं को पूरा करते हुए एक काल्पनिक पुनरावदन शापन (मेमारेण्डम ऑफ अपील) तयार कीजिए ?

## भाग 3

प्रश्न - 42 एक समाचारपत्र के मुद्रक/प्रकाशक अथवा एक पुस्तक के मुद्रक को प्रे पु अधि और उस पर बने नियमों के तहत तथा पु स प (सा पु) नियमों के तहत किन स्थानों अथवा किन अफिसरों को अपने समाचार पत्र अथवा पुस्तक की प्रतियाँ भेजनी हाती हैं ?

## भाग 4

प्रश्न - 43 निम्न शर्तों-वादों में क्या नियम प्रतिपादित किये गये हैं ?

(1) अम्दूल हुसीन बनाम स्टेट (ए आई आर 1960, इलाहाबाद 450)

(2) पब्लिक प्रोसीक्यूटर बनाम टी अमृत्य (ए आई आर 1960 भाद्र प्रदेश 176)

प्रश्न - 44 क्या प्र पु अधि की धाराएँ 8क, 11क और 16क के मध्य कोई सम्बन्ध बाधक है ?

प्रश्न - 45 प्रे पु अधि के तहत दण्डों की प्रकृति पर प्रकाश डालिये। क्या प्रे पु अधि के तहत सश्रम कारावास भी दिया जा सकता है ?

प्रश्न - 46 प्रे पु अधि के तहत अपराधों की अन्वेषण पर एक निबंध लिखिए ?

प्रश्न - 47 क्या प्रे पु अधि के तहत अपराध अपीलयोग्य है ? जब प्रे पु अधि के तहत अथवा प्रे पु अधि पर लागू किसी अन्य प्रक्रियात्मक विधि के तहत कोई दण्ड दे दिया गया हो तो पीडित व्यक्ति के लिए क्या उपचार हैं ?

प्रश्न - 48 क्या प्रे पु अधि अथवा इस पर लागू किसी प्रक्रियात्मक विधि के तहत अपराधों के सज्जान के लिए कोई समयबधि निश्चित है।

प्रश्न - 49 क्या प्रे पु अधि के तहत जुमाना की ना अदायगी के लिये दण्ड विषयक कोई प्रावधान है। विस्तार से समझाइये ?

प्रश्न - 50 प्रे पु अधि की धारा 16 के तहत रायसात राशि की वसूली किस प्रकार की जा सकती है। विधि प्रकरणों के साथ विस्तार से समझाइये ?

## भाग 5

प्रश्न - 51 प्रे पु अधि के तहत एक पुस्तक को किस प्रकार पजीकृत किया जाता है। प्रे पु अधि की धारा 18 के तहत वर्णित पुस्तकों की सूची में क्या विनिष्टियां शामिल करनी होती हैं। किस रीति से इस सूची का प्रकाशन होता होता है ?

## भाग 5 (क)

प्रश्न - 52 प्रे पु अधि की धारा 19 ख के तहत भार एन आई द्वारा समाचारपत्रों के रजिस्टर में क्या विनिष्टियां शामिल करनी होती हैं ?

प्रश्न - 53 क्या एक समाचारपत्र उसके प्रकाशक द्वारा भारत के समाचारों के पजीक से बिना पजीकन प्रमाणपत्र प्राप्त किये चलाया जा सकता है।

प्रश्न - 54 भारत के समाचारपत्रों के पजीक की स्थापना और इसके कर्तव्यों और दायित्वों पर एक निबंध लिखिये ?

प्रश्न - 55 प्रे पु अधि और इस पर बने नियमों के तहत भारत के समाचारपत्रों के पजीक के प्रति एक प्रकाशक के क्या बंधनबद्ध हैं, समझाइये ?

प्रश्न - 56 प्रे पु अधि के तहत भारत के समाचारपत्रों के पजीक को प्रस्तुत की जाने वाली अपेक्षित सूचनाओं को प्राप्त करने के क्रम में भार एन आई से प्राधिकृत एक ऑफिसर क्या एक ऐसे परिसर में धूम सकता है और निरीक्षण कर सकता है भयवा मुसगत अभिनेत्री भयवा दस्तावेजों की प्रतियां ले सकता है भयवा कोई आवश्यक प्रश्न पूछ सकता है जहाँ के लिए वह विश्वास करता है कि यहाँ ऐसे अभिलेख एवं दस्तावेज रक्षे हुए हैं ?

## भाग 6

प्रश्न - 57 कितने विषयों पर केन्द्र सरकार व राज्य सरकारें प्रे पु अधि के तहत नियम बना सकती हैं ?

- प्रश्न - 58 क्या राज्य सरकारें प्रे पु अधि से किसी समाचारपत्रों के वग को अप्रयोजित कर सकती हैं ?
- प्रश्न - 59 क्या प्रे पु अधि सिक्किम और जम्मू कश्मीर पर भी लागू होता है। यदि ऐसा है तो किन तिथियों से लागू होता है। सिक्किम और जम्मू कश्मीर के मामले में प्र पु अधि पर कौनसी प्रक्रियात्मक विधि लागू होगी ?

### भा प्र प अधि के तहत प्रश्न

- प्रश्न - 60 प्रेस परिपद अधिनियम किन लक्ष्यों व उद्देश्यों के लिए बनाया गया है ?
- प्रश्न - 61 प्रे प अधि 1978 के तहत भारतीय प्रेस परिपद की स्थापना पर एक लेख लिखिये ?
- प्रश्न - 62 प्र प अधि 1978 के तहत भारतीय प्रेस परिपद के कार्यों और शक्तियों पर एक निबंध लिखिये ?
- प्रश्न - 63 प्रे प अधि 1978 के तहत 'परिनिंदा करने की शक्ति' से आप क्या समझते हैं। विधि प्रकरणों के साथ समझाइये ?
- प्रश्न - 64 क्या भारतीय प्रेस परिपद समाचारपत्रों और समाचार अभिकरणों पर किसी प्रकार की फीस की लेवी लगा सकती है। यदि ऐसा है तो, किस रीति व किस दर से ?
- प्रश्न - 65 किन विषयों पर भारतीय प्रेस परिपद नियम और विनियम बना सकती है ? समझाइये ?
- प्रश्न - 66 प्रेस रजिस्ट्रेशन ऑपॉर्लेट बोर्ड का चेयरमैन और दूसरा सदस्य किसके द्वारा मनोनीत किये जाते हैं ?
- प्रश्न - 67 निम्न से आप क्या समझते हैं -  
(i) बड़ा समाचारपत्र (ii) मध्यम समाचारपत्र (iii) लघु समाचारपत्र
- प्रश्न - 68 प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन ऑपॉर्लेट बोर्ड के 'यवहार एवम् प्रशिक्षण' पर एक निबंध लिखिए ?
- प्रश्न - 69 भारतीय प्रेस परिपद द्वारा गठित 'जांच समिति' के क्या कार्य होते हैं ?
- प्रश्न - 70 प्रे प अधि और इस पर धने नियम और विनियम के तहत आप परिवारों से क्या समझते हैं ?

- प्रश्न - 71 प्रेस अधि की धारा 14(1) के तहत समाचारपत्र, समाचार भूमिकरण, सम्पादक भयवा भय श्रमजीवी पत्रकार के सम्बन्ध में परिवार की विषय-वस्तु पर प्रकाश डालिये ?
- प्रश्न - 72 भारतीय प्रेस परिषद् के यहाँ किस रीति से एक परिवार दर्ज कराया जाता है ?
- प्रश्न - 73 किन मामलों में भारतीय प्रेस परिषद् द्वारा एक परिवार उसके परिवारों को वापिस लौटाया जा सकता है ?
- प्रश्न - 74 एक परिवार में भारतीय प्रेस परिषद् का विनिश्चय किस प्रकार की कानूनी भाग्यता रखता है ? क्या इस प्रकार का विनिश्चय भारत की अदालतों पर बाध्यकारी है ?
- प्रश्न - 75 प्रेस अधि की धारा 13 के तहत एक परिवार के सम्बन्ध में क्या प्रक्रिया अपनाई जायेगी ?
- प्रश्न - 76 'क्या प्रेस परिषद् निम्न प्रकरणों में हस्तक्षेप कर सकती है —
- (i) जहाँ केन्द्र सरकार किसी समाचारपत्र/समाचार भूमिकरण द्वारा किसी विदेशी स्रोत से सहायता प्राप्त करने के प्रकरण को जांच कर रही है।
  - (ii) ऐसा विवाद जिस पर औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 (1947 का 14) लागू होता है।
  - (iii) एक ऐसा मामला जिसके सम्बन्ध में अदालत में कोई बाधवाही चल रही है।
- प्रश्न - 77 क्या धारा 13 और 14 के तहत पारित विनिश्चयों को किसी अदालत में प्रश्नगत किया जा सकता है।
- प्रश्न - 78 इन मामलों में प्रेस परिषद् को सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 (1908 का 5) के अन्तर्गत गठित सिविल न्यायालय की समान शक्तियाँ प्राप्त हैं ?
- प्रश्न - 79 भारतीय प्रेस परिषद् द्वारा की गई जांच न्यायिक जांच है अथवा निष्पादक जांच है ?
- प्रश्न - 80 आप लोकसेवक से क्या समझते हैं। क्या प्रेस अधि के तहत नियुक्त प्रेस रजिस्ट्रार और ऑफिसिस तथा प्रेस परिषद् द्वारा नियुक्त भारतीय प्रेस परिषद् के सदस्य और ऑफिसिस तथा भय बमचारी लोकसेवक हैं ?



## समस्याएँ

- 1 'क टकण का बाजारी नाम करने के लिए जयभारत टाइपिंग हाउस के नाम से एक दुकान खोलता है। उसने पास अपनी दुकान पर खाली हालत में एक साइक्लोस्टाइल मशीन भी है। वह साइक्लोस्टाइलिंग बाजार काम के लिए उसको काम में लेने का आशय भी रखना है? 'क' को ऐसी सलाह दीजिये की भविष्य में उसे किसी प्रकार की खानूनी परेशानी नहीं उठानी पड़े।
- 2 मुद्रण यंत्र में मुद्रित पेम्फलेटस का एक बंडल जिसकी सामग्री सूचनापरक है 'क' द्वारा अपने शहर के स्थानीय लोगों को बांटी जाती है। इन पेम्फलेटस पर मुद्रक धीर प्रकाशक का नाम नहीं है। क्या 'क' ने कोई अपराध किया है। यदि ये पेम्फलेटस फोटोस्टेट प्रक्रिया द्वारा तयार होते तो क्या स्थिति बदल सकती थी। समझाइये?
- 3 17 वय धीर 11 माह की आयु में एक हिंदी दैनिक का 'क' सम्पादक नियुक्त किया गया था। उस समय समाचारपत्र भारत के समाचारपत्रों में पजीयक के यहाँ भी पजीकृत था। उसने अपनी नियुक्ति के 7 दिनों के अंदर अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया। समझाइये क्या 'क' ने इस प्रकार सम्पादक बनने में किसी प्रकार की ख्वाबट है?
- 4 धीर एन आई से प्राधिकृत एक अपसर एक हिंदी दैनिक के दफ्तर से सूचनाएँ एकत्रित करता है। वह इन सूचनाओं को धीर एन आई को प्रस्तुत करने से पूर्व इन सूचनाओं को प्रेस में प्रकाशनाथ भी भेज देता है। उसने कौनसा अपराध किया है। समझाइये?
- 5 एक हिंदी दैनिक का एक प्रकाशक - "क" उसके क्षेत्र के जिला मजिस्ट्रेट द्वारा भेजा गया नोटिस प्राप्त करता है। जिसमें कहा गया है कि उसका सम्पादक 'ख' अपने सम्पादन सम्बन्धी घोषणा को प्रस्तुत किये बिना ही समाचारपत्र का सम्पादन कर रहा है अतः क्यों नहीं 15 8 81 को पूर्व में प्रमाणित घोषणा को निरस्त कर दिया जावे। 'क' को सलाह दीजिए।

- 6 एक हिन्दी दैनिक वा मुद्रक/प्रकाशक और सम्पादक - "क" अपने पत्र में एक समाचार प्रकाशित करता है जो कि स्थानीय सिविल और पुलिस प्रशासन की निगाह में "सपेद झूठ का पुलिन्दा" है। इस समाचार से स्थानीय सरकारी अधिकारी बहुत परेशान होते हैं। स्थानीय क्षेत्र के उपखण्ड मजिस्ट्रेट इस समाचार के आघार पर 'क' का इस प्रकार का नोटिस भेजता है कि क्यों नहीं उसके समाचारपत्र की घोषणा निरस्त कर दी जानी चाहिए। 'क' को सलाह दीजिए।
- 7 एक समाचारपत्र का प्रकाशक स्थानीय क्षेत्र के उपखण्ड मजिस्ट्रेट द्वारा भेजे गये एक नोटिस को प्राप्त करता है जिसमें कहा गया है कि वह अपने समाचारपत्र के प्रत्येक अंक पर आर एन आई द्वारा प्रदत्त रजिस्ट्रेशन नम्बर को उद्धरित किये बिना अपना समाचारपत्र प्रकाशित कर रहा है क्यों नहीं उसके समाचारपत्र की घोषणा निरस्त कर दी जावे। 'क' को सलाह दीजिये।



## सशोधन अधिनियम और अनुकूलन आदेशों की सूची

(प्रेस अधि के संघ में)

- 1 निरसन अधिनियम 1870 (1870 का 14)
- 2 प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि 1867 संशोधन अधिनियम 1890 (1890 का 10) देखिए धाराएँ 1 से 6
- 3 सशोधन अधि 1891 (1891 का 12) देखिए धारा 2 और अनुसूची II भाग I
- 4 साधारण-परिभाषा अधिनियम 1897 (1897 का 10) देखिए धारा 3 (5)
- 5 भारतीय सक्षिप्त नाम अधिनियम 1897 (1897 का 14)
- 6 भारतीय प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम 1914 (1914 का 3) देखिए धारा 15 और अनुसूची II
- 7 निरसन और सशोधन अधि 1914 (1914 का 10) देखिए धारा 3 और अनुसूची II
- 8 निरसन और संशोधन अधि 1915 (1915 का 11) देखिए धारा 5 2 और अनुसूची I
- 9 प्रक्रमण अधिनियम 1920 (1920 का 38)
- 10 मुद्रण विधि निरसन व सशोधन अधि 1922 (1922 का 14) देखिए धाराएँ 3 व अनुसूची I 4 व अनुसूची I
- 11 निरसन व सशोधन अधि 1923 (1923 का 11) देखिए धारा 2 व अनुसूची I
- 12 भारत सरकार (भारतीय विधियों का अनुकूलन) आदेश 1937
- 13 भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियमों व अध्यादेशों का अनुकूलन) आदेश 1948

पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 (संशोधन तथा गणना) ] [ 195

- 14 विधि आदेशों का अनुसूचन, 1950
- 15 निरमल व मणोघन अधिनियम 1950 (1950 का 35) धारा 3 व अनुसूची II
- 16 भाग बी स्टेट्स (विधि) अधि 1951 (1951 का 3) अधि भाग 3 व अनुसूची I
- 17 प्रेस (प्रापतिजनक सामग्री) अधि 1951 (1951 का 56) 1 फरवरी, 1952 से प्रभावशील देखिए धारा 36
- 18 प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण (संशोधन) अधि 1955 (1955 का 55) 1-7-1956 से प्रभावशील । देखिए धाराएं 2 व 9
- 19 प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण (संशोधन अधिनियम) 1960 (1960 का 26) 1 10 1960 से प्रभावशील । देखिए धाराएं 2 व 10
- 20 1965 का 16वा अधि (1-11 1965 से प्रभावशील) देखिए धाराएं 2 से 4
- 21 1968 का 30वा अधि देखिए धारा 2
- 22 दंड प्रक्रिया संहिता 1898 (1898 का 5) अध (1974 का 2)
- 23 प्रेस परिषद अधि 1978 (1978 का 37) अधि भाग 27

## केन्द्रीय नियमों को संशोधित करने वाले जी एस आर

- 1 जी एस आर 0016 दिनांक 4 फरवरी 1951
- 2 जी एस आर 0304 दिनांक 26 फरवरी 1953
- 3 जी एस आर 1059 दिनांक 29 मार्च, 1953
- 4 जी एस आर 1222 दिनांक 5 व 6 अप्रैल 1960
- 5 जी एस आर 1809 दिनांक 16 मई 1963
- 6 जी एस आर 0723 दिनांक 17 मई 1963
- 7 जी एस आर 1687 दिनांक 17 दिसम्बर, 1963

# प्रे पु अधि पर वर्ष क्रम से तथा धारा क्रम से विधि प्रकरणों का देशना (इंडेक्स)

क्र स	वप क्रम से प्रोडररा	वर्तित धारा (ए)	धारा क्रम से प्रादररा इस कॉलम मे धारा के नीचे तिले प्रक कालम न 1 क प्रमों स तत्स्थानी हैं ।
1	2	3	4
1	(1886) 9 मद्रास 387 (391) खण्ड पोट	7	प्रस्तावना
2	(1887) इलाहाबाद वि नो 95 (जी)	3 12	55 56 57
3	(1889) पंजाब री (जी) न 9 पृष्ठ 49 (50)	3,4 5 1.	79 80
4	(1893) 16 मद्रास 443 (445 447)	3	धारा-1
5	(1896) 23 कलकत्ता 414 (415) खपी	3	44,45
6	(1905) 2 श्री ला ज 31 (33)	7	60,61
7	(1905) पंजाब री (जी) न 1	7	67,68
8	(1908) श्री ला ज 10 (18) खपी	7	100 101
9	(1908) श्री ला ज 438 (444) कलकत्ता	7	112,113
10	(1909) श्री ला जे 506 (513) खपी मद्रास	7	114,115
11	(1909) 10 श्री ला ज 195 (198) लाहौर	3 12	116
12	1909 पुणे री (जी) न 5	3 12	धारा-3 23,4 5,11,12,13 15 18 19,30 31,32 33 38,39

13	एच रेग 978 इ	3,4,5,12	42 43 46,47,52,56,57
14	(1911) 12 श्री सा ज 354 (354) स पी कलकत्ता	7	42,43,46,47,52,56,57
15	(1912) 13 श्री सा ज 139 (139) ल पी (बम्बई)	3	58 59 67,68,69,70 71 72,73,84,85,100 101 102,106,114,115,116
			घरा-4
16	सा 1918 साहोर 302 (302)	6	3,13,20 21 22,23
17	19 श्री सा ज 621 (न पी)	6	30,31 34,35 50,51
18	1920 1 के बी 650	3,12	62,63,71,72,74 75
19	सा 1920 त्रि षा 56	3,12	77,78 79,80 83,102,106
20	ए 1923 बम्बई 255 (258, 260)	4 7	92 103 110,111,112,
21	25 श्री एल जे 150 (स पी)	4	113 114
			घरा-5
22	ए 123 साहोर 440 (440)	4,14	3 13,65,79,80,81,82,83, 84,85,92,103,110,111 112 113,114 115 116
			घरा-6
23	24 पी एल ज 657	4,14	16,17,79,80,81,82,83
24	ए 1927 इलाहाबाद 237 (237)	16	
25	28 श्री एल जे 232	16	
26	ए 1929 बलरत्ता 635 (636)	12	

1	2	3	4
27	31 श्री एल जे 672	12	पारा-7
28	1931 लाहौर 182 (183)	07	
29	32 श्री एल जे 681	07	1,6,7 8,9,10,14 20,28, 29 40
30	ए 1931 पटना 351 (352)	3,4,12	41,48,49 53,54,64 66, 71,72
31	32 श्री एल जे 1063 (स पी)	3,4 12	76,86 87,88,89 90,91, 95,96 97 98,99,112, 113,117 से 119
32	ए 1931 नागपुर 177 (178) (संशोधन के पूर्व का प्रकरण)	03	पारा-8 ए
33	32 श्री एल जे 1266 (संशोधन के पूर्व का प्रकरण)	03	112 113
34	ए 1931 मधु 81 (82)	04	
35	32 श्री एल जे 545	04	पारा-8 (ख)
36	ए 1931 कलकत्ता 641 (642)	12	81,82 103 107 108, 109 110,111
37	33 श्री एल जे 91	12	पारा-8 (ग)
38	ए 1933 रतून 4 (4)	3,12	
39	34 श्री एल जे 262	3 12	110 111
40	ए 1935 नागपुर 90 (104)	07	पारा-11 (क)
41	36 श्री एल जे 744	07	

1	2	3	4
42	ए 1937 इक्टूबर 28 (30)	3,12	109
43	38, श्री एल जे 145 (लं पी)	3,12	पारा-12
44	ए 1940 एटना 613 (614)	19,16	23,11,12,13,18,19,26,
45	42 पी एल जे 78	1,9,16	27,30
46	ए 1943 लाहौर	3,12	31,36,37,38,39,42, 43,46
47	43 श्री एल जे 897	3,12	47,52,56,57,58,59,69,70
48	ए 1949 लाहौर 266 (270)	07	77,84,85,93,94,104,105
49	51 श्री एल जे 35 (पूण पीठ)	07	106
50	ए 1951 मद्रास 714 (714)	04	पारा-13
51	52 श्री एल जे 713	04	106
52	ए 1952 एल सी 369	3,12	पारा-14 22,23,107,108
53	ए 1953 मद्रास 418 (419)	07	पारा-16
54	1953 पी एल जे 763	07	24,25 44,45,60,61,67, 68
55	1955 मध्य भारत पी एल जे (एच सी भार) 392 (398, 399) नं पी	प्रस्तावना	पारा-16(क)
56	ए 1955 इनाहास 524 (525)	प्रस्तावना 3,12	109



4

3

57	1955 श्री एल जे 1308 (ख पी)			
58	ए 1957 मद्रास 427 (429) 430			
59	1957 1, मद्रास एल जे 136			
60	ए 1958 राजस्थान 350 (351)			
61	1958 श्री एल जे 1547			
62	ए 1959 आंध्र 530 (532)			
63	1959 श्री एल जे 1141			
64	ए 1959 राज 280 (286) ख पी			
65	ए 1959 मद्रास 519 (521)			
66	ए 1959 केरल 120 (124) ख पी			
67	ए 1960 आंध्र 176 (177)			
68	1960 श्री एल जे 452			
69	ए 1960 इलाहाबाद 450 (452) (453)			
70	1960 श्री एल जे 1037			
71	ए 1960 उड़ीसा 126 (127, 128)			
72	1960 श्री एल जे 1116			
73	1962 (1) श्री एल जे 824 (826) मनीपुर			
74	ए 1962 एस सी 586 (588)			
75	1962 (1) श्री एल जे 518			
		प्रस्तावना 3 12	धारा-17	
		3 12	84,85	
		3,12		
		1 9 16	धारा-19 घ	
		1,9 16	95 96,107 108	
		04		
		04	धारा-21	
		07	67 68,100,101	
		05		
		07		
		1 3 9,16 21		
		1 3,9 16 21		
		3 12		
		3 12		
		3 4 7		
		3 4,7		
		03		
		04		
		04		

1	2	3	4
76	1962 (2) श्री एल जे 142 (केल)		07
77	ए 1964 गुजरात 278 (न पी)		4,12
78	(1964) 5 गुजरात एल घार 825 (न पी)		04
79	ए 1964 गुजरात 278 (280, 281)	प्रस्तावना 4,5 6	
80	(1965) 5 गुजरात एल घार 825	प्रस्तावना 4,5 6	
81	ए 1965 म प्र 128 (130)	5,6,8 ख	
82	1965 म प्र एल जे 227 (न पी)	5,6,8 ख	
83	(1966) मैसूर एल जे 592 598	4 5 6	
84	ए 1966 पंजाब 93 (95) 342 (343)	3,5,12,17	
85	1966 गे एल जे 292, 342	3 5 12,17	
86	ए 1968 एम सी 110 (111)	07	
87	1968 श्री एल जे 95	07	
88	ए 1968 कर्नात 296 (298)	07	
89	1968 श्री एल जे 759	07	
90	73 कर्नात २ नू एन 1	07	
91	घाई एन घार (1968) 18, राज 318	07	
92	(1969) 3 एम सी सी 595	05	
93	ए 1970 घासाम 128 (129)	12	
94	1970 श्री एल जे 1596 (गुणपीठ)	012	
95	ए 1971 एम सी 856 (859, 860)	7,19 घ	
96	(1971) 2 एम सी जे 465	7,19 घ	
97	1972 राज एल डब्ले 337	07	

1	2	3	4
98	1972 डब्लू एल एन 780 (ख पी)		07
99	(1972) 49 आई एल आर 160 (167) उदीसा		07
100	1973 इलाहाबाद नौ एल आर 475 (480, 481)	1 3 21	
101	1973 इलाहाबाद डब्लू आर (एस सी) 681, 685	1 3 21	
102	(1973) 2 मैसूर एल जे 553 (556)	3 4 12 13	
103	ए 1973 एस सी 213 (215)	5, 8 ख	
104	1973 इलाहाबाद डब्लू आई (एच सी) 681	012	
105	1973 इलाहाबाद नौ आर 475 (479, 480, 481)	012	
106	आई एल आर (1974) जे ट 114	3 4 12 13	
107	(1974) 1 केट एल जे 328	8ख 14 19घ	
108	1975 या एल जे 90 (93 95)	8ख, 14, 19घ	
109	1975 डब्लू एल एन (यू सी) 528 (530) राज	8ख, 11क 16क	
110	1977 डब्लू एल एल 538, 540	5 8ख, 8ग	
111	1978 राज एल डब्लू 17 (19)	5 8ख 8ग	
112	1978 केरल एल टी 38 (निरमित)	1, 5 7 8क	
113	ए 1979 एस सी 154 (158 160, 162, 163)	1 5, 7 8क	
114	ए 1983 बम्बई 190 (192) 201 (210 211)	1 3 5	
115	1983 टेक्स एल आर 2871 (पूण पी)	1 3 5	
116	1983 लाहौर आई सी 789 (ख पी)	1, 3, 5	
117	1983 नौ एल जे 777 (781)	07	
118	1983 राजधानी एन आर 581 (देहरी)	07	
119	ए 1987 पंजाब व हरियाणा 5	07	

## प्रेस परिषद् (सशोधन) नियम 1988

भारत सरकार

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय

नई दिल्ली, मार्च 14, 1988

### अधिसूचना

केन्द्रीय सरकार ने प्रेस परिषद् अधिनियम 1978 (1978 का 37) की धारा 25 द्वारा प्रदत्त शक्तियाँ का प्रयोग करते हुए प्रेस परिषद् नियम (सशोधन) 1981 में निम्नलिखित संशोधन करती है अधिधानत

- 1 (i) इन नियमों का नाम प्रेस परिषद् (सशोधन) नियम 1988 होगा।  
(ii) यह सरकारी राजपत्र में प्रकाशन की तिथि से प्रवृत्त होंगे।
- 2 प्रेस परिषद् नियम 1979 के नियम 10 (1) के खण्ड (क) से (घ) तक तथा तदाधीन स्पष्टीकरण में निम्नलिखित प्रतिस्थापित किए जायेंगे अधिधानत  
(क) 1,50,000 से अधिक परिसंचरण सहायता वाले पञ्जीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकाएँ
  - (i) प्रत्येक दिन से 7,500 रु प्रतिवर्ष
  - (ii) प्रत्येक द्वि-साप्ताहिक/साप्ताहिक से 4,500 रु प्रतिवर्ष
  - (iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 3,500 रु प्रतिवर्ष
  - (iv) अन्य सभी श्रेणियों से 2,250 रु प्रतिवर्ष
- (ख) 1,00,000 से अधिक तथा 1,50,000 तक परिसंचरण सहायता वाले पञ्जीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकाएँ
  - (i) प्रत्येक दिन से 5,250 रु प्रतिवर्ष
  - (ii) प्रत्येक द्वि-साप्ताहिक/साप्ताहिक से 3,000 रु प्रतिवर्ष
  - (iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 2,250 रु प्रतिवर्ष
  - (iv) अन्य सभी श्रेणियों से 1,500 रु प्रतिवर्ष

- (ग) 50,000 से अधिक तथा 1,00,000 तक परिसंचरण सख्या वाले पजीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकाएँ
- (i) प्रत्येक दिन से 3,750 रु प्रतिवष
  - (ii) प्रत्येक द्वि-साप्ताहिक/साप्ताहिक से 2,250 रु प्रतिवष
  - (iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 1,500 रु प्रतिवष
  - (iv) अथ सभी श्रेणियों से 1 125 रु प्रतिवष
- (घ) 15,000 से अधिक तथा 50,000 तक परिसंचरण सख्या वाले पजीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकाएँ
- (i) प्रत्येक दिन से 1 500 रु प्रतिवष
  - (ii) प्रत्येक द्वि-साप्ताहिक/साप्ताहिक से 900 रु प्रतिवष
  - (iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 600 रु प्रतिवष
  - (iv) अथ सभी श्रेणियों से 450 रु प्रतिवष
- (ङ) 5,000 से अधिक तथा 15,000 तक परिसंचरण सख्या वाले पजीकृत समाचारपत्र तथा पत्रिकाएँ
- (i) प्रत्येक दिन से 200 रु प्रतिवष
  - (ii) प्रत्येक द्वि साप्ताहिक/साप्ताहिक से 150 रु प्रतिवष
  - (iii) प्रत्येक पाक्षिक/मासिक से 100 रु प्रतिवष
  - (iv) अथ सभी श्रेणियों से 100 रु प्रतिवष
- (च) प्रथम श्रेणी में प्रत्येक समाचार अभिकरण से 7,500 रु प्रतिवष
- (छ) द्वितीय श्रेणी के प्रत्येक समाचार अभिकरण से 5,250 रु प्रतिवष
- (ज) अथ सभी समाचार अभिकरणों से 3,750 रु प्रतिवष

स्पष्टीकरण - इस नियम के उद्देश्य स्वरूप पजीकृत समाचारपत्रों तथा पत्रिकाओं की वितरण सख्या भारतीय समाचारपत्रों के पजीकृत द्वारा उपलब्ध नवीनतम वितरण सख्या तथा थमजीवी पत्रकारों व वेतनबोर्ड की रिपोर्ट में साकेतित समाचार अभिकरणों के वर्गीकरण के लक्षण के अनुसार निर्धारित होगी।

## लोकसभा में प्रस्तुत प्रेस एण्ड रेगुलेशन ऑफ बुक्स (सशोधन विधेयक) 1988

गत 24 नवम्बर 1988 को भारत सरकार के सूचना व प्रसारण मन्त्रालय ने प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867 में सशोधन हेतु प्रेस एण्ड रेगुलेशन ऑफ बुक्स नाम का एक सशोधन बिल लोकसभा में प्रस्तुत किया जिसे अभी तक (जुलाई 1989) तो लोकसभा की विचाराधीन कार्यसूची में लिया भी नहीं गया है। इस बिल का प्रेस जगत में यह कहकर भारी विरोध हो रहा है कि यह प्रेस की स्वतंत्रता पर आघात है। लगता है सरकार को अतंतोगत्वा इस बिल को वापिस लेना होगा अथवा विवादास्पद अंशों को इस बिल में निवालना होगा।

इस सशोधन बिल के उद्देश्यों व कारणों में बताया गया है कि दूसरे प्रेस आयाग ने 1982 में अपना रपट में इस अधिनियम को सशोधित करने के लिए कई सिफारिशों की थी तथा कामिक व जन अभियोग विभाग ने भी भारत के समाचारपत्रों के पजीयक द्वारा छपनापी जाने वाली प्रक्रिया पर गहन अध्ययन किया तथा कई सिफारिशें विशेषकर समाचारपत्रों के संबंध में की। सन् 1985 में राज्यों व सूचना मंत्रियों के सम्मेलन में भी इस अधिनियम में सशोधन हेतु कुछ सुझाव दिये गये थे।

नये सशोधन बिल को लाने के पीछे एक महत्वपूर्ण कारण यह भी बताया गया है कि समाचारपत्र व पत्रिकाओं के करीब एक लाख अस्सी हजार शीपक रके पडे हैं जिनको मुक्त करना आवश्यक है ताकि न केवल प्रकाशकों की शीपक निष्कासन के मामले में विस्तृत क्षेत्र मिले बल्कि प्रेस रजिस्ट्रार भी शीपक निष्कासन हेतु प्राप्त आवदनों को शीघ्रता से निबटा सकें। अतः इस विषय पर प्राप्त सुझावों को ध्यान में रखते हुए केन्द्र सरकार ने इस अधिनियम के विस्तृत पुनरीक्षण विशेषकर समाचारपत्रों के प्रकाशन के संबंध में करने का काम हाथ में लिया।

वर्तमान अधिनियम व लोकसभा में प्रस्तुत संशोधन विधेयक में अंतर

वर्तमान अधिनियम

प्रस्तावित संशोधन बिल

### शीपक निष्कासन

1 शीपक निष्कासन के संबंध में कोई नियम नहीं दिया गया है। केवल धारा 6 जो समाचारपत्र को शुरू करने की घोषणा के प्रमाणीकरण के संबंध में है में कहा गया है कि धारा 5 (समाचार पत्रों के प्रकाशन संबंधी नियम) के तहत प्रस्तुत व हस्ताक्षरित घोषणा पत्र का क्षेत्राधिकार प्राप्त मजिस्ट्रेट जब तक प्रमाणित नहीं करेगा जब तक कि वह प्रेस रजिस्ट्रार से जांच करने पर सतुष्ट न हो जाए कि प्रस्तावित समाचार पत्र का नाम या तो वही या वसा ही नहीं है जो कि या तो उसी भाषा में या उसी राज्य में प्रकाशित किसी अन्य समाचार पत्र का है (नए संस्करण के मामले में जब स्वामी एक ही हो वो छोड़कर)

प्रायः यह एक कानूनी परम्परा पढ़ गयी है कि मजिस्ट्रेट के जरिए शीपक निष्कासन के संबंध में प्रेस रजिस्ट्रार को आवेदन किया जाता है व प्रेस रजिस्ट्रार को यहाँ से कोई शीपक भावित हो जाने के बाद समाचारपत्र को शुरू करने का घोषणा पत्र प्रस्तुत कर दिया जाता है।

दैनिक समाचार-पत्र/नियतकालिक पत्रिका को मुद्रित/प्रकाशित कराने का इच्छुक व्यक्ति प्रेस रजिस्ट्रार के यहाँ निर्धारित प्रपत्र में एक आवेदन पत्र भेजेगा जिसमें वह प्रस्तावित दैनिक समाचारपत्र/नियतकालिक पत्रिका के तीन शीपक वरीयताक्रम में वकल्पिता दर्शाते हुए वर्णित करेगा और प्रेस रजिस्ट्रार से यह प्रमाण पत्र मागेगा कि आवेदन-पत्र में वर्णित शीपको में से प्रमुख शीपक या तो वही या वसा ही नहीं है जो कि या तो उसी भाषा में या उसी राज्य में प्रकाशित अन्य दैनिक समाचार पत्र/नियतकालिक पत्रिका का है।

शीपक निष्कासन के संबंध में निर्धारित आवेदन पत्र प्राप्त होने पर प्रेस रजिस्ट्रार अपने यहाँ रखे रिकार्ड से सतुष्ट होने के बाद आवेदक द्वारा माग गए उक्त प्रमाण-पत्र को दो परतों में जारी करेगा व आवेदन पत्र में वर्णित वरीयताक्रम में लिखे गए शीपको में से एक को भावित करेगा। ऐसा सतुष्ट न होने पर प्रेस रजिस्ट्रार ऐसा प्रमाण पत्र जारी करने से मना कर देगा व उक्त तथ्यों में भावत्व को अवगत करायेगा।

2 प्रकाशना के जो शीपक वध घोषणा बने रहने से रुक गये हैं वे रुके ही पडे हैं जिनको दूसरे आवेदनी को नहीं दिया जा सकता ।

2 ऐसे शीपक दूसरे आवेदका को उनके चाहने पर मिल सकेंगे । शीपक का पूव मालिक उस अवधि के लिए जिसके दौरान वह शीपक पर अपना दायित्व रखता था यदि कोई कानूनी दायित्व पदा हुआ तो वही उसके लिए उत्तरदायी होगा ।

### समाचारपत्र/पत्रिका शुरू करने के पूव की घोषणा

1 किसी भी प्रस्तावित समाचार पत्र/नियतकालिक पत्रिका का घोषणा पत्र प्रेस रजिस्ट्रार में शीपक निष्कासन के प्रमाण-पत्र के बिना भी पेश किया जा सकता है लेकिन इसमें यही सतरा है कि मजिस्ट्रेट द्वारा प्रेस रजिस्ट्रार से जाच करने के बाद यह संभव है कि वहाँ से यह लिखा जावे कि प्रस्तुत घोषणा-पत्र में दिया गया शीपक या तो वही या वैसा ही है जो कि या तो उसी भाषा में या उसी राज्य में प्रकाशित किसी अन्य समाचारपत्र का है ।

1 प्रस्तावित दैनिक समाचारपत्र/नियतकालिक पत्रिका का शुरू करने के आशयित घोषणा-पत्र को संबन्धित मुद्रक/प्रकाशक जिला/उपखण्ड/मेट्रो पालिटान मजिस्ट्रेट के यहाँ अपनी भोर से इस आशय की एक लिखित घोषणा के साथ पेश करेगा कि प्रस्तावित शीपक प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा सत्यापित किया जा चुका है । वह साथ में प्रेस रजिस्ट्रार द्वारा जारी मूल प्रमाण-पत्र भी लप्ये करेगा ।

2 इस तरह का दायित्व मुद्रक/प्रकाशक पर नहीं है बल्कि मजिस्ट्रेट पर है जिसमें भी कोई समयावधि नहीं है ।

2 दैनिक समाचारपत्र/नियत कालिक पत्रिका को शुरू करने के आशयित घोषणापत्र के प्रस्तुत करने तथा हस्ताक्षरित करने तथा भेजे जाने के 10 दिन के भीतर भीतर मुद्रक/प्रकाशक ऐसी घोषणा की तथा संबन्धित दम्नावेदनी की प्रत्येक प्रति प्रेस रजिस्ट्रार को भेजेगा ।

3 कूनि घोषणा-पत्र के पूव प्रस रजिस्ट्रार से शीपक निष्कासन का प्रमाण-पत्र जरूरी नहीं है अत वरिणत स्थिति में इसके प्रभावहीन होने का स्थान ही नहीं उठता ।

3 शीपक निष्कासन के प्रमाण पत्र जारी होने के तीन महीनों के अंदर अंदर मुद्रक/प्रकाशक प्रस्तावित दैनिक समाचारपत्र/नियतकालिक पत्रिका का घोषणा-पत्र प्रस्तुत नहीं करे तो ऐसा प्रमाण-पत्र प्रभावहीन हो जायेगा ।



4 किसी भी समाचारपत्र/नियत कालिक पत्रिका के मुद्रण/प्रकाशन को शुरू करने के पूर्व मुद्रक/प्रकाशक द्वारा मजिस्ट्रेट के यहाँ शुरूआती घोषणा-पत्र प्रस्तुत करना व हस्ताक्षरित करना तथा उसे मजिस्ट्रेट से प्रमाणित करवाना पूर्व शर्त है।

4 प्रेस रजिस्ट्रार से शीपक निष्कासन का प्रमाण-पत्र मिल जाने के तत्काल बाद से ही प्रकाशक/मुद्रक प्रस्तावित दैनिक समाचार-पत्र/नियत कालिक पत्रिका का मुद्रण/प्रकाशन प्रारम्भ कर सकता है बशर्ते वह इनके प्रारम्भ हो जाने के एक माह के अन्दर अन्दर क्षेत्राधिकार प्राप्त मजिस्ट्रेट के यहाँ शुरूआती घोषणा-पत्र प्रस्तुत करे तथा हस्ताक्षरित करे या भेजे।

### घोषणा पत्र का निरस्तीकरण

किसी समाचारपत्र/नियतकालिक पत्रिका के प्रकाशित अंको की सत्या को आधार बनाकर उसके घोषणा पत्र को निरस्त करने के संबंध में सीधा कोई आधार धारा 8(ख) में नहीं है। यद्यपि प्रकाशित अंको की सत्या के आधार पर घोषणा पत्र निरस्त किया जा सकता है लेकिन वह धारा 8(ग)(1) में बखित यह प्रावधान कि जिस समाचार पत्र के संबंध में घोषणा की गई है वह समाचार पत्र इन अधि के प्रावधानों या इसके तहत बने नियमों के उल्लंघन में तो प्रकाशित नहीं हो रहा है की व्याख्या के तहत।

धारा 5(6) में कोई दैनिक/त्रिसाप्ताहिक/द्विसाप्ताहिक/साप्ताहिक/पाक्षिक क्लेण्डर वष की किसी तिमाही में अपने प्रकाशक अंको से आगे से भी कम में प्रकाशित हुआ हो और इनके अलावा दूसरे समाचारपत्र का प्रकाशन बारह महीने की अवधि से अधिक अवधि तक रका पडा हो तो इनका तत्संबंधी घोषणा पत्र अवध हो जाता है। यदि इस संबंध में दूसरा घोषणा-पत्र प्रमाणित नहीं कराया गया है तो इनका पूर्व का घोषणा पत्र निरस्त किया जा सकता है।

क्षेत्राधिकार प्राप्त मजिस्ट्रेट किसी दैनिक समाचारपत्र के घोषणा पत्र को इस आधार पर निरस्त कर सकता है कि उसके क्लेण्डर वष की किसी तिमाही में कम से कम 78 अंक भी प्रकाशित नहीं हुए। किसी नियत कालिक पत्रिका के घोषणा पत्र को इस आधार पर निरस्त किया जा सकता है कि उसका अगला अंक पिछले अंक के बाद तीन माह के अन्दर अन्दर प्रकाशित नहीं किया गया।

मुद्रक/प्रकाशक की उक्त प्रभार की चूक यदि हड़ताल, तालाबंदी धीमा चलो विद्युत किल्लत या अन्य कारण जो उसके नियंत्रण से बाहर रहे हो जय हों तो ऐसी दशा में घोषणा-पत्र निरस्त नहीं किया जा सकता।

### परिभाषाएँ

1 'समाचारपत्र की परिभाषा में बताया गया है कि कोई भी मुद्रित नियत कालिक रचना जिसमें सावजनिक समाचार अथवा सावजनिक समाचारों पर टिप्पणियाँ शामिल हों, समाचारपत्र है।

2 'नियतकालिक पत्रिका' की अलग से कोई परिभाषा नहीं दी गई है।

3

1 'समाचारपत्र' की वर्तमान परिभाषा को लोप करके एक नई परिभाषा यो दी गई है—

दैनिक 'समाचारपत्र' से तात्पर्य कोई भी दैनिक अवधि की मुद्रित रचना जो एक सप्ताह में कम से कम 6 दिन प्रकाशित होती है जिसमें सावजनिक समाचार या सावजनिक टिप्पणी हो, ऐसे समाचारपत्र में कोई भी पूरक या विशेष सस्करण भी शामिल है।

2 'नियतकालिक पत्रिका' की परिभाषा यो दी गई है— नियतकालिक पत्रिका' से तात्पर्य एक दैनिक समाचारपत्र को छोड़कर किसी भी अवधि की किसी भी मुद्रित रचना से है जिसमें सावजनिक समाचार या सावजनिक समाचारों पर टिप्पणी हो भी सकती है या नहीं भी। ऐसी नियतकालिक पत्रिका में कोई भी पूरक या विशेष सस्करण भी शामिल है।

3 'प्रेस रजिस्ट्रार' की परिभाषा में 'रजिस्ट्रार' अथवा 'यूजपेपस फार इण्डिया शब्दों के स्थान पर प्रेस रजिस्ट्रार शब्द शामिल होगा।

### रजिस्ट्रार

प्रेस रजिस्ट्रार के यहाँ एक ही रजिस्ट्रार रखने का प्रावधान है जिसमें दैनिक समाचारपत्रों व नियतकालिक पत्रिकाओं का विवरण दर्ज होता है।

इस आशय हेतु अब दैनिक समाचारपत्रों व नियतकालिक पत्रिकाओं के अलग अलग दो रजिस्ट्रार रखने होंगे।

## शक्तिया

1

1 धारा 20(क) के तहत केन्द्र सरकार को निम्न विषयो पर भी नियम बनाने की शक्तियाँ दी गई हैं -

(i) शीपव निष्कासन के आवेदन पत्र का प्रारूप कैसा हो।

(ii) दैनिक समाचारपत्र/नियत कालिक पत्रिकाओं के सबंध में उन तकनीकी व आर्थिक विवरणों का निर्धारण करना जिन्हें अपने पास रखे रजिस्ट्रार व प्रेस रजिस्ट्रार को दज करके रखना होता है।

(iii) शीपक निष्कासन के सबंध में प्रेस रजिस्ट्रार को भेजे जाने वाला आवेदन-पत्र क्या हो व यह किस तरह भेजा जाएगा।

2 अब ये शक्तिया प्रेस रजिस्ट्रार को हस्तांतरित की जा रही हैं।

2 दोपी समाचारपत्रों पर जुर्माना लगान की शक्तियाँ क्षेत्राधिकार प्राप्त जिला/उपखंड/मेट्रोपॉलिटान मजिस्ट्रेट को है।

3 समाचारपत्रों के प्रसार का जाँचने की शक्तियाँ भारत के समाचार पत्रों के पजीयक को है।

3 अब ये शक्तियाँ जिला मजिस्ट्रेट को दी जा रही हैं।

4 इस प्रकार की जानकारी प्राप्त करन का प्रावधान नहीं है।

4 भारत के समाचारपत्रों व पजीयक समाचारपत्रों के सबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने की शक्तियाँ होगी जिनमें शामिल होगी - रोजगार में लगे व्यक्तियों के बारे में भाकडे, उपयोग में आ रही मशीनों में लगी पूजी व अन्य तकनीकी भाकडे।

## मुद्रक/प्रकाशक नहीं रहने पर

वे व्यक्ति जो वायणा प्रस्तुत व हस्ताक्षरित करन के बाद मुद्रक/प्रकाशक नहीं रहे उनको इस आशय की घोषणा पेश करन के लिए क्षेत्राधिकार प्राप्त जिला/उपखंड/मेट्रोपॉलिटान मजिस्ट्रेट व सामने स्वय उपस्थित होना पडता है।

ऐसे व्यक्ति स्वय उपस्थित न रहकर अपने किसी एजेंट को प्राधिकृत करके भी नयी घोषणा प्रस्तुत करवा सकते हैं।

## भारत में प्रेस से सबधित कानून कैसा हो

इस समय प्रेस से सबधित भारतीय कानूनों में प्रथम महत्व का अधिनियम—“प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम 1867” ही है। 1867 के बाद इस अधिनियम में इतने सशोधन हो चुके हैं कि यह अधि 1867 के मूल अधि से बिलकुल बदल गया है। इसके दावजूद भी इस अधि में कुछ सशोधन अपेक्षित हैं।

जब हम इस प्रश्न पर विचार करते हैं कि भारत में प्रेस से सबधित कानून कैसा हो ता विषय विस्तार कि दृष्टि से हमारे सामने तीन तरह के प्रस्ताव उभर कर आते हैं—

- (i) प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि 1867 में ही आवश्यक सशोधन करना अथवा
- (ii) सम्पूर्ण प्रिंटमीडिया (मुद्रण माध्यम) पर एक नीति निर्माण करने प्रिंटमीडिया के सबध में एक नया अधिनियम या संहिता बनाना अथवा
- (iii) सम्पूर्ण प्रेस जिसमें दूरदर्शन व भाषाशवाणी का मीडिया भी शामिल हो, पर एक बृहद नीति बनाई जाकर नए सिरे से भारतीय प्रेस संहिता नाम का एक नया अधिनियम बनाना

तीनों प्रस्तावों में न तीसरा प्रस्ताव ही निष्पक्षता की दृष्टि से एक श्रेष्ठ प्रस्ताव कहा जा सकता है। तीनों प्रस्तावों पर अलग अलग प्रकाश डाला जा रहा है।

### प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि

- (i) इस अधि में ‘मुद्रण’ की परिभाषा मुद्रण की मौजूदा उन्नत तकनीकों को अपने आप में शामिल नहीं करती है जस — मुद्रण की मौजूदा परिभाषा में सिर्फ साइक्लोस्टाइलिंग और लीथोग्राफी को ही शामिल किया गया है। आज मुद्रण की उन्नत तकनीकों — फोटोस्टेट प्रिंटिंग व लेजर प्रिंटिंग (डेस्कटॉप पब्लिशिंग) आदि कई तकनीकों विकसित हो गई हैं। अतः मुद्रण की ऐसी परिभाषा दी जानी चाहिए जिनमें ये सब शामिल ता हो ही भविष्य में अन्य प्रकार की आने वाली उन्नत तकनीकों भी इसकी परिभाषा में शामिल हो सकें।

हां सकें। मुद्रण की नई परिभाषा में अर्थ शब्दों के साथ-साथ निम्न शब्दों के प्रयोग से इस आशय की पूर्ति हो सकती है —

किसी भी यात्रिक उपकरण से एक ही समान प्रक्रिया के माध्यम से जिसके उत्पाद की प्रत्येक प्रति एक दूसरी प्रति से शब्दों/अक्षरों/चित्रों आदि की दृष्टि से हूँ ब-हूँ मिलती हो, मुद्रण है।

- (ii) 'संपादक' की परिभाषा में 'व्यक्ति' शब्द के आ जाने से इसके आशय को स्पष्ट करने के लिए भा.द.स. में 'व्यक्ति' की दी गई परिभाषा का सहारा लेना पड़ता है जिसके कारण कोई भी बम्पनी, सच या व्यक्तियों का कोई मण्डल चाहे निगमित हो या नहीं संपादक हो सकता है। अतः इसको नई परिभाषा के जरिए स्पष्ट करना चाहिए। मौजूदा परिभाषा के रहते दावों की बहुतायत बढ़ती है तथा जिम्मेदारी तय करने में अनिश्चितता पदा होती है।
- (iii) अब तक हुए 'यात्रिक निरणों के अनुसार 'डीनर के लिए ग्राम-त्रण पत्र' और 'विजिटिंग कार्ड' को भी पत्र माना गया है। धारा 3 के अनुसार इन पर प्रेस लाइन छापना आवश्यक है अथवा दण्डनीय है। यद्यपि राज्य सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वे किसी विशेष प्रकार की पुस्तकों या पत्रों को इस अधि के सम्पूर्ण भाग या इसके किसी भाग या भागों के प्रवर्तन से अपवर्जित कर सकती है। यहाँ देखने की बात यह है कि जिन राज्यों में ऐसा अपवर्जन नहीं किया गया है, क्या वहाँ की जनता के लिए यह असुविधाजनक नहीं है।
- जिन असुविधाओं को अ.भा.स्तर पर ही महसूस किया जा सकता है उनके सबंध में राज्य सरकारों पर छोड़ने से क्या लाभ।
- (iv) लोकसभा में प्रस्तुत सशोधन बिल में दैनिक समाचारपत्र और 'नियतकालिक पत्रिका' की जो अलग अलग परिभाषाएँ दी गई हैं, वे स्तुत्य हैं।
- (v) समाचारपत्रों की विषयवस्तु की गुणात्मक बढ़ोतरी के लिए सम्पादक की 'न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता या न्यूनतम आयु (जो कम से कम 25 वर्ष हो) के प्रावधान पर विचार किया जा सकता है।
- (vi) लोकसभा में प्रस्तुत सशोधन बिल में शीपक निष्कासन के सबंध में जो प्रावधान रखे गये हैं वे स्तुत्य हैं।
- (vii) लोकसभा में प्रस्तुत सशोधन बिल में जो यह प्रावधान रखा गया है कि प्रेस रजिस्ट्रार से शीपक निष्कासन का प्रमाण-पत्र मिल जाने के तत्काल बाद

से ही प्रकाशक/मुद्रक प्रस्तावित दैनिक समाचारपत्र/नियतकालिक पत्रिका का मुद्रण/प्रकाशन कर सकता है बशर्ते ऐसा होने के बाद एक महीने के अंदर वह मजिस्ट्रेट के यहाँ शुरुआती घोषणा पत्र प्रस्तुत कर दे।

इस प्रकार के प्रावधान से जुम्मेवारी कायम करने में कानूनी अड़चनें आएंगी। इससे तो 'घोषणा के प्रमाणीकरण' के पीछे जो आशय छिपा है वही फीत हो जायेगा। यह प्रावधान तो 'बंदूक रखने के लाइसेंस' के देने के पूर्व ही बंदूक रखने के लाइसेंस के आवेदन-पत्र देते ही बंदूक चलाने की छूट देना जसा है।

- (viii) लोकसभा में प्रस्तुत सशोधन बिल में प्रेस रजिस्ट्रार को समाचारपत्रों के संबंध में रोगार में लगे व्यक्तियों के बारे में आकड़े, उपयोग में आ रही मशीनों में लगी पूंजी व अन्य तकनीकी आकड़ों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने की शक्तियाँ देना अनुचित है। तरनालोन मध्य भारत उच्च न्यायालय की खपी ने प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि को मुद्रणपत्रों व समाचारपत्रों के नियमन के लिए बताया है न कि इनके नियंत्रण के लिए (1955 मध्य भारत बी एल जे (एल सी) (392) उक्त प्रावधान माननीय उच्च न्यायालय के निर्णय की भावनाएँ के विपरीत जाता है।
- (ix) समाचारपत्रों के प्रसार की जाँच की शक्तियाँ प्रेस रजिस्ट्रार से जिला मजिस्ट्रेट को देना इसलिए उचित प्रतीत नहीं होती क्योंकि ऐसा होने से समाचारपत्र जिला प्रशासन के दबाव में रहेंगे जिसका परिणाम यह होगा कि समाचारपत्र जिला प्रकाशन की खामियों को खुलकर उजागर नहीं कर सकेंगे।
- (x) इस अधि के तहत प्रस्तुत किये जाने वाले अभियोजन व जायबाहियों की समय सीमा के संबंध में भी प्रावधान रने जाने चाहिए।
- (xi) लोकसभा में प्रस्तुत सशोधन बिल में खपी समाचारपत्रों पर जुर्माना लगाने की शक्तियाँ प्रेस रजिस्ट्रार को हस्तान्तरित करने से जहाँ कई कानूनी अड़चनें पैदा होंगी वहाँ शासन का अप्रत्यक्ष रूप से समाचारपत्रों पर भ्रुकुश बढ़ेगा। जुर्माना व सजा देने के अधिकार तो न्यायालयों को ही रहने चाहिए। मौजूदा अधि में ये अधिकार जिला/मिट्रोपोलिटान/उपखण्ड मजिस्ट्रेट को मिले हुए हैं जो जिला सत्र न्यायाधीश को मिलने चाहिए। जिला/मिट्रोपोलिटान/उपखण्ड मजिस्ट्रेट तो केवल घोषणा-पत्रों को प्रमाणित

## प्रिंटमीडिया पर अधि या सहिता

प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि 1867 के साथ-साथ कई अधिनियमों में प्रेम विशेषकर प्रिंटमीडिया में सवधित कई प्रावधान देखने को मिलते हैं, जैसे 'यायालय अधि 1971 कापीराइट एक्ट 1957 भारतीय दंड सहिता 1860, दण्ड प्रथिया सहिता 1973 पुस्तक व समाचारपत्र परिदान (सावजनिक पुस्तकालय अधि 1954 शोधधि व चमत्कारी उपचार (धोषपणीय विनापन) अधि 1954, भारतीय डाकघर अधि 1898 भारतीय तार अधि 1885, शासकीय गुप्त बात अधि 1923 सप्तदीय कायवाही (प्रकाशन सरक्षण) अधि 1977 पुरस्कार प्रतियोगिता अधि 1955, भल्पवय ध्यक्ति (अपहानिकर प्रकाशन) अधि 1956 व प्रेस परिपद् अधि 1978 आदि धादि ।

जितना अच्छा हो, ऐसे समा अधिनियमों के प्रेस सवधो प्रावधानों को एक जगह सहितावद्ध कर दिया जाय । प्रिंटमीडिया अधि या सहिता बनात समय निम्न बातों का ध्यान रखा जाय —

- (i) उच्चतम 'यायालय व विभिन्न उच्च 'यायालयों द्वारा अब तक किये गये निएयों को ध्यान में रखकर आवश्यक संसोधन किये जायें ।
- (ii) इस सहिता में अक्रियात्मक अधि या भी विस्तार से उल्लेख हो ताकि नियम व उपनियम बनाने की कम से कम आवश्यकता पड़े ।
- (iii) चूनि प्रेस को विश्वस्तर पर लोकतंत्र का 'चतुथ स्तम्भ' स्वीकार कर लिया गया है अतः विशेषरूप से यह ध्यान रखा जाय कि कोई भी इस कानून का दुरुपयोग न कर सके ।
- (iv) इस नयी सहिता के उद्देश्यों के पालनाय तीन तरह के सगठन अपेक्षित होंगे ।
  - (क) प्रेस रजिस्ट्रार अथवा प्रिंटमीडिया रजिस्ट्रार जसा सगठन जो समाचारपत्रों के पजीयन के साथ साथ इनकी नियमितता पर भी चौकसी रखे ।
  - (ख) प्रेस परिपद् अथवा प्रिंटमीडिया परिपद् जसा सगठन जो समाचार पत्रों के मानदण्डों को बनाये रखे ।
  - (ग) 'यायामय व अद्ध यायालय जसा सगठन जो इस सहिता के प्रावधानों का उल्लघन करने वाला को दण्डित करे ।

प्रेस परिपद् जैसे मौजूदा सगठन को और अधिक प्रभावी न्यायिक शक्तियाँ दकर स और 'ग में वर्णित उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है ।

यदि इस तरह की 'यापक प्रिंटमीडिया सहिता नहीं बनाई जाय तो कम से कम प्रेस व पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधि 1867 व प्रेस परिपद् अधि 1978 को मिलाकर एक नया अधि बनाया जाय जिसमे प्रेस रजिस्ट्रार को समाचारपत्रों के पजीयन व नियमितता देखते रहने का काम तथा प्रस परिपद् को समाचारपत्रों के मानदण्डों को बनाय रखने का काम यथावत रखा जाय । यह इसलिए भी जरूरी है कि जहाँ प्रे पु अधि सख्यात्मक बढोतरी को प्रोत्साहित करता है वहाँ प्रे प अधि गुणात्मक बढोतरी को प्रोत्साहित करता है । इन दोनों के एक किये जाने से उच्छल पत्रकारिता पर अकुश लगाने में और अधिक प्रभावी सहायता मिल सकेगी । यों भी समाचारपत्रों/पत्रिकाओं की स्थापना से संबंधित कानूनी जानकारी देने वाले अधि में ही इनस अपेक्षा किये जान वाले आचार विचार से संबंधित कानूनी जानकारी वाले प्रावधान भी उसी अधि में होने चाहिए, अलग क्यों ?

(v) द प्र स म इस आशय का सशोधन किया जावे कि समाचारपत्रों/पत्रिकाओं में प्रकाशित किसी मानहानियुक्त सामग्री से पीडित व्यक्ति प्रेस परिपद् अथवा प्रिंटमीडिया परिपद् में परिवाद दज कराये तो परिवाद दज की तिथि स परिपद् के निणय की तीथि तक के समय को दरी-दा नहीं माना जाय । इससे यह लाभ होगा कि अदालतों की लम्बी व खर्चीली प्रक्रिया से पीडित व्यक्ति पहले प्रेस परिपद् में पुकारेगा । बहुधा देखा गया है कि मानहानियुक्त सामग्री से पीडित व्यक्तियों में अधिकांश का यही हल रहता है कि परिवादी की शिवायत को सही मान कर मुलजिम की निंदा कर दी जाय । उसे मुलजिम का सजा या जुमाना कराने में अधिक रुचि नहीं रहती क्योंकि वह यह भी जानता है कि मुलजिम को सजा या जुमाना कराने में आगे अपीलें पर अपीलें होंगी जिसमें वर्षों लग जायेंगे । ऐसा व्यक्ति अपने अहम् की सुष्टि के लिए सिफ यही चाहता है कि मुलजिम की निंदा कर दी जाय और यह काय प्रेस परिपद् या प्रिंटमीडिया परिपद् बखूबी कर सकती है । इस प्रावधान का विस्तार प्रिंटमीडिया अधि/सहिता बनने पर समाचारपत्र/पत्रिकाओं के साथ-साथ प्रिंटमीडिया के अन्य रूपों, जैसे - पुस्तकों, हैण्ड बिल्स आदि में प्रकाशित सामग्री तक भी किया जा सकता है ।

### सम्पूर्ण प्रस पर सहिता

भारत में प्रेस की स्वतंत्रता को पूणता व स्थापित्व देने के लिए अभी बहुत कुछ करना बाकी है । सबसे पहला काम अमेरिकन सविधान की तरह भारतीय सविधान में भी 'प्रेस की स्वतंत्रता' विषयक अलग से एक अध्याय बनाना



यह सविधान प्रदत्त व्यवस्था इस रूप में होनी चाहिए कि कोई भी सरकार इसमें सशोधन करके प्रेस की आजादी पर अकुश लगाने में अपने आपको असमर्थ पाये।

सूचना प्राप्त करने के अधिकार के बिना प्रेस की स्वतंत्रता पूर्ण नहीं मानी जा सकती। चूंकि इस प्रकार का अधिकार भारत में नहीं है, इसलिए भारत में प्रेस का जो आजादी मिली हुई है उसे पूर्ण नहीं माना जा सकता।

जन संचार के माध्यम के रूप में प्रिंटमीडिया से भी अधिक सशक्त ब्राड रेडियो और टूरबशन है। जब तक इन्हें स्वायत्तता नहीं दी जाती तब तक भी भारत में प्रेस की स्वतंत्रता अधूरी ही कही जायेगी।

यह सोचना कि भारत में कभी ऐसा दिन आ ही नहीं सकता कि यहाँ प्रेस को पूर्ण आजादी मिल सके, और निराशावादी दृष्टिकोण होगा। प्रेस की पूर्ण आजादी की पक्षधर कोई भी सरकार जिस दिन ऐसा करने का दृढ़ संकल्प ले लेगी उसको ऐसा करने में कोई बाधा आयेगी ही नहीं लेकिन यह सब कुछ उसी दिन होगा जब दलगत व निजी हितों को ताक में रखा जाकर ध्यापक दृष्टि से विचार किया जायेगा।

## संदर्भ सामग्री

- (1) ग्राल इण्डिया रिपोर्ट्स व मैनुअल्स (2) ग्रार एल डब्लू
- (3) डब्लू एल एन (4) ब्रीमिनल ला जनल्स (5) लॉ नोट्स (6) लॉ रिपोर्ट्स (7) बी एच सी (8) भारतीय प्रेस परिषद् द्वारा प्रकाशित त्रिमासिक व वार्षिक रिपोर्ट्स (9) भारत सरकार व राज्यों के विभिन्न राजपत्र
- (10) सामान्य का विधि शास्त्र (11) धाई एल एन ए द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका (12) विधि, 'याय और कम्पनी काय मंत्रालय द्वारा प्रकाशित विधि शाखावली (13) कोलिंस स्टेण्डर्ड डिक्शनरी (14) डॉ० रघुवीर कृत कम्प्रीहेंसिव इंगलिश हिन्दी डिक्शनरी।



नामक स्वतन्त्र छन्द की परिभाषा यह है जिसका कुछ मात्राएँ टॉ० हरिवल्लभ भाषाणों ने मन्त्र रामक का भूमिका में दर्शना है, छन्द ढगिया, पढ़िया, घता चौपाई, रड्डा आत्मा, अटिल्ल आत्ति अनक छन्द का बन्तायत म प्रयाग करन वाली रचनाआ का रामक नाम लिया है। इस प्रकार मभा परिभाषाआ म प्रयुक्त तथ्या का समीक्षा मान कर चरन म जब हम आत्तिकात्तल हिन्दू जैन साहित्य का राम रचनाआ म 'राम' छन्द का ढूँढन हैं ता हम राम छन्द इन लक्षणों स अनक हा छन्द लगता है और उम स्वतन्त्र छन्द का दाहा, ढामा, अटिल्ल आत्ति छन्द म स्वतन्त्र रूप मिद्ध हाना है तना परम्पर काइ साम्य भी नहीं लिखाद पढता। अत यही कहा जा सकता है कि इन विभिन्न छन्द का वृत्तिया का रामक नाम द लिया जाता हागा। रामक और राम छन्द के लिए अद्यावधि प्राप्त प्रमाणा व आधार पर इम अधिक कुछ कहना बहुत सगत नहा लगता, पर यह स्पष्ट है कि रामक और राम मन्त्र अनक वृत्तिया म "राम" एक छन्द विषय के रूप म खूब मिथना है।

अपन्न गतर कान मे रामा के विषया मे विलार हण। अनक विषया पर राम रचना हृद निरम म कुछ प्रमुख विषय अश्रावित हैं -

१-उपनिषद्मूत्रक (यथा उपनिषद् रमायन राम)।

२-चरित प्रधान (यथा-गण्ड राम)।

३-प्रवचन या दीपामूत्रक (यथा अबू स्वामा गौतम स्वामा और स्थूलि मद्र राम)।

४-उमक व वैभय-वीरना-मूत्रक (यथा भरत-वर-आत्तिका राम)।

५-उम प्रधान राम (यथा भरत-वर-आत्तिका राम)।

६-कथा प्रधान-रामायण महाभारत पर (यथा पाण्डव चरित राम)।

७-नौर्यो पर व ताव यात्राआ पर-यथा रक्तगिरि राम तथा आबू राम, मत्तयेशाय राम।

८-मन्त्र वर्णन (यथा-ममरा राम)।

९-मकार्तन-जय तथा मैट्रातिक (यथा-मानह-कारण राम)।

१०-ऐतिहासिक राम (यथा-ममरा राम)।

इस प्रकार चरिता व गुणा का वर्णन करन उनक लाया का हानन यात्रा वर्णन करन कथा निगण करन मन्त्रिका का जीर्णोद्धार करन दीप उमक हनु जय धाय आत्ति व निग हान राम यथा का रचना का जाना था। इमक अनिरिक्त व मौगानिक सामाजिक राजनैतिक तथा चरित मूत्रक हान था। जैन रामा साहित्य जिनना हा चरित मूत्रक हाना था उतना हा एतिहासिक भा हाना था।

इस प्रकार राम ग्रन्थों के विषय में व्यापकता प्राप्त हुई और विषयों की सीमा का कोई बंधन नहीं रहा। अतः इन जैन साधकों ने लोक साहित्यपर-  
हयान् जन भाषा में और गान्त्रीय भाषा में ही राग रचना की।

विषय की दृष्टि से—

रास परम्परा में वैष्णव व जैन जन भाषा धर्मों में बड़ा योग दिया है। वैष्णव धर्म में कृष्ण भक्ति गाथा व गान गण्डन व कृष्ण भाषिया ने राम की चरम पर पहुँचाया और राज के रास तो गतालिया में प्रसिद्ध हैं। इनमें शृ गार-  
परक, भक्ति-परक और कौमल्य मभी प्रकार के राम मिलते हैं।

जैन धर्म में भी विद्यालय मर्यादा में सभ्यतावादी के रामों को सुरक्षित रखा है। अनेक वीतरागी जैन मुनियों तथा राजपुत्रों के दीक्षा ग्रहण करने के अवसर पर भी रामों की श्रद्धा हाती थी। स्त्री और पुरुष इन रामों का बड़ी श्रद्धा में खेलेते थे और अपनी प्रकृति प्रदत्त अनुभूति का अभिनय व संगीत में नुवा कर साकार व सार्थक करते थे। मुनिवर राघव ग्रहण ही नहीं करते थे, उनका समय-श्री के माय विधिवन् विवाह हाता था और इन जैन रासों में से अनेक रासों का उद्देश्य आचार्य-श्री का मजमसिरि से वरण कराना होता था यथा—  
जिनवर सूरि दीक्षा विवाह-वर्णन राम। इस शुभ अवसर पर अथवा पर्व पर उनके अनुयायी आकर भला वचन मानते ? के उत्कृष्ट हाकर नृत्य, लय, तान, गीत आदि द्वारा आचार्य-श्री का श्रद्धाजति देते थे अतः राम का आयाजन हाता स्वाभाविक था।

साहित्यिक रूप और शिल्प योजना

साहित्यिक दृष्टि से मूल्यांकन करने पर रास या रामक संगीत, नृत्य लय, तान, छन्द, श्रद्धा अभिनय, उक्त सभी अंगों के समन्वय का समूह है। वस्तुतः रामक का सम्बन्ध उक्त अंगों से ऊपर दिखाया जा चुका है। रासक या रास का स्वरूप उद्धत-मेघ-उपरूपक के रूप में उल्लाम प्रधान हाता है। अतः साहित्यिक दृष्टि से इसके शिल्प ज्ञान तत्वा का विवचन इस प्रकार किया जा सकता है—

- १—रामक मेघ उपरूपक है, जिसकी कथा गद्य में कम व पद्य में अधिक अर्थात् अधिकांश पद्य में ही हाती है।
- २—उममें अनेक नर्तकियाँ हा।
- ३—विभिन्न रागों का समावेश हो।
- ४—अनेक छन्द हो।
- ५—लय तान का सुन्दर समन्वय हा।

६-अनेक प्रकार के अभिनय है ।

७-बड़े मण्डपों में विभक्त है ।

८-अनेक युगल नृत्य, जा गाय आना करें ।

९-पुरुष अथवा स्त्रियाँ अथवा अथवा समवेत नृत्य ।

१०-बस्तु में रस या ममिष्यण अभिव्यक्ति रूप से है ।

११-विभिन्न प्रकार के नृत्य का समावेश है ।

१२-राम या रामन एव निर्दिष्ट स्थान या मंच पर हो ।

निर्दिष्ट स्थान में तान्त्रिक रंगमंच में लिया जा सकता है । यद्यपि रंगमंच की मूल्यता क्या भी स्पष्ट रूप में राम और रामन माहिष का उल्लेख करने वाला प्राचीन मसूदा व अथर्वनाम कृतियाँ में नहीं मिलती, परन्तु राम के गीत में स्थान-विशेष वृत्त-विशेष मुद्रा, हास भास, तथा स्थिति-विशेष प्राप्ति तबका का स्वरूप यथा कहा जा सकता है कि रंगमंच का स्पष्ट उद्भव नहीं है।

वर्तमान काल में राम की स्थिति—

“राम” जन्म से उपर्युक्त आज भी अपनी जाति विधाया का लेख विविध रूप में हमारे सामने सुरक्षित है । हमारे देश का लोक सस्कृति अत्युत्कृष्ट है । राम जैसे मासुक्तिक क्षेत्र में स्वरूप की आयाजना रूप में हर प्रदेश में विभिन्न गीतों में गयी जा सकता है । जहाँ तब राजस्थान का प्रश्न है राजस्थान में राम खनन का प्रथा अत्र भा है । मण्डलाकार बनाकर विशेष प्रकार पर स्थान विशेष का मजाकर उमी पर डबा में व डान बाण पर राम खनन हैं । विभिन्न मण्डपों में भी राम खनन की प्रथा है । ‘रामधारा’ एक मण्डप उत्कृष्ट प्रसिद्ध है । राम गाया भी जाता है परन्तु पुरुषों को अथवा स्त्रियों में इतना प्रचार अति है । स्त्रियों के समाज में राम की स्थिति विचित्र प्रकार की है । राम का यह वर्तमान रूप अत्यन्त प्रसिद्ध है । राम का गीतों का पूर्णतया प्रतिनिधित्व करने वाला यहाँ का नृत्य विशेष नहीं है, परन्तु उमक धारण-धारण तब विभिन्न प्रांतों के मुख्य विशेषों में बँट गये हैं । राजस्थाना लोक नृत्य में जा मीणा और भीजा के मुख्य अणुजारा के नृत्य, नटा का वनाण वागडिया और गरायिया के नृत्य कानवतिया के अणुजारा गकरिया, और पगिहारा का भासासन अभिनयामक और नृत्य प्रधान महातामक-नृत्य, भव-नृत्य रामधारिया का नागाण तुशकिनागा के अभिनय प्रधान नाच, वीजानर के अग्नि नर्तक, जानौर के डान नर्तक, टीट्टाणा और पावरण का तैरानागी (तान राम) मारवाड की कच्छा घाडिया का नृत्य, गात, अभिनय,

शारीरिक श्रवणवा की कला, नृत्य तथा वाद्यों से समन्वित मारवाड का कठपुतली नृत्य, पावूजी की पडों, बाहू गूजरी के नृत्य विनोद तथा कुचामणी स्थान, अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। साथ ही राम के अभिनय को उसी आदिम स्थिति में पहुँचाने का प्रयास करने वाले और भी कई जंगली नृत्य हैं जिनमें डफ व नृत्य, सासिलों के नृत्य, बंजर नायका, चमारा व मेहतरा व नाच प्रसिद्ध हैं। मालावा की प्रदेश व चौक चानणी और मदिरा के कीर्तन और नृत्य भी अपना महत्व रखते हैं। आंगिक रूप से राम के तत्त्वा का प्रतिनिधित्व करने वाले नृत्या म राजस्थान की स्त्रिया का 'धूमर या भूमर नृत्य नहीं भुनाया जा सकता धूमर नृत्य में स्त्रिया गवर' या पार्वती की प्रतिमा के सामने भँवडा की सभ्या में चलाकार मण्डला में विभक्त हा, घटा नृत्य में दूब जाती हैं जिनमें वाद्य की मधुरता गीत का प्रवाह स्वर व संगीत की रमान अभिनय की उत्कृष्टता तथा भावाभेप दर्शनीय हैं। पर इसमें, युगलों में पुरुष भाग नहीं ले सकते। यह विवेकही होना गणगौर और दीपावली जैसे त्यौहारों व श्रवण पर मध्यमवर्गीय स्त्रियों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। धूमर का उत्थपुरा स्वरूप संगीतमय है। जाधपुर का धूमर कलात्मक है पर उसमें अङ्ग संचालन का अभाव है और बाटा बू दी के धूमर में अपूर्व जीवट और प्रभाव होता है। इन नृत्या म 'वाना रास 'दण्ड रामु' आदि सब रूप देखने को मिल जाते हैं। अतः धूमर राजस्थान का एक राष्ट्रीय नृत्य है।

गुजरात और मालवा में रास का वर्तमान स्थिति, वहाँ के 'गरवा गरबी या गरबी नृत्य प्रस्तुत करते हैं। 'गरवा' एक ऐसे षडे को कहते हैं जिसमें सक्को छे हात हैं। स्त्रिया उभे दापक जनाकर तान अभिनय संगीत आदि व आधार पर उसका सम्पन्न करती हैं। यह नृत्य राम का सही रूप आज भी प्रस्तुत करता है।

रास के वर्तमान स्वरूप की सुरक्षा करने वाले रामों में बृज व रामों का भी बड़ा महत्व है। मथुरा वृन्दावन आदि स्थानों पर राधा कृष्ण और गायिका व रूप में विविध लीलाओं तथा कृष्ण द्वारा किए रामों की आयोजना होती है। यहाँ तक कि अनेक महिलाओं ने तो इसे अपना पैग ही बना लिया है। राम अज की प्रमुख वस्तु है और कृष्ण उसके जन्मदाता। अज में रास का वर्तमान रूप वचन प्रचलित हुआ ? उसके प्रारम्भकर्ता कौन थे ? इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता साथ ही अनेक मनभे भी हैं।

नारायण मन्त्र, वज्रमार्ग परिवर्तन तथा धमदम्ब का स्मृते प्रवक्तव्य में उचित मितता है ।

ब्रज व इत रागा क २१ प्रमुख प्रकार हैं —

१-गाम्नाय वचन युक्त तथा

२-गाम्नाय वचनमुक्ता तथा नृत्य विद्या नान्यथा श्रीर वरमाना की पुत्ररिया विविध मुद्राया म नृत्य रस्ता हर्ष इत्यामक का वास्तविक रूप प्रस्तुत करता है तिसम वाय नया हाना । पर यत् गायत वया ही कल्याणवतक हाना है । यत् नृत्य ममवन ममक व प्रभात व ममान हा गया २ । उ उ नेवर मडना वार नृत्य अन्तर आन भी वरन रूप गान है ।

ब्रज का गाम्नाय नृत्य २१ प्रकार का है —

१-राम और २-मत्स्य राग । 'राग रागमडनिया करता है तथा महाराज कृष्ण न २१ गाविया म एक कृष्ण या २१ कृष्ण क बीच एक गापी के रूप म विया था । जब ब्रज का मन्त्रिया राम करता है ता भरत के नाथ्य गाम्नाय म वगिण नाना रागना का मिश्रण स्वतन्त्र का मिते जाता है । १ आत्र जा ब्रज म राम पन्नि है व २००-८०० वर्षों मू अधिक पुरानी प्रणीत नहा हानी । इसम मगनाचरण क राग मारगा पञ्चानन चिन्तन भाभ और मजौरा क आधार पर मगान गान गाना है और मय नृत्य करत है ।

अथवा भाषा म राम का स्वल्प 'रमिया' के रूप म मितता है । जिला म नर वर्ण हान वात गाम्नायित लाह-नृत्या म 'इष्टा क अवधा के रमिया नृत्य का महत्व मा अ यत् अधिक है जिनम अभिनय नृत्य वाद्य गान वग परिवग मच और अभिनय मत्र का मभिन्न मितता है । अथवा और ब्रज क म्नाय भी राम क एक अ ग की पूति करत है । इसत अतिरिक्त ब्रज क जोक

- ❧ (क) श्रीकृष्णराज राजयया का ब्रज वात सन्धिति म २००५ पृ० १३८ ४७ पर राम लेख ।
- (ग) रामनारायण अग्रवाल का रामनाता क अग्रगण्य कर्ता तम ब्रज-भारती पृथ १ अक १ ।
- (घ) पोद्दार अभिनयन ग्रन्थ पृ -१३ १७ म नारविन हाइन का "रामनाता क विद्या म्नाय लेख ।

१-अधिक-ब्रज का इतिहास भाग २, श्रीकृष्णराज राजयया पृ० ११५ पर भाई जनोबाय राय का लेख ।

नृत्या मे रास के सम्प्रदायो, ब्रज की चरखा, लतामनिया चाचर, भूया  
नृत्य, नरसिंह नृत्य ढाडा ढाडा नृत्य आदि ताव-बलात्मक नृत्य प्रत्यत प्रसिद्ध  
है जो रास परम्परा का भी सुरक्षित करत है। जयदेव का गीत ताविल्ल भोर  
चैतय का नृत्य भक्ति प्रेमलीला वर्णन विसा राम गे वम रही है।

यंगान मे भी भगवान नृत्य के रास का रूप प्रचलित है, जिममे उनका  
वेश ब्रज से भिन्न हाता है, पर इगम अभिनया मवता बडा उत्कृष्ट हाती है।

मासाम मखिपुर क इलाक म वग नूया, अभिनय और भावुनता तीना तत्वा  
की रास म प्रधानता है। वहा भी वमत राम, नत्त राम और महा राम ये तीन  
प्रकार के होत हैं। ती प्रकार दक्षिण म तमिल, तदगू, बज्जड मन्थालम आदि  
प्रदेशा के लाक-साहित्य रास का प्रतिनिधित्व करत है। वस्तुत रास की  
परम्परा आज भी विभिन्न लाक बलात्मक अनन नृत्या के रूप म सुरक्षित है।  
वस्तुत तत्कालीन अपभ्र शीतर कानोन जैन रामा का वर्तमान स्वरूप जन समाज  
में आज भी प्रचलित है परन्तु उगवा आदि रूप हो दृष्टिगाचर हाता है।  
दीक्षा के समय जैन मुनि का समय-श्री के विवाह क रूपक क रूप म सब  
क्रियाए पूरी की जाती हैं पर रास नृत्य और उल्लास के साथ नृत्य अभिनय अब  
रुक गया है। मरिफ अपनी उल्लास प्रधान अभिव्यक्ति का वे संगीत प्रया के  
माध्यम से प्रकट कर देत हैं। हां तीर्थों आदि मे रिया का नृत्य उल्लेखनीय  
है। वस्तुत रास नृत्य आदि के प्राचीन मानक आज बलत जा रहे है, पर  
जैन मुनिया मे राम बनाते और उनकी गाकर उनका उपदेन देना आज भी  
प्रचलित है। सौराष्ट्र और गुजरात के जैन मुनि ता आज भी राम बनाकर  
गते हैं। ऐसा लग रहा है कि आधुनिक जन-राम पुन अपनी प्राचीन गेय क  
उपदेनात्मक स्थिति का, जा हमच द स पूर्व घी, प्राप्त करते घने जा रहे हैं।  
राजस्थानी भाषा म जा परवर्ती रास मिले है उसमें रासा' शब्द का ही अर्था  
पकर्ष होगया है और क युद्ध बणनात्मक काय क भी सूचक है। तसी कारण  
राजस्थानी म रामा' का प्रयाग लडाई भगडे या गडबड घाटाले के अर्थ  
म भी प्रयुक्त होन लगा। १७वा सातादी क उत्तराद्ध म तथा १८वीं शताब्दी  
म कुछ विद्वान्मक रचनाए जस उत्तर रामो, मरुड रासा आदि रासा की  
रचना हुई है। १ डॉ० हजारोप्रसाजी का कथन है कि 'रामक' वस्तुत एक विशेष  
प्रकार का मनोरजन है। राम म वही भाव है।<sup>२</sup> आज क रास, विषयो की

१-देखिये नागरा प्रचारिणो पत्रिका, स० २०११ अंक ८ पृ० ४२० पर श्री  
अगरबद नाहटा का प्राचीन भाषा का या का विविध गणाय 'लेख।

२-देखिये हिन्दी साहित्य का आधिकार, आचार्य हजारोप्रसाद त्रिवेदी, पृ. १००।



सामाजिक बंधन में नया है जनता अपने मुख-रूप का प्रथम धर्मोपस्थापन, नृगार कथा आदि मंगी रूप में प्रस्तुत कर स्व व्यक्त जावन में मुख अनुभव करता है।

जाना है उक्त विवचन में राम की परम्परा, उर्द्ध्व, परिभाषा, गिन्य आदि क तत्वा का पूरा-पूरा मूल्यांकन प्रस्तुत करने का प्रयास देवक ने किया है। अत्र अत्र गत्तर का अथवा प्राचीन हिन्दी में जो आठिकान की विभिन्न गताद्विया में विगत गस्या में राम रचनाए प्राप्त होती हैं उन का-य का अध्ययन करना शक होगा। उक्त विवचन में आठिकानान हिन्दी जैन साहित्य में प्रत्येक गतादी में मिलने वाले हिन्दी जैन रामा का मुख्य प्रवृत्तियाँ गिलगत स वा स्या का-य रूप का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। आठिकानीन हिन्दी रामा का समझन में समय पर्याप्त महापता मिल सकगा ऐसा लक्षक का अनुमान है।

## भरतेश्वर बाहुवली रास

राम परम्परा में सर्व प्रथम और सबसे विस्तृत पाठवाली रचना भरतेश्वर बाहुवली रास है। प्राचीन काल में हिन्दी जन साहित्य में यही कृति ऐसी है जो पर्याप्त प्राचीन तथा जो अपभ्रंश को परवर्ती भवस्या और पुरानी हिन्दी (प्राचीन राजस्थानी और जूनी गुजराती) के बीच की बड़ी है। परिशीलन करने पर यह कहा जा सकता है कि हिन्दी जैन साहित्य की राम परम्परा का भरतेश्वर बाहुवली राम सर्व प्रथम राम है। अध्यायि मुनि जिनविजय जी तथा गुजराती विद्वान् इसी रचना का सर्व प्रथम रचना मानते हैं। पर श्री अण्णरचन्द नाहटा द्वारा शोध पत्रिका में लख प्राचीन रास श्री अण्णसेन मूरि रचित 'भरतेश्वर बाहुवली घोर' प्रकाशित किया गया है जो इनमें भी प्राचीनतम है, पर रचना अकेली तथा सक्षिप्त होने से यह रास जय प्रवृत्तियाँ को प्रमुखता का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकती। ऐसी स्थिति में भरतेश्वर बाहुवली रास को ही हिन्दी साहित्य का सर्व प्रथम राम माना जा सकता है।

प्रस्तुत कृति का सम्पादन मुनि जिनविजय जी ने किया। रचनाकार श्री गालिभद्रमूरि हैं और रचना काल स० १२४१। प्रति बडादरा के एक विद्वान् कालिबिजय जी की है तथा बागज की है। अनुमानत ४०० या ५०० वर्ष पुराना होगा। मुनिजी का यह पाठ पूर्ण प्रामाणिक प्रतीत होता है। इसी पाठ का राहुल साकृत्यायन ने भी उद्धृत किया है।<sup>१</sup>

दूसरी कृति का सम्पादन श्री लखचन्द भगवान गाधी के द्वारा सम्पन्नित है। श्री गाधी न प्राच्य विद्या मन्दिर का तथा आगरा सग्रह की श्री विजय धर्म मूरि के आधार पर कृति सम्पन्नित का है। श्री गाधी का पाठ मुनिजी का सम्पन्नित कृति से स्थान स्थान पर बड़ा भिन्न भी मिलता है। तथा छन्द रूप में भी अन्तर है, पर दोनों अपन अपन रूप में प्रामाणिक हैं।

१-भारतीय विद्या भाग २ अंक १, स० १९९७, पृ० १-१९ सं० मुनि जिनविजय।

२-हिन्दी का य धारा, श्री राहुल साकृत्यायन पृ० ३९८ ४०८।

३-भरतेश्वर बाहुवली रास, स० श्री लखचन्द भगवान गाधी, प्रकाशक प्राच्य विद्या मन्दिर बडादरा, वि० स० १९९७।

प्रस्तुत कृति का मूल्यांकन करने में पूर्व दा और महत्पूर्ण बात का स्पष्टीकरण आवश्यक है। यह ता यह कि यह कृति प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी का है तथा दूसरी बात यह भाग और जन भाग के आकार पर यह कृति पुरानी हिन्दी की है। गुजराती विद्वान् यह पुरानी गुजराती की मानते हैं जब कि ११०० वि० के पूर्व गुजराती का स्वनत्र अस्तिव कुट्ट नहीं था तथा शैली एक ही भागीय था और यह राम द्वि० म० १०८१ का है अतः प्राचीन राजस्थानी और गुजराती का घुसकना का प्रश्न विद्वान् का विषय ही नया है।

भरतेश्वर बाहुबली राम के कना विद्वान् जनाचार्य गान्धिभद्र हैं जो अनेक समय के विद्वान् कवि थे। भरतेश्वर और बाहुबली जना अथवा प्रसिद्ध चरित नामक राजपुत्र रहें हैं। इन जना के सम्बन्धित अनेक अनेक अग्नि-कथा आदि बहुत ही पुराने कथा में उल्लेख ही पाते हैं। अतः यह परम्परा अथ तब मिनता है।

#### भरतेश्वर-बाहुबली पर रचित साहित्य

इस साहित्य की परम्परा कही गताह्य तब मिनता है। तथा कना अग्नि एक-सी है वगुन तथा घटनाओं में परम्परा अग्नि-भा मिनता है। कहा भरत का वगुन अथ मिनता है और कहा बाहुबली का। कुट्ट म्यत्र इन प्रकार है —

जम्बू द्वार प्रज्जि नामक जन ज्ञान गुप्त में भरत अथ के माथ चक्र-वर्ती भरत के ६ अङ्ग का विषय का वगुन है। भरत और बाहुबली का अधिकार वगुन विमल गौरि कृत पठम चरित में १वाँ अङ्कात् में श्री मध्याम गण्डि रचित वामुख शिवा १ नामक प्राकृत की कथा में अथम के माथ शतों का वगुन है। ७वाँ अङ्कात् का जिनका गण्डि की प्राकृत भाग का चूर्णि नामक व्याख्या में जना का चरित वगुन है। जना के परम्पर कुट्ट के वगुनों का जिन कथा में उल्लेख है य है—रविप्रणवाचार्य का पद्मपुराण धन-धरमूरि तथा १०वाँ अङ्कात् में जयनूरि कृत धर्मोपनिषद् माता के साध-माथ जिनमें के आदि पुराण २ पुस्तक के त्रिमिष्ठि महापुत्र गुणाकार तथा अथम के त्रिमिष्ठि गताका चरित (प्रथम पठि) तथा म० १०८१ के सामप्रभाचार्य के कुमारपाठ

१—शिव-आमान-जैन-माता-म०-म०-६०-म०-मुनि-चतुरविंश-  
म०-१८६६-नावनगर-जैन-आमान-मना-द्वारा-प्रकाशित।

२—माणिक्य-चन्द्र-शिवेश्वर-जैन-माता-ममिति-द्वारा-प्रकाशित-श-३-सं०-१-  
पर्व-८-पृ०-६१-६०।

प्रतिबोध १ और विनयचन्द्रमूरि वृत्त आदिनाथ चरित म मिलता है। परवर्ती साहित्य म १४वी गताब्दी म जिनेद्र रचित पधनद महावाक्य २ सग (१६ १७) स० १८०१ मे मेरुतुङ्ग रचित रतभनद्र प्रबध मे, १८३६ क जय देवर मूरि वृत्त उपाग चित्तामणि की टीका में तथा म० १५३० म गुणरत्न मूरि के भरतवर बाहुबली पवाडा म तथा स० १७१५ क गि ह्य गणि के गुजरानी 'गद्यु गय राम' मे भरत बाहुबली का चरित्र वर्णित है।

वस्तुतः इन दोना चरित गायका के वृत्त बडे म्यात है और यह कथा परम्परा १८वी गताब्दी तक मिलती है। इन बहिरग प्रमाण म इनकी कथा हृदिया का गरनता मे अध्ययन प्रस्तुत किया जा सकता है। उक्त प्रमाण म भरतेश्वर बाहुबली की कथाए मस्त्रुत, प्राकृत अपभ्रंश पुरानी हिन्दी (राजस्थानी-गुजराती) आदि सभी भाषाभा म विस्तार मे मिल जाता है। प्रथा म ही नही, भारत के विभिन्न मंदिरा तीर्थों स्तूपा चित्रा तथा अनर म्मारका के लिए भी बाहुबली आर्पण के विषय रहे हैं। उपाहरणार्थ मैसूर के श्रवण बनगोन म ५६ फुट के लगभग अद्भुत शिखर क्लामय बाहुबली की ध्यानरथ खडी हुई प्रतिमा है। तथा आरू की स० १०८८ की विमलवसही की शिल्प कला मे भरत और बाहुबली युद्ध के दृश्य शिल्प चित्रा म निखाए गये हैं। ३

भरतेश्वर बाहुबली राम वीर-रम-पूर्ण प्रबध है। या शांति और अहिंसा प्रेमी जनाचार्यों का वीर और शृ गार रम से कोई सम्बध नही मिलता परंतु परम्परा के कारण उह ऐसे वाक्या की रचना करनी पडी। राम म उत्साह रूप, स्वाभिमानपूर्ण उक्तिया तथा वीर राम का सत उमडता है। इस रास की मौनिकता यह भी है कि यह प्रबध युद्ध प्रधान व वीर रम पूर्ण हाते हुए भी निर्वेदात है। जैन रचनाकारो न विरोधी रास का समबध बडे कौशल से किया है। महा तक कि यह बहुत ही आश्चर्यजनक तथ्य है कि रास या फाद्यु जैसी शृ गार प्रधान रचनाए भी निर्वेदात हैं।

प्रस्तुत राम म रचना स्थान कवि ग कही नही दिया है पर एतदध गुजरात या राजस्थान क किमी भी युद्धवीर या युद्ध प्रेमी नगर की कल्पना की जा सकती है। राजस्थान ता या भी युद्ध वीरा का जन्मजात और युद्ध प्रधान प्रदेश रहा है।

१-गायकवाड प्राच्य ग्रंथ माला न० १४ म प्रकाशित।

२-वही न० ५८ म प्रकाशित (गायकवाड प्राच्य ग्रंथ माला)

३-भरतेश्वर बाहुबली राम, श्री गाधी, प्रस्तावना पृ० ५३-५६।

## कथा भाग

राम का कथा वस्तु श्लेष में निरूपित है -

जम्बूद्वीप के अथाध्यातगर में ऋषभ त्रिनेत्र के मुत्तरी और मुमगता में दा पुत्र क्रम में वाटुवती और भरत यगन्वी और पराक्रमा उत्पन्न हुए। भरत अग्र-ये। ऋषभदेव भरत का अथाध्या या तथा वाटुवती या तथाता का राज्य गौपहर निरक्त हागण। उन्हें वैजय चान प्राप्त हा गया। त्रिगन्नि उन्हें वैजय चान प्राप्त हुआ भरत का आयुध गाना में 'त्रिय चक्ररत्न' उत्पन्न हुआ। भरत ने पत्ने पिता की वचना करके त्रिगिनाय प्रारम्भ का। आगे आगे चक्ररत्न पाए पाए गना। अनेक राजाग्रा का विजय करके जब व पुन चौक ता चक्र अथाध्यातुरी के वाटर र्वक गया। भरत के मन्त्रा ने इसका कारण उक्त भाषा का जानना के वग में नग करना बताया। सब की हृष्टि वाटुवती की घार लठ गई। भरत ने ब्रह्म हातर वाटुवती का दूत के माय अघनी अधानना स्वीकार कर पीरा में प्रणाम करने का कहा। गौगत के उक्ताच मागे। वाटुवती भी क्रुद्ध हा गय और वना ऋषभदेव ने जय गवका ममान रूप में राज पत् त्रिया है तर सब मन्त्राग्रा हा और दूसरा भाई ग्यक अधान यत् सम्भव नहा है। दूत का उगने पत्कार कर वागम चौक त्रिया। दाना और म मुद्र की तयारिया हुई।

१३ त्रि के भयहर मुद्र में रक्त का नग यत् गई। तत्र भरतदेव की मना में चन्द्ररूढ और नरूत विनाधरा ने विनय का। इन्द्र ने आतर मुद्र वत् कराया और वना त्रि भाई भाई की पारम्परिक तटार् म मना का महार दयय हा रना है। अत अच्छा ता यह हा कि ब्रह्म मुद्र हा कर विजय का निगय हा जाय। वचा मुद्र त्रिमुद्र (नेत्र मुद्र) और लण्ड मुद्र निरविन हुए और तीना में जय वाटुवती विजया हुए ता भरत ने क्रुद्ध हा कर उन पर मर्यादा लाड कर चक्ररत्न चना त्रिया। यद्यपि सम उन्हा कुद्ध मा हाति नहा हुई पर वे चक्ररत्नों के सम यवत्तार में वत्न शुभ हुए और उन्हें धिरकित हा गई। उन्हाने तथा अग्र्य करती। मुद्र बार का निर्दे हा गया। राथ-ध्री उन्हें तुच्छ जान पची। चक्ररत्नों भरत ने उक्त चरणा में मन्त्र र्व कर अमदात्तित वृत्त्य द्वारा सम्पन्न भूत की स्वाकार किया तथा समा याचना की। पर वाटुवती का ता निरत् ने अघना त्रिया था। अनेक वर्षों तप करके व ववय चानी हा गये। भरत ने भी धूमधाम में नगर में प्रवग किया। उत्सव हुए नगर तारग्य मजाये गये। आयुधगाना में आतर चक्ररत्न का गान हुआ और चतुर्त्रि भरतदेव का यग छा गया।

१० " रास की पंथा यही है । रचना अनेक बधा म जिसी गई है और कुन मिला । कर २०५ छन्दा म समाप्त हुई है । प्रबध परम्परा का यह एक महत्व पूर्ण खण्ड काय है । स० १२४१ का यह राम अय उपलब्ध अनेक हिंदी रासा में सब से बड़ा है । इसके बाद इतनी बड़ी राम रचनाएँ १५ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध म ही मिलती हैं । यह प्राप्त वृत्तिमा से स्पष्ट होता है । अस्तु २५० वर्षों के स० १२४१ से १५०० तक के इतने बड़े काव्य की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ, तथा भाषा आदि का प्रतिनिधित्व यह अनेकाला राम करता है । प्रस्तुत प्रबध खण्ड की रचना भास-सग या पव आदि से विभाजित नहीं है । यो प्रबध काव्य को परम्परा से ही कुछ भागा म विभक्त कर दिया जाता है । महाकाव्य सर्गबद्ध होते हैं <sup>१</sup> । प्राकृत म प्रबध काव्या के सर्गों का नाम 'आश्रवाम' <sup>२</sup> है । अपभ्रंश काव्या म सधि <sup>३</sup> का प्रयोग हुआ है । सधि के प्रारम्भ म ध्रुवक और उसके आगे कुछ कडवक तथा प्रत्येक कडवक के बाद घंटा रखा जाता था । कही नहा प्रक्रम <sup>४</sup> नाम भी मिलता है । हिंदी-जैन-साहित्य के परवर्ती अय रासा में भी ये नाम विभिन्न प्रकार से मिलते हैं । उदाहरणार्थ कच्छूरी रास मे वस्तु या 'वस्त', <sup>५</sup> जम्बू स्वामी चरित मे कडवक, <sup>६</sup> एव ठवणी (स्थापनी) <sup>७</sup> समराराम में भाम, <sup>८</sup> तथा पथड रास म तण्ण, <sup>९</sup> नाम दिए गये हैं । इसके अतिरिक्त सर्गों के नाम काड <sup>१०</sup> व पर्व <sup>११</sup> भी मिलते हैं ।

१-साहित्य दर्पण विश्वनाथ-"सर्ग बधो महाकाव्यो तत्रैको नायक सुर"

(१) पृ० ३०२-३ ।

२-मर्गा आश्रवास सनका-साहित्य दर्पण, पृ० ३०४-५ ।

३-साहित्य दर्पणकार ने इसे "कडवक" कहा है । पर वास्तव म यह सधि है ।

यह सधि कडवक समूहामक होती थी । कडवक समूहामक सधि' देखिए ना० प्र० प० वर्ष ५६, अ० १, स० २०११ ।

(४)-देखिए सदश रामक अदुन रहमान वृत भूमिका भाग ।

५-प्राचीन गुर्जर काव्य, सं० मुनि जिन विजय, पृ० ५६ ।

६-जम्बू-स्वामी-चरित तथा प्रा० गु० का० स०, पृ० ४१ ।

७-समराराम मुनि जिन विजय वृत-जैन ऐतिहासिक गुजर काव्य सचय पृ ११७

८-प्राचीन गुर्जर कविद्या-माहालाल नसाई वृत तथा प्रा० गु० का० परिशिष्ट, भाग २८ ।

९-तुलसी वृत रामचरित मानस म बावराण्ड, अयाध्याकाण्ड, मुदरकाण्ड तथाकाण्ड आदि ।

१०-अथर्वे-महाभारत म गाति पर्व, युद्ध पर्व आदि नाम ।

भरनेश्वर बाहुवनी राम भी इमोतरह वस्तु, ठक्णी, वाणि, १ आदि में विभक्त हाता चन्ता है । यद्यपि क्या म वही भी कविद्वत सर्ग यति या समाप्ति नहा है, फिर भी क्या का विभाजन, भरतकी निविजय, भरत व बाहुवनी का युद्ध, बाहुवनी का दोशा ग्रहण आदि इन तीना गीर्वाका में सरलता स किया जा सन्ता है ।

प्रस्तुत राम के वर्ता श्री गतिमद्र ने राम का प्रारम्भ भगनाचरण मे ही किया है । कवि ने रूपम जिनेश्वर व चरणा म प्रणाम करके, भरस्वतो का मन म स्मरण करके, गुरु प वचना व पञ्चान ही काव्य का प्रारम्भ किया है ।

रिमन् जिणेमर पय पणुमवी

सरमनि मामणि मन ममरेवी ।

नमवि निरतर गुरु चरणु

नाटकीय सलाप

राम म कई स्थिता म कवि की नाटकीय सवात्-याजना स्पष्ट होती है । सवात् वने प्रभावगानी और मरम हैं । यथा-मतिमागर भरतेश्वर-सवाद दूत-बाहुवनी मयात् आदि सवात् म् णव नाटकाय याजना है । पर्याप्त गेयता ह्य तथा उमात् ३ । कवि ने इनके द्वारा काव्य म अभिनय भगिमा का समावेश किया है । दाना मतात् व उपात्रण त्मिण -

मतिमागर तिमि वान चक्क न पुरिं प्रवेमु करइ

तु ति अन्तारह राजि घुरि धरीय धारि घुरह २

-(प्रश्न)

बोलइ मत्रि मयंकु सम्मलि सामाय । चङ्कधर ३

नवि मान् त्रय आणु बाहुवनि बिह बाहुवने

तिणि कारणि नर दव । चक्क न आवइ निय नियरे ४

-(उत्तर)

इमो प्रकार दूत बाहुवनी का सलाप उल्लेखनीय है -

दूत-दूत पमणुत् दूत पमणुइ बाहुवलि राउ

भरहेमर चङ्क घब वहि न कवणि दूतवणु कीणइ

१-दक्खि-भरतेश्वर-बाहुवनी राम, श्री गाधी पृ० १६ २७ आदि ।

२-भरतेश्वर-बाहुवनी राम श्री गाधी पृ० १८, पद ६५ ।

३-वही पं ४७ ।

४-वही, पं ५० ।

वेगि सुवेगि बोतिह सभलि बाहुबलि । १ - (प्रभ)

विण बधव सवि सपइ ऊणी, जिम विण लवण रगोइ मनुणी ।

तुम बसणि उत्कठित राउ, नितुनितु बाट जोह भाउ २

भौर दूत के यह कहने पर बि चला भरतेश्वर की अधीनता स्वीकार करो, नहीं तो यह तुम्हारा बध करेगा—बाहुबली तत्काल उत्तर दत्त है —

राउ जपइ राउ जपइ सुणिन सुणि दूत - (उत्तर)

जबिहि लिहीउ भालयति तजि सोह इहनाइ पामइ

भरि रि । देव न दानव महि मडलि मडलव मानव

काइ न सपइ लहीयालीह, सामइ अधिव न मोछा दीह ३

विबिध वर्णना म नगर-वर्णन, सेना-वर्णन, दिग्विजय-वर्णन, शत्रुन वर्णन हाथी, घोडो, सवारो भादि के वर्णन मिनत हैं । इनके कई वर्णन ऊहात्मक भौर प्रतिगयाक्ति प्रधान है । शेष वर्णन साधारण हैं परन्तु उनको भाषा म पर्याप्त सर सता है । शौर रम प्रधान वर्णनो म 'लित्व' भौर 'टकार' प्रधान भाषा चनतो है । इन वर्णनो में एक जीवट, भोज भौर जीवत्तपन है । शब्दो में प्रवाह, सर सता, भौर उत्साहभरा है । शब्द चयन मनुप्राणात्मक है । कुछ वर्णन देखिए —

हाथिया का वर्णन—

(क) चलिय गयवर चलिय गयवर गहिर गजजत

(ख) गजउ फिरि फिरि गिरि मिहरि भजइ तरवर डालि तु  
मकुग वत भावइ नहीय, करइ मपाट जि मालि तु

घोडा व सवारा का वर्णन—

(क) हूफइ हसमस हण हणइ तरवरत ह्यघटट चल्लिय

(ख) फिरइ फेकारइ फोरणइ ए फुड फेणाउलि फार तु  
तरणि—तुरगम सम तुलइ, तेजिय ताल ततार तु

(ग) हीसइ हसमिसि हण हणइ ए, तरवर तारतोतार तु  
खू दई खुरतइ खडवीय, नइ मानइ मयवार तु ४

मना वर्णन—कटव न कवणि हि भरह तरणउ भाजइ भेडि मिडत तु  
रेतइ रयणायरह जिमि राणो राणि न उ त तु

१—वही, पद ७८ ।

२—वही, पद ८३, पृ० २८ ।

३—वही, पृ० ८, वस्तु १६ ।

४—भरतेश्वर बाहुबली रास, श्री गाथी, पृ० १० ।



“गडुन” बगन भी लाह गात्रिय की परम्परा को विकसित करता है । दूत का बाटुवनी व पाग जाना और रामन म नामही, गियार, मय, घात्रि का मितन-बगन बहा ही प्रमारगाता है गन्धि की प्रतुप्रामारमना उन्वेवनीय है -

- क जा रथ जायाय जाय मुजि घाण मि नरवरर  
फिर फिर गाम्हुट घाद् वाम नुगाय वाङ्गिणी तणुउ (प ५६)
- ग कात्रन-रात्र विटात्र घात्रिय घाटिद् उतरर ॥  
त्रिमणुउ जम विररात्र गर गर गर-रत्र उद्धराय- (५७)
- ग मूकाय वात्रन टात्रि, त्रि बयगा मुरररर ॥  
मयीय भात्रम भात्र भूत्र पुत्राररिह त्रिणिगि ॥- (५८)
- घ त्रिमणुद् गमद् विपात्रि फिरिय फिरिय त्रिउ पत्ररर ॥  
टावा य उत्ररर गात्रि भैरव भैरव रत्र करर ॥-

इमा तरह बिन्ना गधा गय घाट का प्रना, मूला टावा पर त्रि [पनी विगत्र] का वाचना, त्रिनि युव [उत्रु का वाचना] और लामही [त्रिब] का बार बार मामने फिर फिर कर प्रपगनुन करना घादि चित्रण यथाय है ।

**प्रतु। उत्तिया**

धीर रम की द्य और उगाह प्रधान उत्तिया प्रयन गुत्र है त्रिममें जावन के त्रि पयात्र जावट का गमारग है । स्वात्रनम्बन और स्वाभिमान पुग कुद्य उगाहरण दृष्ट्य है -

- क परह घात्र त्रिणि कारण कात्रर गात्रम गदवर भिदि उराजद्  
हीउ प्रनद् त्रार ह धायार ॥ त्रि वार त्रणुउ त्रिरार ?

[दूमरे का घागा क्या का जाय ? नात्रम म स्वयं हा मिदि की वगु करता चाङ्गि । पात्र म दृढ ह्यय और हात्र म हृषियार ही ता वारा का परिवार हाठा है] किनना त्रय स्वात्रनम्बन और पुत्रपात्र पुग उक्ति है ।

- ख मिर गरत्रम म पत्रम न गमात्रर ता नान्त्र पणद् न नमात्र २
- ग काद् न त्रार त्रिण्या त्रार ।
- घ मामाय विगमउ करम-विपाउ -
- ङ धिक धिक ए त्रय गमार ।

१-भारताय त्रिद्या, वय २, अद् १ पृ० ८, उवगि ८, पद १०६ ।

२-भरारत्र-वाटुवनी राम, पृ० ६६ प १५७ ।

३-वहा प्रत्र, पृ० १८३, प ८२ ।

११ प्रस्तुत राम मे गेयता है । वस्तु प्रवाह के साथ गेयता का मिश्रण रास का सौन्दर्य और बढ़ा देता है । भरतेश्वर बाहुवली रास विविध रागो मे बंधा है अतः यह अनेक प्रकार से गाया जा सकता है । अधिक विस्तार से होने से समयाधिकता सम्भव है, परन्तु इसके प्रवाह को दल कर किसी भी वीर के भुजङ्ग फडक उठेगे ।

१२ भरतेश्वर बाहुवली राम भाषा, रस ध्यजना, अलंकार-योजना और छंद-योजना आदि की दृष्टि से भी पर्याप्त महत्त्व का कृति है ।

१३ भाषा विचार — भरतेश्वर बाहुवली राम की भाषा 'देसिल बयना सब-जन मिट्टा' उक्ति की सार्थकता सिद्ध करती है । भाषा का शब्द चयन ध्वन्यात्मक और अनुप्रासात्मक है । अतः काय की नाट्यात्मकता स्पष्ट है । शब्द जैसे एक ही साचे में ढले ह । पुरानी गुजराती और पुरानी राजस्थानी दोनों ही विभाषाएँ, इसे अपना काव्य कहती हैं । परन्तु अधिकांश शब्द राजस्थानी के ही हैं । साथ ही अपभ्रंश के परवर्ती रूपा का भी प्रभाव है । भाषा का कुछ परिचय इस प्रकार है —

१४ उतार अपभ्रंश — रिसय, जिणोसर, नयर, भरह, पयड, चक्क, रयण, गयवर, आदि । क्रियाएँ — विज्जीय, मिल्लीय, चल्लीय, उल्लीय क साथ धूजीय, चालीय आनीय, चलिय आदि रूप सरल राजस्थानी के हैं ।

१५ राजस्थानी के जूनो गुजराती — वान, परवस, धारो, कुमर, आणद, धूजीय, गाजत, गणह, भणह, दडवडत, भडवडह, धडधडत, आगलि, निहाण, गयण, भाण, दलहि, भिडत, सिउ, तणों, गमी, डामी, जिमणइ, मिलाउ, मुजआण, लमु, पठविमइ आदि सजा एव क्रियाया के रूप ।

१६ पुराने शब्द — पणमयी, समरेवि, नमिबि, नरिन्ह, वधवह, भणियु, रासह, छणिहि रयणहि, रासय, रामु, नितु, वाड, भडाह, नर आदि शब्द हमचंद्र के अपभ्रंश रूपा में शुद्ध प्रत्यय वाले शब्द हैं, पर साथ ही भाषा में नये शब्दों का भी समानांतर अपभ्रंश के सस्कार से दृष्टा है ।

१७ नये शब्द — पय, वार, वरिस, हिव भातिहि, साभलउ, गच्छ सिण गार, पाटधर, तीण तणउ, फागुण, छणिहि आदि में नूतनता का आग्रह स्पष्ट है ।

१८ तत्सम शब्द — प्रस्तुत कृति में पुराने रूप धीरे धीरे कम, होत गये हैं

धीर उनके स्थान में प्रयुक्त तत्सम शब्दों की अपेक्षा <sup>१</sup> दृष्ट्य है यथा-धरित, मुनि, निरंतर, गुरु-वरण, धमर पुरा, गुण गुण भहार भाषि ।

प्रस्तुत शब्दों की भाषा परिवर्तन के इन नियमों का तथा ध्वनियोग भाषा के परिवर्तन पर स्वतंत्र रूप में भाषा ध्वनितिक विनियोगों की अपेक्षा है । उक्त उदाहरणों द्वारा यह तो जाना ही जा सकता है कि भाषा सरल पुरानी हिन्दी है तथा प्राचीन राजस्थानी शब्दों की भरमार है । भाषा ही अपभ्रंश ध्वनितिक स्थान रिक्त करती हुई एवं तत्सम शब्दों प्रयोग करने की प्रतीति होती है । ११वीं शताब्दी की कृति मत्स्यपुराण महावीर उत्साह की तुलना में इस रचना का भाषा में पर्याप्त मरम्मत प्रतीति जाना है । भाषा का मरम्मत के कुछ उदाहरण श्लोक —

क हा कुन मटणु हा कुन वार हा ममरगणु माग्ग धीर (१५४)

ख सामाय । विममउ करम विपाठ (१७)

ग कहि कुणु ऊपरि का जइ रागु । एउ जि मीजइ नेवट मगु (१५६)

रत्त-ध्वजना

भरत-वर वाटुवना राम में प्रधान रंग वीर है परन्तु एक भाष्य में यह है कि कवि ने वारणा का प्रादुर्भाव में गीत रंग का समाहार किया है । या या कहें कि वारणा का उपयोग राम ने किया है । राम के निर्दोषपूर्ण अंत में ममार, राय, धरीर धीर शब्दों की नदरना पर प्रमाण जाना है । राम में भरत वाटुवनी आश्रय मानवने युद्ध का तैयारिया एवं उत्तमक वचन उद्दीपन तथा परम्पर दाना पत्ता में उचित उदाहरण रखाया भाव है । गंगा वर्णन, रण वर्णन, युद्ध तथा यादादा के गारारिक स्वरूप अनुभावों धीर संवारिया के प्रताप <sup>२</sup> । वीर रम, बीभय रम तथा शांत रम के कुछ उदाहरण दृष्ट्य <sup>३</sup> -

वार रम — क दूँइइ इममग इणु इणुइ तरवरन ह्य घट्ट वनीय

पावक पयभरि उन नवीय मरु गाम गम मणि मउड शुजाय

ख तउ कापिउ कलकमिउ कान कवाय कानानय

ककाड़ी किमरापासा करिकाय महावय

ग जुटइ मिहइ भट्टहटई लणि लटलटइ लडा लडि

1- A definite tendency to replace Apbhramsa form of words by its sanskrit equivalent comes in to existence-Gujrati and its literature by Sri K M Munshi—page 86

य कपिय विभ्रर कोडि पडीय हरगण हडहडिया  
मारद मुरडीय मू छ माहि नम मच्छर भरिया १

और भयकर युद्ध हुआ, रक्त की नदी बह गई तथा बीभत्स का परिपाक हमारे सामने हा जाता है ।

बीभत्स रस—व उहुीय खेड न सूऊड सूरनवि जाण्णीय सवार असूरवबई  
मुहड धड धावड धसी, सणइ हणा हणि हाकइ इमी  
\* ख वहइ रुहिर नइ सिलर तरइ, टी टी टी रणि रापमु  
करई । २

(रुधिर की नदी में तैरने वाले मिरा को देखकर राक्षसा की भयानक भावाजें कर प्रसन्न होना बीभत्स प्रस्तुत करता है)

शांत रस—युद्ध के पश्चात् जब दोनों भाइयों में परस्पर “नेत्र युद्ध, जल युद्ध और मल्ल युद्ध होता है, तो भरत हार जाते हैं और क्रुद्ध हो बाहुबली पर चक्ररत्न से प्रहार कर बैठते हैं । इस राज्य व दिग्विजय के लिए धर्मर्यादित कार्य को देखकर बाहुबली का निर्वेद हो जाता है और राम के वीर रस प्रधान सारे मालम्बन शांति में बल जाते हैं । इस एवन्म हुए परिवर्तन को विद्वान् कवि ने बड़े सभार से सजाया है जिसमें वही भी रस दोष नहीं हो पाता । उदाहरण दृष्टव्य है—

धिकधिक ए एय ससार धिक—धिक राणिम राज रिद्धि  
एवहु ए जीव महार, की धड कुग विरोध वसि ३

मपनी पराजय जीव-हानि आदि बातों ने भाई का अपने ही सहोदर पर धर्म युद्ध के स्थान पर चक्र का प्रहार एवन्म अधर्म युद्ध था । इसी धर्मर्यादित कृत्य ने ही बाहुबली के हृदय में गम की सृष्टि कर दी । वे दीक्षा ले लेते हैं । भरतेश्वर की आँखें आमुष्मा से भर जाती हैं और वह उनके कदमों पर निट जाता है—

सिरि वरि ए लाच करेउ कामगि रहीउ बाहुबले  
असूइ आखि भरेउ, तस पणमण भरह भडो । ४

उक्त उद्धरणों की भाषा सरल, पदावली सरस व छन्द गेयता प्रधान

१—भरतेश्वर बाहुबली राम, श्री गांधी पृ० ३८ ।

२—भरतेश्वर बाहुबली राम श्री गांधी पृ० १८१ ।

३—वही, पृ० ८२, ठवणि १४ पद १९३ ।

४—वही पृ० ८२ पद १९५ ।

हे । धन धात्र धीर माधुर्य का समारण ही जाता है । धात्र ग का स्वर लक्ष  
पितृय प्रधानता त यन्तु मिति का धीर भा मरण बना दिया है ।

धर्मवार

मर्यादर दाय्यता राग का धर्मवार यात्रता यन्तुगी ह । या पुगा  
क प्रथम पुत्र पर ही सं० १०८१ तु प्राणा पुत्रता धनुशाम यत्र मय वार  
रम प्रधान मुद्र दाय्य १ ज्या मर्यापूर्ण तास मर्यात् श्री गाथा न निग  
दिया है । धा धनुशाम यात्रता २ हा ।

मात्स्य मूत्र धर्मवार म यत्र लक्ष रूप धात्रि का यात्रता मुद्र  
है । धनुशाम ता राग का प्रदा वति म गिरर उग है । रगत धारिका ह्योन  
उत्तरण धारिकाधित धनुशित धात्रि बड मर्याधित बन पड है । धन  
करण म वति का धात्र कता य ता रत हा धा मय है ।

धनुशाम १ धनुशाम क लय मय रत रत मुद्राय उमम त्रिमि गिरि थ म तु  
म हागद रगमिगि रगतगद  
म मररगाय गावार तु ।

- २ दृश्य क यत्राय रतय यत्राय रतय रतय रतय
  - ३ ताग लय
  - ४ यामा
- } म पडम त्रिमरर वरम त्रिमुरर वाय यन्तुमदि
- ५ धनुशाम- क त्रिमितिगि रगत संवरद ए  
म धमा धंगिम धंगमगा ।

६ धनुशाम-क मनीय मणि मय रत मर्या वर गिरि धरिय  
म वति मुशगि मु वात्रहि संभति वात्रति ।

यमत्र - धमग - क वति मुशगि मु वात्र म मर मर मर रत उदवय  
ममग - क मनीय नावम नाति म नेरव भरत रत वरद ए  
नयेय - क वाम तुशाय वात्रिगा मणुउ  
म पिरिय विरिय त्रि वरदद ।

सागरवद - क वात्रत वात्र त्रिगा ।  
म वात्र मति मयतु ।

उपमा लय उत्र ता - क त्रिमि रतयाधत मृति त्रिमि गिरि मोरति मणि मयदा  
म मर वद कुशत वाति रति मति मनाय त्रि धव  
म चरुतिउ मागित धम मात्रि वरुउ वात्रये ।  
रुविद त्रियो य रत वरर हारि वात्र वमर ।

प्रतिशयोक्ति —(क) कपिय पय भरि गोप रहिउ विण साहि उन जाइ तु  
एवं अत्युक्ति मिर डोनाउइ घरणि हि ए टन टनीप दू क गिरि अ ग तु ।

दृष्टान्त तथा—(क) मडिय मणिमय दड मेघाड बर सिरि धरिय  
उदाहरण जस पयड मुय दड जयवन्ती जय सिरि यमइए

(ख) विण बंधव सवि संपइ उणी जिमि विण लवण रसोइ अरुणी

इसी प्रकार व्यतिरेक, अपहृति, विभावना आदि के उदाहरण भी मिल जाते हैं—

### छंद-योजना

मानाच्य राम की छंद-योजना बड़ी विस्तृत है, पर प्रमुख छंद 'रास' है। 'रास नया छंद नहीं है। सस्मृत प्राकृत और अपभ्रंश की छंद-योजना पुरानी हिन्दी में पूर्णतया सुरक्षित है। विशेष तौर से हिन्दी ने ता अपभ्रंश के कई छंद का अपनाया है। अपनाया ही नहीं, उन्हें दुनार कर अपनी सम्पत्ति ही बना लिया है। रास छंद में अञ्जल रहमान ने पूरा सदेश रासक लिखा। श्री गालिभद्र सूरि ने प्रारम्भ में ही अपना छंदगत मन्तव्य स्पष्ट कर दिया है।

प्रारम्भ—कु हिव पत्रणिमु रासह छदिहि

ते जण मण हर मन आणदिहि भाविहि भवीयण माभनओ  
और माय ही रचना की समाप्ति पर भी —

मत—गुण गणह ए तणउ भडाह सालिभद्र सूरि जाणीइ ए

कीधउ ए तीणि चरिणु भरह नरेमर रागु छदिहि

अन कवि का मन्तव्य तो राम छंद के लिये स्पष्ट है, पर विद्वान् इस मत से सहमत नहीं। प्रारम्भ के भवतरणा म १६+१६+१३ और १६+१६+१३ मात्राया की द्विपदी मिलती है। इस प्रकार का मिश्र बंध पूर्व कहा भी देखने में नहीं आया। नीच की कठिया सारठा की है तथा 'वु' और 'ए' वर्णों के प्रयोग से ही रास छंद की पहिचान की जा सकती है। डॉ० ह० ब० नायाणी रास में अनेक छंद मानते हैं जिनका उल्लेख राम परम्परा विवेचन में पहिले किया जा चुका है। श्री अगारचन्द नाट्य 'राम' छंद को अनेक छंद का मिश्रण स्वरूप नहीं मान कर एक स्वतंत्र छंद मानते हैं। डॉ० हजारी प्रमा द्विवेदी

रागत को २१ मात्राया का १५ मात्रा हैं। प्रमाण में ये सन्देश रागत का यह छंद उचित करने हैं—

‘तू जि पहिय विषयायितु विष उक्त’ सिरिय  
मयर गय करना दूवि उतावनी थलिय  
तुम्हणहर शान्तिय चंपन रमणु भरि  
दुदुवि विगिय रमणायति विविण ख पमिरि—१

पर सन्देश रागत का इस छंद को प्रस्तुत राग छंद से भिन्नाने पर ध्यान दिया पटता है—

जगु ए चनन नाणु राउ विहरद रिताहेम सिउ ए  
भायिउण भरह गरि मिउ परणहि भवमाउरिए

दाता की मात्राया में पर्याप्त ध्यान है। ध्यान स्पष्ट है कि इस राग छंद का गीत मात्रा रागत का छंद में लक्षण भिन्न है और सम्भवतः इसी भिन्नता का कारण श्री क० का० गान्धी ने ‘इस प्रकार का मिश्र बंध पूर्व रूपाने में नहीं आया’ निम्न किया है।

दॉ० द्विवेदी लिखते हैं कि—‘विरहात् ने धरते वृत्त जाति समुच्चय में दो प्रकार का राग कात्या का उक्त किया है। एक में विस्तारित या द्विवेदी और विनारी वृत्त हाथ के और दूसरी में अट्टित पदा टट्टु और डोना छंद हुआ करने के। २ ध्यान बड़ा सम्भव है कि प्रस्तुत राग छंद इन्हीं को प्रकारों में से एक हो, क्योंकि द्विवेदी इगम भी मिलती है।

परंतु इस राग छंद की गीत तय स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं प्रतीत हानी सम्भावित स्थिति का आधार पर कवि की ही उक्ति का ध्यान माना जा सकता है और तय इस छंद को ‘राग’ कहने में कोई आशंका नहीं लगती।

आनोच्य राग का छंद का परिचय इस प्रकार है—

सोरठा—मतिगागर । विगि वाज चनन म पुरि प्रवेमु करद  
तु जि मन्नारह राजि धुरि धरीह धोरि धुरद

पउपद्—चौगार अष्टिह का हा दूसरा रूप है—

चंद्रमूढ विजागर राउ विगि वाउद मनि बहुर विमाउ  
हा कुन मंडन । हा कुनवीर । हा ममरगणि मान्म धीर ३

१—द्विवेदी साहित्य का आन्ध्रान, श्री हजारी प्रमाण द्विवेदी, पृ० १०० ।

२—भरनेदकर-बाहुवनी राग श्री गान्धी पृ० ६६ ।

३—बही, पृ० ३८, पं ६३ ।

वस्तु—एक प्रसिद्ध छंद वस्तु का भी प्रचुर प्रयोग मिलता है ।

५ चरणा के इस छंद में नीचे के दो चरणा की मात्राएँ ता दोहे की ही भाँति २४ होती हैं । नीचे के दो चरण, लगता है कि, दोहे की ही भाँति है—

राउ जपइ राउ जपइ सुणि न सुणि दूत  
भरह खड भूमि सरह भरह राउ अम्ह सहाँदर  
मत्रि महाधर मडलिम, अतउर परिवार  
सामतह सीमाउ सह कहिन सुकुदान विचार

अन्तिम दो चरण बिल्कुल दोहा के ही हैं । इसके प्रथम चरण में (SI) और १५ मात्राएँ, द्वितीय चरण तथा तृतीय चरणों में १३+१५=२८ मात्राएँ होती हैं । मात्राओं की कुल संख्या ११६ है । प्रथम चरण की सात मात्राओं की प्रायः भावृत्ति कर दी जाती है । उस अवस्था में प्रथम चरण में २२ मात्राएँ हो जाती हैं । १ वस्तु छंद पर विचार करते हुए एक दूसरे विद्वान् न इसका संस्कृत नाम वस्तुक या वस्तु तथा अपभ्रंश नाम वस्तुभ्रंश या वस्तु किया है । इसका दूसरा नाम रड्डा भी है । छंद शास्त्र में इसके अनेक भेद किए गये हैं । प्राचीन राजस्थानी साहित्य में विगपत जैन साहित्य में इसका खूब प्रयोग हुआ है । २

इन छंदों के अतिरिक्त गौण रूप में निम्नांकित छंदों का प्रयोग भी हुआ है—

शटक या टूटक—इस छंद के चरण भाँ ६ ही हात हैं—

वर वरइँ सर्यवर वीर, आरेणि साहम धीर  
मडलीय मिलिया जान, हय हास मगल गान

हय हास मगल गानि गाजिय, गयण गिरि ग्रह गुम गुमद  
धम धमीय धरयल ससीय न सकइ, गस कुल गिरि कम कमई  
धस धसीय धायइ धार धावलि, धार वीर विहडए  
सामंत समहरि समु न लहइ, मडलाक न मडए<sup>३</sup> (१४५)  
प्रस्तुत रास में यह छंद कई बार आया है ।

सरस्वती धवल—इस छंद को धवल भी कहते हैं । इसमें चार चरण होते हैं—

'राहोउ राउत जाइ पातानि, विज्जाहर विज्जा बलिहि

१—दखिये—राजस्थान भारती, भाग ४, अङ्क १, परिशिष्ट २, पृ० ५५ ।

२—भरतेद्वर-बाहुबली राम, श्री गाधी, पृ० ३८, पद ६३ ।

३—भारतीय विद्या, सम्पादक श्री मुनि जिनविजय, वध २, अङ्क १, पृ० १४, पद १४५ ।



धक्क पहुँचरा पूठि तिणि तालि, बावए वनवाय सह्य तरवा  
रे र रहि रहि कुपीउ राउ, जित्यु जाइति तित्यु मारिखु ए  
तिहुयए काइन भचए अगय जय जायिम जीणइ जीवहए १

ठवणि—प्रस्तुत राम म ठवणि प्रयाग कई जगह आया है। जा संस्कृत स्थानी  
गच्छ का अपभ्रंश है। यह कई छन्द विशेष नहीं है। मात्र नये  
छन्द की स्थापना करने या छन्द बन्दन के नियम प्रयुक्त हुआ है।

निष्कर्षतः भरतेश्वर-बाहुवनी राम म इतन ही छन्द प्रयुक्त हुए हैं।  
आन्ध्रानां हिन्दी जैन साहित्य की राम परम्परा अथ सब काव्य रूपा या  
काव्य परम्पराया म भिन्न है। १३वीं, १४वां और १५ वां गतान्ती के अनेक  
प्रकाशित, अप्रकाशित तथा अप्रसिद्ध रामा का अध्ययन आगे के पृष्ठों में प्रस्तुत  
किया जायगा। अनेक जैन मण्डार म अथावधि उपन्यास सैकड़ा जैन रामा में  
सबसे प्राचीन यही भरतेश्वर-बाहुवनी राम है। इस सम्बन्ध में लेखक का एक  
गाथ निबन्ध प्रकाशित भा रहा चुका है। २ राम का सरन और मुष्पाति पाठ  
यहा दिया जा रहा है जिमसे उमक काव्य-मीठव का अध्ययन किया जा  
सकता है।

१—भरतेश्वर-बाहुवनी राम, श्री गाधी, पृ १५०।

२—हिन्दी अनुशासन वष अर्द्ध सप्तक का भरतेश्वर-बाहुवनी राम  
एक अध्ययन, गांधी तन।

तिणि दिणि भ्राउधसानह चक्को, भावीय भरोपण पडोय धसहो  
 भरह विमासइ गहगहोउ ॥ १३ ॥  
 धनु धनु हु घर मडलि राउ, भ्राज पढम जिणवर मुभ ताउ  
 केवल लच्छि अलकीयउ ॥ १४ ॥  
 पहिनु ताय पाय पणमेसो, राज रिद्धि राणिमा फल लेसो  
 चक्करयण तव अणमरउ ॥ १५ ॥

ॐ

वस्तु—चलीय गयवर चलीय गयवर, गडीय गज्जत  
 ह पत्तउ रासभरि, हिण हिणत हय थटट हल्लीय  
 रह भय भरि टल टनीय मेरु, मेमुमणि मउड सिल्लीय  
 सिउ मस्तेविहि सचरीय, कु जरी चडिउ नरिण ।  
 समोसरणि मुत्तरि सहिय, वदिय पढम जिणण ॥  
 पढम जिणवर पढम जिणवर, पाय पणमेवि  
 प्राणहि उच्छव करोय, चक्करयण वलि वनिय पुज्जइ  
 गडयडस गजकेसरीय, गह्य नहि गजमेह गज्जइ  
 बहिरीय अम्बर तूर रवि वलिउ नीसाणे घाउ  
 रोमचिय रिउ रायवरि, सिरि भरहेसर राउ ॥ १७ ॥

ठवणि ?

प्रहि उगमि पूरवदिसिहि, पहिलउ चालीय चक्क तु  
 धूजीय धरयेन धरहर ए, चनीय कुलाचल चक्क तु ॥ १८ ॥  
 पूठि पीयाणु तउ दियए भयवलि भरह नरिद तु  
 पिडि पचायल परदलह, इलियलि अवर सुरिद तु ॥ १९ ॥  
 कज्जीय सयहरि संचरीय, सनापति सामत तु  
 मिलीय महाघर मडलीय, गाढिम गुण गज्जत तु ॥ २० ॥  
 गडयडतु गयवर गुडीय, जगम जिम गिरिण ग तु  
 तुड दंड फिर चालवइ, वलइ अगिहि अङ्ग, तु ॥ २१ ॥  
 गजइ फिरि फिरि गिरि सिहरि, भजइ तस्वर डालि तु  
 अक्स वसि भावइ नही य, करइ अपार अणालि तु ॥ २२ ॥  
 हासइ हसमिसि हणहणइ ए तरवर तार तोधार तु  
 लू दई पुरलइ खडवाय, मन मानइ अनुवार तु ॥ २३ ॥

भरतेश्वर-बाहुवली रास  
( गतिभद्र सूरि, स० १२४१ )

- रिमह जिलेसर पय पणमवी सरतति सामिणी मनि ममरेदि  
नर्माव निरतर गुरु-वरण ॥ १ ॥
- भरह नरिन्ह तणु चरितो, ज जुगा वसहा-वनप वगता  
वार वरिप विहुं बपवहं ॥ २ ॥
- १ हिन पभणिमु रामह छंनिह तं जन मनहर मन प्राणिनिह  
भाविनिह भयापण समलेउ ॥ ३ ॥
- जकुनिवि उवभाउरि नयरा, धणि कणि कचणि रयणिहि पयरा  
अवर पवर किरि अमर परो ॥ ४ ॥
- करह राज ठहि रिसह जिलेसर, पावतिमिर मय-हरण दिलेसर  
तजि तरणि कर ठहि तपइये ॥ ५ ॥
- नामि मुनद मुमगत देवि, राय रिमहेसर राणी बवि  
रवरेहि रति प्राति जिन ॥ ६ ॥
- बिबि बेटी जनमी मुनन्, तह जि तिटूयण मन अानन्  
भरह मुमंगन रवि तणु ॥ ७ ॥
- ॥ दवि मुनन् नंदन बाहुवनि, भजइ भिउड महामड भूषनि  
अवर कुमर वर वीर धर ॥ ८ ॥
- ॥ पूवर सात तणि तयामो, राजतणा परि पुहवि पयामो  
जुग जुग मारण ताताउ ए ॥ ९ ॥
- ॥ उवभापुरि भरहसर धाय, तक्षाशिला बाहुवनि आय  
अवर अठायु वर नवर ॥ १० ॥
- दान दियइ जिलेवर सवत्तर विसय विरत वहुइ संजमभर  
सुर अमुरा नरि सवीशण ॥ ११ ॥
- ॥ परमताम पुरि कचन नाणु तस अपन्नु श्रगट अमाणु  
जाण हउ भरहसहं ॥ १२ ॥

- पाखर पखि कि पखरुय, ऊडाऊडाहि जाइ तु  
 हूफइ तलपई ससई धसइ, जडई जकारीय धाइ तु ॥ २४ ॥
- फिरई फेकारई फोरणई, फुड फेणाउलि फार तु  
 तरणि सुरंगम सम तुलइ, तेजीय तरल ततार तु ॥ २५ ॥
- धडहडत धर द्रम दमीय, नह रूधइ रहवाट तु  
 रव भरि गणई न गिरि गहण, यिर थोभइ रहवाट तु ॥ २६ ॥
- धमर धिच धज लहलहइ ए, मिल्हइ मयगल भाग तु  
 वेगि वहता सीह तणई ए, पायल न लहइ लाग तु ॥ २७ ॥
- दडवडत दह दिसि दुसह ए सरिय पायक चक्क तु  
 अ गो अ गिइ अ गमइ अरीयणि असणि अणत तु ॥ २८ ॥
- ताकई तलपई तालि मिलिहि, ह्णि ह्णि ह्णि पभणत तु  
 आगलि कोइ न अछइ भलु ए, जे साहमु भूभत तु ॥ २९ ॥
- दिसि दिसि दारक सचरीय, वेसर वटइ अपार तु  
 संख न नाभइ सेंन तणी, कोइ न नहई मुधि सार तु ॥ ३० ॥
- बंधव बधवि नवि भिनइ ए, न बेटा मिलइ बाप तु  
 सामि न नेवक सारवइ, आपहि आप विषाप तु ॥ ३१ ॥
- गमवडि चडीउ, चक्कधरो पिडि पयड भूमदड तु  
 चालीय चिहुदिमि चलवनीय दिई देसाहिव दड तु ॥ ३२ ॥
- वज्जीय समहरि द्रम द्रमीय, धण निना निसाण तु  
 सकीय सुखरि सग सवे, अवरह वमण प्रमाण तु ॥ ३३ ॥
- डाकडूक नबक नणइ ए, गाजीय गयण निहाण तु  
 पड पडह पंडाहिवह, चालतु चमकीय भाण तु ॥ ३४ ॥
- भेरीय रव भर तिहू भूयणि, साहित किमइ न माइ तु  
 कपिय पम भरि शेष रहिउ, विण साहीउ न जाइ तु ॥ ३५ ॥
- सिर डोलावइ धरणि हि ए दूक टोल गिरि गू ग तु  
 सायर सयन वि भलभनीय, गहलीय गग सुरंग तु ॥ ३६ ॥
- सर रवि छूदीय मेहरवि महिपनि मेहधार तु  
 उजू भानइ आउध तणई भानई राय-वधार तु ॥ ३७ ॥
- मडिय मंडलवइ न मुहे ससि न कवइ सामत तु  
 राडत राउतवर रहीम, भनि मू भई मतिवत तु ॥ ३८ ॥

कटव न कर्त्तव्यं भर तगु, भाजइ भेऽ मिहत्त तु  
रेनइ रयगुणपर जमत, राखोरणि नमत तु ॥ ३६ ॥  
साठि महम मवच्छरुं भरत्त मरह छ वण्ड तु  
ममरगणि माधद मघर, वरनइ प्राणु अण्ड तु ॥ ६० ॥  
बार वरिम नमि विनमि, भड मिहोय तालायाय आण तु  
घावारी तदि गग तगुइ पामद नवह निहाणु तु ॥ ६१ ॥  
छत्रीम महम मडटुध मिठ, चउ रयणु मम्पत तु  
घाविउ गगा भोगनीय, एव सम्म वरमाउ तु ॥ ४२ ॥

ठवगि २

तउ तिहि आऽप मान आरइ आऽधराऽ नवि  
निगि विगि मगि नूपाव भरह भयऽ नात्रावडमो ॥ ४३ ॥  
वारिदि वऽय अणानि अरू प्राराय अऽनिमि वरइ ए  
अनि उतपाव अवानि, णगन त्व वरि णवडुऽ ए ॥ ४४ ॥  
मति सागर विगि वानि चवत त (न) पुरि पऽवम करइ  
तइ जि अमाइ इ राजि धाराय धर धरीउ धरह ॥ ६१ ॥  
त्व वि अमाठ एय कवगि कि णवत माननिहि  
णउ आनि न मुम भड वपराय वार न तऽइ ए ॥ ६६ ॥  
वानड मनि मयक मभनि मारीय चस्त धरो  
अवर नऽ वाइ वडु चररयणु णऽना तगुउ ॥ ६७ ॥  
संवाय मुरवर मामि भरत्तमर नूय नूय भवणे  
नामऽ नि मुग्गाय नामि दानय मानय वडि कवगि ॥ ४८ ॥  
नवि मानइ नूम आण वाऽगि विऽ वाऽवने  
वीरऽ वयर विनाणु \* विममा वऽऽ वीर वरा ॥ ६८ ॥  
तीगि वारगि वरऽय, चकन १ आरइ नीय नयरे  
विणु वधव नूय नर सऽ वाऽ सामीय माचवद ए ॥ ५० ॥  
त ति मुग्गीय नाणऽ तानि वराउ राऽ मराम भर  
भमइ चऽवाय वानि पनणुऽ माऽनि भूदि मूऽ ॥ ५१ ॥  
जुन मानऽ मभ आणु कवणु मु वऽइ वाऽरन  
नानह नमु ए राणु भवऽ भुव वारिऽ विऽयि ॥ ५२ ॥

- स मति-सागर मति, बलि वसुहाहिव वीन वइ  
नवि मनि कीजइ खनि, बधव सिउ कहि कवण बना ॥ ५३ ॥
- दूत पठावीयइ देव, पहिलउ बात जणावीइ ए  
खु नवि भावइ देव, तु नरवर कटवई करउ ॥ ५४ ॥
- तं मनि मानीय राउ, वेणि सु वेणह, भाए-सइए  
जईय सुनदा-जाउ, भाए मनावे भाएणीय ॥ ५५ ॥
- जां रय जोश्रीय जाइ, सुजि भाएसिहि नरवरह  
फिरि फिरि साहमु थाइ, वाम तुरीय बाहणि तणउ ॥ ५६ ॥
- आजल-काल बिराल, - भावीय आडिहि उतरइ ए  
जिमणउ जम विवराल, खरु खु रव उछलीय ॥ ५७ ॥
- सूकीय बाउल डालि, देवि बइठीय सुर करइ ए  
भपीय भाल ममालि, धुक पोकारइ दाहण भो ॥ ५८ ॥
- डावीय डगलइ सादि, भयरव भैरव खु करइ ए  
जिमण इ गमइ विपादि, फिरीय फिरीय शिव फकरइ ए ॥ ५९ ॥
- चट जखनइ कालीयार, एकउ बेहु उतरइ ए  
नोजलीउ भ गार - सचरता साहमु हुइ ए ॥ ६० ॥
- काल भुयंगम वान, दतीय दमण दाखवइ ए  
भाज अलूठउ काल, पूठउ रहि रहि इम भणइ ए ॥ ६१ ॥
- जाइ जाणी दूत, जीवह जोवि, भागमइ ए  
जेम भमतउ भूत, गिणइ न गिरि ग्रह वण गहण ॥ ६२ ॥
- सईइ नेसमि वेस न गिणइ न दह नोभरण  
लघीय देस भमेस गाम नयर पुर पाटणह ॥ ६३ ॥
- बाह्रि वह्य भाराम सुरवर नइ ता नाभरण  
मणि तारण भभिराम रेहइ धवनाय धवनहरो ॥ ६४ ॥
- पोयण पुर दोसति दूत सुवेग सु गहरा हीउ  
व्यवहारीया वसति, घणि कणि कचणि मणि पवरो ॥ ६५ ॥
- घरणि तरणि ताडंक, जेम तुग शिगडु सहइ ए  
एह कि भभिनव तक सिरि कोसीसा कणयमय ॥ ६६ ॥
- पोडा पालि पगार, पान पार न पामीई ए  
संख न सीहडु यार, दीसई देउल दह दिसिइ ॥ ६७ ॥

- पेम्बवि पुरह प्रवमु, दूत पदूतउ रायहरे  
 सिउ प्रतिहार प्रवमु पामीय नरवर पय नमद ए ॥ ६८ ॥
- चउत्रीय माणिव यम माहि बहउ वाहुवले  
 हविहि जितीय रम, धमर-हारि चालई चमर ॥ ६९ ॥
- मठीय मणिमद दद, मेघाढम्बर सिरि धरिय  
 जस पयडे भूयुदहि, जयावती जयसिरि वसद ए ॥ ७० ॥
- जिम उण्याचलि मूर, तिम सिरि सोहइ मणिमुकुटी  
 बगतुरीय कुमुम कपूर, कुचूवरि महमहइ ए ॥ ७१ ॥
- भनवड ए बुडन कानि, रवि गणि मठीय किरि धमर  
 गगाजल गजपानि, गाडिम गुण गज गृहप्रदइ ए ॥ ७२ ॥
- उरवरि मोतीय हार वीरवयल वरि भलहनइ ए  
 तवन धनि सिणगार खलक ए टोडरवामा ॥ ७३ ॥
- पहिरणि जाणर धोर वकालइ वरिमाल कर  
 गुरुउ गुणि गभीर, दीठउ धवर कि चक्रधर ॥ ७४ ॥
- रजिठ चिति सु दूत दमोय रणिम तनु तण्णीय  
 धन रिमहरपूत जयवतु कुणि बाहुवले ॥ ७५ ॥
- बाहुवनि पूधइ कुवण, वाजि तुहि धात्रीया ए  
 दूत भणइ निज वाजि भरहेसरि धन्दि पाठय्या ए ॥ ७६ ॥
- वस्तु—राउ जपण, राउ जपइ मुणि न मुणि दूत  
 भरहसद भूमीसरह, भरह राउ धम्ह सहायर  
 सवावाडि कुभरिहि सहाय, मूरकुमर तहि धवर नरवर  
 मति महाधर मंडलिय भतठरि परिहारि  
 सामतहमीमाड सह बहि न कुमल सविचार ॥ ७७ ॥
- दूत पमणइ, दूत पमणइ, बाहुवनि राउ  
 भरहसर चक्रधर, बहि न ववणि दूहवाणह विज्जइ  
 जिहु तहु बधव तूय सरिमगडपड त गज भीम गजइ  
 जइ ध धारइ रवि विरण्ण, भट मजइ वर वीर  
 तु भरहेमर धमर भरि जिण्णइ माहरी धीर ॥ ७८ ॥

राउत कोइ तुह तुल्लइ, ईण्डइ अउइ रवितलि ॥ ७६ ॥  
 जा तव बधव भरह नरिदो, जसु भुइ कप सगि सुरिदो  
 जोण्ड जोता भरह छे सड, म्नेच्छ मनाब्या आण भवड ॥ ८० ॥  
 भडि भडत न भुयबलि भाजइ, गडयडतु गडि गाडिम गाजइ  
 सहस बतीस मउडाथा राय, तू य बधव सवि सेवइ पाय ॥ ८१ ॥  
 चऊद रयण घरि नवइ निहाण, सख न गमघडु जसु केवाण  
 ह्य हवडा पाटह अभिपेका, तू य नवि आवीय कवण विवेका ॥ ८२ ॥  
 बिण बधव सवि सपय ऊणा जिम बिण नवण रसाइ अलूणी  
 तुम देमण उतठिठ राउ, नितु नितु वाट जोइ तुह भाउ ॥ ८३ ॥  
 वडउ सहोयर भनइ वड वीर, देवज प्रणमइ साहस धीर  
 एक सोह भनइ पाखरीउ, भरहेसर नइ नइ परबरीउ ॥ ८४ ॥

## ठवरिण ४

तु बाहूबलि जपइ कहि वयण म वाचु  
 भरहेसर भय कपइ, ज जगतु साचु  
 समरगणि तिणिसिउ कुण काछइ, जहि बधव मइ सरिसउ पाछइ  
 जावत जडुनीवि तसु आण, ता अम्ह कहीइ कवण ए राण ॥ ८६ ॥  
 जिम जिम मुजि गड गाडिम गाडउ, ह्य गय रह बरि करीय सनाडु  
 तस अरधासण आपइ इ दो, तिम तिम अम्ह मनि परमाणदो ॥ ८७ ॥  
 जुन आव्या अभिपेकह वार, तु तिणि अम्ह नवि कीधा सार  
 वडउ राउ अम्ह वडउ जि भाई, जहि भावइ तिहा मिनिंसिउ जाइ ॥ ८८ ॥  
 अम्ह ओनगनी वाट न जोई, भड भरहेसर विवर न होइ  
 मम्ह बधव नवि फोटइ वीमइ लोमीया लाक भणइ लख ईम्हई ॥ ८९ ॥

## ठवरिण ५

थालिम लाइसि वार बधव भेटीजइ  
 चुकि म चीति विचार मूय वयण मुनीजइ ॥ ९० ॥  
 वयण अम्हारू तूय मनि मानि, भरह नरेमर गणि ठाजदानि  
 संतूठउ दिइ कवण भार, गयघड तेजोय तुरण तुपार ॥ ९१ ॥  
 गाम नयर पुर पाटण आपइ, देसाहिव विर थोभीय थापइ  
 देय अदेय न दतु विमासइ, सगपणि कह नवि किपि बिणसइ ॥ ९२ ॥



जाण राउ धानगिउ जाणइ, माणणहार विराविइ मारइ  
प्रतिपन्नउ प्रगट प्रति पानइ प्रारधिय नवि घदी विमरानइ ॥ ६३ ॥

तिगि सिउ दव न बाउइ ताइउ, मुजि मनाविइ माइम घाइउ  
हुं हितनारणि बहुं गुनाण कूह बहु तु भरहेगर घाण ॥ ६४ ॥

बस्तु

राउ अणइ, राउ जेण गुणि न गुणि दूत  
तविहि सहीड मान्हनि त जि साय भवि भविहि पामइ  
ईमइ नोसत नर ति (नि) गुण, उतमाग जण जणइ नामइ  
बम पुल्पर गुर भगुर तिह न लपइ बोइ  
सभइ धपिय न उण पणि भरहेगर गुण हाइ ॥ ६५ ॥

ठवणि ६

नेमि निरसि नमि धरि मंशिरि जवि धवि जंगलि गिरि घुन कंशिरि  
निमि निमि देसि देमि दीपतरि सहाउ लामइ जुगि सधरत धरि ॥ ६६ ॥

धरिरेरि दूत गुणि देवन दानव, महिमठनि मंडल वैमान  
बोइ न लपइ लहीपा लीह, लामइ धपिव न उद्धा दीह ॥ ६७ ॥

घण कण बंधण नवइ निहाण, गणपइ तेजीय तरल बेनाण  
सिर धारवस सपतंग गमोजण, ताइ निमत पणइ न नमीजइ ॥ ६८ ॥

ठवणि ७

दूत भणइ ण्हुमाई पुत्रिहि पामीजइ  
पइ सागीजइ भाई धम्ह बहाउ बीजइ ॥ ६९ ॥

धवर घठाणु जु जई पहिनु भिर्वासिइ तु तुभ मितिउ न सयनु  
पहि विनय कुण कारणि काजइ माम म निगमि धार वनाजइ ॥ १०० ॥

बार वराणह वरछण पनीजइ ईगि वारणि जई वहिवा मिनाइ  
जाइ न मन सिउ वात विमासी, धाणइ वारुण वात विणामा ॥ १०१ ॥

मितिउ न बिहा कणक मेलावइ तउ भरहेगर तइ तेनाइ  
षाण रणे बोइ भूभ वरे तिण सहु काइ भरह जि हियठइ धरेसिइ ॥ १०२ ॥

गार्जता गाडिम गज भीम, त सवि देमह लीधा सीम  
भरह धयइ भाइ भोनावउ, तउ तिणि सिउ न करोजइ दावउ ॥ १०३ ॥

वस्तु

तव सु जपइ तव सु जपइ, बाहुबलि राउ  
मप्यह बाह भजा न बल, परह आम वहइ कबण कीजइ  
सु जि मूरख अजाण पुण अवर दखि वरवयइ ति गज्जइ  
हु एवल्नउ समर भरि, भड भरहेसर घाइ  
भजउ भुजबलि रे भिडिय, भाट न भडि न घाट ॥१०४॥

ठवणि ८

जइ रिसहेसर केरा पूत, अवर जि अन्ह सहायर दूत  
ते मनि मान न मेल्हइ कीमइ, आनईयाणम भखिपि ईम्हइ ॥१०५॥  
परह आम किणि कारणि कीजइ, साहस सर वर सिद्धि वरीजइ  
हीउ अनइ हाय हत्वीमार, एह जि वीर तणउ परिवार ॥१०६॥  
जइ कीरि सीह सिमालिइ खाजइ, तु बाहुबलि भूयबलि भाजइ  
जु माइ बाघिणि पाई जइ, मर दूत तु भरह जि जोपइ ॥१०७॥

ठवणि ९

जु नवि मयसि आण, वरवह बाहुबलि  
ससिइ तु तू प्राण, भरहेसर भूयबलि ॥१०८॥  
जस छनवइ कोडि छइ पायक, कोडि बहुतरि फरवइ फारक  
नर नरवर कुण पामइ पारा सहा न सकीइ सेना भारो ॥१०९॥  
जीवता विहि सह सपाडइ, जु तुडि चडिसि तु चडिउ पवाडइ  
गिरि कदरि अरि छपिउ न छूटइ तू बाहुबलि मरि म अखूटइ ॥११०॥  
गय गद्दह हय हड जिम अन्तर सीह मीयाल जिमिउ पन्तर  
भरहेसर अन्नइ तूम विहरउ, छूटिसि किम्हइ करत न निहह ॥१११॥  
सखसु सु पि मनानि न भाई कहि कुणि कूडी कूमति विलाइ  
मु भि म मूरख मरि न गमार पय पणमीय करि करि न समार ॥११२॥  
गड गजिउ भड भजिउ प्राणि, तइ हिव सारइ प्राण विनाणि  
अरे दूत बोली नवि जाण, तु ह आध्या जमह प्राण ॥११३॥  
कहि रे भरहेमर कुप कहीर, मर सिउ रणि सुरि असुरि न रहीइ  
जे चक्किइ अन्नवृति विचार, अन्ह नगरि कू भार अपार ॥११४॥  
आपणि गगा सीरि रमता धसमस धू धनि पडीय धमता

नऽ उनादीय गयगि पट तउ, कग्गा बराय वना भावतउ ॥११७॥  
 त परि काद गमार धोगार, उ मुटि चटिमा तु जागिगि सार  
 जउ मउगुया मउड उतारउ, गहिक रिन्नि जुन इयगव सारउ ॥११८॥  
 जउ न मारउ भरङ्गर राउ, तउ भाउद रिगङ्गर ताउ  
 मउ भरङ्गर जं जगान इय मय र्द वर वगि चनाउ ॥११९॥

यन्तु

दून जाण दून जाण मुगि न मुगि राउ  
 उह रिक्क परि म न गिगुमि गग-नीरि गिल्लन जिगि रिगि  
 चल्नतइ एन भारि जगु, मय माय सउगउद पणि मगि  
 ईमई याणु म मानि रगि, भरङ्गर छद दूरि  
 भागानू वेडिउ गणु वानि उगतं मुरि ॥१२०॥  
 दून चन्नि दून चन्निउ वनाय एम जाण  
 मनिगरि चितविउ, नु पमाउ दूतह रिवारण  
 धवर धराणु कुमर वर, वाइ गाण पन्तु पधारण  
 तह न मनिउ भाविउ वनि भरङ्गरि पामि  
 ममई य मामिय मंधिवन चपत्रगिउ म दिमामि ॥१२१॥

उरगि १०

तउ वानिहि वनवनाउ वान व य वासा नउ  
 केवारइ काउवायउ करमान महाबल  
 वान वनपनि वनगउत मउहाया मिनीया  
 वनह तगुइ वारगि पुरान वानिहि पउरवाया ॥१२०॥  
 हउय वासाउन गहगहाटि गयणगि गज्जिय  
 मंचरिया मामत मुउ मायण्णाय मन्त्रीय  
 गहयह त गय गणाय गेनि गिरिवर गिर वानइ  
 भूगनीया शुभगण चउत वरिय उनाउ ॥१२१॥  
 पुहइ भिउ मन्तउ मनि महमहइ खडामडि  
 पाणाय धूणाय धामवइ अनुमनि गान [नहा] डि  
 मुरतनि सागि मगति मनि तजाय तसरिया  
 समइ धमइ धमममइ मनि पयगइ पावरिया ॥१२२॥  
 कंधगन केवाणु ववा वरइइ कदीयानी

रणराइ रवि रण वज्र मरवर धण धापरीपानी  
 सीषाणा वरि सरइ फिरइ मरइ पत्रवारइ ॥१२३॥  
 उडइ भाडइ धगि रगि भ्रमवार विचारइ  
 धमि धामइ धडहडइ धरणि रधि सारधि माडा  
 जडोय जाष जडजाड जर मशाहि सत्राडा  
 पसरिय पायल पूर वि गुण रलीया रयणार ॥१२४॥  
 लाह बहर वर वीर वयर बहवटिइ भवापर  
 रयणीय रवि रण तूर तार प्रवप बह प्रहोया  
 ढाव डूव डम डमीय ढाव राउन रहरहीया  
 नेच वीघाण निनादि नीभरण निरभीय ॥१२५॥  
 रण भेरी भुकारि भारि भूयवर्तिह विपभीय  
 चन चमाल करिमान धुत बटतत्र वाड  
 कनकइ सामल सबर मेल ह्व मसक पर्यउ  
 मागिणि गुण टवार महिना बाणावलि तणइ  
 परशु उलालइ ररि धरइ भाना उलालइ  
 तीरीय तोमर भिडमान डबतार वगबध  
 मागि सन्ति सरुभारि छुरीय भनु नागतिवध  
 ह्य सर रवि उद्धनीय खह ध्याईय रविमडल  
 धर धूजइ वनवलीय कोल वापिउ वाईगल  
 टनटलीय गिरिटैक टोन खेचर खरभलीया  
 कडडाय कूरम कधमंधि सायर कनहलीया  
 चलीय ममहरि सेस मिसु सलसनीय न सक्कइ ॥१२६॥  
 कचण गिरि कधार भरि कमवमीय कमक्कइ  
 कपीय किनर काडि पडाय हरगण हडहडीया  
 सकिय सुरवर समि समय दाणव दडवडाया  
 श्रति श्रलब लहक्कइ श्रलब बल विध विहु दिसि  
 सचरिया सामत सीस सीकिरिहि कसाकसि  
 जाईय भरह नरिद कटक मूच्छह बल धल्लइ  
 कुण बाहूवलि जे उ वरव मइ मिउ बल कुल्लइ  
 जड गिरि कदरि विचरि वीर पइमतु न छूटइ  
 जइ बली जगलि जाइ किम्हइ तु मरइ मलूटइ ॥१२७॥  
 गज साहणि सचरीय महुणर वणाय पायणपुर

वार्त्तीय ब्रूव न वन्कायन् वाट्टवति नरवर  
 तमु मन्दिमन्ति नरु गड मन्भातोड गातु  
 ए धन्दिमानिउ विउ वाड धान्ति तद् वातु ॥१३१॥

वधव मिउ नरवार वाड म्म धतर पायड  
 न्नु वधव नीय जाव जम वधि वाड न म्मद  
 तन् मनि चिउड राय किमिउ एय काण पराटोड  
 धानरी उवनि वार राड र्नाउ धवागीड ॥१३२॥

गय धाननाया गन-गनउ पायड इय साम  
 हुइ इममम मरन्राउ करा धावान  
 एकि निरन्तर व्हड नार एकि ई धणु धाणुई  
 एक धानमिइ परतणु पाणु धाणुउ तृणु ताणुइ ॥१३३॥

एकि उतारा कराय नुरीय तनमार वाथ  
 इकि भरडइ क्काणु माणु इकि धार रायड  
 इकि नार्त्तीय नय नारि तीरि तनीय बातावड  
 एकि वारु धमवार मार माणु वनावड ॥१३४॥

एकि धाकुनाया ताति तरन तडि चर्त्तीय म्मावड  
 एकि गूडर माणुणु मुणु चउरा त्विरावड  
 धारीव मामि न मामि धान्तिणु पुन पणाम  
 वमनुराय कुकुम क्कुरि चन्दि वनवाम ॥१३५॥

पुन कराउ च्चरयणु राउ, वरन् नू जाई  
 वात्तीय म्म धमम गड धान्ता मवि धाई  
 महनवर मट्टुध मु (मु ) इड तामर मामतड  
 मर इयि न्दिइ तवान वणुय वंक्कणु क्कनकन ॥१३६॥

अन्नु

दूत चनाड दूत चनोड, वाट्टवति पामि  
 नणुइ भूर नरवर नि मुणुि, नरु राण पयवव वावड  
 नार्त्तीय नाम न क्काणु रीणु, एन् मिन्त नून नारि म्मजड  
 जन् नवि भूरय एट्ठ तणुि, मिरवरि धाणु वट्टमि  
 मिउ परिवरिइ ममर न्दि, मट्टु मयदि मन्मि ॥१३७॥  
 राउ बुन्वर, राउ बुन्वर मुणि न मुणुि दूत  
 नाय पाय पणुमतय मुन वधव धनि मरन् नन्वड

तु भरहेसर तसतणीय, वहि न कीम भ्रमिह सुत्र किज्जइ  
भारिइ भुयबलि जुन भिडउ, भुज भुज भडिवाउ  
तउ लज्जइ तिहूयण धणा, सिरि रिसहेसर ताउ ॥१३५॥

## ठवणि ११

चलीय दूत भरहेसरह तेम वात जणावइ  
कोपानलि परजलीय वीर साहण पलणावइ  
लागी य लागि निनादि वादि धारति भसवार  
बाहूबलि रणि रहिउ रोसि माडिउ तिणिवार ॥१३६॥

ऊड कडारण रणत सर बेसर फूटइ  
अतरालि धावइ ई पाण तीह अत भसूटइ  
राउत राउति याध-याधि पायक पायकिहि  
रहवर रहवरि वीर वीरि नायक नायकिइ ॥१४०॥

वेडिक विडइ विरामि सामि नार्मिहि नरनराया  
मारइ मुरडीय मूछ भेच्छ मनि मच्छर मरीया  
ससइ मसइ धसमसइ, वीर धड वड नरि नाधइ  
रापस रीरा रव करति रुहिरे सवि राचइ ॥१४१॥

चापीय चुरइ नरकराडि भुयबलि भय भिरडइ  
विण ह्यायार कि वार एक दातिहि दल करडइ  
चालइ चालि चम्माल चाल करमाल ति ताकइ  
पठइ चिंध भूमइ कबध सिरि समहरि हाकइ ॥१४२॥

रुहिर रलिनर्तिहि तरइ तुरग गय गुडीय भूमइ  
राउत रण रसि रहित बुद्धि समरंगणि सूकइ  
पहिनइ दिणि इम भूम हबु सेनह मुल मडण  
सध्या समइ ति वारणु ए करइ भट बिहु रण ॥१४३॥

ठवणि १२ — हिव सरस्वती धउल

तउ तहि बीजए दिणि सुविहाणि, उठीउ एक जी अनलवेगा  
सडवड समहरे वरम ए बाणि, छयल सुत छलिमए छावडु ए  
अरीयण अ गमइ अ गात्र गि राउ तो रामति रणि रमइ ए  
लडसड लाडउ चडीय चउरणि आरयणि सयवर वरइ ए ॥१४४॥

## श्रूक

वरवरइ सयवर वीर आरेणि साहस धार

मंडनीय मितिया जान, ह्य हौम मान गान  
 ह्य हाम मगत गानि गानाय गदगु गिरि शुट् शुमशुमइ  
 धमधमीय धरयत सनाय न मइइ मन कुनगिरि कमकमइ  
 धस धसाय धायइ धारघा वति धार धार विण्डण  
 सामत समहरि समु न नहद मडनाक न मडए ॥१४५॥

घटन

मडए मानए महिपति रा गडिन ग्य घड टानव ए  
 पिडिनर परवत प्राय मड घट नरए नाचवइ ए  
 कान ककान ए करि करमान माना नूनिहि ननहनइ ए  
 भाजए मड घट निम नन नन पचादग गिरि गटयड ए ॥१४६॥

घटव

मडयन्द् मन्नि माहू आरणि अवन अवीह  
 धमममाय ह्यन धार मडडड मय भडिवाइ  
 मड-हडइ मय मडनाए नुबति मराय हू निम भीमरी  
 तहि चद्र चूह पुन परन्ति अपिउ नरवइ नर नरलो  
 धममनीय नगु वीर वीमभू नन मर निखाए ए  
 रट्ट रट्ट र ह्यि ह्यि मरातू अणव पायक पाण ॥१४७॥

घटन

पाडीय मुखय सणावए दत्त पूठिहि निहाय रणुरणाय  
 मूर कुमारह राउ पवत निरए नृपड व  
 नयनिहि निरमीय कुपीपट राउ चक्करपणु तट मभरइ ए  
 मेल्लइए तह प्रति प्रति सक्काउ अणववाग तहि चितवइ ए ॥१४८॥

घटव

चितवर्षय मुन्ह रा जा अ उपुऊ प्राउ  
 हिव मरण ए नि नाम रजइअ चन्वृति जाम  
 रजन्ना चन्वृति जाम इम भणि चतु मुट्टिहि पडरा  
 सचरिउ मूर मूर मडनि चतु पुणव तनि वना  
 पडपडाय नगु चद्र चूह, चन्द्रमहन मार ए  
 नननीय नानि नमानि तुट्टिहि, चक्क ठहि तहि राह ए ॥१४९॥

घटन

राहीउ राउत जाइ पागानि विनाएर विज्जा बनिहि

चक्र पहूचए पूठि तीणि तालि बोलए बलवीय सहम जसो  
 रे रे रहि रहि कुपीउ राउ, जित्यु जाइसि जित्यु भारिबु ए  
 तिहूयणि काइ न अछइ उपाय जय जोपिम जोणइ जीवीइ ए ॥१५०॥

श्रुटक

जीविना छडीय मोह, मनि भरणि मेलहीय षोह  
 समरीय तु तीणि ठामि, इकु घाति जिएवर सामि  
 [इकु घादि जिएवर सामि] समरीय, वज्जपजर अणसरइ  
 नरनरीउ पायलि फिरीउ तस मिरु, चक्रु लेइ सचरइ  
 पयवमल पुज्जइ भरह भूपति, बाहुवनि बल खलभलइ  
 चन्नपाणि चमकीय शीति कनयलि, कलह कारिणि किलगिलइ ॥१५१॥

धउल

कल गिलइ चक्रधर मेन सश्रामि बोनए कवण सु बाहुबले  
 तउ पोयण पुर नेरउ सामि, बरवह निनए दस गुण ए  
 कवण सो चक्र रे कवण सो जाख कवणसु कहीइए भरह राउ  
 सेन सहारीय सोधउ साप, आज मल्हावउ रिमह बसो

ठवणि १३ हिव चउपइ

चद्र चूड विज्जाहर राउ, तिणि वातइ मनि विहीय विसाउ  
 हा कुल मडण हा कुलवीर हा समरगणि साहस धीर  
 कहिइ कहि १इ किसिउ घणु कुल मलजाविउ तइ आपाणउ  
 तइ पुण भरह भलाविउ आप भलु भणाविउ तिहूयणि बापु  
 मुजि बोनइ बाहुवलि पासि देव म दाहिछु ई हीइ विमासि  
 कहि विण उपरि कीजइ रोमु, एहिजि देवह दीजइ दोमु  
 सामीय विममु करम विपाउ काइ १ छूइ रक न राउ  
 काइ न भाजइ लिहिया लीह पामइ अधिक न भोडा दोह  
 भजउ भूयवलि भरह नरिण मइ सिउ रणि न रहइ सुरिइ  
 इम भणि बर वीय बावन वीर सेनइ समहरि साहस धीर  
 घसमस धीर घसइ घडहडइ, गाजइ गजलि गिरि गडयडइ  
 जमु भुइ नड हड हडइ भडक दल डड वडइ जि चड चडक  
 मारइ दारइ खल दा खणइ, हेड ह्योहणि ह्यन हणइ  
 अनल वेग कुण कूखइ अछइ इम पचारीय पाडइ पडइ  
 तरु निरुवइ नरनरइ निनाणि वीर विणासइ वादि विवादि



तिन्नि माम एकरलउ मिडर, तउ पुणु पुरउ चडह पडद  
 चऊर वादि विद्यापर सामि, तउ मूरह रतनारी तामि  
 दल दनेलिउ दउठ वरीम, तउ चरिउ तमु छीय सात  
 रतन चूठ विद्यापर धमइ, गंजइ गयपड हियडइ हगइ  
 पवन जय मड भरहु नरि, गु जि गंहारीम हगइ गुरि  
 बाहुलीक भरहेमर तणु, भट भाजगीय भीदीउ घणु  
 गुरमारी बाहुबलि जाउ, भडिउ तग तहि पडीय टाउ  
 धमित वेत विद्यापर मार, जग पामीय न पीण्य पार  
 चडिउ चक्रपर वाजइ ध मि घुरिउ चडिहि चडिउ चउरंगि  
 समर २ध धनइ वीरइ यध मिनीउ ममहरि विहुं मिउ बंध  
 सात माग रहीया रणि बउ गई गहगहाया धपथरा सेउ  
 मिर ताना दुर ताना नामि, भिडइ महाभट बउ मंग्रामि  
 धाम्या बरवहं बापाबाधि परभवि पुठना सरणा गामि  
 महेद्र चूठ रधूड नरि मूमर इडउ हसइ गुरि  
 हाकइ ततइ तुनपइ तुलनइ घाटि मामि जं जिमपुरि मिनइ  
 दंड सई धमीउ युराणि भरतपूत नरनरइ तिनानि  
 गंजीउ बनि बाहुबनि तणुउ, मस मन्दाविउ ताणि आपणु  
 सिहरण उठीउ हावत धमित गणि भंपिउ धान्त  
 तिप्रिमात धट घुजिउ जाग भरह राउ मनि वगिउ रामु  
 धमित तेज प्रतपइ तहि तजि मिउ मारणि मिनिउ हजि  
 धाड धीर हणुइ वे बाणि एक माग निवडमा नायाणि  
 कु डरीक भरहेमर जाउ लग भटत १ पाउउ पाउ  
 इठनीय दनि बाहुबनि राय, तउ पय पक्क प्रणमीय ताउ  
 गुरिजमोम ममर हावत, मिदिया तानि तामर गाकंत  
 पाव वरिम भर मोनीय धाड नीय नीय गामि निवारिमा रा ॥१७२॥  
 इवि घुरइ इवि चंडइ पाय गकि डारण एनि मारइ धाइ  
 मत्र भवत मूमइ गयग धनु धनु रिगहेमरनु थम  
 मवमारी भरहेमर जाउ रण रणि रोइ पहिनउ पाउ  
 गिणुइ न गांइ मज्ज हणुइ धगरणि धीर धणुअर धणुइ  
 बीग कोदि विद्यापर मिनी उठिउ गुणति नाम विनिगिनी  
 निव नंनना मिउ मिन्दाउ तालि बागटि निधग बिहुं जमत्रानि  
 कोपि चडिउ चि नउ चक्रपाणि मारउ ययरी बाणु विनाणि  
 मंडी रहिउ बाहुबनि राउ भत्रउ मणुइ भरहु भडिवाउ ॥१७६॥

॥१७२॥

॥१७६॥

बिहुं दलि बाजि रणि बाहनी, खनदल खोणि ते खन भनी	॥१७७॥
उढीय खेह न सुम्द मूर नवि जाणि ममार धमूर	
पढइ सुहड धड धामइ धसी, हणइ हणोहणि हानइ हमी	॥१७८॥
गडयड गषधड डीचा डलइ, गुना समा तुरग मग तुनइ	
वाजइ धणुही तणा धामार, भाजइ भिडत न भेडिगार	॥१७९॥
वहइ रुहिर नइ मितर तरइ, री री या रड रागस वरइ	
हयन हावइ भरह नरर, तु माहगु सहइ भणि मुरि	॥१८०॥
भरह जाड सरमु सप्रामि, गाजइ गजन्न धामनि मामि	
तर त्विस भड पडिउ धाइ धुणि साग बाहूबलि राइ	॥१८१॥
वीह प्रति अपइ मुरवर सार त्वि एवडु भड सहार	
काइ मरावउ तम्हि इम जीव पडसिउ नरवि करता रोव	॥१८२॥
गज ऊनारीय बधव बेउ, मानिउ वयण मुरिह तेउ	
पइमइ मानापाडइ धीर, गिरिवर पाहिइ सवल गरीर	
वचन भूमि भड भरहु न जिणइ, दृष्टि भूमि हारिउ कुण धणइ	
वडि भूमि भड भपीय पडइ, बाहुपासि पडिउ तडफडइ	॥१८४॥
गूढा समु धरणि मभारि, गिउ बाहूबलि मुष्टि प्रहारि	
भरह सवन तइ तीणइ धाइ वंठ मगाणउ भूमिहि जाइ	॥१८५॥
कुपीउ भरह छ सण्डह धणी चक्र पठावइ भाइ भणी	
पावलि फिरी सु वलीउ जाम, वरि बाहूबलि धरिउ ताम	॥१८६॥
बोनइ बाहूबलि वलवंत लोह खडि तउ गरवीउ हत	
चक्र सरीमउ चूनउ करउ, सयलह गोत्रह कुन सहरउ	॥१८७॥
तु भरहेमर चितइ चीति मइ पुण लोणीय नाईय भीति	
जाणउ चक्र न गोत्री हणइ माम महारी हिव कुण गिणइ	॥१८८॥
तु बोनइ बाहूबलि राम (उ) भार्दय मनि म म धरसि विसाउ	
तइ जीतउ मइ हारिउ भाइ अम्ह गरण रिमहेसर पाय	॥१८९॥

## ठवरिण १४

तउ तिहि च चितइ राउ, चडिउ सवेगइ बाहूबले	
दूहविउ ए मइ वडु भाय अविमामिइ अविबेक वति	॥१९०॥
धिग धिग ए एय ससार धिग धिग राणिम राजमिद्धि	
एवडु ए जीव सहार बीवउ कुण विरोधवसि	

- कोजइ ए महि कुणु कात्रि, जउ पुणु बपन भावरइ ए  
 काज १ ए ईणुइ राति धरि पुरि नपरि न मन्त्रिहि ॥१६२॥  
 सिग्गर ए ताव करे कागनि रहीउ बाहुबने  
 मगूउ ए मनि भरेउ, तम पम पणुमए भरह भटा ॥१६३॥  
 बंधव ए बाई न बान ए मविमानिउ मइ किउ ए  
 मरिहम ए भाई तिआन ईणि भवि हुं हिन एवमु ए ॥१६४॥  
 कीजई ए भाज पगाउ छटि न छटि न छपन छटा  
 त्रियटइ ए म धरि विगाउ भाई य छट्ट विरगोया ए ॥१६५॥  
 भाई ए नवि मुनिराउ मोत न मन्इ मनवीय  
 मुनर ए नू नीय माणु, वरम त्रिवम निरमणु रहीय ॥१६६॥  
 •मिउ ए मुहरि बउ भावीय बपन बूमवइ ए  
 उतरा ए माण—गर्द तु कानिभिरि मणुगर ए ॥१६७॥  
 उपत्रु ए बवनताणु तु विरर रिमम मिउ  
 भावी ए भरर तरि मि परगि भवमपुरी ए ॥१६८॥  
 हरिपीया ए हा मुरि भारता ए उच्छ्रन वरइ ए  
 वाज ए तान बंसात पट्ट पनात्र ममम ए  
 भाव ए भायुध मान बका रयणु तउ रग भरे  
 मंभ न ए जम वराणु मयवट उवर रागिमह ॥१७०॥  
 म त्रिमि ए वरन भाग भट भररगर गणुइ ए  
 राण ए गच्छ गिणगार वयरमेण मूरि पारधरो ॥२०१॥  
 पुणगणह ए तणु भन्तर मात्रिभद्र मूरि जाणुइ ए  
 कीधउ ए तीणि चरिनु, भरर नरगर राउ छटि ए ॥२०२॥  
 जा एइ ए वग वनेत ता नरा नितु नव निहि नह ए  
 भवन ए बार (१२) एकनात्रि (४१) पाणुणु वचमिई ए कीउ ए ॥२०३॥

## चन्दन वाला रास १

सामानित क्या वस्तु को प्रस्तुत करने वाले रासों में १३वीं गताङ्गी का एक महत्वपूर्ण रास "चन्दन वाला रास" है। जन भाषा में कवि आसगु न इस कृति की रचना की है। चन्दन वाला जैन श्राविकाया में एक धार्मिक एवं चरित्रवान महिला भक्त रची है जिसे अपने ब्रह्मचर्य सतात्व भयम और पवित्रता के लिए स्वयं का उत्कर्ष कर दिया। कवि आसगु राजस्थानी हैं और राजस्थान के ही नगर जातौर में इस रास की रचना हुई है। यह रचना जैसल मेर के बड़े भण्डार में सुरक्षित है तथा इसकी प्रतिलिपि भ्रम्य जैन ग्रन्थालय बीकानेर में है। जो यह रास अब प्रकाशित भी होया है।

कवि आसगु का एक रास "जोत्न्या रास" है।<sup>२</sup> यह कृति भी स० १२५७ के आस-पान की ही है। परन्तु बहुत अधिक महत्व की न होने और अधिकतर धर्मोपदेश से सम्बन्धित होने से इसका साहित्यिक महत्त्व नहीं है। चन्दनवाला रास की एक विशेषता यह है कि इसमें कृति का लेखक लेखन काल तथा लेखन स्थान सभी की कवि ने स्पष्ट कर दिया है। कृति की एक ही प्रति उपलब्ध होने से पाठ कही नहीं चुटित रह गया मिलता है। यह पाठ स० १४३७<sup>३</sup> की स्वाध्याय पुस्तिका से मिला है।<sup>४</sup>

चन्दनवाला रास एक कथात्मक कृति है जिसमें घटनाओं के कुतूहल बड़े विचित्र हैं। रास की मुख्य संवेष्टना चारित्रिक पवित्रता, स्त्री समाज में नारी

१-दिल्लिये - राजस्थान भारती भाग ३, अङ्क ३-४, पृ० १०४-१११ पर श्री अजरवद नाहटा का लेख 'कवि आसगु रचित चन्दन वाला रास'।

२-भारती विद्या श्री मुनि जिनविजय, भाग तृतीय, अङ्क १, पृ० २०६।

३-दिल्लिये - मुष्पिका लेख स० १४३७ बसाव सुग्गी २ मुगुरु श्री जिनराज गूरि सदुपदेशन व्य० देवा पुत्या देव गुविशा चिन्तामणि भूपित मस्तक या भाऊ श्राविकाया आत्म पुण्यार्थ श्री स्वाध्याय पुस्तिका लेखिता' (जैसलमेर बड़े भण्डार की प्रति, पन्नाक ३७१ से ३७४)।

४-जैसलमेर बड़े भण्डार की प्रति पन्नाक ३७१ से ३७४।

के सम्मान की श्रद्धा, श्रद्धाचार का ज्यम तथा जान स मानव की सर्वांगण प्रगति श्रानि का प्रचार करना है ।

रास का प्रारम्भ हा कवि मगलावरण के साथ करता है —

“जिण अभिणव मरमइ भणए  
पुण्णिहि मरु-अदि ज वीत  
धार जिण्ह पारणए  
निगुणउ चन्-वान चरित १

चन् वाना चम्पानगरा क राजा अधिवाहन श्रीर राजा धारिणी की लक्ष्मी था । चम्पानगरा पर कागाम्या क राजा गतानीक न चलाई कर दी । भयकर युद्ध क बाद गतानीक का एक मनापति धारिणा और चन् वाना का हरण कर ले गया । धारिणी न श्राम सम्मान का मकट म दान श्रपदान कर लिया । मनापति न चन् वाना का गह क हाथ बध लिया । मठ की स्त्री ने उन कारागार का मा श्रमह्य वन्ता था । चन् वाना श्रमन सतीरव समय क चरित्र पर श्रमन स्त्री ज्यम महावार का श्रमन हाथा मात्रन कराया और श्रमन म उन्हा म श्राा प्रहण करव कैयय जान का प्राप्त हुई ।

वृत्ति की ज्य सक्षिप्त क्या म कवि न कारुण्य धारा बहाई है । ३५ छन् का इम छान्मा रचना में ज्यम प्रवधानकता का सजन निवाह किया है । ज्यका क्या तत्व श्रमक पुत्रता म युक्त एवं श्रमन में पूर्ण है ।

धारिणा क चन् वाना क रूप चित्रण क उदाहरण दक्षिण—

(क) अधिवाण्य गण्णिा मु पाण्णिा मरवतमा धारिणा राणी  
तु म पयान्तर सारमर, कुडिल कम भुय नयण मुचगा  
हम गमणि सा भुग नयणि नव जावण नव नह सुरंगा

श्रीर शानिका चन् वाना का चचत शौवन श्रीर भातापन कवि को बगन गैत्री का मरमना क मरवना का प्रताव है —

भु भर भाता ता मुकुमाता  
ना नान्दु तम चण्य वाना (२१)

पाय धारिणा भमवारण गन हनतण माण्ड हारण  
चन् वार म मरनिया तगु मिरि लवण कम वनाण  
धणुवइ धाय स चण्णु, शानिय न्ह पणामण पाउ (२२)

सेठ ने चन्दन बाबा का दासी के रूप में क्रय किया था, पर उसके सहभाव विनम्रता और चारित्रिक उत्कृष्टता से उसे पुत्री की भाँति दुलार करने लगा। वह भी उसे पिता की भाँति पूजने लगी। एक दिन अपने पैर धाने समय सेठ ने उसके बालों को अपनी गान्ठी में रख लिया। सेठ की स्त्री यह देख कर भाग बहूला होगई। उसने सेठ की अनुपस्थिति में उसका सिर मुड़वाकर हथकड़ी, ब्रेसी पहिना कर तहखाने में डाल दिया। तीन दिन तक उसने स्वयं को "जिन" की तपस्या में लीन रखा। घन का कण उभ नहीं मिला। कवि ने हसन करती सर्वांगित बाबा का चित्रण किया है —

‘माइ ताय मति बुद्धि ए लाधी

पर घर मटण दुपले दाधी

आधी खटा तप विघ्ना विव आभइ बहु सुख निहाणु

पूटि रे हियडा। वज्जमघे अनह जम्पि नदिन्याणु

(२६)

इधर श्री महावीर स्वामी ने भी सिर मुड़े हुए, कैद में हथकड़ी ब्रेसी, तीन दिन का भूखी 'अष्टम तप' करने वाली रोजी हुई स्त्री के हाथ से ही पारणा करने की प्रतिज्ञा कर रखी थी, अतः चन्दन वाला न उसे पूरा किया।

महावार को भाजन करान पर इन्द्र ने १२॥ करोड़ स्वर्ण मुद्राओं की वर्षा की और इन्हीं मुद्राओं का दान कर चन्दन वाला न केवल्य प्राप्त किया।

वस्तुतः कवि ने राम ने वार कष्ट और दात रस का परिपाक किया है। युद्ध के समय तथा लूटपाट का कवि ने अच्छा चित्र खींचा है —

१ वज्जिय डक्क बुक्क नीसाण, वेणवी खचिय तुरिम वेवाण

चलिया मडलिक मडदघार मलकु तु घण वज्जिसइ मेहू —

— मूक्क करइ सग्राम भरि, अगा अगी भिटीया वेउ

और रस इन्द्र युद्ध के बाद विनयी ने शर का सूत्र लूटा। जिस जिस ने जो जो खाहा लूट म लूटा। वर्षों की सजीवता दृष्टान्त है —

हतिय कु भ धनि खिवियउ पाउ, नयपडियउ दहि वाहण राउ

— घोडइ चडि नासिउ मयउ सारि चितउ पूणइ वाउउ

तुरय यउठ गय घड लइय तउ जीवउ स्त्रयंगिम राई (१४)

वेणवि लढा रयण भडार वेणवि वचरा तणा कुठार

वणवि पडिउ धनु धण लूसउ चोर चरउददडिया

पाहकु अ कु फिर तु दवि धी, महित धारिणि पिउपडिया (१५)

वस्तुतः कवि ने इन दणों में मघनाथा की प्रधानता व कुतूहल को

मुद्रता प्रदान की है। पुरी क्यामक कृति में घटनाघा व धार बड़े मोठ हैं।  
कृति निर्वेगन है। भाषा मरन और गल्प चयन में गेरता है।

क्यामकता जन रामा म बहुधा सुरलित मितनी है। यह राम क्या  
प्रधान चरित काव्य है। द्रष्ट और अन्कारा का दृष्टि म कृति का विशेष  
महत्व नहीं लगता। परन्तु भाषा तथा मरन भाव पूर्ण गल्पवनी क कारण  
राम का महत्व बत जाना है। भाषा का प्रमुख विषयता यह है कि उसमें  
गुजराला और राजस्थाना का मिश्रण है। राजस्थाना और प्राचीन गुजराती क  
गल्प का भरमार है। एसी भाषा का मरनता म पुरानी हिन्दी कहा जा  
सकता है।

कवि न राम का मुख्य मरनता का अर्थ धर्म काम और माय में म  
अनन्य म कवय का प्राप्ति म मायक किया है जा काव्य का प्रयाजन है।

मक्षिणिणि जिणु निरु नाणु धार जिणुह कवन नाणु  
चरण पत्रम पवतिगिय परमभरह निव्वाणह जति  
यतीमा मय विणुतर्णि अन्विणु मुत्तु मिदिहि मार्गति— (३४)

अत म कवि न अमन् पर म् का विजय निश्चकर रचना क मन्तव्य  
और राम के दृष्टेय का नी स्पष्ट किया है—

एट्ट रामु पूण वृद्धि जति भाविहि भगतिहि जिण हुरिणिति  
पण्ड पहाव जे मुणुण तह मवि दुक्खइ श्हयह जति  
जावठर नररि आमणु भणुण जम्मि जम्मि नउ मरमति (३५)

अत राम मरन गान पत्रन पत्रन तथा मुने के लिए लिखा गया  
है। रचना की गैरी कर्नामक मरन व स्पृष्टगीय है। भाषा की मरनता व  
गल्पवनी का प्रवाह स्पष्ट है। जन भाषा काव्य का दृष्टि म कृति का महत्व  
और अधिक बत जाना है। शर्वा गताती का क्यामक तथा घटना प्रधान  
कृतिमा म भाषा व गैरा का दृष्टि म चयन वाला राम का महत्व अनेक ही  
प्रकार का एक प्रामनाय है।

वस्तुतः ऐसी ही राम म मानवता चरित्र-निर्माण स्वा सम्मान तथा  
जावन का बहुमुखा प्रगति का मन्तव्य दिया है।

## स्थूलिभद्र रास १

१३वीं शताब्दी में बनाया गया रास की हा भाति एत वचना व कथा प्रधान रास स्थूलिभद्र रास मिलता है। स्थूलिभद्र का जीवन जन-साधारण में नमिनाथ और जम्बू स्वामी की भांति शृंगार से सम्बद्ध रहा है। स्थूलिभद्र और काशा वेश्या के प्रति अनेक शृंगारिक तथा उपदेश प्रधान कथाओं की रचना की गई है।

प्रस्तुत रचना की दा प्रतिया उपलब्ध हैं। जिनमें पहली अभय जैन प्रणालय, बीकानेर में तथा दूसरी स० १४३७ में लिखी हुई है और जैसलमेर महार में सुरक्षित है। पहली प्रति भी १५वीं शताब्दी की हा है।

स्थूलिभद्र रास के नायक स्थूलिभद्र पर काव्य लिखन की परम्परा पर्याप्त प्राचीन है। स्थूलिभद्र का जीवन आचार्य हेमचन्द्र के ग्रन्थ के परिशिष्ट पर्व में मिल जाता है।<sup>१</sup> सस्कृत में भी इनके जीवन पर अनेक ग्रन्थ तथा सूर्य चन्द्र पर रचित गुणमाला महाकाव्य आदि रचे गये हैं। कालान्तर में तो गुजराती, राजस्थानी या पुरानी हिंदी में स्थूलिभद्र पर सैकड़ों का सतना में रचे रास काण और गीत मिलते हैं। स० ६८६ में गऊडार का जीवन चरित्र हरिपेण के बृहत् कथा काण के अन्त में 'शकटाल मुनिवधानकम्' नाम से प्रकाशित है। अतः इस रास की कथा वस्तु के लिए बृहत् कथाकोष व परिशिष्ट पर्व आदि ग्रन्थों में पर्याप्त सहायता ली जा सकती है।

रास के कर्ता ने अपना नाम स्पष्ट नहीं किया है पर अतः में एक शब्द 'जिणधाम' आता है जिससे अनुमान किया जा सकता है कि लेखक का नाम सम्भवतः जिनधम सूरि था। स्वर्गीय श्री मोहनलाल देसाई ने प्रस्तुत रासकर्ता का नाम धर्म दिया है।<sup>२</sup> साथ ही उन्होंने इसका रचना काल भी स० १२६६ के आस पास बताया है।

१-हिन्दी अनुसूचन वष ७, अङ्क ३, पृ० ८० पर श्री अमरचन्द्र नाहटा का लेख- स्थूलिभद्र रास'

२-बही, पृ० २६।



स्यूनिभद्र राम घटना प्रधान है जिगम कवि न अनेक कौतूहल का समावेश किया है। राम कथा प्रधान है। यद्यपि यह स्यूनिभद्र क जायन तथा उनकी मायना पर माया प्रकाश तथा टाडता परन्तु कवि न अपने कौशल द्वारा कुछ अज्ञात घटनाया या सज्जन कर स्यूनिभद्र का लाक्षणिक व स्वयं समय का माया अज्ञात ही मित्र कर लिया है।

कवि न राम का प्रारम्भ नामन तथा और वागीश्वर का स्मरण कर किया है तथा प्रारम्भ में ही गङ्गा और वरग्वि पण्डित का संघर्ष लिखा है। संघर्ष का कारण यह है कि वरग्वि की गायत्री राजाका का बड़ी प्रिय था और मात्रा गङ्गा (माया) का राजा द्वारा वरग्वि का लिया छान्द गीक नहा गया। उसने अपनी वाग्विधा द्वारा उसकी गायत्री का माया करवा लिया तब का एक बार दूसरा का २१ बार और तामरा का तान बाण। इस क्रम में गङ्गा का वहकिया न वरग्वि का निरा नवीन कही जान वाली गायत्री को माया करवा पुराना मिट्ट कर लिया। पण्डित वरग्वि न भी गङ्गा के विरुद्ध राजा का भटकाया कि यह मंत्री राजा का मरवा कर उग्र स्थान पर अपने वहक का राज बनाना चाहता है। राजा का सुनकर क्रुद्ध हो गया। गङ्गा न अपने तब का निवास स्थल की हवा करान में ही परिवार का दयालु समझा। मंत्री गङ्गा का क्रुद्ध न हो न मार कर परिवार क सामने (उसके वहक क सामने निम्न अपने पिता क कहन क अनुसार उनकी मरवा कर स्वयं का राज भक्त निद्रा किया था) मन्त्रिण का प्रान रखा। स्यूनिभद्र के पाग भी वह प्रान हुआ। उस तब का राजा का क मंत्री भागिण रखा करत थे। माया का राज्यविधा यथा का का का स्वयं उदने नया दानाचित्तु या ननुमानादि क कहकर अपने का उग्र टाडने तथा विरक्त होकर नया करवा। कवि न कदा म उग्र निपन्न करन क विरही ही का यथाका का मदा किया है। राजा अज्ञान पूर्व कथा तथा परवर्ती प्रयो

इक सथिय सथिय वाल्या ज त्रि सथिय जपइ  
वर रुचि दडउ राउमगु रासिहि वपइ—

वररुचि पण्डित ने गवटार की मृत्यु के लिए हृदय देकर अपने शिष्या  
की सहायता से अनेक पद्यों में किये उसी का वर्णन देखिये —

तावह पडितु बाहिरि पाइउ, द्रम घवइ नितु गगह जाइउ  
पसरह लायह द्राम खिखानइ, नरवइ वह अमह नवि पालइ  
अत्यतरि महतण नउ द्रम उसरिय,  
पडित उच्छउ घाउतलि दोरउ सारिय

तउ पडित कापानल चडियउ, घाठउ हीयउ सूनउ घीयऊ  
तउ केनु कोपिराया पोसइ नडु हण्डिउ सिरियउ राउ होसइ  
नयर डेवारे ससे नखइ मभालियउ  
महता हठउ राउ अछतउ नितु टलियउ

जाव महतउ अवसरि आवइ ताव पुठि न्यइ पुणुनरवइ  
मुहतइ जाण्ड मून विणसइ, बभण नयण नरवइ रुमिउ  
सिरियउ भणइ न घूनउ घाउ जोविउ लाधि लियइ अउ राउ  
महतइ धरइ कुडुवहु स्वामिउ असिउ हलाहलु रयसिह नामिउ  
सिरियउ कहइ नरिह जाइउ अमह घूनमडु जेठउ भाइउ  
समु तणि म अ अमह नवि छाजइ भामिणि विरहु क्रिमइ जइ भाजइ  
तउ निसुणेविणु नरवइ जाण्ड मुद्र कहइ लइ धुनिमद्र छाण्ड  
रायह मरिि धूलिमद्र पतुतउ, 'माणुप्रालाचिउ' भाग विरतउ (२ २६)

उक्त उद्धरण में कवि ने राजकीय पदधारा और कर्मचारियों की पारस्परिक ईर्ष्या तथा राजा की 'क्षयै स्पृष्टा क्षयै तुष्टा' वाली प्रकृति को स्पष्ट किया है। भोगलिप्त स्थूलिमद्र के जीवन में एक विपरीत अभ्यास का प्रारम्भ यही से हो जाता है। दीक्षा लेने पर उसके अग्र गुरु भाई भी चतुर्मास के स्थान कोई साप के त्रिण पर कोई सिंह का गुफा पर कोई कुत्ते के पान मागता है पर स्थूलिमद्र उमी बीणा वदया के यहाँ जात हैं। स्थूलिमद्र और बीणा के वर्णना में इस राम में कवि का मन विलकुल नहीं रमा है। न उसने बीणा के नखशिख य सौन्दर्य का ही वर्णन किया है। आगे कवि एक अग्र कथा में राम जाता है, जो स्थूलिमद्र के हा एक गुरु भाई से सम्बद्ध है। स्थूलिमद्र न मन्त्र का पूरा दान किया के पत्र अत का पानन कर पत्र सधमो हो गये। यही नहीं, उन्होंने बीणा वदया की आमलबूल बतलिया। जब चतुर्मास करके सब मुनि पून आय ता गुदजा ने स्थूलिमद्र को ही सबसे श्रेष्ठ बताया। इस पर एक मुनि

शुद्ध हा मये और न न भी दूसरा बुजुर्मान उमी काशा क यहाँ जातर किया । पर व कामामत्त गाये । कागा न उह रत्न कम्बन ज्ञान नपान भेजा । काम विमान्ति मुनि न यह मत्र किया, पर अत म काशा स ही उहें हार माननी पडी । कागा का मुनि का उरण मुनि की काम विमाहित धरया, रत्न कम्बन क निग अनर कष्ट पाने पर मुनि का उमम कामतृप्ति की माधना, कागा द्वारा उनको भर्त्सना, मयम श्रा का महत्व और स्थूनिभद्र की जितन्द्रिय स्थिति का स्पष्टाकरण करना प्राप्ति अनक विप्र कवि न बडा ही मामिवता स सजाये हैं जिनका भाषा प्रवाहमय भाव प्ररण सरन तथा विप्रा मक है । श्रावण-  
 12 व म कामामत्ति मन की अवन स्थिति और मुनि की विचलित अवस्था तथा कागा क सौन्दर्य क प्रति हृष्ट व्यामाह का वरण ल्लिए —

वस सन्नि वयसि मिग नयसि नव जावली  
 मुविधि परिविविह परि ङिटट मुसि लायली  
 श्रावट्ट मुसि कहठ भुसि दस तुम्ह दुल्लही,  
 परिजइ तुम्हि मुग्मइ अन्हपरि गनिव परिजइ तुम्हि मुग्मइ  
 मग्मु नपणउ गुरु वपणव परनु जइ भारय,  
 वम धरि पाउम भरि त शिवमु श्राविय  
 गावण मनिन मुसि मान संबानिय,  
 सयन दुम क ललिचित्तु उम्मुत्रिय  
 भादवउइ धणु गुरउ जनहरा गाजमे,  
 चरित पुह पारणमयण महभजर्ष  
 ईरा परिवम धरि मुसिहि मणु गजिय,  
 रमइ नर अनिकि परि पिक्कै कितजिय  
 भार श्रावियउ किरि बालइ मुसि छम्मिउ,  
 अय विणु वम पुणु निठुर वह छम्मिउ'

कागा न मुनि म पम मागे और कहा कि बिना अथ क यहाँ रहना सम्भव नग है । और काम विमाहित मुनि उमत्त हाणय । उ हान कागा की भर्त्सना महा उनका समा प्रकार का विक्षिप्त गारारिक अवस्था का वर्णन कवि न उह रत्न कम्बन ज्ञान क निग नपान तक भन्वा कर किया है । मुनि कम्बन राय ता कागा न उय पैरा म पाठकर फेंक दिया —

वमा पमणे रिणु मगणा वविणु जाह राय मग्मिह रयणु  
 तुहु अथ विट्टणउ हिइ गणु, मग्मु धरि कम्मु बरेसिजउ  
 'ताम मुनि मधु पणु मग्मइ न चलिउ कलिहिउ जल्लहिउ नइहि न पिळ्ळिइ

काम धारु मत्त तणु भमइ पुट्ठि लम्गइ, नेपाल देसि गउ रयण कवलह मग्गइ  
 वेग करि, पय भरि चलिउ मुणिए भाविउ, वेस लइ नमइ जइ कहवि लवाविउ  
 भाणिए मुणिए कवल रयणु खोलि माल्हिउ कहइ,  
 पाउ मे लाइ धणिए लक्खु द्रम्मह न्हइ  
 सानु लाधव मुणिए दिट्ठु कउडी गमइ, वस पुग्गवत जसु जम्मि चित्तु रमइ"

यहाँ तक ही नहीं, वेश्या कोशा श्रुत मे इसे गुरु बनकर सहायता करती है और स्थूलिमद्र का वैशिष्ट्य स्पष्ट करती है। मुनि की रत्न कबल लाने पर वेश्या ने इच्छा पूरी नहीं की, तो वह निश्वास लेने लगा। वेश्या उसे शील की महिमा बतलाती है। काम विमाहित मुनि के हृदय मे भरे मोहा प्रकार मे कोशा स्थूलिमद्र की विजितेद्रियता से प्रभावित होकर प्रकाश किरण प्रदान करती है और इस प्रकार मुनि को वह चरित्र रत्न को हृदय मे धारण करने की शिक्षा देती है। कवि ने इही मनोवैज्ञानिक चित्रा का बड़ी सफलता से स्पष्ट किया है। कवि का प्रत्येक मनोभाव इन वाक्य मे उसके वाच्य कोशल और काव्यगत सरलता का द्योतक है —

नियतरिणु जउ मुणिए दीणउ धाम्मे, चणा भवविणु मिरिय कुखाओ  
 इह गई खमु करीरिह भाजइ स्थूलिमद्र जा गति वहविन छाजइ  
 वह नेपालउ दस भणीजइ बडइ कठिन तहि पुणु जाइजइ  
 तइ मूरख नवि जाणिउ भेउ लक्ख रयण मुणिए कवल भोहु (४०-४१)

और वेश्या ने उस कबल से पैर पीछकर कीचड मे फँक दिया और कहा कि अपने चरित्र रत्न को तो समाला वह इममे भी गदी जगह मे जा रहा है। उसने रूपक द्वारा यह स्पष्ट किया कि नेपाल दश कितना दूर था वहाँ जाना कितना कठिन है यदि ह मुनि तुम। रत्न कबल लेने नेपाल चले गये तो क्या अपने चरित्र रत्न और समय रत्न की प्राप्ति उम अपूर्व आनंद निर्वाण की प्राप्ति हेतु नहीं कर सकते ? उक्त पक्तिया मे इसी प्रकार की ध्वनि है।

'दिट्ठ रयल ज कद्दम भरियउ, हियडउ मुन्नह सहु बीसरियउ  
 तउ मुणिवरु मेत्तहि नीसासा मग्गु तणी नवि पूरा ग्रामा  
 ज जिण धम्मह किज्जइ मूलु त तरणत्तणिए पालिउ मौमु  
 इमउ धयण मुहियडउ धरइ भयण माह चित्तह उत्तरइ  
 चित्तइ मुणिवरु हियइ तिरग, सजमतए मह रूपइ भग  
 धनु धनु स्थूलिमद्र सा सामिउ, पाउ पणामइ लइ यइ नामिउ (४०-४४)

और मुनि अ तर्क, श्रातम् ग्वाति और पश्चात्ताप से भर जाता है।

उमका जान दृष्टि कोणा के गुरु बचना म सुन जाता है और वह क्या काणा क कहन म चरित्र रत्न को हृदय में धारण करता है तथा गुरु के पास जाकर पुन दीप्ति होता है और वही मुनि स्थितिभद्र की कृपा से देव लोक प्राप्त करता है—

तमु उपरि मद् मच्छन् कायट, तिष्ठि कारणि मद् पत्रु पामीषट  
 तुद्दु गुद्दु गुर वामा मद्दु माया हउ पठिवाहिउ आणि, उठाया  
 मद् जागिउ तउ विषउ अक्म्मू, धाति बहिउ गड माणुम जम्मू  
 वना नागा वाउद घेइ अजिउ मुगिनर मन करि खेउ  
 धारित्त रयगु हिउदु धरहि गुरू ह पाति धानायण तेहि  
 बहूत वान भजय पात्रवि चन्द पूरव न्यिद धरेवि  
 सुनिमद् जिा धम्म बह्वि देवनावि पटुत जाघेवि—(४५-४७)

वस्तुतः श्री प्रकार कवि न स्थितिभद्र क संयमित जीवन की श्रित सुधमा पर प्रकाश डाला है। राम म कही भा उमक (गिल्य पर) गाये जान या छोटा करन क रूप पर प्रकाश न्या डाला गया है। निफ स्थितिभद्र क उत्कृष्ट चरित्र पर मुनि का क्या क द्वारा प्रकारांतर म प्रकाश डालना हा कवि का मतलब है। काणा का वाणा रूप क रूप म सामन आता है। ८७ छंटा का रूप छापी मा रचना म कवि न बहुत मार भरा है। नागा म अघघ ग क गला क प्रभाव क माय नाय अधिकाग रूप राध्याना क है।

कवि क वाक्य मरन क रूप चयन प्रभाव प्रवण है। कवि न काय काम म अतदु ड आमभ्यानि तथा पचाताउ क चित्रा पर सम्पक प्रकाश डाला है। एव ग छंटा का द्यो र पूरा राम बोनाद उद म विद्या गया है।

श्री नक क्या रति और भाविदता का प्रकाश है प्रस्तुत राम बहा महत्प्रभु है। १५वा गलाग म मिनन वान स्थितिभद्र राम या स्थितिभद्र पाण्डु १ का नाति कवि न कही ना स्थितिभद्र क काणा का शृ गारिक बरुन न्या किण है। छन काउ म शृ गार धारिण रूप म हा आया है। अत म कृति निवेगत है। कवि न परग्वि वो क्या, मुनि का रप्या नयान जाकर काम विनाहित स्थिति में रन कवन नाना आति धन्याय अवान्तर रखा है त्रिम क पूरा सदन रपा है।

१-स्थितिभद्र पर विस्तार क त्रिग रणि अन्ता म १८५८ में लेखक का आति वान का एव शृ गारिक खंड काव्य था स्थितिभद्र पाण्डु गायक लेख।

छोटी-छोटी सूक्तियाँ यथा-भामिणि विरहु क्रिमइ जइ भाजइ, चलिउ  
 घणकण रयण चम्रेविणु असिउ हनाहलु रयसिरु नामिउ, सयल दुम क द  
 क्षणि चित उम्भलिय सावण सनिल मणि सोल स बोसिय, चण भरवेविणु  
 मिरिय कुरवाम्रं, अकरनइउ सजय भाखदुप्पानउ, इह खभु करोरिहि भाजइ,  
 तथा चारित्त रयणु हियडइ धरेहि, गुरूहुपासि आलायण लेहिआदि अनक्  
 सूक्तिया हैं । रास की मुख्य सवेदना उपशात्मकता तथा धर्म प्रचार है । शैली  
 वरणात्मक है । काव्यात्मकता म सरम स्वल थाडे हैं, परन्तु घटना वचिग्य और  
 फयात्मकता ने कृति की सफरता में सहायता की है ।



## रेवतगिरि रास १

रेवतगिरि रास १३वाँ अंश का प्रसिद्ध ऐतिहासिक रास है। रास क रघुपतिश्री आ विजय गज गूरि २ । रास का विषय धामिनी है तथा कवि न रेवतगिरि जल ताल का महाभूगर्भ विखन किया है। यह रास लार्ड क प्रति धरार श्रद्धा रजत काज शरदा का अज्ञान पूर्ण रूप तथा वृत्तवृत्त धमिनी है जिसे कवि न काव्यात्मक गुणमा म मंजारा है। प्राधान काव ग हा कम ऐतिहासिक स्थल का मन्त्र रण है। रेवत का रेवतगिरि नरत्ना अज्ञान का उत्तरार्द्ध धर्मा मं० १-८८ है। प्रस्तुत काव्य का नवानतम मन्त्रान्त व प्रदान्त डॉ० हरिवल्लभ नाथगोत्र किया है।

रेवतगिरि रास नाम का एक एक छोटा सा बना अज्ञा है। इसका प्रति पाठ्य क संघवा पाठा क मन्त्रार म है। शिवाजी भावा का था नादुराम प्रभा प्राधान अज्ञा बन्तान है। अज्ञा रेवत अनुवाद-मन्त्रा क एक विजय मन गूरि न मं० १२८८ क राजा का था अज्ञा अज्ञान का छोटा वग क जल मन्त्रा क जगुंदावर का वगत है। रेवतगिरि का अज्ञानमन्त्र अज्ञा गुजरानी क अज्ञाना न भा धरत प्रथ म किया है। ३

कथा वस्तु अज्ञान नाथ तथा अज्ञा अज्ञान का अज्ञान करन ममय रास का ऐतिहासिक छोटा सागुक्तिव अज्ञा म भा मन्त्र पाठ अज्ञा है। रेवतगिरि रास प्रसिद्ध ताल ग्यान है। अज्ञा तक कि अज्ञा प्राधानता क अज्ञान मन्त्राराण म भा मितन है। अज्ञा अज्ञान अज्ञान नाथ का प्रतिमा व अज्ञा वस्तु लौक्य का वर्णन किया गया है वह अज्ञा क २२ वें तीर्थवर आ मन्त्राथ है।

१-प्राधान अज्ञा काव ग मन्त्र, आ मा० डॉ० अज्ञा पृ० १-३।

२-डि० अ० मा० का अज्ञान आ नादुराम प्रभा पृ० २६ वि० मं० १८३३ का मन्त्रारण।

३-अज्ञा-अज्ञान कविता आ क० का० नाथी य जैन अज्ञा कविता, श्री माहनाराज देवा।

नेमिनाथ का वृत्त ख्यान है, जिस पर अपभ्रंश में मिलन वाली वृत्ति हरिभद्रवृत्त 'नेमिनाथ चारिउ' है ।<sup>१</sup>

प्रस्तुत रास में यात्रा वर्णन, सववर्णन तथा मूर्ति स्थापना वर्णन है । राम की कथा वस्तु धार्मिक है । राम गेय है तथा इमम तीर्थ एव यात्रा के महात्म्य का सुन्दर दायात्मक वर्णन है । इस कान में जन रासा की विषय वस्तु में पयाप्त परिवर्तन हो गया था । मन्दिर, शिल्पकला, तथा उनकी प्रतिष्ठा कराने वाले धनपति श्रावक का यथा गान वर्णन करना भी 'रास' में प्रारम्भ हुआ गया था । रेवतगिरि रास की ही भाँति १३वीं शताब्दी में ही कवि राम द्वारा स० १२८६ में लिखा हुआ एक श्रावू राम<sup>२</sup> मिलता है जिसमें श्रावू के प्रसिद्ध तीर्थ व सवयात्रा आदि के वर्णन हैं । रेवतगिरि रास में भी सारठ दग के प्राचीन मन्दिरों तथा प्रसिद्ध पौरवाड्डुल या प्राग्वाट कुन का वर्णन है ।<sup>३</sup> वस्तुपाल और तेजपाल इसी कुल के दो प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरुष हैं जिन पर १५वां शताब्दी तक रचनाएँ उपलब्ध होती हैं । अतः राम की ऐतिहासिकता के अनेक अंतरंग तथा बहिरंग प्रमाण मिलते हैं । राव खगार जयमिह दन एव गुजरान के प्रसिद्ध राजा कुमारपाल का भी प्रस्तुत रास में उल्लेख है जो इतिहास प्रसिद्ध यत्तिव हैं ।<sup>४</sup> यथा और यक्षिणिया के अनन्य चित्र जनिया के प्राचीन तायकरा की मूर्तियाँ के साथ आज भी दन मिलते हैं । यक्ष वर्णन रेवतगिरि रास में भी मिलता है ।<sup>५</sup> इसके अतिरिक्त अनेक बहिरंग प्रमाण राम की ऐतिहासिकता सिद्ध करने से कुछ शिष्यिणीयों इन प्रकार हैं —

(१) तेजपाल गिरिनार तने तेजलपुर निय नामि<sup>६</sup>

तेजपाल न बहा अपनी मा के नाम पर आमाराम बिहार त्रिगुदवालय उग्रसनगड में बनवाया ।

(२) सुवर्ण रखा नदी के किनार पचम हरिदामात्र का वपुणव मन्दिर भी उस समय था यह उल्लेख कवि ने प्रस्तुत रास में किया है । इसके अतिरिक्त कुमारपाल श्रीमान्ना कुन सभक न अन्व का सौराष्ट का दण्ड नायक बनाकर स० १२२० में गिरिनार के सागान बनवाये थे —

१-हिल्ली के विक्रम में अपभ्रंश का याव, श्री नामवरमिह पृ० २१८ ।

२-देखिए -राजस्थानी वर्ष ३ अङ्क १ श्री आरचद नाह्या का लेख 'श्रावूराम'

३-देखिए -प्राग्वाट इतिहास (भूमिका भाग) लेखक अरुणचद नाह्या ।

४-रेवतगिरि रास, डा० हरिवल्लभ भावाणी, पृ० २, पन् ६ ।

५-वही पृ० ८ पद ८ ।

६-आपणा कविया श्री क० दा० नास्त्री पृ० ११८ ।



‘कुमारपात भूयान् जिगु सामगु मटगु

अ वभा मिर मिरिमान कुन मभना, पात मुविमान तिगु नठिय  
अ तर धवन पुगु पर व भराविय १

जयसिन् देव न मोरान्द पर पगार का बधवर अधिकार करन न बा  
माजगु भन्ना का वृत् का ल्पनापक निरुक्त कर म० ११८५ में गिरनार उपर  
नमिताय का मन्त्र बनाया —

‘ मिरि जयसिन् देव पवर पुत्रामन् इगुवि तिगु रात् पगारत्  
अहिगुवु नमिर्जिगु तिगु भवगु कराविय ।

इतक अतिरिक्त मानव क भावद गान का स्वर्णिम नगाध्वाना बनाने  
का उल्लेख, कुमार क अनित एवं रत्न नागक भावना का वृत् मत्र लकर  
छाना, तथा बन्धुपात नरगात्र का अगमव मन्त्र अति बनाना अति  
धन्नाय राम क एतिहासिक महत् का गान करना है । ३

प्रस्तुत रचना ६ कवका म विनक्त है । कवक का काव-रूप या  
स्वतंत्र उन्मत्ता अक्षर का विनाशन का सूचक गान है । अत्र अत्र क मधि  
काव्या म अत्र कवक मितन है । साहित्य लक्षणकार न अत्र ग काव्या म  
कवक सर्गों का कहा है । परन्तु पत्रम चरित् त्रिभंग पुराण अति प्रयोगों  
में ता सर्ग मधि कहता है । प्रायः दन काव्या म अत्र मधिया गाना या और  
एक-एक मधि म अत्र कवक अतः य । दूसरे गाना म क कवक मितकर  
एक मधि का बनाने य । अत्र मधि का कवका का एक समूह बना जा सकता  
है । ‘हमचंद्र न कवका का ता विवचन किना है ४ अत्र अनुमार दा कवका  
क मध्य म वर्णित धत्ता उन्मत्ता का समाप्ति का सूचक है । प्रस्तुत राम क  
कवका का वर्णन क एक भाग का अत्र और दूसरे नद सर्गों क आरम्भ का  
सकत समझा जा सकता है । अर्थात् प्रथम कवक क अन्त म बना समान्त  
हानी है और प्रथम कवक क बाँट बना प्रारम्भ ।

१-शा० गु० का० मन्त्र, आ गान पृ० २ ।

२-आग्ना कविता या क० का० मन्त्रो पृ० ११८ ।

३-अत्र ग-विषय अस्मिन् मया कवकाविषया ।

४-कवक समूहान्तक मिति ।

५-श्वेतगिरिराम म० २० पु० भाग्या मन्त्राति, पृ० १-८ ।

‘सप्तमी कवकात् व प्रुक् मन्त्रि प्रुक् वना वा’-‘दमच’ ।

रेवतगिरि रास चार कडवका मे विभक्त है। इन कडवको मे कोई विशय कथा सूत्र नही है, चारा कडवको मे गिरनार, नेमिनाय, सघपति, अ बिका, यक्ष तथा मन्दिरा का वर्णन है। वस्तुपात तेजपात के सघ द्वारा नेमिनाय की प्रतिष्ठा का महामहोत्सव हाता है। एक विशेष बात यह है कि इस काव्य मे प्रत्येक कडवक म स्वतंत्र वर्णन है जिसका पारस्परिक कोई सम्बन्ध नही। इन कडवका मे जयसिंह, कुमारपाल, दण्डनायक, मालव के मावड शाह के वर्णन हैं तथा कश्मीर के अजित और रत्न नामक भाइया की सघ यात्रा-वर्णन, दानवीरता, सघ तीर्थों के शिल्प, मूर्ति का पराक्रम तथा चमत्कार पूर्ण घटनाओं का वर्णन है। श्रावक भक्ता को धर्मशील बनने का आग्रह और धर्म प्रचार ही राम का उद्देश्य है।

प्रस्तुत रास की एक प्रति पाटण भण्डार मे है जो ताड पत्र पर लिखी हुई है। डॉ० हरिवल्लभ भायाणी ने अपना पाठ सम्पादन श्री सी० डी० दलाल के प्राचीन गुजराती काव्यसंग्रह से ही किया है।<sup>१</sup>

रेवतगिरि रास गीति प्रधान रास है। मेघ तत्व नृत्य मे सहायक होता है विशेषतया महोत्सव मे श्रद्धालु भक्ता के ये राम एक अभूतपूर्व उल्लास की सृष्टि करत थे। धर्म ने हमारे समाज के मनुष्या मे एक जीवन्त विश्वास की सृष्टि की है। इह लोक और परलोक का ज्ञान, अहिंसा और अध्यात्म से प्रेम आस्तिका की श्रद्धा के ही परिणाम हैं। अतः समाज की इसी विशिष्ट मनोवृत्ति ने ही समय समय पर अनेक साहित्यिक विधाओं और पोषक तत्वा का निर्माण किया है।

रेवतगिरि राम के वर्णनो मे प्रगाढ तन्मयता है। कवि की पलावली कात मुमनोहरा और प्रसाद गुण सम्पन्न है। वृत्ति मे सर्वत्र भक्ति रस व्याप्त हैं। श्रद्धा स्निग्ध प्राणिया मे शात रस का प्रवाह पूना पडता है। भाषा समास बहुला है।

प्रारम्भ म ही कवि मगलाचरण करके आगे बढ़ता है। मगलाचरण की परम्परा भारतीय प्रबन्ध काव्या की प्राचीन परम्परा है। कवि ने गिरनार के सौन्दर्य के कई मधुर चित्र खींचे हैं। अनुभूति की सरसता उहे और भी मार्मिक बना देती है। कवि गिरनार का ससार यात्रा के साथ रूपक बाधता है —

जिम जिम चडइ तडि कडणि गिरनार तिमि तिम ऊडइ जणभवण ससार  
जिम जिम सेड जलु अ गि पानाटए, तिम तिम कलिमलु सयलु ओहटए<sup>२</sup>

१-रेवतगिरि रास, डॉ० ह० व० भायाणी सम्पादित पृ० १-४।

२-वही ग्रन्थ, द्वितीय कडवक।

वही की नीतन त्रायु तीनों ताप हरण करन वाली है —

जिम जिम वायइ वाउ तहि निम्बर सीयनु  
तिम तिम भव गंगा तववणि तुटटइ निच्चलु <sup>१</sup>

पतिषा क मधुर उर्ध्वन वाकरी की मिठाम, मयूर का कलरव भ्रमरा का गुजार और निर्भरा का नाच गारे प्रात का भजन कर नेता है । वर्गन की ध्वयात्मकता और वाच्यात्मकता दृष्टव्य है —

‘कोया कतयना भार कतारथा मम्मण महयर (२) महूर गुजारवो

जनद जान ववान नीभरणि रमाउनु नेरु निजिन मिरु धनि कज्जन सामलु  
बहन बह धानु म भेगो जतन भव हनर सायन मइ मडणी  
उत्थ पति तिवोम ही सुत्ता निरवर गय गनीर गिरि कतरा  
जाउ पुदु विम्मतो ज कुमुभिहि गकुन दासर,  
दम निमि तिविमा किरि तारा महडु <sup>२</sup>

(मिषा क जन मयूर म प्रवाहित रमणीय निर्भर शक्तिजन गिरि श्यामल गिखर की गाना अनन धानुआ एव रमा न युक्त स्वर्णमया मन्दिनी धर्यान् श्रौषधिया ग परिपूर्ण वानु परा और विरमित पुत्र पुसुमा का दन माना शिवाआ का न श्र मण्डन <sup>३</sup>) धाति उदमान काम वाति क तथा कवि की उत्प्रेषाए भी शक्ति नन्तन हैं ।

समान बहुरा अनुप्रासामन वा और गरम पनाचना म कवि न नीरस पत्यरों म भी रम न मान उमडाए <sup>४</sup> । शिन्नाकित पतिया क प्रकृति वर्गन ने जयदेव के गाता क गान-चन्दन क गामन काउ पनाचना का स्मरण हा धाता <sup>५</sup> —

मिदिय नवन वनि तन कुसुम भन त्रियया  
त्रिय मुर महि नवग चवग तन तातिया  
गलिय धन ममन गयर तन कोमना  
विन्द मिन्दरट सानति तनि ममना <sup>३</sup>

प्रकृति वर्गन म कवि ने नाम परिगणानामन रूप का प्रस्तुत किया है । अनेक धनसतिया का परिगणन शम्की विमान गाध दधि एव दूधना की परिचायक है और गान अनुप्रासात्मक और नासामन है । एक ही शब्द म प्रारम्भ होने जाने अनेक वृत्त क नामा का तथा कवि का बचता का दिये —

१-वही पृ० ३ कदवा ७ पं ५ ।

२-देवतगिरि राम टा० इन्द्रियभ भायाणी पृ० ३ ।

३-वही, पं ५ पृ० ३ ।

1 "अ गुण अ जण भाबिलीय, अ बाडय अ कुल्लु,  
 अ वक अ बरु आमलीय, अगरु असोय अहल्लु  
 करवर करपट करणतर, करवदी करवीर,  
 कुडा कडाह कयब बड, करब बदलि कपीर  
 बेगुल अणुल वउन बड, बेउल अरण विडग,  
 वासती वीरिणि विरह, वासियाली वण वग  
 भीसम सिबलि सिर (स) सभि, सिधुवारि सिरखड  
 सरन सार साहार सय, सागु सिधु मिण दंड  
 पल्लव पुल्ल फुल्ल सिय, रेहइ ताहि वणराइ,  
 तहि उज्जिल तलि घम्मि यह, उल्लट्टु अ गि न भाय 3

अनुप्रास, यमक, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अनक अलकारों का स्वाभाविक निरूपण हुआ है। कृति में विशेष कर अनुप्रास, रूपक व उत्प्रेक्षाओं की तो घटा ही उमड़ी पड़ती है —

अनुप्रास —

- (१) निम्मल सामल सिहर भरे
- (२) तस सिरि सामिउ सामलउ सोहग सु दर भार
- (३) अ गुण अ जण अ वीलीय अ बाडय अ कुल्लु

उपमा रूपक व उत्प्रेक्षा —

- (१) जिमि जिमि चडइ तडि कडिणि गिरनारह  
तिमि उडइ जण भवण ससारह
- (२) जाह कु द विहसता ज कुमुमिहि मकुल्लु  
दीसइ दम दिसि दिवसा किरि तारा मडलु
- (३) जत्थ सिरि नेमि जिणु अच्छरा अच्छरा  
असुर सुर अरग कित्तय विज्जाहरा  
मउड मणि किरण पिज्जिय गिरि सेहरा 2

उल्लेख वणन क्रम तथा स्वाभावोक्ति —

- (१) अइरावण गयराय पाय मुदा मम टाउक  
दिण्ठ गयदन कु ड विमल निर्भेर सम लकिउ
- (२) गमण गग ज सयल तित्तय अच्यारु भणिज्जइ

१-वही, पृ० २, पद १८-१७।

२-देवतगिरि राम श्री भायाणी, द्वितीय कडवक।

पवननिवि तहि अ म दुक्व जन म जनि जिज्जिइ

(३) गट्गण्ण ए माहि (?) जिम माणु पत्रय माहि जिम मरु गिरि  
तिहू भुयण तम पत्ताण तिप्य मौहि रवनगिरि

(८) नयण मत्तुणउ नमि जिणु १

नयण मत्तुणउ प्रयाग विन्ता उरहण है ।

शोर अन्न म कवि न प्रकृति क उपायता द्वारा नमिनाय का अभिप्रेत कराया है । नमिनाय क रूप वरुण कर्ण म कवि न कान्य कौण का परिवय मिन्ता है । अनिरज्जा म एकत्रम रहित ३ । जैसा स्वभाविक भाव निष्पन्न हुआ उसकी ज्या का त्या मजा लिया है ।

नामर (ग) ए चमर हउति मयाहवर गिरि धरीय

नित्यह ए मउ रवति मिहामणु नय्य नमि जिणु २

गुजराती विद्वाना न प्रति पावन भार में उपलब्ध हान म इम प्राचीन गुजराती क विकास का कटा बताया है । परन्तु यह भा स्पष्ट है कि प्राचीन गुजराती का उदय न प्राचीन राजस्थानी का उदय है । अत इम बात का बाद स्वतंत्र मन्त्र नया प्रतान गता । वस्तुन कृति कवन प्राचीन राजस्थानी की दृष्टि म मन्त्रवृत्त है ।

छन्द क क्षेत्र म स्वतगिरि राम का मौखिक योग है । चार बहवका में प्रथम २० १० ११ शोर २० पद है । प्रथम बहवक क बीमा छन्द दाह छन्द म वर्गित है । गण अक्षर १ शोर शिवा का गणना छन्द है । कवि न उम बढी हा ममार न निमाया है । ३

द्वितीय बहवक में एक प्रकार का मिश्र छन्द है जिनम पहली दो पक्तियों का छन्द नयणा क आधार पर ठीक नया बठजा और ग्य चार पक्तिया म "मृदगा" है जा २० मात्राओं का हाता है । ४

तृतीय बहवक का छन्द राता ५ है । यह छन्द ११ बहिया का है ।

१-वही, पृ० ६ पन् १८-२० ।

२-वही पृ० ६ पन् २० ।

३- परमपर तिथमरु वर पवन प्रणुमवि

मणिमु राम स्वतगिरि अविज जिजि मुमरवि-पन् १, कडवक प्रथम ।

४-स्वतगिरि राम-डा० नायाणा-पन् १ कडवक २ ।

५-अमुद विजय गिरिव पुत्तुजायव कुत मङ्गु

जराविध नमनणु नदनाणु विन्दाणु ।

डा० भायाणी ने उसे २२ पक्तियाँ में विभक्त किया है। रोला छन्द भी अपभ्रंश परम्परा का प्रमुख छन्द है। चतुर्थ कडवक की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह पूरा कडवक ही सोरठा छन्द में लिखा गया है। इस छन्द में वर्णित "ए" वर्ण रचना की गीतात्मक बनाता है और इसे हटा लेने पर सोरठा की मात्राएँ बराबर ठीक बैठती हैं। कवि का वर्णन चातुर्य इसी छन्द में है।<sup>१</sup>

प्रस्तुत राम की रचना का उद्देश्य सामाजिक एवं धार्मिक प्रवृत्तियों के प्रकाश में जीवन में निर्वेद का महत्व तीर्थों और चरित नायकों के आदर्शों की सहायता से स्पष्ट करना है। जीवन निर्माण में यह रास एवं आध्यात्मिक सन्तान देता है। इस कृति से तत्कालीन जैन राजाओं की साहित्यिक प्रवृत्ति और धार्मिक प्रवृत्ति पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

प्रस्तुत रास की भाषा में सरलता, प्राज्वलता और जयदेव की भाषा की भाँति प्रसाद और मधुरता है। शब्दों की विकासात्मक प्रवृत्ति तथा भाषा में उद्भव व तत्सम शब्दों की मूलक स्पष्ट है। प्रयुक्त राजस्थानी और गुजराती के शब्दों में भी नवीनता का प्रयोग है। सासु परब, तूसइ, सामिण, उजिल, रुवर पाज, दोसइ, गिरतार, भाय, घरिउ, पानाए, अठाई, सीह दीठु अणुण आदि। कुछ शब्दों का विशेष विश्लेषण देखिए —

- (१) सुमय या सुपम—सुसम से सूम् हो गया।
- (२) सुखमम—सुखमयु—सुहयउ—सूहमु—सूम्।
- (३) रेवतगिरि प्रयाग पंथी विभक्ति का लगता है। "ए" का रूप संस्कृति 'गिरे' से मेल खाता है। गिरि का गिरे बना दिया है। ऐसा भी संभव है कि गिरे सप्तमी विभक्ति का हो।
- (४) अविउ, गलियु, ममभीर, मलहलइ, गलइ, रासु, कपिउ, जइजइवार, भावए, घरिउ, बलतउ, ठामि ठामि आदि स्पष्ट अर्थोवारे शब्द हैं जिनमें अधिकांश रूप सप्तमी के हैं।
- (५) कडवक शब्द की उत्पत्ति देखिए —
  - (क) कटप्र > कडप्प > कडवक या
  - (ख) कटप्र > कडप्प > कडाप > कलाप या
  - (ग) कटप्र > कडप्प > कटप > कडव > कटव > कडवक अतः कटप्र शब्द ही इसका उद्भव लगता है। हेमचन्द्र ने लिखा है "कटप्पा कटप्र

“मवाप्रप्यस्ति मच्च कवीना नाति प्रगिद्ध इति निबद्धम् ।” वे  
कटप्र गल् को मसृत का बताते हैं । <sup>१</sup>

- (६) रती गल् का व्युत्पत्ति सम्भवतः—रचि गल् म हृत् हात् । रचि+न  
प्रत्यय—रचि ल=रुद्रि । रुद्रि>रुद्र>रती ।
- (७) तु गल् सर्वनाम तु के अर्थ म प्रयुक्त हुआ है ।
- (८) तित्य माहि, पवय माहि प्रयाग मत्तमी क है । माहि गद मध्ये  
मज्ज-मामि-माधि-माहि सम्भव हा सकता है । धरि, जामि आदि  
रूप तृताया के हैं ।
- (९) प्रथम गल् प्रथ घातु म गौर अम प्रत्यय लाकर बना है । प्रथ क हृत्  
प्रत्यय लगन म पत्तामिल तथा प्राकृत पत्त-गुत्त-पदुत्त-गुत्तुत्त आदि रूप  
बनते हैं । हमचन्द्र न य का ह म परिवर्तित हा जान का ही विधान  
किया है । <sup>२</sup>
- (१०) मन्टाविय भराविय आदि रूप नृत कृत गत हैं । टामु का मूत्र रूप  
स्या घातु म है । <sup>३</sup>

निर्दिष्ट रवतिरि राम का काव्य का हृत् म अक्षर मत्त है ।  
वाम्बव म मसृत माहिय का हृत् म भा ह्म र्म काव्य म उच्च कविता र्म  
मकत है । र्मम रुद्र गल् चमरुति और रुद्र अथ चमरुति वाचा कविता है ।  
मह विद्वान् लखक आ गाम्भी का विचार <sup>४</sup> । ६ र्म प्रकार धार्मिक र्मन,  
धार्मिक विषय तथा आध्यात्मिक उल्ग पूर्ण रचना हात ह्म भा र्मम माहिय  
कता और निम्बरा वाज्या-मकता का मय है । अर्थ र्मम प्ररग्ता क म्य म है ।

१-गल् नाम मात्रा गल् १० श्री ह्मचन्द्र ।

२-रवतिरि राम पृ० १-६ ।

३-वर्ण ।

४-आरगु कविता आ कविराम वाकराम गम्भा, पृ० १०१ ।

## नेमिनाथ रास १

१३वीं शताब्दी का एक महत्वपूर्ण रास नेमिनाथ रास है। इसके रचयिता श्री सुमतिगणि हैं। यह रास १३वीं शताब्दी की उत्तरार्द्ध का है। इसका रचना काल स० १२७० है। विजयसेन सूरि के रेवतगिरि रास के पहले ही इस रास की रचना हुई होगी। क्योंकि रासकर्ता सुमतिगणि की अन्य रचनाओं की तुलना में यही कृति पहले रची हुई है। ऐसा प्रतीत होता है। कवि सुमतिगणि का निवासस्थान राजस्थान ही था। वे एक प्रतिभाशाली कवि और यशस्वी टीकाकार थे।

प्रस्तुत रास जैसलमेर की स० १६३७ की स्वाध्याय पुस्तक में उपलब्ध हुआ। एक और प्रति जमलमेर के दुर्ग स्थित बड़े भण्डार में है। इन दोनों के आधार पर ही प्रति का पाठ सम्पादन हुआ है। सुमतिगणि जैसे कवि की और भी रचनाएँ होंगी जो प्रचार की कमी से लुप्त हो गईं प्रतीत होती हैं।

नेमिनाथ पर रचे काव्या की परम्परा अपभ्रंश से ही मिलती है। अपभ्रंशोत्तर रचनाओं में तो नेमिनाथ जैसे प्रसिद्ध व्यक्तित्व पर तो सैकड़ों की संख्या में अन्य रचे गये हैं। कवि ने नेमिनाथ रास में नेमिनाथ के चरित पर प्रकाश डाला है रचना छोटी है कुल मिलाकर ५८ छन्द हैं पर कवि की काव्य प्रतिभा की परीक्षा इसी में हो जाती है।

नेमिनाथ के द्वात्तवृत्त पर आगे विस्तार में प्रकाश डाला जायगा यह कृति का एक मूल्यांकन ही प्रस्तुत किया जा रहा है। नेमिकुमार जैनियों के २३वें तीर्थंकर थे। उनका राजकुमार होना तथा शक्तिशाली वीर, पराक्रमी होकर भी ससार से वीतरागी हो जाना, तथा विवाह के अवसर पर अभिन्न यौवना राजमती को छोड़कर चला देना बड़ी आश्चर्यजनक घटना है। राजमती भी उन्हीं के चरणों में जाकर दीक्षाग्रहण कर लेती है और अंत में दोनों महानिर्वाण की प्राप्ति करते हैं। वरातियों के लिए जीवित पशुओं का वध किया जाकर भोग



बनाना आदि बातों में उनमें वैराग्य उत्पन्न कर दिया। नमिनाथ श्रीकृष्ण बदराम के भाई थे तथा पात्र कुन म मंत्र से सब शक्तिमान थे।

राम के अध्ययन में जान होता है कि रचना जन भाषा में निगी हुई है जो वर्णनात्मक और भेष तत्त्व प्रधान है जो सम्भवतः गाने और खनन के लिए ही रचा गया है।

प्रारम्भ में मन्नाचरण कर कवि न नमिकुमार (अरिष्टनेमि) के नाम का व उनके पिता ममुद्रविजय व सीरीपुर की महारानी निवासी का वर्णन किया है।

वायव्याय में ही नेमिकुमार क्रमाधारण पराक्रमो थे। स्वतन्त्र-स्वतः ही एक दिन उनका कृष्ण की आयुध गाना में जाकर उनके धनुष की टकार की तथा लीला मात्र में ही कृष्ण का गन्ध बजा दिया। कृष्ण अत्यन्त भयभीत हुए। जितकर नेमिनाथ का वाक्य रूप और आयुधगाना का पराक्रम वर्णन दृश्य है —

सो माहा निपाणु त्रिणेमरु खवरु जिय भयण सुणीमरु  
मुर गिरि करि चपड तम्ब बद्ध नेमि मुहुमुहि तम्ब ॥२१॥  
तहि वमति जाय व कुन काणिहि इमहि रमहि काणि चडि छाडिनि  
मगपुरी इदुव मव काव गयड न जागड कित्तित कातू  
नमि कुमरु अन त्रियहि रमतउ गन्हरि छाह मान ममतउ  
मधु त्रेवि लानइ बाण मखनिह तिहृयण सामइ ॥२४॥

तमणि पमगई कहा किण वायव मव

भगिठ जणेण नरिण त्रिण वदुन अनमु

ता मधमाउ मगह हरि रामउ भाउ ननि धामु ए गव

लेमइ नेमिकुमरु तह रज्जू हा हा हियण धमकरु अज्जु १

विविध रूपा में कवि न नमिनाथ का राज्य के प्रति निर्दोषी का वर्णन किया है। विषय मुखा के प्रति व मन्ना उन्मोहन रूप।

राम भगुइ मन करइ वियाउ राउ न लमइ तु कुवि भाउ  
रु सुमारु विरत्तु जिणेमरु मुनव मुक्कव करिउ परममरु  
राउ मुक्कव करि मुट्टु उक्कळर धार नरइ मा निवण निचउर  
पुणुवि मागइ हरि रामह अणु धधव गय ए पुणुवि ममगइ  
अनुव परिक्कमु नमिकुमारु लेमिइ राउ न त्रिण महारु

राम जणदगु पडिवाहेद, पुग्गह वारण रज्जु कु सेइ  
मुदुडु बुद्विवतु कृवि हाइ मामिउ मुनहि विम्ब विमु भवम्इ (२७-३४)

विविध दृष्टान्तों से पवि ने भाषा को सबन व भावपूर्ण बना दिया है। भागे रचनावार न नमिनाथ के विवाह पर प्रकाश डाला है। उग्रमन की सडकी राजकुन का रोती छोड नमिनाथ बीतरागी बन गये। विरहिणा राजकुन चिरविरहिणी बन गई। चाडे म वधे पगुमा का वरुण क्रन्त नमिनाथ से नही सहा गया जा घरातिया क भाग्य के लिए वध किये जाने वाले थे और इस प्रकार द्वार तोरण पर भाये नमिनाथ न मुन्रो राजकुन व सारे स्वप्ना को प्रभावहान कर दिया। रूपवती राजकुन के सौन्दर्य वर्णन म कवि का कौशल दगनीय है। अन्तरण की छग न स्थल का सौन्दर्य और बढा दिया है —

‘हू जाणउ भड भच्छइ वाली राइमई बहु गुणिहि विसानी  
उग्गमण राय गहि जाइय, रुव सुग्गण खणि विक्काहय  
जसु पगु केम वलावु लुनतउ, नातु विरण जालुन्व फुरतउ  
दीसइ तीहर नयण सहती न निउप्पल लील हसति  
वयणु वमलु न छण ससि मडणु, दिक्कवि भुल्लइ धूभा खडणु  
मणधरु धणहरु मणु मोहेइ वचन वलसह लीह न दई  
सरन वाह्लय वत विगयय, न चपय लय गयवणि लज्जउ  
जसु सरुडु पतिण उतासिय नरइ गइयस वत्थ वितासिय  
इय विण विणु करिह सा वान घराविय  
नमिक्कुमारह दमि (अुपतियय) जायव मेलाविय (४१-४५)

सौन्दर्य वर्णन पर्याप्त सुधड है तथा सौंदर्य क उपमाना मे भी मौलि बना है। रूपवती राजमती की जावन भर की साधना व्यर्थ हो गई, राजमती का सारा शृ गार क्रन्त म तिरोहित हो गया। उसकी वाति धदन में बदल गई पर उसने धैर्य नही छाटा। ऐमे दिग्ग पुरण मुक्क मूर्ख के बल्लम कैसे हो सकते हैं ? वरुण रम मे डूबी हुई राजमती की धाणी बडी दयनीय स्थिति की धातक है। अन्त मे राजमती स्वय नमिनाथ के पाम गिरनार जाकर दीक्षित हो, वैवल्य पद को प्राप्त करती है —

‘त निमुणेविणु राय मई, चित्तइ धिगुधिगु एह ससाह  
निच्छय जाणउ हव मह न परणइ नेमिक्कुमारु  
जा विहयण रुपिण करि छडियउ, ज वन्ततु कुरुविवइ खडिउ  
सुर रमणी हवि जा विर दुल्लहु, सा विम्ब हुई मह मुदिय वल्लहु  
पुणरवि चित्तइ’ राइमई जहहउ नेमि कुमारिण मुक्कि



## गय सुकुमाल रास <sup>१</sup>

जसलमर के बड़े भण्डार में स० १४०० में लिखि एग प्रति गय सुकुमाल रास की उपलब्ध हानी है। इस प्रति की प्रतिलिपि अमय जैन ग्रन्थालय में विद्यमान है। इनके रचयिता मुनिनाचन्द्र सूरि के विषय श्री दल्लेण हैं। दल्लेण का समय निर्धारित नहीं है, पर क्याकि जगचन्द्र सूरि का समय स १३०० है अतः बहुत सम्भव है कि इनका काल भी सधिकांश या १३१५ से स १३२५ के बीच में कही अनुमानित किया जा सकता है।

कृति की भाषा का दखन पर यह स्पष्ट हाना है कि यह अपभ्रंश भाषा का अधिकता लिख है। इसका पूर्व वर्णित राम कृतिया में आन जाने अपभ्रंश आदि के शब्दों के अनुपान में इस कृति में अपभ्रंश के शब्द अधिक हैं। फिर भी लाकभाषा की कृति हान से इसका महत्व स्पष्ट है।

प्रस्तुत रास मुनि गज सुकुमाल पर लिखा एक चरित काव्य है। गज सुकुमार कृष्ण के एक सहोदर अनुज थे। देवकी का उसके पहले पैदा हुए कृष्ण सहित ७ पुत्रों का सुख न मिल सकन पर उसने कृष्ण को मातृमुख व गिरु-क्रीडा आनन्द का अभाव बताया। कारण नगर में नेमिनाथ के साथ ६ साधु एक ही रूप के थे और वे दादो का टोली बना कर देवकी के यहाँ आहार ग्रहण करने को आये। देवकी का मातृत्व उमठ पडा। नेमिनाथ से पूछने पर उसे उन्होंने बताया कि ये दसा मुनि उसी के पुत्र हैं जो कस द्वारा मार डाने पर बच गये थे। देवकी का अब बानव की इच्छा हुई। कृष्ण ने तपस्या करके पता लगाया। देवता ने बताया कि बानव तो इसके और हा सकता है पर यह उसका बाल्यकाल का मुख ही देख सवेगा। युवा हाने से पूर्व ही वह दीक्षा ले लेगा। जित्त समय पर बानव ही पया। क्याकि वह पत्र के दच्छे की कति सुकुमार व सुकुमाल था अतः उमका नाम गजसुकुमाल रख दिया गया। मा देवकी ने उम खूब साट-प्यार से पाल कर अपनी मातृ-मुख व वात्सल्य की

१-राजस्थान भारती वर्ष ३ अङ्क २, पृ० ८७ पर गयसुकुमान राम-  
की अंगरचन्द नाहटा का लेख।

मनुष्य-आमना का पूर्ति का। एवं त्वि नमिनाय पुन द्वारा प्रायः उनका रगीनी बाण्णी मुनार गयमुकुमान का धराय ग गया। मा क ब्युन मना करन पर भा हरी बानन ग माना। नमिनाय न श्रीशा न न। पहल श्री त्वि उगन उनम कनय की प्राप्ति का उपाय पूश्रा। नमिनाय न श्रीया द्वेष रहिन हारर तिति न धारण करना बताया। बानन मुकुमान समान म जाकर ध्यानरय हा गया। इधर उगा का पाणिग्रहण करत क त्रिण एक मु नर लक्ष्मी क श्राद्धग विना का जब गान हुआ कि इगत ता शशा मर मरा मु दरा ननका का जीवन हा मिश्र श्रिया है ता उगन घिना क गर्म-गर्म धगर लेकर उगक गिर पर टान श्रिय। बानन पूरा जन गरा पर अत्र ता उग भान शायया था कि मैं ता आत्मा हू जन ता कथन गरा रखा है। इम तरर गाधना क माय प्राप्ति क त्रिण बानन न जावन उत्तम कर श्रिया। पारी श्राद्धग भा कृष्ण का श्रयत पाव करन म मृत्यु का प्राप्ति हुआ। यही इग उग का कथा गार है।

कथा म पटनाघा का बन्धिय शीर कथा मूत्र म कथा-मरता ज्ञान म पायका का उत्साह एर रग बना रता है। जन मूत्रा मं भा गज मुकुमान का जावन करिन मितता है। वस्तुतः पूरा राग कवि न गजमुकुमान का गाधना, तितिशा क कनय प्राप्ति म प्रीमा क करिन कणन क रूप म त्रिया है।

भाषा का दृष्टि म इम राग का दर्श। हरिं ग वाद्य न अपध्र ग वाद्य म त्रिया है परन्तु उनकी यह मायना सम्भवन टाक नग है। कृति का भाषा अपध्र क क पूर्ववता रूप तथा तरकानान नाय भाषा स गवध रगता है। भाषा का दलन यह ता कहा जा मरता है कि इग कृति का रचना बान सम्भवत म० १२०० क हा आग-याग माना जा सकता है पर कृति का अपध्र ग तत्वानान भाषा परिवर्तन बान का उपधा करना है। वास्तव म यह रचना संधिवानान रचना है। कवि न यह रचना श्री देवद गूरि क कहन म हा सिगो है —

‘ गिरि दक्षिण मूरि क वपण, ममि उवगमि गन्धियउ  
गयमुकुमान करिनु गिरि श्राद्धि रक्षय —

आगे कवि क वाच्यरमक स्थिता, तथा भाषा का रूप श्रयन क त्रिण कृष्ण रचना क उपाहरण श्रिय जा रू है —

कृष्ण क राग्य का वर्णन, श्रयता का आनर इनु धाय हूण गमान रूप  
६ मुनिया की श्रयनर वाच्य का उगन इन स्थिता का श्रिय —

‘ नमरिहि रगु करे तहि कहु मरिदु  
नरनद मंति गणहा जिन गुरगणि ईदु

सख चक्क गय पहरण धारा  
 कंस तराहिव कय महारा  
 जिण चाण उरि मल्लु वियरिउ  
 जरासिधु बलवतउ धाडिउ  
 तामु जणउ वसुदेवा वर रुवनिहाणू  
 महियलि पयठ पयावा रिउ भड तम भाणू  
 जणणिहि देवइ गुण संपुत्रिय  
 नावइ मुरलावह उतित्रिय  
 सा निय मदिर अच्यइ जाम्ब  
 तिनि जरि जुयल मुणि आइय ताम्ब  
 सिरि वच्छकिय वच्छे ऋवि विस्वाया  
 चितइ धन्विय नारो जमु जाया (५-६) रा० भा० वप ३ अङ्क २

छहा मुनिया को एक रूप देखकर देवकी को शका हुई कि मुनि तीन वार कैसे आहार ग्रहण करने आये और इसका परिहार नेमिनाथ ही करते है और देवकी के मन में बाल सुल का अभाव विषाद भर देता है —

‘मुनिवर सु दर लखण सहिया, महमुय कसि क्यच्चि गहिया  
 वारवइ मुणि विभइ इत्ययू कह वालवलि मुणि आयठ इत्यू  
 पूछइ देवइ ता पभणहि मुनिवर ताम्बा (अम्ह) सम रुब सहोत्तर  
 सुलस सरविय कुक्खि धरिया जुवण विसय पिमाइ नडिया  
 सुमरिउ जिणवर नेमिकुमारु, तसु पय मूलि लयउ वय भाए

जाइवि पुच्छइ नेमिकुमारु, संसठ ताडइ तिहूयण सारु  
 पुंथि छच्च रयण ततं हरिया, विणि कारणि तुह सुय भवहरिया  
 कस वि होइ निमित्तु वर करह करेई सुलस सराविय ताम्बा सुरु अल्लइ  
 देवइ मुणिवर वंदइ जाम्ब हरिस विसाउ धरइ मणि ताम्ब  
 सुलस सपत्रिय असु धारित्हिय हउ पुण बाल विउइहि दहिय  
 विज्जवइ मलहावइ जाम्ब देवइ मन दुम्पण हुइ ताम्ब

कवि ने गयसुकुमाल का श्रमण में जाकर कठिन तपस्या का वर्णन देखिए —

“माह लहानिदि चूरण गज्जू, भवतरुवर उम्भलण गज्जू  
 सुमरिवि जिणवरु नेमिकुमारु, गय सुकुमारु सेइ वयमारु  
 ठिउ का उत्तंगि ताम्ब जाय वि मत्ताणा,

धारक नारायण बाहिर गजाली

तमि सु नि वर कुविउत पतमइ तमिनि जव पय्यवितु निवपइ  
धम सुव विनदिय परिगिप वेग धमिउत तनु वमु कउ मलुवा

बार मा नम म वर नान का जगण्ड एर नाना या भाति कोमन  
ममकुमान मोमिन आदल क विषा म ग उगारर एगार डान एन म जन  
क वरि नम हा एर म य निवाणु का प्रान हुण । नापन का म्हा सापना  
कवि न बदा हा म्हा ग वगिउत का है —

तावइ मयमुकुमान निरि पावि कर्क गण्य मपर एगारा निरि पूरामेई  
उमइ मनिवक मयमुकुमाउ मगिगुउ निगिइ एगिणि विगाडू  
विने मर एग न सुवगिनि इल्ल निव मगु डवहु न मागुए बल्लइ  
मवराम एगो निर हा निमिगु मगिनि एव कदाइ हुयइ विपरिविगु  
धमि ममगिनि मयमुकुमाउ निव उमइ कण्ड जाउ  
ममनिवि एगारि गणु पाविउत मागव मिदमु गणु १

राग के म उ म वरि न राग निघन का एरेय एर विदा है । कवि  
न एर वरि न म्हायन राग मयमुकुमान का निनि ता प्रधान सापना की प्रकृति  
क रूप में विगा है । या राग एन मनन वरन धोर धारण म्हा हुने क निर  
हा विता म्हा है —

एर रागु मुण्डवटु का रवण माल मंघु कदाइ  
एरु रागु का म्हा एगि हा मा सावय निव मुवणइ महिगो २

कण्टन सापि कायान रामा में भाषा क हटि म ऐमा कृतिमा विगय  
मह्यव का हा म्हायना है । इनम म्हायन कायान प्रयाग धोर मोव भाषाया क  
बाव का म्हायति का विदति म्हायना है । एर म्हायन धमि की हटि से  
हृति का मह्यव म्हाय है ।

एरु का एर राग निरिण्ड ३ कवि न मयमुकुमान क वरि न वरि न  
वरन म हा माग वरि नान विगा ४ । एग प्रान मग नर धान धान एर  
म ए हा जना ५ नि राग क रचना हु एर म कण्टन मुण्डवटु उल्लाम काइ  
धमि न एर कण्टन वदा तन का पुणवदा म्हायना ६ म्हायना ७ । इन तरह  
राग म्हाय रचनाया का कण्टन विदति म कायानर म म्हाय विवतन म्हायना ।



१—मिग—राजस्थान भारत, वन म्हाय - एर (२८-५ ) पृ० १ ।  
२—वहा एर ३६ ।

## कच्छूली रास

१४वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में एक रचना कच्छूली रास मिलती है। रचना का लेखक अज्ञात है। रचना का नाम रचनाकार और रास के रचना स्थान का सम्बन्ध बनाकर राम का कुछ अन्तिम पंक्तियाँ में का जा सकती है। श्री माहानान देसाई ने भास्करा रचनाकार का प्रस्तावित नाम मूरि माना है<sup>२</sup> पर यह बात ठीक नहीं जैवती है। रास की अन्तिम पंक्तियाँ इस प्रकार हैं —

“सात्रीसइ अयाडि लखनए मयधर साभूमो  
 छयणी नयर मभारि आरिठवणउ भीमि विभा  
 कमल मूरि निमराडि सई हयि प्रानूरिठनाभा  
 पमोउ पमाओउ श्रीवु भ्रुणसणि अण्णा मूधुनीभा  
 पणि पट्टतउ मुरवाइ गणहूरु गगाजन विमलो  
 तामु सोमु धिरकाउ प्रनपउ प्रजातिनक मूरे  
 जिण सासणि नहचडु मुह गुरु भवीयई वल्पतरो  
 ता जागे जयवत उमाहा जा जगि ऊगइ सहसकरो  
 तेर त्रिसठइ रामु कोरिटावडि निम्पिउ  
 जिण हरि तिन सुणत मण वंछिय सवि पूरवउ’

इस तथ्य से प्रस्तावित नाम मूरि का नाम रास का रचना सन् १३६३ तथा रचना स्थान कोरिठवड स्पष्ट होता है। देसाई जी की बात का परिहार इस बात से हो जाता है कि यदि कृति का कर्ता स्वयं प्रस्तावित नाम होता तो वह स्वयं अपने लिए प्रस्तावित नाम वर्णन कम कर सकता था। श्री क० का० शास्त्री का मत है कि ऐसा लगता है कि किसि अज्ञान लेखक ने यह राम रचा होगा।<sup>३</sup> पर शास्त्री जी का आधार भी इस दृष्टि से किमा निश्चित परिणाम पर न्याय पहुँचता। अस्तु रचना का रचना की उसका अरित नायक तथा ऐतिहासिक

१-प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह श्री विमलनाथ दलान, पृ० ६२६ ।

२-जैन गुर्जर कविया, भाग १ पृ० ८ ।

३-आपणा कवियो श्री क० का० शास्त्री पृ० २०७ ।



वातावरण पूरा उल्लास एवं प्रणामात्मक वर्णना को देखकर यह कहा जा सकता है कि या तो इसका रचना विधा मधाधिप द्वारा हुई या प्रजातिवक मूरि क ही विधा अतएव गिष्य द्वारा हुई होगा ।

कच्छूना राम एक ऐतिहासिक गाति रचना है जिसमें भ्रातृ का प्रचले 'वर जन मन्त्रि चत्पत्रा कारिण्डवड भ्राति जैन तीर्थो का वणन है । साथ ही भ्रातृ क प्रतनकुड व परमारा का वणन भा कवि न किया है । राम म कार्द कथा विगप नही । कच्छूना ग्राम म उत्पन्न भ्रा उत्पत्तिह मूरि का पराक्रम और गीय वर्णन है । धार्मिक दृष्टि से कच्छूनी ग्राम का महत्व स्पष्ट किया गया है । साथ ही कवि ने मय वणन किया है जिसमें प्रजातिवक मूरि प्रमुख पात्र है । उत्पत्तिह न मध निजाला मध चद्रावली गया वही साजण के पुत्र कमल मूरि की ना ना हुई और तब कारिण्डवड स्थान पर प्रजातिवक के विभी गिष्य विगप न राम रचना का होगा ।

कथा की दृष्टि म इस कृति का कार्द विगप महत्व नहीं कथा में कोई नवीनता भा नही मिलता पर भाषा गौरी और छन्द की दृष्टि स रचना महत्वपूर्ण है । कवि ने मगनावरण स हा प्रारम्भ किया है । आचार विचार और अनियमित जीवन धारण करन वाल कविया क लिए कुछ अच्छ सिखावन कवि न लिए है —

‘केव न भुवति न जितु भगड नारिहि मिदि मज्जि  
उत्पत्तिह पमणुड पलीड नय तन राय प्रयाणि  
कवन भुवति म भ्राति कर नारि जति ध्रुव मिदि  
तिस मय सिद्धा वज्जि जाय साइ भ्रातृर विमुदि ’

छन्द का दृष्टि म इस कृति म दादय मिलता है । या दोहा चौपाई भ्राति छन्द ता मिलन ही है पर मूचणा छन्द विगप गिल्प क साथ वर्णित हुआ है । यह छन्द २० मात्राभा क चरणा का मिलता है । इसमें दो कडिया हती है जिसमें एक ग्राहा का व दूसरी कार्द द्विपदा हाता है । छन्द क नेत्र मे इसका मौनिक याग लिखा पढना है । बाच बाच म जा बार बार पदा का आवत्तन हाता है वह छन्द का कनामक बनाता है । इसमें इस राम म गेयता जय प्रवृत्ति स्पष्ट हाता है । एक उदाहरण लिये —

मयवर नड हिव रहिन ज गुण मिदिहि चडा  
विमहक भ्रातृनु परिवनि ज लपाउ ए लपाउ नु पयटा

तउ गुरि मुहता मिलिह करि होइ गरहु पणैण  
 धाईउ लीधउ चउ पढे गिलीउ ए गिनीउ ए गिनीउ छान भुयंगो  
 पाउ पिल्लिवि समुहोय डर डरगु धीउ राधो  
 जावणहार सवि थल मलीय हीयडई ० हीयडई ए हीयडई पढीउ दाधो

तउ गुरि मूकीउ रय हरणु कीधउ सीहु करालो  
 वाधह जता हरि भीउ हरिसीउ ए हरिसीउ ० हरिसीउ नयह सवालो १

भूलणा छंद इससे पूर्व सोम मूर्ति रचित जिनेश्वर मूरि विवाह वर्णन राम में भी मिलता है जिमका उल्लेख पहले किया जा चुका है। एक और छंद गो म० १२४१ के भरतेश्वर बाहुवली में मिलता है इममें वर्णित हुआ है। इस छन्द में १६+१६+१३ मात्राओं का प्रयोग है जिमका निर्वाह पहले शालिन्द्र मूरि ने किया है।<sup>२</sup> सम्भवत इस छंद का वर्णन कवि ने परम्परा निर्वाह के लिए ही किया हो। छन्द है —

सिरि भद्देसर मूरिहि वसो, बीजो साह व निसु रासा, धमीय रोउ निवारीउ  
 नभकु ड संभम परमार, राउ करइ तहि छे सविवार आबू गिरिवर तहि पवरो  
 जणमण जयणह कम्पण मूनी कछ्छनी किरि लक विलामी सर प्रवववि मणोहरीय ३

श्री लानचंद गाधी ने इस छन्द को रास छंद की संज्ञा दी है जो सम्भवत रास रचनाओं के लिए एक छंद विशेष हो गया था।<sup>४</sup> श्री के० दा० शास्त्री ने इस छन्द को मिथ छंद कहा है तथा इसमें १६+१६+१३+भीर १६+१६+१३ की द्विपदिया बताई है।<sup>५</sup> इन छन्दों के अतिरिक्त दोहा चौपाई छंद भी मिलते हैं। राम महात्सव के लिए लिखा गया है अत गेयता उनमें विद्यमान है।

भाषा के सम्बन्ध में रचना का महत्व साधारण है। लाव भाषा के प्रवाह में कवि ने 'बू ब' जैसे शब्द का प्रयोग किया है—

“हुइ कमालीउ कालमुहो लोकिहि ये लोकिहि ये ताकिहि वाइय बू ब ६

१-प्राचीन गु० का० स०, पृ० ६१।

२-भरतेश्वर-बाहुवली रास, श्री ला० भ० गाधा पृ० २।

३-प्राचीन गु० का० स०, श्री दत्तान पृ० ५६।

४-भरतेश्वर-बाहुवली रास, पृ० २।

५-भाषणा कवियों, श्री के० दा० शास्त्री, पृ० १५६-१६०।

६-प्रा० गु० का० सं०, श्री दत्तान, पृ० ६१।

राजस्थानी में बीनचान म आज भी बूब गल मिलता है जा सम्भवत तौर से बीनचान के त्रिग प्रयुक्त होना है। यह भी सम्भव है कि यह गद विन्गी हो।

नये गद्य म—कमठ, गाय बरमान, पमगल, पामजिगु, मननकु ड बिन्नामरिग, हिमगिरि घवनड, आविन उषवाग, मूरीड, बीजी, मुक्ति, धाति, चिरदान विमल आदि अनक गद्य मिलन हैं। अत इन गद्य म भाषा में नवीन गद्य क ग्रहण की गति स्पष्ट हानी है।

१४वीं शताब्दी क रही काव्या की परम्परा म इसी प्रकार की कथा वस्तु से दा विस्तृत राम काव्य मिलन हैं। इन काव्या में भी सघ वर्णन है तथा गानवार मधुपतिया की गानगीलता का वर्णन है। इन दोनों कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन मत्सेप में किया जाया। काव्य प्रवा भाषा और छन्दा की दृष्टि म ये गाना राम महत्वपूर्ण प्रदप हैं।

१—पयड राम १-म० १३६३-मंडनिक

२—ममरा राम २-म० १३७१-ध्रुवनेव

ये गाना कृतिया प्रकाशित हैं तथा इनमें पयड और ममरसिंह की दानवारना पराक्रम और गी, तार्योडार तथा मय का वर्णन है। दोनों रामा में म पयड का लयक और समय अनिश्चितना है पर प्राप्त बन्धिरग प्रमाणों के आधार पर इसे स० १३६३ की रचना मानी जा सकती है। पयड राम की पूर्णता पर श्री क० का० गार्वी ने गफा प्रकट की है<sup>३</sup> यों रचना की पुणिका 'इति श्री प्राक्वाटवग मौक्ति काय पयड राम समाप्त' का देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि रचना अपूर्ण नहा है। रचना का लय भी पूरा हो गया है। अत रचना का अपूर्ण कहना अप्रमत्थ ही लगता है। वस्तुत गार्वी जी का अनुमान बहुत ठीक नहीं है। कवि मंडनिक पर भी मत वैभिन्य है पर मंडनिक का प्रमाण राम म भिन जाता है।

कृति का ऐतिहासिक दृष्टि में भी बडा महत्व है। कई ऐतिहासिक पुण्या कथा कर्णदहन खगार आदि का वर्णन भः मिलता है। श्री गार्वी इसद कर्ता क विषय में लिखन हैं कि या ता म कवय का रचयिता ही खगार है या वह नहीं है, ता मंडनिक का पिता खगार हागा और वह बुद्ध होगा

१-प्राचीन शुर्जर काव्य संग्रह, श्री दान एण्डिक्स १० पृ० २६।

२-वही पृ० २७।

३-भाषणा कविता, श्री क० का० गार्वी, पृ० १६७।

प्रत मङ्गलिक ही इसका कर्ता रहा होगा। खंगार की मृत्यु का प्रमाण तो वि० सं० १३१६ में ही मिलता है।<sup>१</sup>

जो भी हा, वृत्ति के रचनाकार और रचना काल दोनों की स्थिति या प्रसंग है। प्राप्त प्रमाणों के आधार पर मङ्गलिक का ही इसका रचनाकार कहा जा सकता है व इसका काल सं० १३६० माना जा सकता है।

पेयठ वस्तुपान और तेजपाल की भाँति यदास्वी या। समरसिंह का यग भी पेयठ से कम नहीं था। पेयठ और समर दोनों दानवीर पुरुषों ने सध निकाला था। पेयठ रास में कई स्थानों पर क्रीडा, तान, छुकुटा रास, नृत्य, शीत, गान आदि के पत्र मिलते हैं। कुछ काव्यात्मक सरस स्थल दृष्ट्य है—

‘श्वानई बानाय नदणि विसालीय त्तीय ताली रगि फिरंती हरिस भरे  
तहि पैला नाचइ पल बट्टयत वेला वाला भोल लट्टा रसि रमई<sup>२</sup>

कामिणी धामिणि धवल दयती गायती गुण जिणवरह  
शक्ति अमाहु जात्र समाहुड बरीयल कनि सुणतीह य  
ते चउरा रुढा तउवा ताढी, नवा नवेरा दसइ गेहण गण सधण  
त घण घणोरा सम विसमेरा सखि न दीसई असखि पुण—

य चयन की सुगठितता, सरलता तथा गीतमयता के साथ-साथ कवि ने रास क्रीडा का महत्व स्पष्ट किया है—

‘रास रमेवउ जिन भुवणि ताल भेव ठवियाउ  
सध तलायन रोपिउ ए समागिरि विमगिरि देवि”

अनेक धानवारिक सूक्तियाँ भी रास में मिल जाती हैं—

- १ (१) लाछिनणउ जड गरव करेइ लीजइ राउन छनह धरेई
- (२) मणूय जनम हव सफन करोजड जिविय योवन लाहुउ लोजर
- १ (३) एक चित्त सवि ममाण जाण
- (४) जिम बंधरा कस बट्टीय पामिउ बट्टुण रैह
- (५) धण कण रपण भडार ते सवि अट्टगिय असार

साथ ही नारिया के मृत्यु कामिनिया के आन्हाकारों हाम तथा रास क्रीडा के साथ-साथ विरिनार और सुवर्ण रेखा नग के काव्यात्मक वर्णन प्रकृष्ट हैं।<sup>३</sup>

१—पुत्ररान—राजस्थान, पृ० ३०८ ।

२—प्राचान गुर्जर काव्य सग्रह, पृ० २६ एडिडिस १० ।

३—वही पृ०, २७ छ० ४६ ।

इस प्रकार श्री सम्बन्ध गूरि कृत गमरा राग के काव्यात्मक रूप भी उल्लेखनीय है। राग रचना का उद्देश्य, गाने, ब्रीडा करने और नृत्य हेतु पठन योग्यता है—'एह रागु जो पडइ सुगु नाचिउ जिग हरि देइ

धरनि मुगु सो बयऊ ए तीरप ए तीरप ए तीरप जात्र पमु मेई

गमरगिर ने मुगलमान मुगलान की प्रशंसा कर रंग निधाना। बांग्लाह मुगलान ने रंग की बड़ी गणना की। गमरगिर ने रंग सामग्रीदिन समय में अनुकूल कार्य का उद्धार कर धार्मिक की प्रतिमा स्थापित की। और जूनागढ़ प्रभात पठण धार्मिक धर्म ऐतिहासिक स्थाना १। गाना कर गमरगिर वाण्य सो धाम। राग कर्ता ने धर्म ऐतिहासिक धर्मनामा क सम्बन्ध का राग में उल्लेख किया है। कवि ने पाणगाह, मुगलान माम धर्मगान और मतिर धर्म मतिर धार्मिक ऐतिहासिक धर्मिया ने राग का सम्बन्ध स्पष्ट किया है। राग पर विस्तृत अध्ययन धर्म प्रस्तुत किया गया है।

रचना का अनुपात भाषा में विभक्त है। मुनि जिनविजय जी ने इतनी संख्या १२ ही बताई है और श्री गान ने भी इस द्वाणी भाषा ही कहा है।<sup>१</sup> इन भाषा का विचार धर्मनाम करने पर गान होता है कि सम्बन्ध कवि ने विभाजन १० के आधार पर किया जो कवि हर भाषा में धर्म वैविध्य है। भाषा समाप्त होने ही धर्म परिवर्तन हो जाता है धर्म दृष्टि में पाठ का अध्ययन करने पर गान होता है कि धर्म १२ भाषा क स्थान पर १३ भाषा में विभक्त होना चाहिए। क्योंकि द्वाणी भाषा की ६ कठिनी एक ही धर्म में धर्मनी है जिगको के० का० धर्मना ने विपरीत भाषान धर्म कहा है।<sup>२</sup> पर उसके धर्म धर्म बन जाता है धर्म भाषा दोहा में रची गई है जिसमें "ए स्वर के माय पमों का तीन बार धर्मर्तन मितता है। धर्म इस धर्मनीय भाषा की १३वा भाषा कहा जा सकता है। भाषा धर्म "बदलक की भाँति कथा विभाजन का सूचक है धर्म यह धर्म परिवर्तन सूचक धर्म है।

कवि ने धर्मगरीन और और धर्म रत्ना की प्रशंसा मात संदों रत्न की है कवि की धर्मनी की धर्मनामिका स्पष्ट है—

“तहि धर्मधर भूगतिहि भुवण सनसठ पमत्यो  
विभवर्म विधान करिउ धाइउ  
धर्मिय धर्मोकर सहनसिधु इहु धर्मणिहि कु डनु,

१-प्रा० सु० का० स० श्री दानान पृ० २६।

२-धर्मना कवियों, आ के० का० गानो, पृ० २१६।

किति धनु किरि अवर देसि मागइ भात ड्यु

पात साहि सुरताण भोवु तहि राजु करेइ,  
अलपखानु होइअह लोय घणु मानजु देई  
मीरि मलिकि मानियइ समह समरयु, पभणी-जइ,  
पर उवयारिय माहि लोह जमु पहिलिय दीजई

असंख्य सेना के साथ समरसिंह चलते हैं । हाथी, घोड़े, यात्री, सैनिक  
फलही, और स्थान-स्थान पर उत्सव आनंद सबका अनुभूतिपूर्णा वर्णन है घोड़ो  
ऊ टा व सेना बगुन मे कवि का कौशल दर्शनीय है —

‘वजिय सख असल, नादि काहल दुड दडिया  
घोडे चढइ सल्लार सार राउत सीगडिया  
तउ देवालय जोयि, वेगि घाघरि जु नमनवइ  
सम विसम नवि गणइ, कोइ नवि वारिउ थक्कइ

सिजवाला घर धडहडइ वाहिरिण बहु वेगे  
घरणि धडक्कइ रज्जु उयए नवि सूभवि भगे  
ह्य हीसइ आरसइ करह वेगि बहइ बहल्ल  
सा-बिया थाहरइ, अवर नवि देइ बुल्ल  
रात्रि के दीपका का तारागणो से साम्य कितना स्पष्ट है —

‘निसि दीवी भल्लहलहि जेम ऊगिउ तारायणु  
पावल पाउ न पामियए वेगि बहइ सुखासण

प्रकृति वर्णन, भाषा की सरलता कायमयता कवि की तमयता  
तथा अलंकारो की योजना निम्नांकित पदा से स्पष्ट हो जाती है —

- (१) हिव पुण नवीयज वात जिणि दीहडइ दोहिलए  
सतिय खग्यु न लिंति साहसि यह साहमुगलए
- (२) तमु शुण करइ उदोउ जिम अधारइ फटिक मणि
- (३) सारणि अमिय तणीय जिणी बहावी मरुमडलिहि
- (४) तमु पय कमल मरालुलउ ए कक्क सूरि मुनि राउत  
ध्यान धनुप जिणि भजियउ ए भयण भल्ल भडिवाउत
- (५) धम्म धोरिय घुरि धवल दुइ बुत्तया, कु कुम पिंजरि कामधेनु पुत्तया  
इ-दु जिमि जयरथि चडिउ सचारए, सूह वसिरि सालि यानु निहालए
- (६) रिनु अवरतिउ तहि जिवसतो सुरहि बुसुम परिमल पूरतो

समरह वाजिय विजय दान, सांगु सेतु तल्लइ तच्छाया  
वेगुय कुडय कयव निवाया—

- (७) माणिवे माणिवे चउतु गुर पूरइ, रतन मइ वेहि सोवन जगारा  
मगाव वृष घनु घामू पल्लन त्तिहि रितुपन रतियले तोरण भावा  
देवताया मितिय पवन मयन त्तिइ विनर गायहि जगत गुरो १  
लगत मुत्तर गुरगुरा गाधण वनोठ करई तिध गुरि गुरो

उक्त उदरग ग कृति का शाय्य कोषन तथा भाषा म तत्तम गानों का  
समावेश स्पष्ट हो जाता है ।

भाषा में विशेषी गाना व अनन्य गानों का इसा कृति म मिन जाने हैं -

- (१) गल्लार—घां चत्त गल्लार सार राउत सोगडिया
- (२) घावापानु—मेडिउ य तउ पानपानु
- (३) महिमारमदिर—महिनर ए मन्त्रि घाग गान से त्रामुधि घारणए
- (४) मीर मन्त्रि—मीर मन्त्रि मन्त्रिय मन्त्र समरध
- (५) पातगाहि, घनगान दुनिय हज

- हिदुम, घनगानि—(१) पातगाहि गुरताण भीवु तहि राउ करेइ  
घनगान हाउघनु लाय पागु मान कुंइ  
(२) मइला ए दुनिय निराम हज भागीय हीदुम तणाए  
(३) सामिण ए निगुणि घनगानि २

छान्ने के दोन म पयठ और समरा दोना रागा का बहुत ही महत्व है ।  
इन दोना रागा ने भाषा और छान्ने में मौलिकता तथा वैविध्य व सूक्ष्म अनेक  
प्रयोग किए हैं उनका अध्ययन इन प्रकार है —

पयठ राम म छान्ने का वैविध्य दृश्य है । एक ता दोन भाग और दूमेरे  
छान्ने के अन्त क्रम न वाक्य प्रवाह का बनाया है । इन कृति म चारु रोना  
वाहा चौगई और चौपाया तो है ना, तय छान्ने म सबके चूनी गुतराती कविता में  
सर्व प्रथम प्रयुक्त हुए हैं । गुतराती कविता बहान का कारण यह है कि जयदेव  
के गीत भाषा के पूर्व प्रयुक्त मन्वया में ता लेनी पड़ति था ही परंतु इन राम  
में सारेया में विविधता जान का प्रयत्न है । इसमें चारु भाषा व पदा में कुछ

१-समराराग प्रा० गु० वा० संग्र०, पृ० २७७ ।

२-समरा राग, पृ० २४५ ।

मात्राए अधिक दी है और कुछ मात्रा बढ़ाये हुए छन्द में त्रिभंगी छन्द को भाति यति अनुप्रास जैसी पद्धति प्रस्तुत की है । १

त्रिभंगी छन्द में ३२ मात्राए हाती है । यह छन्द सम होता है आदि में जगण (III) वर्जित है । १०, ८, ८, ६ पर यति और अन्त में गुरु वर्ण वा होना इसका शास्त्रीय लक्षण माने जाते हैं ।

उदाहरणार्थ—धाम्नीय निसुरण्ड लोय भजिभ सघतण्ड समाहउ भनीमण्ड  
प्रागू भ दीजइ भसिजति भवीया लहइ लाहइ धण वण्ड  
पेलिसि हनीयइ रगि राम ह्व नवरस नवरग नवीय परे  
सुणि सामहणी सघतणी जो करई निरतर धराहि धरे

एक विशेष शब्द लक्षण इस रास में मिलता है । जिस तरह कटकक शब्द वही वही छवि कहलाता है । कच्छली रास में जिस प्रकार वस्तु शब्द का उल्लेख है, उसी प्रकार कवि ने इस पद्धति को लक्षण कहा है ।

ए कार वाला पद लक्षण के पश्चात् जो आता है वह सोरठा है और उसी के साथ ४२ वी कड़ी में दोहा परिलक्षित होता है पर उत्तरार्द्ध में उसी पक्ति में बार बार पुन आवृत्ति मिलती है । इस छन्द के वाग् देशी सवैया का प्रयोग है । ये चार प्रमाण अत्यन्त ही विशिष्ट हैं —

“वाय वदामण्ड अतिहि सोहामणु रिमह भुभ्रणि रलीयामण ए  
मविजन कलस कचण मय मडिचले ए  
दुवरा जलजलि देयति कुसुमजले  
धुणति दीण रीण जीण उतारति  
जल लरण नग्हण करति सामी सुगध जले

कपूरी पूरि पूरीय तिणि कीयलि मृग नामि भडा निजग गुरु  
धुण मिलउ देवाधिदेव जोउ बेलवउ सेवत्री पाडल दहल  
कुसुम परमल विपुल पूजहे ॥ वाय वदामणु ॥

इसके अतिरिक्त गीत गोविन्द की २७ मात्राप्रा की देशी सवैया पद्धति में दो छन्द मिलते हैं । इन सवैया का प्रयोग पहले भीत गोविन्द में ही मिलता है --

“राजल कत । तहि नाचिनए सहिलडीय लतागोय गिरिनारे  
राजतिवर रतिप्रामुण्ड सामलउ ससारो ॥ तहि नाचिनए ॥



धन परवानि मुणयन्मइए नन पहराय घाति प्रवीत  
इअ महोत्तव धायमी तटि वयठनिवत्तु धणवत ॥ तटि नाधिनए महि० ॥

श्रीर इसक पदनात कवि न राम क अत म न्या पदति में नहा का  
बर्णन किया है वह भी अपन ही प्रकार का है जिन्हीं तुक याचना में भी एक  
वैचित्र्य है —

अ द्विकि भास मणाहर पुरी अवनार्दय जाधाय  
मात्र पूजन जुनारीय वनीयउ पय नम मुनी धाय ॥  
तहि ना सहल ए न्या या मद गिरिनारि  
सोमनाय च प न वर्यर देसाउ वनीउ जाम

दिउ पायाण विव मन रहिमठ मडलिव मणुए नम ॥ तहि ना० ॥

दिउ पीयाणवेमि तहि हरायाना मृग रे मूरवाउ मपत मनोना मूढारे

समर राम में भी छन्द क मौलिक प्रयोग हैं। कवि न नहा रोला  
द्विपत्नी सोरठा छाति छन्द म राम रचा है। छठा व ७ वा भागा म चौपाई  
तथा ५ कटियाँ रोना की है। ८ वा ९ वा म छमा १० कटियाँ द्विपत्नी का  
तथा ६ कटिया का एक झुण्ड छन्द है जिन्म अत्यानुप्रास का काव्य चमत्कार  
है जिन्में उनकी गयता स्पष्ट होती है और यह छन्द प्रथम बार प्रयुक्त हुआ है।  
१० वा भागा में नहा और ११ वा में कवि क नथ प्रयोग है। प्रारम्भिक कटिया  
में १६ १६ मात्रामात्रा का एक चरण है और फिर १३ मात्रामात्रा की एक  
अर्द्धांश। १२ वा १३ वा भागा में त्रिपदा नामक अन्त छन्द है। इन दोह  
क माय 'ए' का प्रयोग व आवृत्तन तीन बार मिलता है। इन प्रकार नाना  
कृतियों छन्दों का दृष्टि में भी अद्भुत महत्त्वपूर्ण है।

डा० हरिवंश काठक ने अनेक अर्थ अन्वय ग साहित्य म इन कृतियों को  
सुष्ठु साहित्य क कर द्वाड किया है और इन रामा का अन्वय का हा कृतियों  
मानी है पर उक्त विवेचन क आधार पर इन धारणा का परिहार हो जाना  
है। ऐसी कृतियों का अन्वय का कटना प्राप्त तत्कालिन जमाना ममा  
रचनामा क गिल्ब, भाषा में ही काव्य इतिहास, अथवा अनु तथा इतिहास क  
तत्वा की उभया करना है। बल्कि नाना राउ नान म साहिि दवता निर है।

## मयणरेहा रास १

हिन्दी जैन साहित्य में जैन चरित नायका की ही भाँति जैन साध्विया और आर्त्ता नारिषा (मतिषा) पर लिखी गई अनेक रचनाएँ उपलब्ध होती हैं। मयणरेहा रास जैन आर्त्ता राजकुत्री मन्नेरेखा की जीवन कथा है। प्रस्तुत रास ५ ठवण्डि में पूरा हुआ है। मतिषा के जीवन चरित वर्णन की परम्परा भी अब प्राकृत और अपभ्रंश काल से ही मिलती है। १३वीं से १५वीं शताब्दी में रास और चतुष्पत्तिकाद्या के रूप में अनेक कथा काव्य मिलते हैं। पूर्वोक्तिलिखित चल्नवाला रास की भाँति मयणरेहा रास भी सती मन्नेरेखा के सतीत्व, नारीत्व और पतिव्रत्य जीवन की मार्मिक और कथण कहानी है।<sup>२</sup> प्रस्तुत रास जिनप्रभ मूरि का परम्परा-संग्रह-पुस्तिका सं० १८२५ से प्राप्त हुई है। रचना की प्रति अभय जैन ग्रंथालय बीकानेर में सुरक्षित है।

कृति के रचनाकार का नाम कहीं नहीं मिलता है। रास की प्रथम पंक्ति में दो बार रयणु शब्द का प्रयोग हुआ है —

सयलह रयणह वयर रयणु जिव भूलु न जाय  
तिम जिम सासणि सीलु रयणु कवि कहण न माए

अतः बहुत सम्भव है कि यह रयणु ही रचनाकार है, पर फिर भी स्थिति असादिग्ध नहीं कहा जा सकती।

१४वाँ शताब्दी के उत्तरार्द्ध का यह खड्ग-काव्य काव्य की दृष्टि से, एवं भाषा प्रवाह और कथा की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस रचना का

१-लेखिण-हिन्दी अनुपालन वर्ष ६ अङ्क १-४ पृ० ६६-१०३ पर सतियो के दो रास-गीर्णक लेख।

२-विम्बुन विनचन के लिए देखिए-महामना मन्नेरेखा-जैन महासती मडल भाग १ पृ० १ ग २१ तथा मती मन्नेरेखा प्रकाशक श्री जन हितोच्छ्रय श्रावक मडल रतनाम मम्पाक श्री हुक्मीचन्द्र महाराज, सन् १९५०, पृ० १-२५८।

प्रारम्भिक श्रंग प्रति का मन्त्रार्थी पत्र प्राप्त नहीं होने में उपलब्ध नहीं होता । प्रारम्भ के ५ छन्दों में नहा मिलन और ६३ छन्दों में ही रचना प्रारम्भ होती है ।

मयणुरेहा मुन्गनपुर के राजा मणिरथ के भाई युगवाहू की रानी थी । मणिरथ ने उमकें अनाधारण मोक्ष पर आसक्त हो उमके प्रेम का प्रस्ताव रखा । सती ने उसका मांग ठुकरा ली । अन्त में राजा के बहाने एक बार युगवाहू मन्त्रार्थी उपवन में गयी । मणिरथ ने घोड़े से बहा पट्टीच कर उमकी आत्म हत्या कर दी । मयणुरेहा विधवा की प्रेम करनी थी । उमके पुत्र का नाम चन्द्रकुमार था । पति की हत्या के समय वह अज्ञानस्थिता थी । उस स्थिति में वह वन में निरत पड़ी । अन्त में मणिरथ का भी साप न बन गया और वह मृत्यु का प्राप्त हुआ । पुत्र प्राप्ति ज्ञान पर मयणुरेहा नगी में स्नानार्थ गई तो एक हाथाने उसे उद्धान किया और एक विद्याधर ने उमका रक्षा का तथा उसके साथ प्रणय का घृणित प्रस्ताव रखा । अन्त में सत्य उत्तम गिणु का एक पक्षरथ नामक राजा ले गया और वन जाने पर वही नमिराजा राजा हुआ । चन्द्रकुमार भी मुन्गनपुर का राजा बनाया गया । सती मयणुरेहा ने अन्त में दीक्षा लेकर विद्याधर से अज्ञान गीत गनीत्व की रक्षा की और उमके वैवल्य ज्ञान की प्राप्ति हुई । अन्त में उमके ज्ञान पुत्रों तथा अज्ञानी माध्वी मा सुद्रता (मयणुरेहा) से ज्ञान प्राप्ति कर दीक्षा ग्रहण की । इस प्रकार सती मन्त्ररक्षा ने अज्ञान गीत की रक्षा की ।

कवि को इस कण्ठ कृति की रचना में अनेक स्थानों में काव्यात्मक बलान करने का अवसर मिला है । रचना में अनेक मार्मिक स्थान हैं । प्रारम्भ में ही कवि ने मयणुरेहा के मोक्ष का सुगठित बलान किया है ।

रद स्वह लीला दवदती रावमए त्रिम नेहू करंती  
समकित्तु अविचतु हियइ धरती त्रिणु गणुहर पय पउम नमती  
अन्त न कुमर मात्ता गमन दाह मा अणुगुवता  
अज्ञानतरि इमि हसता उरि एरावति शय बहती- (६-८)

अन्त में इस प्रकार के मोक्ष पर मणिरथ राजा गया उसने अपना दुष्प्रभान मयणुरेहा से रखा । कवि ने उमके ज्ञान के उत्तर प्रत्युत्तरा को बड़ा ही चातुर्य से वर्णित किया है । वाच में कवि का उन्मत्तात्मक मृत्किर्पा बनी अद्भुत है —

अन्त में पुराण मुग्धाजन्तु त्रिजिय पामरि लाइ इयावद  
तपि नरेमर मडिड कडू पवउ मयणु महा भद रडू

कुलि कम लोहिम बुद्धि भरतउ नियगुण यज्ञी प्रणि दहंतउ  
हा हारव तिहुयणि पावतउ मणि रहु मयणा मंनिरिपत्तउ

तामह ए मणिरुद्धा राउ मयणि महामडि गजिउ ए  
बुल्लइ ए ययगु विप्राणु, जेग जणगणि ताजिप ए  
सोनह ए सोवन रेख बुल्लए मयणा निम्मलीय  
नरवर ए वयणु विपाक निय बुन खणणि मनिरलीय  
सुरगिरि ए मिल्हइ ठाउ जइवि मुरावउ महिएल ए  
तिहुयणु एक्क मेनेइ ताप १ मयणा मनु चन ए (१०-२)

श्रीर इमने पदचान् कवि मनुश्रुतु के वर्णन म हूव जाना है। प्रकृति के  
उपासना का परिगणन कवि ने कुशलता म किया है। मधुश्रुतु क्या भाई, माना  
मयणरेखा की वपत्त थो ही मन्त्र व लिए चुट गई। वपत्त कीडा के लिए  
युगवाहू श्रीर मणिरय जाने हैं श्रीर काम-नातुष मणिरय नगी तलवार सेवर  
यहाँ पहुँचना है वामती वातावरण को किस प्रकार वह बीमल बना देता है।  
मोठी मोठी बाना में अपने भाई का उलभा कर उसका धान से वध करना  
बडा ही दुर्मनीय कएण प्रसंग है। राग्य श्री व प्रकृति वर्णन दृष्टव्य है।  
धनुप्रामातमयता व प्रकृति का नाम परिगणनात्मक रूप देखिए —

मउरी अ व कमव जेव जवीरी मोहइ  
कयनीय लवलीय ललिय बेलु मानइ मणु माहइ  
चणु चपइ धार वित्त चारह दीसता  
मरुवक कएणी कुट्टय कुद किमुप विहसता  
कोइल पचमु सह करए भमरउ भएणवारइ  
पाउल परिमणु महमहए मलयानिल्लु चल्लइ  
मयण सराखणु करइ कज्जु विरहिणि मणु कपइ  
अवनरिय मिरि वसत राय मणिरहु इव जपइ

युगवाहू श्रीर मयणरेखा की कलि काडा श्रीर राम धानइ मणिरय से  
नही दवा गया। मोठी मोठी बाणी बान कर वृनिम सहातुभूति दिखाना हुमा  
वह वहाँ आया श्रीर मयणरेखा को प्राप्त करने के लालच से पर छूने हुए भाई  
क सिर पर तलवार भार दी। अतस्मत्वा मन्त्ररेखा दीन हाकर भटकने लगी  
पर अपने चरित्र व सतीत्व की पूण रक्षा करन म उमत कोई कमर बाकी  
नही छोड़ी। स्वामी की मृत्यु पर रत्न करनी हुई मयणरेखा की स्थिति बड़ी  
कल्याणजनक हो गई श्रीर सती का मताने जाने दुर्मति मणिरय की भी साप ने  
काट लिया —

जमजोहा मम खगु लउ बनु कावि जवतउ  
 माया बविउ मयन ताउ कंचाहरि पठुतउ  
 कुमए न मुग्ग पइ वियउ वणुवामि बसतइ  
 महिमडनि बइरि गगिगिह निमि त्रिमु भमतइ  
 ख जयता नर वरान्त् सा पणुमइ पाय  
 खगु महायरहु मिरि मिन्हइ धाय

तकवगि धाय ताउ इदारवु जगि उद्यनिउ  
 मामा पविउ घाउ मयणा नयनमुय वनिय  
 हुयउ मुराज् अतु तारणु ऊनीय वयर हरे  
 ख्य जाणे विनगु ताउ नख् मूकउ धवन हरे  
 बुमुमहो भाह रमि विनउ भागिहि मोगहिउ  
 तकवगि नरइ पढेर पाव महानरि जा भरिउ  
 त्रिगि करि मयणु हरमि नखइ वृति मनि रमिय  
 निगि करि वमियउ मापि नैवइ दुरमति गहिनीय (ठवगि ३।७ ४।२)

रचना ५ ठवगि म पूरा हा जाती है। नापा भरन और आनकारिक है। कण्ठ रम क स्थान स्थान-स्थान पर मिल जात है। रचना का समाप्ति निर्वै म की गई है। कृति में चानार्द और राम ध् प्रमुखता से मिलता है। भाषा की सरलता, उसकी सत्यमता तथा प्रवाहानकता के लिए एक उदाहरण दृष्ट्य है —

करिवरि विम वयान कालि नवकारि हराता  
 जउ परिमता मयणरेहु, तउ सरवरि पता  
 वणु फनि सरजनि गमिठ, त्रिम निमि पुनु उणे  
 कना हरि मिन्हि कुमग्ग मिरि न्हाणु करे  
 जव करि नदिया पनु, जम गगणियनि उचानइ  
 घरनि बडना बांडु जम वित्राग्ग मल्लइ  
 मुदरि जणि न मार राव मणिग्ग वित्राग्ग  
 नपैमर वरि अम्त् ताग्ग मग्गि चूनु मुणाय

निगु ह् पूत्र करेवि जाम मुणि पाय नमवि  
 न्मण निमुणिय खयर राम मयणा वामइ

कुमरह मयलह जिणह वयणि पडिवोह करती

केवल नाणु धरेवि मयण सा सिद्धि पहुँता—(ठवरिण ५,३५)

वस्तुतः १४वा शताब्दी में आधा की तत्समता के स्वरूप इस कृति में देखे जा सकते हैं। अपभ्रंश के गद्य भी कहीं-कहीं देखने को मिलते हैं। कृति इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। १४वा शताब्दी में इसी प्रकार के अन्य अनक रास मिलते हैं उदाहरणार्थ महावीर रास (१३०७) मयसुकुमान रास, वारधत रास (१३३८) मप्तगोत्रीय रास जिनपद्मसूरि-पट्टाभिषेक रास, भावकविधि रास आदि। परन्तु ये रचनाएँ कान्य की दृष्टि से साधारण ही हैं, अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं हैं।

१४वी शताब्दी के बाद १५वी शताब्दी में राम सजक अनक कृतियाँ उपलब्ध होती हैं। वास्तव में १५वी शताब्दी का रास साहित्य बड़ा सम्पन्न है।

---

## श्री जिनपद्मसूरि पट्टामिपेक रास १

श्रीजिनपद्मसूरि या पट्टामिपेक एक ही अर्थ का सूचक है। १४वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हमने मामसूरि के जिनस्वरसूरि विवाह बरगुन राम पर विचार किया है। ठाकुरों के प्रकार का राम म० १३८८ का मारसूरि द्वारा लिखित जिनपद्मसूरि-पट्टामिपेक रास है। जय उद्देश्य तथा मुख्य प्रवृत्तियों की दृष्टि में यह कृति मामसूरि की रचना में पर्याप्त साम्य रखती है, परन्तु भाषा और अर्थ की दृष्टि में इसका स्वतंत्र महत्व है। १६वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की रचना होने में यह रचना मत्स्यपुराण है। इस रचना की प्रति श्री अक्षय नाहटा के मद्रास श्री अक्षय जैन मठ में सुरक्षित है। श्री अक्षय नाहटा की कृति के आश्रय पर एक समय का उल्लेख किया है। कृति ऐतिहासिक है। इसकी ऐतिहासिकता पर पर्याप्त प्रमाण लाया गया है। २ इस प्रकार यह राम ऐसा गीत है, जो जैन भाषाओं की भाषा में लिखा गया है। जैन गुह्या और मुनियों ने समय-समय पर जैन धर्म प्रभावना की राजाशा महाराजाशा और सम्राटों पर अपने धर्म की धारक बटाएँ और समाज के लिए अनक धार्मिक अधिकार प्राप्त किए, उनका उल्लेख इन गीतों में पर पर मिलता है। विशेष ध्यान इन योग्य उल्लेखों के जिन मुमकिनाना बाणाना पर प्रभास पत्र का दात कही गता है। ३

प्रस्तुत राम के नायक गुरु श्री जिनपद्मसूरि ने मुक्तान कुतुबुद्दीन के विना का प्रश्न कर लिया था। मुलतान ने भी हाथा राम धार घनादि दवर मुरावर का सम्मान करना चाहा पर उन्होंने स्वीकार नहीं किया। मुलतान ने उनका दया भक्ति का और फरमान निराका तथा कसति निमणु के जिनका राम में स्पष्ट उल्लेख है —

१-ऐतिहासिक का द मरुत श्री अक्षय नाहटा का रचना नाहटा पृ० २१।

२-वहा अर्थ प्रभावना पृ० १६।

३-वहा अर्थ प्रभावना का नामाने जैन लिखित पृ० १८।

कुतुबद्दीन सुलतान राज रजिउम मणोहह  
जनि पयउव जिणचमूहि सूरिहि सिर सेह १

इसी प्रकार कवि सारमुक्ति के जिनपद्यमूरि भी ऐतिहासिक तथ्या से सम्बन्ध रखते हैं। ये जिन कुतुब मूरि से जिनका पुराना नाम तरुणप्रम है, और जो बडावदयक वातावबाध के कर्त्ता रहे हैं, सम्बन्धित हैं। इन्हीं का नाम जिनपद्य था। प्रस्तुत गीति राम भ धम की नीरस मैदातिकता ही नहीं है, पर ऐतिहासिक प्रामाणिकता तथा काव्यात्मकता है। धम की प्रेरणा से काव्य की भाषा भाव और गैली और प्रभावगानी हो गई है। कुछ काव्यात्मक स्थानों के उदाहरण दृष्टव्य हैं। कवि ने राम को भाव भक्ति से गाने के लिए लिखा है —

इहु पय ठवगह रामु भाव भगति ने जर न्यिहि  
ताहि होइ सिववाम सारमुक्ति मुगि इम भगइ

आध्यात्मिक विवाह का साहित्य में महत्व स्पष्ट है। प्रागे जाकर आध्यात्मिक विवाह की इन जन घटनाओं का प्रभाव सम्भवतः कवीर की साहित्य साधना पर पडा है। कवीर के साहित्य में भी आध्यात्मिक विवाह का महत्व पूर्णतया स्पष्ट होता है। इस अवसर पर रासकर्त्ता न अभिषेक पर हुई अनेक क्रीडाओं का बरान किया है। श्रद्धालु श्रावकगण सग बना कर प्रतिष्ठा में शामिल होने हैं। ग्यान स्थान पर बल्लोत्र और राम महोत्सव हाते हैं और नारियाँ श्रद्धा से भूम भूम कर नृत्य करती हैं। कवि ने इस छोटे से गीत में गेयता की प्राधायन से हुए रचना का श्रावक ने उल्लाम प्रधान जीवन के सम्बन्ध में गड कवि की कुछ अनुभूतियाँ इस प्रकार हैं जो भाषा और भाव की दृष्टि में भी महत्वपूर्ण है —

उदयउ तसु पण मयन कना सपतु मयकू  
सूरि मउठ चूडावदसु जिणकुान मुगिदु  
महि मण्डल विहातु मुपरि आयउ तैराउरि  
तत्य विहिय वय गहग माल पय ठवग विविहपरि (५)

कु कुवतिय पाठ ठवण द्रमिंसि मघ हरेसु  
मयन सघ मिलि आवियउ, वछरि कर पवेसु

आदि जिलोसर वर भुवणि ठविय नि सुविमान  
धय पडाण तोरण कलिप चउमि वदुरवाल  
सिरि तरुणापण सूरिवरो मरमठ कठाभरणु



मुमुक्षु वषणि पञ्चमि ठन्डि पञ्चमूरिति मुगिरदगु  
 जुगपहाणु जिगपञ्चमू नापु ठन्डि मुपवित्त  
 प्राणन्डि सुर नररमणि जय जयनार करति

सद्य वगन श्रीर नारिया का उनाम राम तथा नृय गा मगनाचार  
 प्रादि का धर्मन श्रविए —

मिन्डि दसन्डि मिलिउ दसन्डि मद्य अपार  
 दराउरि वर नयरि तर सदि गञ्जाति अवा  
 चतिव वर रमणि ठामि ठामि पिग्गुय सु र  
 पय ठवणु ञ्चि जगपरह विहसिउ मग्गणउउ  
 जय जय सद् सप्रछन्डि तिदु अग्नि हृयउ पमाउ

तिदुअग्नि जय जयवा पुरिउ महिमतु नूरय  
 धणु वरिम वसुधार न नारिय अइविविह पर

वर कथा भरणाण पूरिय मग्गण ञ्चण जण  
 धवन्ड भ्रनणु जमण मुपरि मादु हरिपालु जिइम  
 नाचइ अरनाय वान पच मरन् वाजइ मुपूर  
 परिधरि मगनाचार धरि धरि गूडिय उभविय  
 उयउ कति अकन्ड पा तिनकु जिगपुणाल मूरि  
 जिण सागणि मायदु जयवत्तउ जिण पञ्च मूरे

जिम तारावणि चन् मन्मनयण उत्तम गुरह  
 चित्तामणि रयणात् तिम मन्मुग्गु गुण्यउ गुणुह  
 नवरम दमणवाणि सवणुजति ज तर पियहि  
 मग्गुय जम्मु मसारि महनउ विउ इत्थु कलितिन्डि  
 जाम गयण ममि मूर धरणि जाम धिर म गिरि  
 रिन्डि मधन् मजनु ताम जयउ जिगपञ्च मूरे

म प्रकार उत उदरणा म कृति क आध्याम विवा का महत्तर ममभा  
 ता मक्ता है । वा प अधिक मुन्डर नया पर भापा का मरनना व तममता की  
 दृष्टि म मन् प्रपूर्ग है । म्गा प्रकार का म० १२८८ म त्रिखित कवि धर्मकनन  
 का जिनकान मूरि प गानिपन राम मिजना है । यन् कृति भा इसा तरन् गेप  
 त मा वम्नु गि व श्रीर वगन-वदति अन्डि म ञाना वा पयात्त माप्य है ।  
 म्का रिपय भा पट्टाभिपय ज्ञा है । ञाना रचनाए एतिहासिक न तथा १ स्वा  
 गता न क उत्तराद्ध का प्रतिनिधित्व करती है ।

## कुमारपाल रास १

१५वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में विरचित राम रचनाओं में एक प्रसिद्ध रचना देवप्रभ विरचित कुमारपाल राम है। इस का सम्पादन डा० भोगीलाल साडेसरा ने किया था और मुनिजिनविजय ने इस रचना को प्रकाशित किया।<sup>२</sup> प्रस्तुत रचना एक ऐतिहासिक काव्य है जिसका प्रमुख विषय राजा कुमारपाल के बम्ब राज्य उत्थारता, प्रदर्शन तथा सघ वर्गान है। प्रस्तुत रास की अंतिम ओड़ी में कवि देवप्रभगणिका का नाम मिलता है। बहिर्माध्या में भी देवप्रभगणिका का नाम मिल जाता है। पाटण के सघवी मुहल्ले के जैन पान भडार की ६० १४३५ में लिखी हुई पार्श्वनाथ चरित्र की प्रगति में सामंतिलक सूरि के शिष्य मडन में देवप्रभगणिका का नाम मिलता है।<sup>३</sup> काव्य की पुष्पिका में ज्ञात होता है कि इसकी नकल स० १५५८ में चैत्र बुध ३ शुक्रवार को की गई। यह भी स्पष्ट होता है कि कुलमडन सूरि जो मुग्धावबोध श्रौतिक के लेखक हैं देवप्रभ के समकालीन थे। क्योंकि मुग्धावबोध श्रौतिक का रचनाकाल स० १८५० है अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि राम की रचना १५वीं शताब्दी के प्रथम दशक या द्वितीय दशक में हुई होगी।

पूरी रचना एक सरस काव्य है। कवि के पद नालित्य और काव्य प्रवाह में कहीं भी गणित्य नहीं है। ४३ बहिया में पूरी रचना समाप्त हुई है। रचना की काव्यात्मकता उल्लेखनीय है। कवि ने काव्य का प्रारम्भ ही महावीर गीतम स्वामी नरस्वती कपर्दी यक्ष अम्बिका तथा शान्ति की विनय तथा नमस्कार द्वारा किया है।

कुमारपाल अजातशत्रु बन कर रहे। उनके राज्य का प्रभाव तपोवन का भाति था। कुमारपाल की अमाधारण धारणा में मनुष्य ने तो क्या पशु पक्षियों तक ने अपनी पारस्परिक स्वभाव शत्रुता छोड़कर मन्त्र अहिंसा का

१-भारती विद्या स० मुनि जिनविजय, भाग २ अङ्क ३ स० १९६८ पृष्ठ ३१३-३२४।

गात्राज्य स्थापित किया। पशुपति मन्त्र मेरु खरगाण हिरण्य भंग वारुणा  
माया मूर्धन चान्द्राणि का मरुताना वन्द्य कर लिया। यहाँ तक कि तू और  
सन्मन्त्र भा मारता पाप समझा गया। शिष्टिणा व मसूत्र मृगयुवक कर्म करन  
लगे। पित्रर व ताना मना पशा मृग म रत्न जग। पशिया म भा चर्चा रहता  
कि शत्रुवत पाना का मन्त्रिया का भा शत्रु व है। कुमारपान व राय  
का तनना विहारा व जगत तपावन मा किश शरथ शत्रु निशान म हा  
सकता था। उमक राय म माप काप्रा और यहाँ तक कि कुत्ता का भा काद  
नहा मारता था। कवि न बड़ा मरुता म इम प्रकार क चित्र उतार है —

पत्त्रिउ धराध धरपनावा गिरि म ममाणा  
कुमर विहार करु भाति मत्रि मन्त्रि करारणा  
मात्रन धम पूतना ए मद्र मयगत पाठा  
ममनि कुमर नरि राय हम मूरि पूभावद  
घाण्डउ शरिउ मयत्रमि राय धम्मकरावद  
शरिउ नमि त्रिम कुमर पानि डागरउ श्वारिउ  
द्यानि वाक् करु वान गात्रि वधाक्  
ममना नाचर म्निव भर श्रजरामर दूषा  
नहिषा श्रिया करु शानि पारव महाप्रा  
मइमा श्रन हरिण राभ मूरर श्रन मवर  
चावा कुमर नरि राजि रगि नाष तातर  
जुष न माकुग नाव का कहवि न मारद  
श्रिणा ह्रिणा करद कनि मुपि हममूरि वार  
नाग उव पजरविषा मुपि श्रच्छर भूतनि  
मृन्त नवि पजरउ धिया पणु नाचर मातनि  
वाशरि श्रन हान भण ममनि तू मार  
पाणा मात्रि जि मच्छत्रा ए नाधानवि मार  
नारमरी मार हाम नर मारडाय वधावद  
श्रवण ह्राज कुमर पान श्रन मरणु न श्रावई  
याप मर श्रनद मृणु वा काद नत्रि शानद  
न मर उतर नरि राजि मात्रि हाण्डउ माचद (६-८)

येमा था कुमार पान का राय। त्रिम गिरार म शरथ का पुत्र शिषाण  
म मरना पना म कुमारपान उ व करेता शिया। त्रिम छ त क्राडा म नव  
का मव उठ हार जला पटा कुमारपान क राय म ऐमा जप्रा ह्य समभा  
या। त्रिम मत्र क वारणा ममन्त मादवतुन शिनाण का प्राप्त हाया उग



लाग कुमारपाल के राज्य में स्थान करना भा पाद ममभन लगे । मास भणए से जिस प्रकार सुनास और श्रेणिक नामक राजाघ्रा का दुख मिला उसका कुमार पाल ने दृढ निषेध किया । गरिका गमन घोर पात था । वैश्याए सती स्त्रिया की भाति बन गई और जिन पूजन करने लगी । चारा का उपद्रव सम्पूर्ण देश में कहीं भी नहीं था । पानी नगर में तीन बार वितरण होता । विविध प्रासाद तथा विहारों से राजा ने अनदिनवाड की शोभा में अपूर्व वृद्धि की । कवि ने इस वर्णन का अत्यन्त सरल भाषा में प्रस्तुत किया है । काव्यगत सरसता शब्द चयन और वर्णन की चमत्कारिता उल्लेखनाय है । उक्ति का अनुठापन काव्य की सरसता में और अधिक् वृद्धि कर देता है —

पारधि जीवन पोसीथ ए बहु पावह पायु  
पारधि खेनन दसरतह हूउ पुत्र विपायु  
कुमर नरसेर नियरज्जि आहंडउ धारइ  
जनचर धनचर, खचरजीव इम कां न मारउ

जूम वसणि हूउ नल नरिं दमवति विपायु  
अडविभमता वार वरिम पाडव मनि सायु  
दपी हूपण ज्म तणउ नवि पनइसारि  
जूमारि नवि ज्य रमइ, नवि वानइ मारि  
मसवसणि सोदासराय पामिउ दुहसणीय,  
दीठी नरमह तणीय भूमि नखइ पुण सणिय  
ग्रामिप भोयण तणइ दडि वतीस विहार,  
राय करावइ कुमर पाल जणि तिहमण सार  
हूपण मदिरापान तणइ जायव कुल नामा,  
किरिउ दीवाणणि दुठठ दवि वारवइ विणामा  
राया दमइ नीच सब हिर मरिा मल्हइ  
मत्तवाला नवि मधु करइ मू मनी पेलइ  
गणिका गमणु निवारद ए नरवइ निय राजि  
छवि वशावसण लोग लागमवि काजि  
वेशा काधी माइ नरिम तइ कुमरउ राय  
ता पण पूजइ जिणह मुत्ति वदइ पुनप्राय  
वशावसणिइ गमइ मरय जा पुरिम अहमउ

पाछइ भूरइ मनह माहि सिम वणाय वचनउ (११-१७)  
नगर वणन और सध वणन में कवि अपनी सानी नहीं रखता । अपनी

की निर्माण तथा उग समय धरती उत्कृष्टता को प्राप्त थी। विविध वार्धा मे निनाशित धनरा राजाभा म गुमन्त्रित कुमार का मघ ऐ तर्व अदगनीय था। विविध नृत्य-गान, लय तान और मूल मागधी गणा का जयजयकार संघ की गोभा बद्धान लगे। लामा का उत्तर स्वरूप का स्वकर भरत या पार्श्वभद्र या श्राकृष्ण, नर या स्वयं इन्द्र है इस प्रकार का मन्त्र हान लगा। अत में एग प्रकार संघ धीरे धीरे गन्तु जय पहुँचा। यात्रा पति नमिनाय का गिरतार में, यनरथनी म महावीर का, मागनीर म पार्श्वनाय का तथा राज कालानार म गामनाय तथा पाण्य म पार्श्वनाय की पूजा का और मघ पुन लौटा।

काल का प्राणाश्रिता भाषा की सरनता जन भाषा हान व कारण उचित का धनरापन तथा विविध लारावितया का मधुष्मन प्रभुन राम का महत्त बड़ा न है। कुछ वर्णन निम्न —

नगर वर्णन—

मावन धमे पूतनी ए धारण जाप्रती  
 निरम इति धारण ए निहृयण मान्ती  
 हार मागित्य चूनटा ए पापर लंड जडिया  
 निम्नतर्ता विवरामि अडनिउण घडिया  
 मतिय मानि नमि नमि बट्ट मघ मवाव  
 धामी बट्ट धामीम नि राउ जान धनावइ (२३-२४)

वाय नृत्य नात वर्णन—

बहूय ऐसह धूय देग मघ मनवि  
 जिण भतिनि एगमणि भूमि नाट्ट मधु जि वचवइ  
 गाइ धाउ न्निय मरी मघ नाक धागनि नचवइ  
 टामि टामि धाधावि निव हूर मगत धार  
 धरर्षहि वरमर मे न्निम दानि मानि मुवि धार (२७)

मिलिय मावगनणा नाय धनि धन ममाणा  
 गावीय वन्ती गामनमनि एण एणगी धाणा  
 मरा भूगन दाव धणा धमधमर नीमाणा  
 देवा नावर रग भरे नयनवा मुजाणा  
 धामिणि तरणि निद्र रामु करि मग्र धाउ  
 मधुगी वागिहि मगुन मामविनि कन मुनावी

बंसी जयजयकार करइ कइ गीहर गाति  
गायइ गायण सत सर कवि बिनर सादि (२८-२९)

भनुप्राप्त और सदेह धूलनारा का विविध सुन्दर चित्र लीचा गया है मनुष्या को कुमारपाल के इस रूप का देवगन भ्रम उत्पन्न हो जाता है कवि ने इसी भ्रम का दृश्य प्रस्तुत किया है —

धानीय गययड भान्ती, ए भारती मद वारि  
खाणी लणता तुरय नाप करहा सइ च्यारि  
राउत पायक राजनाक अनइ मागणहार  
सख विवज्जिप मिनिप लोक काइ जाणइ सार  
कि भह चानिउ भरत राउ ? कि सगर नरिणो,  
राया सपइ दमन भहा कि कन्ह गाविना ?  
कि वा गीसइ नल गरिदु कि नेवहराउ  
भ्रति उपज्जइ जायता ए नरवइ समुण्ड (३०-३१)

कवि ने पूरा काव्य रोना छत्रा में लिखा है। बोध में वस्तु छत्र का भी मुनकर प्रयोग किया गया है। वस्तु छत्र का एक उदाहरण लिखिए —

मारि वारीय मारि वारीय देस भड्डारि  
नेम विदेसह मेलि करि भविय लोण जिणी जत कारिय  
चऊ दमह चालीसह राय विहार किय रिद्धि सारिय  
मोगड मूकी जेण हिव जगि लीधउ जसवाउ  
हूउ न होसिइ चिहु युगे कुमरउ सरिसउ राउ (३६)

वस्तुतः पूरी रचना को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि यह काव्य कुमारपाल का चरित काव्य है जिसमें उसके जीवन की विविध घटनाप्रा और महत्वपूर्ण कार्यों के सुन्दर चित्र कवि ने उतारे हैं। काव्य में ग्रहिणा की विजय सर्वथ परिलक्षित होती है। कवि ने ग्रहिणा राज्य का विविध उदाहरण और स्वाभावगत शत्रुप्रा के पारस्परिक मेल से स्पष्ट किया है जो सामाजिक गति का प्रतीक है। सांस्कृतिक दृष्टि से तथा धर्म और इतिहास की दृष्टि से भी अस्तुतः रचना महत्त्वपूर्ण है। कवि ने रचना में काली, कोणाल, मगध, कोशाम्बी, वत्सा, मरहठ, मालव, लाट, सारापुर, कच्छ, गुजरात, सिंधु, सवालप, काश्मीर, कुरु, कंति, मामरि, कहू, जाधर, आदि देश तथा नगरो के राजाघा का उल्लेख किया है। सध उत्सव वरान जैन समाज का सन्ध में ही सांस्कृतिक पर्व रहा है। कवि ने पूर्ण कोणाल के साथ इस छोटे से काव्य में उमको सजाया है। रचना की भाषा सरल राजस्थानी है जिस पर श्रेष्ठ का यत्र तत्र प्रभाव

परिचयित होता है। मन्त्रि, पान जुधा, यश्यागमन चारां प्राप्ति मामाजित  
 बुद्ध्या वा भी कवि प्रवाग म लाया है। अत राम ममा हृदियः म महत्वपूर्ण  
 है। इस काव्य को कवि न यद्यपि राम' मना श्री है परन्तु राम क नाम पर  
 अवन काव्यपर म परिवर्तित प्रवृत्ति अर्थात् अरि प्रवागन का छाटकर अय  
 बातें नहा मितता है। मन्त्रयत १५२३ गताः तत्र राम मन्त्र रचनाया क  
 गित्य म अरि काव्या का हा खान निया जाता हाना। अथारि रचना म राम,  
 मृत्य मय युगन मृत्य प्राप्ति वर्णा नया मितन त काई रात छद्म हा मिलता  
 है। अत अद्म कहा जा गरता है कि राम तात मा युगन-मृत्य-वर्णा तथा  
 राम छद्म की काव्यपर म उप ता हाना प्रारम्भ हा गर्द हाभी श्रीर राम र ना  
 अवन मामाय अरि प्राधान्यक काव्या का हा न ना जाता हाभी। साथ हा  
 उपदा नामकरण भी पत्र क राम काव्या ना भाति राम हा किया  
 जाता हागा।

रचना क अत म कवि न भरत वाक्या क रूप म कुमारपात क इग  
 राम वा-य का युगा युगा तत्र प्रचारित रत्न श्रीर अमर हान का प्रागार्वा  
 निया है। जय तत्र मुमर् परीत अवन खान म न अवन, जब तत्र सूर्य अंश  
 रहें जब तत्र अथनाम भूमि श्रीर गागर का भार धारण करता रट्ट, श्रीर जब  
 तक रागार म धर्म विद्यमान है तथा जय तत्र अयुव तारा निश्चयता का प्राप्त  
 है तय तत्र कुमारपात राजा का अट्ट राम रागार म अान का प्राप्त करे —

मह रामह न अवन जाय जा अन्वित्वापर  
 मयुनायु जा धरद भूमि जा मानद सापर  
 धम्मह विगड जा जगह महा, धार निश्चय हाए  
 कुमारड रामह तणर रामू ता नन्द साए

अग प्रकार इत वाक्या द्वारा कवि न राम को निर्वे निपन्न निया है।  
 पूरा कृति मरम तथा छन्दार है। भावा गैत्रा प्रागाश्चि हे गन् अवन प्रमाय  
 पूर्ण है श्रीर अयार्थ अर्थ प्रवाग करना है। कुत्र मितन कर रचना छाग हान हान  
 भी राम शक्त रचनाया क गित्य म यविष्य प्रस्तुत करता है। अत कृति का  
 महत्त्व श्रीर भा अ जाता है।

कुमारपाल रास '   
 ( श्री धीतरागाय नम )

रोना

पढम जिणिएन्ह नमोय पाय मनइ वीरह सामी,  
गायेम पमुह जि सूरिराय मुणि सिद्धिहि गामी,  
समरवि सरमति क्वडि जवल वरदेवि अ बाई  
कुमरनरिन्ह तणउ रामु पमणउ मुहर्ई, ॥ १ ॥

वस्तु

चच्चनन्त चच्चनन्दन गुणह सम्पन्न  
पाहिणित्वा उवरि धरिउ माढवसि उपन्न सुणीइ,  
पुप्फवृष्टि सुरवइ करइ ए जाम जनमि उवतार,  
चगदेव चिर जाविजिउ जिणिसासणि साधार, ॥ २ ॥

वालकालि सजम लियउ गुरु विनय करन्ता,  
हमसूरि शुभ नाम दिन्न जगि जस जयवता  
मति वाडी गुणतणी रासि हउ कहवि न जामउ,  
हमसूरि शुत्तणउ चरित किम करीअ ववखाणउ, ॥ ३ ॥

मपु पडी फरसिय जाव मसि कीजइ सायर  
अन्त न लाभइ गुणह तणउ जिम चन्द दिवायर,  
पहिणउ धरीइ धजपताक् गिरि मेरु समाणा  
कुमरविहारह करउ भगति सवि मडलिकराणा, ॥ ४ ॥

सावनचमे पूतनी ए मइ ममगल दीठा,  
सम्भति कुमरनरिन्ह राउ जिनपडित्त बइडा,  
रायह कुमरनरिन्ह राय हेमसूरि बूभावइ  
माहडउ वारिउ सपलदेसि राय धम्म करावइ, ॥ ५ ॥

धरिटठमि जिम कुमरपालि ढागरउ दिवारिउ,  
छाना बाकउ करइ वात, गाडरि वधावइ,



ममता नाचर रनियमरे अजरामर ह्रुषा  
रन्या रन्या वरर भाति पाररर मन्ना ॥ ९ ॥

भरमा अन्र हरिण राम मूयर अन्र मवर  
चौप्रा कुमरररिरराजि रनि नाचर तातर  
रूष न माकृण राकि वार कृवि न मारर  
हरिणा ररिणा करर कति मुपि रमूरिगारर ॥ ७ ॥

गावा उवर पजर निया मणि अन्डर मननि  
मूर हा नवि अजरर थिया पुण नाचर मातिनि  
वावरि अन्र गाव भगरर मामनि नृ मारर  
पाणा माति जि मच्छना ए गाथा नवि मारर ॥ ८ ॥

मारमरी मरि इम उवर मारहाघ वधारर  
अक्कर इज कुमरपाव अन्मरण न आवट  
वार मरप अन्र मुणर घा वार नवि गावर  
ने मरर कुमरररि ररि मणि रररर माचर ॥ ६ ॥

कृमरि चामट इणर माननि तउ माग्नि  
रुटि न पन्ना नगाय वान अन्नि भरग मावनि  
कृमरि धाणरर चिनि वाका आनाचा  
रमूरि मरिमर विन राम उर न ररर रूचा ॥ १० ॥

जानाना रररर ए व पहणि पन्ना  
रति न आमिप नगा आम अन्नि वाकुन पन्ना  
वाचाना ररि याम तावत्रर रणा  
मरर राडर वरर भाति अन्र ररराग ॥ ११ ॥

पाररि जावन पाणा ए रर ररर जाण  
पारधि अन्त रररर रर पत्रविगणु  
कुमरन्मर निरररि रररर वारर,  
अन्वर अन्वर मवर गाव रर वार न मारर ॥ १२ ॥

पन्डणि राविप पन्डणि राविप जावगधार  
मूधर मवर राम नति विरड उर विम मणर नावर  
रन्ना तीतर मात्रिनि वन्ड मच्छ नृमरण आवर  
छाया वीकट मारर वार ए गाव गा  
राडु वरर जा मरगिनि कुमरर राडुरा ॥ १४ ॥

राजा

जूय रागि हूउ ननरिः मयति विघ्रागु,  
 अडनि भमता चार वरिम पाटव मनि मोगु  
 दपो रूपग जूयतणउ नवि पेनइ सारि  
 जूमारो नरि जूय रमइ, नवि वानइ मारि ॥ १४ ॥

ममबमणि साऱाम राय, पामिउ दुऱमणाय,  
 दाठा नरगऱ तणाय भूमि नरवइ पुग सणिय  
 धामिपभायण तणइ दटि बत्तोस विहार,  
 राय करवइ कुमरपान जगि तिहुअणसार, ॥ १५ ॥

दपण मऱिरादान तणइ जाववकुननामा,  
 विरिउ ऱावायणि दुटठ नेरि वारनइ विणासा  
 रायामेऱ नाच सऱ हिव मऱिदा मल्हइ  
 मतवाना नवि मधु करइ, भूमला न पेनइ, ॥ १६ ॥

गणिका गनणु निवारिउ ए नरवइ निय राजि  
 छडविवदानमगा राग लागे सवि काजि  
 वगा काधी माइ सरिम तइ कुमरड राय  
 ता पग पूजइ जिणह मुत्ति वऱइ गुरु पाय ॥ ११ ॥

वेगावमणिऱ गमइ अरथ जा पुरिस अहऱउ  
 पाछइ भूरइ मनहमाहि जिम वणीय वयनउ,  
 जारह जणणी मऱ भणऱ ए माभलि वछ वात,  
 निदचइ जावडउ जाइसइ ए जइ पाडिमि पात, ॥ १८ ॥

नीमड चार न देमभाहि जिम सुममइ रकु,  
 धरि ऊघाडे वारणइ लोण मूयइ निसकु  
 परस्त्रीदामिहि रावणइ ए दिउ नरगि पीघ्राणु  
 मरयनऱणि रामदवि विउ अरह वहाणउ ॥ १९ ॥

नियनिय मऱिरि भणइ नारी, माभलि परतार  
 नारि नियारिय जा अत्तउ हिव जाणिसि नार  
 रणऱ धरणी भणह नाह, सुणि धम्म विचारा  
 मनुमुनिह हिव करि न माभि, परस्त्रा परिहारो ॥ १० ॥

वस्तु

जूय वारिय जूय वारिय मससजुत  
 गुराणागु गवि जाणीइ, वमवसण ऱमणा न नीमइ,

वाणागनारि दुगारि करि वाणि पानउ हर ॥ ३१ ॥  
 भगन कुमरन भगन कुमरन रिगह धरधारि  
 करि जाना ह पानयन मामि पाणि ह वा न माणउ,  
 जिहा कुम रिग रि उरगिउ रिग पानउ म नउ,  
 गिरि मनुज र रिगिगिहरि वर पंगउ करइ, ॥ ३६ ॥

राजा

मानिधि मागणरि तगुन मधि वाधा जाउ,  
 पाणि धारा नारि करन परि धरि नम वाउ,  
 वापी जंगल राउ धरु गहु मामि पगाउ  
 प्रनउ वाणि शवाविधन इमगुरि गिउ राउ ॥ ३७ ॥

वासा वासन मगध न्य वासधा वच्छा  
 मरुत मावन रासन मारापुर वच्छा  
 गिधु मवानन वागमार कु वनि गद भरि,  
 वाहरन वाहरिम मगुन जागिण्य तावपरि ॥ ३८ ॥

पद्म

मारि वाराय मारा वाराय न्य अट्टारि  
 न्य विगन मनि करि भविउ ताव जिगि वल कारिय  
 धउमंहु वावागन राउ विहार विप रिडि मारिय  
 मोगड मूका जग हिव जगि वाधउ जगवाउ  
 बूउ न हाविन वि युगे कुमरड गरिमउ राउ ॥ ३९ ॥

राजा

विह मुधण जगु वानि मइइण्डि शूजरराइ  
 कृतयुग वय धरवारि नैव मंजु वनिवाइ  
 मणिय विभावणि वम्मनागि जिम वम ववाभरि  
 दरुमि गिर मिदववव जयामह नराभरि ॥ ४० ॥

शुनिमववमा निगुणभान-गुनध वर-भाणू  
 विरुम वरुडरि वरुतन न गगार नवाणू  
 पाणि वरुउ कुमारपातु वनि भामममाणउ  
 मंइइ रगुरंग जागु तगइ वाइ राउ न राणउ, ॥ ४१ ॥

मइ ठामन न वन जाव जा वर-विवापर  
 गपनायुता धरइ भूमि जा साउइ सापर



## पंचपाण्डव चरित रामु १

१४वा गतांगी में प्रबन्धात्मक गीतों में लिखे गये ममराराम के पञ्चाशु १५वी गतांगी की सबसे प्रमुख कृति श्री गान्धिभद्र मूरि विरचित पंचपाण्डव चरित रामु है। राम परम्परा का यह राम एक प्रमुख कथा है। विद्वाना ने इस कृति पर विहित प्रमाण डाना अवश्य है २ परन्तु स्वतन्त्र रूप में हम इस रचना का पाठ हान हा में प्रकाशित गुर्जर रामायणा में प्राप्त होता है। सम्पादना न इस पाठ का बहाना का एक प्रामाणिक प्रति में उपलब्ध हान वान पाठा में से एक कहा है। रचना की प्रति महाराज जमविजय के पास सुरक्षित है।

ये गान्धिभद्र मूरि भरतेश्वर-बाहुवना राम के रचयिता से भिन्न कवि हैं। अब तक उपलब्ध रचनाओं में पंचपाण्डव चरित रामु न कर्ण विषय कथा वस्तु छन्द और भाषा सब दृष्टिया में नवीन योग दिया है। गान्धिभद्रमूरि पूर्णमा गच्छ के थे। यह राम नर्मदा के किनारे स्थित नाम्दार नामक नगर में लिखा गया कवि न स्वयं भी अपने समय के लिए परिचय दिया है जिसका ज्ञान सम्पादकाल में भी मिलता है। ३

शास्त्रिणां हिन्दी जैन रचनाओं में अब तक इस धार्मिक कथाओं, चरित नायका पुराण पुरुषों एवं उपलब्ध शास्त्रि म सम्बन्धित विषयों का ही विवचन मिलता है परन्तु पौराणिक साहित्य को कथा-वस्तु के रूप में स्वीकार करने वाले थे गान्धिभद्र मूरि ही हैं।

१-पंचपाण्डव चरित रामु गुर्जर रामायणी G O 5 CXIII बहाना पृ० १-३४।

२-प्रासंगा कवियों का व० का० नाम्दार पृष्ठ २६६।

३-गु० रामायणी पृष्ठ ३—It was composed in V S 1410 i e 1351 AD and the matter of the poem is based as the poet says on 'तद्वचनव्याजमुत्त' Thus the date of the composition is mentioned by the poet himself

प्रस्तुत राम में पाषों पाण्डवों क चरित के रूप में सम्पूर्ण महाभारत का सार है। पाण्डव चरित जैनियों द्वारा विरचित मसूहत काव्या में भी मिलता है। गुजराती विद्वानों ने भी महाभारत लिखा है। पंचपाण्डव चरित राम की कथा महाभारत की कथा में मन तो मानी है, परन्तु कुछ रचना स्थिता, चरिताभा और प्रमुख पात्रों को कवि ने अपने जैन धर्मानुसार मोड़ा है तथा उर्मा क अनुसार उसकी सृष्टि भी की है। रासकार ने प्रसूत चरिता को जैन परम्पराभा के ताने बाने में उलभाकर कथा गूढ प्रस्तुत किया है।

पूरी कथा १५ ठवणि में विभक्त है। ठवणि गण सगं विभाजन का सूचक है। भरतेश्वर-बाहूवली राम, १ ममणरेहा रास २ भाति में ठवणि का प्रयाग मिल जाता है। प्रत्येक ठवणि के बाद रासकार ने वस्तु छुट्टा दिया है। सिर्फ अन्तिम ठवणि की छोटकर जिसमें उसने बहुत कुछ अलग नहीं रखता। कवि ने ठवणि और वस्तु को मित्रा किया है।

कवि ने राम की कथा का प्रारम्भ नेमिजिनेन्द्र तथा सरस्वती की वन्दना करके पदवान् द्वितीय ठवणि में ही किया है। गंगा और गतनु का प्रेम तथा गंगा का उनकी अग्री प्रकृति में रुठ जाना व अपने पुत्र गागेय क साथ रुठ कर अपनी माँ के यहाँ चले जाना का वर्णन मिलता है। गागेय आश्रम में गतनु ने गिकार क लिए विराध करना है —

हरिण एक हरिणी सु खेनर,  
कामन वर्णनि हरिणी बानर, पति पवि प्रिय पारधीउ  
निनु निनु राउ अहहइ चानइ  
रामि चढो राणी इम बुन्दइ, प्रियतम पारधि मन बरेउ  
धनुष बना माउनेउ पढावइ  
जाव ज्या नियचिति रहावर, बोधि चारण मुनि तणइ ३

वस्तुतः जिनधर्म ही स गे मां है यह जानकर गंगानन्द ने अहेरी पिता को अर म रात्रा व अनेम मुद्र करन का तैयार हो गया। गंगा ने धाकर गंगा का गान्त लिया। गंगा क न अान पर गतनु एक धीवर कथा पर मग्य हो जाता है और गंगा का प्रतिभूत करा कथा सत्यवती का विवाह उनके साथ कर जाता है। वषण की मगता दृश्य है —

१-भरतेश्वर बाहूवली-राम श्री गाधी।

२-हिन्दा अनुगानन पय ६ अद्व १-४, पृष्ठ १००-१०३।

३-G O S CXIII, पृष्ठ ३८।

सामलि सामी घम पर मूनी, तुम धरि अग्रद्व गंगा पूतो  
मद बेटी जउ तुम्ह रेगी, तउगइ हयि हूय भरेकी  
कुसईसह परउ मडणु, राज करेभि गंगा नणु  
धीय महारी तगा जिवात, त सवि पामद हुय करान १

सत्यवती का नववा म म पहना कर्मों के दोष म बचपन म ही भर  
गया व दूसरा कुमार विविध वीय हुआ जिनन कागाराज की संघा, संघानी  
श्रीर संवात्रिना तान कायाघा म विवाह किया । जिनक क्रमण विदुर, पाण्डु  
व धृतराष्ट्र हुए । धृतराष्ट्र न गाधारा म श्रीर पाण्डु न माद्रा म विवाह किया ।  
कुत्ती के कण कुमारी अस्थया म उत्पन्न हुआ मरी अन्तया जैन महापुराण  
में १ एक विद्याधर का अ शूरी म सम्बन्धित है । यना कवि न इतना हा र्णन  
किया है कि तिम प्रसार पुण्यवती भा पाव करत हैं । कर्ण मङ्गला म डान  
कर गगा म बना लिया गया —

मरिणीय आसी पड कुमरि आपणीय जि धवणी  
मन्धिर बनि कर्ति हई पुनू जायठ रमणी  
गग प्रवाहित रयणु माटि घानेठ मङ्गल  
कीजइ पातकु पुण्यवति कई माज कि रीम

श्वर गाधारी क १०० शौरव पाण्डु क / पुत्र पाहवा म ईर्ष्या रचन  
लगे । अतु न धनुर्विद्या श्रीर रापारध" (मत्स्यपथ) में लफन उतर ।

धनुर्ष ठवणि में कवि न अथा म राजपुत्रा क शौर्य प्रर्णन का आया  
जन मक्ष पर किया । युधिष्ठिर ता अजतिगत्रु थे, भीम दुर्वाधन म गगा युद्ध  
हुआ, अतु न श्रीर कर्ण में इन्द्र युद्ध अर्जुन क रन वाक-वाग्गा म नर्हा हो गया —

अरजुन वात, र अर्जुनीन, अरजुन भूमिगि मद गु हीर  
अरजुन मरगी मेडि न कीज, निवचुन मानि गरव कहीजइ  
इम आपणु घणू यवाण, शानि न निवचुन तणू प्रमाणू  
मद गगा उगमतइ गीय लाधी रतन भरी मङ्गल २

अथा म भा अतु न त्रियो हुए । श्वर द्रोपदा का स्पर्षवर हाता है  
श्रीर पाचा पतिया म विवाह तान ता काणु चारणमुनि द्रुप का पूर्वजम म

१-वही, पृष्ठ २ ।

२-उत्तरपुराण, पृष्ठ ३४४, द्वात म० १०४, श्री गुणमन्त्रार्थ, भारतीय  
पानपीठ कानी ।

३-G O S CXIII, पृष्ठ १३ ।

सम्बन्धित बनवाते हैं। प्रत्येक पाण्डव की नारद द्रौपदी के साथ अविधि बाध दत्त हैं। उन्मत्त पर अर्जुन का १२ वर्ष वन में रहना पड़ता है जहाँ वे वैतथ्य पर्वत पर आश्रित्य का अभिनय कर रहे हैं। वहाँ अपने मित्र चन्द्रचूड़ की बहिन की व सहायता कर रहे हैं। आगे कवि ने पाण्डवा का जुआ में अपकर्ष व वनवास दिखाया है। समा में द्रौपदी का वस्त्र हरण होता है। आगे वनवास में भीम का राक्षस का मारना, लाशाशुभ्र में बचना, नाम का हिडिम्बा से विवाह आदि का वर्णन मिलता है।

दुर्योधन पाण्डवा में प्रियवत् का भ्रूण पुन सहायता मागता है द्रौपदी क्रुद्ध होती है। फिर अर्जुन विद्याधर के लड़के का हराकर इन्द्र से शस्त्र प्राप्त करता है। दुर्योधन की बहिन के पति ने द्रौपदी का हरण किया अर्जुन उस भी हराता है। दुर्योधन ने पाण्डवा के त्रिनाग का घापणा की। एक पुराहित के लड़के ने कृत्या राक्षसों को उन पर छोड़ी। नारद की आज्ञा से पाण्डव माधना में लग गये। विराट के पास पाण्डवा का अधिवाम रहा। कृष्ण दूत बनकर दुर्योधन के पास गया। दुर्योधन ने माना। भयकर युद्ध हुआ। अमर्य गाढ़ा काम आया। अन्तिम ठवण में सब पाण्डव जैन दीक्षा लेते हैं। नमिनाथ उनका प्रवर्ज्या दत्त हैं। परोक्षित की हस्तिनापुर का राजा बनाकर धर्म बाध उन्हें गंगा देकर उनका पूज्य भव, सुरभित, सतत देव मुमति और सुभद्र आदि नामों से स्पष्ट करता है। उन सन्ने गंगाधर के समस्त साधु वृत्ति स्वाकार की तथा अस्तुत्तर स्वयं से च्युत हुए पाण्डव वन और अब पूर्णता को प्राप्त हुए।

इस प्रकार सम्पूर्ण महाभारत का कवि ने ७६५ छन्दों में मजाया है। भाषा का सरलता जन-साधारण के लिए राम का बाधगम्य होना तथा पौराणिक कथानक का नई रखाया में बाधना कवि की प्रतिभा के द्योतक हैं। पात्र धारण हैं। पांच पाण्डव द्रौपदी, कुंती दुर्योधन कर्ण आदि। पात्रों में यह बात होता है कि कवि ने साधु असाधु दाना प्रकार के पात्रों का वर्णन कर असत्य पर मय का विजय दिखाई है। कवि के प्रयाग मौलिक हैं। जो भाषा की दृष्टि में मध्यकालीन गुजराती या राजस्थानी के मौलिक प्रयाग एवं सामाजिक तथा साम्प्रतिक वातावरण प्रस्तुत करते हैं।

जहाँ तक कथा रूढ़ि और कथा परम्परा का प्रश्न है कवि ने दाना का सम्यक निर्वाह मौलिक अनुष्ठान के रूप में किया है। पाण्डवा का कथा परम्परा का प्रारम्भ अथवा साहित्य से ही हो जाना है। आरिष्टन रिमर्क इन्स्टीट्यूट पूना में सुरक्षित हरिवंश पुराण के यात्रक, कुंज मुद्र और उत्तर इन चार कांडों



म गुरु व यात्र वादा म पाण्डु चरित वर्णन मिल जाता है । <sup>१</sup> जन महानुराण म <sup>२</sup> भा पाण्डु का कथा का नमिनाय क प्रमग म धार्मिक उल्लस मिलता है । धामर भण्डार म यग वर्णन का विद्या महाराथ्य लगव का मिता है जिगम कवि न ३६ मंधिया म पाण्डु कथा का यणन किया है । इस प्रकार कथा परम्परामा (Cycle) क रूप क्रमग परिवर्तित हान रह है । प्रस्तुत राम म रक्षनाकार न धनक मयना पर कथा म भौतिक घटनामा का नवानय किया है तथा धनर मनावाच्छिद्रन माड स्थि है जा घटना वैधिय तथा कथा म भौतिकता का मृष्टि करत है और वैधाय मन्माभारत म मित्र है । कवि न कथा का मागार मन्माभारत का रथा है पर मरी परिवर्तित कथामा पर जन धम व धर्मिमा का प्रमाय मन्थ मन्थ है । बुद्ध नवान घटनाओं म प्रकार है —

- १—गगा का गानतु का घट्ट प्रवृति का विराध करना तथा रुठ कर विवृष्ट गमन गागेर का धर्मिमा प्रमा गना व जन धर्म ह्वाकार करना तथा धरने हिमर पिता म गुष्ट करना । कुगा व पाण्डु क पूर्व प्रम व मत्तानापति का प्रमग तथा कु वर पराणा न राधावध का प्रमग ।
- २—द्वीप का स्वयवर म उमक हाथ म जयमाना पाचा पाण्डु का मन में जा गिरना और धारण मनि का द्रुप का शीप का पूष भव ममभाकर घट्टय हाना । <sup>३</sup> हरिवग पुराण म कवि न धर्मिमा म प्रभावित हा मत्स्य वध क म्धात पर धनुष घट्टान का का कल्पना का है <sup>४</sup> पर प्रम्नुत राम म मत्स्य वध भी <sup>५</sup> व जयमाना वरग भा ।
- ३—धनु न का वनवास म वतय (वयष्ट्ट) पवन पर जाकर धर्मिनाय को नमन करना धार मणिपूष का बन्ति का ह्वाकर पुन उसक पति का रना ।

१—प्रबध ग साहित्य भा हरिवग वाङ्म पृष्ठ ६८ ।

२—महानुराण—उत्तरपुराणम् श्री शुगुभद्रावाय भारतीय पाठपाठ कागा सास्वरण पृष्ठ २८० तक ७३-८० ।

3 Then the reference as to this strange incident is made to चारण्य sage, who was there. He narrates the previous births of Draupdi and informs how she staked all her merit for a soul determination of realizing five husbands in the next birth—G O S CXIII page 352

४—प्रबध ग साहित्य भा वाङ्म पृष्ठ ६८ ।

—युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ में गाति जिनद्र की प्रतिमा का भवस्थापन करना । प्रियवत् का प्रसाग तथा पाण्डवा का पुन अपने असली स्वरूप को ग्रहण करना ।

—पाण्डवा के जाने पर कुन्ती व द्रौपदी का नमाकार मंत्र का ध्यान करना । पुरोहित का पाण्डवा पर कृत्या छोड़ना तथा पुनि का भाकर कृत्या से उनकी रक्षा करना । कानकुमार व जीवयन्ता का अभि विसर्जन ।

६—पाण्डवा का नेमिनाथ के उपनाम स निर्वेत्त हाना तथा दाशा ग्रहण । धर्म घोष का पूर्ण भव बताना व उनका निर्वाण प्राप्ति हाता प्राप्ति घटना मीनित हैं ।

रास में अनेक वर्णन मिलते हैं जो जन भाषा में हैं । सरनता और सहज अभिप्राय ही इस काव्य की बसोटी है । राजपुत्रा के द्वन्द्व युद्ध एवं उत्साह मूलक मुद्रामा व चित्रण बड़े प्रभावशाली बन पड़े हैं —

कवि लिखाइ स्याडा सरमु, कवि तुरगम जाणइ मरमु  
चक्र छुरी किवि साबल मालइ, किवि हृदियार पडता भानइ  
पहिलु सरमइ धरमह पूना, जेह रहइ नवि हाइ शत्रा  
अठिउ भोमु गरा परतउ, तउ दुयोधन मिउइ तुरतउ

लोह पुरप छइ चक्रि भमतउ, पव वाणि आहणइ तुरतउ  
राधा वधु करीउ लिखाइ तिसउ न पाई तीण अखाइइ  
तीछ हूफा अठइ करणू अरजुनु पामइ मूकरि मरणू  
रोसि उयइ बेउ भूभवा, रगरमु जाइ दत्री देवा  
धरणि धनक्कइ वाजइ गयणू हारिइ जीतइ जय जयवयणू  
हीया अस्तक्कइ कायर लोक, सततणा मन करइ सशाव  
जाणे बीज पडि (अ) अकालि, जाणे मुद्र खुश्या कलिकान  
(ठगणि ६ पृ० १३)

कवि का स्वयंवर, नगर तोरण, अनेक वाचा और उत्सवा का वर्णन बड़ा प्रवाहपूर्ण बन पड़ा है —

बाजीय अबक शुहिर नीसाण, दिणयरो रेणिहि छाईउए

1—According to the Jain Tradition the Rajasya ceremony consist in razing a temple dedicated to one of the Tirthankaras where the kings are invited  
G O S CXIII page 354

पहुतउ जाणाउ ५८ नरिणु द्रुपदु पदुषण सामना ए  
 तयाया तोरण बदरयान, नयण उनाधिहि छाण्ड ए  
 मणि मय पूतना मानन धम, मातिउ चउव पूराविया ए  
 कृकय चण्णि म्दुडउ त्तिवारि, धरि धरि तारणु उभाया ए  
 नयणि पम्मारउ वदु नरिणु विरि धमराउरि अयतरा ए

कवि क र्णा घोर पुण्य नाता क रूप वर्णन म कर्नात्मकता मिलती है ।

पाषाणा का शृंगार वर्णन अत्यन्त स्पृहणीय है । गजान नयन, मुरभित कवरा,  
 किम्बूरा तिनव गुणर कवणग नूतुरा का र्णमुन घोर तावून का भाति तान  
 अयर सभा म नूतनता है । र्णा घोर पुण्य नाता क रूप वर्णन र्णित —

द्रुपदु रायण २५८ रायण तगा कृ यारि  
 तमु रूपण तामनिहि विहउ भूयणि कण तारि नत्थाय  
 मामा कतु ररि कुमुमह मूण कानि कनेउर भनह्वण ए  
 नयण मन्तुगाय काजव रह तिनउ कम्तुरा यम गिपडीय  
 करयने ककण मणि भमकाद जाणर फावाय पहिरणु ए  
 अहर तंवाताय द्रुपदा बाव पाण नेउर म्णमुण्ड ए

घोर पुण्य वर्णन म —

सीति अमर बवान धनु क्ति कुमुमह मान  
 धनुक्ठि कुमुमह मान विरि गु मयणि धायणि धावाह  
 काण २८ कण नरिणु मदयणि, पदुतु इम गभावीयह  
 (२४गि / पृ० १५)

छूत क्रीडा म हाण ण पाठया का घोर र्णा म द्रोपदा को कण पकड  
 कर पाष कर तान का क्ति न अत्यन्त प्रभावशाली वर्णन किया है । भाषा की  
 सरलता घोर वर्णन का चित्रात्मकता म वर्णन घोर भी सजीव हा उठा है —

राखिउ ए राड जूठितु विदुरण कयणु न मानीउ ए  
 हारीया ए हाषिय धाण भाश्य हाराम राजि सड ए  
 हारीय ए द्रुपदु धीय उणालिय सवि धामरण ए  
 ताण्णाय ए धमि धरवि, दवि दुसामणि दूजणिहि ए  
 धाणीय ए सभा मभारि, दुराय द्रुपाधन इम भण्ड ए  
 'भाविन ए धावि उलयि द्रुपदि बद्धमिन मुमतथ ए'  
 इम भण्ण ण्णियद मरायु द ( - ) दूज तु कुलि सड ए  
 कुपीउ ए काण्वा धाय अण्ठात्तर सड साडीय ए  
 (४४गि ६, पृ० १७)

और भी अनन्य काव्यात्मक स्थल है। द्रौपदी का करुणाजनक वर्णन कवि ने किया है। कृष्ण के दूत बन कर जान पर भी दुर्योधन उन्हें "भुइ लड़ी भूयवलि एक चास हिवए न पामइ" गुप्त उत्तर देता है, तो महायुद्ध की तन्मयारिषा हाती है सारा दृश्य युद्ध में बदल जाता है। युद्ध वर्णन, वीरता एवं उत्साह के अछे चित्र कवि ने उरेह ह। सैय वर्णन और युद्ध की प्रतिशयोक्तिया की चमत्कारिता दृष्टव्य है —

दुरयोधनु प्रति मत्सरि चडोउ, जाई जरासि धु पाए पडीउ  
'मुक्त रहइ पहिनउ त्तिउ अगेवाणु पडव कह दलउ जिममाणु'  
ई हा सेतानी गगेउ प्रह त्रिहसी जुडिया ल बउ (पृ० ३०)

हाया घोडा और असह्य पैदल सेना का युद्ध वर्णन, सिरा का कट कट कर गिरना और नाचना, सामता की गव मिश्रित हसा कुरूपेश का और भी उत्साहपूर्ण बनाती हैं। वर्णन की अनकारिता तथा अनुप्रासात्मकता दक्षिण —

दलमिलीया कलगलीय सुहड गयवर गलगलीया  
धर धसकीय ललवनीय सेस गिरिवर टलटलीया  
रणवणीया सवि सख तूर अबर अक्चीउ  
हय गयवर खुरि खणीय रेणु ऊडीउ जगु भपीउ  
पडई बध चलबलइ चिध सीगिणि गुण साधई  
मइ वरि गइ वर तुरगि तुरगु राउत रण रु धइ  
भिडइ सहड रडवडइ सीम धड नड जिम तच्चइ  
हमइ धुसइ ऊमसइ वीर मेगल जिम मच्चइ  
गयवडगुड गडमडत धीर धयवड धर पाडइ  
हमसता सामत सरमु सरगेलि लिखाडइ

जयद्रथ के लिए प्रतिज्ञा अर्जुन का शौर्य और द्रौण की वीरता दृष्टव्य है। कहाँ कही वीरता के भी दस्तन होते हैं। कवि ने कर्ण, शल्य, गकुनि, दुर्योधनसबके बध का वर्णन किया है —

पाडइ चिध कबध बध धर मडलि रोलइ  
वाणु विनाणु विवाणु केवि अरियण धधोलइ  
कुह करउ गाविदि दवि रधु धरणिहि खूतउ  
भारीउ धरजुनि करणू वूडि रणि अणभूभतउ  
शल्यु शकुनि बउ हणाय वेगि नकुलि सहदेवि  
सरवरमाहि कडावीयउ दुरयोधनु दैवि  
राइ संनाह समोपीयउ भोमिहि सु भिडउ

गन्तव्यं गन्तव्यं जाय मति मातु गु वदित्

गामु गिषदा तगुत्तामु ध्नाउ धनु गायत  
पाय परामव न प्रमि गति मातु विराधात् (पृ० ३०-३२)

इस प्रकार तृतीय कर्ण द्वार रोड वाजय छात्रि भावा व चित्र  
भाव कर मन म पात्रदा का जन भाषा द्वारा मधुगुण राम का समाप्ति गति  
श्रीर निर्देश भाव म कर दिया है । धर्मधाय का कथन उत्तमनाय है —

उत्तु वरन नागु गामाय ए नमि जिगुगर्त् ए  
मानता गामि रवागु रिस्ता ए गामयन्नु परद ए  
वस्ताय गि घमात्रि नागिक ए जार्त्त जिगु नम ए

गामाय गगन्त पागि वाक्त् ए अरिनित्रि प्रनु रिक् ए

वाक्त् गुर् धर्मधायु पुत्र भरि ए वाक्त् ए कुगुवाय ए  
वनद नि अचत् गामि ब्रव ए वाक्त् ए भाविद्या ए  
गुरदत् मनुत् ए मुमत्रिऊ ए गुमद् गुचासु ए  
गुगुत् यगाधर पागि हर्गनित्रि ए वाक्त् ए प्रनु परए  
वागुगावदि तनु ए वाक्त् ए वरए रयणावता ए  
मुकुनावदि तनु मारु च्चत् ए मित्रिवादित्र ए  
पाक्त् धाविदरधमातु तनु तरा ए अगुनरि मविगिया ए  
यवायरा मुष्टि एधा वक्त् ए नवि ए मिरागुरि पागिगत् ए  
मानता नमिनित्रिवागु वारगु ए मवगुत् गुगि वयगि  
मनुत्रि ताधि च्च पाक्त् ए पाहव मिदि गमाए  
(श्रुति ११ पृ० ३२)

इस प्रकार उक्त उदाहरण, म स्पष्ट न जात्रा है कि कवि न क  
धन्नामा का परावरित वाक्य करत हुए ना नात्रि अत्रन किया है ।

प्रन्तुन राम क छत्ता म वक्त् वेविष्य है । मधुगु रचना का ११  
छवगि १ म विमन्त्र किया गया है । इत राम का छवगि में विगयता यह है

१-छवगि is derived from Skt म्नादिना Plt छवगिना It  
forms the narrative part proper, and in that sense  
resembles a कव्च of Ap and OG poetry while कम्पु

कि उसका अनुगमन वस्तु छन्द करता है। भरतेश्वर बाहुबली रास के छन्द से इसका पर्याप्त साम्य है। प्रथम ठवरिण या ठवरिण म २२ कडिया मे १६+१६+१३ मात्राए है तथा २३वी कडी म वस्तु छन्द है। द्वितीय ठवरिण मे चौपाई तथा उसके साथ द्विपदी भी, अत यह छन्द मिश्र बंध कहा गया है।<sup>२</sup> तृतीय म रोला है। चौथी पाचवी म दोहा चौपाई है। छठी ठवरिण के सम चरण म दोहा तथा विषम मे चौपाई है। समचरण के अंत म ए मिलता है। दशौ सबैया की भाति प्रयुक्त चार कडियां भी इसा ठवरिण मे मिनती है। पुन समचरण मे दाहा और चार चरणो के साथ एक हरिगातिका भा मिलती है और अंत म वस्तु छन्द है। इसके नाम मे ही कथा का बाध होता है।<sup>३</sup> ७वी म सारठा और ८वी म २३ कडिया तक गुड सारठ मिलत है, जिसके विषम पं म अनुप्रास मिलता है।<sup>४</sup> ९वा से १४वी ठवरिण तक चौपाई ही मिलती है। वस्तु छन्द सबके साथ मिलता है। इस प्रकार वृत्ति मे छन्द वैविध्य स्पष्ट है।

सूक्तियाँ — रास मे अनेक प्रसिद्ध सूक्तियाँ है, जो उल्लेखनीय हैं।

- (१) किम रयणायर हीयइ तरीजइ
- (२) क्रमि क्रमि जु वरिण तिरिण पसरीजइ बीजतणो ससिरेह जिम
- (३) कीजइ पातकु पुण्यवति कइ लाज कि रोस
- (४) वाधइ पचइ चद जिम पडव गुण गभीर
- (५) मच चडया सोहइ जिमचद
- (६) कु डल सरिसउ लाधा बाला २कु लहइ जिम रयण क्रमालो
- (७) किमु न कीधइ रात्रि भवसरि लाधइ परमवह
- (८) दवु न गिराई तैवु गिराह पुण्युनइ पापु  
सताप सुयसह करई पुण्य हीन जिमराय रोलाई  
दारिद्र दुक्खु केह भरई वृष्णा विज्जि गिरि सिंहक ठोलइ

❧ is a conclusive link verse, which sums up the contents of the previous ठवरिण and the ठवरिण to follow

G O S CX.VIII भूमिका पृ० ७।

२-गुजर रासावली पचपडव चरित रासु पृष्ठ १२-१४।

३-The वस्तु metre as its very name expresses to a song of the outline of the story It is a miniature itself, the first half of the first line always being repeated to signify that it is a छन्दपद। G O S CX.VIII page 7

४-वही प्रथ पृष्ठ २०-२२।

- (६) भिच्छ मन्त्र रश्मिन् गाम धन् न जिम न्चक  
इमं पुमं धममं वार मगन जिम मन्चइ

प्रभुत राम का भाषा गरन हिन्ना है जिमम प्राचीन राजस्थाना, जूना  
शुभराता प्राप्ति गन्ना ता चहुपायन मिनता है । धना भावा का सरलता म  
ध्यम कर र्ना शीर धरती धमिधयति म पूर्ण ईमान्तारी रयता तथा उम  
झिष्टता म बचावर जन गाधारण क निण गुनम बाः दना हा मच्च कवि व  
कविता का परिचान हाः । इम कृति म मनायदयद धारंकारिता तथा  
कदा-वाजिर्षी नरी म म्यम जा भा है यह जनता का वाक्य है । जिमम  
मानव मात्र क निण मन्त्र है । १/१ का दनान्ना क राम म भरन्वर बाहुवना  
राग क बाः म्ना राग मन्म महन्पूर्णा है । भाषा म तन्मम दान्ना का पन्ना  
विगत वैमान पर मिनता है । गाय म ही धमधन्ना क गन्ना क तन्ना उन्नाहरण  
मिन जान है । गरन हि । क पुत्र उन्नाहरण म्म प्रार है —

- (१) धागइ द्वार माहि तु वाता पंच पाण्डव तगड धराता  
(२) हरिणु म्म हरिणुा गु मन्त्र, कामन कर्णु हरिणी बोन्द-  
पनि पणि प्रिय पारधाउ ।  
(३) पूदर राजा कहिममि कर्णु इणि वणि कणाट कारणि  
कवणि वातइ मग मन्म मर्दय  
(४) गाधउ जाणुइ त्रिण धम मागो तउमनि जुनण तगइ विरागा  
गगार्णु वणि कण  
(५) म्मन्हारा गुन मिणुगारा गामा म्मइ धवन क धारा  
कु म्मह कर म्महणू राज करणि मगानदणु ।  
(६) हरिणुाग्नि पुरि कुर नरिं करा कुन म्मणु  
मन्त्रिहि म्नु मुन्नाग सातु द्धमनरवण सातणु  
(७) जनम म्मन्त्रु मुरवरइ नाचइ धमन्त्र बाव  
कु म्मि वाज म्मणुयन करणिहि ताव कमान  
(८) विमु म्मन्त्र कुरवापनिं भामह भात्रन माहि  
धमन्त्र ह्मन्त्र परिणामिउ पुमिहि त्रिउ पुनाइ  
(९) धरतुन वाव र धनुवान धरतुन म्मिति म्म मु हान  
धिणु । र धिणु र म्म विनाणु पंच पण द्धइ कणुवाणु  
(१०) दे राजस म्मम धागलि बाव म्मरिति तन्नु पूमउ वाव

वस्तुत आदिकालीन हिन्दी भाषा का शास्त्रीय रूप धीरे धीरे किस तरह किन किन इकाइया (Units) में बनता गया, उन सब स्रोतों की सूचना हमें इस कृति में उपलब्ध हो जाती है। राम का उद्देश्य पाण्डवा के चरित पर प्रकाश डालना है। इसके अतिरिक्त कवि ने राम रमण व क्रीडा के लिए भी बनाया है—

पडव तणउ चरोतु जो पढए जो गुणए सभलए

पूनिमपखमुणीद सालिमद ए सूरिहि नीमिउ ए  
देवचद्र उपरोधि पडव ए रामु रमाउलु (१५ ठवणि, अ तिमाश)

इस प्रकार प्रस्तुत कृति को कवि की गैली और भाषा की दृष्टि में एक उत्कृष्ट कृति कहा जा सकता है।

---



पञ्चपटव चरित्त रासु १

( रचयिता—नातिभद्र मूरि )

[ वि० सं० १८१० ]

	नमिर्जिगिण्ट्ह पप पणुमवी	
	मरमनि मामिगि मनि गमरवी	
	थ विवि माठी प्रणुमर	॥ १ ॥
6	आणर द्वारर माणि जु वाता	
	पचर पटव तगुउ चराता	
	हरवि हिया नर हूं मणुउ	॥ २ ॥
	रासि रमाउतु चराण शुणुगजद	
	किम रयणापद नायर तराजद	
	मानिधि मामगण्डि तगुण	॥ ३ ॥
10	आणि जिणसर वरर नल्लु	
	कुन्तरिदु हूं कुन्मटाणु	
	ताणु पुनु हूं नाधियउ	॥ ४ ॥
	तीगद थापिउ तिहयणुमारा	
	बीजउ धमराणुरि धवताग	
15	हयिणुणररुण वनीण	॥ ५ ॥
	तिगिणु पुरि हूं मति जिणेम	
	मपण मतिवरर परमम	
	चक्कवणि किरि पचमउ	॥ ६ ॥

१—विण-गुर्जर राषावना-नायकवाट धारिण्टव धयमाता वटासा सा०  
१८ पृ० १-३८।

(8) रयणापद a slip, the MS makes use of Padī matra

- 20 तिणिए कुलि मुणीय सतणु रामो  
भूयबलि भजइ रिउभडिवाभो  
दाणिए जगु ऊरिणु करए ॥ ७ ॥
- अन्नदिबमि अाहेडड चन्नइ  
पारधिवसणु मु विमइ न मिल्हइ  
अु मेल्ही दूरिंहि गयभो ॥ ८ ॥
- 25 हरिणु एउु हरिणी सु खेलइ  
कोमलवर्षणिए हरिणी बोनइ  
'पलि पेखि प्रिय पारघोउ' ॥ ९ ॥
- मर साधी राउ केडइ धाइ  
हरिणउ हरिणी सहितु पुनाइ  
ऊजाईउ गिउ गगवणे ॥ १० ॥
- नयणह अागलि गयउ कुरगु  
राय चीति जा हूयउ विरगु  
जार वामू दाहिणउ ॥ ११ ॥
- 35 ता वणिए पेखइ मणिमइ भूयणु  
सीधे निवमइ नारीरयणु  
खणिए पहुतउ राउ धवन्नहरे ॥ १२ ॥
- जहनरिह केरी धूय  
गपा नामि रइसमरूप  
ऊठइ नरवइ मामुहीय ॥ १३ ॥
- 40 पूछइ राजा 'बहि ससिवयणिए  
इणिवणिए वमीइ वारणिए वमणिए"  
बोनइ गग महासईय ॥ १४ ॥
- जो अम्हारु वयणु मुणेमिइ  
निदिच सी वरु मइ परिणोसिइ

(19) The MS writes स and म similarly, thus मुणीइ can be read सुणाइ, ओ in रामा and भडिवाभा of the next line is written as उ

(27) MS writes व for ख and व is written like ष

(43) reads मुणेमइ of footnote 1 19

45	वेचद मुचरु मुमिपरा"	॥ १५ ॥
	न जि न्यगु राइ मानाजइ जहराय वरी परिगीजइ परिगी पट्टुउ निययपरे	॥ १६ ॥
50	॥ पुत्तु त्तु कृति ऊपनउ विद्यानअणगुणमपनउ वना बाहतरि गा पडा	॥ १७ ॥
	गगानामि गगेउ भग्गाजइ कमि कमि कुपगि निगि पगरीजइ वाज तगा गमिगु तिम	॥ १८ ॥
55	नितु नितु राउ अहेट्टु चन्न रामि चटि राणी इम पुनइ प्रियतम पारधि मन करउ"	॥ १९ ॥
	राइ न मानी गना राणी ताणु कृति मनि कुरमाणी	
60	पूनु सेउ पीरि गईय धनुपाना माउनउ पदावइ जावण्या नियनिति रणावइ वाधि चारणमुनि तगाइ	॥ २० ॥ ॥ २१ ॥
	माचउ जाणु त्रिणधर्ममागो	
65	तउ मनि जूवण नग विरागो गगानगु वणि वगण	॥ २२ ॥

वस्तु

राउ गतगु राउ मतगु वयगु चुक्केधि  
आहइ चनाउ पारमरि मनि भाहि प्रमीउ

(45) च and व become similar through the inadvertance of the scribe

(46) त्रि is repeated in the MS through the scribe's slip

(67) MS has राग्मतगु २ which is written twice in the text above for clarity

पूत्तु लेउ पीहरि गई गग तीण अरुमाणि दूमोय  
वात सुणी पाछउ वनइ जा नवि देखइ भंग  
अउवीम [वाम] रहइ जिमु रहहीणु [अर्गथु]

॥ २३ ॥

[ टवणी ॥ १ ॥ ]

आह मनमाहि नरिणे पारधि संभावइ  
मइ दलि रमलि वरतउ गगातडि आवइ ॥

75

गगतडा तडि अछइ भोयणु  
वित्यरि दीरधि वारह जायणु  
पामहरा वागुरीय बह्य  
पइना वणि कानाणु ह्य ॥

दह तिसि वाजइ हार बहु जीव विगासइ  
एकि धुसइ एकि धायइ एकि आगलि नासइ ॥

80

दह तिसि इम जा वनु आरोडइ  
जीव विगामइ तरुयर मोडइ  
जा इम लवइ पारधि नागइ  
ताम अमभमु पेखइ आगइ ॥

85

विहु खवे णा भाया करयनि कोण्डा  
वानेसह वाना भुयण्डपयडो ॥  
राय पासि पहिलु पहुचेई  
पय पगमो वीनती करेई ।

‘सामलि वावा मुक्क भूपाल  
इणि वणि अछउ अम्हि खवान ॥

90

जेनी भुइ तू राघा तेती तू सरणि  
मुक्क मनु का इग दूमइ जीवह मरणि” ॥

तासु वयणु अरुहनइ राघो  
अतियणु धरुइ जीवह घाउ  
कोपि अडिउ तमु वगरखवावा

(71) The first Pida of the line is defective, वास is left out in the MS

(79) एव धुसइ repeated

- 95 धनुष पदायद् जमविदराता ॥  
 ताता मर उगारद् धागता नि पाद्  
 मरया जपउ ढाद् रात्त रूगाद् ॥  
 वत्त रूद् वरतउ जाणा  
 तापगि धारा गगाराणा
- 100 वत्त पवि भुम्भु वरना रापद्  
 नियप्रिय धागति नग्नु रापद् ॥  
 श्वा गगाराणा राजा शार्गन्दि  
 मन्ना मदि श्चिदार वत्त धातिगि ॥  
 रात्त भगद् मर सिमउ पमारद्  
 दिव नुम्भि मर ग परि पात्तधारा
- 105 रात्तु नुम्भार पूनु नुम्भारद्  
 धात्ताउ गग विम रितारउ' ॥  
 पूनि भत्तारिन्दि श्वा धनिपण मत्तारा  
 पूनु ममापाउ गग धागणि नदि धारा ॥
- 110 दिना पूनु यत्त रगि मिनीया  
 श्चि मुत्तावा पाद्दा वताया  
 परिग्याउरि परि रात्तु कर्द्  
 शण तिम ताता वय्य ममर् ॥  
 धननिगनरि रामदि वरतउ
- 115 जमणतन्ना नदि रात्त पद्दतउ ।  
 त्रव मत्तनी शारा वात  
 वन्ना वन्ना रूपिमाव ॥  
 पूद्दा रशावाता नरी  
 ण कुण शगद् वरती वडा ।
- 120 वशावाता तण उ माया  
 राय पादि पमणद् विर माया ॥  
 ण धन्नारा वृदनिगगाश

(102) MS has मंगा for रंगा

(111) मुत्तावा पाद्दाया पाद्दा वताया in the MS

- सामी अद्यइ अजीय कू यारी ।  
 कोइ न पावु वर अभिराम  
 125 सपनु करू जिम देवह वामु" ॥  
 तमु घरि बइमी राउ मा बानी मागइ  
 वात स वेडीवाहा पुण चीति न लागइ ॥
- 'साभनि सामी अम्ह घरसूतो  
 तुम्ह घरि अद्यइ गगामूतो  
 130 मइ बेनी जउ तुम्हह दवी  
 तउ मइ हथि हूख भरेवी ॥  
 कुरववसह वरउ मडगु  
 राउ कुरसि गगानदागु  
 धीय महारी तणा जि वान  
 135 ते सवि पामइ दूख कराल ॥  
 मुभ पामि तुम्हि किमु कहावउ  
 तुम्हि अम्हारा धीय न पामउ' ।  
 एम निमुगोउ घरि पइत नरिण  
 जिम विध्यान्नि हरीउ करिण ॥
- मनि चितइ सा वान कणहए न बहेई  
 140 अ ने लागी भान जिम ँहु दहेई ॥  
 कू यरू वेडीवाहा मन्त्रि  
 जाइउ मागइ सा इ जि कू यरि ।  
 वेनीनाहइ त जि भणीजइ  
 145 तीअ कू यरि प्रतिपा बीजइ ॥  
 मत्रि मउउधा महइ तइइ  
 वेडीवाहा अति सु केइ ।  
 "वपगु अम्हाए म पइउ पावइ  
 देवादेवी महयइ साखिइ ॥

(129) Indefinitely reads सूत्रो or सूतो same way in the next line पूतो or पूत्रो

(139) Perhaps हरिउ a slip for ऋरिउ

150 निमुणउ मइ जि प्रतिपा बीजइ  
 चाटुवइ रिम तासु रिताउर ।  
 एतु रातु अनइ परिणेतु  
 मर अनरर जनमि वरु ' ॥

155 निमुणाउ वयणु गभेवउ बावइ  
 वार न तिहृयणि जा तुन नावइ ।  
 निमुणउ दिव रर वरु वृत्तु  
 एर रर एर संतणु वरु ॥

॥ वरु ॥

160 नयर अरुदर वयर अरुदर रयणर नाभि  
 रयणमिन् नरवर वरु तासु गेति एर वान जाईम  
 रितावरि अरुदराय जानमात्र नदि जमणु मिन्नाय-  
 र्माय ता गणणु वरा नर मर निद कुमारि  
 मयवना नाभि हृमिण मतणपरनारि ' ॥

[ टयणि ॥ २ ॥ ]

वणमाउ मामाउ नमिनाहु अतु अ चिकि माही  
 वमणिणु पंढर उणउ चरितु अभिनवरिवाहा ॥

165 इयिणाउरि पुरि कुरनरि वरा वृत्तमंडणु  
 मरुत्रिं संतु गुतागमासु हृर नरवर मतणु ॥  
 तमु परि राणी अरु दुप्रि एर नाभि म ॥  
 पुनु जाउ मणउ नाभि निणि निहृणि वरा ॥  
 मयवना एर अरर नारि तमु नरुणु टुप्रि

170 मरे मरागणु अरवत अतु वंणुवदि ।  
 वरुवउ वरु वरुमणि यातयणि दिवउ

(158) नयर अरुदर २ The repetition is represented by the figure 2, by the scribe. We have in the text systematically repeated the expressions rather than writing 2 after the scrib.

(170) मरागणु in MS for मरागण

विचित्रवीर्युं बाजउ कुमाह वट्टुणमपनउ ॥

राउ पतुतउ सरगनाकि गगयट्टुमारि  
तउ लघु बधु ठविउ, पाटि तिण्णि वयण्णिचारि ॥

175 कासीसरधरि तिनि धूय भ विनि अ बाला  
नाजी अ वा अछइ वान मयणह जयमाना ॥

परिणावेवा ताह वान मयवण मडाविउ  
गगानदणु चढीउ रामि अणुतडिउ आया ॥

समरि जिण्णिय सवि राउ वान लेउ त्रिण्हइ आयो  
180 दण्ड महाच्छउ करीउ नयरि बधु परिणान्यो ॥

अ विक्कि उटउ धायराट्टु सा नयणे आधउ  
अ बाना नउ पुत्तु पट्टु त्रिट्टु भुयणि प्रसिद्धउ ॥

अ बानणु विदुण नामु नामि जि सरोखउ  
खइ खीणइ पुणु विचित्रवीर्युं पट्टु राणि प्रतीठिउ ॥

185 कुतान्निवि नउ लिविउ रुपु दधीउ चित्राणि  
माहिउ पट्टु नरिदु चाति अति नोधउ वामि ॥

विद्याधर वनि बुण्हि एवु मन्हिउ छइ बाधी  
छाण्डि पट्टुमारि पामि तमु मुद्रा लाधी ॥

एतइ अ धक्कट्टिणि नामि मारीपुरसामि

190 दस बटा तमु एव धूय कुतान्निवि नामी ॥

पानी आपण्णार पुण्णु मारियपुरि पट्टुतउ  
“पट्टु वराउ” पिय पासि वृयरि मभनइ व्हतउ ॥

नवि जामइ नवि रमइ रभि नवि महीय वानावइ  
वानावा ती पहीम जाइ अणुनडा आवइ ॥

195 खाजइ मू न्हइ रट्टइ वान त्रिम मयह सतारइ  
वमलिण्णिवान्णिण मणु सनाधि सा विमइ न पामइ ॥

चदु य चण्ण हीयइ हण अ गार समाणउ

(181) आधउ in MS for आधउ

(183) नामु in MS for न मु

(197) MS has चट्टु न



- 'कुण्डल कान्द ऋद दूगु जाणाइ तु जाणुठ ॥  
 200 नावडु निधिगु मर अजागु वाइ मारइ मारा  
 र्णि जनमि मुभ पञ्चुमर रिणु नरा य भतारा ॥  
 विरहि विरागाय वण मभारि जाण मणि भायइ  
 नवगिम जूवगु मपर ता धारि जाइ ॥  
 कठि टर जा पागु टान तग्यर गा  
 धारि मूद्रप्रभावि ताम मनि चिनिउ तामि ॥  
 205 परिगाय धारा पञ्चुमरि धापणाय जि धरणा  
 सहापर वनि एकनि हू पुनु जायउ रमणा ॥  
 गग प्रनात्ति रयण मात्ति धारि मद्रम  
 वाजइ पानडु पुण्यवति कइ नाज कि राम ॥  
 210 जाणाउ राइ पु तिनिगु पञ्चु उ परिणावइ  
 निन्दि जागु निनादि जाम त मुछु धाव ॥

॥ उन्तु ॥

- 215 मवतु नरवर मवतु नरवर मि गधारि  
 कु धरि तमु तणण धाउ धाय गधारि पहिनाय  
 कुन्तनिधामि धायरर नरना ि हीय  
 नववनरइ नणा कुमुणि विरकुमारि  
 धानी मद्रनि मद्रयुष पञ्चुमर धरनारि ॥  
 गभु धराउ गभु धराउ नि गधारि  
 दुत्तगि टात्तउ कू वनि जग मुनि गवइ  
 पुण्यवमि गव्वरि चन् मुट्ट जम मनि गमर मद्र  
 गानि रता यणण पधाउ हरिमु कइ  
 220 मामु ममरा कुणरि मु धरनिमि वर वरइ ॥

[ टयगि ॥ २ ॥ ]

पुद्रप्रभावि पामायउ पञ्चु कु तात्ति  
 पुद्रमणारु पुन पुण मुमिणा पच नद्वि ॥  
 टाउ मुरनारि धाररा मुमिणु मिरिरविच

(204) MS has प्रभाति for प्रभावि

(112) गधारि in MS for गंधारि

जनमि युधिष्ठिरराय तणइ मिनीया मुरवइति ॥

225 गयणगणि वाणी पडीय 'खमि ऋमि सजमि एकु  
धरगपूतु जगि ऊनउ सत्यसाति सुनिवकु' ॥

रापीउ पवणहि कलपतरा सुमिणइ तु तिदूयारि  
पवणह नदणु वज्जममो भीमु सु भूयण मभारि ॥

230 शीसे माम जाईयउ दूमीय ऋमि गधारि  
निवसि अशुरे ऊपाओ दुर्योधनु समारि ॥

दसह दसारह बहिनटीय शीजउ धरइ आघानु  
'दाणव दल सवि निद्वनउ मणि एवदु अभिमानु  
'धनुपु चडापीउ भूयणि भमउ' इच्छा दइ मन माहि  
बइठउ दोठउ हाथिणीय मुरवइ सुमिणा माहि ॥

235 जनममहाछवु मुर करइ नाचइ अपडरवाल  
दुदुहि वाजइ गयणगले धरणिहि तात वसान ॥

गयणह वाणी ऊजलीय अरजुन इद्रह पूतु  
धनुपबलि धधालिसाण दुरयाधन धरमूतु' ॥

240 नकुलु अनइ सहवु भडा जुअनइ जाया वेउ  
प्रभु चद्रप्रभु धापीयउ नामिकि कू तादेउ ॥

सउ बटा धयराठघर पडु तणइ धरि पच  
दुर्योधनु कउतिग करण कृटा ववडप्रपच ॥

घत्रणिगतरि गिरिमिह्न राजा रमलि करइ  
कु तीकरपल अटवज्जि रडयड भीमु रइइ ॥

245 पाहणि पाहणि आफनाउ दान न दूमीउ दहु  
पाहण सवि शूनउ हूयए कवटु कउतिगु एह ॥

गयणह वाणा आपीयउ आगइ वज्जसरीह  
वाधइ पचइ चण जिम पडव शुणुगभीर ॥

(225) गयणगणि in MS

(234) दाठउ written twice in MS

(238) धधालिसाण in MS for धधालिसाण

(243) अना for अना

(245) पाहणि २ in MS

250 मीमु भाडतउ जमएनड कून्ड कुरववार  
पाडइ दउडइ भेडवइ बाधाय वावइ नीरि ॥

दुरयाधनु रासिंहि चडाउ वावइ सामलि भौम  
तु मुभ वधव कून्तउ म मरि अमून्ड इम" ॥  
भामि भिडिउ भद्रु पाढायउ बाधाय घालिउ नारि  
जागिउ आउइ वध वनि ननि दूमि मरारि ॥

255 विगु नवन् दुरयाधनिहि भौमह भाजन माहि  
अमृनु हूइ नइ परिणमिउ पुनिहि टुरिइ पुनाइ ॥

अनिरथि सारनि तहि उमए राय तगइ धरिमृत्तु  
राधा नामिहि तमु धरणि वरणु भणु तमु पूत्तु ॥  
एन् कू यर पचमनउ विग्रहरि पडिवा जाइ

260 धीन् वोर मति आगनउ वरणु पन् तिणि ठाइ ॥

दडा लगइ गुरु भगउ द्राणु मु वभगवमि  
तह पामि विद्या पन्ड कूपगुर नइ उपमि ॥

॥ वस्तु ॥

265 तीह कू यरह ताह कू यरह माहि दा वीर  
इतु अरजुनु आगनन् अनइ वरणु हायइ हरानउ

गुरकून्ड विगयह नइ धृन्वणु नधउ मरानउ  
विद्यु न हूइ गुरभगति नगन् माणि नउ गुर विदु  
अहनिमि गुर आराधतउ एवन्तु हून् मिदु ॥

गुर परिकल्पन् गुर परिकल्पइ अन्नाहमि  
दुरयाधनपमुन् सवि रायकृ यर वग माहि लेविणु  
भारागु मिहि वरि तानन् व निरि ननु दविणु  
तीण पराया गुर तणा पूगउ एतु उ वधु  
राहावहु तउ सिखवन् मउउद नविणु ह्यु ॥

275 एक वामरि एक वापरि कू यर नन् माहि  
गुरि सरिमा जलि तरइ द्राणचनणु जनजावि लिडउ

कू यरपरीया तणु मिमि गुरिहि कू पाका विडउ  
धायउ अरजुनु धणुधइ अवर नधाया वइ

(259) म 1A पचमनउ is written peculiarly in Ms

भेल्हाविउ गुरचनणु तमु गुर किम नवि तूमिइ ॥

[ ठवणि ॥ ४ ॥ ]

गुरि वीनविउ अरुवरि राउ "सविहु वैठा करउ पसाउ  
तुमिह मडवउ नवउ अखाडउ नव नव भगि पूव रमाडउ" ॥ १ ॥

280 आइमु विटुरह् णधउ राइ ण्ह णिसि जणवइ जावा धाइ  
सोवनयभे मच चडानइ राणा राणि त सहु य आवइ ॥ २ ॥

पहिनउ आवड गुण गगेउ धायरठठ धुरि वइसइ राउ  
विदुर कृपा गुण अवर नरिण मचि चड्या माहइ जिम चण ॥ ३ ॥

285 कनि णिखाउइ खाडा मरमु कवि तुरगम जाणइ मरमु  
चक्र टुरा विवि सावन मानइ विवि हथीयार पडता भालई ॥ ४ ॥

पहिलु सरमइ धरमह पूत्रा जह रहइ नवि काइ गथा  
ऊठिण भामु गण परतउ तण दुयाधन भिउइ तुरतउ ॥ ५ ॥

मनि मावीशह मत्तर रहीउ पाउइ अरजुनु अति गहगहीउ  
भोमु दुजाहण जा व मित्रिया ता गुरनदणि पाछा करीया ॥ ६ ॥

290 गुर ऊठाउइ अरजुनु कुमरो करणहि सरिमउ माडइ वयरा  
ब भाया विहु खन वहई करयनि विसमु धणुहु धरइ ॥ ७ ॥

लाहपुणु छइ चक्रि भमतउ पच वारिण आहणइ तुरतउ  
राधानधु करीण णिखाउइ तिमउ न काई ताण अखाडइ ॥ ८ ॥

295 तीछ हूपा ऊठइ करणु 'अरजुनु पामइ मू करि मरणु'  
रासि ऊठइ वउ भूमवा रणरमु जाइ देवी देवा ॥ ९ ॥

वउ हूपाइ वण वाकरवाइ राय तणा मनि रीमु उपाइ  
धरणि धमक्क गजइ गयणु हारिइ जीतइ जयजयवयणु ॥ १० ॥

हीया धमक्कइ काधर लोव मत्त तणा मन करण मणाव  
जाण वीज पडि (अ) अनलि जाणे मु द खुया वनिकानि ॥ ११ ॥

300 क्षणि नान्हा क्षणि मोटा दीमइ माहामाहि खुमए वउ रीमड  
बधवि बीटीउ राउ दुजाहणु चिहुपडवि बीटीउ राणु ॥ १२ ॥

(281) मत्त in MS for मत्तर

(297) जयवयणु in MS for जयजयवयणु

(300) रीम in MS रीमइ

- विष्णु पृथग् चारि प्रवृत्तः ॥ १२८ ॥  
 धरतु वातः ॥ १२९ ॥  
 धरतुन मरमा भक्ति न रातः ॥ १३० ॥  
 305 ॥ १३१ ॥  
 १३२ ॥  
 १३३ ॥  
 १३४ ॥  
 310 ॥ १३५ ॥  
 १३६ ॥  
 315 ॥ १३७ ॥  
 १३८ ॥  
 १३९ ॥

॥ वन्दु ॥

- धरतुन मरमा भक्ति न रातः ॥ १३० ॥  
 320 ॥ १३१ ॥  
 १३२ ॥  
 १३३ ॥  
 325 ॥ १३४ ॥  
 १३५ ॥

(30b) चरि in MS तवि  
 (315) म in मउ and च in राप्र are moth eaten in MS

तामु नयण बहा करा परिणउ द्रुपदि नारि" ॥

[ ठ्वणि ॥ ५ ॥ ]

पद्रु नरसरा सइ वरि जाइ हयिणाउरपुर सचरुए  
राइ दले सरिमा कू यर लेउ तारे मु जिम चादुनउ ए ॥

330 वाजीय ब्रवक गुहिर नीमाल णिणयरा रेणिहि छाईउ ए  
पहूतउ जाणीउ पद्रु नरिदु द्रुपद्रु पहूचण सामहा ए ॥  
तनीया तारण बदरमान यरु उलाचिहि छाईउ ए  
मणिमम पूतना सावनयभ मानीय चउक पूराविया ए ॥  
ककूय चण्णि छडउ णिवारि घरि घरि तोरण ऊभीया ए

335 नयरि पइसारउ पद्रु नरिदु किरि भ्रमराउरि अबतरी ए ॥  
पालि पहूतउ पद्रु तजि तरणि पयद्रु  
सोनि चमर बवान अनु वठि कुमुमह मान ॥  
अनु वठि कुमुमह मान किरि मु मयणि आपणि आवीइ  
काइ इद्रु चद्रु गरिदु मइ वरि पहूतु इम सभावायइ ॥

340 चडीउ चचनि नयणि निरणव वयणु वोन सउ सही  
पच पडव सहितु पहूतु तउ पद्रु नरवण इइ सहा ॥  
मिनिरा सुरवण काडि तत्राम गयणे दुद्रुहि द्रुद्रुहाय  
मडे बइठना रायकू यार आत्रण कू यरि द्रुपनीय  
सामि वनु वरि कुमुमह खू पु वानि वनउर भनहलइ ए

345 नयण सत्रुणीय काजलरह तिनउ वनत्तूरी यम णिवडीय  
करयले कवण मणि भमकाण जाणर फालीय पहिरण ए  
अहर तवालीय द्रुपसा वान पाण नउर गणमुणइ ए  
भाईय वयणिहि राधावधु नरनर साधइ सवि भला ए  
कुणिहि न माधीउ पद्रु आणसि अरबुनु उठइ नरनीउ ए

(327) After this line MS २ ॥३॥ indicating the number of the second Vastu and the close of the section Jain MSS express the close by ॥३॥

(330) MS has जाईउ for छाईउ

(335) MS has किरि for किरि

(341) A the end of the line ॥१

(349) MS has only नरनरीउ and नउ नरनराउए at the end of the line there is ॥२

- 350 'मनि धनुः इनु ए नूय मामि सयनु दह  
 इम भग्ना रन्डि भामु मा धनुः नामद वामु'  
 सा धनुः नामद वामु वाक्कि धरणि धामनि पडहडा  
 बभह गड विवड थाइ ति गणि मयन वि रडरडा  
 नननाय माधर गन गुरगिरि ननु ग वि पडतडा
- 355 गनु एनु धररगु इउ निहृयगु राउ मयन वि धरणा  
 एतइ हृयगु जयजयकार गुर वनय मवि हरमाया ए  
 धनु धनु रायगु नुपनाय ज्ञान धनभम वर वरिया ए  
 धनु धनु राणाय तुतादि जगु वृद्धि ए उरना ए  
 पचम गनि रण धरतया पंन पयराण जिगा जगि हृया ए
- 360 पायगु गा य गुर गुरवादि गुर उण गिर धूणादिवा ए  
 मनायन मन्त्राय वरर विरागु वरगु वाउ तनु द्रूपनाय  
 वा न विरू जगि हृय नादि वि पडा थाइ न हारमि ए  
 ए म नाय पंन भतार सनाय गिरामणि गाई ए ॥  
 राधारगु मु धररुति माधि ननचातिउ उर नाय नाधउ
- 365 जा मन्त्रि गनि धररुन मान ज्ञान पावगु गनि समजान  
 रागु वृद्धिद्विरि मनि नाजाजगु निगि स्वणि चारणि मुनि वाजाजइ  
 निमुणन नाय लप प्रमाणु पूरविनइ भवि विवडु नियाणु  
 भवि पन्डरर उमणि हृया वणुउ नूबु मुगिरर सिता  
 नरग मना वनि मा गि हृय पावगु पुरिम प नियाणु धरर
- 370 ए न काईय वरर विरार ए पराणायपन भतार  
 गा वना नइ मयगि पहनउ पनु नराहिवु हृयउ सयतउ  
 धररुति नाजइ मगन चार जगि मधरावरि जयजयकार  
 नायय वा कुनम मान नाइय वाचन मनि ध्रणायाता  
 नायय नयणु वावरर महर्जिहि लान्ग मावनरु
- 375 तु ता मद्राय मायगु मणु धनु धनु पडव द्रुपति जा  
 पवइ पडव दहृया वररा नरवइ धामानरर मउरा

(352) वाम in MS for वामु

(355) धरडा in MS for धरणा

(370) वाइवरर in MS for काईय वरर

(376) At the end of this line there is in MS उरणि  
 instead of वरु

॥ वस्तु ॥

- पच पडव पच पडव देवि परिमेवि  
 सउ परिवारिहिं मु दलिहिं हस्तिनागपुरि नगरि आनइ  
 अत्रन्विसि रिपि नारन्ह नारि वज्जि आन्मु पामई  
 380 ममयधम्मु जा लघिमिइ तीण पुरपि वनवासि  
 वार वरिस वसिदु अत्रसि अह्निसि तीरथवासि ॥  
 सच्च वज्जिहिं सच्च वज्जिहिं अत्र दीहिं  
 उल्लघिउ गुम्बयणु इदपुत्तु वनवासि चल्लाई  
 गिरि वेयड्ढह तलि गयऊ पणमिउ नामि मल्हाण  
 385 निव मणि चूढह राजु दिइ पहिनउ उपकार ॥  
 वार वरिसह वार वरिमन् चडिउ विमाणि  
 अठठावयपमुह सवि नमीय तित्य जा घरि पट्टच्चई  
 मणिचूढह मित्तह भयणि राउ ण्णु परिहरीउ वच्चई  
 गहीय पभावइ रिउ हणिउ मज्जितमारण वूडु  
 390 धरि पहूत्तउ वेउ मित्त लेउ हेमगट्टु मणिचूडु ॥

[ ठरणि ॥ ६ ॥ ]

- एतल ए ष्टु नरिन्ना जूठिना पाटि प्रथीठिउ ए  
 वधवि ए विजयु करेवि राय सव वमि आणीया ए  
 सोवन ए राणि करेवि वधव आगलिउ णिण ए  
 मित्तह ए रईय मणिचूड राय रहइ सभा रयणम ए  
 395 राइहिं ए सति जिणद नवउ प्रामादु करानीउ ए  
 वचण ए मणिमय धम रयणमइ विव भरावीया ए  
 तेडीउ ए देवु मुरारि राउ दुरयोन्नु आवीउ ए  
 इत्थीय ए दीजइ दान विद्वप्रतिष्ठा नीपज ए  
 वरतीय ए नेसि अमारि ऊरिण वीधी मन्नि ए  
 400 ह्मिऊ ए सभा मभारि राउ दुरयाधनु पराभवी ए

(381) धरिस in MS for वरिस

(383-384) Between these two lines there ought to be one more line rhyming with चल्लाई—according to the formation of the *Vastu* metre



- माउत ण मण्डित मनु ताउत अम चागति वीनय ण  
 मारित ण विट्ठरि ताण्ण उयण न मानइ कूडाउ ण  
 धाणाय ण ममापियण पडव ॥१८॥ मउ मउ ण  
 कूडिणि ण ॥१९॥ माउ उयणिण माउउ जूउउउ ण  
 105 मणित ण राउ कूडिउ विण्ण उयण न मानाउ ण  
 हाणाय ण उयिय चाउ भाउय हाणाय मज्जि मउ ण  
 हाणिय ण डूण्ण धाय उउविउ मरि अमरण ण  
 पाणीय ण उमि धरणि उरि उगायणि डूउगिणि ण  
 धाणाय ण ममापमाणि उयय उपाधन उम अण ण  
 419 धाउिन ण धाउि उमणि उ पणि उरगिन मुअ नण ण  
 उम अणाय ण उिय मराउ उ [ - ] उउ न धरि मउ ण  
 उपाय ण वाउया वाउ अउगानउ मउ माउय ण  
 उयय ण गुण मणउ उण्णि दरवायनु ताजिउ ण  
 नउ अण ण पउउ पउ उयण मउउ पडिउउ ण  
 415 मउ ण उण उणायु नउ उण्णि उरमउ ण  
 धण्णि उिम ण उण्णियु उण्णिउ वउयु उ नतलु ण  
 उउ ण उिय उणायु मउयय उउयय डूणय

॥ उउ ॥

- हेय उेव उेय उेउ उउ पण्णायु  
 पिय उउ उयता डूण्णाय उण्णिय उउय  
 120 दाण उिउ उयय उण न उि वाउण्णि उउय  
 अम अण्णमुउ धरणि धणिय उउउउउ उण्णिय  
 हाणाय उउ उिम उउाउउ धायमन उरि ॥

[ उउणि ॥ ७ ॥ ]

- अउ उेव उमि उरि पउ ण पउउ उणि उरिय  
 उण्णिय उण्णिय मुउनाउ उिय माय पाय ॥ १ ॥  
 425 पउ उण्णाय उिय उय उता मउा पउ उमाय

(401) MS has वानउ for वानउ  
 ( 09-410) अण ण the final Anussvara it is omitted at  
 several places in the MS S e also 101 above  
 (412) MS has वाउया for वाउया चाउ

- सच्च वरण निरवाहु वरिवा वाग्गणि सचरइ ॥ २ ॥  
 लेई निय हयियार द्रोण नियमहि अणगमीय  
 कु ताग्नि वि भरतार नयण नीर नीभर भरइ ए ॥ ३ ॥  
 स०यवई पिय माय अवा अवाणी अविता  
 430 कु ती मुद्री जाइ वउवावसा नएणह ॥ ४ ॥  
 पभणइ जूठिबु राउ माइ म अरणइ तुहि करउ  
 निय घरि पाइ जायउ नाकु सह्यइ राहवउ ॥ ५ ॥  
 दाणवि कूरि कमीरि पचानी बीहारीयउ  
 भूभिउ मारीउ वीळ भीमिहि तु दुखाधनह ॥ ६ ॥  
 435 तउ वनि कामुवि जाइ पचह पडव कूणवि सउ  
 मत्रह तणइ उपाइ अरजुनु आणइ रसवती य ॥ ७ ॥  
 पणमीयतायह पाय पाइउ वानीउ मद्रि सउ  
 विद्या बुद्धि उपाइ आपीय पहनउ पीपीयउ ॥ ८ ॥  
 पचाली नउ भाउ पच पचान नेउ गिउ  
 440 एतए केसबु राउ कु ती मिलिवा आवीयउ । ९ ॥  
 बलु बालीउ बनबधु मुभद्रा लेइ साचरण  
 हिव पणु हउ निबधु क ती धु सरमा सात ज ए ॥ १० ॥  
 एहु तु पुराचन नामि पराहितु दुयोंधनह  
 तुम्हि वीनविषा सामि राय सुयाधनि पय नमीय ॥ ११ ॥  
 445 मइ मूरखि अजाणि अग्निणउ काधउ तम्हा रहइ  
 मू माटा मुहवाणि तुम्ह खमउ अवगहु मुह ॥ १२ ॥  
 पापारिसिउ म रानि वारणनति पुरि रहण करउ  
 ताय तणइ बहुमानि हु अराधिमु तुम्ह पय ॥ १३ ॥  
 कूडु करी तिगि विप्रि वाग्गवति परि आणीया ए  
 450 विमु न कीजइ गत्रि अकमरि तानइ परभवह ॥ १४ ॥  
 विदुरि पवाचिउ नबु दुखाधनु मन वीमिसउ  
 एमु पुरोहितवेषु वाधु तुम्हारउ जागिजउ ॥ १५ ॥

(443) MS reads मामि for नामि

(451) In MS पवाचिउ mi,ht also b read पवाडिउ (caused to be read) ro पवाचिउ which has no s nse

इह परि अथर मनु राज तगउ छद पत्रररो  
मात्रि पन्दाउत पत्र पत्रमग मत्रि मन्त्रु ॥ १६ ॥

155 वाता अउमि नानु पुन मन्त्रु ज्ञानत्रउ  
एउ तुयाननु मातु धान उ पाए माग्निम ॥ १७ ॥

भामु भगए 'मुग्नि भाए साए उयग वाधनउ  
कुनर कुनरगु ज्ञान एति गुमाननि मन्त्रए" ॥ १८ ॥  
मगरिनि मगाय मग्ग रिदुरि त्रिगगय दूर तगद

160 हुं उगाउत अग र्ण्य ज्ञान 'दवह ॥ १९ ॥  
एकि नानि निगि नानि पाए पुत्र एकि उय मत्र

कु ॥ नए धारामि उयान नानमिया ॥ २० ॥  
गनि वावए राए माग्नि मुग्गए कुग्गवि मउ  
त्रियए पुग्गानु नए नानएए त्रियनए उवए ॥ २१ ॥

165 गार्धनए पन्त्रगु नामि पुग्गानु वाधनए  
मन्त्रए नधु वायागु उयए धारा पुग्गु मित्रए ॥ २२ ॥

उयए उवएउ राए एकी एधा माग्गए  
ज्ञानए पुत्रपन्त्रए एउए ज्ञाना उयए ॥ २३ ॥

॥ वग ॥

त्रैकु न गिणरुं एकु न गिणरुं पुग्गु नए पातु  
70 एतानु मुग्गए वरुं पुग्गएएन त्रिम राय रावद  
एदिह तुग्गु उए नए उगाए दग्गि गिनि गिणरुं दावए  
ज्ञान मग्नि निमन्त्रा एवए एवए वत्रि  
रातु एदाय्या वणि विरए पिग्गु पिग्गु दूम म ति ॥

[ एउगि ॥ ८ ॥ ]

175 पिग्गु रि पिग्गु रि त्रिम त्रैवत्रिगगु एवए एवए हुए उग्गुवागु  
एनए नानए एउत्रिउए उवए भामु तु उयए मित्रा ॥ १ ॥

गनि मुक्कन एन्ना ज्ञानवयग न मए उगि पुत्राए  
न ज्ञानना ज्ञानए त्रिमए उए नएउ नए माग्गु निमए ॥ २ ॥

(471) तुग्गु has its तु not written in the MS तुग्गु is supplied as it suits the context aptly

(472) MS has एउ for नए

साधू बहूय न बालइ पाउ ऊमउ न रहइ बूठिलु राउ  
माडी बोनइ "साभलि भीम वेती मुइ वयरी नी सीम ॥ ३ ॥

480 इकि वयरी ना परिभव सहा सट्टया नदण पाछलि रह्या  
हू थारी अनु पावो बहू दिणु ठगिउ तऊ मरिमइ सहू" ॥ ४ ॥

वासइ बाधा बधव बउ माडी महिली वधि करैउ  
तरयर मोडतु चानिउ भीमु देव ताणु बलु दलीइ ईम ॥ ५ ॥

485 एव बाह साहिउ राउ बीजी साहिउ सहुडउ भाउ  
जा महिमइनि उमिउ सूर ता वणि पट्टतउ पडव बीर ॥ ६ ॥

सहू पराधु निद्रा करोइ पाणी वारणि वणि वणि फिरइ  
भीमु जाम लेउ भावइ नीर पाछनि जोप्रइ साहमयोइ ॥ ७ ॥

एव अमभम देखइ बान पहिलु दीठी अति विकरान  
बोनइ रावसि ' साभलि सामि हुं जि हिउबा वहीउ नामि ॥ ८ ॥

490 रावस हिडव तणी हू धूय तइ दोठइ मयणानुर हूय  
बइठउ ताउ अछइ नीय ठाणि वाइ भावो माणुमहाणि ॥ ९ ॥

मुळ रहिं भाइमु दोधु इमु काई आनु छइ माणुमु  
वाधि करी लेउ बहिनी भावि उपवामी मइ पारणु करावि ॥ १० ॥

495 कर जोडी हु पणमउ पाय मइ तुम्हि परणउ पाडवराय  
तुम्ह उपकार करिमु हुं घणा दूख दनिमु वगवामह तणा ' ॥ ११ ॥

' उभी उभी इमु म बोनिइ पडव बीजा मणुप्र म तालि  
जग उदसिवा घर अवनरइ रुठा जगनु जीवीउ हरइ ॥ १२ ॥

ए माडी ए अम्ह घर नारि ए अम्ह बधव सूता व्यारि  
ईह तणे नू चनणे लागि भगति करी मनवदितु माणि ॥ १३ ॥

500 एतइ रावमु रामि जवतु भावइ फुट फेकार करतु  
वेती बूमट मारइ जाम पीमु भिडेवा ऊठिउ ताम ॥ १४ ॥

' रे रावम मुळ आरणि बान अरिस्सि रुउ नू पूणउ वातु  
हख जपानी वई विरइ एरिस्सि वाजइ हू गर रडइ ॥ १५ ॥

(488) MS has वन for बान

(495) MS has दूय instead of दूय-दूख

(500) The MS has रेसि for रोमि

(501) In MS बूमट—a light word—reads like बूमठ

- 505 चतुर्गतिहाइ जागित गहृ पणुमी बायड ह्रिहवा वहु  
 "माइ माइ उगारउ राउ न रुडउ अह्मारउ ताउ ॥ १६ ॥  
 इण्णि मारीगण मुण्णु मिह्णु बीजउ वार्द पाउ तुरगु"  
 इमु गुणी नर थायउ प यु मुभइ भीम मिण्डिउ महण्णु ॥ १७ ॥  
 पण्डिउ भामु अगागित राइ गण्णु वैउ थवि माण्डउ थाइ  
 अरउनु जा भूभना जाइ राण्णु भामि रण्णिउ ठाइ ॥ १८ ॥

॥ वण्णु ॥

- 510 अण्णु जिउवा अण्णु जिउवा मण्णि अण्णु  
 कुता अण्णु शीपणी अण्णु थवि वराण्णु मारगि अण्णु  
 कुती जण्णु मण्णु गुण्णु जिउ जिउण्णु जण्णु वैउ अण्णु  
 एण्णु जिउण्णु थण्णु जाण्णु भाण्णु पण्णु  
 जाई जाई उगण्णु पण्णु वण्णु विण्णु ॥ १९ ॥

[ टवण्णि ॥ ९ ॥ ]

- 515 नान माण्णु गण्णु उण्णु पण्णु गण्णु मण्णु त नवि अण्णु  
 राण्णु पण्णु पण्णु वण्णु वण्णु मण्णु मण्णु ॥ २० ॥  
 मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु  
 भीमण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु ॥ २१ ॥  
 भाण्णु अण्णु मारगि वण्णु वण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु  
 520 नण्ड अण्णु वण्णु नण्ड वण्णु पण्णु पण्णु मण्णु मण्णु ॥ २२ ॥  
 एण्णु वण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु  
 मण्णु वण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु मण्णु ॥ २३ ॥

(505) The MS has no अह्मारउ

(514) At the end of the line the scribe not only does not conclude the टवण्णि but also continues, the verse enumeration the same as it is

(515) The MS not only does not note the end of the previous टवण्णि but also keeps on the enumeration. We have separated the thavani but kept the stanza-enumeration as found in the MS

- राइ बोलावी बहू हिडब "अम्हि वसीसइ वेस विडबि  
तुम्हि सिघावउ तायह राजि समरी आवे अम्हह काजि ॥ २४ ॥
- 525 करि रखवानु थापरि ताणु अजीउ फिरेवु अम्हि वनि घणु "  
नमी हिडबा पाळी जाइ बापराजि धणियाणी थाइ ॥ २५ ॥  
अन दिवसि बभणु सकुटब रल जिम बिलवइ पाडइ वु व  
पूछइ भीमु करी एकतु "आविउ दूखु किमु अचितु ॥ २६ ॥  
बडुया साभलि" बाभणु भणइ "ए विवहारु नयरि अम्ह तणी
- 530 विद्यामिद्वी रावसु हूउ बक नामि छइ जम नउ हूउ ॥ २७ ॥  
विद्या जोवा तोण पलासि पहिलु मिना रची आकामि  
राजा भाडी अघग्रह लीउ "पइदिणि नरु एकेवउ दीउ ॥ २८ ॥  
चीठी काडइ निनु कू यारि आवइ वारउ जण विवहारि  
आडु अम्हारइ आविउ हूउ आडु न छूटउ हु अणमूउ ॥ २९ ॥
- 535 कवलि वयणु जु कूडउ थाइ जउ तवि आया पडवराय"  
पूछीउ भीमि कया प्रवधु वणि जाई वग रावसु रुद्धु ॥ ३० ॥  
॥ वस्तु ॥  
बघु विणासी बघु विणासी भीमु आवेइ  
बढावइ जणु मयलु 'जीवलानु तइ देव दिडउ  
केवलिवयणु जु सच्चु विउ त्रिहु भुयणि जमवाउ लिडउ"
- 540 पचइ पडवटा वसइ तीछे बभणुवेसि  
वान मइ जण जण मिली दुरयोधन नइ वसि ॥ ३१ ॥  
राति माहे राति माहे हई प्रचडन  
तउ जाइ द्वैतमणि तमइ वामि उडवा करी नइ  
पुरुष प्रियवटु पाठविउ विदुरि वान बक नी मुणी नइ
- 545 पय पणमी मा वीनवइ दुरयाधनु तु मनु  
'तुम्ह पामि ए आविसिइ करणु दुरयाधन तत्र ॥ ३२ ॥  
ईम निमुणीउ ईम निमुणीउ भणइ पचानि  
'वणि वनना अम्ह रणइ अजीय तत्र मिउ मिउ करमिइ

(540) The scribe has missed वसइ in the MS - some such word वसइ or अचइ is metrically necessary. The sense too needs it वसइ is therefore

- राजिसिद्धि अम्हत् तगी लइय जेण हिव सिउ हरेगिद  
 550 पचानो मनि परिभवी वावइ मल्ही लान  
 पाचइजण वइ हुमिद तुम्हि रिमाइ वाज ॥ ३३ ॥  
 माए हूई माइ हूट वाइ नवि वकि  
 अए जाया नवि मूषा तुम्ह राउ वाई दवि लिउउ  
 पुयउत नारा अउइ ताह माहि तुम्हि अजमु लिउउ  
 555 नमि धरानइ ताणाउ दुमामणि दुरचारि  
 वातपणि हु नवि मूई वाइ पुम्ह नारि" ॥ ३४ ॥  
 रामु नामाउ रामु नामाउ भामि अउ पयि  
 राउ भणइ ता अमए मुभ वयणु जा अयि पुम्हई  
 पचानो रामवाम अयमि अति अम्ह वाउ सिभई  
 560 मच्च वयणु मनि परिउरउ मानउ जिणधर्ममूउ  
 मत्ययणि हउ पायाइ भवनायर परवउ" ॥ ३६ ॥  
 एययणि दूअवयणि राउ अउउ  
 गिरि मधमायण गिया एउवाउ तमु मिहइ लिठऊ  
 मुवनानी अरठुनु एउ नमीउ तिणु तमु मिहइ वइठऊ  
 565 विणु गवि मिद्रिणि मइ जा एयइ वणुराइ  
 आहडी आराणउ ता एउ मूअइ पाए ॥ ३६ ॥

( २वगि ॥ १० ॥ )

- मूयर एवा मण्डिउ वाणु अरठुन मिउ कुणु करइ मंभाणु  
 तिणि विगि मण्डिउ वणुअरि वाणु उडिउ गयणि हूउ अप्रमाणु ॥ ३७ ॥  
 अरठुन वनअए नाणउ वाडु करउ मूमु उतारउ नाडु  
 570 एकअर वारणि मूअइ वउ करइ पराभा ईअर देउ ॥ ३८ ॥  
 अए अउउन सवि हवायार मानमूअ वउ करइ अवार

(559) The MS has मिभई for मिभई

(561) The first letter of the word एउ is moth-erten It might be but one cannot be certain

(567) The MS continues the enumeration without separating २ थयानि I have separated the they ३नि and preserved the enumeration

- साहित् प्रबुनि वनधर पाणि प्रकटु हई वानइ "वर मागि" ॥ ३६ ॥  
 मर्बुनु बोनइ "वर भडारि पाछइ आवइ सउ उर्पंगारि"  
 खवर बोनइ सामलि 'सामि गिरि वेयडु सुणीइ नामि ॥ ४० ॥
- 575 इद्रु प्रछइ रहनु पुरराउ विज्जमालि त लहुडउ भाउ  
 चपलु भणा नइ काडिउ राइ रोसि चडिउ राखमपुरि जाइ ॥ ४१ ॥  
 इ द्रवणु इकु तुम्हि सामलउ वरोउ पसाउ नइ दाणव दल  
 हरखिउ भरखुनु जा रधि चडिउ दाणवधरि बु बारवु पडिउ ॥ ४२ ॥  
 अमुर विणासी चिउ उपगारु इ द्वि लोकि हूउ जयजयवारु
- 580 इद्र तणु ए कीधु वाडु अमुर विणासी लाधउ राडु ॥ ४३ ॥  
 कवव मउठ अनइ ह्यीवार इ द्वि आप्या तिहूयणि सार  
 धनुषवेदु चित्रगदि दीउ पुत्रु भणी इ द्वि परठाउ ॥ ४४ ॥  
 पाछउ आवइ चडीउ विमाणि माडी बधव पणमइ रानि  
 एतइ कमलु अगामह पडीउ वइठी द्रूपदि वरयलि चडिउ ॥ ४५ ॥
- 585 सवा कमन ना इच्छा करइ भीममनु तउ वनि वनि फिरइ  
 अमउण देखा वानइ राउ भीम पासि वछदिइ जाउ ॥ ४६ ॥  
 माग न जाणइ लीजिउ सहू ममरो राइ हिन्बा वहु  
 कुणवु ऊपाडी मेलिउ भीम जाणे दूखह आवा सीम ॥ ४७ ॥  
 मुषु देखी सवि घडुया तणु पडव कू यरु लडानइ घणु
- 590 जाम हिडबा पाडी गई वान अरुरव ता इरुहुई ॥ ४८ ॥  
 द्रूपदि वयणि सरोवर माहि पइठउ भामु भनरइ ठाइ  
 भामु न दीसइ वनतउ विमइ तउ अपावइ अरखुन तिमइ ॥ ४९ ॥  
 केइइ नकुलु अनइ सहउ पाणी वूना तेई वउ  
 माइ मोकलावी पइठउ राउ सविहु हूउ एकु छु टाउ ॥ ५० ॥
- 595 काइ रोउ न लहइ रानि द्रूपदि कृती रही व ध्यानि  
 मनह माहि समरइ नवकार एहु मयु अम्ह करिनि मार ॥ ५१ ॥  
 बीजा दिवमह दिणयर उदइ ध्यान प्रभावि आव्या सह

(575) भाउ is not in the MS

(589) The MS has बु to which some reader has added  
 नु thus making up मुषु

(592) The MS has वनउ metrical'y it ought to be वनउ



- अथइ सावमावावज हाथि एतु पुरुषु आविठ छद गाथि ॥ ५२ ॥  
 भाइ नमा मनि हरिगु परिठ पुण्य पाणि वहाइ चरीउ  
 600 एव मुनि पामइ कवनानु गयणि पदूचइ इइ विमानु ॥ ५३ ॥  
 तुम्ह उपरि खनहिउ जाम जाणा गुरवइ वानउ ताम  
 इ पाण्डिउ वगि पडिहाउ नअ पयानिवाउ उपगाह ॥ ५४ ॥  
 मताय वउ छइ वानगि रनी इइइ आण्णु तु अण्ण वहा  
 मण्ण पडय वडर वड्ढि विणु हथिवारु वाधा भेण्ण ॥ ५५ ॥

॥ ५५ ॥

- 605 नागपामइ वध नागपामइ वध छाटिनि  
 न्द्राण्णि पण्ण नागराइ निजराहु द्विउउ  
 हान गमावाउ नररर मताय रमि अणु वमणु निउउ  
 अरउण मगनि भूभना गपण्ण गानिउ  
 मागाउ आवा तुम्ह पय पंचर तिया मिउ ' ॥ ५६ ॥

- 610 वरमि छण्ण वरमि छण्ण द्वैतगणि जाण  
 दुज्जाण पर परण्णि माण्णि मिण्ण रडताय मण्ण  
 धम्मणुता वयण्णणु पुण्ण उण्णुणि निणि मणि लण्ण  
 दुखाधन चित्रण्ण मण्णना उण्ण पण्ण  
 विज्जाण्णरायण नमण्ण दुखाधणु उउ मण्ण ॥ ५७ ॥

( टगणि ॥ ११ ॥ )

- 515 ताण्ण उपाण्णि पाण्णि पाण्ण पूण्णि वुमणु गुण्णिण्णि राइ  
 अण्ण दुखाधणु अतिअ मुखाया तुम्ह पाय जउ मइ पणमाया ॥ ५८ ॥  
 पर उपरि दुखाधणु चउइ एउअ जयद्वय पाउउ वर  
 निउआउ वृता रहिण्ण माण्ण अरउणि आण्णो मण्ण रगाइ ॥ ५९ ॥  
 नाचन वंची कण्ण वरण्ण आविठ पाया द्रुण्णि लउ  
 620 अणुणु भाणु मिहया अइ वण्ण वण्णु विण्णामिउ द्रुण्णि लउ ॥ ६० ॥  
 पाच पाण्ण मण्णिउ ( ) माण्णि मिहया उपाण्ण राइ

(599) MS घण्ण for घण्णि

(606) The line is metrically defective

(621) This line is very corrupt Metrically it seems ❀

नवि मारिउ छइ माडी वयणि जिम नवि दीमइ राडी भयणि ॥ ६१ ॥

एतइ नारदु रिपि आवऊ दुर्योधन मु मथु करेउ  
नार माहि वज्जाविउ पडहु बालिउ दूजणु इम पडवडहु ॥ ६२ ॥

625 "पचह पडव करइ विणामु तह तणी हु पुरु आस"  
पूनु पुराहित नउ इम भणइ ' कृत्या नउ वरु छइ अन्ह तणइ ॥ ६३ ॥

कृत्या पासि करावु कामु वयरी नु हु फडउ ठामु"  
कृत्या आवा घाई 'सकल वइ मारु वइ वरु विजल ॥ ६४ ॥

630 नारदु पहतउ सिरुया देवि पडव बडठा ध्यानु धरेवि  
एक पाइ णिणपर द्रॅठि हीयडइ मथु पच परमेठि ॥ ६५ ॥

न्विम सात जा इण परि जाइ ता अचचभू को रणवाइ  
एतइ आविउ कटकु अपारु पडव घाया लई हयोयार ॥ ६६ ॥

घाइइ घाली द्रूपडि देवि साटे मारइ कटकु मिलेवि  
अरबुनि जामु वलु निरन्नु राय तणु ता सूवउ गलु ॥ ६७ ॥

635 कृत्रिम मरवरि पाणी पीइ पाचइ पुहवा तनि मू छीयइ  
सरवर पानि द्रूपडि मिना एकि पुनिइ आणी वनी ॥ ६८ ॥

कृत्या राखमि तणाय जि सही भीलि बानी ऊभी रही  
मणि माना नु पाया नारु पाचइ ह्या प्रवटसरोर ॥ ६९ ॥

॥ वस्तु ॥

पच पडव पच पडव चित्ति चितति

640 कुणु नरवह आरोऊ कुणि तलावि जिमनीरु निम्मिउ  
कुणि द्रूपडि अपहरीय कुणि पुनि, इम चिति विम्हिउ

अमरु एवु पयडउ हूर बाउइ 'साभलि एणह  
ए माया सवि मइ करी कृत्या राखवाह ॥ ७० ॥

एतइ भाजनवला हुई द्रूपडि देवि करइ रसवई

⊛ two letters or 3 Matras rhyming with रोम seem wanting Again the MS has नवि मरि repeated before नवि मारिउ of line 632, obviously the scribe's mistake

(631) Two letters मूव and मूकउ are moth eaten and hence conjunctural

(644) MS has सवई instead of रसवई

- 645 मासगमणपारणइ मुणिए वना पढुतउ वारि नरि ॥ ७१ ॥  
 पचइ पडव पय पणमति अतिथिअनु त मुनिवर न्ति  
 वाजा दुदुहि अनु दुडुडी मवर हूती वाचा पडा ॥ ७१ ॥  
 मत्स्यन्ति जाई नइ रमउ ए तरमउ वरमु नागमउ  
 म्या वइरान्ह राय असयानि वत विडव्या नाय अभिमानि ॥ ७३ ॥
- 650 कक भट्टु बल्लु सुघार अरजुनु हूउ कावाचार  
 चउथउ नकुनु अमधउ थाइ सह वारइ नरवइ गाइ ॥ ७४ ॥  
 प्रथम पवाअ काचक मरइ वाजइ दक्षिणगाग्रु वरइ  
 शानउ उत्तरगाग्रु हू पडवि वरमु म परि गमिउ ॥ ७५ ॥  
 अभियनु उत्तरक परि वरि आवा कृष्णि वाया मु वरिउ
- 655 पत्तउ सट्टइ कहुडपुरि च्यारि वन्न चिहु पडव यरा ॥ ७६ ॥

॥ वस्तु ॥

- दूयभावि दूयभावि गयउ गावानु  
 दुजाहण वयणु मुणिए एव वारमह भगिउ विज्जइ  
 निय अवधि भावाया पडवाह बहु मानु विज्जई  
 इटपत्थु तिनपत्थु पुह वारणु विसा च्यारि
- 660 हस्तिनागपुर पाचमु अनाउ मत्स्य वारि ॥ ७७ ॥  
 भणए कुरवु भणइ कुरवु 'अव गावि'  
 मत् महीयवि यणि फिरिया ए मनु पडव न मानइ  
 भुर नदी नूयववि एक चाम हिव ए न पामइ  
 इम महिनापच जण तीह मिलिउ तु पविख
- 665 ए उग्रहाणउ सचु विउ कूडउ कूडा सक्ति ॥ ७८ ॥  
 वन्तु बालइ वन्तु वानइ 'भीमवलु जा'  
 विमलपर काचवा वकु हिउवु वमार मारिउ  
 न्नु वधवि अर्द्धनि दुनि वार तुह जाउ उगारिउ  
 विदुरि कृपागुरि द्राणि मइ जउ न भिनइ ए राय

(656) The enumeration of these वस्तु st is begun afresh in the MS naming st 77 as st 1 While the st 81 is then marked as st 82 and the last st 82 as st 83

- 670 तउ जाणु नियकुल नु हिन कउरव नु घर जाइ" ॥ ७६ ॥  
 पट्टु पुच्छीउ पट्टु पुच्छीउ विदुरि घरि कहू  
 रोसाएणु चल्लीपउ मणि मिनाउ सहइ नावइ  
 "दुरयोधनु दुटठमणु किम इव दव अन्ह सलि न भानइ  
 हिव एहु अन्ह मानु दियउ विहु पलउ तु छडि
- 675 कउरववस विणासिया वाइ कूडु म माडि" ॥ ८० ॥  
 मानु सिंहउ भानु दिन्हउ कहू गणेष  
 एवतु वरि अलीउ वन शुभु कु ती पयासीउ  
 "इह सतिथ वाइ तु मित्रिउ जाइ जाइ तु मनि विमामीउ'  
 करणु भणइ 'सच्चु कहउ पुणू छह एहु वि नाणू
- 680 दुरयोधन रहि आपणा भइ कल्या छइ प्राण" ॥ ८६ ॥  
 भणइ कहडु भणडु कहडु "वन जालेजि  
 नवि मानिउ तुम्हि हु एह वात प्रति दुई विरुई  
 अम मुक्त घरि अविषा पट्टुपत्र इह वात गरई  
 दुरयोधनि हु पडवह छठउ कीधउ तोइ
- 685 रघु खेडिसु अरजुन तणउ ज भावइ त हाउ" ॥ ८२ ॥

( ठवरिण ॥ १३ ॥ )

अतु लेउ विदुह गयठ वन माहि कहू वली द्वारावती जाइ  
 विहु पवि चालन दल सामही विहु पवि आवइ भड गहगही ॥ ८३ ॥

जरामिध नउ आविउ दूउ कानकुमर जई लगइ मूउ  
 वणिजारा ना वात माभना जरामिधु आवइ तुम्ह भणी ॥ ८४ ॥

690 उत्सव माहे उत्सवु एहु सविहु वयरा आया छु

(670) The MS has निकुलनु for नियकुलनु

(685) MS gives up its enumeration of ठवरिण from the VIII If it had kept it up, following its practice upto that point, it is probably that it would have placed the end of ठवरिण IX at st 22, of the X at st 36, the XI at st 57, of the XII at st 70 and at st 82 of the XIII This is one of the many points which another MS of the रास if found, will help to clear up

धमरा ना पणुमाय पाय एतद् गानु मु परि न जाइ ॥ ८५ ॥

'वरणु रइइ त्ति शुमानगा व इमा वान निणि जानइ भणी  
पाधि पवाने तिउ मनाटु आरिउ वट्ट कृ यर अनाटु ॥ ८६ ॥

695 आरिउ उत्तर अतु यररा मिनिउ वाग पट्ट नउ घाटु ॥ ८७ ॥

धृष्टमनु मनानो काउ वात वण्डव सामहउ  
परिय भूमि सरमति नर आधि दतु आरर तिणि कुणपधि ॥ ८८ ॥

वउरव नइ ति शु मगउ वुट्टु टुग्याधनु गानु मिनेऊ  
गवुनि दुसामणु उयशु वुशु गरुउ भूरिपसा भगणु ॥ ८९ ॥

700 मिनाउ जरासिनु चानवन्नि म उगउ एम इर मइरि  
दुरयातु अति मन्नि चान जाँ जरासिध पाण पनीउ ॥ ९० ॥

मुभ रण पहिउ त्ति अवाणु उव व उउ तिम माणु  
ए मनाता गण प्र विना तुणिया न वउ ॥ ९१ ॥

705 न मिनाया वतगताय मु गयवर गतगताया  
घर अमवाय मववताय मम मगिक्कर टनताया ।

रणगगाया मधि मव तुर अवर आरवा  
हय गयवर सुरि मगाय रणु उउ जगुनपाउ ।

पडर थय चतवत विम मागिणि शुणु माधउ  
गर वरि गइ वर तुरगि तुरगु राजन रणु न घर ।

710 भिउ म उरवडर माम घ नउ तिम नउवउ  
मइ धुम उमम वार मगन तिम मववर ।

गयधउट्ट गडमन धार धयवड पर पाउ  
हममना मामत मगु सरमति तिवाउ ।

मऊ मउ राउ त्तिमि त्तिमि गगउ विणाम  
तउ आरमर त्तिमि वट्ट मन माउ विमानउ ।

मनाउ गल्लिउ मवति कृ अर उउ रणु पाउऊ

703) This stanza is numbered 92 in the MS and there is ॥२॥ showing the loss of the metre The new metre begins thereafter and stanza-enumeration ceases

- ताम सिलडीय तणीय बुद्धि तऊ बाहि णिलाडीऊ ।  
 भरजुनु पूठि सिलडीपाह बइसी सर मकइ  
 पडीऊ पीयामहु समर माहि निम भरजुनु चूवइ ।
- 720 त्रिगवा सरु रहावीयऊ सरि गगा घ्राणी  
 कऊतिगु दाखीऊ कऊरनाह पीऊ पायु पाणी ।  
 इग्यारमइ त्रिबसि दाणि ऊठवणा काजइ  
 माजु अण्डवु कइ अदाणू इम मनि चीतीजइ ।  
 काहल कलयल ढक्क वूक् अक्क नीसाणा
- 725 तऊ मल्हाऊ भगन्ति राइ गजु कराऊ सढाणा ।  
 चूरइ रहवइ नरकरोडि दतूसलि डारइ  
 भरजुन पाखइ पडवटु हणतु कुणु वारइ ।  
 दाणव दलि जिम दडवडतु दती देखी नइ  
 घायऊ भरजुनु धसमसंनू घयरी मूकी नइ ।
- 730 दिणि आयमतइ हणिऊ हाथि हरि पडव हरखीया  
 णिणि तेरमइ चक्रव्यूह गऊ कऊरवि भाडीय ।  
 अजुनु गिऊ वनि भूमिवा तिणि अभिवनु पइसइ  
 मारीऊ जयन्थि करीऊ भूमि तऊ भरजुनु हसइ ।  
 करीऊ प्रतिना चडीऊ भूमि जयन्थु रणि पाडइ
- 735 भूरिथवा नऊ तीण समइ सरि बाहु विडारइ ।  
 सत्यकु छेदिऊ बलिहि सीमू तमु दिणि चऊदमइ  
 रोतिहि भूमइ विसम भूमि गुरु पडइ कीमइ ।  
 कूडऊ बोलइ धरमपूनु हथीयार छडावइ  
 छेन्डि मस्तकु घुट्टुमनि क्रमु सिउ न करावइ ।
- 740 बार पहर तऊ चडाऊ रामि गुरनणु भूमइ  
 रणि पाडिऊ भगवतु राऊ कऊरव दल मभइ ।  
 करि करवालु जु करीऊ करणू समहरि रणू माडइ  
 फारक पायक् तूरग नाग नवि कोई छडइ ।  
 धूलि मिनीय भलमलीय सयल त्रिसि त्रिणयरु छाईऊ
- 745 गयणे दु दुहि दमदमीय मूरवरिजमु गार्डिऊ ।

- पाडइ चिष कदध वध धरमर्तनि रोनइ  
वाणि विनाग्नि विरग्नि कवि अरायण धधानइ ।  
इडु करीउ गाविनि ऋि रथु धरगिनि खनऊ  
माराऊ अरजुनि करणू कूडि रणि अणभूमनऊ ।
- 750 गयु गनुनि वऊ हणाय वगि नकूनि महवि  
सरवरमाहि वपारायऊ दुरवाघनु देवि ।  
राइ मनाउ ममायायऊ नीमिहि मू भिदऊ  
गनाहरि ऋणाय जाव मनि मातु मू फडिऊ ।
- 755 रुठऊ राम मनारिया जा ५दर जाइ  
इपु कृतवर्म अमयामता त्रिदर धाइ ।  
पाठनानि पायो वरू कूट ऋधऊ रतिरऊ  
निहणाय पच पचान वाव अनु रावमि जाऊ ।  
मीमू गिखडा तणऊ नागु छगऊ द्रतु माधाऊ  
पाप पराभय नर प्रवमि गनिमागु विराधीऊ ।
- 760 कट्टि वाधीऊ मूपण नागु मटु मागु निवागउ  
पणु मूनाय नपरि परापणि परिवाराय ।

॥ वस्तु ॥

- गनु ऋिउ गनु ऋिउ कट्ट उवर्णमि  
तहि अरजुगि मि ऋि अगिणाय मरू अगि उठाय  
वह दुम्बु मणि चितवाय ८८मन धग नयणि बुग्नीय
- 765 कट्ट सट्ट पराठवीड कृणवि निवारा रागु  
हविणारपुरि आवीया अनि आयुडि नागु ॥

(746) वय after ववध is not in the Ms the addition is conjectural

(764) वनु in दुम्बु is moth-eaten, hence it is conjectural

(765) The Ms has पराउवाउ for परीवाउ

(766) The Ms has उवणि and not the number written in it

( ठवणि ॥ १४ ॥ )

- यापीऊ पडव राजि कहडु ए उत्सवु अति करण  
 कूणविहि ऋवि गधारि धयरू ए राऊ मनावीऊ ए ।  
 770 हरीयग द्वर्पादि दवि इरू दिणू ए नारद परिभवि ए  
 वेह रहइ कहु जाणवि सुद्रह ए माहि वाटडी ए ।  
 प्राणीय धानुकी पटि देवीय ए अरि वसि घानीया ए  
 पहुतना पासि गगेय जय तणी ए साभनइ वानडी ए ।  
 ऊपनु केवलनाणु सामीय ए ननि जिणोसरह ए  
 साभनी मामि बखाणू निरता ए सावयवतु धरइ ए ।  
 775 वरतीय दसि अमारि नामिक ए जाईऊ जिणू नमइ ए  
 दिणि दिणि ऋजइ दाव पूजीय ए जिण भूयण ऊपनऊ ए ।  
 ऊपनऊ भवह वइराणु वेऊ ए पीरीयलि पाटि प्रतोठिऊ ए  
 सामीय गणुहर पासि पाचह ए हरिखिहि वरू लिइ ए ।  
 साभली बलिभनि वात नियमवू ए पूठए पूछइ प्रभु कह ए  
 780 वोनइ गुरु धर्मधापु 'पुवभनि ए पाच ए कूणवीय ए ।  
 वसइ ति अचलह गामि बधव ए पाच ए भाविमा ए  
 सूरईऊ सतुन देवु मुमतिऊ ए मुभद्रु सूचाणु ए ।  
 सुगुरु दगाधर पासि हरिखिहि ए पाच ए व्रतु धरए  
 कणगावलि तपु एउ बीजऊ ए करइ रणगावली ए ।  
 785 मुकतावलि तपु साम् चऊथऊ ए मिहनिक्कीलिऊ ए  
 पाचभु आविनवधमानु तपु तपी ए अणूतरि मवि गिया ए  
 चवीयना सुम्हि हूआ पचइ ए भवि ए सिवपुरि पामिमऊ ए  
 साभली नेमिनिरनाणु चारण ए सबणह मूणि बैयणि  
 सेत्रुजि तीधि चदेवि पाचह ए पाडव सिद्धि गिया ए  
 790 पडव तगऊ चरीनु जा पडए जो गुणइ मभलए

(772) The ms has पमि for पासि obviously an error, the metrical final ए dropped in this line and also in lines 775, 776

(777) The ms has वाटड for वेऊ

(779) The ms has पुद्रण for पुठए



पाप तणुऊ विणु तगुगु र्हइ ँ हेना होइसि ए  
नीपनऊ नयरि नाऊऊणि वच्छरी ए चऊऊहोतर ए  
तदुननेवातीपमूत्र मामिना ँ भव अग्नि ऊधर्या ए  
पुनिमपवभुणिगं मालिमद ँ मूरिहि नामीऊ ए  
देवचद्रऊपराधि षडन ँ राधु रमाऊतु ए ॥

॥ इति पञ्चपञ्चचरित्रराम । समाप्त ॥ छ ॥ १ ॥ ❀



(791) The ms has पाप in thaplace of पाप

❀ (आरिण्टन रिमर्च एम्पीयूट, बहोना, मे प्रकाशित 'पुनर

रामावती' मे मामार)

## गौतम रास १

१५वीं गतांगी के पूर्वार्द्ध में पक्षपाण्डव चरित रासु के पश्चान् काव्य सौष्ठव तथा कथा प्रवाह की दृष्टि से एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कृति गौतम रास है। भाषा भाव तथा काव्य इन तीनों रूपा में यह कृति अपन में पूर्ण है। ६०० वर्ष की प्राचीन रचना होने पर भी कृति का पाठ रचना अधिक नाकप्रिय है कि आज भी मारवाड़ी जैन श्रावण (खरतर गच्छीय) इसका प्रतिदिन पाठ करते हैं। रास कई बार प्रकाशित हो चुका है। सर्व प्रथम श्री नाथूराम प्रेमी २ और पश्चान् श्री कामताप्रसाद जैन ३ ने इस कृति के महत्व पर प्रकाश डाला। डॉ० रामकुमार वर्मा ने भी अपने आलोचनात्मक इतिहास में इसका उल्लेख किया था। ४ इन विद्वानों ने ५ 'उत्पन्न मुनि इम भण्डे और वही विजयभद्र मुनि इम भण्डे पाठ मिलन में रचयिता का नाम ही उत्पन्न या विजयभद्र रख दिया पर वास्तव में ऐसा नहीं है। स्वर्गीय देसाई माहानलान ६ तथा श्री अग्ररचन् नाहटा ने ७ इन भूत का परिहार कर लिया है। रास का स० १४३० की सबसे प्राचीन प्रति वाकानर बड़े जान भण्डार में सुरक्षित है जिसकी पुष्पिका में—कृति था गौतम स्वामी रास श्री स्तम्भ तीर्थ विहारे श्री विनय प्रभोपाध्याये कृत पाठ मिलता है। अतः यह बहुत सम्भव है कि रास

१—साहित्य बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् श्री अग्ररचन् नाहटा का लेख 'गौतम रास व उनके रचयिता पृष्ठ २-६।

२—हिन्दी जैन साहित्य का इतिहास श्री नाथूराम प्रेमी पृष्ठ ३७। ३—वही।

४—हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास डॉ० रामकुमार वर्मा, द्वि० स० पृष्ठ १३५-१४२।

५—जैन सिद्धान्त भाग २० विरग २ में प्रकाशित—अग्ररचन् साहित्य पर प्रो० रामकुमार जन का नमः।

६—जन गुर्जर कविषा श्री माहानलान देसाई भाग १ पृष्ठ १५।

७—साहित्य बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, गौतमरास, श्री अग्ररचन् नाहटा का लेख।

पाप तणुऊ विणु तमुागु रहइ ँ हेला होइसि ए  
नीपनऊ नयरि नाउउणि वच्छरी ए चउउहानर ए  
तदुननवातीषमूत्र मामिता ए भव अम्हि उषर्पा ए  
पुनिमपषमुणि मारिमः ँ गुरिहि नामोऊ ए  
एवचउउपराधि ५८४ ँ रागु रमाउउ ए ॥

॥ इति पंचपञ्चरत्नराग । समाप्त ॥ छ ॥ १ ॥ ॐ



(791) The ms has पाप in thaplace of पाप

ॐ (सौरिणः रिसर्षः कल्याणः, बहोना, मे प्रवागिन 'पुर्मर  
रागावती' म मामार)

## गौतम रास १

१५वां शताब्दी के पूर्वार्द्ध में पञ्चपाण्डव चरित रामु के पश्चात् काव्य सौष्ठव तथा कथा प्रवाह की दृष्टि से एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कृति गौतम रास है। भाषा, भाव, तथा वाच्य इन तीनों रूपा में यह कृति अपने में पूर्ण है। ६०० वर्ष की प्राचीन रचना होने पर भी कृति का पाठ रचना अधिन लोचप्रिय है कि आज भी मारवाडी जैन श्रावण (खरतर गच्छीय) इसका प्रतिदिन पाठ करते हैं। राम कई बार प्रकाशित हो चुका है। सब प्रथम श्री नाथूराम प्रमी २ और पश्चात् श्री कामताप्रसाद जैन ३ ने इस कृति के महत्व पर प्रकाश डाला। डा० रामकुमार वर्मा ने भी अपने ग्रानोचनात्मक इतिहास में इसका उल्लेख किया था। ४ इन विद्वानों ने ५ 'उत्पन्न मुनि इस भण्डे और कही विजयभद्र मुनि इस भण्डे पाठ विनय में रचयिता का नाम ही उत्पन्न या विजयभद्र रख दिया पर वास्तव में ऐसा नहीं है। स्वर्गीय देसाई माहनलाल ६ तथा श्री अणवरत्न नाहटा ने ७ इस भूत का परिहार कर दिया है। राम की सं० १४३० की सबसे प्राचीन प्रति बीकानेर बड़े नान भण्डार में सुरक्षित है जिसकी पुष्पिका में—इति श्री गौतम स्वामी रास श्री स्तम्भ तीर्थ विहारे श्री विनय प्रभोपाध्याये कृत, पाठ मिलता है। अतः यह बहुत सम्भव है कि राम

१—साहित्य बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, श्री अणवरत्न नाहटा का लेख 'गौतम रास' व उसके रचयिता पृष्ठ २-६।

२—हिन्दी जैन साहित्य का इतिहास श्री नाथूराम प्रमी, पृष्ठ ३२। ३—वही।

४—हिन्दी साहित्य का ग्रानोचनात्मक इतिहास डा० रामकुमार वर्मा, द्वि० सं० पृष्ठ १३५-१४२।

५—जैन सिद्धांत भास्कर भाग २०, विरग २ में प्रकाशित—अपभ्रंश साहित्य पर प्रो० रामकुमार जैन का लेख।

६—अन गुजर कविया श्री माहनलाल देसाई भाग १ पृष्ठ १५।

७—साहित्य बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, गौतमरास, श्री अणवरत्न नाहटा का लेख।

की रचना सं० १४१२ में गौतम स्वामी के वैवल्य ज्ञान प्राप्ति दिवस पर लम्बत में श्री विजयप्रभ उपाध्याय ने की हो। कृति के पद्यों में भी अनेक पाठान्तर मिलते हैं तथा विभिन्न प्रतियाँ में पद्यों की संख्या भी भिन्न भिन्न है।

रामकार स्वयं प्रसिद्ध मुनि और कवि थे अतः १४३१ की कृति में उपर्युक्त पाठ में ज्ञान होता है कि रामकार ने यह पाठ भी सं० १४१२ में ही गौतम स्वामी के वैवल्य महोत्सव पर्व पर लिखा हो। प्रति की प्रतिलिपि अथवा जैन ग्रन्थालय बीकानेर में उपलब्ध है।

प्रसूत राम चरित मूलक है। प्रसिद्ध जैन तीर्थङ्कर महावीर के प्रथम गणधर गौतम की माधना का दमन विस्तृत वर्णन है। रास घटना प्रधान और भाव प्रधान ज्ञान का गमनित रूप है। राम की कथा विचित्र घटनाओं से सजाई गई है, जिनके वर्णन में कवि का काव्य-कौशल परिलक्षित होता है।

गौतम का मूल नाम इन्द्रभूति था व गौतम उनका नाम। मगध प्रदेश में राजगृह के ममीप गुप्तर गाँव में उनका जन्म हुआ। उनका पढ़ाई की ऊँचाई ७ हाथ था। इन्द्रभूति ५०० गिण्या के प्रतिभागात्री एवं असाधारण विद्वान् गुरु थे। एक बार श्री महात्मार स्वामी पावापुरी आये वहाँ उन्होंने समवसरण बनाया। हजारों स्त्री-पुरुषों के श्रवणों का वहाँ ज्ञान रूप गौतम को अपने श्रवण पर लभ हुआ। वे ५०० गिण्या महिन् महात्मार स्वामी में शारदार्य करने पहुँचे। महावीर ने उनका समाधान करने के प्रयासों में किया। इन्द्रभूति ने महावीर में शिष्या ग्रहण करनी। १०० गिण्या भी लक्षित हुए और गौतम प्रथम गणधर कहलाये। अनुक्रम में ११ प्रधान धर्म ज्ञानों ने महावीर का गिण्यत्व स्वीकार किया। गौतम के अतिरिक्त जा भा महावीर में दीक्षित हाता उमे वैवल्य ज्ञान प्राप्त हो जाना था। आश्विनिक के मन्त्रों एवं जिनायका में शीघ्र गौतम ने रास में एक पात्र में अमृत गुप्तर मव तापसा को खाद भी व शीघ्र खिनाई अतः वे १०० तापसा ही रजनी हो गये। ५०० को महावीर का समवसरण लभन हो वैवल्य ज्ञान मया। उस तरह १४०३ तपस्वी वैवरा हो गये पर गौतम का वैवल्य ज्ञान नष्ट भिन्न सवा कयाकि महावीर के प्रति उनका मन में राग था। ७२ वर्ष की आयु में गौतम का निवृत्तवर्ती श्रम में उपर्याय भेजकर महावीर ने निवाग्य प्राप्त किया। गौतम का वन पात्रा हुई उन्मत्त भावा महावीर ने अतः समय में मुक्त यह माधकर कि गौतम जानन का तरह पाछा पकड़ कर मुझमें वैवल्य मागगा दूर भेज लिया। मुझे भुनावे में डान लिया सच्चा मन नष्ट किया। विनाप करत हुए उनका मनम यह बात आई कि महात्मार ता धारणी ये, उनका साथ राग मात्र कैसा ? और ज्ञान

प्राप्ति के साथ ही वे बैवली बन गये । गौतम ५० वर्ष तक गृहस्थ रहे । ३० वर्ष तक मयमी रहे और १२ वर्ष तक बैवली रूप में विचरे और १२ वर्ष की आयु में मोक्षगामी हुए । कथा का सार यही है ।

सम्पूर्ण काव्य में कवि ने घटनाओं का चयन, तथा गौतम का चित्रण उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं के उत्कृष्ट वर्णन के माध्यम से किया है । प्रकृति वर्णन में भी कवि की सान्नीध्य नहीं है । पूरा काव्य चरित मूलक भाष्य है । जिसकी कथा वस्तु धार्मिक है । तथा गौतम व महावीर की साधना से सम्बद्ध है ।

गौतम राम एक ऐसा खण्ड काव्य है, जिसका उद्देश्य जीवन को प्राध्यात्मिक और साधना की ओर उन्मुख करना है । विहार के ही नहीं, समस्त मानव समाज की प्रवृत्तियाँ में निवृत्त कर सदप्रवृत्तियाँ की ओर आह्वान ही प्रस्तुत रास का सन्देश है । एतदर्थ रास के प्रमुख-प्रमुख कायात्मक स्थला का निरीक्षण किया जा सकता है ।

कवि ने समवसरण की रचना में पर्याप्त उत्साह दिखाया है । इन्द्रमूर्ति की स्पर्धा और पाच सो दिव्या सहित समवसरण में जाकर महावीर में साक्षात्कार करना और महावीर का वेद उक्तियाँ में उमे समझाना गौतम का दीक्षित होना, प्रथम गणधर बनना तथा गौतम द्वारा सूर्य किरण पर चढ़कर २४ तीर्थह्वरा के मंदिर में जाना और पुनः अनेक तपस्वियों को कवली बनाना आदि अनेक स्थल गेयता और काव्यमयता के उत्कृष्ट प्रमाण हैं —

जोजन भूमि ममोसरणू पेल्लइ प्रथमारभि  
दसनिमि देखइ विवुधवडू आवति सरभि  
मगिगम तोरण दड धज कउसी मे नववाट  
वयर विवज्जिनु जतुगण प्रतिहारिज भाठ  
सुरनर किरर अरवर इद्र इद्राणिराय  
चितिय मुक्किड चोतउ ए सेवता प्रभुपाय  
सहस किरण जिम वीर जिणू पेल्लवि रुव विमालु  
एहु असमं भुमभवण माचउ अ इद्रियालु  
तउ वानावइ भिजग गुरो इद्र मुइ नामेण  
थो मुल ससा सामि मवि फंडइ वडू पएण  
मानु मेळ्ळि मण्ठलि करे भगतिहि नामइ सोमु  
वधव सजम मुगिगव करे अगति म्इ आवेइ  
नाम लेइ आमावि करे त पुण प्रति बोवेई

गच्छ शनि अभिमानि तापगत्रा मनि चातक  
 भा मुनि घटित वणि प्रातववि तिनकर विरण  
 कंचन मणि त्रिपन्न ऋकनम घयवउ सहित  
 पसइ परमाणुति जिणहृद भरदमद विहृद उ  
 निय निय काम प्रमाणि षट् तिमि मंडिय जिणु विउ  
 पणमवि मन त्तामि गानन गणुहृद तहि वमित (२६-२७)

राम का प्रकृति उल्लेख कवि के काव्य कौशल का जागरूक प्रमाण है।  
 कवि ने गीतम स्वामी की साधना और गाननेता का वर्णन प्रकृति के उपासकों  
 द्वारा किया है। कवि ने श्री गीतम गणुपर में महापुरुषों के ममी अत्यन्त शुद्धों  
 का समानेन किया है। उनका व्यक्तित्व कवि ने वही सा कुशलता से तथा बड़े  
 विचित्र उपासना से निमित्त किया है। उपासा और उत्प्रेरण भरम है। वर्णन  
 का क्रम सुन्दर है तथा विविध उपासकों का पुत्र है —

जिम महकारिणि वादन त्कउ  
 जिम हनुवह वनि परिमउ बन्त त्ति वनि मोर्गध विधि  
 जिम गगाननु त्तरिणि त्कइ  
 जिम वणुमारतु मन्निणि भनकर ति तिम गायम मोन्नापनिधि  
 जिम मानम सरि निवसइ इंघा  
 जिम मुरवर मिरि वणुवत सा जिम महकर रानीव टनि  
 जिम रदलायद रमणिहि बित्तस,  
 जिम अ धरि तागणु विकनर तिम गायमु गृग कलिषनि  
 वृधिम त्रिणि जिम ममिह मा  
 मुरवर मन्निमा जिम जष्टमाह पुरव त्रिणि जिम मन्मतरा  
 वंघानु जिम गिरिवरि रात्र  
 नरवर धरि जिम भयान गात्र तिम त्रिन मामनि मुदिपवरा  
 जिम गृ त्तरि माण्ड मावा  
 जिम उत्तमि मुक्ति मन्रा भाया जिम वनि कनकि महमन्  
 जिम नृमिनिधि मृवनि चमन  
 जिम जिम मन्त्रिणि घटा रगुवद गोपम त्रविधि गन्तए (२८-४१)

नाटक की एक काल स्थिति का चित्रण दश मार्गिक है जब महावीर  
 निर्वाण का प्राप्त होते हैं और गीतम का समान के गाव म प्रतिवाच का प्रेषित  
 कर देने हैं। गीतम उन्हें जान तब शानकों का तरह पूरा पदन है और इमी

विलाप में उन्हें महावीर के वीतरागा होने का ज्ञान होता है तथा उनका जितना राग महावीर के साथ था, वह सब छूट जाता है और बैबली बन जाते हैं। उनके मन के अतर्द्धन्द् को कवि चित्रण करना चाहता है। महावीर के जाने के बाद गौतम के मन में उठने वाले सवल्प विवल्प—“मुझे दूर भेज दिया, लोक-व्यवहार का पालन नहीं किया।” हे प्रभो! आपने सोचा हागा गौतम बालक की तरह पीछा पकड़ कर मुझमें बैबल्य मागेगा। आपने मुझे भुनाव में डाल दिया, सच्चा स्नेह प्रकट नहीं किया। आदि—बड़ी ही मार्मिकता प्रस्तुत करते हैं। कारुण्य हृदय गौतम विलाप करते हैं—

प्रयोउ ए गायमु भामि देवसमी प्रतिबोध किए  
 आपणिए ए त्रिशला देवि नरण पत्तड परम पए  
 वलतउ ए देव अवासि पेखवि जाणिए जिय समउ  
 तउ मुनि ए मनिहि विपाडु नाद्रमद जिय ऊपनउ  
 तउ मुनि ए सामिय देखि, आप कहा हउ टालिउ ए  
 जाणतई ए तिहूयण नाहि लाव विवहारु न पालियउ  
 प्रति भउ ए ओधउ सामि जाणिए क्वबु सागिसिए  
 चोतविउ ए बालक जम अहवा केउइ लागिसिए  
 हउ किमवीर जिणिए भगतिहि भालउ भौलविउ  
 आपण एउ चियउ नहु नाहि न सपए सूचविउ (३३-३५)

श्रीर कृति इस तरह निर्वेदात् हाकर निखर उठी है। भाषा की दृष्टि से कृति की भाषा पर अग्रभ्रंश का पर्याप्त प्रभाव दृष्टिगोचर होता है इसका कारण यह है कि सम्भवतः यह कृति १४वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लिखी गई है। क्योंकि जिस समय यह रास लिखा गया, उस समय कवि बहुत बृद्ध होगये थे। अतः बहुत सम्भव है कि इसका लेखन काल १४वीं शताब्दी रहा हो।

रचना गेय है। रासकर्ता ने रास के सम्बन्ध में अपनी श्रौर से कुछ भी नहीं कहा। रचना का देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यह रास गीति तत्व प्रधान है तथा चरितमूलक खण्ड काय है।

प्रति के अन्त में पुष्पिका इस प्रकार है स० १४३० कार्तिक सुदि प्रतिपत्त्या देव ॥ स्तवन पुस्तक ॥ (बड़ा जान भण्डार, बीकानेर की प्रति)

इस प्रकार १५वां शताब्दी की उपलब्ध प्रमुख रचनाओं में श्री विनयप्रभ उपाध्याय विरचित गौतम रास का स्थान भी महत्पूर्ण है।



## कलिकाल रास १

द्वारा रास मूरि १ वा गतांग क प्रमुख कविया म म रह है, जिनकी इस गतांग म क मठ-वर्ण, कृतियों मिनती है। जिनम वस्तुमान मत्रवान राम (म० १८६) आर्ग भद्रराम त्रु स्वामा वावाहना म० १८७ विद्याविनाम पवाडा म्युनिमद्र आरहमामा आदि प्रमुख है जिन पर दयावमर प्रकाश डाना नायगा। कवितान राम भा अनन्य प्रकार की रचना है। कवितान राम कवियुग का परिम्विनिया और गुग्गा पर प्रकाश आनता है। इस गतांग में राम मन्व रचनाआ म य अन प्रकार की पन्ना रचना है। कवियुग का नाक-स्थिति का वर्णन मन्मागत म मिन जाना है। जिन म बाण कवि का कवि चरित्र ७० १६७८ सर्वप्रथम मिनता है। म १७०० म मना वदकृत कविचरित्र और स० १८९५ म समिक गात्रि कृत कवियुग गमा म आदि प्रथम मिनत है। परन्तु प्रस्तुत राम बाण क कविचरित्र म मा २०० वर्ष पुराना रचना है। इसका प्रति जमनमर क अन भण्डार म है तथा प्रतिनिधि अमय अन प्रयानय म उपनय है। प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जाधपुर क एक गुप्त म मा स्वका प्रारम्भिक २८ भाषाण मिला है। रचना प्रकाशित है।

या द्वारा रास मूरि का यह रचना १५वा गतांग क उत्तरार्द्ध की है। जिनम इनका भाषा सरन सारम्याना या प्राचान हिता है। कवि न वर्णन म मयार्थ का महारा विना है तथा कवियुग क कठु मठ अनुभव का भविष्य उक्ता क अन म स्पष्ट करन म बडा मन्द रह है। १५वा गतांग म सुसंनाना सार म हुए अथाचार कवियुग क ही प्रभाव बताये गद है। प्रस्तुत सार नागना है, जिसमें कवि न जावन क हर पन्ना पर कवि का प्रभाव लिखाया है। पृष्ठे का स्थिति सारा भाग जिा वस्तु, हस्य मायु गुण नाय अमय तान तना मुनिवर आदि मत्रता परिवर्धित म्विति पर प्रकाश

(—जिन पन्नागनन वय १० अष्ट १, मर १ ५३ म आ भवरानन नादय का कवितान राम' गार्थ लय पृ १६-५६।

२-वहा।

डाना है। इस तरह की कलिकाल सम्बन्धी रचनाएं परवर्ती राजस्थानी कवियों की अनेक मिलती हैं।

कवि की यह रचना भास, वस्तु ठपण, ठउणु पाग आदि गायका के प्रसंगत विभाजित करके लिखी गई है। कवि ने वीर जिनद्र तथा सरस्वती का स्मरण कर रास प्रारम्भ किया है।

प्रारम्भ में ही कवि कलियुग की सामान्य प्रवृत्तिया का उल्लेख करता है तथा कलियुग के प्रभाव कन्ना है। वर्गन सरन वाक्य छोट भावपूर्ण तथा भागा अत्यन्त भरन है —

बार जिलेसर पामियनाणु कहिउ कलियुग सणउ प्रमाणु  
समइ गमइ बहुगुणनी हाणि ईणिवचनि सहइ हिव जाणि  
पृथ्वीय यरसइ थोडामेह थोडा भायु घणा सदेह  
रामिस हपि हुमा भूपान भयावी नइ अति विकरान  
नकरइ लाक तथा मुरसार, लाक हुमा हिव सविनिरपार  
अति निमघन दीमइ दातार कृपणह धरि लिलिमा भवतार  
पुण्यवत हुई क्षयउ ततकाल पापो नर जीवइ चिरकान  
भोपथ म कूम अप्रमाण, खारिय विद्या नहिय मुजाण  
अ तरग गयउ नह विसान, विरला दीसइ अत सुगान  
दव सवि हुमा निप्रभाव के न दीसइ सरन सुभाव  
काइ न पालइ बाल्या बोल सहइ नासत हूउ निटोन  
काई न लीसइ गुणि गभार सहइ हुमा अबल अघोर

विनय विवेक, लोफ लाज सब दूर हो गई। साहस तत्त्व संसार में नहीं रहा। कलियुग के प्रभाव से दान और दानशील दोनों मिट गए हैं। परमार्थ का विनाश और पाषण्ड का प्रचार बढ़ बढ़ा है। क्षमा होन होगई भार कट्टु वाली का क्रम बढ़ गया है —

नीला लाज गई अतिइर परितदा छइ एकइ पूरि  
विनय विवेक अया अचार दयातणी कोइ करइ धारि  
साहस सत्व नहा सधार रगरती नही हिया मभार

दान दाकिन दान दाकिन गया परणैति  
कृपान पउ हूउ धणु छतइ दृब्य खाइन पीइ  
ज अचइ घट आभणउ किमु दानते कृपण दोह

हा मन रचावणा माणाय वात करति  
धरि धावतइ आहगाइ नामत नामाय जति (वस्तु ११)

चारा वणों का स्थिति भा कवि न बडा ज्यनाय जिया है । पसे क प्रमा स्वार्थी मित्रा तथा विण हूण उपकार का न मानन जाना की स्थिति भी उल्लेखनीय है —

बभग कुन आचरहि हीण विनोयनाव धनत्रिहि लाग  
सूग साव मनि नवि धरइग  
पाणि तगइ मिति दाहिइ सहूअ वणिइ साहिज हूआ बहुअ  
निरत्य कर्म समाचरइग

आप सवारथि सहूइ काई परकडू ठर विरवउ काई  
काज विणमग अति घणाए  
आन अरथि मइ बडुनहु भाधर अरथ जिकानइ छेहु  
अरथ मित्र अनुमानणाए  
काइ न जाणइ ह्याकाया कृतपन नाक सब हिव हूआ (वस्तु १४)

बुद्ध अद्भुत तथ्या के द्वारा भी कवि न काव्य-बोधन एव कलियुगा प्रभावा का परिचय दिया है । काव्य का मन जाना मति का निष्ठुर हाना धर्ममार्गों में हुए अनेक प्रचलित मत मतानरा का वर्णन तथा सत्य में दूर कूटवाणा वाचा का सम्मान आदि चित्र कवि न बडे हा माहक पैला में प्रस्तुत किये हैं —

मेर समान किया उपहार सरभव ममवटि गणइ गमार  
अवणुण एउ न बीसरइ ए  
पणि पणि जोइ टिठ्ठे अपार नवि जोई आपण आचार  
अम्हि कुरा मारणि अनुसरउ ए  
हू गरि अपरि यतइ नई पा ह्मिइ त गणइ तय  
आपण पु मावइ पणउ ए  
नजाय पाउउ जय अनरउ निम्नारीय महि कहिइ अनरउ  
ज गुण हूई त आरर ए

धरम मारण धरम मारण हूआ बडु भउ  
ज पुधि जई त कहिए धर्म भाणु अम्हि कहउ मचउ

भापि प्रशासनगि सहृम अंवर धम्म मुहि कहउ कचउ  
 म धउ म फा बाहुडी भाविम वेडि लग्ग  
 जाण नयरह मणी कण्ण दिखाउइ मग्ग  
 साच कोई माहू कोई बोवति

साचइ राचइ कोइ नवि कूड कपट सहृइ पतीजइ  
 पसा अमयकुमार जिम धरम दभि वधीय लीजइ  
 कूउ वचन वानड जिवे माया रचिह भपार

षडइ वेगिहि षडइ वेगिहि मयउ वेसास  
 द्रोह भिन्न कन्न सुत भाइवाप गुरु विसइ सेतइ  
 देव दृव्य धरि वावरइ, लोभ म ध नयणे न देख  
 माय वाच कुत्र गुरु तणी मानइ नवि भासक  
 सरल भान विहि धानता हेल्हि षडइ कलक  
 दोहिलि घणीय सहतडा उपति विसी न होइ  
 हूमर पेट हूमा घणउ तिणि दुखिउ सह कोइ (वस्तु ३७-३८)

कवि के वाक्य छाटे, शैली उपप्रेमात्मक और रचिकर है। प्रस्तुत काव्य जन-काव्य है अतः कलियुग सम्बन्धी समस्त स्थितियाँ और मर्यादाओं का लोप कवि ने बताया है। व्यवहारिक जीवन में कवि की वाणी एकदम यथार्थ है। मुनियों के लिए कवि ने एक अत्यन्त उत्कृष्ट चित्र खींचा है। भाषा की सरलता आलंकारिता तथा क्या-तत्त्व की भाँति जनरुचि पर विजय पाने वाला प्रस्तुत रास है जिसको पढ़ने में बड़ा आनन्द मिलता है। साहित्य का उपयोग यही है कि वह व्यवहारिक जीवन के लिए निरन्तर उपाय्य व हितकारक एवं मार्ग प्रदर्शन करने वाला हो। कवि ने मुनियाँ तथा श्रावकों का कलियुगी कायाकल्प बताया है। उद्धरण उल्लेखनीय है —

मुणिवर मछरि आगला ए पणि पणि करइ विरोध  
 एकइ मारणि अतरउ ए, आणइ अतिहि अबोध  
 काहि लोहि महि मोहिया ए भारणि नवि चालति  
 आप प्रशसा तप करइ ए, परनिदा बोलति  
 लोक तणा मन रजिव ए वयणि धरइ वय रागु  
 साचा धरम ह उपरिई ए, नवि दीसइ अनुराग  
 पचविपय जीता नहीं ए, जिणि हिच्यारि कपाय  
 तेह तेहरइ सजमि करीए, जीवन तणुउ उपाय

ता मन रचायणा मार्गय वान कर्ति  
धरि भावनं भाग्यं नामन नामान जति (वस्तु ११)

चारा वणों का स्थिति भा कवि न उदा अनाय सिम्हा है । पैग क प्रमा स्वार्थों मित्रा तथा विष्ट ह्यु प्रकार का न मानन गाना का स्थिति भी उन्मत्तनाय है —

बभगु कुन भाचरति हाण विद्यायनाय प्रवत्रिदि साण  
मृग साव मति नति घरण  
पाणि तणइ मिमि शाण सुप्र वणिइ माण्डि ह्युपा बहुप्र  
निरण्ड कर्ने मनाचरइण

प्राण मवारदि महुइ कां परवट्ट उर विरनण काइ  
कात्र सिग्गुमण प्रति घण्ण  
प्राण परधि मइ अणुण्ड साण अरय सिम्हानइ धु  
अरय मित्र अनुत्तमाण

काइ न उण्णइ टाकाणा, कृत्तपन ताक मव त्वि ह्युपा (वस्तु १८)

कुत्त अद्भुत लच्छों क द्वारा भा कवि न वाच्य-कौशुल एव कवियुगा प्रभावों का परिचय सिन्हा है । वाच्य का एक जाना मति का निष्पूर हाता धममार्गों में हुए अनक प्रचलित मत मत्तानना का वगन तथा मय म दूर कृत्वाणा वानों का सम्मान आदि चित्र कवि न व न मात्क गैना में प्रस्तुत किय है —

म ममान दिना उरगार सखेव मनवदि गण्डइ ग्गार  
अवणुण एव न वाधरइ ए  
पति पणि जाण डिद्धे अणार नवि नां भाणु भाधार  
अम्हि कृत्त मारणि अणुणरए ए  
२ रि अरि वनरउ तेणं एा ह्युण्डि ए गण्डइ तत्रं  
अणुण पु माण्डि घण्ट ए  
दक्षा वाटण शीघ्र अणरए विन्नाराण मदि कहिइ अणरए  
अ गणुण्डु त अणरए ए

धरम गण वरन मारण ह्युपा बहु म  
अ पुदि जई त कहिण धर्म माणु अम्हि कृत्त वचउ

भापि प्रगसातगि सहृद्य भ्रंवर धम्म मुहि व्हउ कचउ  
 म घउ भफा वाटुडो भाविय बडि लग  
 जाए नयरह मणी ववण त्तिवाउइ मग्ग  
 साच कोई माह कोई बोदति

साचइ राचइ कोइ नवि कूड कपट सहृद पतीजइ  
 वैशा अभयकुमार जिम धरम दमि वधीय तीजण  
 कूउ वचन वानड जिके भाया रघिह भयार

वडइ वेगिहि वडइ वेगिहि गयउ वेसात  
 द्रोह मित्र वनत्र सुत माइवाप गुरु विसइ लेखइ  
 देव दृश्य धरि वावरइ, लोभ म घ नयणे न देख  
 माय वाउ कुन गुरु तणी मानइ नवि भासक  
 सरल भाव विहि चालता हेनहि वडइ कलक  
 दोहिलि धणीय सहतडा उपति किसी न हाइ  
 दूमर पेट हूआ घणउ तिगि दुखिउ सह कोइ (वस्तु ३७-३८)

कवि के वाक्य छाटे गैली उपदेशात्मक और चंचिकर है। प्रस्तुत काव्य जन-काव्य है अतः कलियुग सम्बन्धी समस्त स्थितियाँ और मर्यादाओं का लोप कवि ने बताया है। अर्थहारिक जीवन में कवि की वाणी एकदम यथार्थ है। मुनियों के लिए कवि ने एक अत्यन्त उत्कृष्ट चित्र खींचा है। भाषा की सरलता आलंकारिता तथा क्या तत्त्व की भाँति जनसचि पर विजय पाने वाला प्रस्तुत रास है जिसको पढ़ने में बड़ा आनन्द मिलता है। माहित्य का उपयोग यही है कि वह अर्थहारिक जीवन के लिए निरन्तर उपायैय व हितकारक एक मार्ग प्रदर्शन करने वाला हो। कवि ने मुनिया तथा श्रावका का कलियुगी कायाकल्प बताया है। उद्धरण उल्लेखनीय है —

मुणिवर मछरि प्रागजा ए पगि पगि करइ विरोध  
 एकइ मारगि अतरउ ए आणइ अतिहि अबोध  
 कोहि लोहि अहि मोहिपा ए मारगि नवि चालति  
 प्राप प्रगसा तप करइ ए परनिता वानति  
 लोक तणा मन रजिव ए वपणि घरइ वय रागु  
 साचा धरम ह उपरिइ ए नवि दोसइ अनुराग  
 पचविपय जोता नहीं ए जिगि हिच्यारि कपाय  
 तेह तेहरइ सजमि करीए जीवन तणउ उपाय

कृत्वि भाव श्रावक हृष्य ए, हीयद्वद प्रति निरभाव  
 ममवित धर मुत्तद्वद वद्वद ए, चनावद बहुपाव  
 धरि करमगु महिषी करद ए कुत्रिगज करद श्रपार  
 हरणाग लक्ष्मीय कविनमद ए एतदुठ मनि अहंकार  
 गुरु उपत्त मुगद मत्त ए नीयद्वद नत्रि भोजति  
 पावर पागिय भरि वमद ए, भोनरि नत्रि भोजति (ठगणि २६)

वस्तुतः पूरा राम कविकान का स्वरूप चित्रण करता चना गया है।  
 छन्द अनन्तर श्रीर रस की दृष्टि में रचना माधारण है परन्तु वस्तु, गीत  
 भाषा, श्रीर वर्ण्य विषय की दृष्टि में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। रचना की भाषा में  
 अपभ्रंश का प्रयोग दू टन पर ही मिलेगा। ऐं रागस्थानी तथा गुजरानी का शब्द  
 ही मिलत हैं। पर पूरी रचना का सरल हिन्दी का रचना कहा जा सकता है।

कवि ने मर्यादा उल्लंघन का चित्र की अनन्त सूक्तिया उदाहरणा दृष्टान्तों  
 श्रीर अतर्कबाधा द्वारा स्पष्ट किया है। यह स्थान राम का बटन ही महत्वपूर्ण  
 भाग है —

प्रति निरभावन लक्ष्मी मुक्ति वाणि कनेर  
 च्यारिद वर्ण इम्या हृष्याण धर माहि जि चार  
 माद वाप बधव कुटुब स्पू करद विरोध  
 दीमद धरि धरि नव ननाण वारणि विनु क्रोध

लौकीय कुन गुरू तर्णीय रीति मूकी मर्यादा  
 मीय लीयता हरद राग मांडद हृदना  
 नीच मात्र उत्तम तर्णाण अनन्तर मुग्गीजद  
 माच मूच जे नवि धरद त कहिद अनाण  
 जे धण माया केननद्वयण तीर्ण करद बध्याण  
 रणि परिनेता धन्य बात्र छद तिन्निविमाने  
 एहे नत्रिणि जाणीद ए आयद कविकाने (३६-६३ पृष्ठ ५८-५९)

सूक्तिम नाचन चम्प मण मन साचन जोउ  
 अतरम अरि निरजाण ए भन वसमल धाउ  
 दान सीन तप भावना च्यारह जिन भापद  
 सहृद निमपन हाद धर्म मन मृषी पापद  
 इमुद मुग्गी मन मुधि राद था समवित पावद

भगवद् हाराणं भवीय नाय भव अज्जमानउ (४४-४६)

वस्तुतः राम की वस्तु से ही स्पष्ट हो जाता है कि १५वीं शताब्दी तक आने आने राम को क्या-वस्तु सीमित नहीं रहा तथा उसमें विविध विषयों का भी विवेचन होने लगा। जैसा कि पूर्व पृष्ठा में अथ रामा में विविध विषय वस्तु रामा में वर्णित हुई है उसी भाँति प्रस्तुत राम में भी कवि ने अपनी स्वच्छा में कलियुग का सागोपाग वर्णन किया है जो इस पैमाने पर अन्यत्र दुर्लभ है। साथ ही कवि ने राम लिखने के अन्य उद्देश्यों को भी स्पष्ट किया है —

चउह छीयासीय वरसि एहकलिकानह रामो  
 तीणिह रचीउ भवीय नाय कजि उपदेश निवासो  
 भणइ गुणइ जे सुण भवि खेनइ नर नारि  
 ते मन वाछित सुख लहइ ए जाह भवपारे

इस प्रकार १५वीं शताब्दी की राम संनक कृतियाँ में भाषा और विषय की दृष्टि में 'कलिकान राम' का महत्वपूर्ण स्थान है।





## सौलहकारण रास

१५वा गतांग का रास रचनाग्राम एक ठाण मा राम मानह कारण राम है जिसके रचयिता मकर कार्ति हैं। यह रचना त्रिगम्बर भण्डार जयपुर का है। कृति ग्रामर के भण्डार जयपुर (श्री त्रिगम्बर श्रतिगय भेद कमनी जयपुर के भण्डार) में सुरभित है। प्रस्तुत रचना अप्रकाशित है तथा गुणिका न० २६२।५४ के पत्र २४२ २४३ पर लिखा है। प्रति का जवन काव सम्भवत १५वा गतांग के आगपास है। मकरकार्ति अपन समय के त्रिगम्बर कविया में प्रमुख कवि हुए हैं जिनका हाविका राम भा लिखा है। प्रसिद्ध त्रिगम्बर कवि ब्रह्मजिन्यास के ये समकालीन थे।

प्रस्तुत राम एक ठाण-मा खण्ड काव्य है जिसमें कवि ने प्रारम्भ में मगनाचरण के पदचान् साधना के लिए तप और तप के लिए १६ वारणा का विधान एक श्रेष्ठ कथा प्रियवता में किया है। प्रियवता का परिचय कवि ने एक दुर्भाग्यातिना गतधमा और पडरोगा युक्त मन्त्रा कुरुपिणा के रूप में किया है जो पूर्व भव में किये अपराध के कारण स्व गति का प्राप्त हुए थे।

जन्म दावण भरत यन मागध उन् रमा  
राजागृह उन् नगर ह्यम प्रभरात्र धनमा  
विजया मुनिरि कवननाम पराहित महामरमा  
प्रियवताता मु नारि पुत्रा गत धरमा  
कवान भैरवि राग सहित छन् रूपविदुगा

कवि ने पूर्व भव के कर्म सिद्धांत का प्रचार कथा के द्वारा किया है तथा सातव वारणा में जो साधना का सफलता और मनुष्या का निर्वाण का प्राप्ति कराने हे प्रेम करना चान्धिये यहा सातव किया है। कथा का नायिका एक बार पूर्व भव में आहार ग्रहण करने के लिये आये मुनिया पर घूरे गता है और उमी पार में वह इस जन्म में भयंकर रागा में प्रमित होकर कुरुपिणा बन जाता है। इस प्रकार का चारण मुनि उम पूर्व भव में किए पाप और इस भव में इसका उद्धार करने के १६ वारणा का उत्प्रेषण करते हैं —

राजा महीपाल वेगवतर छद्म रागी  
 विसालम्बी पुत्रि नाम विवक विहारी  
 आहार लेवा मुनि इक आया तख्यामा  
 आहार लेवा जाम चलिउ निरमल गुण धामा  
 गउसि बन्ठी तामु उवरि पूकिउ मन् भधी  
 राजा छेह ललूही करा तुस घूसठ गीना  
 निना गरहा आपु कर मुनिवन्त लजा  
 कु वरि ते तमु तियउ अनसरण आहारो

श्रीर दस प्रकार भित्थार्थ प्राये युगल चारण मुनि उमे १६ कारणा म  
 सम्पन्न व्रत करन का विधान ममभाने हैं । क्या मे धार्मिक तत्व हात हूण भी  
 इस छानी मा वृत्ति म क्या-तत्त्व जाने म पाठक मा आता की रचि बनी रहती  
 है । राम रचना का उद्देश्य उपदेश प्रधान है कवि जन-माधारण मे किम प्रकार  
 पूर्व भव मे किए दुष्कृत्या मे इस भव मे फल प्राप्ति का सिखावन दकर समय  
 व उपामना के १६ कारणा का क्या सूत्र मे बाधता है ।

इन कुली तेरो जनमु हुवा पूरव विन्देह  
 मोनह कारण वरत करो तीर्थकर छाइ  
 वचन साभना पावनमा कहि सामि विचाए  
 भाव्य भासि चैत्र मासि कहिए तिहुवारा  
 एकाति करि माम एक सायबु पानीज्जइ,  
 परिहरि घरि व्यापार सबे मन मुद्धि करीजइ  
 त्ति मभिकत धरि पानिपद सकानवि काज्जइ  
 मन नान चरित तपा तहि विनउ करीज्जइ  
 गोल व्रतु त्तिड पालिण सब दूपण टार  
 जान निरतर मार पढउ बहु भ गि विसानउ  
 भव भव भोग मरीर महि वर राणु धरीज्जइ,  
 चारिणान तप चारि भेइ सकति पानीज्जइ  
 मुनिवर मानु ममाधि करो उपमार करज्जइ  
 त्तिमवि वैयाकरन करो नेमे पानिज्जइ  
 घरहन त्तिव भक्ति करउ सब बीजा तानउ  
 प्राचारयु गुण भवि करो भगति प्रतिपान  
 नाम्न वना मुनि जा पन्हि त्ति भगति करीज्जइ  
 प्रवचन शानी भगति करी निदचउ शानीज्जइ

बादल प्ररघन पात्रियद ननि निचउ आणो  
 मानह भावन भादिय ए गुरु पाप बगानी  
 त्ति त्ति प्रतिमा पूजियइ निमि जाप जराज्ज  
 तामह धरन उत्रनउ भात्ति वानात्रद  
 न्वन विदेवन डार तानमित्तु त्तिज्ज  
 मुनिवर अज्जिय मयन मघ मयपूजरात्र  
 चारणु गुण पय नमस्वरी व्रत त्ति कर ताना  
 अन्तवाड मयाम करा त्ति मरणावि माधउ

इन्ना मानह कारण म नायिका प्रियवता भविष्य म श्रेष्ठ यानि वा  
 प्राप्त हूद । अन्त म कवि भरत वाक्य क रूप में ममा व्यक्तिया क दिण मगत  
 कामना करना है कि इन मोनह कारण वा मयमा बनर जा पाव । कग्गा  
 उम अमाधारणु प प्राप्त हागा —

एक चित्तु जा व्रतु करइ नर अहवा नारा  
 नीयकर प मान्ण जा मभिवत धारा  
 सकन कीति मुनिरायु वियउ ए मानह कारण  
 ज मभरहि त्ति मुह कारण

बन्तुत दन् अन्कार और रम का दृष्टि म वृत्ति का मन्त्रव मामाय है  
 परन्तु भाषा की दृष्टि म तथा कथा वभिन् य या वस्तु विकाम का दृष्टि म मानह  
 कारण राम उन्वेषनीय है । बन्धुधा त्तिम्बर कविया का रचनाए महा वादा में  
 हा अधिक मिनता हैं कयाकि वेताम्बर जैन मुनिया क कविया न रात्रस्थानी  
 और सुचरार्ती म अधिक लिखा, परन्तु त्तिम्बर कविया न मन्त्रा जना म  
 अयना माहित लिखा है । अन् भाषा का दृष्टि म प्रन्तुत राम वृत्ति का मन्त्र  
 अन्वय स्पष्ट है । या कुत्र मित्ताकर वृत्ति साधारणु है तथा कान्य का दृष्टि म  
 बहुत प्रौढ न्ना है । ब्रह्म जिननाम की वृद्ध और वृत्तिया का विरचन करन पर  
 उनक काय की मुख्य प्रवृत्तिया जानी जा सकता है । प्रन्तुत राम एव  
 वगनात्मक कथा काव्य है जिनका भूत उद्देश्य धर्म प्रचार मात्र है ।



असन प्रसा, पशु वस्त्र त्रिभिध त्रिधि, सत्र मनि महँ रह जैसे ।  
 सरण, नरक, चर अरर, लोन बहु, उसन मध्य मन तेने ॥३॥  
 त्रिप मध्य पुतरिका, सूत महँ वबुनि त्रिर्नाहि बनाये ।  
 मन महँ तथा लीन नाना तनु प्रगटत अरसर पाये ॥४॥  
 रघुपति भक्ति-धारि अलित चित, त्रिु प्रयास ही सूक्त ।  
 तुलसीदास कह चिद विलाम जग, ब्रूतत ब्रूतत ब्रूत ॥५॥

भाषाय — यदि यह मन अपने विचारों का छोड़ दे तो फिर भेद भाव जनित दुःख भ्रम और भारी शोक क्या हो ? मन के निरचल हो जान पर य सार इन्द्र भी धूट जायेंगे ॥१॥

शत्रु मित्र और उदासीन इन तीनों को मन ने ही तो हस्तगत करना पड़ता है ( वैसे, वास्तव में कोई शत्रु ही न मित्र और न उदासीन ) शत्रु को साथ के समान त्याग देना चाहिए मित्र को सुवर्ण की तरह प्रदण करना चाहिए और उदासीन की तिनके की नाह, उपस्था कर देनी चाहिए उनकी ओर कुछ ध्यान ही न देना चाहिए ये सब मन की ही कल्पनाएँ हैं ॥२॥

जैसे मणि में भोजन वस्त्र पशु और अन्नक प्रकार की वस्तुएँ समाई रहती हैं, वैसे ही मन में स्वर्ग नरक चर अरर और बहुत स लोकाँ सन्निहित हैं । भाव यह है, कि जब किसी के हाथ में मणि हो, तो वह उस बखतर चाहे जो खरीद सकता है उसी प्रकार हम मनरूपी मणि के प्रताप से यह जीव स्वर्ग नरक तथा अनेक लोकोँ में जा सकता है । यदि सुकम करेगा तो स्वर्गादि का लाभ होगा और कुकर्मों की ओर प्रवृत्ति करेगा तो नरकवास तो है ही । अतएव सिद्ध हुआ कि यावत् पदार्थों का भाण्डार यह मन ही है ॥३॥

जैसे पेड़ जमीन काठ के बीच में पुननी और सूत में वस्त्र बिना बनाये ही पहने से ही विद्यमान रहते हैं उसी प्रकार मन में भी समय समय पर अनेक शरीर जा उसमें लीन रहते हैं प्रकट हो जाते हैं । साराश यह कि मन की वासनाएँ जन्मादि क लिंग उत्तरदायी हैं । जसी कामना होगी वसा ही शरीर धारण करना पड़ेगा । मन के प्रभाव से मनुष्य देवता हो सकता है और मन के ही कारण खर, शूकर आदि भी ॥४॥

रघुनाथजी के भक्तिरूपी जल से जब चित्त धुलकर निमल हो जायेगा, अन्त करण से विषय प्रवृत्ति हट जायगी सब बिना किसी परिश्रम के ही सब कुछ (क्या सत है और क्या असत) दृष्टिगोचर हो जायेगा विवर सुनभ हो जायगा । किन्तु तुलसीदास कहते हैं कि चिदानन्द, ब्रह्मण्ड आत्मानन्द समभक्त समभक्ते ही समभक्त में आता है । क्रम-क्रम से ही चिदविलास प्राप्त होता है ॥५॥

शब्दाथ—ससृति = ससार । मध्यस्थ = उदासीन न मित्र भाव न शत्रु भाव । वरिभ्राह्म = जबरदस्ती । उपच्छनीय = उदासीन । पुतरिका = पुतली, मूर्ति । छालित = धोया हुआ स्वच्छ । चिद = (चित) चेतन ।

विशेष—(१) द्रव — राग और द्वेष — अनुकूल और प्रतिकूल सबदन ।

(२) सत्रु तमे — यहाँ क्रमालकार है । जहाँ दा लीन या और भा अधिक वस्तुधा का जिस जिस क्रम से पहले वणन किया जाए उसी क्रम से उनका वणन अत्र तक निवाहा जाए वना क्रमालकार होता है—

श्रम सो कहि पहले क्यूँ श्रम तें अथ मिलाय ।  
यों हों और निवाहिये, श्रम भूपन सु कहाय ॥

यहा ये क्रम ह—

१—शत्रु	२—मित्र	३—मध्यस्थ
१—त्यागन	२—गहन	३—उपेक्षणीय
१—अहि	२—हाटक	३—तन

(३) 'नाना तनु'—विविध यानिया क अतिरिक्त इसका यह भी अर्थ हो सकता है, कि मन स्थूल, सूक्ष्म, कारण महाकारण चारों शरीरों में किसी न किसी रूप में गुप्त रहता है, वह पिंड नहीं छोड़ता ।

(४) वृम्भन-वृम्भत वृम्भे—पहले कमकाण्ड आदि साधना द्वारा शरीर शुद्ध किया जायगा, फिर योग द्वारा मन शुद्धि होगा तब कहीं परम ज्ञान का उदय होगा । तब भक्ति का साम्राज्य स्थापित होगा ।

१२५

मैं केहि कहौ विपति अति भारी । श्रीरघुवीर धीर हितकारी ॥१॥  
मम हृदय भवन प्रभु तोरा । तहँ वसे आइ बहु चोरा ॥२॥  
अति कठिन करहि बरजोरा । मानहि नहि विनय निहोग ॥३॥  
तम, मोह लोभ अहंकारा । मद, क्रोध, बोध रिपु मारा ॥४॥  
अति करहि उपद्रव नाथा । मरदहि मोहि जानि अनाथा । ५॥  
मैं एक, अमित बटपारा । कोउ सुनै न मोर पुकारा ॥६॥  
भागेहु नहि नाथ उवारा । रघुनाथक बरहु मंभारा ॥७॥  
कह तुलसिदास, सुनु रामा । लटहि तसकर तब घामा ॥८॥  
चिता यह मोहि अपारा । अथजम नहि होइ तुम्हारा ॥९॥

भाषाय—तुम्हें छोड़कर है रघुनाथजी ! और किम म अपनी दारुण विपति सुनाने जाऊँ ? क्योंकि आप ही शरणागत का भला करने में धीर ह ॥१॥

हे नाथ ! मेरे हृदय में तुम्हारा निवास-स्थान है । पर अब उसमें बहुत से चोर आकर बस गये हैं मेरे हृदय में जो तुम्हारा मंदिर है चारों ने उसमें अपना अट्टा जमा लिया है । अब तुम कहाँ रहोगे ? ॥२॥

ये लोग बड़े ही निष्ठुर हैं, हमेशा ही जार-जवरदस्तों करते रहते हैं । विनतो निहोरा भी नहीं मानते । ऐसे पापाण हृदयवाले हैं ॥३॥

अज्ञान मोह लोभ, अहंकार म क्रोध और ज्ञान का शत्रु वाप ये ही वे चार हैं ॥४॥

हे नाथ ! ये सब बड़ा उद्यम मचा रहे हैं । मुझे अपना जानकर कुबल डानने पर उतारू है । यह समझ लिया है कि मेरा कोई धनी धारी नहीं, सा अबसर पाकर जितना अधिक उनसे बनता है मुझे सतान रहते हैं ॥५॥

मैं हूँ एक, धीर ये उपद्रवी चोर बहुत-भारे हैं । कोई मेरी पुरार तक बंधा सुनता

(जिसे पुकारता हूँ, वही काना में तेल डाल लेता ह। कश्चित् डरता हो कि वही ये हमारा भी घर न लूट ल जायें) ॥६॥

हे नाथ ! यदि वही भागू तो भी इनसे बचना कठिन है क्योंकि जहाँ-जहाँ जाऊँगा वहाँ य भी पीछा करेंगे। भय है रघुनाथजी। घ्राप ही इनसे मरी रक्षा कीजिए ॥७॥

तुलसीदास फिर भी कहना है कि इमम मरा कुछ भा नहीं जाता, घ्रापका ही घर चोर लूट रहे ह। भाव यह कि यदि मह हृदय भवन इन चारा के अधिकार में आ जायेगा तो फिर घ्राप कहाँ रहग ? ॥८॥

मुझे तो सिर्फ यही सोच है कि वही घ्रापकी बदनामी न हो (कि राजाधिराज श्रीरघुनाथजी का घर चोरा ने लूट लिया। इसलिए शीघ्र ही इन दुष्टों को हटाकर अपने निज मन्दिर में निवास कीजिए। आशय यह है कि काम क्लेश लाभ मोह आदि शत्रुओं का नाश कर मेरे हृदय सदन में आकर आप निवास कीजिए) ॥९॥

शब्दाय—बरजोरा = जबरदस्ती हठ से। तम=मोह प्रज्ञान। बोधरिपु=ज्ञान का विनाशक। मारा=मार कामदेव। बटपारा=डाकू। संभार=रक्षा।

विवेक—(१) तम मोह मारा—श्री शंकराचार्य ने कहा है—

काम क्रोधश्च लोभश्च देहे तिष्ठति तस्करा।

ज्ञान रत्नापहारायतस्माज्जापत जापत ॥'

(२) 'बोध रिपु—रामेश्वर भट्टजी ने बोधरिपु का अर्थ अज्ञान लिखा है, किन्तु तम शब्द पहले ही आ गया है जिसका अर्थ प्रज्ञान है। यहाँ बोध रिपु मार का विशेषण है क्योंकि विशेषतः काम ही ज्ञान का नाशक है।

(३) नूटहि—क्या-क्या लूट रहे ह ? वराम्य, विवेक ज्ञान सतोष, समता कहणा थद्धा भक्ति आदि अनमोल रत्न।

(४) कबीर माह्व इम दिनदहाडे को लूट मार से चेता रहे ह—

तोरी गठरी में लागे चोर बटोहिवा का रे सोच।

पाच-पचीस तीन हैं चोरवा यह सब कीहा सोर ॥

जाग सबेरा बाट जनेरा फिर नहि लागे जोर।

भव सागर इक नदी बहत है बिन उतरे जीव बोर ॥

कहे कबीर सुनो भाई साधो जागत कीज भोर।

३५

मन मेरे मानहि सिख मेरी। जो निज भगति चहै हरि केरी ॥१॥

उर आनहि प्रभु-कृत हित जेते। सेवहि तजे अपनपी चेतै ॥२॥

दुख सुख अरु अपमान बडाई। मव सम लेखाहि विपति बिहाई ॥३॥

सुनु सठ काल असित यह देही। जनि तेहि लागि विद्वपहि केही ॥४॥

तुलसिदास विनु असि मति आये। मिलाहि न राम कपट लीं लाये ॥५॥

भावाय—ह मर मन ! मरा उपदेश मान ले। यदि तू अपने हृदय में भगवान की भक्ति चाहता है अर्थात् यदि तुझे भगवत्भक्ति प्राप्त कर पवित्र होना है तो मेरी सीख मानकर अपने सार विकारा को छोड़ दे ॥१॥

पहले तो, प्रभु ने तैरे साथ जो-जो भलाई की ह उसवा हृदय में स्मरण कर, उसके लिए वृत्तगता प्रवृत्त कर । फिर ग्रहकार छोड़कर सावधाना से प्रभु की सेवा कर । भाव यह ह कि यदि तू प्रमादवश सेवा भी करगा, ता उसका कुछ फल न होगा सारा किया-कराया मिट्टी में मिल जायगा ॥२॥

सुख दुख मान अपमान सबको एक-सा समझ । इसी समता से तेरी विपत्ति दूर हागी (राग द्वेष को छोड़ दे क्योंकि यही भ्रान्त का प्रतिरोधक है) ॥३॥

अर दुष्ट ! सुन यह शरीर ता काल कनेवा ह न जाने कब मोत इस अपन फन्दे में फँसा ले इसलिए इस (सुखभगुर) शरीर के अथ किसी की निन्दा न कर ॥४॥

हे तुलसीदास ! जब तक एसी बुद्धि ऐसा विचार नहीं प्राया तब तक श्रीरामजी मिलने के नहीं, क्योंकि वह सकपट प्रेम करने में नहीं, किन्तु सच्चा निष्कपट प्रीति में ही मिलते ह ॥५॥

शब्दार्थ—वृत्त=क्रिए हुए । अपतपो = ग्रहकार । विद्वपहि = निन्दा कर ।

विशेष—(१) सुख सुख विहाद—भगवद्गीता में ममभाव पर विस्तार-पूर्वक कहा गया ह—

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न काञ्चित् न काञ्चित् ।  
 शुभाशुभ परित्यागी, भक्तिमाय स मे प्रिय ॥  
 सम गत्री च मित्रे च तथा मानापमानयो ।  
 नीतोष्ण सुषुप्तौ च सम सग विवर्जित ॥  
 तुल्यनि दास्तुतिमौ नी सतुष्टो येन केनचित् ।  
 अनिक्ते स्थिरमतिभक्तिमान मे प्रियो नर ॥

(२) कालप्रमित —

माली आवत देखि कतिपा करी पुकार ।  
 पून्नी-पून्नी सुनि लइ जाति हमारी द्वार ॥'

[कबीरदास

१२७

मे जानी हरिपद गति नाही । सपनेहूँ नहि विराग मन माही ॥१॥

जा रघुवीर चरन अनुरागे । तिहूँ सब भोग राग समत्यागे ॥२॥

काम भुजग बसत जब जाही । विषय-नीब कटु लगत न ताही ॥३॥

असमजस अस हृदय विचारी । बदन सोच नित-नूतन भारी ॥४॥

जब-जब राम-वृषा दुख जाइ । तुलसिदाम नहि भ्रान्त उपाई ॥५॥

भाषा—म समझ गया कि श्रीहरि क चरणों में भेग प्रेम नहीं ह क्योंकि सपने में भी मेर मन में बराग्य का उदय नहीं हाता, जब ससार से विरक्ति ही नहीं हुई तब भगवान् में अनुरक्ति कैसे होगी ? ॥१॥

जिन्हाने श्रीरामचन्द्रजा क चरणों से प्रीति जोड़ ली ह वहाने सार भोग विनासों को रोग की तरह त्याग दिया ह ॥२॥

जब जिस कामरूपी साथ इस सेवा है तब उसे विषयरूपी नीम कहा नहीं



मान रहा है तनिक समझ तो, उसमें बहसुन कितना सुख है ? (भाव यह है कि ससार में जितने भी कुछ विषय-सुख है, वे क्षणस्थायी हैं उनका परिणाम महादुःखदायक है) ॥ १ ॥

जहाँ-जहाँ जिस जिस योनि में—पशिवी पाताल और आकाश में—तूने ज म लिया तहाँ-तहाँ तूने विषय-सुख की कामना की और वहाँ प्रारम्भपर तूके मिला भी (क्योंकि जसी मशा तसी दशा) ॥ २ ॥

अब तू अज्ञान में फसकर मोह ममता में सना हुआ, बट-फट आकाश के सीने में क्यों प्रफुल्लित हो रहा है ? (भाव यह है कि जब आकाश का सीना असम्भव है, उसी प्रकार सासारिक भाग विलासा में आनन्द की आशा करना पागलपन है), है तुलसी ! यदि तूके आनन्द-लाभ की ही इच्छा है, तो प्रभु रामचन्द्रजी का गुण-कीर्तन करने पीयूष पाव क्या नहीं करता ? ॥ ३ ॥

गन्दाय—जाय=व्यय । विनय=कितना । विनय=आकाश । नियत=प्रारंभ । लक्ष्य=लुप्त सना हुआ ।

विनय—(१) प्रभु सुजस गाढ़ विनय—हरि-कीर्तन अमृत रूप है । उसका पान से जीव अमर हो जाता है । सूरदासजी भी इसी सुधा रस के लिए लाना-पित हो रहे हैं । दक्षिण—

सुधा बधु ता बन को रसु लीज ।

जा बन कृष्ण नाम अमरत रसु, लखन-पान भरि पीज ॥'

१ ३

तोसो हौं फिरि फिरि हित प्रिय पुनीत सत्य बचन कहत ।  
 मुनि मन गुनि समुक्ति क्या न सुगम मुमग महत ॥१॥  
 छाटो-बडा, साटो-गरो जग जा जहँ रहत ।  
 अपने अपने वा भना कहू वा न चहत ॥२॥  
 विधि-अंगि लघु कीट अविधि मृग मुग्धी, दुष दहत ।  
 पमु लौ पमुपान इम बाधत छारत, नहत ॥३॥  
 विषय मुद निहार भार मिर वा वीर ज्या कहत ।  
 या ही जिय जानि मानि गठ, तू ममिनि महत ॥४॥  
 पाया कहि घृन विनाश हरिन—आरि महत ।  
 तुलसी तनु ताहि मरन जान मर लहत ॥५॥

भाषा—२ जाह ! म लुप्तन बार-बार हितकारा मधुर पवित्र और मय्य बचन कहता है । मुनि मन में विचार कर और समझ तू मरन मुत्तर माग पर क्या नहीं करना अपना मुन-ममभरर भा तू मरन माग क्यों नहीं परखता ? ॥ १ ॥

३ ग-बरा साग-अंग अल्प-बरा भना जा जहाँ मगार में रहत है क्या ता टमे टगा बने हागा या टगा और अदन पवित्रता का भया न पाता है ? ॥ २ ॥  
 बडा त मरर घ-अ-बाद टर मुन मे मुग्धी हत है और दुष मे अमर है,

मुख दुःख सभी प्राणियों का एक-सा व्यापता है । परमात्मा खाल की नाइ जोव रूपी परमा को बाँधता है खोलता है और जोतता है (मोह में बाँधता है, पान से खालता है और कम रूपी हृत् में जोन देता है ।) ॥ ३ ॥

विषयो के सुखा का तनिक दख तो । वे क्या है मानो गिर के बोझ को कंधे पर रखता । भाव यह है कि जने कोई सिर पर के बोझ का कंधे पर रखकर, क्षणभर के लिए सुख मान बैठता है और कंधे पर से, दब होने पर, फिर सिर पर रख लेता है, उसी प्रकार तू एक विषय से हटकर दूसरे विषय में फस जाता है और क्षणिक सुख को ध्यान-द मान लेता है ? इस विषयानन्द में कोई चिरस्थायी ध्यान-द नहीं, केवल यह भ्रम है । रे शठ ! क्या व्यथ कष्ट सह रहा है ? ॥ ४ ॥

तनिक विचार तो कर भूग जन मयबर धी किसने पाया ? तात्पर्य यह कि जिस ससार का वस्तुतः अस्तित्व है नहीं, उसमें सच्चा ध्यान-द कस प्राप्त है सक्ता है ? (यदि तुझे ध्यान-द हो चाहिए तो ) हे तुनसी ! तू उसी प्रभु की शरण में जा, जिससे सब प्रकार का ध्यान-द उपलब्ध होता है ॥ ५ ॥

शब्दाथ—तगि=म धारम्भ करके । अवधि=उर । पशु-पात=स्वाता । महत=जोतता है । हरिनवारि=भुग-नृणा । महन=मपता है ।

विषय—(१) 'पशु तो महत —

'ईश्वर सबभूतानां हृद्देश्जुन तिष्ठति ।

श्रामय सबभूतानि मन्प्राकृष्टानि मायया ॥'

तथा—

[भगवद्गीता

'उमा बाद जोषित की नाइ । सबे मन्वावन रामगोसाइ ॥

(२) 'जाते सब महत —जिनसे सब सुख पाने हैं, यह भा मय लगाया जा सकता है ।

१३४

तान ही वाग्-वार दब । द्वार परि पुवार बरत ।  
 आरति, तनि दोनता कह प्रभु संकट हरत ॥१॥  
 नागपाल माव प्रियल रावन डर टरत ।  
 वा मुनि मकुन कृपातु नर गरीर धरत ॥२॥  
 कौमिक, मुनि-ताय जनक सोच मनन जरत ।  
 साधन कहि मीनन भर ना न तमुनि पठ ॥३॥  
 केवट रग मंदरि महन परनरमल र रत ।  
 मनमुग तोहि होन नाथ । कुतग मुग्ग फगत ॥४॥  
 बभु-वैर कवि प्रिीयन मुग्ग मनानि मगत ।  
 मेया कहि नीनि गम किये गरिण भरत ॥५॥  
 सेवन भया पवनपूत माहिय प्रनुहन्त ।  
 ताको लिये नाम राम सब वा मुडर दरत ॥६॥

जाने विनु राम रीति पचि-पचि जग मरत ।

परिहरि छल सरल गये तुलसिहूँ-से तरय ॥ ७ ॥

भाषार्थ—हे नाथ ! हमी से म तुम्हारे द्वार पर पडा बाटवार पुकारकर बहता हूँ कि तुम दुःख नम्रता और दीनता सुनते ही सकट हर लेते हो । ( तुम्हारा ऐसा स्वभाव देखकर ही धारवार कहने के लिए मेरा साहस हुआ है, नहीं तो न बहता ) ॥ १ ॥

जब रावण के भय से इंद्र, कुबेर आदि लावपाल डर गये, तब हे कृपालो ! तुम्हें नर-दह धारण करने के लिए किस बात को सुनकर सकीच हुआ था ? ( दुःख, नम्रता और दीनता को ही तो ) ॥ २ ॥

यह समझ म नहीं आता कि जो विश्वामित्र, महत्या और जनक चिता की धग्नि में जले जा रहे थे, वे किस साधन से शीतल हुए ? ( किस उपाय से निरिचन्द हुए ) ॥ ३ ॥

गृह निपाद, पक्षी (जटायु) शबरी आदि की प्रीति तुम्हारे प्रति स्वाभाविक नहीं थी, किन्तु हे नाथ ! तुम्हारे सामन आत ही बुरे-बुरे पड भी अच्छे अच्छे फल फलने लगते हैं । (भाव यह कि निपाद शबरी आदि पापियों के हृदय में घम और भक्ति का फल फल उठे । तुम्हारी शरणागति का प्रभाव ही ऐसा है) ॥ ४ ॥

अपने अपने भाई क साथ शत्रुता करने से सुभाव और विभीषण दारुण दुःख से गल जाते थे । हे श्रीराम ! तुमने किम सेवा से रोमकर उन्हें भरत के समान प्रिय मान लिया ? ॥ ५ ॥

हनुमानजी तुम्हारी सेवा करते करते तुम्हारे ही समान हो गये । हे श्रीराम ! उनका (हनुमान का) नाम लेते ही तुम सब पर भली भाँति प्रसन्न हो जाते हो अर्थात् तुम्हारी प्रसन्नता के मुख्य साधक हनुमानजी माने जाते हैं) ॥ ६ ॥

हे नाथ ! बिना तुम्हारा (रीझ की) रीति जाने ससार पच पचकर मर रहा है अर्थात् यदि वह यह जानले कि तुम भक्त-वसल और दीन-बन्धु हो तो जप तप आदि अनेक दुःसाध्य साधनों के फेर में वह क्या पडने लगे ? कपटभाव त्यागकर तुलसी-जैसे जीव भी तुम्हारी शरण में आने से मुक्त हो जाते हैं, ससार सागर पार कर जाते हैं ॥ ७ ॥

न-दाय—नति=नम्रता । बौसिक=विश्वामित्र । सुकर=सुन्दर फल । परत=गला जाता है । सुडर=भलीभाँति कृपा करत हो । ढलने का अर्थ द्रवना या पिघलना अर्थात् कृपा करना है ।

विशेष—(१) साहब अनुहरत—हनुमानजी शिवरूप माने जाते हैं और तत्त्वतः शिव और राम में कुछ भी अंतर नहीं है । या भी वह भगवान् का तात्त्विक स्वरूप जान चुके थे फिर उनम अंतर ही क्या रह सकता क्योंकि—

जानत तुमहिं तुमहिं होइ जाई ।

(२) इस पद में पुरुषार्थहीन हान पर भी भगवत्कृपा से जोव भाव मुक्त हो पाई है यह दिखाया गया है । इसमें 'परिहरि छल सरल गये' सिद्धांत मान्य है ।

राम स्रहो बिलावल

१३५

राम सनेहो मा त न सनेह कियो ।

अगम जो अमरनिहें मा तनु तोहि दियो ।

नियो सुकुल जनम, शरीर सुदर, हनु जा फल चार को ।

जो पाइ पण्डित परम पद पावत पुरारि मुरारि को ॥

यह भरतखण्ड ममीप मुरमरि, थल भलो, सगति भली ।

तेरी कुमति कायर कल्प बली चहति है विष फल फली ॥१॥

अजहैं समुझि चित दे सुनु परमारथ ।

है हितु सो जगहैं जाहि ते स्वारथ ॥

स्वारथहि प्रिय, स्वारथ मा का ते, कौन बेद बखानई ।

देखु सल, अहि-बेल परिहरि, सो प्रभुहि पहिचानई ॥

पितु मानु गुरु स्वामी अपनपौ निय, तनय सेवन सखा ।

प्रिय लगत जाने प्रेम सा त्रिनु हेतु हित ते नहि लखा ॥२॥

दूरि न सो हिनू हेरु हिये ही है ।

छलहि छाडि सुमिरे छोहु किये ही है ॥

किये छोहु छाया कमल कर की भगत पर भगतहि भजै ।

जगदीस जीवन जीव को जो साज सब सजको सजै ॥

हरिहि हरिता विधिहि विधिना, सिवहि सिवता जो दई ।

मोइ जानकी-पति मधुर मूर्ति, मोदभय मगलमई ॥३॥

ठाकुर अतिहि बडो, सील, मरल, मुठि ।

ध्यान अगम निवहैं भेटयो केवट उठि ॥

भरि अक भेटया सजल नैन सनेह, सिधिल शरीर सो ।

सुर सिद्ध मुनि कवि कहन कोउ न प्रेमप्रिय रघुवीर सो ॥

खग, सवरि निमिचर, भानु, कपि किये श्रापुते वदित बडे ।

तापर निह कि सेवा सुमिरि जिय जात जनु सकुचनि गडे ॥४॥

स्वामी को सुभाव कहयो सो जत्र उर आनिहैं ।

नाच मन्त्र मिटिहै, राम भलो मन मानिहैं ॥

भला मानिहै, रघुनाथ जोरि जो हाथ मायो नाइहै ।

ततकाल तुलसीदास जीवन जनम को फल पाइहै ॥

जपि नाम करहि प्रनाम कहि गुन-आम रामहि धरि हिये ।

विचरहि अबनि अजनीम चरनसरोज-मन मधुकर किये ॥५॥

भावाय—प्ररे । जिन्हाने तुझे दखताया से भी दुःप्राप्य शरीर दिया है उा प्रेमस्वरूप श्रीराम से तू न प्रेम नहीं किया । उहान अत्रे वश में सुदर कुल में, तुझे जन्म दिया और सुदर शरीर भी दिया है, जो अथ धम, काम और मोक्ष का कारण है

जिसे पावरसू पात्र द्वारा चारा पत्र वा मन्त्रता है, जिसे पावरसू पात्रा चार शिव तथा विष्णु वा परम पत्र प्राप्त करते हैं कर्नास और यमुण्ड धाम पात्र है । फिर यह दस भाग्य पत्र नाम है दय-नगो गंगा है । तथा ही सुन्दर स्थान है । गाय ही संगति भी है । विन्तु अत्र पावर । तरा बुद्धि-रूपा कल्पना यही भी विपने पत्र पत्रा है । भात्र यह है कि जिग बुद्धि स तुम्ह धम, पात्र, भक्ति ध्याति साधन सिद्ध कर्ना चाहिए थे उसमे तू सांसारिक विपया को, जो विपय है, साजता विपया है ॥१॥

गत्र । ममभ ले । मन लगाकर परमाथ विपय को मुन । वही धान इस ससार म श्रेयस्य और उगीस धपना स्वाथ भी सिद्ध हाता है । यदि तुम्हे स्वाथ हा धन्दा लगता है न परमाथ विपय की धार चित्त नही जाता ता ममभ ता वह कौन है, जिसस स्वाथ प्राप्त होगा, और धन जिसका निरूपण करत है ( धारधुनाथजो को पहचान ) धर लक्ष । देख, साँप व साँप मत खन समारी विपया में मन न लगा, क्याकि एक दिन व साँप की तरह तुम्ह डस लेंगे । तू तो उम स्वामी को पहचान उस पति स जगन जगा, जिसके प्रम के कारण पिना माता गुरु स्वामी अपनी धात्मा, पुत्र सबक मित्र आदि सब प्रिय जान पडत है । उस निध्वारण स्नह करनवाल प्रभु को तून नहा लखा । ॥२॥

व हिनकारी स्तही प्रम दूर नही है । देख वह तर हृदय में ही है । छल छावक परमा स्मरण तो कर । वह तुम्ह पर कृपा अवश्य करगा । भात्र यह है कि परमा मा वा पास हृदय में तो है किन्तु बीच म कपट का परदा पत्र हुआ है इसीसे उसका माया दार नहीं होता । परमा हटा नहीं कि प्रियतम का दर्शन हुआ । वह कृपा करन अपन जना पर करकमल की छाया किए रहता है सदा उनकी रक्षा करता है । जो परम भजता है वह भी उम भजता है । वह सार ससार का स्वामी है । जो सार विप सत्र प्रकार का सुखसामग्री प्रस्तुत करता है जिसन विष्णु को विष्णुत्व ब्रह्मा का अज्ञ और शिव को शिवत्व प्रदान किया, अर्थात् विष्णु को पालन-पोषण शक्ति ब्रह्मा वा मृज्जन शक्ति और शिव को सहार शक्ति जिसने दी है, यह वही जानकी बल्लभ रनुनायका का धात-स्वरूपिणी कल्याणमयी सुन्दर मूर्ति है ॥३॥

पहन वन स्वामी लोकपाला का भी अधीश्वर होत हुए वह मुशील सुन्दर और सरन भी धनपम है । जिसका ध्यान शिव का भी दुलभ है उसने उठकर निपाद का छाता न दगा दिया । जब उसे अपन हृदय से लगाया तब अर्धे छलछला घाद, प्रेम स गान शिषिन हो गया । तभा तो देव सिद्ध मुनि और कवि कहते है कि धारधुनाथ । व समान कोई भी प्रम प्रिय नही है जितना उन्हे प्रेम प्यारा लगता है उतना धार विपया का भी नही । उहान पछी (जटायु) शबरी राक्षस (विभीषण), रीछ (नन्दान ध्याति) और व रा (मुद्राव प्रभति) को धपने से भी अधिक कदनाय पूय नना दिया । (अब शील का घोर देखिए) इस पर भी जब उनके द्वारा वा हृद सवा का व याद करत है तब सकाच के मार गडे से जाते है कि हमन इहें कुछ भी नही दिय हम इनस ऋणमुक्त नहीं हो सकते,

सदा इनके श्रेणी हा रहेंगे ॥६॥

श्यामी रघुनाथजी का तो शीत-स्वभाव मीने घभी बटा उन जब तू में धारण करगा उस पर मनन करगा तब तरो सारा चित्तान दूर हा जायेंगी निरिचर हा जायेगा और प्रभु रामचन्द्रजी भा प्रसन्न हांग । बहु ता तभी प्रसन्न जायेंगे, जब तू हाय जोडकर मन्तर भुवावगा, प्रणाम करगा । तुनमाशय । तु एण जम सन का फन पा जायेगा, सरा जीवन सायक हा जायेगा । राम-नाम स्मरण कर यत्ना कर गुणावली का कीतन कर और हृदय में ध्यान पर । जग आगम क करण-जमना में धपने मन को भ्रमर क समान बसाकर पपियो पर तू नि विचरण कर । तावय यह कि जब तू भगवन्नाय हा जायगा तब तुन सगार में भी मय-न्यान न रहगा एतन्न निभम विचर सवगा, कारण कि तब तरो दुवि सगार हरिमय हा जायगा ॥५॥

गम्याय—पुरारि=शिर । मुरारि=विष्णु । घाट्टु=दृषा । मुठि=मुत्त प्राम=समुद्र ।

विशेष—(१) 'नरताड —भारतवर्ष कमभूमि है । सक्की क संसारा पवित्र भूमि पर जितना हो सकता ह उतना ध्यान महा । इस भूमि क एक-एक में ध्याप्यतिबजा अहिंसा, शान्ति धानि को व्यापकता माना गई ह । कहा है—

‘बुल न भारते जम ।

गामादजा क हृत्प में भारतवर्ष क प्रति विजना गदरी भक्ति जावता या एण पण न बरकन हाता ह । रागचरितमानस म ना ध्याप्या को स्वय म ना ध्या म्तिमानसा बजा ह । योगाचारा स्वय ध्यामन क बहन है—

‘गुनु बधात अमद सरेसा । पावनपुरा गिरि पट्ट देसा ॥

ददवि सब बहुष्ट बधाना । वेद-गुरार विनि जग जाना ॥

अवधपुरा गम शिव मति मोरु । पट्ट प्रसव जानद कोउ बाऊ ॥’

( ) अहिंसा —मदरा ददवि गणो विद्या में कूरन हला है तदपि क कभा बह भा धाया या जाता ह, गाव एग दग सडा है और जमहा एक ना उ गही बनता । इसा प्रकार गकार क कवणर में बर-बद बनुर मो एग टग जाते है उहें रोना पवता है । कभा कभी बर-बद बुद्धिमाना जनिवो और कोण्डा का भा क माता प्राता है ।

(१)—सिनु मात —कथा—कनि दान्य ग हा ता विम विम, पुन क दिव सने ? कहे टक को भा कुण प्याग सगता है । बगवद में दान्य कथा दिव क विम दिव है म सुद । कोर दान्य परमात्मा का कट है परमात्म-वत्ता ह । क निद हया कि कद विद-विदिय बानु का सुकन कागु परमात्मा ह । एसा दिव बहूनामदक जनिद म विद्या कया है—

म का अर दानु कामाय विनि शिवा भवति कामतनु काकय कति नि भवति । म का ह ट गुरानी कामाय —दामरि ।

(४) कनि कनि ह —मदर जमन क गुण दूह रहत है । कवत म कवत क कहे एत है क विम दान्य । संवकर कहे दूद एक गाय क न रह रहत है क



सोनित-पुरीप जो मूत्र मल कृमि, कदमावृत सोवई ।  
 कोमल सरीर, गँभीर वेदन, मीस घुनि घुनि रोवई ॥३॥  
 तू निज करम-जाल जहँ घेने । श्रीहरि सग तज्यो नहि तेरो ।  
 बहुविधि प्रतिपालन प्रभु की हो । परम कृपानु ग्यान तोहि दी हो ॥  
 तोहि दियो ग्यान विवेक जनम अनेक की तत्र सुघ भई ।  
 तेहि ईस की हा सरन जाकी विपम माया गुनमई ॥  
 जेहि किये जीव निवाय वस रसहीन दिन दिन अति नई ।  
 सो करो बेगि सँभार श्रीपति विपति महँ जेहि मति दई ॥४॥  
 पुनि बहुविधि गलानि जिय मानी । अब जग जाइ भजौ चरपानी ॥  
 ऐसेहि करि बिचार चुप माधी । प्रभव-पवन प्रेरै अपराधी ॥  
 प्रेरयो जो परम प्रचड मास्त कष्ट नाना ते सह यो ।  
 सो ग्यान, ध्यान, विगग अनुभव जानना पावक दह यो ॥  
 अति खेद व्याकुल अल्पबल छिन एक बोलि न आवई ।  
 तव तीव्र कष्ट न जान कोउ, सब लाग हरपित गावई ॥५॥  
 बाल दसा जेते दुख पाये । अति अमीम नहि जाहि गनाये ॥  
 छुवा व्याधि बाधा भय भारी । वेदन नहि जाने महतारी ॥  
 जननी न जाने पीर सो, केहि हेतु सिंसु रोदन करे ।  
 साइ करे विविध उपाय जातँ अधिक तुव छाती जरे ॥  
 कौमार, सैसव अरु किसोर अपार अघ का कहि सरे ।  
 अतिरेक तोहि निरदय महाखल । आन कहु को सहि सरे ॥६॥  
 जोवा जुवती सँग गँग राख्यो । तव तू महामोह मद माख्यो ॥  
 ताते नजो घरम मरजादा । विमरे तव सत्र प्रथम विपादा ॥  
 विसर विपाद, निवाय-भक्त समुधि नहि फाटत हियो ।  
 फिरि गभगत आवतँ ससृतिचक्र जेहि होइ साइ कियो ॥  
 कृमि भस्म विट-पग्निम तनु तेहि लागि जग बैरी भयो ।  
 परदार पग्गन, द्रोहपर नसार वाटँ नित नया ॥७॥  
 देखत ही आई विरवाई । जो ते सपनहुँ नाहि बुलाई ॥  
 ताने गुन कष्टु कहै न जाही । सा घव प्रकट देनु तनु माही ॥  
 सा प्रगट तनु जरजर जगवस, व्याधि सूल मतावई ।  
 सिरकप इन्द्रिय-सक्ति प्रतिहत, वचन काहु न भावई ॥  
 गृहपालहुँ तँ अति निरादर खान पान न पावई ।  
 ऐमिहुँ दसा न विराग तहँ सृणा-तरंग बढ़ावई ॥८॥



वहि ता मी महाभव तेर । जनम एण मे वल्लुन गनर ॥  
 तारि खानि सतन भदगाही । अजहूँ त त र विचार मा माही ॥  
 अजहूँ विचार विचार तजि भजु राम जा - सुगदायन ।  
 भवगिनु दुस्तर जलरथ नजु चतपर मुग्नायन ॥  
 त्रिनु हतु ररनावर उदार अपार माया तारन ।  
 वैवरय पनि जगपति रमापति प्रानपति गनिहारन ॥६॥

रघुपति भक्ति गुनभ गुनवारी । सा प्रयनाप गाव भय-हारी ॥  
 त्रिनु सतगग भगनि तहि होई । त तव मिन द्रव जव साइ ॥  
 जम द्रवै दीनदयातु राघव साधुसगनि पाइय ।  
 जहि दरस परम ममागमादिन पापरगभि नमाइय ॥  
 जिनके मिल दुख सुग ममान भ्रमानादिन गुन भये ।  
 मद मोह लोभ विपाद प्राध मुनाध तँ सहजहि गये ॥१०॥

सेवत सातु द्वैत भय भाग । श्रीरघुवीर चरन-लय लागे ॥  
 दह जनित विकार सप्रत्यागे । तव फिरि निज स्वरूप अनुरागे ॥  
 अनुराग मा निज रूप जो जग त विनच्छदन देखिय ।  
 सतोष मम पीतन मदा दम दृष्टवत न लेखिय ॥  
 निरमल त्रिरामय एकरम तेहि हृष-मोह न व्यापई ।  
 तैलाव पावन सो सदा जाकी दसा एसी भई ॥११॥

जो तहि पथ चा मन ताई । तो हरि वाह न होहि सहाई ॥  
 जो मारग सुनि साधु दिसाव । तहि पथ चलत सवै सुख पावै ॥  
 पाव सदा सुख हरि वृषा समार आसा तजि रहै ।  
 सपनहुँ नही दुख द्वैत दरमन बात काटिक को कहै ॥  
 द्विज देव गुरु हरि सत विनु ससार पार न पाइये ।  
 यह जानि तुनसीनास आसहरन रमापति पाइये ॥१२॥

पदच्छेद—नि + अजन । नि + भामय । कदम + आवत ।

भाषा—ह जीव । भगवान् से जब स तू अलग हुआ तभी से तू न शरीर को अपना मान लिया । (या तो जीव परमात्मा का ही अंश है किन्तु प्रकृति के अधीन होकर उसे परमात्मा से पथक होना पड़ा और उससे पथक होना ही उसमें देहाभिमान आ गया, जिससे स्त्री-पुत्रादि म ममत्व उत्पन्न हुआ) । माया के वश होकर तू न निजस्वरूप, सच्चिदानन्द—रूप भना दिया और उसी भ्रम के कारण तुझ परसह्य वनश भोगन पड़े । भाव यह है कि माया के ससग मे जीव म अनक विकार—राग-द्वेष सुख दुख—आ मिले, ध्यान-द सदा के निरव विदा ल गया । अविद्या के कारण ससार दुखमय भ्रमन लगा, बडा ही कठिन असहनीय दु ख भिना । सुख का तो स्वप्न म भी नाम न रहा । जिस माय म अनक कष्ट और शाक भर प ह, उसी पर से तू हठपूर्वक बार बार गया रोकने पर

भी न माना । अनेक योनिया में जन्म लेना पडा । बुढ़ापा भी आया, विपत्तियाँ भी भेजना पडी । पर रे मूख ! तने इतने पर भी भगवान् का न पहचाना । विचारकर, भया लख ता श्रीरामचन्द्रजी को छाडकर तुम्हे क्या कही शान्ति मित्री ? शान्ति और सुख का स्थान मूलाधार तो परमात्मा ही ह । उमे छाडकर कही भी आनन्द प्राप्त होने का नही । १॥

रे जाव । तेरा निज निवास आनन्द के सागर में ह तू आनन्दस्वरूप परब्रह्म से भिन्न नही ह । उस आनन्द-सागर को भूलकर तू क्यों व्यासा मर रहा ह ? मृगजल का तुने सत्य मान रखा ह, और उसी में आनन्द समझकर मगन हा रहा है । वहा तू नहा रहा ह । वहाँ ता तीन कान में भी पाना नही और उसी को पी रहा ह । अपना स्वाभाविक अनुभवगम्य स्वरूप भूलकर आज वहाँ आ पया ह । भाव यह कि ससार मगजल के समान भ्रममात्र ह । यहाँ तू विषयस्वी भूजे जल में प्रसन्नतापूर्वक स्नान कर रहा ह । विषया में फँसकर अपने प्रापका शासन या शात करना चाहता ह पर महाँ शीतलता कहीं ? जब जल ही नही, ससार का तत्वत 'अस्ति-व' ही नहा तब वहा सुख क्या से आवेगा ? तुने उस आनन्द को त्याग दिया, जो विशुद्ध अविनाशी और निर्विकार ह । व्यथ ही तू राजाश्री के जसा राज्य छाडकर स्वप्नरूपी कारागृह में आ पडा ह । आत्मानन्द त्यागकर विषय पक में आ फँसा ह ॥२॥

तुने स्वय ही अनान स अपनी कमरूपी रस्सी मजबूत करला और अपने ही हाथा डमम अविद्या को पक्की गाठ भी लगादा । इसी से अरे भ्रमारे ! तू परतत्र पडा हुआ ह । और इसका फल क्या हागा ? आगे गम में रहने का दुख । सारास यह कि न तू इच्छा कर कर कम करता और न परतत्र होकर मोहाधीन हाकर गम म बारबार आता । मसार में जा बहुतर दुःखा के समूह ह उहँ वहा जानता ह जा माता क पट में पड चुका है । गम में सिर ता नीचे रहता ह और पर ऊपर । क्य सकट क समय काई बात भी नही पूछता । रक्त मल मूत्र विप्टा कीडा और कीचड से घिरा हुआ (गम में) घाता ह । तेरा शरीर तो मुकुमार ह पर कष्ट बडा दारुण ह जा महा नही जाता । सिर धुन पुनकर तू रोता ह । भाव यह है कि वहाँ तू अकेला हा ह, बचावेवाला वहा कौन बठा ह ? जस कम किए उनके फल चखने ही पडेंगे । सो चख, चाहे तू मिर पत्रक, चाहे छातो पीट ॥३॥

जहाँ कही भी तू कम जाल में फँसा, वहाँ भी श्रीहरि ने तेरा साय नही छोडा । प्रभु ने नाना प्रकार से तेरा पालन-पोषण किया, और परम कृपालु स्वामी ने तुम्हे बही पाने भी दिया । जब तुम्हे पान विवक मिना तब पिछले अनेक जन्मा की बातें तुम्हे याद आइ । तब कहने लगा कि जिसकी यह त्रिगुणात्मिका दुस्तरमाया ह अर्थात् जिसकी आजा से माया न जगत में तीना गुणों का पमारा फैनाया ह उसी परमेश्वर की म शरण ह । जिसने जीव-समूह को अपन बस में कर लिया ह त्रिष माया न उहँ परतत्र बना-कर नीरस अर्थात् आनन्दरहिता भी कर दिया ह और जो प्रतिदिन नई ही दिवाई देती ह ऐसी मायारूपी लक्ष्मी के पति ने गम-वास की दस विपत्ति में ऐशा विवेक बुद्धि दा ह वही इससे परिव्राण करे ॥४॥

किर बहुत भाँति से मन में ग्नानि मानकर तू कहने लगा कि धक्की बार (मसार में) जाकर चक्रधारा भगवान् का प्रवेश भजन करुँगा । ऐसा विचारकर ज्याही तू धुप

हुआ, प्रसव काल के पवन ने तुम्हें घपराघी को प्रेरित किया, उस प्रचंड पवन के गारा प्रेरित होकर तूने अनेक कष्टों को सहा। जा पान, ध्यान वराग्य और आत्मानुभव तुम्हें प्राप्त हुआ था वह सब कष्ट की अग्नि में जल गया मारे काट के तू सब भूल गया। प्रत्यंत दुःख के कारण तू याकुल हो गया और अतः बल रहने के कारण एक क्षण तेरे गले से आवाज भी नहीं निकली। उस समय का तेरा दारुण दुःख असह्य प्रसव काल के कष्टों के मारे मूर्च्छित-सा हो गया पर लोगों को यह आनन्द हुआ कि 'धर्म भाग जाज, प्रभु के पुत्र उत्पन्न हुआ है' और लगे हर्षित हो बधाई गाने ॥५॥

फिर बचपन में तुम्हें जो जो कष्ट हुए वे असंख्य हैं। भूख रोग और अनेक बड़ी बड़ा बाधाओं ने तुम्हें घेर लिया पर तेरी माँ को उन सब कष्टों का यथायत्न नहीं लगा। माँ ने यह नहीं जाना कि बच्चा किसलिए रा रहा है वह तो बार बार वही उपाय करता है, चढ़ी उपचार करती है जिसमें तरो छाती और भी अधिक जले। भाव यह कि हुआ तो है तुम्हें रोग, पर वह तुम्हें बुरी नजर लगी समझकर प्रोक्ता से भ्रूवाती है, टोटका करता है, अथवा है तो अपच पर वह तुम्हें भूखा समझकर दूध पिलाती है। शशव, कुमारानस्या एवं किशोरावस्था में तूने अगणित पाप किए जिनका वणन कौन कर सकता है। रतिदय ! महादुष्ट ! तुम्हें छोड़कर और कौन ऐसा होगा, जो उन्हें सह सकेगा ? ॥६॥

जवानी चढ़ते ही तू स्त्री की आसक्ति में फँस गया। भारी अज्ञान और मत्त में मनवाला हो गया। उस नशे में तूने धर्म मर्यादा का लात मार दा। पहल कितने कष्ट भागे थे उन सबको भुला दिया और लया पाप पर पाप कमाने। कष्टों के समूह भूल जान के कारण भागे और क्या-क्या दुःख हागे यह समझकर तरो छाती फट नहीं जाती ? जिससे फिर फिर गम्भ के गहने में गिरना पड़े ससार चक्र में आना पड़े वही तूने बार बार किया इन्द्रिया के वश में पड़कर सदा विषयों में हा चित्त लगाया। जा शरीर की-राख, विच्छा आदि का परिणाम है उसके लिए तू सारे ससार का शत्रु बन बटा। इस क्षणिक शरीर को आराम देने के लिए तूने किन किनके साथ भला बुरा बर्ताव नहीं किया ? दूसरे की स्त्री दूसरे का धन दूसरो से द्रोह यही ससार में नित्य नया बर्ताव गया। दूसरे की सुन्दर स्त्री को भारी मान को और विपुल धन को देखकर तर मन में कुन्तन पया हुई उसे चाहा जब न मिला छल बल किया और बर बिसाह लिया। यही तूने नित्य किया यही तेरी जीवन बर्षा रही ॥७॥

देखने-हो देखने बुढापा आ पहुँचा जिसे तूने स्वाम में भी नहीं बुलाया था स्वप्न में इच्छा न की थी कि मैं बूढ़ा हा जाऊ। तू तो यही चाहता था कि सदा जवान ही बना रहूँ। उम बूढ़ापे को बार्ने कुछ कहन की नहा। उन सबको प्रत्यक्ष अपने शरीर में देख ल। देव शरीर तो जोख हो गया है। बुढापे के कारण राग और शूल सना रहे हैं। सिर हिन रहा है। इन्द्रियों का शक्ति घनी गई है। वानना तेरा कित्ता का सुहाता नहीं। घर की रगवाना करनेवाया कुत्ता तक तेरा मान नहीं करता, औरा का तो गिनती हा क्या ? अथवा कुत्ते से भा अधिक तेरा निरादर होता है। न तुम्हें कोई समय पर खाना देता है न पना। तूना सारा दुःशा होने पर भी तुम्हें वैराग्य नहा होता। च्चन पर भी तूण्डा का सहरो को तू बर्ताव हो जाता है ॥८॥

तरे अनेक जर्मों की, अनेक यानियों की, क्या कौन कह सकता है ? यह तो एक



यह समझकर तुलसीदास भी भव भय दूर करनेवाले श्रीलक्ष्मीरमण भगवान का गुण कोता करता है ॥१२॥

विशेष—(१) जिय बिलगायो—जीव और ब्रह्म, सत्त्वन एक ही है किन्तु माया के आवरण से जीव अपना स्वरूप भूल गया है। परमात्मा प्रकृति के साथ रहने के कारण जीव रूप' में स्व स्वरूप भूल गया है। वास्तव में, ब्रह्म और जीव अभिन्न हैं।

(२) अब जग चक्रपानी—यहाँ चक्रपानी शब्द का बहुत साधक प्रयोग हुआ है। जीव माया के जाल में फँसा पड़ा है। उसे वह जाल छिन्न भिन्न कराना है। सुदर्शन चक्रधारी विष्णु भगवान ही उस जाल को काट सकेंगे, इसीलिए वह 'चक्रपाणि' नाम से भगवान का पुकारता है।

(६) जावन रग रात्या—उत्तम यौवनावस्था पर सुकवि बिहारी का यह दाहा प्रसिद्ध है—

इक भीजे चहले परे, बूडे वहे हजार।

किते न ऐगुन नर करत, नय बय चढती बार ॥'

(४) धममर्यादा—मनुस्मृति में धम मर्यादा का निम्न लक्षण दिया है—

इज्याध्ययनदानानि तप सत्य धृति क्षमा।

अक्षय इति मार्गोऽयं धमश्चाष्टविध स्मृत ॥'

धमशास्त्र में धम के भिन्न भिन्न प्रकार से भिन्न भिन्न ग्रहण कहे गये हैं। परन्तु सत्य क्षमा ग्रहिणा आदि कुछ ऐम ग्रहण हैं जो ससार के सारे ही धर्मों में किसी न किसी रूप में पाये जाते हैं उनमें कोई अंतर नहीं आया है।

(५) सो प्रगट बनावई—बुद्धावस्था पर अनेक कवियों की सूक्तियाँ मिलती हैं। नाचो का श्रीशंकराचार्य का जरा चित्रण कितना सजीव है—

'अग गलित पलित भुड दगनविहीन जात तुण्डम।

वृद्धो घाति गृहीत्वा दड तदपि न मुचत्यागा पिडम ॥

भज गोविन्द भज गोविन्द गोविन्द भज मूढमते ॥'

(६) गृहपानहु तैं अति निराइर—इसके तीन अर्थ हो सकते हैं—

१ घर के मालिक से भी अर्थात् लडके बाला से भी अपमान हो रहा है।

२ घर की रखवाली करनेवाला कुत्ता तक अपमान करता है।

३ कुत्ता से भी अधिक अपमान लोग करते हैं।

(७) सत्सग—ससार-सागर से पार होना और भगवद्भक्ति प्राप्त करने का सर्वोत्तम माधन सत्सग ही है। भगवत्पाता में कहा है भागवन पुराण कहता है जब निपट गाने हैं सन्त भा पुष्टि कर रहे हैं कि सत्सग करो सत्सग करा बिना सत्सग के गति नहीं।

साधु हमारी आत्मा हम साधुन के जीव।

साधुन मटे यों रहें, ज्यों पय मटे घोष ॥

तथा—तुलसी' सगति साधु की बट कोटि अपराध।

एक घरो आभी घरो आभी में पुनि आय ॥'

(८) 'देह-जनित लेखिये — गीता में इस भवस्या को ब्राह्मी भवस्या कहा गया है। इस भवस्या को पहुँचे हुए स्थितप्रज्ञ के लक्षण हैं—

'प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पाप मनोगतान् ।  
आत्म-येषात्मना तुष्ट स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥  
दुःखेषु दुःखिण्यमना सुखेषु विगतस्पृह ।  
वीतरागभयक्रोध स्थितधीषु निश्च्यते ॥  
यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।  
नाभिनन्दति न द्विष्टि, तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥'

हे भजुन जब जीव मन की सारी इच्छाएँ छाड़ देता है, मन में किसी तरह की भी इच्छा नहीं करता तब अपनी भात्मा में ही सन्तुष्ट होकर रहनेवाला प्राणी 'स्थितप्रज्ञ' कहा जाता है। जो दुःखा में घबराता नहीं सुखा की कामना नहीं करता, राग, भय और क्रोध जिनसे जीत लिये है उसे 'स्थितधी मुनि कहते हैं। जिसका मन सब ओर से हट गया है, शुभाशुभ में जिसे हृष और द्वेष नहीं रहा उसकी बुद्धि स्थिर समझनी चाहिए। यह ब्राह्मी भवस्या भगवदभक्त का सहज ही प्राप्त हो जाती है, किन्तु भक्ति निष्पन्न और विशुद्ध होनी चाहिए।

(९) 'त्रलोकपावन — गुरदासजी कहते हैं—

'जा दिन सत पाहुने आवत ।

सा दिन तोरय कोटि आप हो ताके गृह चलि जावत ॥'

'ते पुनर्युष्कालेन दग्नादेव साधय ।'

[श्रीमदभागवत

(१०) यह पद बड़ा ही सुन्दर प्रभावपूर्ण ज्ञान वराम्य और भक्ति रस से परिप्लुत है। इसमें गोसाइजी ने अपने सिद्धांत का भली भाँति प्रतिपादन किया है। जीव की पूर्वापर दशा, उसका उद्धार और भक्ति का उपाय सभी कुछ इसमें आ गया है। यह पद मुखाग्र कटाग्र और हृदयस्थ करन योग्य है।

इति पुर्याद समाप्त

# विनय-पत्रिका

(उत्तरार्द्ध)

राग बिलावल

जापे कृपा रघुपति कृपालु की वैर और वे कहा सरे ।  
होइ न बाकी वार भक्त को जो कोउ कोटि उपाय करे ॥१॥  
तके नीच जो मोच साधु की सो पामर तहि मीच मरे ।  
बद विदित प्रह्लाद तथा सुनि को न भगति पथ पाउं धरे ॥२॥  
गज उधारि हरि अप्यो विभीषन ध्रुव अविचन कबहूँ न टरे ।  
अवरोप की साप मुरति करि अजहूँ महामुनि म्लानि गरे ॥३॥  
सोधी कहा जु न किया सुजोयन सुबुध आपन मान जरे ।  
प्रभु प्रसाद सोभाग्य विजय जस पाहु तने परिघाइ बरे ॥४॥  
जोइ जोइ कूप खनैगा पर कहुँ सा मठ फिरि तहि कूप परे ।  
सपनेहूँ मुख न सतद्रोही कहूँ सुरतरु साउ विप फरनि फरे ॥५॥  
हैं कृक हूँ सीस, इस के जो हठि जन की सीव चरे ।  
तुलमिदास रघुवीर-बाहूँजल सदा अभय, बाहूँ न डरे ॥६॥

भावार्थ—यदि कृपालु रघुनाथजी का कृपा है तो शीघ्र के बर करन से क्या विगड सकता है ? हारभक्त का वान भी बीना हान का नहा चाहे बाई कराडा उपाय क्यों न करे । १॥

जो नाच किसी मानु का मोन साचता है वह पापा स्वयं उसी मोन से मरता है । प्रह्लाद की क्या क्या में प्रसिद्ध है । उन मुनकर एसा कौन हागा जो भक्ति-भाग पर पर न रचना भक्ति के सिद्धांत का न मानगा ? भाव यह है कि प्रह्लाद को उसके पिता हिरण्यकशिपु ने अनक प्रकार से बन्धन पर मगकहुना से वह उसका वान भी बाँका न कर सका उनका धार हा मारा गया । एसा भक्तकालतता मुनकर कौन भभाग हागा, जो एन प्रभु को भक्ति न करगा ? ॥२॥

यत्रि न गन्ध का उदार किया विनायक का राग्योभुशुभन पर विद्याया, ध्रुव को अन्त पद दिया, और अम्बराय भक्त की ता बाव हा निराना है । उनका महा-

मुनि (दुर्वासा) ने जो शाप दिया था, उसे स्मरण कर वह अब भी श्चानि से गले जाते ह, साज से मर जाने ह (प्रपना परामव देखकर कि अम्बरीष पर भगवान का अनुग्रह ह, दुर्वासा शाप देकर पछताया करते ह) ॥३॥

दुर्योधन न कौन उा घनिष्ट करने को छाडा, जो करते बना सभी किया, मूल अपने हा धमड में जलता रहा । पर भगवत्कृपा स सौभाग्य विजय और कीर्ति ने पाडवों का हो हठपूर्वक प्रपनाया, पाडवा को सौभाग्य मिना, विजय-लाभ हुषा और कीर्ति भी मिली ॥४॥

जो भी दूसरा के निण कुर्मा खोदेगा वह दुष्ट स्वय उसमें गिरेगा । सन्तो क साथ धैर त्रिसाहनेवाल को स्वप्न में भी सुख-चैन मिलने का नही । उसक लिए ता कल्पवृक्ष भी विपले फल ही फलेगा, अर्थात् वह जिम उपाय से सुख चाहेगा, उसमे उस दु ख ही मिलेगा ॥५॥

किसके दो सिर ह, जो भगवदभक्त की सीमा लधि ? (हा किसीके दो सिर हा तो ठाक ह एक कट जायगा, तो एक तो बच रहेगा । पर यह असम्भव ह) हे तुनमीदाम । जिसे श्वोरधुनायजी के बाहुबल का भरोसा ह जा उनका शरणागत ह, वह सत्ता ही निभय ह ॥६॥

ग-दाय—मीच = मौच । बरिघ्राई = हठपूर्वक । क्षनगो = खादगा । सोंव = सीमा ।

विशेष—(१) 'जोप सरै कविवर रहीम ने भी यही कहा ह—

'बहु 'रहीम' का करि सक ज्वारी चोर लवार ।

जो पत राखनहार है माखन चाखनहार ।'

(२) काटि उपाय—जम यत्र मत्र तत्र, नाटक चटक, प्रयाग, छल कपट, अस्त्र शस्त्र शाप विष आदि ।

(३) 'सो धौ सुजाधन—दुर्योधन न पा-वा के साथ सभी छत्रजल किए । जुए में हराया, शीपवी का सत्तात्व भ्रष्ट करना चाहा, लाचा गृह में पाडवो को जलान का प्रयत्न किया, और भी अनेक प्रकार के पडयत्र रचे ।

(४) इस पद से मिला जुला सूरदासजी का भी एक पद ह—

जाकों मरपोहन जग कर ।

ताकी केस खस नहि सिर तें जो जग बर पर ॥

हिरनकसिपु परहारि थक्यो, प्रह्लाद न नेकु डर ।

अजहैं तों उत्तानपाद-सुत राज करत न मर ॥

राखी साज द्रुपद-तनया की, कोपित धीर हर ।

दुर्योधन को मान भग करि, बसन प्रवाह घर ॥

बिभ्र भक्त नग शय कूप दिय, बलि पड़ि वेद छरें ।

दीनदयालु कृपालु कृपानिधि, काप कह्यो पर ॥

जो सुरपति कोप्यो ब्रज ऊपर, पहिषो कष्ट न सर ।

राखे ब्रजजन नद के साला, गिरि घनि बिरद घर ॥



जाकौ विरद है गव प्रहारी, सो फसे बिसर ।  
'सुरदास' भगवत - भजन करि, सरन गहे उधर ॥

१३८

कवहुँ सो कर सरोज रघुनायक, धरिही नाथ सीस मेरे ।  
जेहि कर अभय किये जन आरत वारक विवस नाम टेर ॥१॥  
जेहि कर कमल कठोर सभुधनु भजि जनक ससय भेटयो ।  
जेहि कर कमल उठाइ ऋधु ज्यो, परम प्रीति केवट भेटयो ॥२॥  
जेहि कर कमल कृपालु गीब कहँ पिठ देइ निज धाम दियो ।  
जेहि कर वालि बिदारि दास हित, कपिकुल पति सुग्रीव कियो ॥३॥  
आयो सग्न समीत विभीषन, जेहि कर कमल तिलक कीहा ।  
जेहि कर गहि सर चाप असुर हति अभयदान देवह दीहा ॥४॥  
सीतल सुखद छाहँ जेहि कर की, मेटति पाप ताप, माया ।  
निसि वासर तिहि कर सरोज की, चाहत तुलसिदास छाया ॥५॥

भावार्थ—हे रघुनाथजी ! हे प्रभो ! क्या आप कभी अपने उस कर-कमल को मेरे सिर पर रखेंगे जिससे आपने दुषी भक्तों को अभय कर दिया था जब उन्होंने पराधीन हो केवल एक वार आपके नाम का स्मरण किया था ? ॥१॥

जिस कर कमल से शिवजी का कठोर धनुष तोड़कर आपने महाराजा जनक का सन्देश दूर किया था और जिस कर-कमल से गृह निपाद को, भाई के समान उठाकर मडे ही प्रेम से छाती से लगा लिया था ॥२॥

हे कृपालो ! जिस कर-कमल से आपने (जटायु) गीघ को (पिता के समान) पिठदान देकर अपना परमनोक प्रदान किया था और जिस हाथ से अपने मक्क के लिए बालि को मारकर सुग्रीव को वानर वंश का अधिपति बना लिया था ॥३॥

जिस कर-कमल से अपने समय शरणागत विभाषण का रा-याभिषेक किया था और जिस धनुष-बाण चढ़ाकर राक्षसों का सहार कर देवताओं को अभयदान किया था ॥४॥

तथा जिस कर कमल को शीतल धान-प्याज छाया से पाप सत्ताप और गरिबा का नाश हो जाता है हे नाथ ! आपके उम्मी कर-कमल को छाया (रक्षा) मुनसामस रात दिन चाहता ह ॥५॥

गद्याप—वारक = एक वार । तिरक = रा-याभिषेक । छाया = रक्षा स टा पन ह ।

१९

‘दीनश्यारु दुखिन दाग्दि दुख दुनी दुमह तिरे ताप तरे है ।  
देन, दुमार पुकारन धारन, मन्की सन मुय-शानि भरे है ॥१॥

प्रभु के वचन प्रेद बुध सम्मत, मम मूरति महिदेवमई है ।  
 तिनकी मति रिस राग - मोह मद लोभ लालची लीलि लई है ॥२॥  
 राज समाज कुसाज कोटि कटु कलपित कलुप कुचाल नई है ।  
 नीति प्रतीति, प्रीति परमिति पति हेनुवाद हठि हेर हई ह ॥३॥  
 आत्म वरन - धरम विरहित जग, लोक वेद मरजाद गई है ।  
 प्रजा पतित पाखड पापरत, अपन अपने रग रई है ॥४॥  
 माति, सत्य, सुभरीति गई घटि, बढी कुरीति कपट-कलई है ।  
 मोदत साधु साधुता सौचति, खल विनसत, हुलसति खलई है ॥५॥  
 परमारथ स्वार्थ, साधन भये अफल, सफल नहि सिद्धि सई है ।  
 कामधेनु धरनी कलि गोमर विवस विकल जामति न वई है ॥६॥  
 कलि-करनी वरनिये कहालों करत फिरत बिनु टहल टई है ।  
 तापर दात पीसि कर मीजत को जानै चित बहा ठई है ॥७॥  
 त्या त्या नीच चढत सिर ऊपर, ज्यो-ज्या सीलबस डील दई है ।  
 सरप वरजि तरजिये तरजनी कुम्हिलैहै कुम्हडे की जई है ॥८॥  
 दीजे दादि देखि नातो वति मही मोदमगल रितई है ।  
 भरे भाग अनुराग लोग कहैं, राजा अवध चितवनि चितई है ॥९॥  
 विनती सुनि सानद हरि हँसि, करुना-वारि भूमि भिजई है ।  
 राम राज भयो वाज सकुन सुभ राजा राम जगत प्रिजई है ॥१०॥  
 समरथ बडो, सुजान सुसाहव, सुकृत सन हारत जितई है ।  
 सुजन सुभाव, सराहत सादर, अनायास सासति वितई है ॥११॥  
 उथपे थपन, उजारि वसावन गई वहोरि विरद सदई है ।  
 तुलसी प्रभु आरत आरतिहर, अभयग्राह केहि-केहि न दई है ॥१२॥

भावाय—हे दोनदयाला ! पाप दारिद्र्य और दुःख इन तीनों दाखण तापों—  
 भौतिक, दैविक दैहिक—से दुनिया जली जा रही है (इसके पहन के पत्तों में गोसाइजी  
 ने अपने ही दुःख निवेदन किए हैं, अब इस पत्र में सारे ही ससार की व्याथा निवेदन कर  
 रहे हैं) । हे भगवन् ! यह आत्त धापने द्वार पर पुकार रहा है । देखिए, सभी का सब  
 प्रकार न सुख जाता रहा सभी लोग दुःखी दिखाई देते हैं ॥१॥

वदों और पडिना की सम्मति है और धापने भी स्वयं श्रीमुख से कहा है कि  
 आह्वण मेरी ही प्रतिमूर्ति है अर्थात् वे 'ब्रह्ममय' है । पर उनकी बुद्धि को क्रोध, राग  
 मोह अहंकार, लोभ और लाज ने निगल लिया है उनमें सम, मतोप दया, धर्म आदि  
 तो रहे नही उलट्टे व कामी, ब्राधी, मूढ और लोभी हो गये हैं ॥२॥

इसी तरह राजसमाज (चत्रिय-जाति) करोड़ों बुरी-बुरी बातों से भर गया है ।  
 वे )नूटना, मारना, पर-स्त्री एवं पर धन का अपहरण करना अपाय करने प्रजा का

सताना घादि) नित्य नर्-नई पापपूण घाल घन रहे ह । गतिवता न राजनाति, धम शास्त्र, थडा, भक्ति और बुल मर्यादा की प्रतिष्ठा या, दूद-दूदकर घोपट कर निया है । साराश यह कि जहाँ नास्तिकवा एग हुमा परमरथर के धर्मित्व का न माना, वहाँ धम कम वसे रह सकते ह ? क्याकि परमात्मा ही सन धर्मों का मूल ह ॥३॥

ससार में न तो आश्रम धर्म रहा ह और न वण धम हा । लाक और व दान की मर्यादा नष्ट होती जा रही है न कोई लाकाचार मानता ह, न वगन धम हा । प्रजा का हास हो रहा ह पाखड और पाप में वह तित हा रही ह । सभा अपन अपने रग में भस्त ह भयवा मनमुन्वी हो गये ह, कोई किसी का नही सुनता ॥४॥

शाति सत्य और सुभाग चीख हो गये ह और दुगाचार और छल-वगन बढ़रहे ह । सज्जन कष्ट पाते ह और सज्जनता बिना-वस्त है । दुष्ट मोज कर रहे ह और दुष्टता चैन में ह ॥५॥

परमाथ स्वाथ में परिणत हो गया धम के नाम पर लाग पट पालने लगे ह । साधन निष्फल हो रहे है । सिद्धिया भी सच्ची नही उतरती ह, भूटो जान पडती है, भयवा उनमें कोई सचाई गही रही ह । कामधेनु रूपी पृथिवी कलियुग-रूपी कसाई के हाथ में ऐसी याकुल हो गई ह कि उसमें जो बोया जाता ह जमता हा नही ( इसीस जहाँ तहाँ दुर्भिक्ष पड रहे ह) ॥६॥

कलियुग की करनी कहाँ तक बलानो जाय ? यह बिना काम का काम करता फिरता ह । इनन पर भी दाठ पीस पीसकर हाथ मल रहा ह मन हो मन मसाम रहा है कि अभी तो मने किया हो क्या । न जाने इसके मन म घभा और क्या-वया ह ॥७॥

ज्यो-ज्या आप शील के कारण इमे ढाल दे रहे ह जमा करते जाते ह त्या त्या यह नीच सिर पर चढता जाता ह । जरा काव करके इसे डाँट तो दीजिए । यह तरजो दिखाते ही कुम्हड की बतिये की नाइ मुरभा जायेगा दब जायगा ॥८॥

आपकी बलया लेता ह, दखकर याय कर दीजिए नही ता अब पृथिवी आनन्द भगल से खाला हो जानेवाली ह । आनन्द मगन का, यदि ऐसी ही दशा रही तो, कही नाम भी न सुनाई पया । ऐसा कीजिए कि जिससे लोग सौभाग्यशाती हाकर प्रेमपूर्वक कहें कि श्रीरामजी ने हमें कृपादृष्टि से निहारा ह ॥९॥

मेरी यह बिनती सुनकर, भगवान न मरी और आनन्द से देखा और मुस्करा कर कहरा के जल से पृथिवी को भिगो दिया ( शांति की वर्षा कर दी । ) बस, राम राज्य होने से सब काम सुलभ हो गय । शुभ शकुन होने लगे, बयोकि महाराजा राम चन्द्र जो जगदत्रिजयी ह । भाव यह कि जगदत्रिजयी श्रीराम के भागे वायर कलि की एक भी न चली ॥१०॥

सबशक्तिमान सुचतुर स्वामी ने पुष्प की सना को हारने से जिता लिया, पापो का क्षय कर दिया । उनके सद्भक्त स्वभाव से हा आदरपूर्वक उनकी सराहना करते ह कि स्वामी ने सद्भ्र ही सारी यातनाएँ दूर कर दी ॥११॥

आपका बाना सदा से ही चला आता ह कि जिनका कही ठौर ठिकाना न हो, उन्हें सस्यापित करना (जसे, विभीषण और सुग्रीव को राजसिंहासन पर बिठा देना),

उजड़े हुए का बसाना धार गई हुई वस्तु को फिर से दिला देना (जमे रावण से डरे हुए देवताओं को फिर से स्वर्ग में बसा देना) । ह तुलसी ! दुवियो क दु न्व हरनेवाले भगवान न किम किसका अभय बाहें नही दो ? ॥१२॥

शब्दाथ —दुरित=पाप । दुनी = दुनिया । तई = तच गइ ह । महिम्ब = ब्राह्मण से आशय ह । परमिति = परम्परा को रोति । हेतुवाद = नास्तिकवाद । हई = हनी नाश को । रई = रगा, अनुरक्त हुई । सीदत = कष्ट पाता ह । खलई = दुष्टता । सइ = सहा सच्ची । गामर = गऊ मारनेवाला कमाई । वई = बोई हुई । टई = काम । जई = छोटा-सा फल, जिस बतया कहने ह । दाहि = याय । रितई = खाली । उथपे थपन = उजड़े हुए का बसानेवाला । सदई = सदा ही ।

विनय—(१) 'दीनदयालु तई ह —गोसाइजी के हृदय में जगत क कल्याण की शुभभावना कितनी प्रबल थी । जगत क दु खों को वह एक क्षण भी नहीं सह सकते थे । 'कवितावली' में भी उन्होंने इसी आशय के उदात्त कवित्त कहे ह जस—

खेती न किसान को भिखारी का न भीख बलि  
वनिक को बनिज न चाकर को धाकरी ।  
जीबिका बिहीन लोग सीधमान सोचवस  
कहै एक एकन सों कहा जाइ था करी ?  
बेबहु पुरान कही लोकहैं बिलाकियतु  
साँक्रे समय बे राम, रावरे कृपा करो ।  
दारिद दसानन दबाय दुनी दीनबधु,  
दुरित बहत देखि तुलसी हहा करो ॥'

(२) दधि नातो बलि —किमी किमी न इसे 'राजा बनि और उनका पुत्रिय' दानवाजा' सकेत माना ह, कि तु यह खीचातानी ह । स्पष्ट अर्थ तो नातो का 'नहा तो' और बनि का 'बनि का बलिहारा ह ।

(३) 'अभय बाह —अभय दान, निभय कर देना ।

'निभय बध्ण्य पद ।'

१४०

ते नर नरकरूप जीवत भव् भजन-पद विमुख अभागी ।  
निमिबीसरे रुचि पाप, अमुचि मन, खलमति, मलिन, निगमपथ-त्यागी ॥१॥  
नहि सतसग, भजन नहि हरि को, स्रवर्न न राम-कथा अनुरागी ।  
सूत बित्त-दार भवन ममता निसि सोवत अति न कचहैं मति जागी ॥२॥  
तुलसिदास हरिनाम-सुधा तजि सठ, हठि, पियत विषय विष भागी ।  
सूकर-स्वान सुगाल सरिस जन, जनमत जगत जननि दुख लागी ॥३॥

भावार्थ—वे अभागे मनुष्य सतार में नरकरूप होकर जो रहे हैं जो जन्म मरण रूप भव भय से छुड़ा देनेवाले श्रीहरिचरणों से विमुख हैं । दिन रात उनको रुचि पापों में ही रहती ह । मन उनका अशुद्ध रहता ह । उन दुष्ण की बुद्धि मलिन रहती ह और उन्होंने बदेकनमाग छोड़ दिया ह ॥१॥

म तो मे गंगा का रंग करने वरत है म भगवद्भक्तवत् श्री म उनके वरत को श्रीराम की वरत दिए गंगा है । म तो गंगा तुम का त धीर मन तथा दुःख को मोह राति म धीर गाता वरत है गुणवत् कृति (एव विनये) कभी गंगा को हरे मरी, उनके मन में अज्ञान को भी वैराग्य का रंग करती होगी ॥२॥

हे गुणगोप्य ! तू दुःखी-गंगा-वर्ण भक्त की साक्षर त पूरत विनय वरत दिए मीर-मीरकर (धर धर विनय का काया करके) गने त म अज्ञान गुभर कुत्ते धीर गंगा के समान दृग गंगा में वरत मत । गंगा का दुःख त के लिए ही जन्म ली है ॥३॥

साराध—भय भंजना गंगा का गात वरतवती गंगा मंगल के रंग करने पाल । विनय = यत् । धार = धारा ।

रामात् । रघुनाथव । गुमगा ही विनयी कति मीति वरती ।  
 भय धनव भयनाथि धापत, धाप ताम अनुमात री ॥१॥  
 पर दुग दुगो गुमी पर-गुग । सात गात रति हृत्त मरी ।  
 दति धाती विपतिपरम गुग गुति मग्गति विदु गामि री ॥२॥  
 गति विराम ग्यात साधत रति यद्विधि दृक्का मीग तिरी ।  
 गिव-नरयस गुगपाम तात ता रति रक्वप्रद उदर भरी ॥३॥  
 जात ही विज पाप जलधि जिय जल-गाकर मम गुता री ।  
 रज मम पर भयगुत गुभर करि, गुग गिरि-मग रत तें तिरी ॥४॥  
 ताता वप वताय दिवम गिति परवित जेहि-तेहि जुगुति हरी ।  
 एवी पल त वरतै अताल विन, हिादे पद-भरीत गुमिरी ॥५॥  
 जा धातरा विनारहु मरी, कल्प काटितगि श्रीटि मरी ।  
 तुलसिदास प्रभु टुपा विलीति गोपद ज्या भयगि-गु तरौ ॥६॥

भाषाध—हे रघुनाथ श्रेष्ठ श्रीराम । म किंग प्रसार धापत विनयी कर्त् ? भयने पापा की धार दलकर तथा धापत धाप धर्मान् पाररहित ताम का अनुमात कर मन-ही-मन म डर रहा है । (इसलिए डरता है कि पाप धीर पूष्य एव दूसर स विदुत विपरीत नथी । दोनो में पपिवी भाकाश का अंतर है । रघुनाथजी मुझ पापो का उद्धार तय पसे कर सकग ?) ॥१॥

दूसरे के दुःख से दुखी और दूसरे के गुण से सुखी होना जो सतो का शील स्वभाव है उस म कभी हृदय में धारण नहीं करता है । (पिर करता क्या है सो सुनिए) दूसरा की विपति देखकर खूब प्रसन्न होता है और दूसरा की सपत्ति देखकर बिना ही धाम क ईर्ष्या से जला जा रहा है ॥२॥

भक्ति वराम्य धान धादि साधना का उपदेश दता हुआ अनेक प्रकार से लोगो को उगता फिरता है । शिव का सबस्व धानद का धाम जो धापका नाम है, उस धेचकर (राम नाम जपकर यह सिद्ध करता है कि म राम का महान भक्त हूँ) पेट भरता है, उस पेट की जो मरक भजनेवाला है । साराध यह कि इस पापी पेट के लिए मैं धापके नाम की मोट में अनेक पाप करता हूँ ॥३॥

यद्यपि यह जानता हूँ कि मेरे पाप समुद्र के समान अपार ह फिर भी जब दृश्यों के मुख से अपना जल बिन्दु के समान छोटा-सा पाप भी सुनता हूँ तो उनसे भगडने लगता हूँ। तात्पर्य यह कि सदा यही चाहता हूँ कि लोग मुझे पापी न कहें घमघुर-घर कहें। और दूसरों के घूल के कारण के समान भवगुण को सुमेरु पत्र के समान महान् मानता हूँ। और यदि उनके गुण पत्र के समान ह तो उन्हें धून के समान तुच्छ देवता हूँ। मतलब यह कि मुझे अपना ही सब कुछ अच्छा लगता ह, दूसरों का नहीं, ऐसा स्वार्थी हूँ ॥४॥

अनेक श्रेय बना बनाकर दिन रात, जमे-समे दूसरों का धन बटोरता फिरता हूँ। कभी, एक क्षण भी निरबल चित्त से प्रेमपूर्वक अपने चरणारविदा का स्मरण नहीं करता ॥५॥

यदि आप मेरे आचरणा पर ही विचार करेंगे, मेरे पापों का लेखा लगाने बढेंगे तो करीबें बल्प तब मुझ खील-खीलकर मरना पडेगा, सकारकनी कढाई में जलना होगा, जन्म मृत्यु के चक्र से कभी छुटकारा न मिलगा। हे प्रभो! पर यदि आप अपनी कृपा-दृष्टि से मेरी धार देव देंगे तो मैं तुलसीदास इस सत्तार को गाय के खुर के समान अनायास पार कर जाऊँगा ॥६॥

शब्दाय—उद्धत = ठगता हुआ। सीकर = बूढ़ कर्म। विन = धन। अलाल = स्थिर शांत। श्रौति = खीनकर, जलकर।

विनय—(१) परदुख-दुःखा प्राणि जरी—गासाइजी न मन्ना और असन्तो के लगण विस्तार से रामधरितमानस में इस प्रकार विनय है —

प्रिय अलपट सील-गुनाकर। परदुख दुःख, सुख सुख देखे पर ॥  
सम, अमृततरिपु विमद विरागी। लोभामय-हृष नय-त्यागी ॥  
बोमल चित्त दीनन पर दाया। मन उच कम मन नक्त अमाया ॥  
सर्वाहि मानप्रद, आशु अमानो। भरत, प्रान-सम मन त प्रानो ॥

+

X

X

निदासस्तुति उभय सम ममता मम पदकज।

ते सज्जन मन प्रान प्रिय, गुन-मन्दिर सुखपुंज ॥

खनन हृदय अनि ताप विमेखी। जराह सदा परसम्पनि देखी ॥

जह कहै निदा सुनहि पराई। हयहि मनहु परी निधि पाई ॥

>

X

X

काहू की ओ सुनहि बडाई। सांभ लेहि अनु जूडी जाई।

जब काहू की दरहि विपना। सुखी होहै मानहु जग नृपती ॥

(२) 'नानावेप—मनुष्य पर भग्न के लिए क्या-क्या नहीं करता? कभी

कवि बनता ह, तो कभी चित्रकार। कभी साधु-सज्जन बन जाता ह तो कभी भवघूल पकीर। कभी गुनामी करने लगता ह, तो कभी टाक डालता ह। कभी उपदेशक बनता ह, तो कभी घमघ्वज महामा। कहीं तक कहा जाय इससे जो कुछ भी हा सक्ता ह यह सब पेट-भूजा के लिए करने को तयार रहता ह।

(४) 'घलो न — निश्चल शात चित्त से यदि एक भी घग भगवन्नाम स्मरण किया जाये तो मुक्ति हाथ जोड़े सामने खड़ी ह । चित्त-वृत्ति निरोधात्मक योग सद्य फल देनेवाला ह ।

१४२

सकुचत हौ अति राम कृपानिधि । कयोकरि विनय सुनारौ ।  
 सरुल धरम विपरीत करत, केहि भानि नाय मन भावौ ॥१॥  
 जानत हौ हरि रूप चराचर, मै हठि नैन न लावौ ।  
 अजन-बेस सिखा जुवती तहँ लोचन सलभ पठावौ ॥२॥  
 स्रवननि को फल क्या तुम्हारी यह समझौ, समुझावौ ।  
 तिह स्रवननि परदोष निरंतर भुनि भुनि भरि भरि तावौ ॥३॥  
 जेहि रसना गुन गाइ तिहारे, विनु प्रयास सुख पावौ ।  
 तेहि मुख पर अपवाद भेक ज्यो, रटि रटि जनम नसावौ ॥४॥  
 'करहु हृदय अति बिमल बसाहि हरि', कहि कहि सर्वाहि सिखावौ ।  
 हौ निज उर अभिमान मोह मद खल मण्डली बसावौ ॥५॥  
 जो तनु धरि हरिपद सार्धाहि, जन सो विनु काज गंवावा ।  
 हाटक घट भरि धरयो सुधा गृह तजि नभ कूप खनावौ ॥६॥  
 मन क्रम बचन लाइ कीहे अघ, ते करि जतन दुरावौ ।  
 पर प्रेरित इरपावस बबहुँक, किय कछु सुभ, सो जनावौ ॥७॥  
 बिप्र द्रोह जनु बाट परयो हठि, सबसो वैर बढावौ ।  
 ताहू पर निज मति त्रिलाम सब सतन माझ गनावौ ॥८॥  
 निगम सेस सारद निहोरि जो अपने दोष कहावौ ।  
 तो न सिराहि कल्प सत लगि प्रभु, कहा एक मुख गावौ ॥९॥  
 जो करनी आपनी बिचारौ, तो कि सरन हौ आवौ ।  
 मदुल सुभाव सील रघुपति को, सो बल मर्नाहि दिखावौ ॥१०॥  
 तुलसिदास, प्रभु सो गुन नहि जेहि सपनेहुँ तुमहि रिझावौ ।  
 नाथ-कृपा भवसिधु धनुपद सम, जो जानि सिरावौ ॥११॥

भावाय—हे कृपानिधि श्रीराम ! मुझे बड़ा सकोच हो रहा ह, म किस प्रकार आपको अपनी विनती सुनाऊँ ? जो कुछ भी म करता हूँ, वह सब धम के विरुद्ध ही किया करता हूँ । फिर भला, आपको म क्या प्रिय लगूँ ? तात्पर्य यह कि आपके तो धर्मात्मा ही प्यारे ह मुझ-सरीखे पापी नहा इसलिये मुझे आपके सम्मुख आने में सकोच होता ह ॥१॥

यद्यपि म यह जानता हूँ कि भगवान् सवत्र—जड धोर चत य म—व्यापक ह पर म भगवत-स्वरूप को धोर हठवक ध्यान नहीं देता । म तो अपन नत्ररूपी पतिगों को कामिन रुपी अग्निशिखा में (जलन के लिए) भेजता रहता ह ॥२॥

म यह स्वयं समझता है और दूसरा को भी समझाता है, कि इन कानों की साथवृत्ता तो आपकी क्या सुनन में ही है, पर उन कानों से सदा दूसरा के दोष सुन सुनकर उनमें भर भरकर रहता है ॥३॥

जिस जीभ से आपका गुणानुवाद करके बिना ही परिश्रम के परमानन्द प्राप्त करता है उसी जीभ से मेढक की नाइ दूसरा की निन्दा रटा करता है ॥४॥

म यह बात सबको समझा समझाकर सिखाता फिरता है, कि हृदय का सबथा शुद्ध बनाओ, तभी भगवान् उसमें वास करेंगे। किन्तु मने स्वयं अपने हृदय में अहंकार अज्ञान और मद, इन दुष्टों का हा समाज बसा लिया है। (स्वयं तो महान् दुःखिनी है पर दूसरा को सृजन बनने का उपदेश देता है) ॥५॥

जिस मानव शरीर को धारणकर भक्त-जन वश्याव पद प्राप्त करने की साधना करते हैं, उसे पाकर मैं व्यथ ही खा रहा हूँ। घर में तो साने के घड में अमृत भरा रखा है पर उसे छोड़कर आकाश में कुम्भा खुदमा रहा हूँ। तात्पर्य यह कि यह जो कचन-सी देह है और जिसमें आत्मस्वरूप अमृत भरा हुआ है, उसे छोड़कर काम-काचनरूपी मगजल की खाज में जाता तथा मारा मारा फिरता है। जिसका अस्तित्व ही नहीं भला उस जगत में सुख की आशा कैसे हो सकती है ? ॥६॥

मन से, बम से और वचन से जो जा पाप किए हैं, उन्हें म यत्न कर-कर धिपा रहा हूँ। और दूसरा की प्रेरणा से, अथवा ईर्ष्यावश यदि कभी कोई अच्छा काम बन गया तो उस (हिंदीरा पीटता हुआ) जताता फिरता हूँ ॥७॥

ब्राह्मणों के साथ द्रोह करना तो मानो मरे हिंस्र में ही पड गया है। जबरदस्ती ही सबसे बुरा बिसाहता फिरता है। (ये तो मर बम है, किन्तु) यह सब होते हुए भी, अपनी बुद्धि से अपने सिद्धांत का प्रतिपादन करके अपने आपको सन्तों की पक्ति में गिनता है। यह सिद्ध करना चाहता है कि लाग मुझे सत कहें ॥८॥

बेव शोपनाग सरस्वती आदि का निहोरा कर कर भी यदि म उनसे अपने दोषों का बखान कराऊँ तब भी हे प्रभा ! सी कल्प तक ये समाप्त हाने के नहा ! फिर, म एक मुख से उनका क्या बखान करूँ ॥९॥

यदि कहीं म अपनी करनी पर विचार करने लगूँ तो क्या म आपकी शरण में आने योग्य हूँ ? म इतना भारी पापी हूँ कि आपकी शरण में आ ही नहीं सकता, किन्तु आप रघुनाथजी का स्वभाव कोमल है, और शील असीम है यही बल मन को दिखाता रहता हूँ। तात्पर्य यह कि जब रघुनाथजी ऐसे सुशील और कोमल स्वभाववाले हैं, तो वे मुझ सरीखे पापिया और अपराधियों की शरण में लेकर क्या न उनका उद्धार करेंगे ? बस, यही मन को सत्साहाय्य बंधाता रहता हूँ ॥१०॥

हे प्रभो ! म सुतुलसीदास के पाम ऐसा एक भी गुण नहीं जिसके बल मराने पर वह आपको स्वप्न में भी प्रसन्न कर सके। किन्तु हे नाथ ! आपकी कृपा के आगे यह ससार सागर गाय के खुर के समान है। यह जानकर मन में सतोष कर लेता हूँ (कि आपकी कृपा से, अपने में कोई साधन न हाने पर भी म ससार-समुद्र को सहज ही पार कर जाऊँगा) ॥११॥



शब्दाय—भावों = अच्छा लगू । सिखा = दीपक की ज्योति, प्राग की ज्वाला ।  
सलभ = (शलभ) पत्निगा । तावों = दहता से भरता है । भव = भेत्क । त्तावों = छोड़ता  
हू । विलास = भानद । सिरावों = सतोप करता है ।

विशेष—(१) 'धरम विपरीत'—धम का मुख्य स्वस्व सत्य है । सत्य की भव  
हेलना कर जो कुछ भी किया जाता है वह धम विरुद्ध है, सत्ताचार नहीं, बदाचार है ।  
दम अधम की जड है, इसीका प्रतिपादन इस पद द्वारा किया गया है ।

(२) 'अजन केस सिखा — इसक दो अर्थ हैं—

१ नत्रा में अजन लगाय, सटकारे जाने केशवानी, दीपक की ज्योति के समान  
कामिनी ।

२ काजल के समान केश ही जिस स्त्रीरूपी अग्नि की धूम शिखा है । साधारणत,  
नेत्रो धीर केश की मोहकता पर ही कामिया का ध्यान जाना है ।

(३) हाटक घट खतावों—सूरदासजी या कहत ह—

परम गगजल छाडि पियासी, दुमति रूप खनाव ।'

परतु इस उक्ति से गोसाइजी की हाटक घट वाली उक्ति कहा अधिक मतो  
हारिणी है ।

(४) मन ब्रम-बचन — पाप पठ्य दाना ही त्रिविध होते हैं । यहा पापो का  
उल्लेख किया गया है जो इस प्रकार ह—

१ मानसिक—जैसे परधन परस्त्रो आदि पर ध्यान परहानि का चितन मन  
ही मन नास्तिक भाव इत्यादि ।

२ वाचिक—परम्था गमन रिसा चोरो आदि ।

३ वाचनिक—मिथ्या भाषण परनिदा, बठोर वचन इत्यादि ।

(५) मृदुन रघुपति का — बदाचित निम्नलिखित श्रीराम की इस प्रतिभा का  
स्मरण कर गोसाइजी ने यह कहा है—

सकृदेव प्रपनाय तवास्मोति च याचते ।

अभय सवभूतेभ्या, न्दान्येतद्व्रत मम ।'

[ वाल्मीकि रामायण

१४३

सुनहु राम न्धुवीर गुसाईं मन अनीति रत मेरो ।

चरत सरोज विसारि तिहारे, निसिदिन फिरत अनेरो ॥१॥ १५

मानत-नाहि निगम अनुसामन जास न काहू केरो ।

भूयो सूल वरम-कोनुह तिल ज्या बहु बारनि पेरो ॥२॥

जहें मतमग बधा माधव की सपनेहुं करत न फेरो ।

लोभ मोट मद नाम-कोह रत तिह सो प्रेम बनेरो ॥३॥

परगुन सुनत दाह पर दूपन सुनत हरख बहतेरो ।

आप पाव को नगर बसावन, सहि न सत्रत पर लेरो ॥४॥

साधन फल स्रुति सार नाम तव, भव सरिता कहैं घेरो ।  
 सो पर कर कौंकिनी लागि सठ, वैचि होत हठ चरो ॥५॥  
 कवहुँक ही सगति सुभाव तैं, जाउँ सुमारग नेरो ।  
 तव करि क्रोध सग कुमनोरथ देत कठिन भटभेरो ॥६॥  
 इक हौं दीन मलीन हीनमति, विपति जाल अति घेरो ।  
 तापर सहि न जाय करुनानिधि, मन को दुसह दगरो ॥७॥  
 हारि परयो करि जतन बहुत त्रिधि, तातैं कहत सवेरो ।  
 तुलसिदास यह त्रास मिटे जब, हृदय करहु तुम डेरो ॥८॥

भावाय—हे रामजी ! हे रघुनाथजी ! हे प्रभा ! सुनिए मेरा मन अयाय में ही  
 लीन रहता ह । आपके चरणारविन्दा को भूलकर दिन रात बेकार इधर उधर भटकता  
 फिरता ह, विषया की और दौड़ता रहता ह ॥१॥

न तो वह वेद की ग्राना मानता ह, और न उसे किसी का डर ही ह । कई बार  
 कामरूपी कोहू में वह तिलो की तरह पेरा जा चुका ह पर अब सारा कर्म भूल गया ह  
 (यह खबर नहीं कि दुष्कर्म करने में फिर बनी ही दुःशा हागी) ॥२॥

जहाँ सत समागम होता ह अथवा भगवतकथा हाती ह, वहा स्वप्न में भी मेरा  
 यह मन चक्कर नहीं लगाता, भूलकर भी उधर नहीं जाता । लाभ अगान अहकार काम  
 और क्रोध म ही जो पगे रहते ह उही दुष्टा से वह अधिक प्रेम करता ह ॥३॥

दूसरों के गुणा को सुनकर वह (डाह के मारे) जवा जा रहा ह, और जब दूसरों  
 की बुराई सुनता ह तब पूनकर क्रुपा हो जाता ह ! और तो स्वयं पारा का नगर बसा  
 रहा ह पर दूसर के (पापों के) खेपे को भा नहीं ख सकता । भाव यह हि अने  
 बड बड पापा पर भी कुछ ध्यान न देकर दूसरा के जरा म पाप पर उतका उपहास  
 उडाता है ॥४॥

आपका नाम जा सब साधनों का फलस्वरूप ह वेदा का सार ह, और ससाररूपी  
 नदी पार करने क लिए बेटा रूप ह, उसे दूसरा क हाथ में बह दुःख कोगे जोडी के  
 लिए बेचता हुआ हठबूबक उनका गुनाम बनना फिरता ह एक एक कौने के लिए आपका  
 नाम सुनाना फिरता ह ॥५॥

यदि कभी सत्भगवश अथवा दववश समाग के पाम जाता भी हू ता इन्द्रिया को  
 ग्रामकिन मन को कुमनोरथरूपी गडडे में धकेल दती ह ॥६॥

एक तो मैं बने ही दीन पागी और दुबुद्धि हू, विपत्तिया के जाल म पैसा पडा  
 हूँ, तिसपर हूँ कच्छालय । इस मन का असह्य धक्का लग रहा ह । भना म (निबल जीव)  
 इन (प्रबल) मन का खोर का धक्का कस सह सकता हूँ ॥७॥

अनेक यत्न कर-कर हार गया इसलिये म पहले मे ही कह दता हूँ कि तुनसीनास  
 का यह भय (जन्म-मरण का दुःख) अभी दूर हागा जब आप उसके हृदय म निवास  
 करेंगे, केवल आपके ही ध्यान स मन को चञ्चल वृत्तिया का निरोध सम्भव ह ॥८॥

गवशाय—भनुशासन = ग्राना । कोह—क्रोध । घनेरो = बहुत आबा । खेरो =

राज्ञा, घाटा या गाँव । घरा = यज्ञ । वाजिरो = बौद्धो, अनाम । नरो = नाम । ररा = धरता ।

विशेष—(१) वाजिरो—'मन्त्रि-नाश च यजुषाम वाजिग्या षण्णुनांसा अर्षान् पणु च (पतं च) धीपाई भाग वा वा जग्गा कएण ए, अनाम वा बौद्धिदा न तात्पर्य ह ।

(२) जतन बहुत विधि नाम कम छोटे भविष्यत्कथा गापन ।

१८४

गा धो वा, जा नाम लाज त गहि गग्या रपुत्रीर ।  
 वाग्नीष विनु वारन ही हरि, हरी सकल भय भोग ॥१॥  
 वेद विदित, जग विदित अजामिल विप्र-अ-पु धष नाम ।  
 धार जेमालय जात निवारयो, सुत हित मुमिरत नाम ॥२॥  
 पसु पामर अभिमान सिधु गज अस्या आद अब घाट ।  
 मुमिरत सट्टत सपदि ध्याये प्रभु हरया दुसह उर-दाह ॥३॥  
 व्याध, निपाद, गीध, गनिकादिन, अगनित भोगुन मूल ।  
 नाम ओट त -राम सवनि वा, दूरि करी सन मूल ॥४॥  
 वेहि आचरण घाटि ही तिन तें रघुवल भूपन भूप ।  
 सीदत तुलसीदास निसिवासर पद्या भीम तम रूप ॥५॥

भाषा—एसा बोन ह जिम श्रीरघुनाथजी न अपन नाम को लाज स नहो अपनाया, और बिना ही कारण के करुणा करनवाले श्रीहरि न उसका जन्म परणु भय दूर नहो कर दिया ? ॥२॥

बद म प्रकट ह और ससार में भी प्रसिद्ध ह कि अजामेव, जाति का ब्राह्मण महान पापों का आश्रय-स्थान था महान् पापकर्मी था । किन्तु जब यमलोक जाने लगा, तो उसने अपन पुत्र के बहाने आपका 'नारायण नाम पुकारा, तब आपन उसे यमलोक जाने से रोक लिया । (घोल से ही नारायण' का स्मरण करने से वह मुक्त हो गया फिर भला जा जानकर हरि नाम-स्मरण करगा, उसको मर्गति क्या न होगी ?) ॥२॥

महान् अभिमानी पामर पशु हावी का मगर न पकड लिया, तब उमके एक ही बार स्मरण करन पर हे प्रभो ! आप तत्क्षण वहाँ पहुँचे और उसको असह्य हादिक पीडा को दूर कर दिया (उस दुलभ परम पद प्रदान कर दिया ।) ॥३॥

याध (वाल्मीकि) निपाद (गुह) गीध (जटापु) गणिका (विंगला) ऋष्यादि जीव अगणित दोषों की जड थे किन्तु ह श्रीराम ! आपने अपन नाम की ओट से उनके सार वनशा का नाश कर दिया ॥४॥

हे रघुवश भूपण ! इन सबों से म किस आचरण में कम है ? फिर भी म तुलसीदास रात दिन भोगण अज्ञान रूप मपना हुआ दुख भोग रहा है । (यब आपने बड़े बड़े दुराचारियों का भा उद्धार कर दिया, तब मुझ पापों को क्यों भुलाए बठ हो । मुझे

मो ससार सागर से पार कर दीजिए न) ॥५॥

विनय—(१) इस पद का, पं १४३ स सम्बन्ध है । उसके अन्त म कहा गया कि 'हृदय करहु तुम डरा । यहाँ यह प्रश्न उठता है, कि जब हृदय अपवित्र है तब उसमें मगवान् का 'डरा' अर्थात् निवास कैसे हो सकेगा ? इसके समाधान म यह पद लिखा जान पड़ता है, कि सो धौं का जो नाम लाज नें नहिं राख्यो रघुवीर इत्यादि ।

(२) 'तमकूप—अविद्यारूपी कूप । सत की असत और असत का सत मान लेना, अथवा आत्मा भ्रनात्मा का यथाथ जान न होना ही 'अज्ञान-कूप' है ।

### १४५

कृपासिंधु, जन दीन दुवारे दादि न पावत कोहे ।  
जब जहँ तुमहिं पुकारत आरत, तब तिन्हके दुख दाहे ॥१॥  
गज, प्रह्लाद, पांडुसुत, कपि सबको रिपु-सकट मटयो ।  
प्रनत बंधु भय विकल विभीषन उठि सो भरत ज्या भेंटया ॥२॥  
मैं तुम्हरो लख नाम ग्राम इक डर आपने बसावौ ।  
भजन विवेक, विराग लोग भले, म जम-जम करि ल्यावौ ॥३॥  
सुनि रिसभरे कुटिल कामादिक, करहि जोर बरिआई ।  
तिहहिं उजारि नारि-अरि-धन पुर राखहि राम गुमाई ॥४॥  
सम-सेवा टल दान-दण्ड हौं रचि उपाय पचि हारया ।  
बिनु कारन को बलह बडो दुख प्रभु सो प्रगटि पुकार्यो ॥५॥  
सुर स्वारथी अनीस, अलायक, निठुर, दया चित नाहो ।  
जाउँ कहा, को विपति निवारक, भव-तारक जग माही ? ॥६॥  
तुलसी जदपि पोच तउ तुम्हरो, और न काहू बेगो ।  
दोजै भक्ति वाह बारक ज्यो मुवस बस अब सेरा ॥७॥

भाषाय—हे कृपासागर ! तुम्हारा यह दीन दास तुम्हारे द्वार पर पाय क्या नहीं पा रहा है ? (इसका इमाज क्या नहीं किया जाता ?) जब जहाँ पर दुःखिया ने भाग होकर तुम्हें याद किया तब वही पर उसा समय, तुमने उनका दुःख दूर कर दिये (एसा तुम्हारा स्वभाव है पर मर लिये न जाने क्या तुमने अपनी प्रकृति बाल दी) ॥१॥

गजेन्द्र, प्रह्लाद, पांडव, सुभद्रा आदि सभी के शत्रुघ्रा द्वारा दिये गये कष्टों को तुमने दूर कर दिया । भाई रावण के भय से व्याकुल शरणागत विभीषण का उठाकर तुमने भरत की भाँट छाली से लगा लिया ॥२॥

म तुम्हारा नाम लेकर अपने हृदय में एक गाँव बसाना चाहता हूँ । उसमें बसाने के लिए मैं धीरे धीरे भजन, विवेक, विराग्य आदि सज्जनों को इधर उधर से लाता हूँ । (मैं हृदय में जस-सँस सद्भावों का स्थान देता हूँ) ॥३॥

यह सुनकर क्रोधित हुआ दुष्ट काम क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि जोर डबरदस्तो करते हैं । उन बेचारे भले आदमियों को उजाड़ उजाड़कर, हे प्रभो ।

पा-गम्पति पाणि गो-पजा को सा-नाहर बना देने है (तब  
 सा निर्वाह हो ?) ॥४॥

गद, भू भौर सवा-गुताम करे तथा भौर भौर भी घनेह उपाय  
 है। (पर य गरी माग रहे) बिना ही कारण क सदा-मग सडे  
 महान् गुण को घान भो गुलार तुम्हार सामन निरग कर

( यदि कहा जाय कि अय दयतामा को क्या नही अपना दु ग मुनाया, तो ) य  
 दयता स्वार्थी, असमय घयाग्य और निष्ठुर ह। उनका पित्त तनित भा गही पिघनता।  
 कही जाऊ ? कौन विपत्ति दूर करनवाना है ? कौन इस संसार-सागर से पार उतारने  
 वाना ? (कोई भी तो नही दोग पडना) ॥६॥

तुलसी यद्यपि नीच ह पर ह तो तुम्हारा ही भौर किसी दूसरे का गुलाम तो  
 नही ह। अपना जानकर एक बार भक्ति-पथी बाँह दे दो जिससे तुम्हारे नाम का यह खेडा  
 घच्छी तरह घावाद हो जाय। (भाव यह ह, कि हृदय में एक तुम्हारी भक्ति के प्रताप  
 से ही ज्ञान, विवेक, वराग्य आदि सद्भावा का उदय भौर काम-क्रोधादि का नाश  
 होगा ॥७॥

ग-गय—दादि = गाय इसाफ। दाहे = जला दिये, नष्ट किए। ल्यावों =  
 ले जाऊ। उजारि = उजाड़कर। अनीस = असमय, नि शक्त। बारक = बार + एक,  
 एकबार। खेरो = खेडा, छोटा सा गाँव।

विशेष—(१) 'कपि—सुश्रीव से तात्पर्य ह।

(२) विभीषण भेटयो—विभीषण न ज्यो ही यह कहा कि—

दीनदयालु कहावत केसव' हों अति दीनदसा गह्यो गाढो।  
 रावन के अघ-ओघ में केसव ! बूडतहों पर ही गहि काढ़ो ॥  
 ज्या राज की प्रहलाद की कीरति, त्योहों विभीषण को जल बाढ़ो।  
 आरत बभ्रु ! पुकार सुनो किन, आरत हों तो पुकारत ठाढ़ो।'

[रामचन्द्रिका

त्याही श्रारधुनाथजी ने उसे हृदय से लगा लिया—

अस कहि करत दडवत देखी। तुरत उटे प्रभु हय वितेखी।  
 दीनबचन सुनि प्रभु मन भावा। भुज बिसाल गहि हृदय लगावा ॥

[रामचरितमानस

स्वामित्व

हों सब विधि राम, रावरो चाहत भयो चेतो।  
 ठौर-ठौर साहिबी होत है, ख्याल बाल कलि केरो ॥१॥

काल-कम इन्द्रिय विषय गाहवगने घेरो।

हों न कबूलत बाधिके मोल करत करेरो ॥२॥

वदि छोर तेरो नाम है विरुदेत वडेरो।

में कह्यो तब छल प्रीति के मौग उर डेरो ॥३॥

नाम थोट अउलगि बच्चो मूलजुग जग जेरो ।  
 अब गरीबजन पोपिये, पायवो न हेरो ॥४॥  
 जेहि कौतुक (बन) सग म्यानवो प्रभु पाय निबेरो ।  
 तेहि कौतुक कहिय कृपालु । 'तुलसी है मेरा' ॥५॥

भाषा—हे रामजी ! म सब प्रकार स आपना दास बनना चाहता हूँ, पर यहाँ तो ठौर ठौर पर गाहनी हो रही है । (मन अपनी प्रभुता जमा रहा हूँ, इन्द्रियाँ अलग ही अपना अधिपत्य दिगा रही हैं । अब मैं किस किस की गुलामी करता किहूँ ?) यह सब कौतुक कलिकाल का है ॥१॥

काल, कम और इन्द्रियरूपी ग्राहका ने मुझ पर लिया है । जब मैं उनसे हाथ बिकना बबूल नहीं करता तब वे मुझे बाँधकर मुझ पर कड़ा दाम चढ़ाते हैं, जन्म-तसे सालख दिखा दिवाकर अपन अधीन करना चाहते हैं ॥२॥

आपका नाम बधन से मुक्त कर देनेवाला है और आपका वाना भी बड़ा है । जब मैंने उन (ग्राहका) से कहा, कि मैं तो रघुनाथजी के हाथ बिक चुका हूँ, तब वे कपटभरा प्रेम दिनाकर मुझसे मेरे हृदय में बसने के लिए जगह माँगने लगे । (अब मैं क्या करूँ ? यदि उन्हें स्थायित्व दिये देता हूँ तो वे दीनता दिखा रहे हैं, पर जगह मिलते ही धीरे धीरे उस पर अपना अधिकार भी कर लेंगे, और मुझे घटा बता देंगे) ॥३॥

अब तब मैं आपके नाम के सहारे बचा रहा (नहीं तो कभी का इन ग्राहकों के हाथ बिक गया होता, इन्द्रिय लोलुप हो गया होता) पर अब यह कलि मुझे परेशान कर रहा है । अतः अब इस गरीब गुलाम का पालन कीजिए, नहीं तो फिर यह खोजने से भी न मिलेगा (कनिषुग इसका नाम निशान तब मिटा देगा, 'रामदास' से 'कामदास' बना लेगा) ॥४॥

हे नाथ ! आपने जिस कौतुक से पत्नी (उत्तू भयवा बगुले) और कुत्ते का फसला कर दिया था, उसी लीला से यह भी कह दीजिए कि तुलसी मेरा है (बस, इतना कह देने से कनिषुग का इस पर कुछ भी बल न चलेगा, अपना-सा मुह लिये चला जाएगा) ॥५॥

भाषा—करेरो = कड़ा । विशदत = बानावाने । मूलजुग = कलयुग । जेरो = जेर माने परेशान करना । हेरो = डूबने पर । बक = बगुला । निबेरो = फसला कर दिया ।

विनय—(१) 'हैं सब चेरो — कबिबर विहारो भी यही चाहते हैं—

'हरि तुम सों फीजत यहै, विनती बार हजार ।

जेहि-तेहि भाँति डर्यो रह्यो, पर्यो रह्यो दरवार ।'

(२) 'ठौर ठौर साहिबी — नाई की बारात में सभी ठाकुर हो रहे हैं ।

(३) इस पद में गोसाइनी ने साहिबी, 'स्वामी, कबूतर, 'करेरो इन प्रारसी शब्दा का प्रयोग किया है । ये प्रयोग, बोलचाल की भाषा में आने से सरस बन गये हैं ।

कृपासिंधु ताते रहीं निसिदिन मन मारे ।

महाराज, लाज आपुही निज जाध उधारे ॥१॥

मिले रहै, मारयो चहे कामादि सँधानी ।  
 मा विनु रह न, मरियै जाँरें छल छाती ॥२॥  
 वसत हिये हिन जानि मे मन्वकी रुचि पाली ।  
 कियो कथष को टड हौं जड करम कुचाली ॥३॥  
 देखी सुनी न आजुला अपनायनि एसी ।  
 करहि सवै सिर मेर ही फिरि परै अनैसी ॥४॥  
 वडे अलेखी लखि परै, परिहरे न जाही ।  
 असमजस मे मगन ही, लीजै गहि वाही ॥५॥  
 वारक बलि अवनोकिये, कौतुक जन जी को ।  
 अनायास मिटि जाइगो सबट तुलसी को ॥६॥

भाषाय—हे कृपासागर । इसीलिए म रात दिन मन मारकर रहता हूँ कि महाराज । अपनी जाँघ उधाड़ने से अपनी ही लाज जाती ह, अपने हाँथों अपना परदा खोलने से खुद ही बेशम बनना पड़ता ह ॥१॥

यह काम क्राव आदि साथी मिले भी रहते ह और मारना भी चाहते ह ऐसे कपटी हैं ! वे बिना मेरे रह भी नहीं सकत अर्थात् जब तक मुझमें 'जीवत्व भाव ह तभी तब काम क्रोध आदि का अस्तित्व ह । और मेरी ही छलपूर्वक छाती जलाते ह । (जिस पत्तल म खात ह उसी मे छेद करते ह ) ॥२॥

यह जानकर कि ये मेरे हृदय म वसन ह प्रेमपूर्वक मने इन सबकी रुचि भी पूरी कर दी, अर्थात् सारे विषय भाग चुका हूँ, फिर भी इन दुष्टों और कुचालियों ने मुझे कत्यक की लकड़ी बना रखा ह (लकड़ा क इशार से जमे कत्यक लकड़ा का नाच नचाना सिखाता ह वसा मुझे नाचना पड़ता ह) ॥३॥

भाज तक मन एसी पराधीनता न तो देखी ह, और न सुनी ही ह । कम तो करते हैं सारे आप और जो कुछ बुराई हाता ह, वह मेर मत्थे मनी जाती ह । (इंद्रियाँ भोग विलास करती ह और कुकल भागना पड़ता ह अनेक जमा तक बेचार जीव को । क्या अयाय ह ! ) ॥४॥

वे सब ऐसे विचित्र अयायी ह कि दखने में तो आने नहीं (अज्ञान के मारे इनकी चाल समझ में नहीं आती) और दाख भी पँ तो छाड़ने को जी नहीं चाहता । हे प्रभो ! इसी दुविधा में पडा हूँ । बस, अब हाथ पकडकर मुझ निकाल लीजिए (नहीं तो, इस ससार-सागर में डूबने हा वाना हूँ) ॥५॥

आपकी बलयाँ लेता हूँ कृपाकर एक बार अपने इस दास का यह कौतुक तो देखिए । आपके देखते हा तुनमी का दु ख दूर हो जायेगा (क्याकि ब्रह्मदशन मात्र से जन्म-मरण छूट जाता ह) ॥६॥

गद्याय—मनमारे = उदास । सधाती = साथी । कथक = कत्यक, नाचनेवाना । टड = लकड़ी । अनसी = अनिष्ट । अलेखी = अयायी, विचित्र ।

विनय—(१) इस पद में विषयों की दुदम्य प्रबलता दिखाई गई ह । काम, क्रोध

घादि विषय भारी योग्यता है। इनके बड़े पर चलें तो निगाह नहीं और इनसे ग्रन्थ रहें तो भी गुजारा नहीं। ये नाच-नाचकर भी नहीं छोड़ने। जीव को इनके अधीन होकर, अपने कष्ट भोगने पड़ते हैं। भारी विडम्बना है! भगवत-वृत्ता में ही इनसे पिंड छूट सकता है।

१४८

कहीं कौन मुँह लाइने रघुवीर गुसाईं ।  
 सकुचत समुचत आपनी सब साईं दुहाईं ॥१॥  
 सेवत बस, सुमिरत सखा, सरनागत सो हीं ।  
 गुनगन-नीतानाथ के चित करत न हीं ही ॥२॥  
 कृपासिन्धु बंधु दीन के आरत हितकारी ।  
 प्रनत-पाल विस्दावली सुनि जानि विसारी ॥३॥  
 सेइ न घेइ न सुमिरिक्के पद प्रीति सुधारी ।  
 पाइ सुमाहिव रामसो, भरि पेट विगारी ॥४॥  
 नाथ गरीबनिवाज है, म गही न गरीवी ।  
 तुलसी प्रभु निज और तें वनि परै सो कीरी ॥५॥

भावाय—हे रघुवीर ! हे प्रभो ! क्या मुँह लेकर आपस कुछ कहें ? स्वामी की सौगंध है जब मैं अपनी करनी की ओर देखता हूँ तब सवाच के मार कुछ कह नहीं सकता ॥१॥

आप सेवा करने से बस में हो जाते हैं, स्मरण करने में मिन बन जाते हैं, और शरण में आने से सामने प्रकट हो जाते हैं। ऐसे जा आपके गुण-समूह हैं उन पर भी मैं ध्यान नहीं दे रहा हूँ ॥२॥

आप कृपा के समुद्र हैं दीन के बंधु हैं दुखिया के हितू हैं, और शरणागत के पालनहार हैं ऐसा आपकी विस्दावली सुनकर और जानते हुए भी मैं भूल गया हूँ ॥३॥

न तो सेवा ही की, और न ध्यान ही किया। स्मरण करके आपको चरणा में सच्चा प्रेम भी तो नहीं किया। आप जैसे श्रेष्ठ स्वामी को पाकर भी मुझमें जितना भी हाँ सकता, उतना विगाड-ही विगाड किया। भाव, अपने हाथों अपन परा पर कुल्हाड़ी मारी ॥४॥

आप दीनोंपर कृपा करनेवाले हैं पर मने दीनता धारण नहीं की। भाव यह है कि देहाभिमान के कारण मुझमें कभी दैन्य भाव नहीं आया सदा एँठ हाँ बनी रही। फिर दीन बल्लभ भगवान कृपा करें तो कैसे ? अत है नाथ। अब अपनी ओर देखकर जो आपसे बग पड़ें, वहीं कीजिए। माराश यह, कि आप विगड़ी के बनानेवाले हैं सो मुझ पर भी कृपा अवश्य करेंगे ॥५॥

गदाय—हींहीं = मैं हूँ। घेइ = ध्यान करके। कोबी = कीजिए।

विशेष—(१) मैं गही न गरीवी—स्वर्गीय भट्टजी ने इसका अर्थ यह लिखा है—

‘(मैं ऐसा नीच हूँ कि) मुझ गरीबी भी ग्रहण नहीं करती। यह अर्थ लीला



तानी से किया गया जान पड़ता है। इसका सीधा ज्वा-का-र्यो ग्रथ तो यही हो सकता है कि मैंने गरीबी नहीं गही, न कि यह, कि मुझे गरीबी भी नहीं ग्रहण करती।

(२) 'कीरी'—यह बु-देनखण्डो प्रयोग 'करबी से मिलता-जुलता है। बिहारी ने भी 'कीरी' का प्रयोग किया है।

१४६

कहा जाऊँ, कासो वहाँ, और ठौर न मेरे।  
 जनम गँवायो तेरहि द्वार बिकर तेरे ॥१॥  
 मैं तो बिगारी नाथ सो आरति के लीन्हे।  
 ताहि कृपानिधि क्यों बने मेरी सी कीहे ॥२॥  
 दिन दुरदिन, दिन दुरदमा दिन दुख दिनदूषन।  
 जबलो तू न बिलोकिहै रघुबश विभूषन ॥३॥  
 दर्ई पीठ बिनु डीठ मैं, तुम विश्व बिलोचन।  
 तो सो तुही न दूसरो नत-सोच विमोचन ॥४॥  
 पराधीन देव ! दीन हौ, स्वाधीन गुसाईं।  
 बोलनिहारे सो करे बलि विनय की झाई ॥५॥  
 आपु देखि मोहि देखिये जन मानिय साचो।  
 बडी ओट रामनाम की जेहि लई सो वाचो ॥६॥  
 रहनि रीति राम रावरी नित हिय हुलसी है।  
 ज्या भावै त्यो करु कृपा तेरो तुलसी है ॥७॥

भावार्थ — कहां जाऊँ ? किसस कहूँ ! मुझे कोई और ठौर नहीं। तेरे ही दर-बाजे पर (पे-पड) जिन्गी बाटी है और तारा ही गुलाम रहा हूँ। मतलब यह कि मैं सब तरह से तारा ही हूँ किसी दूसरे का नहीं ॥१॥

तुमसे सताये जाने के कारण हे नाथ ! मैं तो सारी करना बिगाड चुका हूँ। अब हे कृपानिधि ! यदि तूने भी जमे के लिए तारा व्यवहार किया तब तो ही चुका ! भाव यह कि मुझसे तो सारा बिगाड ही हुआ है अब तेरे हाथ है तू सुधार ले, क्योंकि तू दया का समुद्र है ॥२॥

हे रघुकुल में श्रेष्ठ ! जब तक तूने (इस जीव की धार) नहीं देखा। (कृपा नहीं की) तब तक नित्य ही खाटे दिन नित्य ही बुरा दशा निरथ ही दुःख और नित्य ही दोष मगने रहेंगे ॥३॥

मैं तुम्हें पीठ गिन फिरता हूँ तुमने विमुख हा रहा हूँ क्योंकि मैं दृष्टिहीन हूँ अपना हूँ पर तू तो सारा मात्र का द्रष्टा ह न ? भाव यह कि तू मुझसे विमुख कैसे होगा ? तुम्हें-या तू ही है। दूसरा बौन है, जिसम तरी उपमा हूँ ? दीन-जुनिमों का सकट दूर करने वाला एक तू ही है ॥४॥

हे देव ! मैं परतत्र हूँ दीन हूँ पर तू तो स्वतंत्र है स्वामी है। बनिहारी ! (धरम

रूप), बालनेवाले से क्या उसको परछाई विनय कर सकती है? अर्थात् यह जड चैतन्य विभु से विनती नहीं कर सकता ॥५॥

अतएव तू पहले अपनी आर देख, तब मेरी ओर देख, तभी इस दास को सच्चा मानना। राम-नाम की आठ बडी भारा है। जिस किसी ने भा रामनाम का सहारा लिया वह (जन्म-मृत्यु भय से) बच गया ॥६॥

हे राम ! तेरी रहनी और तेरी रीति सदा मेरे हृदय में नित्य उमग भरती रहती है, तेरा शील स्वभाव विचारकर मैं मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हो रहा हूँ, कि अब मेरी सारी विगडी धन जायेगा। बस, यह तुलसी तेरा है जैसे भी हाँ, इस पर कृपाकर, इस तू अगोवार कर से ॥७॥

शब्दाय—किंकर = सेवक। भारति के लीन्हें = क्लेशित होने के कारण। दिन = नित्य से तात्पर्य है। छाई = छाया। बाँचो = बच गया।

विशेष—(१) 'कृपा' = श्रीभगवद्गुणदण्ड में 'कृपा' का लक्षण निम्नलिखित माना गया है—

'रक्षणो सबभूतानामहमेवपरो विभु।

इति सामभ्य समान कृपा सा परमेश्वरी ॥'

(२) पराधीन गुसाई—ब्रह्म-जीव के सम्बन्ध में गासाईजी ने रामचरित मानस में स्पष्ट लिखा है—

'परबस जीव, स्वबस भगवता। जोब अनेक, एक श्रीकृता ॥'

यहाँ, साक्ष्य का प्रतिपादन किया गया है, न कि अद्वैत बदान्त का।

१५०

रामभद्र ! माहि आपनो सोच है अरु नाही।

जीव सकल सत्ताप के भाजन जग माही ॥१॥

नातो बडे समथ सो इक ओर बिघौ हूँ।

ताको मोसे अति घने, मोको एवै तूँ ॥२॥

बडी गलानि हिय हानि है सबग्य गुसाई।

कूर कुसेवक कहत हौँ सेवक की नाई ॥३॥

भला पाच राम को कहै मोहि सब नरनारी।

बिगरे सेवन स्वान ज्यो साहिव सिर गारी ॥४॥

असमजस मन को मिटे सो उपाय न सूझै।

दीनबधु कीजे सोई वनि परै जा वृकै ॥५॥

विस्दावली विनोक्रिये तिन्हमे कोउ हो हो।

तुलसी प्रभु को परिहरयो सरनागत सोहौ ॥६॥

भाषाय—हे कल्याण-स्वरूप श्रीराम ! मुझे अपना साच है भी, और नहीं भी है। कारण कि जितने भी जीव हैं वे सभी सत्ता में दुःख के भाजन हैं, सभी दुःखी हैं।

मुझे सोच तो इस बात का है कि हाथ । मैं सतार सागर में ही डूबा पड़ा हूँ अभी तक मेरा उद्धार नहीं हुआ । और निरिचयत इसलिए हूँ कि जब सभी जीवा को मेरी ही जैसी दशा है तो मुझे (कर्मफल भोगने में) कुछ चिन्ता नहीं करने चाहिए ॥१॥

पर यह तो बताइए कि, क्या आप-सारीरे बड़े समय के साथ सिर्फ एक ही, (मेरी ही) धोर से सम्बन्ध है ? क्या, जिस प्रकार मैं आपको अपना मानता हूँ वैसे आप मुझे न मानेंगे ? (एकांगी ही प्रेम रखेंगे क्या ?) इसलिए आपके लिए तो मुझ-जैसे करने हैं किन्तु मेरे लिए तो एक आप ही हैं । (आप चाहें तो मुझमें भले ही निरपेक्ष हा जायें, पर मैं आपसे विमुख होने का नहीं) ॥२॥

हे गण ! आप तो घट घट की जानते हैं मुझे बड़ी ग्लानि हो रही है और हृदय में इसे मैं एक हानि भी समझता हूँ कि हूँ तो मैं दुष्ट और कुसेवक पर बातें ऐसी कर रहा हूँ, जैसे कोई सच्चा सुसेवक करता है । (मेरा यह बनावटीपन आपके भागे कैसे छिप सकता है, क्योंकि आप तो सब हैं) ॥३॥

भला हूँ या बुरा पर कहते तो सभी स्त्री-पुरुष मुझे 'राम का' ही हैं । सेवक और कुत्ते के बिगड़ने से स्वामी के ही मिर गलियाँ पड़ती हैं । (तात्पर्य यह कि यदि मैं छोटाई करूँगा, तो लोग यही कहेंगे कि बुरा ही उस राम का जिसके ऐसे ऐसे नीच सेवक हैं) ॥४॥

मुझे वह उपाय भी नहीं सूझ रहा है कि जिससे चित्त की यह दुविधा दूर हो जाय (अर्थात् मेरी नीचता दूर हो जाय और आपको भी कोई बुरा न कहे) अब है दोन बचो ! आपको जो समझ पड़े और जो बन सके, वही (मरे साथ) कीजिए ॥५॥

तनिक अपनी विरुदावली की ओर तो देखिए ! क्या मैं कही उसमें स्थान पा सकता हूँ ? (भाव यह है कि आप दीनबन्धु हैं, तो क्या मैं दीन नहीं हूँ आप पतित पावन हैं तो क्या मैं पतित नहीं हूँ आप प्रणनपालक हैं तो क्या मैं प्रणत नहीं हूँ ? इनमें से) इन तुलसी को छोड़ भी देंगे तो भी यह उही के सामने शरण मैं जाकर पड़ा रहेगा और कही भी न जायेगा ॥६॥

शब्दाथ—भद्र=कल्याण । पोच=नीच । गारी=गाली । असमजस=दुविधा । विरुद=बाना । सोहो=सामने ।

विशेष—(१) जीव जगमाही—क्योंकि जसा कम करेंगे, क्या फल भागेंगे —

‘अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म गुणानुभवं ।’

(२) ‘असमजस—यह दुविधा कि मैं छोटा हूँ अतः मालिक पर भी बटटा लगता है खरा ही नहीं सकता, क्योंकि स्वभाव से ही मुझमें छोटाई भरी है । यह भी चाहता हूँ कि मैं चाहे जसा बना रहूँ पर मेरे कारण मेरे मालिक की बदनामी न हो, सो भी नहीं हो सकता, दिन रात इसी असमजस में पड़ा मोचा करता हूँ ।

(३) ‘कीज सोई बूझ’—यही बन पड़गा कि अपने सेवक पर आप ही हृषा करेंगे, क्योंकि यदि दह देंगे तो सतार आप पर हेंसेगा और कहेगा कि यह कसा स्वामी है जो अपने सेवक की दुदशा चुपचाप खडा दख रहा है । इसमें भी बदनामी का डर है इसलिए हृषा ही करते बनेगी ।

(४) तुलसी सोहों—क्योंकि—

‘बुम्बक के पोछे लगी फिरत अचेतन लोह ।’

१५९

जो पै चेरार्ई राम की करतो न लजातो ।  
 तो तू दाम कुदाम ज्यो कर कर न बिकातो ॥१॥  
 जपत जीह रघुनाथ को नाम नहिं अलसातो ।  
 बाजीगर के सूम ज्यो खल येह न खातो ॥२॥  
 जो तू मन, मेरे कहे राम-नाम कमातो ।  
 सोतापति सनमुख सुखी सब ठाव समातो ॥३॥  
 राम सोहात तोहिं जो, तू सर्वाहिं सोहातो ।  
 काल करम कुल कारनी कोऊ न कोहातो ॥४॥  
 राम नाम अनुरागही जिय जो रतिआतो ।  
 स्वारथ परमारथ पथी ताहिं सब पतिआतो ॥५॥  
 सेइ साधु सुनि समुक्षिक पर पीर पिरातो ।  
 जनम कोटिको कादलो हृद-हृदय थिरातो ॥६॥  
 भव भग अगम अतत है विनु खमहिं सिरातो ।  
 महिमा उलटे नाम की मुनि कियो बिरातो ॥७॥  
 अमर अगम तनु पाइ सो जड जाय न जातो ।  
 होतो मगल-भूल तू अनुकूल विधातो ॥८॥  
 जो मन, प्रीति प्रतीति मा राम-नामहिं रातो ।  
 तुलसी रामप्रसाद सा तिहूँ ताप न तातो ॥९॥

भाषाय—हे जीव । जो तू श्रीरामचन्द्रजी की गुलामी करने में न लजाता, तो खरा दाम होकर भी छोटे दाम की तरह हाथो-हाथ न बिकता फिरता । भाव यह कि तू हूँ तो परमात्मा का अंश, पर धपना स्वरूप भुला देने क कारण अनेक यानिया म भटकता फिरता है ॥१॥

यदि तू जीम से श्रीराम का नाम जपन में आलस्य न करता, तो आज तुझे बाजीगर के सूम क समान धूल न फाँकना पडती । (जब बाजीगर, जब उसे कोई कजूस खेल देखने पर भी कुछ नहीं देता, तब उसके नाम से काठ के पुतले के मुँह में धूल डाल कर गालियाँ सुनाता है उसी प्रकार यदि तू भगवन्नाम-स्मरण करने में कजूसी न करता धुले दिल से दिन रात नाम जपता, तो तुझे गालियाँ न गानो पडती, धूल न फाँकनी पडती, तेरी ऐसी दुःशा न हाती) ॥२॥

यदि तू मेरे कहने से राम-नाम कमाता रामनाम हरे घन सग्रह करता या श्री जानकी-वल्लभ रघुनाथजी तुझे अपनी शरण में ले लने तू सुखी हो जाता और सबत्र तेरा आदर होता तेरा लोक बन जाता और परलोक भा ॥३॥

जो तुझे श्रीरामजी अच्छी लग ही, तो तू भी मयकी सङ्गा सङ्गा नाम, कम आदि जिनो (इस जीव के) प्ररक्ष है व तुक पर प्राय म करत, मति सर धनुत हो जाते ॥४॥

यदि श्रीराम-नाम त ही तू मय मे प्रीति जाडगा सङ्गा तो स्याम घोर परमाथ सोनी के ही घटोही तुक पर विरराग करत । अर्थात् संगार और परतोत्र नाम म ही तू मुगी होता ॥५॥

जो तू संगी की सेवा करता एव दूगरा की पीडा मुत घोर गमम्बर दुगी होता या सरे हृदय घी तापाव म जो मनन जमा का मन नमा है वह मोष बंड जाता, तदा प्रस करण विमल हो जाता ॥६॥

संगार का माग सम्य है, इस पर सनात महात् दुकर है, किन्तु (उर्ध्वत प्रापरण करता हुआ) तू बिना ही अग के उते पार कर जाता । अर्थात् श्रीराम का उाग भी नाम सेने की महिमा ने (वात्मीकि) की मुति बाा दिया था । भाव यह कि जब उमटे नाम का यह प्रभाव है तब सीधा नाम जता से क्या गही मय जाणता ॥७॥

घरे जड ! सरा यह देवा की भी दुःख (मात्र) शरीर यों ही मय त पता जाता तू करमाण का मूल बन जाता । अर्थात् बाली मयस्था की पट्टेव जाता घोर दीन भी तुक पर वृषा करता ॥८॥

अर मा ! यदि तू प्रेम और निरवात से राम-नाम में ली सगा देता तो हे तुलसी ! श्रीराम वृषा से सीता तापा में कभी त जगता ॥९॥

गम्दार्थ—चरार्द=सेवा । राह=धून । बारनी = कारण प्रेरण । कोहातो = गुस्ता करता । रतिघातो = प्रीति करता । विरातो = दुखी होता । वादलो = बीचड, मेल । हृद = तालाव । विरातो = बठ जाता साक हो जाता । विरातो = पार कर जाता तय कर लेता । किराता = विरात, भोल । तातो = तचता = जाना ।

विशेष—(१) राम सोहाते सोहातो क्योकि—

‘जापर वृषा राम की हीई । तापर वृषा करहि सब कोई ॥’

(२) ‘अनुराग — श्रीवजनाथजी अनुराग की परिभाषा लिखते हैं —

‘व्यापकता जो प्रीति की, जिमि सुठि बसन सुरग ।

दगन द्वार बरस चटक सो अनुराग अभग ॥’

(३) ‘पर-कीरविरातो—भक्तवर नरसी वण्णव लक्षण में कहते हैं —

‘वण्णव जन तो सेने कहिये जे पीड पराई जाणो रे ।’

(४) ‘अनुकूल विधातो — ब्रह्म इसलिए प्रसन्न हो जाता कि इस जीव के रचने से मेरा थम सकल हो गया इसे अब बार-बार न रचना पडगा । जीव का ब्रह्म-सम्बन्ध हो जाना ही जीवन का चरम फल है ।

(५) ‘तिहुँ ताप — दृष्टिक भीतिक और दविक ।

(६) ‘प्रीति — ‘भगवतगुणदपण में प्रीति का यह लक्षण दिया गया है —

अत्य-तयोग्यतातुद्धिरनुकूलादिनालितो ।

अपरिपूणस्वरूपा या सा स्यात् प्रीतिरनुत्तमा ॥’

१५२

राम भलाई आपनी भल कियो न काको ।  
 जुग जुग जानकिनाथ को जग जागत साको ॥१॥  
 ब्रह्मादिक बिनती करी कहि दुख बसुधा को ।  
 रबिकुल-कैरव चन्द भो आनन्द-सुधा को ॥२॥  
 कौसिक गरत तुपार ज्या तकि तेज तिया को ।  
 प्रभु अनहित हित को दियो फल कोप कृपा को ॥३॥  
 हरयो पाप आप जाइवै सताप सिला को ।  
 सोब-भगन काढयो सही साहिब मिथिला को ॥४॥  
 रोष रासि भृगुपति घनी अहमिति ममता को ।  
 चितवत भाजन करि लियो उपसम समता को ॥५॥  
 मुदित मानि भाषसु चले वन मातु पिता को ।  
 धरम धुर-धर धीरधुर गुन-सील जिता को ? ॥६॥  
 गुह गरीब गतग्यातिहै जेहि जिउ न भखा को ?  
 पायो पावन प्रेम तै सनमान सखा को ॥७॥  
 सद्गति सबरी गीध की सादर करता को ?  
 मोच-मीव सुग्रीव वं भकट हरता को ? ॥८॥  
 रागि विभीषन को सके अम कान-गहा को ?  
 आज विराजत राज है दसकठ जहा को ॥९॥  
 वालिस वासी अवध को बूचिये न खाको ।  
 सो पावर पहुँचो तहा जह मुनि मन थाको ॥१०॥  
 गति न लहै राम-नाम सो बिबि सो सिरजा को ?  
 सुमिरत कहत प्रचारिवै बल्लभ गिरिजा को ॥११॥  
 अकनि अजामिल की कथा सानन्द न भा को ?  
 नाम लेत कलिकाल हू हरिपुरहि न गा को ? ॥१२॥  
 राम-नाम महिमा करे काम भूरह आको ।  
 साखी वेद पुरान हैं तुलसी-तन ताको ॥१३॥

भावाय—श्रीरामजी ने अपने भले स्वभाव से किसका भला नहा किया ? युग युग से श्रीजाकी रमण का ऐसा सुपरा सगर में प्रसिद्ध ह ॥१॥

ब्रह्मा आदि दैवताओं न पथिकों का दुख सुनाकर जब प्रार्थना की, तब (पथिकों का मार हरन के लिए राक्षसों को मारने के लिए) मूपवाल्मीकि कुमोत्सिनो को प्रफुलित करनेवाले एव अमलापम आनन्द देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी आबिभूत हुए ॥२॥

विश्वामित्र, ताडना का तैल देखकर आल की तरह मग्न जा रहे थे । प्रभु ने

ताडका को मारकर शत्रु को मित्र का-सा फन लिया एव क्रोध का फन कृपा के रूप में दिया । भाव यह कि दुष्ट ताडका को स्वगलाक भेजकर उम पर कृपा को ॥३॥

स्वयं जाकर पापाणी (पहलिया) का पाप सताप दूर कर दिया उसे दिव्य देह देकर पुन पति लाक भेज दिया । फिर मिथिला क महाराज जनक को शोकागार में स डूबत हुए निकाल लिया अर्थात् शिव अनुप तोडकर उनकी प्रतिज्ञा पूरी कर दी ॥४॥

परशुगम क्रोध के भाडार एव अहंकार और ममत्व के धनी थे उन्हें भी आपने देखते ही शांति और समता का पात्र बना लिया अर्थात् वह क्रोधी से शांत और अहंकारी से समद्रष्टा हो गए । यह सब श्रीरामजी के शील-स्वभाव का ही प्रभाव है ॥५॥

माता (कन्येयी) और पिता की आत्मा मानकर प्रसन्नचित्त बन चले गये । ऐसा भला धमधुरधर और धयपगव तथा सद्गुण और शील का जीतनेवाला दूसरा कौन है ? ॥६॥

जिसकी जाति का भी कोई पता नहीं जिसने सभी प्रकार के जीवों का सदा भक्षण किया एस गरीब गुह निपाद ने भी (जिन रघुनाथजी से) पवित्र प्रेम के कारण सखा के जैसा आदर प्राप्त किया ॥७॥

शबरी और गीव (जटायु) का मोक्ष देनेवाला कौन है ? और महान् शोक सतत सुग्रीव का सकट निवारण करनेवाला कौन है ? ॥८॥

ऐसा कौन कान का ग्रास था जो (रावण से बहिष्कृत) विभीषण को अपनी शरण में रख लता, जिस रावण के राज्य में आज भी विभीषण राजा बना बठा है । (यह सब कृपा रघुनाथजी की है) ॥९॥

अयाध्या का रहनेवाला मूख धोबी जिसमें खाक भी बुद्धि न थी अथवा जिसे कोई धूल क थराबर भी नहीं समझता था वह पापी भी वहाँ पहुँच गया जहाँ पहुँचने में मुनिया का मन भी थक जाता है । भाव यह है कि जिन परमधाम के सवध में बड़े बड़े मुनि विचार भी नहीं कर सकते, वहाँ वह सीताजी की निदा करनेवाला धोबी सख बना गया ॥१०॥

ब्रह्मा ने एसा कौन सिरजा जो राम नाम के प्रभाव से मुक्ति का भागी न हो ? आशय यह कि जावमात्र राम-नाम के प्रताप से मुक्त हो जाते हैं । पावतीवल्लभ शिवजी (जिस) राम नाम का स्वयं स्मरण करते हैं और दूसरों को सुना सुनाकर उसका प्रचार करते हैं ॥११॥

अजामेघ की क्या सुनकर कौन प्रसन्न नहीं हुआ ? और राम नाम का स्मरण कर इस कलिकाल में एसा कौन है जो विष्णुलोक को न चला गया हो ? ॥१२॥

राम नाम का महत्व अर्धोवा का भी कल्पवृक्ष बना सकता है । इस बात के प्रमाण बंद और पुराण है । (इस पर भी विश्वास न है तो) तुलसीदास की ओर देखो । भाव यह है, कि मैं महाप्रथम था किन्तु राम-नाम क प्रभाव से आज राम भक्ता में मेरी गणना होता है ॥१६॥

शब्दाय—जागत = उजागर है । साको = यश । कौसिह = विश्वामित्र । गरल = मरते हैं । तिया = स्त्री यहाँ ताडका से तात्पर्य है । सिना = यहाँ पहलिया से आशय है । अहमति = मैं एसा अहंकार । उपमम = शांति । गतग्याति = जिसकी जाति का भी

पता नहीं। काल गहा—काल का प्राप्त, मरणप्राय। घालिस—मूँ। ३

भा—हुभा। गा—गया। आको—प्रकीर्ण। तन—ओर।

धिशेष—(१) इस पद में गोसाइजी ने क्रमशः श्रीराम-कथा का संक्षिप्त वर्णन किया है। इस पद को यदि 'विनय रामायण' कहा जाये, तो असंगत न होगा।

(२) 'गुह सखा को'—गुह निपात को कितना बड़ा महत्त्व प्राप्त हुआ है —

प्रेम-मुलकि केवट कहि नाम् । कीह बूरि तैं वण्ड प्रनाम् ॥

राम सखा रिपि बरबस भेटे । जनु भहि सुठत सनेह समेटे ॥

रघुपति भगति सुमगल मूला । नभ सराहि सुर बरथाहि फूला ॥

इहि सम निपट भीच कोउ नाहीं । बड वसिष्ठ सम को जग माहीं ॥

जेहि लखि सपनहु ते अधिक, मिने महामुनि राव ।

सो सीतापति मिलन को प्रगट प्रताप प्रभाव ॥'

[रामचरितमानस

(३) आज जग का—श्रीरामेश्वर भट्टजी ने इसका यह अर्थ किया है—  
“आज (जिस समय) जहा (लका) का राजा रावण विराजमान था। किन्तु इससे यह अर्थ अधिक उपयुक्त जचना है, कि जिस रावण के राज्य में आज भी विभीषण राजा बना बठा है।” यही अर्थ श्रीबजनाथजी ने भी लिखा है, जहा को राजा रावण रहो ताको परिवार सहित मारि तहाँ का राजा विभीषण का रिय सो अजहू विराजत है, भाव, अचल राज्य दिय।’

(४) खाका—श्रीभट्टजी ने इस शब्द का अर्थ यों किया है—खा—रज + क—रजक। खाका का साधारण खाक से तात्पर्य है। महा घोड़ी से तात्पर्य अवश्य है, पर वह स्पष्टतः यक्त नहीं किया गया।

(५) 'सुविरत गिरजा का—अध्यात्म रामायण' में शिवजी ने कहा है—

अहो ! भवनाम रूएन कृतार्थो वसामि काश्यामनिग भवाया ।

मुमुक्षु माणस्य विमुक्तयेऽहं दिनामि मत्र तव रामनाम ॥'

मेरे रावणिय गति है रघुपति बलि जाऊँ ।

निलज नीच निगुन निघन कहँ जग दूसरो न ठाकुर ठाऊँ ॥१॥

हँ घर घर बहु भरे मुमाहिव, सूचत सबनि आपनो दाऊँ ॥२॥

बानर-वधु विभीषन हितु त्रिनु, कोमलपाल कहँ न ममाऊँ ॥३॥

प्रनैतैरिति भजन जन रजन, सरनागत पवि-युजर नाऊँ ॥४॥

कीजे दास दासतुलसी अथ कृपासिधु त्रिनुमोल विकाऊँ ॥५॥

भाषाय—हे रघुनाथजी ! बलिहारी ! मरी तो बवल आप तक हा गति है मेरी दोड़ प्राप्त तक ही है क्याकि निलज नीच मूख भीर गरीब के लिए सत्कार में (भाषको छोड़कर) न तो कोई स्वामी है और न कोई ठौर ठिकाना ही। वह किसका होकर रहे भीर कहाँ जाये ॥१॥



यो तो घर घर में बहुत से अच्छे अच्छे मालिक भरे पड़े हैं, किन्तु उन सबका अपना ही दाँव दिम्बता है, अपना ही स्वाथ साधना चाहते हैं। म तो वानरा के मित्र और विभीषण के हितु कोशलेश श्रीरामचन्द्रजी को छोड़कर और कहीं भी शरण नहीं पा सकता, मेरी पूछ किसी और स्वामी के यहाँ न होगी ॥२॥

आपका नाम भक्तों के दुःखों का नाश करनेवाला सेवकजनों को सुख देनेवाला और शरणागतों के लिए बन्धन निमित्त पिजड़े के समान है, (अमोघ बबच ह) सो भव तुलसीदास को अपना दास बना ही लीजिए। हे कृपासागर ! भव म विना ही मोल के (आपके हाथ में) विकना चाहता हूँ। (आपका निष्काम सेवक बनना चाहता हूँ। मुझे अपना कोई स्वाथ उही साधना हूँ) ॥३॥

शब्दाथ—ठारुँ=ठाम, स्थान। पवि पजर=बन्धन का पिजड़ा।

विशेष—(१) पवि-पजर'—मूर्ध्नि विरवामित्र ने बन्धपजर नाम का एक बबच रचा था। उस राम रक्षा स्तोत्र भी कहते हैं। उसकी यह फल-श्रुति इसका प्रमाण है—

बन्धपजरनामेद यो राम-बबच स्मरेत् ।  
अपाहतान सवत्र लभते जयमगलम् ॥'

१५४

देव, दूसरों कौन दीन को दयालु।

शीलनिधान सुजान सिरोमनि, सरनागत प्रिय प्रनत पालु ॥१॥

को समरथ सवग्य सकल प्रभु सिव सनेह मानस मरालु ।

को माह्वि किये मीत प्रीतिवस खग, निसिचर कपि भील भालु ॥२॥

नाथ-हाथ माया प्रपच, मत्र जीव दोष गुन करम-कालु ।

तुलसिदास भला पुत्र रावरो, नेकु तिरखि कीजिये निहालु ॥३॥

भावाथ—हे देव (आपका छोड़कर) दीनों पर दया करनेवाला दूसरा और कौन है ? एक आप ही शील के स्थान, जानियों में श्रेष्ठ शरणागतों के परमप्रिय और भक्तों के पालनेवाले हैं ॥१॥

कौन आपके समान सबशक्तिमान् हैं ? हे नाथ ! आप सब हैं सबके स्वामी हैं और शिवजी के प्रेमाधीन होकर उनके हृदय में वास करते हैं। किस स्वामी ने प्रेम-वश पत्नी (जटापु) रामस (विभीषण) वानरो, भील (निपाद) और भालुओं को अपना मित्र बनाया ? ॥२॥

हे नाथ ! आपके हाथ म माया का सारा प्रपच एवं जावा व दोष गुण, कम और काल है। यह तुलसादास भला हो या बुरा, आपका ही है। इसकी ओर जरा सा देखकर, उसे निहाल कर दीजिए ॥३॥

विनय—(१) शील — भगवद्गुणपण में शील का लक्षण इस प्रकार दिया गया है—

'हीनर्त्तनमलीनञ्च बीभत्स कुत्सितरपि ।  
महतीच्छिस्तन्वप सोगीत्य विदुरीररा ॥'

श्रीवज्रनाथजी ने इसका पञ्चानुवाद यह किया है—

‘हीनर दोन मलीन पल, घिा थाव जिहि देखि ।

सबनि थावर मान दे गुन सो गोल्प जिसेखि ॥’

(२) ‘प्रपच दा प्रकार स यक्त किया जाता है—

१ पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश, इन पांच तत्त्वों की सृष्टि ।  
पंचभौतिक प्रकृति ।

२ अविद्या, विद्या, सधिनी, सदीपिनी और ब्राह्मिदिनी यही पंचमा माया है ।

राम सारङ्ग

: १५५ :

विश्वास एक राम नाम की ।

मानत नहीं परतीति अनन ऐसाइ सुझाव मन वाम को ॥१॥

पढिवो परयो न छठी छ मत गिगु जजुर अथवन साम को ।

व्रत तीरथ तप मुनि सहमत पुत्रि मरे करे तन छाम को ? ॥२॥

करम-जाल कलिकाल कठिन आधीन सुमाधित दाम को ।

ग्यान बिराग जोग जप तप भय लोभ मोह कोह काम का ॥३॥

सब दिन सबलायक भव गायक रघुनायक गुन-ग्राम को ।

बैठे नाम-कामतरु-तर डर कौन घोर घन घाम को ? ॥४॥

को जाने को जैहै जमपुर, को सुरपुर परधाम को ।

तुलसिहि बहुत भनो लागत जग जीवन रामगुलाम को ॥५॥

भावाय—मुझे तो एक राम-नाम का ही विश्वास है । मेरे कुटिल मन को कुछ ऐसी प्रकृति है, कि घोर वही प्रतीति ही नहीं करता (चाहे कोई जितना हा लाभ क्यों न दिलाये) ॥१॥

छह शास्त्रों के सिद्धान्तों तथा ऋक यजुर धषवण और साम वेद का पढ़ना मेरे भाग्य में ही नहीं लिखा गया है (अब रहे अथ उपाय, सो) व्रत, तीर्थ तप आदि मुनकर मन डर रहा है । कौन (इन साधना में) पंच-मचकर मरे और शरीर को क्षीण करे ? ॥२॥

कर्म-काण्ड कलियुग में कठिन है, और द्रमाधीन भी है । भाव यह कि एक तो पास में दाम नहीं, कि जिससे यत्र आदि किए जाएँ दूसरे कलियुग में अनेक विघ्न बाधाएँ हैं जिनके मारे कभी पूरा नहीं पड़ सकता । फिर नान बराग्य, योग, जप और तप में लाभ अज्ञान क्रोध और काम का भय लगा हुआ है (इनके मारे व भी सघने के नहीं) ॥३॥

इस ससार में श्रीरघुनाथजी के गुणों का कीर्तन करनेवाले हैं सदा सब प्रकार से योग्य हैं । भाव हरिकीर्तन करनेवाले ही सबगुणसम्पन्न हैं उन्हें कोई विघ्न बाधा नहीं सताती । जो रामनाम-रूपी कल्पवृक्ष का छायातले बैठे हैं उन्हें घन घोर घटा भयवा तेज धूप का क्या डर है ? तात्पर्य यह कि उन्हें न तो समारी विपत्तियाँ ही सना

सकती है और न पाप सन्ताप ही जला सकते हैं। क्योंकि उनकी सारी कामनाएँ पूरी हो जाती हैं ॥५॥

कौन जानता है कि कौन तो नरक जायेगा और कौन स्वर्ग और कौन ब्रह्मलोक जायेगा ? तुलसीदास को तो इस ससार में श्रीराम का गुलाम हाकर जीना ही बहुत प्रिय लगता है ॥५॥

शब्दाथ—अनत = अयत्न, और कही। छठी न परया = भाग्य में नहीं लिखा। छ मत = छह शास्त्र अर्थात् वैशेषिक, याय, साख्य, योग, पूवमीमासा और उत्तरमीमासा (वेदांत)। रिगु = ऋग्वेद। जजुर = यजुर्वेद। सहमत = डरता है। धाम = चीख, दुबल।

विशेष—(१) छ मत — छह शास्त्रों के सिद्धांत, जिनके प्रतिपादक महर्षियों के नाम ये हैं—

१ वैशेषिक के प्रतिपादक	कणाद	परमाणु प्रधान
२ याय	गौतम	द्रव्य प्रधान
३ साख्य	कपिल	पुरुष प्रवृत्ति प्रधान
४ योग	पतञ्जलि	ईश्वर प्रधान
५ पूवमीमासा	जमिनि	कर्म प्रधान
६ उत्तरमीमासा	यास	ब्रह्म प्रधान

(२) भव गायक — श्रीरामेश्वर भट्ट ने इसके समस्त पं मानकर इसका यह अर्थ किया है - 'श्रीराम शिवजी भी जिसे गाते हैं। श्रोत्रजनाथजी ने जो अर्थ किया है— "रघुनाथक व कृपा दया आदि जो समूह कल्याण गुण हैं तिनको ग्राम रामायणादि कथा ताको गायक होना। यहा भव का अर्थ शिव मुक्तिसंगत नहीं जान पड़ता है। वजनाथजी का भाव भी स्पष्ट नहीं हुआ है। भव का अर्थ ससार ही जाना चाहिए। अर्थात्, भव (में) भङ्गत दूर हो जाती है। 'भव' के स्थान पर किसी किसी प्रति में गुनगायक पाठ पाया जाता है। किंतु आगे गुनग्राम आया है। अतः भव पाठ ही उपयुक्त है। नागरी प्रचारिणी सभा का प्रति में भयो पाठ आया है। ऐसा पाठ मान लेने से उसके सम्प्राप्कगण इस भङ्गत से बच गये हैं।

(३) 'तुनसिंह गुलाम को—यहाँ गोसाइजी हरिमय जगत' को बबुएठ आदि से भी बढकर मानते हैं। ससार का महत्त्व इस युक्ति से स्पष्ट हो जाता है। उनके लिए रामगुलाम का जीवन स्वर्गीय जीवन से कही अधिक महत्त्व का है।

बहा करौ बकूठ से बलपवुष की छाँह।

अहमर दाक सराहिए जो प्रीतम गल बाँह ॥

१५६

वनि नाम कामतर राम को।

दलनिहार दाग्दि दुगाल दुग दाप धार धन धाम को ॥१॥

नाम लेत दाहिना होत मन, वाम विधाता वाम को।

बहत मुनीम महैम महानम उलटे सूधे नाम को ॥२॥

भनो लोन-परलोक तासु जावे बल ललित लनाम वो ।  
तुलसी जग जानियत नाम ते, मोच न कूच मुकाम को ॥३॥

भावाय—कलियुग में श्रीराम का नाम कल्पवृक्ष ह । वह दारिद्र्य दुमिच,  
दुःख, दोष और प्रताप की कड़ी धूप बचाने के लिए घोर मोघरूप ह ॥१॥

राम का नाम लेते ही वाम विधाता का प्रतिकूल मन भी अनुकूल हो जाता ह,  
रूठा देव भी प्रसन्न हा जाता ह । मुनाश्वर बाभीवि न उलटे घघात मरा मरा नाम  
की महिमा गई ह । घोर शिवजी ने सीधे नाम का माहात्म्य बड़ा ह । (तात्पर्य यह ह  
कि उलटा नाम जपते-जपते बाल्मीकि बहेलिय स ब्रह्मपि हो गय, और शिवजी सीधा  
नाम जपने से हलाहल का पान कर गये तथा स्वयं भगवत्स्वरूप मान गये) ॥२॥

जिसे इस सुंदर से भी सुंदर प्रथवा सुंदर और सुरम्य रामनाम का बल भरोसा  
है, उसके लोक और परलोक दोनों ही बन गये । हे तुलसी ! रामनाम स इस ससार में  
न तो मौत की चिन्ता अनुभव होती ह और न गमवास का क्लेश ही ॥३॥

शब्दाय—दुकाल = दुमिच प्रकाल । दाहिनो = अनुकूल । वाम = प्रतिकूल ।  
ललित लनाम = ये दोनों ही शब्द सुंदर के बोधक हैं सुंदर स भी सुंदर ।

विनय—(१) कलियुग में केवल रामनाम ही मोघ का मुख्य साधन ह, इसे  
लक्ष्य में रखते हुए गोसाइजी रामचरितमानस में लिखते ह—

'कलियुग जोग जग्य नहि ग्याना । एक अधार राम-गुन गाना ॥

सब भरोस तजि जो भजु रामहि । प्रेम समेत गाइ गुन-प्रामहि ॥

सो भव तब कछु ससय नहि । नाम प्रताप प्रकट कलि माहि ॥

(२) मोच न कूच मुकाम का—रामनाम के प्रभाव स जीव जन्ममरण के  
चक्र से छूट जाता ह ।

'सकृदुच्चारयेद्यस्तु रामनाम परात्परम ।

गुह्यात् करणो भूत्वा निर्वाणमधिगच्छति ॥'

[ पद्मपुराण

१५७

सेइये सुसाहिव राम सो ।

सुखद, सुसील, सुजान सूर, सुचि, सुंदर कोटिक काम सा ॥१॥

सारद, सेस साधु महिमा कहैं गुनगन गायन साम सा ।

मुमिरि सप्रेम नाम जासो रनि, चाहत चंद्र-ललाम सो ॥२॥

गमन विदेस न लेस कलेस को सकुचत सकृत्त प्रनाम सो ।

साखी ताको विदित विभीषन, वैठा है अविचल धाम को ॥३॥

टहल, सहल जन महल महल, जागत चारो जुग जाम सो ।

देसत दोष न खीभन, रोषत सुनि सेवक गुन ग्राम सो ॥४॥

जाके भजे तिलोक तिलक भये, त्रिजग जोनि तनु तामसो ।

तुलसी ऐसे प्रमुहि भजे जो न, साहि विधाता वाम सो ॥५॥

भाषाय—श्रीराम सदस्य सुदर स्वामी की सेवा करनी चाहिए, जो सुख देने वाले सुशील, चतुर, धीर, पुण्यलोक तथा करोडा कामदेवों के समान सुदर ह, जिनकी महिमा का बखान सरस्वती शेषनाग और सतजन करते ह, जिनके गुण सामवेद सरोखे गायक गाते है, जिनका नाम प्रेमपूर्वक स्मरण करते हुए शिव सरोखे भी उनसे प्रीति जोडना चाहते ह ॥२॥

(उन श्रीराम की सेवा) जिनको विदेश अर्थात् वन जाते समय तनिक भा क्लेश नही हुआ (वे ऐसे एकरस सदा प्रसन्न रहनेवाले हैं कि वन जाते हुए भी कष्ट नही हुआ) यदि कोई एक बार भी प्रणाम कर लेता ह, ता जो सकोच के मारे दब जाते ह (ऐसे शीलवान् ह), इसका साक्षी विभीषण प्रमिद्ध ह कि जो आज भी (लका में) घटल राज्य कर रहा ह ॥३॥

(उन श्रीराम की सेवा) जिनकी आकरा बडी सहल ह (चूक भी पड जाये तो माफ कर देते ह), जो अपने भक्ता के घट घट में, चारो युगो में (रात्रि के अथवा अविद्या रूपी रात्रि के) चारो पहर जागते रहते है ( मोह या सकट के समय उनके हृदय में बठ कर चौकीदारी किया करते ह) जो अपराध दखते हुए भी सेवक पर नाराज नही होते ह और जब अपने सेवक की गुणावली सुनते ह तो उस पर निहाल हो जाते है ॥४॥

जिहें भजने से पशु-पक्षी एव तामस शरीरधारी (राक्षस) भी त्रिलोक शिरोमणि बन गये । हे तुलसी ! ऐसे (सुशील सुन्दर जनवत्सल पतितपावन एव शरण्य) प्रभु को जो नही भजते, उन पर विधाता ही प्रतिकूल ह यही समझना चाहिए ॥५॥

पदाथ—साम=सामवेद । चद्रललाम=चंद्रमा ही जिनका भूषण ह, अर्थात् शिवजी । सकुत=एक बार । टहल=सेवा । ग्राम=भूमि । त्रिजग=तियक, पशु पक्षी । तामसो=तमोगुणा ।

विशेष—(१) 'गमन क्लेश को—श्रीरघुनाथ के इस एकरस भाव पर पोसाइजी ने रामचरितमानस में कहा ह—

'पितु आयसु भूषण-वसन साज तजे रघुवीर ।

विसमय हरप न हृदय कष्टु, पहिरे बलकल चीर ॥'

मुख प्रसन्न मन राग न रोषू । सब कर सब विधि किय परितोषू ॥'

(२) जन महल जाम सो—भगवान की प्रतिज्ञा ह—

'अनयाश्चिन्तयन्तो मा ये जना पयुपासते ।

तेषा नित्याभियुक्तानां योगक्षेम वहाम्यम ॥

[भगवद्गीता

(३) त्रिजग जोनि तनु तामसो—जटायु बदरो रीक्षा तथा विभीषण से तात्पर्य ह ।

१५८

राग मट

केसे देउं नार्थहि खोरि ।

काम लोलुप भ्रमत मन ह । पति परिहरि तोरि ॥१॥

बहुत प्रीति पुजाइवे पर, पूजिबे पर थोरि ।  
 देत सिल, सिलयो न मानत, मूढता अस मोरि ॥२॥  
 किये सहित सनेह जे अघ हृदय राखे चोरि ।  
 सग बस किये सुभ सुनाये सबल तोव निहारि ॥३॥  
 करौ जो कछु धरो सचि पचि सुदृढत सिला बटोरि ।  
 पैठि उर बरवस दयानिधि, दभ लेत अँजोरि ॥४॥  
 लोभ मर्नाहि नचाव कपि ज्यो, गरे आसा डोरि ।  
 वात कहौ बनाइ बुध ज्यो, बर विराग निचोरि ॥५॥  
 एतेहूँ पर तुम्हरो कहावत, लाज अँचई घोरि ।  
 निलजता पर रीझि रघुबर, देहु तुलसिहिँ छोरि ॥६॥

भाषार्थ—मैं अपने स्वामी को कसे दोष दू ! हे हरे ! तुम्हारे भक्ति को छोड़ कर मेरा मन काम-वासनामा में फँसा हुआ इधर उधर भटकता रहता ह । (एक क्षण भी निश्चल होकर तुम्हारा ध्यान नहीं करता ) ॥१॥

अपने पुजाने पर तो मेरा बड़ा प्रेम ह, सदा यही चाहता रहता हू कि लोग मुझे सन्त महान्त मानकर मेरी प्रतिष्ठा करें, किन्तु पूजने में मेरी बहुत कम श्रद्धा ह । दूसरो को तो उपदेश करता हूँ (यह चाहता हूँ कि लोग मेरे उपदेश पर चलें) पर स्वयं किसी का उपदेश नही मानता हूँ ॥२॥

जिन जिन पापा को मने बडे चाव से किया ह, उन्हें तो हृदय में छिपाकर रख लिया, पर कभी किसी सत्सग म पढ़कर मुझसे जो कुछ काम बन गये, उन्हें सारे ससार को निहोरा कर-कर सुनाता फिरता हूँ । सदा यही पडी रहती ह कि दुनिया मुझे महात्मा समझे ॥३॥

कभी जो कुछ सत्कर्म बन जाता ह उसे खेत में पत्ते हुए अन्न के दाना की तरह बटोर-बटोरकर रख लेता ह किन्तु हृदय में जबरदस्ती पठकर दभ उसे भी खोज खोजकर बाहर निकाल फेंकता ह । भाव यह, कि दम्भ सारे किए हुए को मिट्टी में मिला देता ह ॥४॥

लोभ मेरे मन को आशारूपी रस्सी से इस तरह नचा रहा ह, जैसे कोई बन्दर क गले में डोरी बाँधकर उसे मनमाना नचाये । (और इसी लोभ क वश ही) म बराब्य और तरह ज्ञान की बाँँ बड़-बड़ पडितो की तरह बधारा करता हू ॥५॥

इतना सब होते हुए भी तुम्हारा (दास) कहाता हूँ । जो आज भी, उसे भी धोलकर मानो पी गया हूँ । हे रघुनाथजी ! (और ता मेर पास कुछ रहा नही) बस, इस निलज्जता पर ही रीझकर मेरा बंधन काट दो मुझे ससार जाल से मुक्त कर दो ॥६॥

शब्दाय—छोरि=दोष । सचि-पचि=मलपूर्वक रखकर, सेंट-सेंतकर । सिला =खेत में पडे अनाज के कण । अँजोरि लेत=खाज लेता ह । अँचई=पी गया ।

ह प्रभु ! मरोई सब दासु ।

शीलसिद्ध, कृपालु नाथ अनाथ, भारत-पोसु ॥१॥

वेप वचन विराग मन अघ अग्रगुननि को कोसु ।

राम प्रीति प्रतीति पोनी कपट-करनर ठोसु ॥२॥

राग रग कुमग ही सो, साधु-सगति रोसु ।

चहत केहरि-जसहि सइ मृगाल ज्यो मरगोसु ॥३॥

सभु सिखवन रसन हूँ नित राम-नामहि घोसु ।

दभह कल नाम कूभज साच-सागर-सोसु ॥४॥

मोद मगल मूल अति अनुकूल निज निरजोसु ।

रामनाम प्रभाव सुनि तुलसिहूँ परम परितोसु ॥५॥

नाथाय—हे प्रभा ! सारा मेरा ही दोष ह । आप तो शील के समुद्र कृपालु, अनाथों के नाथ और दान-दुखिया के पालने पोसनेवाले ह ॥१॥

मेरे भेष और वचना में तो बराबर भ्रमक रहा ह, किन्तु मन पापा और दुगुणा का खजाना ह । हे श्रीराम ! आपकी भक्ति और श्रद्धा कलिग ता मन मेरा पाला-खाखल ह, उसमें तनिक भी भक्ति और विश्वास नहीं ह किन्तु छत्र रूप के कामो के लिए ठोस ह, कपट-ही कपट भरा ह ॥२॥

जसे स्वर्गाश सियार (गोदड) की सेवा करके सिंह की कीर्ति चाहता ह वैसे ही मैं कुमगति से तो प्रेम करता हूँ अनाद माता हूँ, और साधु जना के संग से छटा रहता हूँ । (भाव यह ह, कि जसे सरगोश गीर्ण के दूने पर सिंह का-सा यशालाभ करना चाहता है, गजेन्द्र के पछाडन का बहादुरी सिपाना चाहता ह, पर यह कैसे सम्भव ह ? सियार तो उसका भक्षक ह । मग दूर रहा उस प्राणा से भाहाय धान पडेग । इसी प्रकार जो कुसंग में पडकर कीर्ति कम्पना चाहता ह, उस कीर्ति के बदन अपनीर्ति ही मिलगी) ॥३॥

शिवजी का उपदेश यही ह कि 'निय जिह्वा से राम-नाम का कीर्तन करो । कलियुग में दभ से भा लिया हुआ राम-नाम अगत्य को तरह दु ख सागर को सोख लेता है । (दभ से लिया हुआ राम नाम भी लोक परलोक दोनों का चिन्ताप्रा का दूर कर देता ह) ॥४॥

राम-नाम भक्त और कल्याण का जड ह । यह मेरा निरवय है कि अपने लिए तो एक राम नाम हा धर्यत्र अनुकूल ह । राम-नाम का एसा प्रभाव सुनकर तुलसी की भी परम मन्त्रोत्र ह (दसनादि जि. बहो उरुकर उरुकर करलवारा ह), ॥५॥

गद्याय—कोसु = (कोष) खजाना । रसन = रसना, जोभ । घोसु = (घोष) शब्द उच्चारण कर । सासु = सोच ले । निरजोसु = अनुकूल ।

वियेय—(१) 'रमन हूँ नित राम-नामहि घोसु --नक्षत्र प्रह्लाद ने राम-नाम का ऐसा ही माहात्म्य कहा ह—

'रामनाम जपता कुतो भय सबतापगमनकभेयजम् ।

पश्य तात मम पात्र सन्निधौ पावकोपि सन्नितापनेऽप्युना ॥'

(२) 'दम्भट् सोमु — रामनाम किसी भी भाव में जपा जाय, वह भगन चारो है—

भाव कुभाव अनप जालसहै । राम जपत मगल दिति दसहू ॥

[ रामचरितमानस

(३) निरजोमु — श्रावजनायजी ने इस शब्द का अर्थ या निष्ठा है—

'निरजोमु जोड़ सौल रहित, अनुल । श्रीदेवनारायण द्विवधा ने इन निर्दोष' का अपभ्रंश मानकर इसका अर्थ असुन किया है, जा समीचीन है । इसका अर्थ 'प्रत्यन्त अनुकूल' मुझे उपयुक्त जचता है ।

१६०

मैं हरि पतित पावन सुने ।

मैं पतित तुम पतित पावन, दोउ बानक वन ॥१॥

व्याध गनिका गज अजामिल साखि निगमनि भन ।

श्रीर अघम अनेक तारे जात कापै गन ॥२॥

जानि नाम अजानि लीन्ह नरक जमपुर मन ।

दासतुलसी सरन आयो, राखिये अपन ॥३॥

भावाय—हे हर ! मने तुम्हें पापिषा को पुनात करनेवाला सुना है । सो मैं पापी हूँ और तुम हो पापियों का उद्धार करनेवाले बस दोना के बाने वन गय, दोना का मेन बठ गया । भाव यह कि मुझे पतित-पावन की उचरत थी और तुम्हें पतित की । मेरी भी कामना पूरा हो गई और तुम्हारी भी ॥१॥

वेद साक्षी भर रहे हैं कि तुमने व्याध (वा-मोक्ति) गणिका (पिंगला बेश्या), गजेन्द्र और अजामिल को ससार सागर से पार कर दिया (इतना ही नहीं) तुमने और भी अनेक अधमा को तारा है । उनकी गिनती किमने हो सकती है ? ॥२॥

जिन्होंने जानकर या बिना जाने भी तुम्हारा नाम स्मरण किया, उन्हें यम के लोक नरक में (अथवा स्वर्ग में भी) जान की मनाही कर दी गई है । व साध साकेत लोक चले गये (यह सब समय-ब्रूयकर) तुलसी भी तुम्हारी शरण में आया है । इसे भी अगीकार कर लो ॥३॥

विशेष— मैं पतित बने'—एक भक्त ने निम्नलिखित कवित में स्वामी देवक के इसी भाव को सामने रखकर क्या ही सुन्दर जाना मिलाई है—

'मैं तो हूँ पतित, आप पावन पतित नाय,

पावनपतित हो, तो पातक हरोईगे ।

मैं तो महाशून, आप दीनबन्धु दीनानाय,

दीनबन्धु हो तो दया जीय में परोईगे ।

मैं तो हूँ गरीब आप तारक गरीबन क,

तारक गरीब ही तो गिरद बरोईगे ।

मेरी करनी व कष्ट मुकर न कीज बाह !

कटना निघान हो तो कटना कराईगे ॥'



## राग मत्तार

१६१ १०

तो सो प्रभु जाये वहे तोउ हानो ।

तो सहि निपट निरादर निमिन्नि रटि नटि एमा घटि का ता ॥१॥

कृपा मुधा-जलदान मांगियो वही सा साँच निसाना ।

स्वाति-सनेह सजिल सुख गहन चित चानक का पातो ॥२॥

काल-वरम वस मन कृमनोरथ कबहुँ-बरहुँ कष्टु भो ता ।

ज्या मुदमय वसि भोन वारि तजि उछरि भभरि मत गाना ॥३॥

जितो दुराव दासतुलमी उर, क्या वहि आवन मोतो ।

तेरे राज राय दमरय के, लयो क्या त्रिनु जानो ॥४॥

नावाय—यदि तुम-सरोगा वही कोई दूसरा स्वामा हाना तो भला एमा कीन चूद्र या जो मर्यादित अपमान सहकर निरान तेरा नाम रू रटकर इस तरह बकता या चीण होता ? ॥१॥

जो म तुम्हमे कृपारूपी प्रमृत्जन माँग रहा है, वठ सचमुच निरासा ह । मरा चितरूपी चातक का बच्चा प्रेमरूपी स्वातिनचत्र का धान-दरूपी जल चाहता ह । (तेरे प्रेमदान के लिए मेरा चित तटप रहा ह, उमे पलभर भी कल नही पडता बच्चा ही तो ह, धीरज कसे घरे ?) ॥२॥

काल जयवा कम के कारण यदि कभी कभी मन म कोई बुरी वासना आ भी जाती ह (उस प्रेमदान से चित हटने लगता ह) तो वह एसा ही ह जने मछनो सुख से जल में रहती हुई कभी कभी उछलती और फिर उसी में घबराकर मोता लगा जाती ह (उसे उस जल भर का भी जन विभाग सहन नही होता, वसे ही मेरा चित चातक तेरे प्रेमजल से अलग होने पर घबरा जाना ह और फिर उसीके लिए चेष्टा करता ह) ॥३॥

जितना छल कपट तुलसादास के हृदय म ह, वह किस प्रकार कहा जा सकता ह ? (पर इतना विश्वास ह कि) ह दशरथ-न दन । तेरे राज्य में लोगो ने बिना ही जीत बाये पाया ह । भाव यह कि बिना ही सनकम लिए अनेक पापिया ने मोक्षनाम किया ह । मरी भी उसी प्रकार बन जायगी, यही विश्वास ह ॥४॥

गव्वाथ—लटि = दुखला होकर । तो = था । निसानो = सच्चा, प्रमल, निराला । पोतो = बच्चा । भो = हुआ । मोतो = उतना ।

विशेष—(१) श्रीशैवारायण द्विवेदी ने अपने टीका में तो का अर्थ या सहो नही माना ह और इसका अर्थ तुम्हारा या मुम किया ह । तो का अर्थ तुम्हारा भी कदाचिन् हा सकता ह पर या यह अर्थ अशुद्ध नही ह । वृत्तलखण्डी म 'हता' और ना' दानों हा 'या के लिए प्रयुक्त होने ह ।

(२) स्वाति पोतो—चातक का प्रेम आदेश प्रम माना गया ह अनयता का अनुकरणीय ह । एक कृष्ण वियागिनी ब्रजाङ्गना कहती ह —

‘बहुत दिन जीवी पपीहा प्यारो ।

बासर रनि नाम ल बोलत, भयो विरह-ज्वर कारो ॥

आप दुखित पर दुखित जानि जिय चातक नाम तुम्हारो ।

देखो, सकल विचारि सखी, जिय, बिछुरन को दुख प्यारो ॥

जाहि लगी, सोई पै जानै प्रेमवान अनिपारो ।

‘सूरदास’ प्रभु स्वाति बूढ लगि, तज्यो सि-घु करि खारो ॥’

[सूरसागर

(३) ज्या गातो — बेचारी मछली जाये कहां ? उसके लिए तो एक जल ही सबस्व है । सूरदासजी भी ऐसा ही कह रहे हैं—

‘मेरो मन अन्त कहीं सुख पाव ।

जसे उडि जहाज को पछी, पुनि जहाज प आव ॥ इत्यादि ।

राग सोरठ  
१६२

ऐसे को उदार जग माही ।

विनु सेवा जो द्रवै दीन पर रामसरिस कोउ नाही ॥१॥

जो गति जोग विराग जतन करि नहि पावत मुनि ग्यानी ।

सो गति देत गोध सखी कहें प्रभु न बहुत जिय जानी ॥२॥

जो सम्पति दम सीस अरपि करि रावन सिव पहुँ ली-ही ।

सा सपदा विभीषन कहें अति सकुच-सहित हरि दी-ही ॥३॥

तुलसिदास सब भाति सकल सुख जो चाहसि मन मेरा ।

तो भजु राम, काम सब पूरन करै कृपानिधि तेरो ॥४॥

भावाय—ससार में ऐसा और कौन उदाहरण है, जो बिना हा सवा किए दोन जना का निहाल कर देता है ? ॥१॥

जिस परमगति मुक्ति का बड़े-बड़े तत्त्वज्ञानी मुनि भा याग, वैराग्य आदि अनेक साधन कर कर प्राप्त नहा कर पाउ, उसे प्रभु रघुनाथजी गोध और शबरा तक का दे देते हैं और उसे दान पर अपने मन में कुछ बहुत नही मानत उस थोडा ही लेखते हैं ॥२॥

रावण न शिवजी को अपन दया सिन चढ़ाकर जनसेजा सपना प्राप्त की था, वह रघुनाथजी ने बड सकाच के साथ विभीषण का द दी । (सकोच इजलिए हुआ कि हमने हम कुछ भा नही दिया लका का राज्य ता इसका आनुवशिक ही था, यह उसका उत्तराधिकारी कमान-नमी ता होता ही) ॥३॥

तुलसीदास कहते हैं कि भर मन । जा तू सब प्रकार से सब गुण चाहता है तो शायमजी का भजन कर । कृपा-सागर प्रभु तर मन की सारी कामनाएँ पूरी कर देंगे तेरे सभी मनोरथ सफल हा जायेंगे ॥४॥

विशेष—(१) ‘उत्तर’— श्रीमद्भक्तिसुखाश्रयण में उत्तरता का लक्षण इस प्रकार दिया गया है—

‘पात्रापात्रविवेकेन वेशकालाद्युपेक्षणात् ।

वदायत्व विदुर्वेदा भौदापवचसा हरे ॥’

(२) विनु सेवा पर—विना किसी बदले की आशा के जो कृपा की जाती है, वही सच्ची कृपा है वहा सच्चा प्रेम है । बदले के लिए जा किया जाता है वह कोई कृपा नहीं, वह तो बाण्डिय है । निष्कारण कृपा करनेवाला अहेतुक प्रेम करनेवाला तो एक परमात्मा ही है ।

(३) ‘मोक्ष जटायु —रामचरितमानस में जटायु के प्रसंग का बड़ा हृदयद्रावक बखान किया गया है —

कर सरोज सिर परसेउ कृपासधु रघुबीर ।

निरखि राम छविघाम मुख, बिगत भई सब पीर ॥

जटायु को मोक्ष देने पर श्रीराम कहते हैं —

‘जल भरि नयन कहा रघुराई । तात कम निज ते गति पाई ॥’

‘अद्विरल भक्ति मागि वर, गुद गयो हरि घाम ।

तेहि की किया जयोचित निज कर कीही राम ॥

(४) ‘शबरी से श्रीराम कहते हैं —

‘जोगिवृद दुरलभ गति जोई । तोकहैं आजु सुलभ भइ सोई ॥

मम दरसन फल परम अनुपा । जोव पाव निज सहज स्वहपा ॥

(५) जा सपति दोहा —रामचरितमानस में भी —

‘जो सपति सिव रावनहि दोह दिये दस माय ।

सो सपदा विभीषनहि सकुचि दी ह रघुनाथ ॥

१६३ X

एके दानि सिरोमनि साचो ।

जेइ जाच्यो सोइ जाचक्ताउस, फिरि बहु नाच न नाच्यो ॥१॥

सब स्वारथी असुर सुर नर मुनि कोउ न देत विन पाये ।

कोसलपालु कृपालु कलपतरु द्रवत सकृत सिर नाये ॥२॥

हरिहु और भवतार आपने, राखी वद-वडाई ।

ले चिउरा निधि दई सुदामाहि जद्यपि वाल मित्ताई ॥३॥

कपि, सबरी सुग्रीव, विभीषन को नहि कियो अजाची ।

अव तुलसिहि दुख देति दयानिधि, दारन आस पिसाची ॥४॥

भावार्थ—सच्चा तो दानियों में शिरोमणि एक ही है । जिस किसाने एक बार

उससे मांगा, उसे पाने के लिए बहुत नाच नहीं नाचना पया, वह तत्काल पूणकाम हो गया ॥१॥

देत्य, दैव मनुष्य मुनि य सभी मतलबानेह । विना कुछ निये कोई कुछ भी

नहीं देता है । किन्तु एक ऐसे कोशनेश कृपालु कलवृक्ष के समान थारघुनाथजी ही हैं, जो

एक ही बार प्रणाम करने पर प्रसन हो जाते हैं (यदि कोई निस्वार्थ मित्र है तो एक

रामजी ही) ॥२॥

भगवान ने अपने और और अवतारा म भी वेदा की मर्यादा का पालन किया है । जैसे, यद्यपि सुतामा श्रीकृष्ण का बालपन का मित्र था पर उनसे जब चावल के कण ले लिये, तभी उसे सम्पत्ति प्रदान की (सुपत म कुछ नहीं दिया) ॥३॥

हे नाथ ! आपने सुग्रीव शबरो, विभोपण और हनुमान् इनमें स किस किसकी याचनारहित नहीं कर दिया अर्थात् इन सबके सभी मनोरथ पूर कर दिये (और बदले में इन लोगों स कुछ लिया नहीं) हे दयानिधे ! यह दाएण आशात्पो पिशाचिनी भव तुलसी की भारी क्लेश द रही ह (इससे पिंड धुडा दो) ॥४॥

शब्दाय—द्रवत=पिघल जात है, प्रसत हा जाते ह । सकुत=एकवार । चिउरा =चावल के कण । निधि=संपत्ति ।

विशेष—(१) सत्र स्वारथी मुनि—

सुर नर मुनि सबही की रीती । स्वारथ लागि फरहि सब प्रीती ॥

(२) 'द्रवत नाथ

सकृदेव प्रपनाथ तवस्मोति च याचते ।

अभय सबभूतेभ्यो ददाम्येतद व्रत मम ॥

[वाल्मीकीय रामायण

(३) 'आस —आशा पिशाचिनी पर कबीर साहब न क्या भ्रष्टा कहा ह —

'आसन मारे क्या भया मुई न मन की आस ।

ज्या तेली के बल को, घर ही कोस पचास ।

आसा जीव जग मर, लोक मर मन जाहि ।

धन सच सो भी मर, उबर सो धन छाहि ॥'

१६४

जानत प्रीति रीति रघुराई ।

नाते सब हाते करि राखत, राम सनेह-सगाई ॥१॥

नेह निगाहि देह तजि दसरथ कीरनि अचल चलाई ।

ऐसेहु पितु तें अधिक् गोध पर, ममता गुन गुम्भाई ॥२॥

सिय बिरहो सुग्रीव सखा लखि प्रानप्रिया विसराई ।

रन परजो बधु त्रिभीषन ही को, सोच हृदय अधिकाई ॥३॥

घर गुहगृह, प्रिय-मदन सामुरे भई जब जहें पहुनाई ।

तत्र तहें कहि सवरी के फलनि की रचि माधुरी न पाई ॥४॥

सहज सरूप क्या मुनि बरनत रहत सकुचि मिर नाई ।

केवट मीत कहे सुन मानत, जानर-बधु बडाई ॥५॥

प्रेम-वनोडो राम सो प्रभु त्रिभुवन निहूँवाल न भाई ।

'तेरो रिनी क्यो हौं कपि सा, एमी मानहि को सेवकाई ॥६॥

तुलसी राम-मनह-सील लखि, जो न भगति उर भाई ।

सौ तोहि जनमि जाय जननी जड तनु-तरुना गेवाई ॥७॥

भावाथ—प्रीति की रीति एक रघुनाथजी ही जानते ह । श्रीरामजी प्रेमी के नाते के सामने सारे सम्बन्ध त्याग देते ह । अर्थात्, सगे सम्बन्धी को छोड़कर एक प्रेमी का ही मान रखते ह ॥१॥

महाराजा दशरथ ने स्नेह निभाकर शरीर तक छाड़ दिया, जिमसे उनकी कीर्ति अमर हो गई । किन्तु ऐसे (अपूर्व) पिता को भी गीत जटायु के आगे कुछ अधिक महत्व नहीं दिया । गीत पर अधिक महत्व और शील-भाभीय दरसाया अथवा उसके करतब का भारी एहसान माना (इस कारण से कि इमने परोपकार के लिए सीता का रावण के हाथ से छुड़ाने के लिए अपने प्राण तिनके की तरह त्याग दिये) ॥२॥

सुग्रीव मित्र को स्त्री के विरह में देखकर अपनी प्राणाधिक ध्यारा जानकी का भी भुला दिया (जानकीजी का पना लगान की बात भुलाकर मित्रद्रोही दालि का बंध करने के लिए 'याकुल हो उठ) । रघुभूमि में तो अनुज लक्ष्मण (शक्ति के मारे) मूर्च्छित पड़े हैं पर (उसका दुःख भूलकर) हृदय में विभीषण की ही चिन्ता मता रही ह । तात्पर्य यह कि श्रीरामचन्द्रजी साचते ह कि जब लक्ष्मण ही न बचेंगे तब मैं रावण के साथ युद्ध करके क्या करूँगा ? मैं भी प्राण त्याग दूंगा । उस समय बचारा विभीषण किमका हाकर रहेगा ? रघुनाथजी ऐसे परदुःख कातर ह ॥३॥

घर में गुरु वसिष्ठ के आश्रम में प्रिय मित्रों के यहाँ, अथवा मसुराल में जब जहाँ मेहमानों हूँ तब वहाँ यही कहा कि मुझे जसा शत्रु के घरा में स्वाद और मिठास मिला था वसा अयत्र वही नहीं ॥४॥

जब मुनि लोग आपके सहजस्वरूप अर्थात् निगूण परमानन्दरूप का निरूपण करते हैं, तब आप सज्जा से घिर नीचा कर लते ह । किन्तु जब केवल आपका अपना मित्र एवं बन्धु अपना बन्धु कहने ह ता उसे अपनी बड़ाई समझने ह । अथवा केवट का सखा कह जाने पर आप प्रसन हान ह और बानर बन्धु कहाने में अपनी बड़ाई मानते हैं ॥५॥

रघुनाथजी के समान प्रेम के अघान होनवाला हे भाई ! तीना लाका और तीना काला मैं कोई दूसरा नहीं ह । जिहाने हनुमान से यह कहा कि 'मैं तेरा श्रेणी हूँ', उनकी तुलना में सब के लिए कृतज्ञता प्रकाश करनवाला दूसरा कौन ह ॥६॥

हे तुमसी ! श्रीराम का एसा स्नेह और शाल देवकर भी उनके प्रति यदि तेरे हृदय में भक्ति का उदय न हुआ ता तेरा माँ न तुम्हें जम दफर 'यय अपनी युवावस्था भेवाई । भाव यह ह कि तुम्हें जनन से ता वह बान्ह हा प्रच्छी थो ॥७॥

शब्दाथ—हान = दूर । गुरुश्राद्ध = वडप्पन । मानुरो = मिठास । कनौठा = एहसानमद । जाय = यथ ।

विनय—(१) एमहू गु-प्राई — राम-गोतावली में इस प्रसंग का निम्न निखित पद क्या हा भावपूर्ण ह—

रापो गीष गोद करि लाहों ।

मपन - सरोज सनह-सखित सुखि मनहुँ अरपजन दीहों ॥

मुगट लपन लगपनिहँ मिन बन म विनु मरन न जायो ।

सहि न सखी सो कृति विपाता वडा पटु ब्राह्मि माया ॥

यद्विधि राम कृष्णो तनु राखन, परमधीर नहिं डोल्पो ।  
 रोकि प्रेम, अयलौकि मदन त्रिधु बचन मनोहर बोल्पो ॥  
 तुलसी, प्रभु झूटे जीवन लागि समय न धोखे सहो ।  
 जायो नाम मरत मुनि दुलभ तुमहिं कहां पुनि पहाँ ॥

(२) 'रन पर्यो अधिकाई'—गोसाइजी ने कवितावली में इस प्रसंग को इस प्रकार विव्रित किया है—

'तात को सोच न मात को सोच र सोच नहीं मोहिं औष-तजे को ।  
 सोच नहीं बनबास भयो कष्टु सोच नहीं मोहिं सोय हरे को ॥  
 लछिमन भूमि परपो नहिं सोच, न साव कष्टु माहिं लक जरे को ।  
 सोच भयो तुलसी इक् मोकहें भक्त विनीयन बांह - गहे को ॥

(३) सबरी व फलनि का —सबरी के फला पर रसिकविहारीजी की यह कितनी सुंदर यमकालकृत उक्ति है—

बेर बेर बेर ल सराह बेर बेर चहु  
 रसिकविहारी देत बधु कहें फेर फेर ।  
 चालि चानि भाषी यह वाहूतें महानमीठी  
 लेहु तो लपन यों यखानत हैं हेर हेर ॥  
 बेर बेर देव बेर सबरी सु बेर बेर  
 तोऊ रघुबीर बेर बेर तहिं टेर टेर ।  
 बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो बेर,  
 बेर जनि लावो बेर लाव क<sub>२</sub> बेर बेर ॥

(४) तरा रिला सेवकाई—श्रीरघुनाथजी हनुमान् से कहने हैं—  
 'मुनु कपि तोहिं समान उपकारी । नहिं कोउ सुर नर मुनि ननुपारी ॥  
 प्रत्युपकार करौं का तोरा । सनमुख होइ न सक मन मोरा ॥  
 मुनु कपि तोहिं उरिन म नाहीं । देखेउ करि बिचार मन माहीं ॥

१६५

रघुवर रावरि यहै बडाई ।

निदरि गनी आदरु गरीब पर, करत कपा अधिकाई ॥१॥  
 यके देव साधन करि सब, सपनेहु नहिं देत दिखाई ।  
 बेबट कुटिल भालु कपि कौनप, क्रिया मकल संग भाई ॥२॥  
 मिलि मुनिवृद्ध फिरत दडक वन, मो चरचौ न चनाई ।  
 वारहि वार गीध सगरी की बरनत प्रीति सुहाई ॥३॥  
 स्वान कहे तें त्रियो पुर बाहिर जती गयद चडाई ।  
 तिय निदन मतिमद प्रजा रज निज नय-नगर बसाई ॥४॥  
 यहि दरवार दीन को आदर रीति मदा चलि आई ।  
 दीनदयालु दीन तुलसी की वाहु न सुरति कराई ॥५॥

भाषाम — हे शत्रु ! तू भी सगला बर्बाद है कि तूने कहीं का, बर्बादों का, बर्बाद कर लोका का बर्बाद करने है तू तू बर्बाद बर्बाद करने है ॥१॥

देवदत्त र १४ गाथा का बर्बाद करने पर तू बर्बादों बर्बाद म म बर्बाद म निगा । विष्णु विष्णु लय बर्बादों म म बर्बाद घोर बर्बाद (विभीषण) के लय म म पारा निघाता ॥२॥

मुनिदा के गाथा हि मितरा का बर्बाद करने म बर्बाद हि म उगता ता जिज लय म विष्णु बर्बाद हृदय गाथा (४ १५) घोर बर्बादों की हा भक्ति बर्बाद का बर्बाद विष्णु ॥३॥

शुभा के बर्बाद पर मीमांसी को ता मगर के बाहर जाया पर बर्बाद निघात दिया, घोर मीमांसी को निघात बर्बाद मूढ पाषो का भर्ता प्रजा ममभरर भागिपूरक अपने मगर में बर्बाद ॥४॥

इसमें भिन्न हुआ है कि पावन दरवार में लय लय गाथा का ही बर्बाद करने की परिपाटी बर्बाद का रहा है । विष्णु हृदय गाथा ' इत दात तुमगा का हा बर्बाद बर्बादों (मात्र लय) विष्णु तू निघाता (बर्बाद बर्बादों की बर्बाद ?) ॥ ॥

गर्बाय — गाथा = धर्म । शीत = राघव विभीषण म बर्बाद है । बर्बाद = बर्बाद भी । लती = (वक्ति) बर्बाद । रज = रज बर्बाद ।

विशेष — (१) इस पद म दीनता व लज्जा का विष्णु बर्बाद महत्व दिया गया है । बर्बाद है —

ऊचे ऊचे सब चल नीचे चली म शीत ।  
जो बर्बाद नीचे चली (ती) प्रभु तें ऊंचो होय ॥

भक्ति-लय में दय की बर्बाद महिमा ह । भक्त विरभिमान होकर परमवर के समीप शीघ्र पहुँच जाते ह घोर ज्ञाना भभिमान में दूब रहने के कारण गाथा के हा बर्बाद काटते रहते ह ।

(३) यहि भादर — दीनता की महिमा बर्बाद ने गाई ह —

'लघुता तें प्रभुता मिली प्रभुता तें प्रभु बूरि ।  
चौटीली सबकर चली हाथी के सिर धूरि ॥  
सबतें लघुताई भली लघुता तें सब होय ।  
जस दुविया की चर्चा सोस नव सब कोय ॥'

१६६

ऐसे राम दीन हितकारी ।

अतिकोमल करुनानिधान विष्णु कारन पर उपकारी ॥१॥

साधन हीन दीन निज अघ उस सिला भई मुनि नारी ।

गृह तें गवनि परसि पद पावन घोर सापतें तारी ॥२॥

हिंसारत निपाद तामस बपु पसु समान बनचारी ।

भेंटयो हृदय लगाइ प्रेमवस, नहि कुल जाति विचारी ॥३॥

जद्यपि द्रोह कियो सुरपति सुत, कहि न जाय अति भारी ।  
 सकल लोक अवलोकि सो कहत, सरन गये भय टारी ॥४॥  
 विहंग-जोनि आमिय अहार पर, गीघ कौन व्रतधारी ।  
 जनक समान त्रिया ताकी निज कर सब भानि सवारी ॥५॥  
 अघम जाति सवरी जोपित जड लोक वेद तें यारी ।  
 जानि प्रीति, दै दरस कृपानिधि, सोउ रघुनाथ उघारी ॥६॥  
 कपि सुग्रीव बनु भय-व्याकुल आयो सरन पुकारी ।  
 सहि न सके दारन दुष जन के, हृत्यो वालिसहि गारी ॥७॥  
 रिपु को अनुज बिभीषन निसिचर कौन भजन अधिकारी ।  
 सरन गये आगे ह्वै लीहो भेंटया भुजा पसारी ॥८॥  
 असुम होइ जिनक सुमिरे तें, बानर रीछ विकारी ।  
 वेद विदित पावन किये ते सब, महिमा नाथ, तुम्हारी ॥९॥  
 कहँलगि कहौ दीन अगनित जिहकी तुम बिपति निवारी ।  
 कलिमल ग्रसित दास तुलसी पर, बाह ब्रुपा विसारी ॥१०॥

भावार्थ—दीना का ऐसा हित करनेवाले श्रीरामजी ही हूँ ! वे बड़े कोमल, करुणा के भाण्डार दयामूर्ति और बिना ही किसी हेतु के दूसरा का उपकार करनेवाले हैं ॥१॥

सावनों से रहित दोन गौतम ऋषि की स्त्री अहत्या अपने पापा के कारण पापाणी हो गई थी । उसे आपने घर से जाकर अपने पवित्र चरण से छूबर घोर शाप से छुड़ा दिया ॥२॥

गुड़ निपाद सदा हिंसा में ही रत रहता था । शरीर तानसो या जो पशु की तरह वन में फिरता रहता था । उसे आपने, बश और जाति का विचार किए बिना हाँ, प्रेमपूर्वक छाती से लगा लिया ॥३॥

यद्यपि इंद्र के पुत्र जयत ने इतना भारी अपराध किया था, कि कुछ कहा नहीं जा सकता (जयत ने कौए का रूप धरकर सीताजी के चरण में चोंच मारी थी) तथापि जब वह (रघुनाथजी के वाण से याकुल होकर वाण पाने के लिए) सारे लाका में घूमता फिरा और अन्त में निराश हाँकर आपकी शरण में आया तब उसका सारा भय दूर कर दिया, उसका सारा अपराध भूलकर उसे निहाल कर दिया ॥४॥

जटायु गीघ पक्षी की योनि का था, मदा मांस भखा करता था । उसने ऐसा कौन सा व्रत साधा था, कि जिससे आपने अपने हाथ से पिना व समान, उसकी अस्पृष्टि त्रिया की ? उसकी करनी सब प्रवार स बनाये ॥५॥

शबरी गीघ जाति की मूर्खा स्त्री था । वह नाक और बाल दाता से ही बाहर थी, किन्तु उसकी भक्ति भावना देखकर, हृदयानु रघुनाथजी ! उसे भाँ दशन दिया उसका भाँ उद्धार कर लिया ॥६॥

सुग्रीव बानर अपने भाई (बानि) के डर के भारे व्याकुल हाँकर जब पुकारता



हुया आपकी शरण में आया, तब आप अपने दास का महान दुःख न देख सके और गालिया खाकर भी बालि का वध कर डाला ॥७॥

विभीषण, शत्रु (रावण) का भाई था और जाति का था राक्षस। वह किस भजन का अधिकारी था? किन्तु जब वह (रावण) स तिरस्कृत और बहिष्कृत होकर शरण में आया, तब उसे आपने आगे बढ़कर लिया, स्वागत किया और बाहु पसारकर उसे छाती से लगा लिया ॥८॥

बन्दर और रोष ऐसे अघर्षी हैं कि उनका नाम तक लेने से अमंगल होता है किन्तु हे नाथ! उन्हें भी आपने पवित्र बना लिया। वेद इस बात के साक्षी हैं। यह आपकी महिमा ही है ॥९॥

ऐसे अनेक दोष हैं जिनकी विपत्तियाँ आपने दूर कर दी हैं। म कहीं तक गिनाऊँ? पर मानूँ नहीं, इस तुलसीदास पर ही जो कलियुग के पापों से ग्रसित है क्या आप कृपा करना भूल गये, क्या उसे अभी तक नहीं अपनाया? ॥१०॥

शब्दार्थ—गवनि = जाकर। गुरपति मुत्त = इन्द्र का पुत्र जयत। अहार पर = खानेवाला। जापित = (यापित) स्त्री। विकारी = पापी।

विनय—(१) गृहों गवनि—क्या यह तात्पर्य है कि रामचन्द्रजी घर से क्वेचन ग्रहत्या के कारण के लिए गये थे ताडका को मारने अथवा धनुष ताडन के लिए नहीं। यह बड़ी ही मुन्दर अय पवनि है।

(२) द्राह किया गुरपति मुत्त—वामोक्ति और कात्रिदाग ने विगा है कि जयन्त न श्रीसीताजी के स्तना पर चाब म धारात किया था और एसा उसन कामवरा किया था, किन्तु मामाइजी न, मर्यादा का पालन करन हुण, एसा न लिखकर यह विगा है, कि उसन सीताजी के चरणों में चाब मारो घो।

(३) अमुत्त विकारी—कहा है—

प्रातः सेइ जो नाम हमारा। ता दिन ताहि न मिल अहारा ॥

(४) कहेँ लगि कहीँ—भार अगणित पापिया का उद्धार किया है—

एते जन तार जेने नभ में त तारे हैं।'

१६७

रघुपति भगनि करन कठिनाइ।

कहन गुगम करनी अपार तान मोइ जहि बनि आई ॥१॥

जा जहि बना-कुमन ताहें माइ मुत्तम मदा मुग्गारी।

मङ्गरी मासुत जन प्रसा मुग्गरी वटै मज भारी ॥२॥

ज्या मरग मिने मिता मन्, वन नें न वाउ विनयाइ।

अति तन्ध मूत्तन रिपीनिता, त्रिनु प्रयाग ही पाइ ॥३॥

मसन रय निज तन्ध मनि, माइ निद्रा तजि जागी।

मोइ हरिपद अनुमन परम गुन, अतिगय दूँत शियागी ॥४॥

सोक मोह भय हरण दिवस निसि देस-काल तहें नाही ।

तुलसिदास यहि दसाहीन ससय निरमूल न जाही ॥५॥

भावाथ—श्रीरघुनाथजी की भक्ति करो में भारी कठिनाता ह । कहना तो

घासान ह, पर करना उसका कठिन ह । जिसमे करत बन गई, वही इसे जानता ह ॥१॥

जो जिस कला म प्रयोग ह उन्के लिए वह सरल और सदा सुख देनेवाली ह ।

जसे (छोटो-सी) मछली ता गंगा की धारा में सामने चली जाती ह, परतु बहुत बड़ा हाथी

उसमें वह जाता ह । (क्योंकि वह मछली की तरह उसमें तैरना नहीं जानता) ॥२॥

(डुमरा उदाहरण उपस्थित करते ह) जमे यदि रेत में शक्कर मिल जाये तो

उसे कोई जोर लगाकर अलग नहीं कर सकता, किंतु उसने रस को जानगवानी छोटी-

सी चीटी उस सहज ही अलग कर देती ह ॥३॥

जो योगी दशमाम्र का, सार पचभूतात्मक प्रपच का, अथवा पट म रख (चित्त

वृत्ति निरोध द्वारा ससार का लय करके) निद्रा का त्यागकर साता ह अथात् अविद्या

हटाकर ब्राह्म्य अवस्था में लीन हा जाता ह और भेदात्मक ज्ञान का आर्थात्मक परित्याग

कर देता ह, वही वष्णुवचन के परमानन्द की प्रत्यक्ष अनुभूति कर सकता है ब्रह्मानन्द

का पूर्णाधिकारी बही हो सकता ह ॥४॥

इस परा अवस्था में शोक माह भय, हण, दिन रात और देश काल का नाम तक

नहीं रह जाता, इन सबसे वह परे पहुँच जाता ह । है तुलसीनाम । जब तक यह जाव इस

दशा को नहीं पहुँचा तब तक सशय निमग्न नहीं हाने (कुछ न कुछ स है वना ही रहता

ह और जब तक सर्वह का लेश भी ह, तब तक नि श्रेयस प्राप्त हान का नहीं) ॥५॥

गद्याथ—सफरी = मछली । सकरा = शक्कर । सिक्ता = रत । सिपोनिका =

चीटी । दशय = पचभूतात्मक जगत । द्व त वियागो = जिनका भेदात्मक ज्ञान नष्ट हो

गया ह । सशय = सदसत विवेक का अभाव ।

विनय—(१) कहत सुगम—जमे, कहने में तो ये चौपाइयाँ ही बड़ी घासान

ह कहने में जवान को भी उरा भी कष्ट नहीं पहुँचता—

‘सरल स्वभाव न मन कुटिलाई । जयालाभ स तोय सदाई ॥

बर न सिग्रह आत न नासा । सुखमय ताहि सदा सत्र आसा ॥

अनारभ अनिकेत अमानी । अनघ अरोप दच्छ विण्णानी ॥

प्रीति सदा सजजन ससर्गा । तृप्तसम विषय स्वय अपवर्गा ॥

पर इन पर अमल करना बड़ा ही कठिन ह खाँड़ का धार पर दीडने के जसा

ह । कहाँ तो कयनी और कहाँ करना ।

(२) ‘सफरी पाव’—श्रीभगवतरसिकजी ने भी ऐसा ही कहा ह—

‘भगवत स्वामा स्वाम की पावस्वरूप विहार ।

नहि समय खगराज की करत चकोर अहार ॥

करत चकोर अहार किलकिला जलघर लाव ।

स्याह सीख मृगराजघदन तें आमिष पाव ॥

ऐसे रसिक अनय और सत्र जानहुँ खगवत ।

सतो पराई सन, भजौ किन माफिक भगवत ॥’

जो पै राम चरन रति होती ।

तौ कत त्रिविध मूल निमित्रासर सहते विपति निसोती ॥१॥

जो सतोप सुधा निसिवासर सपनेहुँ कवहुँरु पावै ।

तौ कत विषय विलाकि झूठ जल मन कुरग ज्यो धावै ॥२॥

जो श्रीपति महिमा विचारि उर भजते भाव बढाए ।

तौ कत द्वार-द्वार कूकर ज्यो फिरते पेट खलाए ॥३॥

ज लोलुप भये दास आस के, ते सबही के चरे ।

प्रभु विस्वास आस जीती जिह, ते सेवक हरि केरे ॥४॥

नहिँ एकी आचरन भजन को, विनय करत ही ताते ।

कीजै कृपा दासलतसी पर, नाथ नाम के नाते ॥५॥

भावाय — यदि श्रीरामचन्द्रजी के चरणा म प्रीति होती, तो रात दिन विपत्तिय के प्रवाह रूप तीनों प्रकार के कष्ट क्या सहत ? ॥१॥

यदि यह मन दिन या रात म कभी स्वप्न म भी सतोप रूपी अमृत पा जाये त विषया के मिथ्या मगजन को खर उतके पीछे क्या हिरण्य की भाँति दौड ? ॥२॥

यदि हम भगवान लक्ष्मणान्त की महिमा का हृदय में विचारकर भाव भक्ति से उनका भजन करत तो आज कुत्त की तरह द्वार-द्वार पेट दिखाते हुए क्या मार मार फिरते ॥३॥

जो तेभो जन आशा के दास बन गय व सभी के गुलाम हँ और जिन्होंने भगवान् में विरवाग कर आशा को जीत लिया व ही भगवान् के सच्चे सेवक हँ ॥४॥

मैं आपसे इसलिए विनय कर रहा हूँ कि मुझमें भजन भाव का एक भी आचरण नहीं है (यद्यपि कालत काल आदि मन्वथा भक्ति से विलग्न होरा हूँ) हे नाथ ! तुमसीपास पर अपने नाम व नाम स हाँ कृपा कीजिए (क्योंकि आपके नाम दीनबन्धन, दीनबन्धु आदि ह) ॥५॥

पदार्थ—निमानो = प्रवाह । कुरग = हिरण्य । सनाए = पचकार ।

विशेष— १) जा सतोप पाव — क्याकि

गुरवाग प्रभु कामधेनु तजि छेरो कीन दुटाय ।'

(\*) ज तनु कर — कबार गाहन कट्ट ह—

कविरा नागो जगत-गुण तनै जगत की आस ।

ना जग की आमा कर जगत गुण वह दास ॥

हरिभक्त व । किमा का आशा कर ? चिन्ता हा किम वात की ?

भाजनान्नापान विना मृया कुर्वति यत्नव ।

यान्मा विनयनरा दश स भक्तान् किमुपपन ॥

१६६

जो मोहि राम लागते भीठे ।

तो नवरस, पटरस अनरस ह्वंजाते मव सीठे ॥१॥

वचक विषय विविध तनु धरि अनुभवे, मुन अरु डीठे ।

यह जानत हीं हृदय आपने, सपने न अघाइ उबीठे ॥२॥

तुलसिदास प्रभु सो एकहि बल वचन कहत अति डीठे ।

नाम की लाज राम करुनाकर वहि न दिय करचीठे ॥३॥

भावार्थ—यदि मुझे श्रीरामजी ही मोठे लग हाते ता नवरस (साहित्य के) एक धहरस (भोजन के) नीरस और फीके पड जाने (पर रामजी तो मोठे लगने नही उनस ता प्रेम ह नही, इसीलिण भोग विलास मधुर प्रतीत होते ह) ॥१॥

म माना प्रकार के शरीर धारणकर यह अनुभव कर चुका है और मने सुना भी ह कि विषय सारे ठग ह (सत्कर्मों के लुटेर है) । यद्यपि यह म अपने जी में खूब सभ्रता है तथापि (समझने हुए भी) कभी स्वप्न में भा, इनसे तृप्त हाकर जी नही उन्ना, रुचि नही हटी ! ॥२॥

तुलसीदास अपने स्वामी श्रीरघुनाथजी से एक ही बल पर ये लिखाई भरे वचन कह रहा ह । (और वह बल यह ह कि) हे नाथ ! आपने अपने नाम की लाज रखने के लिए किस किसक हाथ म दया करव परवाने नही लिख दिये ह ? किसे ससार से मुक्त कर देने का वचन नही दिया ? (भाव यह ह कि आपका नाम म वह शक्ति ह जो जाव मात्र का भवसागर से तार देन में समथ ह । उसीका मुझे बल भरोता ह) ॥३॥

शब्दाथ—नवरस=शृंगार हास्य, कण्ठ वीर रौद्र भवानक वीभल्य, अद्भुत और शान्त । पटरस=कटु तीखा, मयुर, कपाय, अम्ल और लवण । सीठे=फीके । डीठे=देखे । उबीठे=ऊबे, मन से उत्तर गय ।

विशेष—(१) ती सीठे—क्याकि—

‘रमा विलास राम-अनुरागी -तजत वमन इव जन बडभागा ॥

[रामचरितमानस

बबीर साहब ने भी कहा है—

‘घोषा चाहे प्रेमरस रीला चाहे मान ।

एक म्यान में दो खडग, देखा सुना न कान ॥

(२) वचक विषय—सत्सग से अथवा प्रारम्भश यदि जीव नाम रत्नो का सचय करता ह, तो इन्द्रिया के विषय क्षणमर में उन्हें लूटकर ले जाते हैं —

काम क्रोधश्च लोभश्च देहे निष्ठात्ति तस्करा ।

शानरत्नापहाराय सस्माज्जाप्रत जाप्रत ॥’

[श्रीशङ्कराचार्य

(३) ‘नाम की लाज’—यदि पतितपावन नाम रखकर पापिदा का उच्चार न किया तो नाम मुफ्त में बदनाम हा जायेगा । इसलिए जैसे-जैसे, अपनी बात रखने के लिए

पापिया का उच्चार करना ही बदनाम। भक्तों का यह दृष्ट-भङ्गा बना वैश्व भक्तों का  
 उच्यता या—

‘श्री गुरारि, गुरारि बहो भय, मेरी हठी बहि तेरी हठी है ॥’

। १७० ।

या मा वदुं सुमहिं १ साग्यो ।

ज्या छन छानि सुभाय तिरार रग विपय प्रगुग्या ॥१॥

ज्या तिरार परारि, गुा पाता प्रपय पर पर व ।

त्या १ साधु सुग्गरि तरग तिमस गुागा रघुधर व ॥२॥

ज्या तागा गुा-धरग-अग, रगा पटग्गरि मागो ।

राम प्रसाद मान जूठनि तगि त्या १ तलनि लनगानो ॥३॥

चन्दन चन्द्रवदनि भूपय पट ज्या चह पावर परम्या ।

त्या रघुपति-भद-भदुम-भरग वा तनु पातकी १ तरस्या ॥४॥

ज्या सब भाति कुदव कुठागुर सय वपु वचा हिय है ।

त्या न राम सुठनग्य ज सकुचा मठन प्रनाम तिये है ॥५॥

चचल चरन लाभ तगि सात्रुप द्वारद्वार जग यामे ।

राम सीय आसमनि चलत त्या भय न समित अभाग ॥६॥

सकल अग पद विभुत नाथ मुग्य राम की छोट लई है ।

है तुलमिहि परतीनि एव प्रभु भूरति तृपामई है ॥७॥

भाषायें—मेरा मन इन प्रकार कभी भी घासे नहीं लगा, जसा कि वह कपट  
 छोड़कर स्वभाव से ही विषया में लगा रहता है विषया के प्रति जग उसकी सहज  
 वाचना रहती है ॥१॥

जसे, म दूसर की नारी को ताकता फिरता है घर घर व पाप भर प्रपव  
 सुनता रहता है, वसे न तो कभी साधुमा का दर्शन करता है और न गंगा की निमत  
 लहरा व समान थीरघुनाथजी की गुणावरी ही सुनता है ॥२॥

जसे, नाक सुगंध के रस के अधीन रहती है और जो भ्रष्ट रसों से प्रेम करती  
 है, वसे यह नाक भगवान पर चढी हुई माला के लिए और जो भगवत् प्रसाद अथ  
 ललक-ललककर नहीं ललचाती ॥३॥

जसे यह प्रथम शरीर चन्दन चन्द्रवदना युवती और सुन्दर फलकारो एव  
 (कोमल) वस्तुओं का स्पर्श करना चाहता है वसे कभी यह थीरघुनाथजी के चरणकमला  
 का स्पर्श करने के लिए उत्कण्ठित नहीं होना ॥४॥

जिस प्रकार मन शरीर वचन और हृदय से भली भाँति बुरे-बुरे देवों और  
 दुष्ट स्वामिया की सेवा की वसे उन रघुनाथजी को सेवा कभी नहीं की, जो अरा-सी  
 सेवा से अपने को अत्यन्त कृतज्ञ मानने लगते हैं, एक बार प्रणाम करने पर ही (सीशान्य  
 वश) सकुचा जानेवाले हैं ॥५॥

जसे, ये चल पर साभवश द्वार-द्वार भटकते फिरते ह वसे ये अभागि श्रीसीता रामजी के (पुण्य) आश्रमा म चलकर कभी थकित नही होना चाते । (यह तात्पर्य नही है, कि पुण्य आश्रमा में चलते हुए थके नही ह किंतु वहाँ गय ही नही तब थकेंगे क्या ? ) ॥६॥

हे प्रभा ! मेरे अग प्रत्यग आपके चरणा स विमुक्त ह (किसी भी अग स चरणा की सेवा नही की) । केवल इम मुक्त से आपक नाम की ओट ले रखी ह (और यह इस लिए कि) आपकी मूर्ति कृपा का रूप ह । तुलसी का यही एक उल भरोसा ह (कि आप कृपासागर होने क कारण तथा नाम की बात रखने के लिए मुक्त अवश्य ससार सिवु पार कर देंगे) ॥७॥

शब्दाय—ललकि = उमग में आकर । सवृत = एकवार । वागे = फिरे, चले । ओट=भरोसा ।

विनय—(१) शरीर के समस्त अंगों की निरथकता तथा साथकता का यह निरूपण कराया गया ह । एक ही वस्तु असार एव सारमय हा सकती ह अन्तर उसकी उपयोगिता में ह । इसी प्रकार जगत यदि हरिमय ह तो वह सत्य ह, आनंदरूप ह, और यदि वह 'हरि शून्य ह, ता मिथ्या ह । आत्मा क अनुकूल प्रत्येक वस्तु सुखरूप ह उसके प्रतिकूल वही दुःखरूप ह ।

(२) कुदेव'—भूत प्रेत स आशय ह । गासाइजी ने भूत प्रता का जहाँ-तहाँ खूब फटकारा ह छोटी छोटी कामनाओं की पूर्ति के लिए ही लाग भूत प्रता का माना करते ह, फलत उनका विश्वास परमेश्वर पर से उठ जाता ह ।

१७१

कीजै मोको जम जातनामई ।

राम, तूमस मुचि सुहृद साहिवाहि मैं सठ पीठि दई ॥१॥

गरभजास दस माम पालि पितु मातु रूप हित कीहा ।

जडाहि विवेक, सुसील खलाहि, अपराधिहि आदर दीहो ॥२॥

कपट करी अतरजामिहैं सो, अथ व्यापकहि दुरावो ।

एसेहु कुमति कुसेवक पर रघुपति न किया मन वावो ॥३॥

उदर भरौं किंकर बहाइ वैच्यो विपयनि हाथ हियो है ।

मोसे वचक को कृपालु छल छाडिरे छोह कियो है ॥४॥

पल पल के उपकार रावरे जानि वृद्धि मुनि नोके ।

भिद्यो न कुलिमहैं ते कठार चित कबहैं प्रेम सिय-पीके ॥५॥

स्वामी को सेवक हितता सब, कछु निज साईं दोहाई ।

मे मति-तुला तोलि दखी भइ मेरेहि दिसि गरग्राई ॥६॥

एतेहु पर हित करत नाथ मेरो, करि आयो, अरु करिहैं ।

तुलसी अपनी ओर जानियत प्रभुहि कनौडो भरिहै ॥७॥

भावाय—हे नाथ ! मुझे तो आप यम यातना (ज म मरण) में ही डाल दीजिए, गरुड़ में ही भेज दीजिए, क्योंकि हे श्रीराम ! म आप-सरोखे पवित्र और सुहृद स्वामी से विमुख हा गया हूँ (इतना दगड़ यम यातना ही हा सकता ह सा मुझे वही दीजिए) ॥१॥

जब गभ म था तब आपन माता पिता के समान दस महीने पालन पापण कर मेरा हित किया । मुझ मूल को आपने शुद्ध नान, मुझ दुष्ट को सुन्दर शील और मुझ अपराधी का मादर दिया, (मुझे आपका कृतन हाना चाहिए था आपका भजन करना चाहिए था । वह न हुआ उनटे आपको भुलाकर कृतघ्नता का भागी बन गया ।) ॥२॥

म अतर्पामी प्रभु के साथ छल करता हूँ । सबव्यापी घट घट म रमनेवाले से अपने पाप छिपाता हूँ । ऐसे दुबुद्धि नीब नौकर पर भी श्रीरघुनाथजी ने अपना मन प्रतिकूल नहीं किया । अब भी उस पर कृपा कर रहे ह ॥३॥

आपका नास बनकर तो पेट भरा करता हूँ, किन्तु हृदय विषया के हाथ बेच दिया ह । चाहिए तो यह था, कि जिसका खाना उसी का गाना पर मुझ अयम से यह न हुआ) । मुझ सरोखे ठग पर भी कृपाल रघुनाथजी ने निष्कपट भाव से कृपा ही की ह ॥४॥

एक एक पल के उपकारा को जानकर समझकर और अच्छी तरह सुनकर भी मेरे कठार चित्त म कभी जानकी जीवन का प्रेम नहीं भिदा ॥५॥

मने जब अपनी बुद्धिरूपी तराजू पर एक और स्वामी की सारी जन वत्सलता और दूसरे और थोड़ी सी अपनी करनी रखकर तौली तब देखने पर मेरो भार का ही पनडा भारी निकला । यह म स्वामी की सौगंध तारु कह रहा हूँ । तात्पर्य यह, कि जीव की क्षण भर की भी हरि विमुक्ता श्रीहरि की सारा कृपा की तुलना में भारी है, उसके कम ऐसे गिरे हुए ह कि वह भगवद्गता होन पर भी क्षणमात्र में नरकगामी हो सकता ह ॥६॥

किन्तु इतने पर भी मर कृपालु स्वामा ने मेरा भला किया ह कर रहे ह और करेंगे । वे सदा से मेरे हित ह । तुलसी अपनी भार से जानता ह कि इस कनौड का, एहसान से दबे हुए का स्वामी ही पालन करेंगे । (क्याकि उनकी प्रतिज्ञा ह कि शरणागत का वे अवश्य परिपालन करते ह) ॥७॥

गव्दाय—पाठि दई=विमुख हा गया । जडहि=मूल को । बावौ=(वाम) प्रतिकूल । छाह=अनुग्रह । कनौडो=कृतन एहसान स दबा हुआ ।

विशेष—(१) उदर भरौं किंकर कहाइ —पाण्ड भेष धारणकर लोमा को टगता फिरता हूँ । दूसरा का दष्टि में अान का सत प्रहामा सिद्ध करना चाहता हूँ ।

तन को जोगी सब कर, मन को बिरला कोय ।

सहसै सब सिधि पाह्ये जो मन जोगी होय ॥'

[कबीरदास

(२) प्रभुहि कनौग भरिदैं —नाकि भगवान् की यह प्रतिना सुप्रसिद्ध ह—

अह भजनपराधीनो, दास्यत्र इव द्विज !

साधुभिप्रस्तनहृदयो भजनभक्तजनप्रिय ॥'

[श्रीमद्भागवत

बवहुँक हौ यहि रहनि रहौगो ।

श्रीरघुनाथ-वृपालु-वृषा ते सत सुभाव गहौगा ॥१॥

जयालाभ मतोप भदा, काहू मो कहु न चहौगो ।

परहित निरत निरतर, मन श्रम वचन नम निवहौगो ॥२॥

परुष वचन अति दुमह सवन मुनि तेहि पावन न दहौगो ।

विगनमान, सम मीतल मन, पर गुन नहि दोष कहौगो ॥३॥

परिहरि देह-जनित चिन्ता दुख सुख समबुद्धि सहौगो ।

तुलमिदाम प्रभु यहि पथ रहि, अविचन हरि भक्ति लहागो ॥४॥

भाषाय—क्या म कभी हम रहनी म रहूगा ? क्या वृषालु श्रीरघुनाथकी कौ वृषा से कभी म मता वा सा स्वभाव ग्रहण कर सकूगा ? ॥१॥

क्या जा कुछ मिल जाय, उनीम सन्नुष्ट रहूगा, किसीसे कुछ भी पाने की इच्छा कही कहूँगा ? सग दूसरा की भलाई करने में क्या तत्पर रह सकूगा ? मन से वचन से और कम से कम निपमा का पालन करूँगा क्या ? ॥२॥

कठार और असह्य वचन सुनकर उसकी भाग में तो नहीं जलूगा ? किसी से मान पाने की इच्छा तो न करूँगा ? क्या मन का एकरम और शीतल रहूगा ? ऐसा स्वभाव कब बनेगा कि दूसरा के गुण दोष की चर्चा न करूँ प्रशंसा दूसरा का प्रशंसा तो करूँ, पर उनका दोष न कहूँ ? ॥३॥

शागीरिक चिन्ताएँ छोड़कर और सुख दुख को कब एक सरीखा मानूगा ? हे नाथ ! क्या तुमीनास हम माग पर चलकर अटल भगवद्भक्ति को कभी प्राप्त कर सकेगा ? (क्या कभी उसका यह मनोरथ साकार होगा) ॥४॥

भाषाय—निरत=सतत तत्पर । क्रम=क्रम

विशेष—(१) मनोराज्य विषयक सूक्तियाँ भवती न अनेक प्रकार से कही हूँ । श्रीहरिराम यास कहते हूँ —

ऐसी कब करिहो मन मेरो ।

कर कइवा हरवा गुजन को, कुजन माहि बसेरो ॥

ब्रजवासिन के दूक जूठ अरु घर घर छाछ महेरो ॥

भुव लग तत्र मागि खाइहो, गिनो न साक्ष सवेरो ॥

ऐसी आस 'व्यास की पूजे, मेरे गाम न खेरो ॥'

श्रीर ललितकिशोरी भी —

'जमुना पुलिन कुज गहवर की कोकिच हूँ द्रुम कूक मचाऊ ।

पद पक्क प्रियलाल मधुर हूँ मधुरे मधुरे गुज मुनाऊँ ॥

फूकर हूँ बन बोधिन डोनों बचे सीय सतन के पाऊँ ॥

'ललितकिशोरी आस पही मन ब्रज रज तजि छिन अनत न जाऊँ ॥'

(२) 'जयालाभ मतोप —

'जब आव स तोप पन, सब घन धूरि समान ।'



(३) 'यहि पथ'—सत्ता वा स्वभाज, राम भजन व सत्पण गथप में —

'गाठ समानमनसदच सुगीनयुक्त—

स्तोत्रशमागुणव्यामृजुद्वियुक्त ।

विनानज्ञानविरति परमापवेता

निर्घामको भवमन स च रामभक्त ॥

[ महारामायण ]

१७३

नाहिंन आरत आन भरोमो ।

यहि कलिकाल सकल साधनतरु है सम फलनि फरो सा ॥१॥

तप, तीर्थ, उपवास, दान, मख, जेहि जा रुचै करा सो ।

पायेहि पै जानिवो करम-अन भरि भरि वेद परोसो ॥२॥

आगम विधि जप-जाग करत नर सरत न बाज करा सो ।

सुख सपनेहुँ न जोग सिद्धि-साधन, रोग वियोग धरा सो ॥३॥

काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह मिनि ग्यान विराग हरो सो ।

विगरत मन स-यास लेत जल नावत आम धरो सो ॥४॥

ग्रहमत सुनि बहु पथ पुराननि जहा-नहा जगरा सो ।

गुरु कह्यो राम भजन नीको मोहि लगत राज टगरो सो ॥५॥

तुलसी विनु परतीति प्रीति फिरि फिरि पचि मरे सो ।

राम नाम बोहित भव सागर चाहै तरन तरा सो ॥६॥

भावाथ—मुझे काइ दूसरा बल भरोसा नहीं है (कवल एक राम-नाम का ही भरोसा है) । इस कर्मियुग में जितने भी साधनरूपी वृक्ष हैं उनमें केवल परिश्रमरूपी फल ही फल से दोखने हैं । अर्थात्—उन साधना-कर्म किए चाहे जितना श्रम किया जाय पर हाथ कुछ भी नहीं आता ॥१॥

तप तीर्थाटन, व्रत दान, यज्ञ आदि जो जिसे अच्छा लगे, सो करे । पर इन सारे कर्मों का फल पाने पर ही जान पडगा यद्यपि वेदो न (पतन) भर भरकर फलों का परोमा है । तात्पर्य यह कि वेदा न तो प्रत्येक सत्कर्म की फलश्रुति मनमानी लिख दी हैं पर वनि महाराज के मार जब कोई सत्क्रिया सफल हो, तभी न उसका फल मिले ॥२॥

शास्त्राक्त विधि से मनुष्य जप और यज्ञ करते हैं पर उनसे घयष्ट काय सिद्धि नहीं हाती । योग सिद्धियों के साधन में सुख स्वप्न में भी नहीं । इसमें भी रोग और वियोग प्रस्तुत है । शरीर रोगी होने से प्रियजना से विछोह हो जाता है ॥३॥

काम क्रोध अहंकार लोभ और मोह ने मिलकर ज्ञान-विराग्य को तो हर सा लिया है (इहा व्यसना के मारे यह भी सपने के नहीं) और स-यास ग्रहण करने पर मन एसा विगड जाता है जैसे पानी के पडने से कच्चा घड़ा गल जाता है ॥४॥

शास्त्रों के अनेक मत सुनकर और पुराणों में नाना प्रकार के पथ देखकर जहाँ उहाँ भगड हो जान पडते हैं (कहीं भी कोई निश्चित दृष्टि नहीं मिल रही है) । गुरु ने

तो मुझे राम भजन का ही-उपदेश किया ह और यही मुझे राज-भाग के समान भन्दा भी लगता ह ॥५॥

हे तुलसी ! विरवास और श्रद्धा के बिना जिसे बार-बार पच-पचकर मरना हो, वह भले हो मरे, किन्तु ससार सागर पार करने के लिए तो एक राम-नाम ही जहाज ह ॥६॥

गन्धाय—आगम = शास्त्र । सरतं = पूरा होता ह । नावत=डालते हैं । भ्राम = कच्चा । घरो=घडा । डगरो = माग ।

विशेष—(१) इस पद में गोसाइजी ने सिद्धान्तरूप से रामनाम का सहजै साफल्य तथा भय साधना का वैभय दिखाया ह ।

(२) 'तप मख —प्रत्येक की कठिना देखिए —

तप—पचाग्नि तापना, जल गयन करना, धोती, नेती आदि करना,

तीरथ—तीर्थों का पक्ष, भूल-ध्यास सहकर, पर्यटन करना,

उपवास—चाद्रायण, कृच्छ्र, महाकृच्छ्र आदि व्रत करना,

दान—प्रसन वित्त से निष्काम बुद्धि से शास्त्रोक्त दान देना,

मख—अश्वमेधादि व्रत करना, जो महाकठिन हैं ।

(३) 'विगतर घरो सो'—संयास आश्रम मारे आश्रमों से कठिन है । जब मन समस्त विषया से तृप्त हो जाय इन्द्रियों का जीत लिया जाय और शान्ति का अनुभव होने लगे, तभी इस आश्रम में प्रवेश करना चाहिए । कम करते हुए भी, कर्म वासना का पूषतया त्याग कर देना सच्चा संयास ह । ऊपर से कुछ कर्मों का त्याग संयास नहीं ह । निर्विकल्प मनवाले साधक ही संयास के अधिकारी ह । यों, जो जहाँ तहाँ बनेक सन्यासी भगवा वस्त्र पहने मूढ मुँढाये धूमते फिरते ह —

'दाड़ी मूछ मुडाइके, हुआ जु घोटम घोट ।

मन को क्यों नहि मूडिए जाये भरिया छोट ॥

'माला तिलक लगाइके, भक्ति न आई हाय ।

दाड़ी मूछ मुडाइके, चले दुनी के साथ ॥

(४) बहुमत 'भगरो-सो'—

मत—वैशेषिक, यायी, साख्य, योग, पूर्वमीमांसा तथा उत्तरमीमांसा, इन शास्त्रों के तथा शक वैष्णव, शक्ति, सौर, गणपत्य, बौद्ध, जैन आदि बनेक-सम्प्रदायों के मत मतान्तर ।

(५) 'गुह नीको —इस बात को दृढतापूर्वक हृदय में बैठा दिया गया कि—

'न तत्पुत्राण नहि यत्र रामो यस्या न रामो नृप सहिता सा ।

स नेतिहासो नहि यत्र राम काव्य न वैस्पृमेहि यव राम ॥

[ पपपुराण

जाके प्रिय न राम-वैदेही ।

सो छाँडिये कोटि वैरी समं, जद्यपि परम सनेही ॥१॥

तज्यो पिता प्रह्लाद, विभीषण वधु, भरत महतारी ॥२॥

बलि गुरु तज्यो, कत ब्रज-धनितनि, भये मुद-भगलकारी ॥३॥

नाते तेह राम के मनियत सुहृद सुमेध्य जहाँ लौ ।  
अजन यहा आँखि जेहि पूटे, बहुनक वहाँ वहाँ लौ ॥३॥  
तुलसी सो सब भाँति परमहित पूज्य प्राण ते प्यारा ।  
जासो होइ सनेह रामपद, एता मता हमारो ॥४॥

भाषाय—जिस श्योराम-जानकी प्यार नहा उमे करणा शत्रुपा के समान त्याग देना चाहिए, चाहे वह अपना अत्यंत ही प्यारा क्या न हो ॥१॥

(उदाहरण के लिए,) प्रह्लाद न अपने पिता (हिरण्यकशिपु) का विभाषण ने अपने भाई (रावण) को भरत न अपनी माता (ककेयी) का राजा बलि न अपने गुरु (शुक्राचार्य) को और ब्रज गोपिया ने अपने अपने पतिया का (भगवत्प्राप्ति में बाधक समझकर) त्याग दिया और य सभी भानंद और क यण करनेवाय हुए ॥२॥

जहाँ तक मित्र और भली भाँति पूजन योग्य है वह सब धारधुनायजी के ही सबध और प्रेम से ऐसे माने जाते हैं । तात्पर्य यह कि यदि वे भगवत् दशन और हरि प्रेम में सहायक हैं, तो उन्हें मानना और पूजना चाहिए अथवा नहीं । जिस अजन के लगाने से आँखें ही पूट जाय वह अजन किस काम का ? वस प्रव श्रिक क्या कहें ॥३॥

हे तुलसीदास ! जिसके कारण श्योरामचंद्रजी के चरणों में प्रेम हो, वही सब प्रकार से परमहितकारी पजनीय और प्राणा से भी श्रिक प्यारा है । हमारा ता यही मत है ॥४॥

नदाय—कन्त=पति । मतो = मत सिद्धान्त ।

विशेष—(१) 'ब्रज वनितनि—महाभाग्यवती गोपियाँ तो प्रेम मन्दिर की 'धुजा थी ? एक प्रेम दीवानो गोपो यहा तक कहती हैं —

'घर तजौ, बज तजौ नागर' नगर तजौ,  
बसोबट तट तजौ, काहू प न सजिहौ ।

देह तजौ गेह तजौ नेह कहौ कसे तजौ  
और काज छाँडि जाज ऐमे साज सजिहौ ॥

बावरो भयो है लोक बावरी कहत मोकों  
बावरी कहेतैं म हूँ काहू ना बरजिहौ ।

कहैया-सुनया तजौ बाप और मया तजौ,  
दया । तजौ मया, प क हैया नाहि तजिहौ ॥'

[ नागरीदास

(२) 'एतो मतो हमारो—इस पद पर स एक यह धारणा बन गई है कि यह पद मोराबाई के पत्राक्षर रूप में लिखा गया है । कहने हैं कि मोराबाई को उनके परिजनो ने बहुत परशान किया तब उहाँन गोसाइ तुलसीदासजी का यह पद पत्र में लिखकर भजा—

'स्वस्ति थी तुलसी गुनभूषण दुषन हरन गुसाइ ।  
बारहिबार प्रनाम करौ अब हरहु सोक-समुदाई ॥  
घर के सजन हमारे जेते, सबनि उपाधि बडाई ।  
साधुसग अब भजन करत मोहि देत क्लेश महाई ॥

बालपन में मीरा की ही गिरिधरलाल मितार्ई ।  
सा तो अब छूटत नहि बयोहै, लगी लगन बरियाई ॥  
मेरे मात पिता के सम ही हरि भक्तन मुखदाई ।  
हमको कहा उचित करिबो है, सो लिखिए समुझाई ॥

श्रीतुलसीचरित' के अनुसार—

सो पद्या गुसाइ समाचार । जिमि लिखी हुती निज गति विचार ॥'

'जाके प्रिय न राम-अपेही इत्यादि पर गोसाइजी ने माराबाई को लिख भेजा ।

यह दत्त-कथा ही प्रतीत होती है । मीराबाई का गोपेोक प्रयाण सवत १६०३ में हो चुका था । उस समय गोसाइजी अधिक से अधिक १३ वष के रहे हागे । यह पद साधारणतया सभी के लिए रचा गया है । इसका पुष्टीकरण तुलसी-प्रयावली' के तीसरे खण्ड में स्व० पण्डित रामचन्द्र शुक्ल ने भी किया है ।

१७५ Important - 5

जो पै रहनि राम सो नाही ।

तौ नर सर कूबर सूकर सम वृथा जियत जग माही ॥१॥

काम, क्रोध, मद, लोभ, नीद, भय, भूख, प्यास सबही के ।

मनुज देह सुर साधु सराहत, सो सनेह सिय पी के ॥२॥

सूर, सुजान, सुपूत, सुलच्छन गनियत गुन गुरुआई ।

विनु हरिभजन इनाहन के फल तजत नही करुआई ॥३॥

कीरति, कुल, करतूति, भूति भलि सील, सरूप सलोने ।

तुलसी प्रभु अनुराग रहित जस सालन साग अलोने ॥४॥

भावाथ—जिसकी श्रीरामचन्द्रजी से प्रीति नहीं है, वह इस ससार में गधे, बुत्ते और सूकर के समान वृथा ही जीवन बिता रहा है (मानव ज म रामभक्त होने से ही साधक हो सकता है अन्यथा नहीं) ॥१॥

या तो काम, क्रोध अहंकार लोभ, निद्रा, भय भूख और प्यास का सभी को अनुभव होता है पर जिस कारण से देवता और सतजन मनुष्य-शरीर की प्रशाना करते हैं, वह तो श्रीसीतानाथ रघुनाथजी का प्रेम ही है ॥२॥

कोई शूरवीर, चतुर, माता पिता की आना पालन करनेवाला सुपुत्र, सुन्दर लक्षणवाला तथा महान् गुणों से युक्त भले ही हो, परन्तु यदि वह हरिभजन नहीं करता, हरिपरायण नहीं है, तो वह इन्द्रायण के फल के समान है, जो देखने में सुन्दर होने पर भी अपना कड़वापन नष्टा त्यागता ॥३॥

कीर्ति, उच्चवश, धन्धो करनी, बड़ी विभूति, शील और लावण्यमय स्वरूप होते हुए भी यदि उसका प्रभु रामचन्द्रजी के प्रति प्रेम नहीं है, तो ये सारे सद्गुण ऐसे हैं, जैसे बिना नमक की दाल या साग भाजी ॥४॥

गद्वाथ—गुरुआई = भारीपन, धन्धपन, इनाहन = इन्द्रायण, एक कड़वा फल । सलोने = लावण्यमय, सुन्दर ।

विद्ये—(१) 'तो घर गाही—हरि विमुक्त जोय वो गुण्य यही कथा,  
 गुणा और गुणर मे की गई है । 'गया इगिण वि यह मनुज-ओय का कथा भार  
 ही हो रहा है उग विद्या बुद्धि का वि गुण भी कथा गरी विद्या । 'बुद्धा इगिण  
 वि विद्या ही कारण वि गुण भूकता रहता है या विद्या म मल रहता है, गुणर के  
 या पर सार टपकता है । गुणर इग कारण वि यह विषयकपी मय प्रमय उय  
 गुण ताया रहता है ।

(२) 'काम पीने—यह इग रसोय का छायागुवा मानुम होता है —

आहार निश्च भय-भयुनं च, सामा-पमेनन् पणुभिर्गिराणाम् ।

पमोहि तेवामपित्री विनोयो पमोहरीना पणुभि समाना ॥

। १७६

राख्यो राम सुस्वामी सो नीच नेह ३ नातो ।

एते अनादर है तोहि ते न हाता ॥१॥

जीवे नये नाते नेह फोवट फीने ।

देह के दाहक गाहक जो वे ॥२॥

अपने अपने को मय चाहत नीको ।

। मूल दुहू को दयालु दूल्ह सी को ॥३॥

जीव को जीवन, प्राण को प्यारो ।

। सुख हू को सुख राम सो विसारो ॥४॥

कियो करेगो तोसे खल को भला ।

। ऐसे सुसाहब सो तू कुचाल क्यों खलो ॥५॥

। सुलसी संरी मलाई अजहूँ झूमै ।

राठउ राठत होत फिरिवै जूझै ॥६॥

। भावाय—रे नीच ! तूने श्रीरामचन्द्रजी-सदृश सुन्दर स्वामी से न तो प्रेम रखा  
 और न नाता ही जोडा । इतना अनादर करने पर भी उन्होंने तुझे नहीं त्यागा । तूने  
 उन्हें छोड़ दिया, भुला दिया, पर वे जनवात्सल्य के नाते फिर भी तुझसे भलग नहीं  
 हुए सदा तेरे साथ ही रहे ॥१॥

। तूने नय-नये नाते और नया-नया प्रेम जोडा जो सब मय। और नोरस थे  
 (उन सबसे कल्याण होना तो दूर रहा बरन) वे (उठते) तेरे शरीर को जलानेवाले  
 और प्राणा के गाहक थे (मियजनों के न भिन्नने अथवा मिलकर विद्युद जाने से प्राणान्तक  
 दुख होता है) जीव उनके कारण और भी ससार-बधन म दिन दिन जकडता जाता  
 है ॥२॥

अपना और अपनी का तो सभी भला चाहने है किन्तु दोना के कल्याण के मूल  
 एक श्रीजानकी-विल्लम ही है ॥३॥

वे जीवा के जीवन ह, प्राणा के प्यारे ह और सुख के भी सुख हैं अर्थात् जितने

भी मुझ माने जा सकते हैं, उनके मूल कारण हैं। ऐसे श्रीरामचन्द्रजी को तूने मुला दिया। ॥४॥

जिहोने तेरा सदा भला किया और प्रागे भी जो भला हो करगे, एम मने स्वामी के साथ तू ऐसी कुचालें क्यों बना ? ॥५॥

हे तुमगी यदि तू अब भी समझ जाय तो तूरी बन सकती है, क्याकि बार-बार लड़ने से कायर भी शूरवीर हो जाता है। (साराश यह कि अब भी चेत जा, पुण्याद कर, तेरी सारी विभर्द्धी बरनी बन जायगी। निराश होने का कोई कारण नहीं) ॥६॥

शब्दाथ—हातो = अलग हुमा। फोफट = बेकाम। सो = सीताजी। राउउ = कायर भी। राउत = बीर।

विशेष—(१) जोरें फीके—स्त्री-पुत्रादि के साथ सम्बन्ध जोडना यथे इसलिए है कि वे उपस्थित मृत्यु से नहीं बचा सकने, बल्कि उनके लिए जितने सुकम-कुकम किए उन सभी का पत्र भोगना पडेगा। अतएव उनके साथ का सम्बन्ध बृथा है। कहा है—

‘गुण्य स स्यात् स्वजनो न स स्यात् पिता न स स्यात्जननी न सा स्यात् ।

दध न तत स्यात्नृपतिन स स्यात्नभोवपेद्य समुपेतमृत्युम ॥

और फीके तो है ही, क्याकि जो नित्य नहीं है परिवर्तनशील है, उनमें सरसता और ध्यान कहीं ?

(२) जीव—प्यारो—रामचरितमानस में भी यही कहा है—

प्राण प्राण की जीवन जी की

गीता के ‘पुरुषस्त्वयस्तदुच्यते क अनुसार आत्मा का नियन्ता कोई प्रय है है। वही जीव का जीव आत्मा का आत्मा प्राण का प्राण है।

(३) प्राण—प्राण पाच प्रकार के माने गये हैं—हृदय में प्राण गुदा में अपान, नाभि में समान कण्ठ में उदान और सब शरीर में यान। इन सबका संचारक परमात्मा है।

८ — — — १७७

जो तुम त्यागो गम, ही तो नहीं त्यागो।

परिहरि पाय काहि अनुरागा ॥१॥

सुखद सुप्रभु तुम सो जग माही।

सबन नयन मन-गोचर नाही ॥२॥

हैं जड जीव, ईस रघुगया।

तुम मायापति, ही बस माया ॥३॥

हीं तो कुजाचक, स्वामि सुदाता।

हीं कुपूत, तुम ही पितु-माता ॥४॥

जो पै वहुँ कोड पूछन बानो।

तो तुलसी-विनु मोल बिकातो ॥५॥

भाषा—हे रामभो ! घान यदि मुझे त्याग ॥२०॥ ता भो म भावतो त्यागन घाना त्हे क्वादि घावन चरणा को ताडकर म घोर विघने घाय करता प्रम जोडू ? ॥१॥

घावन समाप्त गुण दावाया गुणर रक्षामो (आम तज) इन मंगार में न जाना ते सुना ह न घावा स देगा है, घोर न मन में अनुमान म हो काई दुखरा घावा है ॥२॥ ह रघुनाथो ! म जड जीव हूँ घोर घाव विभु हूँ ईश्वर हूँ घाव माया के स्वामी हूँ (माया घावने अधीन ह) घोर म माया व यरा होकर रहना हूँ । (माया के घावने रहना हूँ अतएव विकारी हूँ) ॥३॥

म एक भिरामगा हूँ घोर घाव बड हो उगर रक्षामो हूँ । म आनका कुतूह हूँ घोर घाव मर माता पिता हूँ । भाव यह कि म कमा घावतो घावा नही मानना, तो भी घाव सग मरा बालन पाणख किया करत ह ॥४॥

यदि कही काई भी मरी बाल पूछता (मेरी जरा भी झुजत करता) तो मे बिना हो मात (उपके हाथ में) धिक् जाता । (पर किसी न मुझ रखा हो तहा क्वादि पौरुषहीन हूँ, मुझ ररकर कोई करगा क्या ? मरा तो यन्ि काई प्राइक ह, तो एव घावही ह भावही मझ तरोइकर भवना दाम बना लीजिए) ॥५॥

गङ्गाय—गाकर = इन्द्रियो के विषय । वातो = जात ।

विनय—(१) हो जड बस माया — स्पष्टत जीव और ब्रह्म का भिन्नत्व यहाँ सिद्ध किया गया ह । जीव को जड इमलिए कहा गया ह कि मायावृत आवरण के कारण सद्सत ज्ञान का उसमें अभाव रहता ह । अणुत्व होन स उसका ज्ञान परिमित रहता ह । यह स्वगुरूप से अज्ञत के सम्बन्ध में कुछ भी नही सोच सकता अतएव वह चतय होत हुए भी, जड ही ह । इसके विरुद्ध परमात्मा ईश ह, विभु ह, अज्ञत ज्ञानसंपन्न है । माया के अधीन होन से जीव में सुख-दुख आदि द्वन्द्व रहत ह

विभु-स्वरूप ब्रह्म माया अपरिच्छिन्न परमात्मा द्वन्द्व से विमुक्त है । तत्त्वत ब्रह्म का अशस्वरूप (ममवाशो जीवकोके —गोता) होने के कारण जीव का ब्रह्म के साथ तात्काम्य अवश्य ह किन्तु माया के प्राबन्ध से जो माया ब्रह्म के अधीन ह, जीव अपना 'स्वरूप' भूल बठा ह । यन्ि माया मिथ्या न होतो, तो ब्रह्मस्वरूप जीव पर उसका कुछ भी प्रभाव न पडता । पर एसा नही ह ।

(२) 'जो ब्रिकता'—जुनिया भर म घूम फिर चुकन के अन तर आपके द्वार पर आया ह । यही एसा एक बाजार ह जहाँ रहो से भी रही चीख बिक जाती ह । और यह दरवार दीन को आवर यह भी सुना था, इसलिये मुझ पूरा विश्वास हो गया कि यहाँ अवश्य ही मरा आर होगा ।

१८८

भयेहैं उदास राम, मेरे आस रावरी ।  
आरत स्वारथी सब कहै वावरी ॥१॥  
जीवन को दानी धन कहा ताहि चाहिए ।  
प्रेम नेम के निवाहे चातक सराहिए ॥२॥

मीन तें न लाभ लेस पानी पुन्य पीन को ।  
जल विनु थल कहा मीचु विनु मीन को ॥३॥  
बडे ही को ओट, बलि, बाचि भाये छोटे है ।  
चलत खरे के सग जहा-तहा छोटे हैं ॥४॥  
यहि दरवार भलो दाहिनेहूँ-वाम को ।  
मोको मुभदायक भरोसो राम नाम को ॥५॥  
बहुत नमानी हूँ है हिये नाथ, नीका है ।  
जानत कृपानिधान तुलमी के जी की है ॥६॥

भावाय—हे रघुनाथजी ! आप भले ही मेरी धार में उदासीन हो जायें, पर मुझे तो आपकी ही आशा है । जो लोग दुखों अथवा स्वार्थी होते हैं, वे पागला की-सी बातें किया करते हैं, विचारकर धाते नहीं करते (यही दशा मेरी है) ॥१॥

जो मेघ पानी का दान करता है मार प्राणियों की रक्षा करता है, उस किस वस्तु की कमी ? किस प्रेम का (घटल) नियम निवाहने के कारण पपीहे की ही प्रशंसा होती है । (भाव यह है कि मेघ पपीहे को किसी स्वायत्त स्वाति का जन नहीं देता केवल उसका प्रेम-नेम देखकर ही वह ऐसा करता है, किंतु उसका प्रेम इतना बड़ा होता है कि देनेवाले की तो तारीफ नहीं हाती बरन् लेनेवाले पपाहे की ही हाती है ॥२॥

पवित्र और पुष्टिकारक जन को मछली से लक्ष्मण भी लाभ नहीं, पर मछली के लिए, जल को छाड़कर, वही ऐसा भी कोई स्थान है जहां वह अपने प्राण बचा सके ? (तात्पर्य यह है कि वह जन को छाड़कर वही भी जीवित नहीं रह सकती, जल पर उसका अगाध प्रेम है और इसी कारण से उनकी प्रशंसा हाती है) ॥३॥

म आपकी बलया लेता हूँ देखिए, बडा के सहारे ही (सदा) छोटे बचते भाये हैं, जहाँ-तहाँ खर सिक्कों के साथ खोटे भी चल जाते हैं । (भाव यह कि आपके सच्चे भक्त असली सिक्के हैं, और मैं एव पाखण्डी नकली सिक्का, किंतु आपके नाम को धार से तथा सतसग से मैं भी उनके साथ समार सागर पार कर जाऊँगा ॥४॥

आपका यह दरबार कुछ ऐसा है, कि यहां भन्ने-बुर सभा का मला होता है, भले ही कोई आपके अनुकूल है या प्रतिकूल । (जब विभोषण सम्मुख होने से तथा रावण विमुख होने से मुक्त हुआ) । हे भाय ! मुझे तो कवन आपके श्रेयस्कर नाम का ही बल भरोसा है ॥५॥

कह देने से बात बिगड़ जायगी, (क्योंकि वाक्या है यात हूँ स्वार्थी हूँ) इसलिए मन को मन में ही रखना अच्छा है फिर आप तो तुनसी क जो की, हे कृपानिधान, सब जानते ही हैं । क्योंकि आप अन्तर्दामो हैं, आपसे कुछ छिपा नहीं ॥६॥

शब्दार्थ—जीवन=पानी, जन । पीन = पुष्ट । मीच = मीत । बाचि भाये = बच भाये । सरा = चोखा, अमना । दाहिना = अनुकूल । वाम=प्रतिकूल ।

विनय—(१) 'आपका सराहिए—उत्तरता तो मेघ का है, परन्तु प्रशंसा चातक की की जाती है । इसी प्रकार मुझे निहाल तो आप करेंगे, पर तारीफ होगी मेरी । यह



घायली घाय भक्ति की महिमा : और सभी घायला घायली कृपा से हा भिन्नती है ।  
 पतएय जोध म जो कुछ भा गौरव ह उमके भूतारण भाग हो ह ।

(२) "अनु विनु भाग को"—यथा—

'सर सुने छो उड़ और सरति समाहि ।

घोर मीन बिनु पग के, बट्ट रक्षीम कहे जाहि ॥'

इसी अनय निष्ठा के कारण मीन की सरादा होती है । इसी प्रकार घायली छोड़कर मुझे वही भो ऐसा कोई ठौर ठिकाना नहीं जहाँ मैं बरान, बान का प्राय न बन सकूँ । रहता तो मैं स्वायवश घायली शरण में हूँ पर दग 'आयना' कहा जाता है । और मेरी प्रशंसा के पुन बांधे जात ह । इसे घायला कहते है और मेरी तारीफ़ करते हैं । यह घायली ही कृपा ह ।

— ११

(३) बढ छोटे ह—जसे भजामत घोग से घायका गरामण मह नाम पुकारकर यम-यातना से ब्राण पा गया ।

(४) 'कहत नसानी हूँ ह'—क्योंकि भारत स्वार्थी सब कह बात बाहरा ।'  
 'मान कहीं सब स्वार्थ हेतू । रहत न आरत के चित धेतू ॥

[रामचरितमानस

सथा—

'कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतनाचेतनेषु । [नेपदूत

राम विलासत

१७६

कहा जाऊँ, कासी कहो, को सुनै दीन की ।

त्रिभुवन तुही गति सब अगहीन की ॥१॥

जग जगदीस घर घरनि घनेरे है ।

निराधार के अधार गुनगन तेरे हैं ॥२॥

गजराज-नाज खगराज तजि धायो को ।

मोसे दोष कोष पोसे तोसे माय जायो को ॥३॥

मोमे कूर कायर कुपूत कौडी आध के ।

किये बहुमाल तै करैया गीघ आध के ॥४॥

तुलसी की तेरे ही बनाये, बलि वनैनी ।

प्रभु की विलास अब दोष दुख जाँगी ॥५॥

११ ११

..... —कहाँ जाऊ ? किससे कहू ? कौन इस (साधनहीन) दीन की सुनगा ?  
 जिसे कही ठौर ठिकाना नहीं, जो सब तरह स नि सहाय है उसकी गति तीनों लोको में एक तू ही ह । (केवल तू ही उसे शरण में ले सकता ह) ॥१॥

११ ११

। सो तो दुनिया में घर घर जगदीश भरेपते हैं (सभी अपने-आपको कहते ह, कि दुनिया के, मालिक हमी हैं ।) पर जिन कोई सहारा नहीं उसने लिए तो एक तरे ही

गुणों का आधा है। (भाव यह, तेरे ही गुणों का गानकर ससार विद्यु का वह धार करता है) ॥२॥ ।

गजेन्द्र को छुड़ाने के लिए गरुड को सवारी छोड़कर भी कौन दौड़ा था ? जिसने मुझ-जैसे महान् अपराधी का भी पालन-पोषण किया, ऐसा एक तुम्हें छोड़कर किस जननी ने जना है ? (जिसी माई के साल में यह बलबूता न था, जो मुझ-सरीले धार पातकी का उद्धार कर देता) ॥३॥

मुझ-जैसे हूट, कायर, कुपूत और आधी बौड़ी की कीर्तनवाला को भी हे जटापु के श्राद्ध करनेवाने ! तूने बहुमूल्य बना दिया (मुझे पहले बाईं फूटी बौड़ी के बराबर भी नहीं समझता था, पर आज, तेरी कृपा से, मैं जगत में पूज्य माना जाता हूँ) ॥४॥

बलिहारी ! तुलसी की (बिगड़ी हुई) करनी तेरे ही बनाये बन सकेगी । तरो विलम्बरूपो माता दोष और दु खरूपी सतान ही जनेगी । भाव यह, कि यदि तूने मुझ निहान करने में देर लगाई, तो फिर मुझे दाप और दु ख के सिवाय और मिलेगा ही क्या ? (धत तू शीघ्र ही मेरी बिगड़ी करनी को सुधार दे) ॥५॥

शब्दाय—प्रगहीन = नि सहाय । खगराज = गरुड से तात्पर्य है । दोषकोप = अपराधी का भाण्डार महान् अपराधी । पोषे = पोषण किया, पालन किया । जायो = जना, पैदा किया ।

विशेष—(१) प्रगहीन—अप्रगहीन पर यह दोहा बहुत ठोक पटता है—

‘नहि विद्या, नहि बाहुबल, नहि खरचन को दाम ।

‘तुलसी’ मोसे पतित की, तुम पति । राखो राम ॥’

(२) ‘गजराज’ धाया को—देखिए, यह भावपूर्ण कवित्त—

‘दीन भयो गजराज, हीन भयो बल हूँ ते,

इति गयो मान-देरयो हरी-हरी’ करिके ।

‘बड़े प्रभु इमा-सग पीत-पट राते रग,

सोये उठि धाये नाय ननु आये भरिके ॥

आघोरत धाये नाय चक सुदसन लिये

काटि दोनो प्राहफद जरी-जरी करिके ।

‘तुलसी’ जिलोकी-नाय, भक्तनि के मदा साथ,

गरुड छाडि धाये नाय ‘करी-करी करिके ॥’

(३) ‘मोक्षे बुर बहुमोन—कवितावली रामायण में इसीका ज्यों का त्यों दोहराया गया है—

‘राम नाम ललित ललाम कियो लाखनि को,

बड़ी कूर कायर कुपूत बौड़ी आध को ।’

‘वारक विलोकि, अत्रिलि, कीजे मोहि श्रापनो ।  
॥ ॥ ॥ रायग दसरथ के तू । उचपन-थापनो ॥१॥ ॥’

साहित्य सरनपात्र सरल न दूगगा ।  
 तरा नाम लत ही सुरेत होत ऊमरो ॥२॥  
 वचन करम तर मर मन गढे हैं ।  
 देखे गुन जात में जहाा जन बडे हैं ॥३॥  
 कौन किया समाधान सनमान मीला का ।  
 भुगुनाय सो रिपी जितैया कौन लौला का ॥४॥  
 मातु पितु-बधु हित लाव बदपाल को ।  
 बाल को अचल, नत करत निहाल को ॥५॥  
 सप्रही सनेह्यम अघम असाधु को ।  
 गोध सवरी को वही करिहै सराधु को ॥६॥  
 निराधार को अघार दीन को दयातु को ।  
 मीत कपि बेबट - रजनिचर भातु को ॥७॥  
 रक, निरगुनी, नीच जितन निवाज है ।  
 महागज ! सुजन-समाज ते विराज है ॥८॥  
 साची बिरुदावली न बडि कहि गई है ।  
 सीलसिधु ! ढील तुलसी की वेर भई है ॥९॥

नावाय—हे नाय ! बलिहारी ! एक बार मरी और देखकर मुझे भी अपना लीजिए । है श्री दशरथ-नन्द ! आप उलड हुए जीवो को भी फिर से जमानवाल ह । (जिनका सचस्व हरण हो चुका उन्हें भी उनक पद पर पुा स्थापित करनेवाल हैं ।) ॥१॥

आपक समान कोई दूसरा शरणागता का पालनवाला सबसेमय स्वामी नहीं ह । आपका नाम लत ही ऊमर खत भी उपजाऊ हो जाता ह । (भाव यह कि जिनके पूव सस्कारो म सुख का कही नाम भी नहीं था वे भी आपके नाम के प्रभाव से भवित आनन्द पान आदि धाय से सम्पन्न हो जात ह) ॥२॥

आपके वचन और कम मर मन में जम गये हैं । (यह दढ विरवास हो गया ह कि शरणागता का उदार और दीनो पर दया करना आपका स्वभाव ह) । और मने उन लोगों को भी देख सुन और समझ लिया ह जो दुनिया में बड कहे जात हैं ॥३॥

उनमें मे किसन पापाणी अहल्या का शाप दूर कर उसे शान्ति प्रदान की, और किसने सहज ही परशुराम जने महात्राधी ऋषि को जीत लिया ? ॥४॥

माता पिता और भाता के लिए किसन लोक और वन की मर्यादा का पालन किया ? कौन अपने बचना पर अडिग रहा ? और प्रणाम के करते ही प्रणत को किसने निहाल कर दिया ? ॥५॥

प्रेम के अधीन हाकर किसने नीचो और दुष्टों को इबट्टा किया अपनाया ? और मोघ और शवरी का पिता माता की तरह और कौन आद करवा ? ॥६॥

जिनका कही भी कोई धाधय नहीं, उनका आधार (सिवा आपके) कौन है ? दोनों पर कृपा करनेवाला कौन है ? और बानर निपाद, राक्षस तथा रीछों का मित्र कौन है ? (सिवा आपके दूसरा कौन हा सकता है ?) ॥७॥

हे महाराज ! आपन जितने दोनों, मूर्खों और नाचा पर कृपा की है व सब साधुमा के समाज में आज मुशामित हो रहे हैं, सन्त-समाज में उनकी भी अच्छी मणना हो रही है ॥८॥

यह आपकी सच्ची-सच्ची बढाई कही गई है, (एक अक्षर भी) बढाकर नहीं कहा है । किन्तु, ह शील के समुद्र । तुलसीदास के ही लिए एतना अधिक विलम्ब क्यों हा रहा है ? (यही एक आश्चय है । आपकी विरदावली के अनुसार तो अब तक इसकी भी सुनाद हो जानी चाहिए थी ।) ॥९॥

विशेष—(१) 'उपपा थापनी'—जसे सुयोव और विभीषण का, जो अपने अपने भाई के साथ द्राह करने से जब से उखड चुके थे फिर स स्थापित किया, उन्हें रायपद दिला दिया ।

(२) सीता — शिला का अपभ्रंश है ।

(३) 'भगुनाथ सा — सा (सरीला) परशुरामजी के अपरिमित बल, धीय और तेज का चोखक है ।

(४) 'न बडि कहि गई है'—इस कथन में अत्युक्ति या कवि चमत्कार लेशमात्र भी नहीं है । यह हृदय के सच्चे उद्गार, है ठकुरसाहायी नहीं है ।

१८१

बेहू भाति कृपासिन्धु मेरी श्रोर हेरिए ।

भोको श्रोर ठौर न, सुटव एक तरिए ॥१॥

सहस सिला तें अति जड मति भई है ।

थासो कही, कौन गति पाहनहि दई है ॥२॥

पद राग-जाग चहो कौमिक ज्यो कियो हौं ।

कलि-मल खल देखि भारी भीति भियो हौं ॥३॥

करम कपीस वालि बली त्रास त्रस्यो हौं ।

चाहत अनाथ-नाथ । तेरी बांह बस्यो हौं ॥४॥

महामोह - रावन विभीषन ज्यो ह्यो हौं ।

नाहि तुलसीस ! नाहि तिहूँ ताप तयो हौं ॥५॥

भाषाय—हे कृपासागर ! किसी भी तरह मेरी श्रोर दबा ता । मेरा कोई श्रोर निवाना नहीं है, एक तुम्हारा ही पक्का बामरा है (यदि तुम्हीं ने छोड़ लिया, ता फिर कहीं, किमका हाकर रूगा ?) ॥१॥

मेरी बुद्धि हजार शिनामा से भी जट हा गई है । (अप म उय चतय करने के लिए तुम्हें धोत्कर) और किसम कडू ? पयरीं का किमने मुक्त किया है । तुम्हीं ने, बस हतने ही से समझ लो । जसे तुमने एक पागणो का उदार कर दिया था उसी प्रकार मेरी जट बुद्धि का भी चतय और शुद्ध बना दो ॥२॥

जिस प्रकार महर्षि विश्वामित्र ने (तुम्हारे संरक्षण में निर्विघ्न) यज्ञ किया था, उसी प्रकार मैं भी एक यज्ञ करना चाहता हूँ। वह यज्ञ है तुम्हारे चरणा में भक्ति-ज्ञान करना। किन्तु बलि के पाप-पत्नी दुष्टा को देखकर मैं अत्यन्त डर-गया हूँ (कि कहा ये सारा किया-कराया नष्ट भ्रष्ट न कर दें जैसे मारोच, ताडका आदि राक्षस विश्वामित्र का यज्ञ विध्वस्त कर दिया करते थे) ॥३॥

कुटिल कमरूपी बन्दरो के बलवान राजा बालि से बहुत डर रहा हूँ, सा द्वेषनाथों के भाव। जैसे तुमने बालि को मारकर सुग्रीव को अभय कर दिया था, उसी प्रकार मैं भी आपकी बाहु की छाया में बसना चाहता हूँ मुझे भी कुटिल कर्मों से बचाकर अपना लो ॥४॥

जस, रावण ने विभीषण का मारा था, उसी प्रकार मुझे यह महान मोह मार रहा है। हे तुलसी के स्वामी! मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो मैं सँसार के तीना तापा से जला जा रहा हूँ ॥५॥

गदाय—टेक—सहारा बल। पद राग—चरणों में अनुराग। जाग—(यामें) यज्ञ। भियो हों—डर गया हूँ। तया हों—जल रहा हूँ।

विशेष—(१) तिहूँ ताप—दैहिक, भौतिक और दैविक।

५५५५

। १८२ —

नाथ ! गुनगाय सुनि होत चित चाउ सो ।  
राम रीझिबे को जानौ भगति न भाउ सो ॥१॥  
करम, सुभाउ, कौल ठाकुर न ठाउ सो ।  
सुधन न, सुतन न, सुमन मुझाउ सो ॥२॥  
जाचौ जल जाहि कहै अमिय पिआउ सो ।  
वासो कहीं बाहु सो न बढत हिआउ सो ॥३॥  
बाप ! बलि जाउँ आपु करिये उपाउ सो ।  
तेरेही निहारे परे हारेहू मुदाउ-सो ॥४॥  
तेरेही सुझाये सूझै अमुझ सुझाउ सो ।  
तेरेही बुझाये बूझै अबुध बुझाउ सो ॥५॥  
नाम अबलबु अबु दीन मीन राउ सो ।  
प्रभु सों बनाइ कहीं, जीह जरि जाउ सो ॥६॥  
सब भाँति विगर एक सुबनाउ सो ।  
तुलसी सुमाहिबहि दिया है जनाउ सो ॥७॥

भाषार्थ—हे नाथ ! आपकी गुणावली को सुन-सुनकर मेरे चित्त में चाप-सा होता है किन्तु हे रघुनाथजी ! जिस भक्ति और भावना से आप प्रसन्न होते हैं, उसे मैं नहीं जानता (यदि जानता होता, तो मुझे आपसे गुर्दा क' छान्निष्य से परमानन्द प्राप्त न हो गया होता ?) ॥१॥

F - : बारण कि न तो मेरी करनी अच्छी ह, न स्वभाव उत्तम ह और न समय ही अनुकूल ह (कनियुग ह), न कोई मानिष ह, न कही कोई ठौर ठिकाना ह, न (साधन रूपी) धन ह, न नीरोग शरीर ह (कि जिसमे योग्याय आदि क), न निरचल चित्त है, और न लम्बी आयु ही ह। (साराश, भगवत्प्राप्ति का एक भी साधन मेर पास नहीं ह। सब प्रकार स बिना साधार का हैं) ॥२॥

जिससे म, प्यास के मारे पानी माँगता हूँ, वह उलटा मुझमे ही अमृत पिलाने के लिए कहता ह। म अपने बात किससे कहूँ ? कहन की किसी स हिम्मत नहीं पडती (मन की मनु म ही रखता ह) ॥३॥

हे पिताजी ! बलिहारी ! आप ही कुछ ऐसा उपाय कर दीजिए (कि जिससे यह सारा अजमजम दूर हो जाय) क्योंकि आपके दख देने मात्र से हारने पर भी अच्छा दाँव सा हाथ लग जाता है। बड-बडे पापी भी आपके कृपा से बकुष्ठ-धाम के अधिनारी हो जाते हैं ॥४॥

आप यदि सुभा दें तो अदृष्ट वस्तु भी देखने लगती ह, और आपके समझ देने पर अगोचर वस्तु भी अनुभव में आ जाती ह। अब जो मेरी समझ में नहीं आ रहा ह, उस आप ही समझा दीजिए ॥५॥

देखिए आपके नाम का जा साधार ह, वही तो पानी ह और उसम रहनेवाला मैं दीन मीनों का राजा ह। बडे भारी मत्स्य के समान हूँ, जो मैं अपन स्वामी स कपट शरी घात कहता होऊँ तो यह जीभ जल जाय ॥६॥

मेरी करनी सभी प्रकार से विगड चुकी ह, केवल एक ही अच्छी बात बनी हुई ह। वह यह कि तुलसीदास ने अपनी करनी अपने मालिक को बदन पर जना दी है ॥७॥

गदाय—ठाकुर=मालिक । सुपाउ=(सुभायु) बडी । उम्र । अमिय=अमृत । हिमाउ=साहस । अरुम=जो समझ में न आय । जीह=जीभ । जनाउ=सूचना ।

विशेष—(१) करम सुभउ—एक तो कुटिल कर्म फिर नीच स्वभाव, जिस पुर कनियुग ! सब तरह स प्रनाप भी हूँ, कोई धनी धोरी नहीं, ठौर ठिकाना नहीं, मुहावर्गाल, आजीवन रोगी और चचल चित्त ! यह भी नहीं, कि आयु लम्बी हो, जिसने कुछ-न कुछ साधन बन जाय। मेरा उपचार क्या कर हो सकता ह ?

‘ग्रह-ग्रहोत् पुनि बात बस तापर बोछी मार ।  
ताहि पियाइय बावनी कही धीन उपचार ॥’

(२) जाँचो पिमाउ सो—तात्पर्य यह ह कि जब मैं किसी से मूल-प्यास के मारे कुछ माँगता हूँ, तब वह मुझे सिद्ध महात्मा समझकर-मुझमे उलटा धन-सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र आदि माँगता ह। यह लोकमायता मुझे बहुत खूब रही ह, क्योंकि—

‘लोकमायता अनल सम, कर तप-कानन दाह ।’

(३) ‘तेरे हा सुदाउ-सो’—मरतजी ने भी यही कहा ह—

‘हारेहु खेल जितायेहु मोही ।’

[रामचरितमानस

(४) ‘मीन राउ बडा मत्स्य तानाव में नहीं रह सकता । उसका निवास

स्थान तो समुद्र ही ह । अतः म केवल राम नामटपी महाप्रमुद्र में ही आनन्द कल्लोल कर सकता हूँ अ यत्र नहीं ।

### राम जासावरी

१८३

राम प्रीति की रीति आप नीके जनियत है ।  
 बड़े की बडाई छोटे की छोटाई दूरि करै,  
 ऐसी विरुदावली, बलि वेद मनियत है ॥१॥  
 गीघ को कियो सराध, भीलनी को खायो फल,  
 सोऊ साधु-सभा भली भाति मनियत है ।  
 रावरे आदरे लाक वद हूँ आदरियत,  
 जोग ग्यान हूँ ते गरु गनियत है ॥२॥  
 प्रभु की कृपा कृपालु कठिन कलि हूँ काल,  
 महिमा समुझि उर अनियत है ।  
 तुलसी पराये बस भये रस अनरस,  
 दीनबन्धु । द्वारे हठ ठनियत है ॥३॥

भावार्थ—हे श्रीराम नी ! प्रीति की रीति आप ही भजाभाति जानने ह । बलि-हारी ! वेदा ने आपकी विरुदावली इस प्रकार मानी ह कि आर बड़े का बरुपन (अभिमान) और छोटे की छोटाई अथवा दीनता को दूर कर देते ह ॥१॥

आपने जटाधु गीघ को पिण्डदान दिया और शवरी के फन (बेर) खाये । यह बात भी सत समाज में अचञ्छा तरह बखाना जाता ह । जिन किसी न भी आपसे आदर सम्मान पाया उसका लोक और बेत दानो ही आदर करते ह । आपका प्रेम योग और ज्ञान से भी बड़ा माना जाता ह ॥२॥

हे कृपालु ! आपकी कृपा से इस करान कतिज्ञान में भी आपकी महिमा को समझकर हृदय में धारण करता हूँ । यद्यपि तुलसी पराधीन अथवा विरथों के अधीन होकर आपके प्रेम से अनरस अथवा आपके प्रमानन्द से विनुव हूँ रहा ह तथापि हे हर ! वह आपके द्वार पर अडा बडा ह (बिना आरका कृपा-दृष्टि पाये वह हटने का नही) ॥३॥

गङ्गाय—सराध = आदर । मनियत ह = कहत ह । गरु = भारी ।

विनय—(१) प्रीति—प्रीति रानि के छह प्रकार ह—

‘दवानि प्रत्यूह्यति गुह्य यस्मिन् च पृच्छति ।

भुङ्क्ते भोजयते च यः पशुविध प्रीतिवसणम् ॥’

(२) गीघ—जटाधु का उत्तरक्रिया पर कहा ह—

दगरथ त दसगुन भगनि सहिद तामु करि काज ।

सोचन यधु समेन प्रभु कृपासिधु रघुराज ॥’

(३) 'भीलनी'—शायरी ने श्रीराम का इस प्रकार अनुभव आतिथ्य किया—

पद पकजात पदारि घुजे पय खम विरहित भये ।  
फल फून अकुर मूल घरे सुघारि भरि दीना नये ।  
प्रभु खात पुलकित गान, स्वात्र सराहि आदर जनु लये ।  
फल चारिहूँ फलचारि दे परचारि फन सबरी दये ॥

(४) 'रावरे आदरियत — कहा ह—

'जापर कृपा राम की होई । ता पर कपा कराहि सब कोई ॥

[रामचरितमानस]

१८४

राम - नाम के जपे जाइ जिय की जरनि ।  
कलिकाल अपार उपाय ते अपाय भये,  
जैसे तम नासिवे को चित्र के तरनि ॥१॥  
वरम - कलाप परित्ताप, पाप साने सब,  
ज्यो सुफून फूने तरु फोकट फरनि ।  
दम्भ, लोभ, लालच, उपासना विनामि नीके,  
सुगति साधन भई उदर - भरनि ॥२॥  
जोग न समाधि निरुसाधि न विराग ग्यान,  
वचन विसेप वेप, कहूँ न करनि ।  
कपट कृपय कोटि, कहनि रहनि सोटि,  
सकल मराहूँ निज - निज आचरनि ॥३॥  
मरत महेम उपदेम हूँ बहा करत,  
सुरमरि तीर रामी धरम - धरनि ।  
राम नाम का प्रनाप, हर कहूँ, जपे आपु,  
जुग - जुग जान जग वेदहूँ वरनि ॥४॥  
मति राम-नाम ही सो, गति राम-नाम ही सो,  
गति राम - नाम ही की विपति-हरनि ।  
राम-नाम सो प्रतीनि प्रीति रागे कबहुँक,  
तुलसी ढरैगे राम आपनी ढरनि ॥५॥

भावार्थ—मन का जन्म राम-नाम के जन्मे से ही जाती है (मन शान्त होता है) कलियुग में और जितने कुछ साधना है व एसे व्यर्थ हो जाने है, जब अधेरा दूर करने के लिए चित्रनिमित्त मूय ॥१॥

कर्मों का तो समूह ज्ञान-मूह है । (कर्मबाण्ड शास्त्रा म अगाध भरा पटा है) परन्तु वह सब दुःख और पाप में बना हुआ है । (पाप-मत्तान के कारण एक भी उत्तम विधि विहित पूण नहीं हो पाता) । कर्मों का करना ठेका है जब किसी वृत्त में गड़े ॥



गुप्तर पून फरें, पर एन लमें ही गही । भाय यह है वि यज्ञ, याग यात्रि मापन दगन  
गुनने म ता मुताप्य धीर सरल जात पन्त ह पर अत में दु गाम्य हा जात ह जिमने  
फन बुद्ध भी हाय गहा लगता । पागण्ड साम धीर साधन ग उपागना वा शीप कर  
रिया ह । धीर मोग पट भरन वा साधन हा गया है ॥२॥

त तो योग बनता ह न समाधि हो उपाधि रहित साधनी है (उममें भी सकल्प  
विकल्प उठा करत ह ) यशस्य धीर गान लम्बी चौडी धान मारने धीर ऊरु वर  
भूपा के लिए ही रह गय है करनी बुद्ध भी नहीं बोरी कथनी हा ह । कपट भरे करोडा  
धुमाग चल पन् ह । कहनी धीर रहनी सभी साटा हो गई ह । सभी धपा प्रपत धाव  
रखी की डीग हावते ह सभी धपने वा मवध्रष्ट समझ रह ह ॥३॥

शिवजी गगा वे तट पर बाशी की पवित्र भूमि पर मरत समय जीव को क्या  
उपदेश देते ह ? वे श्रीराम-नाम के प्रताप वा वगन करते हैं । दूसरा से कहने ही धीर  
स्वय भी जपते ह । अनेक युगा से इसे ससार जानता है, धीर वद भी कहते चले धाये  
है ॥४॥

राम-नाम में ही बुद्धि को लगाना चाहिए राम नाम से ही लगन लगानो चाहिए  
धीर राम-नाम की ही शरण लनी चाहिए, क्याकि एक यही साधन जम मरणरूपी  
विपत्तियो को दूर करनेवाला ह । हे तुलसी ! यदि तू राम-नाम पर विरवास किए रहगा  
धीर सग धपना प्रम दन बनाये रहगा तो श्रीरघुनाथजी कभी न कभी अपने दयानु  
स्वभाव से तुझ पर अवश्य कृपा करग ॥५॥

न-दाय—अपाय—पय धनिष्टरूप । तरनि—सूय । कलाप = समूह । फोरट  
= वृथा किसी काम का नही । ठरेंगे = कृपा करेंगे ।

विनेय—(१) वेप करनि —

‘करनी विनु कथनी कय जज्ञानी दिन रात ।

कूबर ज्यो भूक्त फिर सुनी-सुनाई धान ॥

[रबीर

(२) मरत धरनि —

पेय पेय श्रवणपुटके रामनामाभिराम

ध्येय ध्येय मनसि सतत तारक ब्रह्मरूप ।

जल्पन जल्पन प्रकृति विकृती प्राणिना कलमपे

वीर्या वीर्यामदति जटिल कोऽपि कागो निवासो ॥

[काशी खण्ड

लाज न आवत दास कदावत ।

सो आचरन विसारि सोच तजि, जो हरि तुम कहें भावत ॥१॥

सखल सग तजि भजत जाहि मुनि, जप, तप, जाग बनावत ।

मो सम मद महाखल पावर, कौन जतन तेहि पावत ॥२॥

हरि निरमल, मलप्रमित हृदय, अममजस मोहि जनावत ॥  
 जेहि मर काक कक वक मूकर, क्यो मराल तहें आवत ॥३॥  
 जाकी सरन जाइ कोविद दारुन जयताप बुझावत ।  
 तहें गये मद मोह लोभ अति सरगहुँ मिटत न सावत ॥४॥  
 भव-सरिता कहें नाउ सन्त यह कहि औरनि ममुझावत ।  
 हौं तिनसो हरि परम वेर करि, तुम सो भलो मनावत ॥५॥  
 नाहिन और ठौर भो कहें, ताते हठि नातो लावत ।  
 रासु सरन उदार चूडामनि । तुलसिदास गुन गावत ॥६॥

भाषाय—हे रघुनाथजी ! मुझे (घापका) दास कहलान म शम भी नहा आती ।

जो आचरण आपका अच्छा लगता ह, उसे म बिना किसी विचार के छोड़ देता हू ।  
 (सता का आचरण छोड़ देने पर मुझे परचात्ताप भी नहीं होता । इतने पर भी मैं आपका दास बनता हू) ॥१॥

सब प्रकार की आसक्ति छाड़कर जिस मुनिगण भजते ह, जिसके लिए जप, तप और धन करते हैं, उस प्रभु को मुझ जसा भूख, भारी दुष्ट और पापी कैसे पा सकता ह ? ॥२॥

भगवान ता परम विशुद्ध ह और मेरा हृदय ह पापपूर्ण, महामलिन । मुझे यह असमजस जान पडता ह कि जिस तालाब में कौए गीघ, बगुले और सूघर रहते हैं वहा हस क्या आने लगे ? आशय यह कि मेर महामलिन हृदय में भगवान वास करने नहीं आयेंगे । व तो उन्ही मुनिया के हृदय मंदिर में विहार करेंगे, जिहाने ज्ञान, वैराग्य, भक्ति आदि साधना द्वारा अपने हृदय का निमल बना लिया ह ॥३॥

जिनकी (तीर्थों की) शरण में जाकर ज्ञान के साधक जन सासारिक तीता कठिन तापा को शान्त कर देते ह अर्थात् दहिव दहिक और भौतिक दुःखा से मुक्त हो जाते ह वहा भी जाने पर मुझे अहंकार, अज्ञान और लोभ अधिक सतायेगे, क्याकि सीतियाडाह स्वर्ग में भी नहीं छूटता, वहाँ भी वह साथ ही लगा फिरता है ॥४॥

मैं दूसरा का यह कहकर समझाता रहता हूँ कि ससाररूपी नदी के पार जाने के लिए सतजन ही नौका ह किन्तु हे हरे ! म (स्वयं) उनसे भारी शत्रुता रखकर आपने अपने कल्याण का इच्छा रखता हू ॥५॥

मैं सत-श्रोही होने के कारण आपके साथ सम्बन्ध जोड़ने के लायक तो नहीं हूँ, (पर वक्त क्या लाचारी ह) मुझे कही और ठौर ठिकाना तो ह ही नहीं, इसीलिए खबर-दस्ती हो आपन माता जोडता फिरता हूँ और आपका बनना चाहता हूँ । हे दाताओं में शिरोमणि रघुनाथजी ! यह तुलसीदास आपके गुणों का गान कर रहा ह, इस अंगीकार कर लाजिए (मेरी भलाई-बुराई को ताक पर रख दाजिए और अपने सहज स्वभाव से मुझ पर कृपा कर दीजिए) ॥६॥

भाषाय—भावत=अच्छा लगताह । सग=आसक्ति । वक=गीघ १ सावत=ईद्वय

विशेष—(१) 'क्यों मराल आवत'—जिस सरोवर में शीतलरूपी हस

विहार करते हैं, उसका वखन भक्तवर बजनायजी ने इस प्रकार किया है —

‘जिनके हृदयरूपी तडाग में प्रेमरूप पावन अमल जल भरा समता, शांति, सत्ताप, ज्ञान विराग, विवेक कमल फूल, राम-नाम स्मरणरूप मुक्तामयूह तहाँ रामरूप हस विहार करत है । अरु मरे हृदयरूप तडाग में जा विषय-वासनारूप मना जल भरा, परस्त्रीचाह विष्टा है ताने कामरूप सूकर वनत परधन चाह शबुक भरु है तहाँ लोभरूप बगुला है, परहानि अपवाद मृतक मास है ता हेतु क्रोध, ईष्या याक कक बसत, तहाँ राधवरूप हस अने आवहिगे ? ’

(२) मिटत न सावत’—जीव की दो स्थितियाँ हैं—प्रवृत्ति और निवृत्ति । ये दोनों दिन रात कलह मचाये रहती हैं । स्थूल शरीर छूट जाने पर इनसे पिड नहीं छटता । सूक्ष्म शरीर में भी इनका लडना-पगडना बना रहता है । जहाँ कहीं भी जीव जाता है, य दोना सौतिया डाह से उसके पीछे पीछे लगी फिरती है ।

१८६

कौन जतन विनती करिये ।

निज आचरन विचारि हारि हिय मानि जानि डरिये ॥१॥

जेहि साधन हरि, द्रवहु जानि जन, सो हठि परिहरिये ।

जाते विपति जाल निसिदिन दुख, तेहि पथ अनुसरिये ॥२॥

जानत हैं मन वचन करम पर हित कीटै तरिये ।

सो विपरीत देखि पर सुख, बिनु कारन ही जरिये ॥३॥

स्रुति पुरान सबको मत यह सत्मग सुदढ धरिये ।

निज अभिमान मोह ईष्या बस तिर्नाहि न आदरिये ॥४॥

सतत सोइ प्रिय मोहि सदा जाते भवनिधि परिये ।

कहौ अब नाथ, कौन बल ते ससार मोग हरिये ॥५॥

जब कब निज करना सुभाव तें द्रवहु तो निस्तरिये ।

तुलसिदास बिस्वास आन नहि, कत पचि पचि मरिये ॥६॥

भावाय—हे नाथ । मैं किस प्रकार विनती करूँ ? जब अपने (जीव) आचरणों की ओर देखता हूँ उन पर विचार करता हूँ समझता हूँ तब साहस छोड़कर हृदय में हार मानकर डर जाता हूँ । (म तो आपके सामने आने ही योग्य नहीं ऐसा घोर पापी हूँ) ॥१॥

हे हरे ! जिस साधन से आप इस जन का दास जानकर इस पर कृपा करते हैं, अपना लेते हैं उसे महठपूर्वक छोड़ रहा हूँ । जहाँ दिन रात विपत्ति के जाल में फँसकर दुःख ही मिलता है उसी रास्ते पर चला करता हूँ ॥२॥

मह जानने हुए भी कि मन, बचन और कर्म से दूसरा का भलाइ करने से ससार सागर पार कर जाऊँगा, मैं उनका ही आचरण करता हूँ दूसरों के सुख को देख कर बिना ही कारण जला पा रहा हूँ ॥३॥

वेदा और पुराणा सभो का यह सिद्धांत है कि सन्ता का सग खूब दृढतापूर्वक करना चाहिए, सत्मग किसी भी प्रकार नहीं छोटना चाहिए, पर म अपने अहकार, अज्ञान और ईर्ष्या के बरा होकर सत्सग का आदर कभी नहीं करता, सन्ता के साथ सदा द्राह ही करता है ॥४॥

मुझे सत्ता बहो अच्छा लगता है, जिसमें ससार-समुद्र में ही पडा रहूँ। फिर, हे नाथ ! आप ही कहिए, म किस बल-बूते पर ससार के दु ख दूर बरूँ ? ॥५॥

यदि कभी आप अपने कारुणिक स्वभाव से मुझ पर पिघल जाय, तभी मेरा निस्तार हागा अथवा नहीं, क्याकि तुनसीदास को किसी और का विश्वास नहीं, तब वह किसलिए (दूसरे साधना म) पच पचकर मरे ॥६॥

शब्दाय—द्रवहु—कृपा करते हा। अनुसरिये = चलते ह। सतत = सदा। सोग = शोक।

१६७

ताहि ते प्रायो सरन सवेरें ।

ग्यान, विराग, भगति साधन कछु सपनेहुँ नाथ न मेरें ॥१॥

लोभ मोह मद, काम, जोध रिपु फिरत रैन दिन घेरें ।

तिर्नाहि मिले मन भयो कुपथ रत फिरे तिहारेहि फेरें ॥२॥

दोष निलय यह विषय सोक प्रद कहत सत सुनि टेरें ।

जानत हूँ अनुराग तहा अनि सो हरि तुम्हरेहि प्रेरें ॥३॥

त्रिप पिथूप सम करहु अग्नि हिम, तारि सकहु त्रिन वेरें ।

तुम सम ईस कृपालु परमहित पुनि न पाइहौं हेरें ॥४॥

यह जिय जानि रही सब तजि रघुवीर भरोसे तेरें ।

तुलसिदाम यह विपति वागुरो तुमहि सा बने निवेरें ॥५॥

भाषाय—हे नाथ ! इसी कारण मैं जल्दी आपकी शरण में आ गया हूँ (जल्दी इसलिए कि न जाने कब मृत्यु का प्रास हा जाना पड)। मेरे पास स्वप्न म भी नान, वैराग्य भक्ति आदि साधन नहीं ह (जिनके बल पर म ससार-सिंधु से पार हो जाता) ॥१॥

लोभ, अज्ञान अहकार, काम और क्रोधत्पी शत्रु मुझे सदा घेरे रहते ह, (क्षण भर भी मेरा पिण्ड नहीं छोडते)। इन सबके साथ मितकर यह मन भी कुमार्गी हो गया ह। अब यह आपके ही फेरने से किरेगा (निरबल होगा, अथवा नहीं) ॥२॥

सतजन और वेद पुकार पकारकर कहते ह कि यह विषयासक्ति, दोषा की सानि है दु खदायक ह पर यह जानते हुए भी म उसी में अनुरक्त रहता हूँ। सो, हे हरे ! यह आपकी ही प्रेरणा ता नहीं ह ? (नही तो ऐसा कौन मूख होगा, जा जानबूझकर कुएँ में गिरेगा ?) ॥३॥

आप (अपने सामर्थ्य से) विष का अमृत एव अग्नि को हिम बना सकने है, आप बिना ही बड़े के पार कर सकते ह। आपके नमान समय, कृपालु और परमहित दूढने पर भी नहीं मिलेगा। (यदि इस जन्म में आप-भरीते स्वामी को भूलकर चूक

गया तो फिर अगले जन्म में ऐसा दाँव मिलने का नहीं ॥४॥

हृदय में यह जानकर हे रघुनाथजी ! म सब छाड़ छाड़कर भापने ही भरोसे आ पडा हूँ । तुलसीदास का यह विपत्तिरूपी जाल भापने ही काटे कटेगा ॥५॥

ग दाय—सबरे = जल्दी, पहले स ही । निलय = घर । बरे=बेडा । बागुरी = जाल ।

विशेष—(१) ताहि त'—क्योकि हे प्रभो ! म भापकी यह प्रतिना सुन चुका हूँ—

'सबघमनि परित्यज्य मामेक शरण भज ।

अह त्वा सबपापेभ्यो, मोक्षयिष्यामि मा गुच ॥'

[ भगवद्गोता

(२) विषय—शद, स्पश, रूप रस और गंध ।

(३) तुम्हरेहि प्रेरे—जीव का प्रेरक परमात्मा ह । आ कुछ वह करता ह, वही यह करता ह । दुर्बोधन ने कहा था—

जानामि धम न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधम न च मे निवृत्ति ।

केनापि देवेन हृदिस्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा धरोमि ॥

(४) तुमहि सो बन निबरें—क्याकि जो बाँव सोइ छोरे ।'

१८८

मं तोहि अब जायो समार ।

बाधि न सकहि मोहि हरि के बल, प्रगट कपट आगार ॥१॥

देखत ही कमनीय, कछू नाहिन पुनि किये विचार ।

ज्यो कदलीतर मध्य निहारत कबहुँ न निकसत सार ॥२॥

तेरे लिए जनम अनेक मे फिरत न पायो पार ।

महामोह-भूगजल सरिता महँ बोरयो ही वारहि वार ॥३॥

सुनु खल, छल बल कोटि किये बस होहि न भगत उदार ।

सहित सहाय तहा बसि अब, जेहि हृदय न नदकुमार ॥४॥

तासा करहु चातुरी जो नहि जानै मरम तुम्हार ।

सो परि डरे मरे रजु अहि ते बूझै नहि व्यवहार ॥५॥

निज हित सुनु सठ, हठ न करहि जो चहहि कुसल परिवार ।

तुलसिदास प्रभु के दासनि तजि भजहि जहा मद भार ॥६॥

भावाय—रे ससार ! आज मैं तुम्हें जान-अज्ञान लिया तरा ठीक-ठीक भेद आज मेरी समझ में आ गया । तू सालहों आने कपट का घर ह पर अब तू मुझे (अपने कपट जाल में) नहीं बाँध सकता क्योंकि मुझे श्रीहरि का बल प्राप्त हो गया ह (पर मात्मा के सामने तरा अस्तित्व तक नहीं रहता छलबल की ता बात ही क्या) ॥१॥

दखने मात्र में हा तू मुन्दर प्रतात हाता ह पर विचार करन पर विवेकबुद्धि से आधने पर तू कुछ भी नहीं, वस्तुतः तरा अस्तित्व ही नहीं ह । जय केले के पेड को देखो

तो उसमें से कभी मूढा निकलता हो नहीं, जितना ही छोड़ो, धिलका ही धिक्का निकलता जायेगा। (यही दशा ससार की है। जितना ही अधिक इम पर विचार किया जाये उतना ही यह नि सार प्रतीत होगा) ॥२॥

तेरे लिए मैं अनेक जन्मों से भटकता रहा हूँ, पर आज तक तेरा पार नहीं मिला। (यह जान नहीं हुआ कि तू क्या है, किसलिए है, मेरा-तेरा क्या रिश्ता है) तूने मुझे महामोहकूपी भगतभूषा की नदी में बार-बार डुबाया। (ससार की भूठी विषयासक्ति में मुझे अनेक बार फँसना पड़ा) ॥३॥

अरे शठ ! सुन भने तू करोड़ों प्रकार के छलबल किया करे, पर श्रीरि का परमभक्त तेरे वश में होनेवाला नहीं। तू तो अपनी सेना समेत वही जाकर डेरा डाल जिस हृदय में नन्दनन्दन श्रीकृष्ण का वास न हो (भगवत शून्य हृदय में ही सासारिक प्रवृत्तियाँ का साम्राज्य रहता है) ॥४॥

जो तेरा भेद न समझता हो उसी के साथ तू अपनी चाल चल, क्योंकि वही रस्सीरूपी नाव से डरकर मरगा, जो उसके रहस्य को न जानता होगा ॥५॥

अरे दुष्ट ! अपने हित की बात सुन जो तू कुटुम्ब समेत अपनी खर चाहता है तो ध्रुव हठ न कर। तुलसीनाम के प्रभु श्रीरघुनाथजी के सेवका को छोड़कर तू वहाँ भाग जा, जहाँ अहंकार और काम निवास करते हैं ॥६॥

शब्दाय—आगार = स्थान। विचार = जान। सार = गुण। सहाय = सेना।

विशेष—(१) इस पद में गासाइजी न ससार को मायावाद मिद्धान्त के अनुसार मिथ्या माना है, पर साथ ही हम उनका यह वाक्य—“कोउ कह मत्प, भूठ कह कोउ जुगल प्रवल करि मान। तुलसीदास परिहरै तीन भ्रम, सो आपन पढ़िचानै नहीं भूजे। हरि प्राप्ति के लिए विरक्ति का होना आवश्यक है और इसलिए ससार तो क्या, असन में ससार की विषयासक्ति को मिथ्या माना गया है।

(२) 'न पायो पार—वस्तुतः जिन समुद्र का अस्तित्व ही नहीं, उसका पार क्या मिलेगा ? पार पा लेना 'वध्यापुत्रा-वेषण ही है।

(३) 'सहित नदकुमार—क्याकि—

'बहु रहाम का करि सक ज्वारी चोर लवार।

जो पति राखनहार है माखन चाखनहार ॥'

राम गौरी

१८६

राम बहत चलु, राम बहत चुनु, राम बहत चलु भाई रे।

नाहिँ तो भव-वेगारि महेँ परिही छूटत अति कठिनाई रे ॥१॥

वाम पुरान साज सब अठगठ मरल तिकोन खटोला रे।

हमहिँ दिहल करि कुटिल करमचंद मद् मोल त्रिनु डोला रे ॥२॥

विषम बहार मार मद् मान चलहिँ न पाउँ बटोरा रे।

मद् बिलद अमेरा दलवन पाइय दुय क्षवचोरा रे ॥३॥

काट कुराय लपेटन लोटन ठावहिं ठाउँ वचाऊ रे ।  
जस जस चलिय दूरि तस तस निज वाम न भट लगाऊ रे ॥४॥  
मारग अगम सग नहिं सवल नाउँ गाउँ कर भूला रे ।  
तुलसिदाम भव नाम हरहु अब, होहु राम अनुकूला रे ॥५॥

भावाथ — धरे भार्गव । राम राम राम राम कहत चलो नही तो कही ससार की वगार में पत् गय ता छटना क्या कठिन हो जायगा । (अत्यन्त कठिन इसलिए कि न तो ससार वा कभी अत होगा और न तरी प्रवृत्ति का ही । जन्म मरण का चक्र सदा चलता ही रहगा । हा यदि तू राम राम जपता चला जायगा तो माया ज य विषयक्षपी शत्रु तुझ वगार में न पकड सकेंगे (क्याकि राम के दास पर उनकी माया नहीं चलती ।)

हमार कुटिन मन्त्र कमचन्द न बिना हो मोन का एसा निकम्मा डोला मरथ मड दिया ह कि जिसम बास पुराना लगा ह बतरतीब अटसट साज लग हुए ह जा सत्ता हुमा ह और तिकोना ह (यहा इस तिकान खटाल से शरीर की उपमा दी गई ह । कम दर्ई ह उसन हम शरीररूपी डोला बनाकर मुफ्त दे दिया ह । हमारी तो इसे जान की इच्छा भी नहीं थी । अनक जन्म जन्मान्तर स जा विषय प्रवृत्ति चनी या रही ह, वही इसम पुराना बाग ह । प्रकृति, महत्त्व और अहंकार य तीन पाटियाँ तथा सब, रज और तमागुण, य तीन पाय ह । यही इसमें अटसट साज लग ह । असन म, इसकी सारी ही सामग्री, ज्ञान-शक्ति से अणुभगुर ह । इसीसे इसे सत्ता कटा गया ह । जागृति स्वप्न और सुषुप्ति य तीन अवस्थाएँ ह य ही इस खटान क तीन कोन ह । अनानियो के लिए तो यह डाना ही ह, व इसी शरार को सबस्व मानकर विषय वासना राम आकण्ड डूब हुए सुप्त भान रह ह पर पानिया की शक्ति में यह मन्त्र डोला ह यह स्वय उक्त लिए भाररूप हो रत्ता ह जन्म मरण का कारण बन रहा ह । अब इस शरीररूपी डान के सबध में और भी स्पष्ट रानि स कहन ह) ॥२॥

इसका उठानवान कहार विषय ह (दा, चार या आठ कहार डोला उठाना करते हैं पर इस शराररूपा डान क उठानवान कहार पाँच ह और व ह जिह्वा मत्र नामिका अवण और त्वचा अपवा इनक विषय रस रूप गन्ध शब्द और स्पर्श) य कहार कामरूपी मदिरा पीकर मत्तवान हा रह ह इगलिए एक-म पर रगत हुए नहीं चन्ते काई क्षिपर पर रगत ह तो काई क्षिपर (नेत्र अपने विषय की ओर दीप्त ह तो ज्ञान अपने विषय का धार नाक क्षिपर का भागतो ह तो जीम विज्ञा और ही ठरफ । इस मनमानी परजाना ध्यान बनन ग डाना सब तन चन सक्या और कही न जाकर पत्क देगा) कभा नीन की धार कभा उच का ओर चनान म पका ओर गत्क लग रह ? ओर इस मोचनान म मारा कत् हा रहा ह (शिक्षी कभा बुधा जामनाया की ओर दीप्ता ह और कभा सुदाशुनाया का धार किन्तु मन क संकन विज्ञान क कारण पूरा कुछ ना रत्ता पत्ता जब बचारा बाज में व्यय हा पका सा रत्ता ह इस ऐंकारो की म पत्कर रा शरार शि शिवा रत्ता ह) ॥३॥

रात्रे म कत् शिखे ? (अनक शिख-शान्ता उन्मियत ह) कत् पड है लपटन कत्ता कत् (मत्ता का तट्ट) शिख शिखा है । टौर-टौर पर लपटन है (पटोर-शान्ता

के माग में अनेक घात्राएँ ह, मोह-ममता ही ककड ह, विपले विषय वेलें ह और कर्मों की विकट भभट ही उलभत ह । इन सब कारणों से पग पग पर रुक जाना पड़ता ह । शरीर यात्रा निविघ्न हा नहीं सकती ) । और ज्या-ज्या आगे बढ़ते जाते हैं, त्या त्या लक्ष्य-स्थान दूर होता चला जा रहा ह । (प्राणय यह ह कि आत्मानुभूति करने के लिए जा जो उपाय करते ह, माया बीच में पडकर सारे किये कराये पर पानी फर देती ह । चाहते ह कि ब्रह्मानन्द का पीयूष पान करें, पर मिलता ह विषय सुखा का विषभरा प्याता । सुलभने का ज्यों-ज्या प्रयत्न करते ह त्या त्या और और उलभते ही जात हैं । ) कोई ऐसा सगी साथी भी नहीं मिलता, जिसके साथ जस तम वहा तक पहुँच जाये ॥४॥

माग बडा कठिन ह साथ में राह-बच भी नहीं (ऐसे सत्कम भी नहीं किए हं, कि जिनके भरोमे रास्ता तय कर लिया जाय) और जहा जाना ह, उन गाँव का नाम तक याद नहीं (कहो जैसे-तैसे चलते चलते किसी और ही गाँव में पहुँच जायें तो बड़ी आप्त हो) इसलिए हे श्रीरामजी ! इस तुनसीदास के (जन्म मरणरूपी) ससार भय को आप ही हृपाकर दूर कीजिए ॥५॥

विनये—(१) राम कहत भाई रे—यहा राम कहत चनु तीन बार लिखा गया ह । सम्व ह जीव का त्रिविध दुःख याने दैहिक दैविक और भौतिक दूर करन के लिए तीन बार यह उपदेश दिया गया हा ।

(२) विषम बगारा र—स्वर्गीय रामेश्वर भट्टजी ने इन चरण का अर्थ लिखते हुए इन्द्रिया के बन्धन और खाचतान पर एक सुंदर छण्ड दिया है —

‘कान निरंतर गान-तान सुनिबोही चाहत ।

आलें चाहति रूप रनिदिन रहति सराहत ॥

नासा अतर-सुगंध चाहति फनन की माला ।

त्वचा चाहति सुख तेज सग कोमलतन बाला ॥

जाको / रसना हूँ चाहति रहति नित छाटे मीठे चरणपरे ।

इन पचन इहि सरपच सों भुषन को भिच्छुक करे ॥

(३) इस पद की भाषा जन साधारण की ह । कई अवयवोभाषा के शब्द आये हैं । मुहावरे भी प्रायोग्य हैं । इतना ऊँचा दार्शनिक सिद्धांत सबसाधारण के हृदय में बढाने के लिए ही सम्भवत गसाइजी ने ऐसा किया है ।

१६०

सहज सनेही राम सा तैं नियो न सहज सनेह ।

तातैं भव भाजन भयो, सुनु अजहूँ सिखावन एह ॥१॥

ज्या मुख मुकुर विलाकिये, अरु चित न रहै अनुहारि ।

त्यो सेवतहूँ न आपन, ये मातु पिता, सुत, नारि ॥२॥

दैन्दै सुमन तिल दासिने अरु खरि परिहरि रम लेत ।

स्वारथ हित भूतल नर मन मेचव, तनु सेत ॥३॥

वरि वीर्यो, अन्न वरतु है, कन्ति हित भीत अपार ।

बपहुँ न कोउ रघुवार-सो नह निवाहनहार ॥४॥



जासो सब नातो फुरे, तासा न करी पहिचानि ।  
ताते कछु समुझयो नही, वहा लाभ बहु हानि ॥५॥  
साचो जायो झूठ को, झूठे वहे सांचो जानि ।  
को न गयो, को न जात है, को न जेहै करि हितहानि ॥६॥  
वेद कह्यो, बुध कहत हैं, श्ररु हीहूँ कहत ही टरि ।  
तुलसी प्रभु सांचो हित, तू हिय की श्रांतिन हरि ॥७॥

भावाव—तून स्वभाव स हो स्नह करनवाने थारामचन्द्रजी से सहज स्नेह नही किया । इसीलिए तू सभार म बार-बार जन्म लन योग्य हुआ ह बार बार जन्म और मरण का पात्र हुआ ह । (फिर भी अभी कुछ बिगडा नही) अब भी तू मेरी यह सिखावन सुन ॥१॥

जसे दण्ड म मुख का प्रतिबिम्ब दीप्त पडता ह पर वह मुलावृत्ति वस्तुन उसके अदर नही होती उसी प्रकार ये माता पिता पुत्र और स्त्री सेवा करते हुए भी वस्तुत अपन नही ह । तात्पर्य यह कि इनके साथ जो रिश्ते मान लिय गय ह व कवल स्वाय के ह वास्तव म कोई भी किसी का सगा सम्बन्ध नही ह ॥२॥

(अब तनिक इन स्वाधियो की लीला तो देखो) जैसे, तिलो में फून रख रखकर उन्हें सुगन्धमय बनात ह किन्तु तल निकाल लेन पर खली को फोक समझकर फेंक देते ह वैसे ही सम्बन्धिया की दशा ह (अर्थात् जब तक किसी म सौंदर्य रहता ह धन कमाने की शक्ति रहती ह बल पौरुष रहता ह तब तक उसका सम्मान किया जाता ह उस पर सबस्व निष्ठावर किया जाता ह किन्तु रूप धन और बल नष्ट हो जान पर उसे कोई पछता भी नही । इम पथिवी पर ऐसे ही स्वार्थी लोग भर पड ह जिनका मन काला है और शरीर शुभ्र ह ऊपर स तो बड सुंदर दीखत ह पर मन उनका महामलिन और धन ऋपट स भरा ह ॥३॥

तून कितने मित्र बनाय कितन बना रहा ह और कि कभी त्रिकान में भी श्रीरघुनाथजी-सरीखा प्रेम को (एकरस) हार डाला किन्तु मिलने का नही ॥४॥

जिसके कारण सारे सम्बन्ध सच्चे प्रतीत होने ह उसके साथ तूने (आज तक) पहचान तक नही की र । इसी कारण तू अभी तक यह नही समझ पाया कि क्या तो सच्चा लाभ ह और क्या हानि ॥५॥

जिसन असत (जगन) को सत्य और सत (परमात्मा) को मिथ्या मान रखा ह, ऐसे अपने हित का नष्ट करनवाल कौन ह जो अपने सच्चे क्याण का नाश करके (ससार से) नही चला गया कौन नही जा रहा ह और कौन नही जायगा । (नाराश ऐसे मूट जीव सहसा बो सख्या म मरत जीत रहत ह उनका जन्म लेना ही यथ ह) ॥६॥

वना ने कहा ह विष्णु कहते ह और म भी पुकार पुकारकर कह रहा हूँ कि तुनसी के स्वामी श्रीरघुनाथजी ही सच्च हिनू ह । तनिक तू अपने हृदय के मन्त्रा से देख ता धन्त करण में इस बात पर विचार तो कर ॥७॥

नगण्य—भव भाजन—ससार में बार-बार जन्म मरण के योग्य । अनुहारि—

सूरत । खरि = खलो, तेल निकाल लेने के बाद तिना में से जो फाक निकलता है ।  
मेचक = काला । फुर्र = सच्चा साबित होता है ।

विनय—(१) द-द लेत—यह दृष्टान्त बड़ा ही उपयुक्त है । स्वार्थी मनुष्य वास्तव में, काम-वश सौंदर्य आदि का 'उपभाग' करत है, 'उपासना' नही । यदि परम श्वराय विभूतियाँ समझकर वे उनकी उपासना करें, उनका उपभाग करना छोड़ें, तो यह ससार उसी क्षण स्वर्ग में परिणत हो जाय, मिथ्या जगत सत्यरूप हो जाय ।

(२) 'मन सेत —अथवा या कह सकने है कि—

बिपरस भरा कनकघट जैसे ।'

(३) 'नेह निवाहनिहार —प्रेम तो क्या क्षणिक प्रेम को आसक्ति एक क्षण में ही हो जाती है । बाह्य जगत का प्रेम ऐसा ही अस्थायी माना गया है । प्रेम तो आन्तजगत का ही, भगवदीय ही, सच्चा, सदा एकरस है ।

(४) साँचा जानि —आत्म को अनात्म और अनात्म को आत्म मानना ही भ्रमविद्या है । कुछ-का-कुछ मान लेने से तो किसी वस्तु का सबथा ही न जानना कही अच्छा है ।

१६१

एक सनेही साचिला केवल कोसलपालु ।

प्रेम कनीडो राम-सा नहि दूसरो दयालु ॥१॥

तन-साथी सब स्वारथी, सुर व्यवहार-मुजान ।

आरत अधम अनाथ हित को रघुवीर समान ॥२॥

नाद निदुर, ममचर सीखी, सलिल मनेह न सूर ।

ससि मरोग दिनकर बडे, पयद प्रेम-पथ बूर ॥३॥

जाको मन जामो बँध्यो, ताको मुखदायक सोइ ।

सरल सील साहिव सदा, सीतापति सरिस न काइ ॥४॥

मुनि सेवा सही को करे परिहरै को दूपन देखि ।

केहि दिवान दिन दीन को, आदर अनुराग त्रिसेखि ॥५॥

खग-सबरी पितु मातु ज्यो माने, कपि को किये मोन ।

केवट भँटजो भरत-ज्या, ऐसो को बहु पतित-पुनीत ॥६॥

देह अभागहि भाग को, का राखै सरन सभौत ।

वेद विदित, विरुदावली कवि कोविद गावत गीत ॥७॥

केसेउ पोंवर पातकी, जेहि लई ताम की ओट ।

गाँठी बाँध्यो दाम ता परन्या न फेरि सर-बोट ॥८॥

मन मनीन तलि किनरिपी होन मुनन जामु कृन-बाज ।

सो तुलसी कियो आपनो, रघुवीर गरीब निवाज ॥९॥

भावार्थ—केवल कोनेत्र धोरानवद्भजा ही एक सच्च स्नेही है । प्रेम प्राणि का

जो जातिनाथ गा गाता गीत गीत ।  
 स्वारथ परमाथ गता, वनि मुक्ति सिंघाता यीत ॥१॥  
 धरम बरत आत्ममति न पेयत पायिता पुरात ।  
 तत्तम त्रिपु अथ दगिय जग गरीर विपु प्रात ॥२॥  
 वेद त्रिदिन मापात सये मुणिया दायन फन गारि ।  
 राम प्रेम त्रिपु जातिया जेम मग गरिया विपु बारि ॥३॥  
 नाता पय निरवान के, ताता रिपात बहु भाति ।  
 तुलसी तू मर कह जपु राम-नाम दिराति ॥४॥

भाषाय—अर तोष ! यदि श्रीजानकीवाम रामचन्द्रजी से दूने प्रेम महा  
 क्या, उस नाता तही जादा तो स्वारथ और परमाथ तू कैये सिद्ध कर सकता ? (भार  
 यह ह, कि बिना भगवत् प्रेम के न तो कोई यह साध बना सकता है न परसोर हा) ॥१॥

चारों वख और चारा आश्रम न पम बदन पायिया और पुराणा में ही जिने  
 पाय जाते हैं, उनसे अनुसार बराभरम कोई नहीं करता । करतो बही तहीं सिंघाई  
 देती केवल भय ही दोमते ह । जग बिना प्राणों के शरीर, यमे ही बिना पर्मावरण न  
 ये और भेष ह ॥२॥

सुनते ह कि बदा में जितन भी प्रसिद्ध प्रसिद्ध (कमकाण्ड के) साधन हैं व सब  
 अथ, धम काम और मोच के देनेवाने ह किन्तु बिना श्रीरामभक्ति के उा सबका मानना  
 ऐसा ह, जैसे बिना पागे के तालाब और नदिया । (सारांश यह कि भगवत् प्रेम विहीन  
 समस्त वेद-बदान्त का ज्ञान निस्तार ह) ॥३॥

मुक्ति के या अनेक पाय ह भक्ति भक्ति के उपाय ह किन्तु हे तुलसी ! तू तो  
 मेरे कहने से, तिन रात केवल राम नाम का ही जप रिया कर (अथ साधना और मन्त्र  
 मतान्तरो से तू कुछ भी प्रयोजन न रत) ॥४॥

विशेष—(१) 'नातो—से'य सबक भाव के नाते से ही प्रयोजन हो सकता ह  
 क्योंकि बिना इस सम्बन्ध के मुक्ति दुलभ ह । कहा भी ह—

सेयक सेव्य भाव विनु, तरिय न भव उरगारि ।

[रामचरितमानस

(२) 'करतव देखिए'—कबीरदासजी ने कहा ह —

साछु भया तो क्या भया, माला पहिरी चार ।

बाहर भेस बनाइया, भीतर भरौ भगार ॥

(३) 'रामप्रेम बारि'—यहाँ सिद्धांतरूप से भक्ति ज्ञान से बड़ी मानी ह ।

केवल 'ज्ञान भक्ति के बिना निष्प्राण ह सानुराग ज्ञान ही मुक्ति का मुक्क द्वार ह ।

(४) 'नाना पथ निरवान के—दाशनिका ने मोच की अनेक परिभाषाएँ लिखी

ह । जैसे—वस्तु का सावयव (सागोपाग) ज्ञान ही मोच ह शास्त्रा के अथ के अनु  
 कूल निर्दिष्ट आचरण करना ही मोच ह, दश्य और अदृश्य के ज्ञान का जो अभाव ह,  
 यही मोच ह महावाक्यों (तद्वमसि साऽह आदि) का विवरण ही मोच ह स्वात्मा

मद की शानमयी अवस्था ही मोक्ष है। 'अस्ति' और नास्ति' इस उभयात्मक ज्ञान व विच्छेद को ही मोक्ष कहते हैं, 'शब्दब्रह्म' के यथेष्ट ज्ञान का ही मोक्ष मानना चाहिए, निर्विकल्प समाधिगत मानद का मोक्ष मानना चाहिए एकदशक सिद्धांत से सिद्ध जा भक्ति वा विधान है वही मोक्ष है, आत्मसमर्पण करने क अनन्तर भगवत्प्राप्ति क लिए जो परम विराहकुलता अनुभव हाती है, उसे ही मोक्ष कहना चाहिए, इत्यादि अनेक मत और व्याख्याएँ मोक्ष का हैं।

(५) 'तू मेरे रीति'—शबल 'राम नाम-स्मरण' से मुक्ति की प्राप्ति संभव है, यही निष्कल्प निश्चलता है। गोसाइजी का यही सवतामंत्र सिद्धांत है।

१६३

अजहूँ आपने राम के करतव समुझत हित होइ ।  
 कहें तू, कहें कोसलधनी, तोको वहाँ कहत सब कोइ ॥१॥  
 रीक्षि निवाज्यो कर्वाहि तू, कव खीक्षि दई तोहि गारि ।  
 दरपन बदन निहारिकै, सुविचारि मान हिय हारि ॥२॥  
 विगरी जनम अनेक की, सुधरत पल लगे न आधु ।  
 'पाहि कृपानिधि' प्रेम सो कहें को न राम कियो साधु ॥३॥  
 वाल्मीकि केवट-कथा, कपि भील भालु सनमान ।  
 सुनि सनमुख जो न राम सो तिहि को उपदेसहि। ग्यान ॥४॥  
 का सेवा सुग्रीव की, का प्रीति रीति निरवाहु ।  
 जासु बधु बध्या ब्याध ज्यो, सो सुनत सोहात काहु ॥५॥  
 भजन विभीषन को कहा, फल कहा दियो रघुराज ।  
 राम गरीब निवाज के बडी बाह बोल की लाज ॥६॥  
 जपहि नाम रघुनाथ को, चरचा दूसरी न चालु ।  
 सुमुख, सुखद, साहिव; सुधी, समरथ; कृपालु, नतपालु ॥७॥  
 सजल नयन, गद्गद गिरा, गहवर मन, पुलक सरोर ।  
 गावत गुनगन राम के केहि की न मिटी भव भीर ॥८॥  
 प्रभु कृतग्य सरवग्य हैं, परिहर पाछिली गलानि ।  
 तुलसी तोमा राम सो बछु नई न जान-पहिचानि ॥९॥

भाषा—अब भी, जो तू अपन ( नीच कर्मों को ) और श्रीरामचन्द्रजा के (करुणापूर्ण) करतवों को समझ ले, ता तेरा कल्याण हो सकता है। कहाँ तो तू और कहाँ कोशनेंद्र महाराज रामचंद्र ! (पृथिवी-आकाश का अन्तर है) तुझे सब लोग क्या कहते हैं ? ( तदीय अर्थात् यह जीव भागवत है। 'तू भगवान् का है, क्या यह सम्बन्ध सुलभ है ? ऐसा सम्बन्ध बड़े बड़े मागिया को भी प्राप्त नहीं होता पर तुझे यह सौभाग्य सं सुलभ हो गया है) ॥१॥

प्रसन्न होकर रघुनाथजी न कब तुझ पर कृपा की और अप्रसन्न होकर कब ? और फिर (अपनी करतवों के लिए हार मान ले) विवेकरूपी दण्ड में देखने से यह प्रकट

विनय (१) 'ग्यात विराग हितारे'—भाय गादुरय गण—

'श्रेय श्रुति भक्तिभुवस्य त विभो,  
विभक्ति ये क्वता योपमपथे ।  
तेषामतो क्वगतं तप स्थिता  
तापघना इधूनतुपायपानिताम ॥

[ श्रीमद्भागवत

१६५

बलि जाऊं ही राम गुमाद । पीजे कृपा आपनी नाइ ॥१॥  
परमारथ सुरपुर साधन सत्र स्वारथ गुमाद भलाई ।  
बलि सवोप लापी मुचाल, निज कठिन कुचाल चलाई ॥२॥  
जह-जहें चित्त चितवत हित तह तिन नत्र विपाद अधिवाई ।  
रचि भावती भभरि भागटि, समुहाहि अमित अनभाई ॥३॥  
आदि मगन मन, व्याधि बिकल तन, वचन मलीन झुटाई ।  
एतेहुँ पर तुमसो तुलसी वी, प्रभु, सकल सनह संगी ॥४॥

भाषा—ह श्रीराम । ह नाथ । मैं अपने को आप पर मोटावर करता हूँ ।  
आप अपने स्वभाव से ही (दीन वत्सलता की दृष्टि से) मुझ पर कृपा कीजिए ॥१॥

परमाथ के, स्वयं के तथा स्वायं क धर्मार्थ व्यवहार के जो-जो गुण देनवाल और  
कल्याणकारक उपाय ह उन सबकी रीतियों को बलिपुत्र ने ब्राह्मण करके तुष्ट कर दिया  
है और अपनी दुःखदायक कुचाला को चला दिया ह (पुण्या और सत्वमों का लोप करके  
दम्भ छल कपट आदि का प्रचलन किया ह ॥२॥

जहा जहा यह मन अपना हित देखता ह तहाँ नित्य नूतन दुःख ही बढ़ते जात  
है । रचि को अच्छी नगनवाली बातें दूर से ही डरकर भाग जाती ह मनचाही एक भी  
बात पूरी नही होती, और मामने वे ही चीजें प्रा जाती ह, जो पसंद नही । (भाव  
इष्ट साधन करते हुए अनिष्ट घेर लत ह) ॥३॥

मन सकल्प विकल्प में लीन हो रहा ह शरीर रोगो स व्याकुल ह, और वाणी  
भूठी और मलिन हो रही ह किंतु यह सब होते हुए भी हे नाथ । आपके साथ इस  
तुलसीनाथ का सम्बन्ध और प्रेम जो का ल्यो बना हुआ ह ॥४॥

विनय—(१) बलि चलाई—कबीर साहब क्या ही स्पष्ट शब्दों में कहते

हैं—

'डर लग औ हासी आव जजब जमाना आया रे ।  
धन दौलत ले माल खजाना बेसदा नाच नाचाया रे ॥  
मुट्टी अन्न साधु फोड़ मांग, फहें नाज नहिं थाया रे ।  
क्या होय तहें खोता सोच वकता मूड पचाया रे ॥  
होय जहा कहिं स्थाग तमासा, तनिक न नींद सताया रे ।  
भग, तमाखु, सुलफा, गजिा सुखा खब उडायो रे ॥

गुरु चरनामत-नेम न धार, मधुवा चाखन आया रे ।  
उलटी चलन चली दुनिया में, ताते जिय धबराया रे ।  
बहुत कबीर सुनो भाई साधो, का पीछे पछताया रे ॥'

(२) समुहाहि भ्रनभाई—स्वर्गाय भट्टजी ने इसका यह अर्थ किया है—वे समुहाहि कहिये सामने इतनी चली आती ह कि जिनका ठिकाना नहीं । जिनका ठिकाना नहीं' कदाचित् 'भ्रनभाई' का अर्थ किया गया ह । किन्तु 'भ्रनभाई', 'रुचि भावती' का उलटा शब्द ह जिसका अर्थ 'नापसन्द ह ।

(३) सगाई—सैन्य-सेवक भाव का सम्बन्ध ।

शब्दार्थ—लोपी = मेट डाली । भावती = मनोवाञ्छित । भमरि = डरकर । समुहाहि = सामने आ जाती है । भ्रनभाई = बुरी, अनिष्टकारिणी । आधि = चिता सकल्प-विकल्प । व्याधि = रोग ।

१६६

काहे को फिरत मन करत बहु जतन,  
मिटे न दुख विमुख रघुकुल-वीर ।  
कीजै जो कौटि उपाइ, त्रिविध ताप न जाइ,  
कह्यो जो भुज उठाय मुनिवर कीर ॥१॥  
सहस्र टेव बिसारि तुही धौं देखु विचारि,  
मिले न मथत वारि घृत विनु छीर ।  
समुजि तजहि भ्रम, भजहि पद-जुगम,  
सेवत सुगम गुन गहन गंभीर ॥२॥  
आगम निगम ग्रन्थ, रिपि मुनि सुर सत,  
सबही को एक भत, सुनु मति धीर ।  
तुलसिदास प्रभु विनु, पियास भरै पसु,  
जद्यपि है निकट सुरसरि-तीर ॥३॥

भावाय—घरे मन ! तू किसलिए बहुत-सारे उपाय करता फिरता ह ? (तू मने ही अनेक यत्न किया कर, पर) या तेरे दुःख तब तक दूर हाने के नहीं, जब तक तू रघु वंश शिरामणि श्रीरामचन्द्रजी से विमुख ह । भगवद्विमुख कोई करोड़ों उपाय क्यों न करे, परन्तु उसके तीनों ताप (दहिक दैविक और भौतिक) नष्ट नहीं हो सकते, यह बात मुनिश्रेष्ठ शुक्रदेवजी ने भुजा उठाकर कहा ह ॥१॥

अपने सहज स्वभाव को भूलकर अथवा चञ्चलता छाड़कर एकाग्रचित्त से तू ही विचारकर देख तो, कि कहा पाना के मयन से, बिना दूध के, घी मिल सकता ह ? (इसी प्रकार विषया में अनुरक्त रहकर कोई ब्रह्मानन्द का पीयूष पान नहीं कर सकता यह सुधा तो विरक्ति और विवेक से ही प्राप्त होगी ।) इस बात को समझकर तू भ्रम को छाड़ दे (जो तू शरीर ही को आत्मा मान रहा ह इस मिथ्या पान को त्याग दे) और श्रीरामचन्द्रजी के उन युगत चरणा का सदन कर, जो सेवा से गुलाम हैं, और **सन्मुखों** के गम्भीर

यन है भयति जिन चरणा की सेवा करन म विनय वैराग्य, एगता, शांति प्राप्ति  
सदगुण घनावास ही प्राप्त हो जाते ह ॥२॥

बुद्धि को स्थिर करके शास्त्रा वेग अथ प्राया तथा श्रुतिया मुनिया, देवतामा  
भौर सतों का जो एक निश्चिन सिद्धान्त है उमे ध्यान सतू मुन (भौर यह सिद्धान्त यही  
ह कि विषयासक्ति को छाँकर भगवद्भजन करना चाहिर) । हे तुनगीदाग ! यद्यपि  
गगा-तट निकट ह तो भी बिना स्वामी क पशु प्यासा हा मर जाना है (इसी प्रकार  
यद्यपि भगवत्प्राप्ति के सार साधन विद्यमान ह तयापि बिना भगवन्-शुभा के यह जीव  
शान्ति-साम करने के लिए तडप तडस्वर मर रहा ह) ॥३॥

गन्दाध—कीर=शुक्रदेव से अभिप्राय ह । टय=भ्रात । जुगम = (सुगम) दोना ।  
भ्रागम = शास्त्र । निगम = वेद ।

विशेष—(१) कह्यो कीर—भ्रातृभागवत म मुनिधर परमहंस शुक्रदेवजी  
न कहा ह—

घोरे कलिपुगे प्राप्ते सर्वधमविषयिना ।  
वासुदेवपरा मर्त्यास्ते कृतार्था न सन्त्य ॥'

(२) सहज टव—जसे—

हरप विषय ध्यान अघ्याना । जीवधम अहमिति अभिमाना ॥'

१६७

नाहिन चरन रति ताहि तें सही विपति  
कहन स्रुति सकल मुनि मतिधीर ।  
वसै जा ससि उच्चल सुधा-स्वादित कुन्ग  
ताहि कयो भ्रम निरखि रविकर नीर ॥१॥  
सुनिय नाना पुरान, मिटत नाहि अज्ञान  
पढिय न समुक्षिय जिमि खग कीर ।  
वसत बिनाहि पास सेमर सुमन ग्रास,  
करत चरत तइ फल बिनु हीर ॥२॥  
कछु न साधन सिधि जाना न निगम विधि,  
नहि जप तप वस मन न समीर ।  
तुलसिदास भरोम परम करुना कोस,  
प्रभु हरिहै विषम भवभीर ॥३॥

भावाथ—मरा प्रम श्रीरघुनाथजी के चरणा म नही ह इमीसे नाना प्रकार  
दु ख म भोग रहा हूँ (मन ही नही) बदा और समस्त बुद्धिमान मुनिया उ भा यही कहा  
ह कयोकि जो हिरण चद्रमा की गोद में भ्रमत का स्वाद ल रहा ह उसे भना मगतृष्णा  
के जल म भ्रम कयो होगा ? (जिस जीव को ब्रह्मानन्द के रस का चसना लग गया उसे  
ससारी विषय धोखे में नही डाल सकने । म विषया में पडा हुआ हूँ इसालिए दु ख भाग  
रहा हूँ ! जो श्रीहरि के चरणा का उपासरु होता तो य विपत्तियाँ ही कयो घाती) ॥१॥

जसे तोता पढता या रटता तो सब कुछ ह, पर समझता कुछ भी नहीं, वैसे ही धनेक पुराणो के सुनने मान से मोह दूर नहीं हाता । (अनाथो) तोता बिना फंदे के स्वय बंध जाता ह, घाप ही चौंगली पकडकर लटक रहता है, वह सेमर के फून की आशा करता ह, (देखता ह, कि इसका फूल इतना सुंदर ह तो फन कितना मीठा न होगा, पर) ज्योंही उसमें चाच मारता ह, उसे बिना गूने का सारहीन फल मिलता ह, अर्थात् रई के सिवा उसमें खाने के लिए कुछ भी नहीं मिलता सब पछताना है (इसी प्रकार मनुष्य विषयरूपी चौंगली पकडकर आप ही बंधा रहता है स्त्री, पुत्र, धन आदि पर मोहित होकर उनका संग्रह करने में लगा रहता ह । पर उनसे विछुडते ही दुखी हो जाता ह ॥२॥

न तो मेरे पास कोई साधन है, और न कोई सिद्धि ही प्राप्त हुई ह । मुझे वैदिक विधिया भी ज्ञात नहीं । जप-तप भी करना नहीं जानता, और न प्राणायाम से मन ही वश में किया ह । इस तुलसीदास को तो वरुणा के भाण्डार भगवान् रामचंद्रजी का ही एकमात्र भरोसा ह । वही इसकी भयानक सासारिक विपत्ति को दूर करेंगे, जन्म-मरण के चक्र से मुक्त करेंगे ॥३॥

शब्दाय—उद्यम=भोद । कुरग=हिरण । रविकरनोर=मृगतृष्णा का जल । कोर=तोता । बधत=बंध जाता ह । पास=(पाश) जान । चरत=चाच मारता ह । हीर=गूना ।

विशेष—(१) सुनिय अग्र्यान'—कबीर साहब भी कहते ह—

पडे - गुने सीछे मुने मिटी न ससय - मूल ।  
 वह कबीर पासों बहै, ये ही दुख का मूल ॥ -  
 साक्षी बहै गहै नहीं चाल चली नहीं जाय ।  
 सलिल भोह - नदिया बहै पाँव नहीं ठहराय ॥'

(२) 'सेमर हीर—तोते को ऐसी ही चेतावनी कबीर साहब भी दे रहे हैं—  
 'सेमर सुबना बेगि तजु, धनी बिगुचत पाँव ।  
 ऐसा सेमर जो सेव, हिरदय नाही जाँव ॥'

(३) 'विधि'—शौच, दान यनानुष्ठान पुरश्चरण यज्ञ-भक्त, पचाग्नि, प्राणा याम, समाधि साधना आदि ।

(४) 'करुना'—श्रीवज्रनाथजी ने 'करुणा को परिभाषा इस प्रकार की ह—  
 सेवक-दुख ते दुचित ह्वै, स्वामि बिबल ह्वै जाय ।  
 दुख हरि गुण साज तुरस कथना गुन सो जाय ॥'

मन पछितैहै अवसर बीते ।

दुलभ देह पाइ हरिपद भजु, करम, वचन अरु ही ते ॥१॥

सहसबाहु दमवदा आदि नृप, बचे न पान बली ते ।

हम हम करि धन - धाम सेवारे अन्त चले उठि रीते ॥२॥

सुत धनितादि जानि स्वारथरत, न करु नेह सबही ते ।

अन्तहुँ तोहि तजैगे पामर । तू न तजै अबहो खे ॥३॥



वन हैं, अर्थात् जिन चरणों को सेवा करने से विनय, वराम्य, क्षमता, शांति आदि सदगुण प्रनायास ही प्राप्त हो जाते हैं ॥२॥

बुद्धि को स्थिर करके शास्त्रों, वेदा अथ ग्रन्थों, तथा ऋषियों, मुनियों, देवताओं और सतों का जो एक निश्चित सिद्धान्त है उसे ध्यान से तू मुन (और वह सिद्धान्त यही है, कि विषयासक्ति को छाड़कर भगवद्भजन करना चाहिए) । हे तुलसीदास ! यद्यपि गंगा-तट निकट है, ता भी बिना स्वामी व पशु प्यावा ही मर जाता है (इसी प्रकार यद्यपि भगवत्प्राप्ति के सारे साधन विद्यमान हैं तथापि बिना भगवन्-श्रुपा के यह जीव शान्ति-लाभ करने के लिए तडप तडपकर मर रहा है) ॥३॥

गन्दाय—कीर=शुकदेव से अभिप्राय है । टेव=प्रादत । जुगम = (युग) दाना । भागम = शास्त्र । निगम = वेद ।

विशेष—(१) 'कह्यो कीर—श्रामद्भागवत में मुनिश्रेष्ठ परमहंस शुकदेवजी ने कहा है—

‘घोरे कतिपुये प्राप्ते सबधमविवर्जिता ।

यामुदेवपरा मर्त्यास्ते कृनार्या न सशय ॥’

(२) ‘सहज टेव’—जमे—

‘हरप बिपाद ग्यान अग्याना । जीवधम अहमिति अभिमाना ॥’

११७

नाहिन चरन रति ताहि तैं सहौ बिपति

कहत स्रुति सकल मुनि मतिधीर ।

वसै जो ससि उद्यग सुधा स्वादिन कुरग,

ताहि कयो भ्रम निरखि रविकर नीर ॥१॥

सुनिय नाना पुरान, भिटत नाहि अज्ञान

पडिय न समुझिय जिमि खग कीर ।

वज्रत बिनाहि पास सेमर सुमन प्राप्त,

करत चरत तेइ फल विनु हीर ॥२॥

बहु न साधन सिधि, जानौ न निगम बिधि,

नहि जप तप वस मन न समीर ।

तुलसिदास भरोस परम कइना कोस,

प्रभु हरिहैं विषम भवभीर ॥३॥

भावाय—मेरा प्रेम श्रीरघुनाथजी के चरणा में नहीं है, इसीसे नाना प्रकार दुःख म भोग रहा हूँ, (मने ही नहीं) वेदा और समस्त बुद्धिमान मुनिदा ने भी यही कहा है क्योंकि जो हिरण्य चन्द्रमा की गोद में अमृत का स्वाद ले रहा है उसे भला मगतपणा के जल में भ्रम क्यों होगा ? (जिस जीव को ब्रह्मानन्द के रस का चसका लग गया, उसे ससारी विषय घासे में नहीं डाल सकने । म विषया में पडा हुआ है, इसीलिए दुःख भोग रहा हूँ । जो श्रीहरि के चरणा का उपासक होता तो ये विपत्तियाँ ही क्या आती) ॥१॥

जसे तोता पडता या रटता तो सब कुछ ह, पर समझता कुछ भी नहीं, वैसे ही अनेक पुराणों के सुनने मात्र से मोह दूर नहीं होता। (अज्ञानी) तोता बिना फंदे के स्वयं बंध जाता है, प्राप ही चोंगली पकड़कर लटक रहता है वह सेमर के फूल की आशा करता है, (देखता है, कि इसका फूल इतना सुंदर है, तो फल कितना मीठा न होगा, पर) ज्योंही उसमें चोंच मारता है, उसे बिना फूल का, सारहीन, फल मिलता है, अर्थात् रुई के सिवा उसमें खाने के लिए कुछ भी नहीं मिलता, तब पछताता है (इसी प्रकार मनुष्य विषयरूपी चोंगली पकड़कर आप ही बंधा रहता है स्त्री, पुत्र, धन आदि पर माहित होकर उनका संग्रह करने में लगा रहता है। पर उनसे विछुडते ही दुखी हो जाता है ॥२॥

न तो मेरे पास कोई साधन है, और न कोई मिट्टि ही प्राप्त हुई है। मुझे वैदिक विधियाँ भी नात नहीं। जप-तप भी करना नहीं जानता, और न प्राणायाम से मन ही बश में किया है। इस तुलसीदास को तो बरुणा के भाण्डार भगवान रामचंद्रजी का ही एकमात्र भरोसा है। वही इसकी भयानक सासारिक विपत्ति को दूर करेंगे, जन्म-मरण के चक्र से मुक्त करेंगे ॥३॥

गन्धार्य—उछग—गोद । कुरग—हिरण । रविकरनोर—मृगतुष्णा का जल । कीर—तोता । बसत—बंध जाता है । पास—(पाश) जाल । चरत—चाच मारता है । हीर—गूदा ।

विशेष—(१) 'सुनिय अग्यात'—कबीर साहब भी कहते हैं—

'पडे - गुने, सीखे - सुने मिट्टी न ससय सूल ।  
बह कबीर कासो फहै, ये ही दुख का मूल ॥ -  
सासो कहै गहै नहीं चाल छली नहि जाय ।  
सलिल मोह नदिया बहे, पाव नहीं ठहराय ॥'

(२) 'सेमर हीर—तोते को ऐसी ही चेतावनी कबीर साहब भी दे रहे हैं—  
सेमर मुवना बेगि तजु, धनी त्रिगुवन पाँव ।  
ऐसा सेमर जो सेव, हिरदय नाही आँव ॥'

(३) 'विधि—शौच, दान यनानुष्ठान पुरश्चरण, यन मंत्र, पचाम्नि, प्राणा याम, समाधि, साधना आदि ।

(४) करना—श्रीब्रजनाथजी ने 'कहणा' का परिभाषा इस प्रकार की है—  
सेवक दुख ते दुखित हूँ, स्वामि शिखल हूँ जाय ।  
दुख हरि सुख साज तुरत, करना गुन सो आय ॥'

१९६३

मन पछितैहै अवसर बीते ।

दुलभ देह पाइ हरिपद भजु, करम, वचन अरु ही ते ॥१॥

सहसबाहु दसवदन आदि नप वचेन काल बली ते ।

हम हम करि धन - धाम सँवारे, अन्त बलि उठि रीते ॥२॥

सुत धनितादि जानि स्वारथरत, न करु नेह सबही ते ।

अन्तहूँ तोहि तजैगे पामर ! त त तजै अन्तरी ते ॥३॥

अथ नार्थाहि अनुरागु, जागु जड त्यागु दुरासा जी ते ।  
बुझै न काम अग्नि तुलसी कहै, विषय भोग बहु धी ते ॥४॥

भाषा—अरे ! अवसर बीत जाने पर तेरे मन को पधताना पडेगा, इसलिए कठिनता से मिलनेवाला मनुष्य शरीर पाकर भगवच्चरणारविन्दो का भजन कम बचन और हृदय से तू कर (अब भी कुछ नहीं बिगडा) ॥१॥

सहस्रबाहु और राखख सरोखे (महाप्रतापी) राजा भी बलवान काल से नहीं बचे उन्हें भी काल का घास बनना पडा । जो 'हम, हम' करते हुए घन और घाम सँभालने म लगे रहे व भी अत समय यहा से खाली हाथ ही चले गये (एक कौडी भी उनके साथ न गई) ॥२॥

पुन स्त्री आदि का मतलबी यार समझ इन सबसे तू प्रेम न बडा, क्याकि तेरे ये सदा के साथी नहीं ह, न पहले ये और न आगे रहेंगे । रे मूख ! जब ये सब के सब तुम्हे अत समय छोड ही देंगे तो तू इन्हें अभी से छोड क्या नहा देता ? (जसे, ये तेरे साथी न बनेंगे, वैसे तू भी इनका साथी न बन) ॥३॥

रे मूख ! (अविद्यारूपी निद्रा से) जाग जा, अपने स्वामी (श्रीरघुनाथजी) से प्रेम कर और विषयो से सुख पाने की दुराशा को मन से छोड दे । हे तुलसीदास ! कही कामनारूपी अग्नि बहुत-सा विषयरूपा धी डालने से बुझती है ? (वह तो और भी प्रज्वलित होगी । शानिरूपी जल स ही बुझती ह ।) ॥४॥

गन्दाय—ही त = हृदय से । रोते = खाली हाथ ।

विशेष—(१) हम हम रोते कबीर साहब सुनिए क्या चेतावनी देते ह—  
हम का जोड़ाव चदरिया चलती बिरियां ।

प्राण राम जब निकसन लागे उलट गइ बोड नन पुतरियां ॥

भीतर से जब बाहर लाये हूट गइ सब महल अटरियां ॥

चार जने भिनि छाट उठाइन रोषत ल चले डगर-डगरियां ॥

बहुत कबीर सुना भाई साथी सग चलौ वह सूखी सकरियां ॥

तथा—

पाँचों नीबल बाजतीं, होत छतीसों राग ।

सो मंदिर खाली पडा बटन लागे बाग ॥

भास-यास जोषा छडे, सबी बजाव गाल ।

मांस महल से ले चला ऐसा कान कराल ॥'

(२) गुप्त बरिदाति "स्वारपरत — ऋषि वामाजि का उपाहरण ह । देववि नारद के कहने पर जब उहाँन अपन कुम्बी जना म पूछा कि तुम लाग मरे पुण्य-याप के साथे हा या नहा तो उनका उत्तर या हमें तुम्हार पुण्य-याप य क्या मतलब ? हम तो सातन्त्रन व साथे ह । हम क्या जानें कि तुम हमारे लिए कहौस कि य प्रचार क्या क्या मात हो ? वामाजि व हृदय म लालन ज्ञान का उपाय हो गया ।

(३) बुद्ध व पात — विण भाव-गार्य—

न गातु काम कामानामुपभागेन नाम्यनि ।

हृदिया हृदयमेव भूय एवाभिवचन ॥'

वाहे वो फिरत मूढ मन धायो ।

तजि हरिचरन मगोज सुधा रस, रविकर जल लय लायो ॥१॥  
 त्रिजग, देव नर, अमुग अपर जग जोनि मक्ल भ्रमि आया ।  
 गृह वनिता, सुन, वधु भये बहु, मातु पिता जिह जाया ॥२॥  
 जाते निरय निकाय निरतर, सोइ इह तोहि मिखायो ।  
 तुव हित होइ कटे भव-अवन सो मगु तोहि न वतायो ॥३॥  
 अजहूँ विषय कहें जतन करत, जद्यपि बहु विधि डहैंकायो ।  
 पावक-काम भोग घन तें सठ, कैने परत बुझाया ॥४॥  
 विषयहीन दुग मिले विपति अति, सुख सपनेहुँ नहि पायो ।  
 उभय प्रकार प्रेत पावक ज्यो धन दुखप्रद स्तुति गायो ॥५॥  
 छिन छिन छीन होत जीवन, दुरलभ तनु वृथा गँवाया ।  
 तुलमिदास, हरि भजहि आम तजि काल उरग जग खायो ॥६॥

भावाय—रे मूढ मन ! किसलिए इधर उधर दौडा दौडा फिगता ह ? श्रीहरि-  
 चरणारविन्द का अमृत रस छोडकर मगतपणा के जन में क्या ली लया रहा ह ? भाव  
 यह कि ब्रह्मानन्द को छोडकर ससार के भूते विषयों की ओर मन मग को क्यों दौग रहा  
 है ॥१॥

पशु पक्षी, देवता, मनुष्य राचन एव अनेक सासारिक यानियों में तू भटक आया  
 ह जहा जहा तू गया वहाँ बहुतर सारे घर, स्त्री, पुत्र भाई तथा तुझे जन्म देनेवाले माता-  
 पिता हा चुने ह (न जाने कितनी बार तू कितनों से रिश्ता जोड चुका ह) ॥२॥

जिस काम के करने से तुझे सदा अनेक नरका में जाना पता ह लागा ने तुझे  
 वही विषय भागा का पाठ मिखाया । वह माग नहीं मुझा या जिस पर चरने से तेरा सासा-  
 रिक कष्ट कट जाये जन्म मरण से तू छूट जाये ॥३॥

इस प्रकार कई तरह से तू धला जा चुका ह, फिर भी आज तक तू विषय भागों  
 के ही लिए उपाय कर रहा है । रे दुष्ट ! (तनिक विचार तो कर) कामरूपी अग्नि में  
 भागरूपी घी डालने से वह कैसे शान्त होगी ? (जितना ही विषय भोग तू करेगा, उतनी  
 ही कामाग्नि और और भडकेगी, वह तो विरक्षितरूपी जल से ही बुकेगा, अथवा  
 नहीं) ॥४॥

फिर जब तुझे विषयों की प्राप्ति नहीं हुई, तब बडा ही दुख हुआ स्वप्न म भी  
 सुख नहीं मिला । इसलिए वेग ने विषयरूपी सम्पत्ति का दानों ही प्रकार से प्रेत की  
 बाग के समान दुखद बतलाया ह । (जैसे वन में यात्री भ्रम की भाग देकर माग भूल  
 जाने ह, और भ्रम में पकर उनसे न भागे बटा जाता ह न पीछे का ही पीछे बतता है,  
 उसी प्रकार विषयों के मिथ्या प्रलाभन में पकर, मनुष्य लाक और परलोक दानों से ही  
 हाथ धा बठता ह । न तो उसे भयेष्ट विषय-साधन मिलते ह और न उनका धार से  
 परखि ही होती ह ।) ॥५॥

तरा जीवन क्षण चरण म क्षीण हाता जा रहा ह । इस दुग्ध शरीर को तूने व्यर्थ

ही गोवा लिया। अतएव, हे तुनसोदास ! तू ससारी सुगा की आशा छोड़कर केवन श्री हरि का भजन कर। साधधान ! कालभूषी साँप ससार की ग्रमे जा रहा ह (त जाने, कय किस घड़ी तू भी कान का घास बन जाय) ॥६॥

शब्दाथ—रविकरजल—मगतृष्णा का पानी कोरा भ्रम। त्रिजग = (तिमक) पशु पक्षी, सप आदि। निरय = नरक। निकाय = समूह। बहकावो = घना गया। प्रेत पावक = लुक की चमक जिसे लोग भूत की भाग कहा करते ह। यह जगला में प्राय दिखाई देती ह, और चमककर तुरंत बुझ जाती ह।

बिनेष—(१) तुव बतायो—जिन्होंने अपनी सतति को बचपन से ही परमाथ का उपदेश दिया, ऐसे माता पिता इन गिने ही मिलते ह। कहाँ मिलती ह ध्रुव की माता सुनीति और महारानी मणालसा-असौ माताए ?

(२) पावक बुझायो—जय तक विषयो में जासक्ति रहेगी, तब तक वे कभी शान्त होने के नही। अनासक्त कम बंधन का कारण नही ह, परन्तु अनासक्ति अत्यन्त कठिन ह। अत वराम्य और अम्यास दोनों आवश्यक ह। यह मन अम्यास और वराम्य से ही बश में हो सकता ह। गीता में कहा ह—

‘असक्तय महाबाहो, मनो दुर्निग्रह चल।

अभ्यासेन तु कौ तेय, वराम्येण च गृह्यते ॥’

(३) छिन छिन तनु—

पानी केरा बुदबुदा, अस मानुष की जात।

देखत ही छिप जायमा, ज्यों तारा परभात ॥’

[ कबीर

२००

तावे सो पीठि मनहुँ तनु पायो।

नीच मोव्र जानत न सीस पर ईस निपट विसरायो ॥१॥

अवनि रवनि, धन धाम सुहृद सुत, को न इहहि अपनायो।

काके भये, गये सँग काके, सब सनेह छल छायो ॥२॥

जिह भूपनि जग जीति बाधि जम अपनी बाह बसायो।

तेऊ काल कलेऊ कीहे तू गिनती कब आयो ॥३॥

देखु विचारि सार का साचो, कहा निगम निजु गायो।

भजहि न अजहुँ समुझि तुलसी तहि, जेहि महेस मन लायो ॥४॥

भावाथ—र जीव ! (क्या कहना ! ) मानो तूने ताँवे से मटा हुआ शरीर पाया ह। तभी तो तू इन पानी क बुलबुले के समान अणुभंगुर शरीर को अजर अमर मान कर विषय भागों में लीन हो रहा ह। ह नाच ! तू यह नही जानता, कि मोत तरे सिर पर नाच रही ह ? तूने परमात्मा को बिलकुल ही भुला लिया (शरीर का भरण-पोषण ही जीवन का सबस्व समझ लिया) ॥१॥

पवित्री स्त्री धन मकान मित्र और पुत्र को किसने अपना नही माना ? किन्तु

(तनिक विचार तो कर) ये किसके हुए ? किसके साथ (मरते समय) गये ? इन सबके प्रेम में केवल कपट भरा हुआ है ॥२॥

जिन राजाश्रा ने सारे ससार को जीतकर, दिग्विजय कर कात को भी बनी बनाकर अपने अधीन कर लिया था, उन्हें भी जब एक दिन मृत्यु ने अपना हास बना लिया, तब तेरी तो गिनती ही क्या है ? ॥३॥

विचारपूर्वक (गान-श्रुति से) देख सच्चा सार क्या है ? और, वेदा ने निश्चय रूप से क्या कहा है ? हे तुलसी ! अब भी तू श्रीराम का समनवर नहीं भजता है ।

शब्दाय — मोचु = मोत । रवनि = (रमणी) स्त्री । कलेऊ = कलेवा भोजन । निजु = सिद्धातरूप से । लायो = लगाया ।

विशेष—(१) नीच सीस पर'—कबीर साहब की इस पर साखी है—

'माली आवत देखिके, कलिया कर पुवार ।

फूली-फूली चुनि लइ, काल्हि हमारी बार ॥

(२) 'गये संग काक'—

'इक दिन ऐसा होइगा, फोड काहू का नाहि ।

घर की नारी की कहै तन की नारी जाहि ॥'

(३) जेहि महेश मन लायो — शिवजी पावती से कहते हैं—

'अह जपामि दयेति, रामनामाक्षरद्वयम ।

श्रीरामस्य स्वल्पस्य ध्यानं कृत्वा हृदिस्थले ॥

२०१

लाभ कहा मानुष-तनु पाये ।

काय वचन-मन सपनेहैं कवहुँक घटत न काज पराये ॥१॥

जो सुख सुरपुर नरक, गह-वन आवत जिनिहि बुलाये ।

तेहि सुख कहैं बहु जतन करत मन समुन्नत नहि समुजाये ॥२॥

परन्दारा परद्रोह, मोहवस किये मूढ, मन भाये ।

गरभवास दुखरासि जातना तीव्र बिपति विसगये ॥३॥

भय, निद्रा, मैथुन, अहार सबके समान जग जाये ।

सुर दुरलभ तनु धरि न भजे हरि, मद अभिमान गँवाये ॥४॥

गई न निज परबुद्धि सुद्ध ह्वै रहे न राम लय लाये ।

तुलसिदाम यह अवसर वीते का पुनिवै पड़िताये ॥५॥

भाषाय—मनुष्य शरीर पाने से लाभही क्या हुआ यदि वह कभी स्वप्न में भी मन, वचन और कर्म से पराये काम नहीं प्राया, उसमें कोई परोपकार नहीं बना ॥१॥

विषय-मग्नीषी जो मुख बिना ही बुलाये, आप्त प्राप्त स्वर्ग नरक घर और वन में प्राप्त हो जाता है, उस मुख के लिए रे मन ! तू धाक प्रकार के उपाय कर रहा है ! समझाने पर भी नहीं समझता ॥२॥

धरे मूढ ! तूने अज्ञानवश पराई स्त्री के लिए और दूसरों से धर बाँधने के लिए

जो मन म आया सो बिया (विवेक रो काम नहीं दिया) । पूवजन्म में तूने गम में जो महान दुःख भोगे उनका दारुण कष्ट भूल गया ? (यह तही साचा कि इन मनमाने कुकर्मों से फिर वहां गमवास क दुःख भोगने पड़ेग) उनके कारण गम में घाना पडा ॥३॥

या तो जिस किसी ने ससार में जन्म लिया, उसमें भय, नीद, काम, आहार आदि एक सरीखे ही पाये जाते ह किन्तु देवतात्मा को भी दुलभ मनुष्य शरीर पाकर तूने गम वान का भजन नहीं किया और मद और ग्रहकार में उसे सो दिया ॥४॥

जिहाने अपने और पराय का भेद नहीं छाडा और निमल धन्त करण से श्री रघुनाथजी से प्रेम नहीं जोडा उन्हें, हे तुलसीदास ! ऐसा सुभवसर निरन्त जाने पर फिर पछताने स क्या मिलेगा ?

गद्याथ — काय = (काया) शरीर । घटत = करता ह, घाता ह । निज पर बुद्धि = अपने और पराये का भेद भाव ।

विशेष—(१) 'घटत न काज पराय — पिछले कई पदा में बराम्य का प्रतिपादन किया गया ह । कच्चे दिलवाला पर बराम्य का रग बडी जल्दी चढ जाता ह और उतर भी तुरन्त जाता ह । ये जन अज्ञानवश ससार का ठीक ठीक रहस्य नहीं समझ पाने उसे दूर से ही देखकर डर जाते ह और कायर की तरह पूछ दबाकर भागन ह । बराम्य का प्राय यही अर्थ किया जाता ह कि ससारो पदार्थों को जिस रूप म वे ह उसी रूप में, छोड देना चाहिए भले ही उनमें आसक्ति बनी रहे । इस पद में गोसाइजी स्वार्थ से विरक्त कराकर जोव को पुन परोपकार में लोक सग्रह के कर्मों में प्रवृत्त करा रहे हैं । वे विरक्त का अर्थ 'वीर' करत ह, 'कायर नहीं । परोपकार अर्थात् लोकोपकार के लिए स्वाय त्याग की बडी आवश्यकता ह, और इसी कारण विपदा की ओर से घणा कराकर विरक्ति का उपदेश किया गया है । यह पद गीता क कमयोग की ओर हठात मन को आकुष्ट करता ह ।

(२) भय जाये — भाव प्राप्त्य देखिए—

'आहारनिद्राभयमेषुनञ्च सामाग्रमेतत्पशुभिर्न राणाम ।'

[भत हरि

(३) 'यह भवसर पछिताये — सत्य ह,

आछे दिन पाछे गये हरि से किया न हेत ।

अन्न पछतावा क्या करे, विडिया चुग गई खेत ॥'

[कवीरदास

काज कहा नरतनु धरि सारयो ।  
पर उपकार सार स्रुति का जो घोखेहैं न विचारयो ॥१॥  
द्वैतमूल भय मूल सोक फल, भवतरु टरे न टारयो ।  
रामभजन तीछन कुठार ले सो नहि काटि निवारयो ॥२॥  
ससय सिन्धु नाम वोहिन भजि निज आतमा न तारयो ।  
जनम अनेक विवकहीन बहुजोनि भ्रमत नहि हारया ॥३॥

देखि आन की सहज सम्पदा, द्वय अनल मन जारयो ।  
सम, दम, दया, दीन-पालन, सीतन हिय हरिन सें भाग्यो ॥४॥  
प्रभु गुर पिता सखा रघुपति तें मन प्रेम वचन विमारयो ।  
तुलसिदास यहि आम सरन राखिहि जेहि गीघ उधारयो ॥५॥

भावाय—मनुष्य शरीर धारण करके तूने आविर किया क्या ? जो परापकार  
धेदो का सार है उस पर तूने नूनकर भा विचार नहीं किया ॥१॥

यह ससार मानो एक वृक्ष है । इसका अर्थात् भेदबुद्धि का इसकी जड़ है, भय  
काटे हैं और दुःख इसके फल हैं । यह वृक्ष हटाने पर भी नहीं हटता । क्योंकि जब तक  
इसकी जड़ नहीं हटाई जाती तब तक इसका हटाना सम्भव नहीं । यह तो केवल  
रामनाम ही तेज कुहाड़ी से ही कटता है । परन्तु तूने ऐसा किया नहीं ॥२॥

सशयूपो समुद्र से पार हो जाने के लिए रामनाम नौका है, सा उसका सेवन  
कर, भजन कर, तूने अपनी आत्मा को (अविद्या से) नहीं तारा । मनेक जन्म तक अनान  
यश अनेक यानियों में धूमता हुआ भा अब तक तू नहीं बचा ॥३॥

दूसरा की सहज सम्पत्ति देखकर ईर्ष्यारूपी प्राण में मन का जकाता रहा । शम  
दम, दया और दीना का पालन करते हुए हृदय को शांत कर तूने भगवत्पत्न्या नहीं  
की ॥४॥

तूने मन से, कम से, और बचन से उन शारवणाश्रम का भुजा किया जो तेरे  
(सच्चे) स्वामी हैं, गुरु हैं पिता हैं और मित्र हैं । हे तुलसीदास ! इतनी ता आशा  
कि भी है, कि जिसने जग्यु गीघ का तार किया, वही तुझे अपना शरण में रखेंगे ॥५॥

शब्दाय—सारथा=पूरा किया, बनाया । वाहित=नीका ।

विनय—(१) पर उपकार सारथुनि का—याम भगवान करने हैं—

अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम् ।

परोपकार पुण्याय पापाय परपोदनम् ॥'

(२) 'भवतश्च—नीचे के पद्य में 'ससार-वृक्ष का सागापाग वणन आया है—

'अध्यक्त मूलअनादि तरुत्वच चारि निगमागम भने ।

यत कथ सावा पर्वविस अनेक पन सुमन धने ॥

फल जुगल बिधि कटु मत्रुर बेलि अकेलि जेहि आशित रहे ।

पल्लवित फूलति तवल नित ससार बिटप नमान् ॥'

[रामचन्द्रनाम्

ससार-वृक्ष का मूल बहुत प्राचीन है । वेद में भी यह शब्द—

पाशेस्य विवाभूतानि त्रिपादस्यामत विद्रि ।'

२०३

श्रीहरि गुरु - पदकमल भजहु मन तजि अनिमान ।

जेहि सेवत पाइय हरि सुख - निधान भगवान् ॥१॥

परिवा प्रथम प्रेम त्रिनु राम मिनन अत्रि द्वि ।

जद्यपि निवट हृदय निज रहे सदन नमिनि ॥२॥



कार किया जाये । (परोपकार में ही नर शरीर की सायकता है) ॥८॥

अष्टमी के समान आठवाँ उपाय यह है, कि श्री रामचन्द्रजी अष्टप्रवृत्ति (पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, मन बुद्धि और मह्वार) से पर शुद्धस्वरूप हैं। जन्म तक हृदय से अनेक प्रकार की कामनाएँ दूर नहीं हुईं तब तक वे कैसे मिल सकते हैं ? (शुद्ध आनन्दधन भगवान का निवास गण्डमाग, निर्विकार पवित्र हृदय में ही होता है ।) ॥९॥

नवमी के समान नवाँ साधन यह है कि जिसने इस नौ दरवाजे की नगरी अर्थात् नौ छेद वाले शरीर में रहकर अपनी आत्मा का श्रेयस नहीं साधा, वह नाना योनियाँ में भटकता क्रूरगा। (क्योंकि विषयो में फँसकर वह कभी जन्म मरण ने छुटकारा न पा सकेगा, और सदा आत्मघाती ही ब्रह्मा जाएगा ।) ॥१०॥

दशमी के समान दसवाँ साधन यह है कि समय करना चाहिए क्योंकि जिसने दसो इन्द्रिया का समय करना नहीं जाना इन्द्रिया को वश में नहीं किया, उसके सार ही साधन निष्फल जाते हैं उस असमयत मनुष्य को धनुर्धारी श्रीराम का दर्शन नहीं होता । (इन्द्रिय लोलुप को भगवत्तरमास्वादन स्वप्न के समान है ।) ॥११॥

एकादशी के समान ग्यारहवाँ साधन यह है कि एकवृत्त चित्त करके (सब आर से हटाकर एक लक्ष्य में लगाकर) भगवत्सेवा करनी चाहिए । इसी आराधना से (पर माधरूपी एकादशी) व्रत का फल मिलता है और वह फल है जन्म मरण से मुक्त हो जाना ॥१२॥

द्वादशी के दिन जैसे (व्रत के उपरांत) दान दिया जाता है वैसे ही बारहवाँ साधन यह है कि ऐसा दान देना चाहिए कि जिससे तीनों लोकों में कोई भी भय न रहे । उस द्वादशीरूपी बारहवें साधन का पारण यही है कि सदा परोपकार में लगा रहना चाहिए । (इस दान और पारण से) फिर शोक नहीं यापता ॥१३॥

त्रयोदशी के समान तेरहवाँ साधन यह है कि जागृति स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं को त्यागकर भगवान का भजन करना चाहिए (सदा एकरस निर्वाध रूप से भगवद्भजन करना चाहिए) नारायण मन, कम और वाणी से परे है सबमें याप रहे हैं, स्वयं याप्य है अर्थात् दृश्यरूप भी है और धनत अपरिमित है । (प्रत्येक उनका भजन इन अवस्थाओं को त्याग देने पर ही सम्भव हो सकता है, क्योंकि जब तक जीव अवस्था भेद में रहेगा, तब तक वह धनत, सब यापी परमात्मा का पूरुरूपेण चित्त कर नही सकता ।) ॥१४॥

चतुर्दशी के समान गोपाल (इन्द्रियों के नियन्ता) भगवान चौदहवो लोका में रम रहे हैं । जड़ और चतुर्थ सब कुछ भगवान् का ही रूप है । जब तक जीव की भेद बुद्धि दूर नहीं हुई, मेरे-तेरे का भेद भाव नाश नहीं हुआ तब तक श्रीरघुनाथजी सासाररूपी आल की छिन्न भिन्न नहीं करते जन्म मरण से नहीं छुड़ाते ॥१५॥

अव पूणमासी के समान पंद्रहवाँ साधन जो सर्वोत्कृष्ट, पूण साधन है, यह है कि शांत शीतल अभिमान रहित ज्ञानमय और सबविषयों से विरक्त हो जाना चाहिए तभी परमात्म का अमृतस उपलब्ध होगा । इस महारस की केवल भगवान् के सबक ही जानते हैं । ( विषयी जन इस क्या समझ सकेंगे ! ) ॥१६॥

यहाँ गोसाइजी ने पान्गुन मास की पूणमासी का बणन किया है । यह पूणमासी

अप्य महीनों की पूणमासी से कहीं अधिक आनन्दमयी समझी जाती है) । होने में दहिक, भौतिक और दबिक इन तीनों तापों को जना दना चाहिए । फिर पाग खेलनी चाहिए (आनन्द मनाना चाहिए जब तक ससारो दुःखा का लेश भा रहेगा, तब तक जीव निश्चिन्त हाकर परमानन्द प्राप्ति का महोत्सव नहीं मना सकता ।) जा तू अपने मन में परमानन्द प्राप्ति की इच्छा करता है, तो इस माग पर चर (उपयुक्त पत्रह साधना को क्रम-क्रम से साध) ॥१७॥

वेदों, पुराणों और पंडिता का यही मत है कि भगवान् की लालापा का कीतन ही होली वे अवसर पर गाने व गात है । इन सब साधना पर विचार करके ससार सागर को पार कर जाना चाहिए और फिर कभी (भूलकर भी) यम-सेना के फन्दे में न पडना चाहिए । (जन्म मरण के चक्र में न फँसना चाहिए ।) ॥१८॥

अविद्या का नाश करनेवाले दुःखा व हर्षों और आनन्द की राशि केवल नारायण ही हैं । भले ही अनेक उपाय करा पर वे, सत्तों के अनुग्रह के बिना, प्राप्त होने के नहीं (सन्त-श्रुति सबसाधना में प्रधान है) ॥१९॥

ससार-समुद्र से तरन के लिए सन्तों के पवित्र चरण ही नौका है । हे तुलसीदास ! (इस नौका पर चढ़कर अर्थात् सन्ता के चरणों को सेवा करके) दुःखा का नाश करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी बिना ही प्रयास प्राप्त हो जाने है ॥२०॥

शब्दाय—द्वैतमति=भेद-बुद्धि । चरहि=विचरण कर । परस=स्पश । पड वग=काम, क्रोध, लोभ, माह, मद और मात्सय । सप्तधानु=अस्थि, चर्म रक्त, मांस, मज्जा मेद और बीज । नोद्वारपुर=नो छेदवाला शरार । पारन=व्रत के उपरान्त का भोजन । अति=जड से । लागु=घारूढ हो जा । चांचरि=पाग के गीत ।

विशेष—(१) श्रीहरि गुरु—यहाँ गुरु और हरि में अभेदत्व का प्रतिपादन किया गया है । गुरु की सेवा करने से हरि की प्राप्ति होती है । क्वार साहब कहते हैं—  
'गुरु गोविन्द दोऊ छडे, काके लागी पाँय ।

बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो सवाय ॥'

(२) परिवार—चन्द्रमा की पाँडश कलाएँ हैं । एक-एक विधि में एक-एक कला की बुद्धि होती है ।

'अमृतां मानदां सुष्टिमुष्टिप्रोति रति तथा ।

लज्जां, श्रिय, स्वधां, रात्रि, ज्यात्सना, हसवनीतत ॥

छायां च पूरणीं यामाममाचन्द्रकला इमा ॥'

[शारदा तिलक

श्रीवैजनायजी ने इसा प्रकार पाव की भी पाँडश कलाएँ कही हैं—निराशा सदासना, कांति, जिज्ञासा, कण्ठा, मुदिता म्पिरता, मुसग, उपासीनता, अद्धा, लज्जा, साधुता, तृप्ति, क्षमा विवेक और विद्या ।

(३) 'प्रेम दूरि'—

'जद्यपि प्रभु सत्रय समाना । प्रेम ते प्रगटि होत भगवाना ॥'

[रामचरितमानस

(४) 'राम विचार'—

'जारे बेह भगवत हई गार्ह, गांठे मारी मारि ।

बारी कुम्भ उखत उरी ललिया मन की मरी मरि ।।

(४), 'गणेशाय'—विपय विहा जसोर के मंगल पर विपय न निर—

'ऐसी मगरिया में बारी विप रसा । विप उर कबल लगारी सपना ॥

एर कुयो पाय पतिहारी । एर सजुर भर मो मारी ॥

एर मया कुरी विपय गई बारा । विपय भई पाया पतिहारी ॥

बरे बसोर नाम बिनु भरा । उर मरा हारिण सुन मया उरा ॥

(६) मारगसाहि—प्रबन इन्द्र ॥ पर विपय-नाम कर । ब विप अनुसारा राम का स्मरण मरी विप मया है ।

(७) शीतल भुजा—मू भुव हर मई जन ता सप लन, प्रपन,  
विपय सुनन लनाजन रगाजन घोर पापान ।

(८) सारा क परम—नयावि—

सपुरा भाय द्वारिका भाय आ जगनाय ।

साधु घरन सेवन विद्या, बसु मा भाय हाय ॥

(९) यह पर माहिर, भनि एय लखना की दुर्ग से बसा हा सुन्दर है ।  
सायक जना के सा हृदय का यह पर हार ही है । प्रमदा इन पर चरना हुआ सायक  
पुण सिद्धायस्था का प्राप्त कर सजता है इनमें विविगात्र भी मरुत हैं ।

२०४

जो मन लागे राम-रत्न मग ।

देह गेह सुत वित रत्न महें मगा होन त्रिनु जतन रिये जस ॥१॥

द्वन्द्वरहित, गतमान ग्यानरत, विपय त्रित लटाई नाना बस ।

सुखनिधान सुजान सोसलपनि ह्वै प्रसन्न बहु क्या न होहि बस ॥२॥

सबभूत हित, निव्यलाक चिन, भगति प्रेम दृढ नेम एकरस ।

तुलसिदास यह होइ तवहि जब द्रवे ईस जेहि हती सीसदम ॥३॥

भाषाथ—यदि यह मन श्रीरघुनाथजी के चरणा में इस प्रकार लग जाय जसे  
यह शरीर गृह पुत्र धन और स्त्री में मग्न हो जाता है (स्वभाव से हा उनके मोह में  
फन जाता है) ॥१॥तो यह द्वन्द्व (सुख दुःख आदि) से रहित हो जाय, इच्छा अभिमान दूर हो  
जाय यह नान में ललीन हो जाय तथा अपने क कथा से या उपाया से निमल हाकर या  
देहासक्ति से हटकर विपया से त्रिकत हो जाय । ऐसे भाग पर आनन्दन सुवनुर काश  
लेत्र श्रीरामचन्द्र जी क्या न उसके वश में हो जायें ? ॥२॥(जो जीव भगवच्चरणारविन्दा म इस प्रकार प्रेम करेगा) वह सब प्राणिया के  
हित म अपने को लगा देगा उसका वित शुद्ध हा जायगा भक्ति और प्रेम दृढ हो जायेंगे  
और लमके नियम त्रिकालाबाधित सदा एकरम रहेंगे अर्थात् वह सुख-दुःख सपत्ति-

विपत्ति आदि द्वन्द्वा में सम्पन्न वा विपन्न न हागा । हे तुलसीदास हो सकेगी, जब रावण का वध करनेवाले समय स्वामी (श्रीरामजी)

शब्दाथ—कलत्र=स्त्री । खटाई=निभा जाये परल में कस=परीक्षा । निग्रहीक = निमल, निष्कपट । एकरस = त्रिकालावार्त्ति

विशेष—(१) 'जो मन अस — इस प्रकार भगवत्सेवा करनी कि श्रीमदभागवत में कहा गया ह—

स व मन कृष्णपदारविन्दमोववांसि वकुण्डगुणानुवणने ।  
करी हरेमदिरमाजंनादियु श्रुति चकाराच्युनसत्कयोदये ॥  
मुकुदालिगतयदशने दृशो तदभृत्यगात्रस्पर्शेङ्गसगमम ।  
प्राण च तत्पाद सरोजसौरभे श्रीमत्तुलस्यारसना तदपिते ॥  
पापी हरे क्षेत्रपदानुसपणे शिरो हृद्योक्तेषपदाभिवदने ।  
काम च दास्येन तु कामकाम्यया ययोत्तमदलोक्गुणाश्रया रति ॥

(२) 'खटाई नाना कस — श्रीवज्रनाथजी के अनुसार स्वर्गीय भट्टजी ने इनका यह अर्थ किया ह — 'वह (ससार के) विषया से ऐसे अनग हो जाता ह, कि जस कस (कौसा) के पात्रा म घरी अनेक खट्टी वस्तुओं से मन फिर जाना ह ।' यह अर्थ भी घट सकता ह श्रीवज्रनाथजी ने इन विस्तार के साथ लिखा ह ।

(३) जेहि सीसत्स — जिसने दस शिरवाचे रावण का वध किया ह वही दशो इन्द्रिया पर विजय-लाभ कराकर परमहस अवस्था को प्राप्त कराएगा ।

(४) सहज स्वभाव से निष्कपट भाव से भगवत्चरणारविदा में प्रेम करना चाहिए—यही इस पद का निचोड ह ।

२०५५ 5

जो मन भज्यो चहै हरि मुरतरु ।

तो तजि विषय विकार सारभजु, अजहै जो मे कहीं सोइ कर ॥१॥

सम, सतीष, विचार विमल अति सतसगति, ये चारि दृढ करि घट ।

काम, क्रोध, अर लोभ, मोह मद, राग, द्वेष निमेष करि परिहर ॥२॥

स्रवन कथा, मुख नाम हृदय हरि, सिर प्रनाम सेवा कर अनुसर ।

नयनन निरखि कृपा-समुद्र हरि अग जगरूप भूप सीतावर ॥३॥

इहै भगति वैराग्य-न्यान यह हरि-तोपन यह सुम व्रत आचर ।

तुलसिदास सिव-मत मारग यहि चलत सदा सपनेहै नाहिन डर ॥४॥

भावार्थ—हे मन ! जा तू आहिररूपी कल्पवृक्ष का सवन करना चाहता ह, तो विषय विकारो को, काम लिप्ता को छोडकर साररूप श्रीराम-नाम का नजन कर, और जो मैं कहता हूँ उस पर अथ भी धारण कर (अभी भी कुछ विगडा नही) ॥१॥

समता सन्तोष, निमल ज्ञान और सत्संग, इन चारों को दृढतापूर्वक (हृदय में) रख ले इनको हृदयगम करके इनका अनुसरण कर । काम क्रोध, लोभ घनान महत्कार एक राग और द्वेष को सबथा त्याग दे हृदय में इनका लेसमात्र भी न रहे । (क्योंकि जब-

य दुग्ण हृदय म रहगे तर तक सद्गणों को वहाँ दान करने की नहीं, काम काँचन के आगे धम कम का निवाह हो नहीं सरता) ॥२॥

बाना स भगवत्तथा सुनाकर मग स (राम) नाम का स्मरण हृदय म भगवद् ध्यान और मस्तक से प्रणाम तथ हाथा म भगवान् को सेवा किया कर । नग म टपा सामर जड चनय म दास महाराजो जानकोर रामचन्द्रजी का दर्शन किया कर (इसी म तर शरीर की साधकता ह् नहीं ता विषया का अनुमरण करता हुआ तू मनुष्य शरीर को या ही यथ खो ग्या न ता लोक वनगा न पराक ही) । ३ ।

यही भक्ति ह् यही योग्य त् यही ज्ञान ह् और इसी मे भगवान् प्रसन्न होते ह्, अतएव तू इसी शभ कल्याणकारी व्रत का साधन कर । है तुनहीदास ! यह माग शिवजी का बतलाया हुआ ह् । इम (कल्याणयुक्त) माग पर चलन मे स्वप्न म भी (जन्म-मरण का) भय नहीं रहता ॥४॥

शब्दाथ —सम=(शम) शान्ति, समभाव । निसेप=(नि शप) पूणतया । अग=अड । जग=चतय । तापन=प्रसन करनेवाला । शिवमत=शिवजी का कहा हुआ सिद्धांत कल्याणकारी मत ।

विशेष—(१) विषय विकार—शब्द रूप रस गंध, स्पर्श, इंद्रिया के भोग विलास जो नितांत निस्सार ह् । विकार द्वारा इन विषया को निस्सारता देखकर सार स्वरूप आत्मा की उपामना हो श्रयस्कर ह् । जब अन्त करणचतुष्टय नि शपरूप से विशुद्ध हो जाता ह् तभी भगवद्भक्ति का, हरि कव्य का, अधिकार प्राप्त होता ह् ।

(२) अग जग रूप—सब पापी परमात्मा ।

सियाराममय सब जग जानी । करहुँ प्रनाम जोरि जुगपानी ॥

[ रामचरितमानस

(३) हरि तोपन—भगवान् केवल अनय भक्ति द्वारा ही प्रसन्न हात ह् । अनय उपसक का लक्षण ह्—

न विविन निषेधश्च प्रेमयुक्त रघुत्तमे ।

इन्द्रियाणामभाव स्यात् सोऽनयोपासक स्मृत ॥

[ धीमहाराणायण

(४) सपनहुँ नाहिन डह—प्रमाण ह्—

‘निभय वण्णव पत् ।

शरणागत जीव वास्तव म निभय हो जाता ह् । भगवान् न स्वयं उसे निभय कर दन का वचन दिया ह्—

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।

अभय स्थःअनेभ्यो ददाम्येत्प्रशतम् ॥

[ वाल्मीकि रामायण

नाहिन और कोउ सग्नलायक दूजो श्रीरघुपति-सम विपति निवारन । काका सहज सुभाउ सेवकवस काहि प्रनत पर प्रीति अकारन ॥१॥

जन गुण अल्प गनत सुमेरु करि, अवनुन कोटि त्रिलोकि विसारन ।  
परम कृपालु, भगत चिंतामनि, विरद पुनीत पतितजन-तारन ॥२॥  
सुमिरत सुलभ दास दुख सुनि हरि चलत तुरत पटपीत सँभार न ।  
साखि पुरान निगम आगम सब जानत दुपद-सुता अरु वारन ॥३॥  
जाको जस गावत कवि कोविद, जिहवे लोभ, मोह मद, मार न ।  
तुलसिदास तजि आस सकल भजु कोसलपति मुनिवधू-उधारन ॥४॥

भावार्थ—श्रीरघुनाथजी के समान विपत्तियों का दूर करनेवाला तथा शरण लेने योग्य कोई दूसरा नहीं है (शरण तो उसी का लेनी चाहिए, जो निभय हाकर रक्षा कर सके, सो श्रीराम का छोड़कर ऐसा कोई समय नहीं । सभी किसी-न किसी भय से स्वयं ही पीड़ित हैं) । शरणागता पर किसका अकारण प्रेम है ? ॥१॥

जब श्रीरघुनाथजी अपने दास के जरा से गुण को देखते हैं, तब वे उसे सुमेरु पर्वत के मदश महान् मानते हैं, और उसके कराड़ा दोषा को देगकर भी भूल जाते हैं । कारण कि वे बड़े ही दयालु भक्ता के लिए चिंतामणिरूप हैं (जो-जो भक्त माँगते हैं, वह पाते हैं) और पवित्र करने के विरदवाले तथा पापिया का (मसार सागर से) उद्धार कर देनेवाले हैं ॥२॥

स्मरण करते ही जिना किसी कठिनाई के प्राप्त हो जाते हैं । अपने दास का कष्ट सुनकर इतनी शोचता से (दुःख दूर करने का उसके पास) दौड़ आते हैं कि अपने पीताम्बर तक का नहीं सँभालते (जहाँ जैसे बड़े होत हैं, वहाँ से वैसे ही दौड़कर चने आते हैं) । इस बात के साक्षी पुराण, वेद शास्त्र द्रौपदी और गजेन्द्र, ये सब हैं (मैं कवि कल्पना से काम नहीं ले रहा हूँ इसके उदाहरण भी पाये जाते हैं) ॥३॥

जिनके अतर में लोभ, मोह अहंकार और काम नहीं हैं, ऐसे कवि और ज्ञाना पुरुष जिनकी कीर्ति का गान करते हैं हे तुलसीदास ! सारी लोक परलाक की आशाओं को छोड़कर, अहल्या का उद्धार करवाने उन कोशनेश श्रीराम का ही तू भजन कर ॥४॥

शब्दार्थ—दवन = (दमन) दूर करनेवाला । समन = (शमन) शान्ति देनेवाला । सिराहि न = बुरे नहीं होते हैं । बारन = एक बार । लुब्ध = लोभी । सुगति = मोक्ष । वाग्नीव = कृपालु ।

विशेष—(१) प्रीति भवारण — निष्कारण निष्काम प्रेम ही, वास्तव में प्रेम है । जिसा वस्तु की इच्छा करके जो प्रेम किया जाता है वह तो व्यापार है । सकाम प्रेम स्थिर भावही रहता । सा ऐसा निष्काम प्रेम भगवान् ही जीवा पर करते हैं, और किसी का सामर्थ्य नहीं है ।

(२) 'पटपीत सँभार न'—श्रीमदृजा ने यह अर्थ किया है—“दास के दुःख का सुनते ही वे तुरत अपने पीताम्बर को सँभालकर चलते हैं अर्थात् भक्त का दुःख दूर करने के लिए पीताम्बर पहन, तुरन्त जाने का तयार हो जाते हैं, पर यदि पीताम्बर पहनने लगे तो देर न हो जायगी ? पीताम्बर तो पहने से हा पहने हुए हैं । अतः तुरत दौड़कर बिना-उस सँभाले ही अपने भक्त के पास चले जाते हैं । पाठ 'सँभार न' है, न कि

भजिचेलायक, सुखदायक रघुनाथ गरिम सराप्रद दूजा जाहि ।  
 आनेदभवन, दुषदवन, सोतगमन, ग्याग्मन गुा गा गिगाहि ॥१॥  
 आरत, अघम, पुजाति, बुटिल, राल पाता, गमीन कहे जे गमाहि ॥  
 सुमिरत नाम भिवसहे वारव पावा मो पद, जहा गुर जाहि न ॥२॥  
 जावे पद-यमल लुघ मुनि मधुकर, विरत जे परम सुगतिह लुभाहि ॥  
 तुलगिदास सठ तेहि ॥ भजसि यस, वास्तोस जो अनायाहि दाहिन ॥३॥

भाषाय—भजा करन योग्य, घात दनवाता और शरण में रहनेवाला हमारी  
 औररघुनाथजी के समान कोई दूसरा नहीं है । उन घान-घाम, गुना का तात करनवाते,  
 शोक हरनेवाले लामीनात भगवा के गुण गिनते गिनत कभी पूर नहीं होत । क्योंकि य  
 अनन्तगुण विशिष्ट हैं ॥१॥

जो दुतो, नीच, घट्यज, कपटी, दुष्ट पावो और भयभीत कही भी शरण नहा  
 पा सकते, वे भी एर वार ही श्रीरामनाम स्मरण कर उस पद पर पहुँच जात है । वहाँ  
 देवता भी नहीं जा सकते ॥२॥

जिनके चरणरूपी कमला में ऐसे विरक्त मुनि मधुप लुघ रहने हैं (रसलोतुप यने  
 बडे ह), जिहें मोक्ष तक का लाभ नहीं (जो मोन-गुन का भी तुल्य समझकर भगवान  
 चरणारविन्दो का परागपान कर रहे ह) है षठ ! तुलसीदास ! उन कल्याणमय प्रभु का  
 भजन तू क्यों नहीं करता है जो अनाया पर सदा कृपा करते हैं ? ॥३॥

शब्दाय—दवन=(दमन) दूर करनेवाला । समन=(शमन) शान्ति देनेवाला ।  
 सिराहि न = पूर नहीं होने हैं । वारव = एक वार । लुघ = लोभी । सुगति=भाग ।  
 कास्मीक=कृपालु ।

विशेष—(१) 'सुमिरत जाहि न'—प्रमाण है—

'सकृदुच्चारयेद्यस्तु रामनामपरात्परम ।

तुद्धात करणो भूत्वा निर्वाणमधिगच्छति ॥

[ पद्मपुराण

(२) सुगतिह लभाहि न —क्याकि—

'सगुन उपासक मोच्छ न सेहीं —

[ रामचरितमानस

'चारों मुक्ति भरे तह पानी, घर छावे ब्रह्मघ्यानी ।

—हरिराम यास

राग कल्याण

२०८

नाथ सो कौन विनती कहि सुनावी ।  
 त्रिविध विधि अमित अबलोकि अघ आपने,  
 सरन सनमुख होत सकुचि सिर नावी ॥१॥

विरचि हरिभगति को बेप वर टाटिका,  
कपट-दल हरित पल्लवनि छावों ।  
नामलगि लाइ लासा ललित वचन बहि,  
व्याध ज्यो विषय त्रिहँगनि वझावों ॥२॥

कुटिल सतकोटि मेरे रोम पर वारियहि,  
साधुगनती मे पहलेहि गनावों ।  
परम वर खव गव पवत चढयो,  
अग्य सवग्य, जन मनि जनावों ॥३॥

साच कियो भूठ मोको कहत, कोउ  
कोऊ राम ! रावरो, हों तुम्हारो कहावों ।  
विरद की लाज करि दासतुलसिहि देव ।  
लेहु अपनाइ अब देहु जनि बावों ॥४॥

भावाय—हे नाथ ! आपको मैं किस प्रकार अपनी विनती कह सुनाऊँ ? अपने ताना प्रकार के (मन वचन और कर्म से उत्पन्न) अगणित पापों की श्राव देवकर जब मैं आपकी शरण में आता हूँ, तब सामना होते ही लज्जावश सिर नीचा कर लेता हूँ (भूल स आँख नहीं मिला सकता, क्योंकि मेरे पास एक भी पुण्य का बल नहीं, कि जिससे आपकी शरण प्राप्त कर सकूँ) ॥१॥

भगवद्मन्त्रों का भेष धारणकर सुन्दर टट्टी बनाता हूँ, और कपटरूपी हरे हरे पत्ता से उसे छा देता हूँ । (तिलक लगाकर कण्ठी माना पहनकर राम-नाम जपता हूँ और इस घोले से दूसरों की आँखों में धूल झाँकता हूँ । पावण्ड कर-कर लोगो को ठगना मेरा कर्तव्य हो गया है) । आपके (राम) नाम की लगी लगाकर मधुर वचना का लासा लगा देता हूँ । (राम राम जपता हुआ ऐसी मधुर वाणी बोलता हूँ कि लोग सधमुच ही मुझे महात्मा समझने लगते हैं) फिर बहेलिया की तरह विषयरूपी पक्षियों को फँसा लेता हूँ । (जोगों की दृष्टि में तो वपणव बनकर राम राम जपता हूँ पर करता क्या था हूँ सो मुनि ए रूपवती स्त्रिया को काम-दृष्टि से खलता हूँ, काम-वार्ता सुनता हूँ सुगन्धित माला धारण करता हूँ और जितने भी भोग विलास हैं उन सभी में इद्रिया को फँसाता हूँ) ॥२॥

मेरे एक रोम पर सौ करोड़ पापी निधावर किए जा सकते हैं, पर तो भी भनेका साधुमा की गणना में सबप्रथम गिनवाना चाहता हूँ सत शिरोमणि बनने का दावा रखता हूँ । मैं बड़ा ही असम्य और नीच हूँ, पर अभिमान के पहाड़ पर चढ़कर धठा हूँ । महामूल होते हुए भी अपने आपको श्रेष्ठ बतलाता हूँ ॥३॥

हे भगवन् ! कह नहा सकता कि भूठ है या सच पर कोउ कोई मुझे देखकर कहे हँ कि यह रामजी का हँ और मैं भी आपही का' कहनाया चाहता हूँ । हे देव ! तब फिर अपने वान की लाज रखकर इस तुलसीदास का आप अपना हाँ लाजिए (क्योंकि यदि इससे, अब आपने मुझे न अपनाया तो मैं किसका होकर रहूँगा ? मेरी कलाई खुज जाने पर मैं कोई मुझ पर विश्वास करेगा और न अपनी शरण में ही लेगा । इसलिए आप ही



और वहाँ ठौर रघुवस भनि मेरे ।  
 पतित-पावन, प्रनत-पाल, असरन सरन,  
 बाकुरो बिरद विरुदेत केहि केरे ॥१॥  
 समुझि जिय दोष अति रोष करि राम जो,  
 करत नहि कान विनती बदन फेरे ।  
 तदपि ह्वै निडर हौं कही करुना सिंधु ।  
 क्याख रहि जात सुनि बात विन हेरे ॥२॥  
 मुख्य रुचि होत बसिबे की पुर रावरे,  
 राम ! तेहि रुचिहि कामादि गन घेरे ।  
 अगम अपवग, अरु स्वग सुकृतैक फल,  
 नाम बल बयो वसौं जम नगर नेरे ॥३॥  
 कतहुँ नहि ठाउँ, कहँ जाउँ कोसलनाथ ।  
 दीन बितहीन हौं, विकल विनु डेरे ।  
 दास तुलसिहि वास देहु अब करि कृपा  
 बसत गज गीध व्याधादि जेहि खेरे ॥४॥

भाषाय—हे रघुवशमणि ! मेरे लिए और कहा स्थान है ? (आपके चरणा को छोड़कर, बताओ और नहीं जाऊ ?) पापियों को पवित्र करनेवाले, शरणागता को पालनेवाले एवं प्रनाथों को शरण देनेवाले तो एक आप ही हैं । आपका सा बाँका बाना और किस बाने वाले का है ? ॥१॥

हे रघुनाथजी ! अपने मन में मेरे अपराधा को समझकर क्रोध से यद्यपि आप मरी विनती पर ध्यान नहीं देते हैं और मेरी ओर से अपना मह फेर हुए हैं, तो भा म निभय होकर हे कल्याण मागर ! यही कहूँगा कि मेरी बात सुनकर उस पर ध्यान दिय बिना आपसे कस रहा जायगा ! (क्याकि जब आप किसी दीन की पुकार सुनते हैं तो तुरन्त उस पर ध्यान देने हैं पर मरी हा बार टाल-तूल कर रहे हैं, इसीम मुझे आश्चर्य हाता है ।) ॥२॥

(यदि धार मरा इच्छा पूछन हैं तो सुनिण) सबम प्रमुग कामना तो मेरी यही है कि मैं आपके घाम (साजन साध) में जाकर रहूँ किन्तु हे नाथ ! उम रुचि का काम क्रोध साभ और मोह धर हुए हैं (य दुष्ट उम इच्छा का दमा तैव हैं) । माच ता महा दुःख है (क्याकि कामनामा का समूच नाश नहीं हुआ) । स्वग मितना भा कठिन है क्याकि वह बचन मत्कमों के फल में प्राप्त हाता है (मन मत्कम तो कोर किया नहीं, स्वग कम जा मकता है ?) । अब रहा नरक मो आपन नाम के यन मरास पर वहाँ भी नहीं जा सकता है ! (क्याकि आ राम-नाम का स्मरण करना है, वह नरक-यातना में छूट जाता है ।) ॥३॥

अब मुझे कही भी रहने के लिए ठौर नहीं रहा । कहाँ जाऊँ ? हे कोशलनाथ ! मैं

निघन और दीन हूँ (घनाड्य होता तो बहो रहने का घर बनवा लेता) । निवास स्थान के न होने से व्याकुल हो रहा हूँ । अतः हे नाथ ! इस तुलसीदास को कृपाकर उसी गाँव में रहने को स्थान दे दीजिए जहाँ गजेन्द्र, जटायु, व्याध (वाल्मीकि) आदि रहते हैं ॥४॥

गदाय—बाँकुरो=बाँका, निराला । विरुत=वानावाला । क्याश्व=क्या + श्व । अपवग=मोच । खेर=खडे म गाँव में ।

विनय—(१) 'करत नहिं फेरे'—ऐसा न कीजिए क्योंकि—

'सुरति करी मेरे साइयाँ, हम हैं भव जल माहि ।

आपे ही बहि जायेंगे जो नहिं पकरो वाहि ॥'

(२) 'स्वग नेरे'—स्वग जाने में मेरे ये पाप बाधक हूँ और नरक जाने में आपका राम-नाम । साधक तो कही भी कोई नहीं दिखाई देता ।

(३) 'याध'—वाल्मीकि से आशय है । पहले यह एक बहेलिया था । नाम रत्ना कर था । पीछे दर्वणि नारद के उपदेश से जीव हिंसा त्यागकर 'मरा मरा' जपने लगे, और मुक्त हो गये । कहा है—

उलटा नाम जपत जग जाना ।

वाल्मीकि भे ब्रह्म समाना ॥'

श्रीकृष्ण के चरण म घाए मारनेवाले जरा' नामक व्याध से भी आशय हो सकता है ।

श्रीदवनारायण द्विवेदी ने अपनी टाका में एक तीसरे ही पुराण प्रसिद्ध 'याध से आशय लिया है, जिसका नाम धम' था ।

२११

कवहूँ रघुवममनि । सो कृपा करहुगे ।

जेहि कृपा याध गज, विप्र, खल नरतर,

तिहहिं सम मानि मोहि नाथ उद्वरहुगे ॥१॥

जोनि बहु जनमि किये करम खल विविध विधि,

अधम आचरन कछु हृदय नहिं धरहुगे ।

दीनहित । अजित सज्ज्य समरथ प्रनतपाल

चित मृदुल निज गुननि अनुसरहुगे ॥२॥

मोह मद मान कामादि खल मण्टली

सबुल निरमूल करि दुसह दुख हरहुगे ।

जोग-जप-जग्य विनान ते अधिक अति,

अमल हट भगति दे परम सुख भग्हुगे ॥३॥

मन्दजन-मौलिमनि सत्रल मापन-हीन,

कुटिल मन, मलिनजिय, जानि जा उरहुगे ।

दासतुलसी वेद विदित सिद्धावली,

प्रिमल जम नाथ । केहि भाति विस्तरहुगे ॥४॥

कमल का एक फूल लेकर आपकी शरण में गया, तब उसके दीन वचन सुनकर चक्र सुदशन लेकर आप गरुड को बड़ी छोड़ सुरान (दौड़ते हुए) चले आये (प्रद्व चण नी उसका प्राप्त वचन न सुन मवे) ॥२॥

जब (भरो सभा में) दुष्ट दु शासन द्रौपदी के वस्त्र उतारने लगा, तब जबल उसके स्नना कहने पर ही कि 'हाय ! भगवान् मरी लाम रखिए' आपने विप्रिय रगो के वस्त्रा का ढेर लगा दिया (उसको साडी इतनी लम्बी बना दी कि खीचते-खीचते दु शासन थक गया, पर उस उसका धार न मिला) ॥३॥

यह समझ-बूझकर देव मनुष्य, भुनि और विद्वज्जन आपके चरणों की सेवा करते ह । राजा नग का उद्धार करने वाले समय भगवान न किसका भ्रम नही किया ? (जो उनकी शरण म गया उसा को अभय कर दिया) ॥४॥

गन्दाप—सुनाम=चक्र । पाहि=रक्षा करो । वरन=रण । नृग = एक राजा का नाम ।

विशेष=(१) 'सुनाम—श्रीयुन भट्टजी ने इसका अर्थ नाभि लिखा ह, अर्थात् नाभि का धारण करनवाने भगवान् सुनाम । इस अर्थ म शकित्य है । सुनाम' का अर्थ चक्र होता ह । यही अर्थ नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित 'तुनसोय'चावनी में भी माना गया ह ।

राग कल्याण

२१४

एमी वचन प्रभु की रीति ?

त्रिरद हतु पुनीत परिहरि पावरनि पर प्रीनि ॥१॥

गई मारन पूतना कुच बालकूट लगाइ ।

मातु की गति दई ताहि वृपालु जादवराइ ॥२॥

बाम माहित गोपिकनि पर वृषा अनुतिन कीन्ह ।

जगत पिता त्रिरचि जिह्व चरन की रज लीह ॥३॥

नेम तें भिमुपाल दिनप्रति दन गनि-गनि गारि ।

त्रियो लीन सु आपु म हरि राज-ममा मंशारि ॥४॥

व्याप चित दै चरन मार्या भूटमनि मृग जानि ।

यो मदह स्वलार पठयो प्रगट करि निज वारि ॥५॥

वीन निहनी कटै जिह्व मुहन अर अर दाउ ।

प्रगट पातरूप तुनसी मरन राग्या माउ ॥६॥

भाषाय—(भगवान क विषाय, और किस रतामा का ऐमी रात्रि है या अपने बाने की मात्र रगत क निर पत्रि जावा का त्याग कर पामर जना पर प्रेम करता है ? ॥१॥

पूतना स्ना' में त्रिर लगाकर —हैं (भगवान् वृष्ण का) मारन गई था, किन्तु वृष्णु यादव धा वृष्णु न उन मात्र का-मी मुक्ति (माध) प्राप्त का ॥२॥

आपने बान-वर्द्धन गतिरा पर हा गया हुआ का कि उनके चरणों की धुनि

जगत्पिता ब्रह्मा ने भी अपने मस्तक पर चढ़ाई (क्याकि प्रेमस्वरूपा गोपियो का अपने अपना ही स्वरूप दे दिया था) ॥३॥

जो शिशुपाल निरय नियम से गिन गिनकर गालियाँ दता था (नित्य श्रीकृष्ण को सी गालियाँ देने का उसका सक्ल्प था), उस भगवान् ने राजाश्री की सभा में देखते देखते अपने स्वरूप में लीन कर लिया ॥४॥

मूख बहेलिये ने तो हिरण समझकर अपने चरछा में निशाना लगाकर (गण) मारा, पर उसे अपने, अपने दयालु स्वभाव मे सपेह गोलोक भज लिया ॥५॥

जिन्होंने पुण्य और पाप दोनों ही किये ह उनके लिए तो क्या कहा जाय ? (क्याकि उनका सदगति पाने का कुछ-न कुछ तो अधिकार था ही) किन्तु उहाने तो प्रत्यक्ष पापमूर्ति तुलसी को भी शरण में रख लिया ह, यहो आश्चर्य ह ॥६॥

गदाय — कालकूट = विष । बानि = स्वभाव । सुवृत्त = पुण्य ।

विशेष—(१) 'पूतना — कहत ह कि यह किसी पूवजन्म में अप्सरा थी । वामन रूपधारी विष्णु का रूप देखकर, वात्सल्य स्नेह से, उनके मन में आया कि इस बालक को पुत्र मानकर अपने स्तना का दूध पिलाऊँ । अतयाभी भगवान् उसके मन की इच्छा ताड गये । वही अप्सरा पूतना के नाम से किमी घोर पाप के कारण, गच्छसी हुई । भगवान् कृष्ण ने मातृ भक्ति प्रदर्शित कर उसे स्वर्ग भेज दिया ।

(२) 'काम-मोहित गोपिकनि पर' श्रीमद्भागवत में महाराज परीक्षित ने ब्रह्मविशुवदेव से जब यह प्रश्न किया कि गोपिया तो काम माहित थी उहें परमपद कमे प्राप्त हुआ तब शुक्रदेव ने यह उत्तर दिया, कि जिहाने समस्त ससार को भी श्रान-वन-दत्त पर योद्धावर कर उनसे निष्काम प्रीति जोनी, भला वे काम मोहित हो सकनी ह ? गोपियों की उपमा किससे दी जाय ? एक प्रेमदीवानी गोपी कहती ह —

‘लोक पहिरावो, पाँव बेडी ल भरावो,  
गाढ़े बघन बंधावो औ खिचावो काची खाल सों ।  
विष ल पिलावो ताप सूठ भी चलावो, मात  
घार में बहावो बांधि पत्थर 'कमाल सों ॥  
बिच्छू ल बिछावो ताप मोहि ल सुलावो फेरि  
आग भी लगावो बांधि कापड दुसाल सों ।  
गिरि से गिरावो, काले नाग से उसावो,  
हा हा, प्रीति ना छुडावो गिरिधारी नदलाल सा ॥’

तथा—

‘कोउ कही कुलटा कुलोन अकुलीन कही,  
कोउ कही रकिनि, कलकिनि कुनारी हों ॥  
कंसो देवलोक, परलोक, नरलोक, में ती  
लीनी है अलीक, लोक-लीकन ते प्यारी हों ॥  
सन जावो घन जावो दिव गुरुजन जावो,  
जीव क्यों न जावो टेक टरति न टारी हों ॥

गुणापावारी गिरिपारी की मुकुटापार,

पीतपारी चारी मुरति प चारी ही ॥'

तभी सा प्रेम परा भक्तिरूपा गात्रिकाया के विनय म कहा गया यह पं प्रसिद्ध

ह—

गोपी प्रेम की गुन्ना ।

जिन गुणात कीं बस धरपो उर परि स्याम भुजा ॥

सुक मुनि स्यात प्रसता बीनी उदय तात तराहो ।

भूरि भाग्य गोब्रुत की यनिता अनि पुनोत जगमाहो ॥

कहा भयो जु बिप्र कुल जनप्यो सेवा-मुमिरन माहो ।

स्यपच पुनोत दास परमानंद जो हरि-सानुपुत्र जाहो ॥

—परमान-दास

(३) व्याच — कहत ह कि पूव जन्म में यह बानि बानर था । बदना चुकाने के लिए इसने भी धाग स, भगवान् कृष्ण के चरण पर प्रहार किया । चरण में पद्म के चिह्न से भगव नेत्र का भ्रम हो जान से इसन बाण चला गया । बाण को पाठ माने पर इस भारी दुःख और परवास्ताप हुआ, किन्तु भगवान् न उगे सहेह स्वयं भेज दिया ।

(४) उदारहृदय गोसाइजी न इस पद में श्रीकृष्ण भगवान् का ही गुणानुवाच गाया ह । आश्चर्य ह कि धनय (?) रामभक्त बजनाथजी ने अपनी टीका में यह सिद्ध करने के लिए कि इस पं म श्रीकृष्ण का महत्त्व गौण ह और ध्वनि से श्रीरामजी का ही प्राधान्य सिद्ध होता ह व्यय ही पुंठ रग डाल ह । इस पद में से तो कही भी ऐसा कोई अर्थ निकलता ही नहीं ह । श्रीकृष्ण-गोसावली के रचयिता गोसाइजी के हृदय में कभी ऐसी सकीणता के भाव उद्भूत नहीं हुए हाग ।

२१५

श्रीरघुवीर की यह बानि ।

नीचहू सो करत नेह सुप्रीति मन अनुमानि ॥१॥

परम अग्रधम निपाद पावर, कौन ताकी कानि ?

लियो सो उर लाइ सुत ज्यो प्रेम को पहिचानि ॥२॥

गौध कौन दयालु, जो विधि रच्यो हिंसा सानि ?

जनक ज्यो रघुनाथ तावहँ दियो जल निज पानि ॥३॥

प्रकृति मलिन कुजाति सबरी सकल अवगुन-खानि ।

खात ताके दिये फन अति रुचि बखानि-बखानि ॥४॥

रजनिचर अह रिपु विभीषन सरन प्रायो जानि ।

भरत-ज्यो उठि ताहि भेंटत देह-दसा भुलानि ॥५॥

कौन सुभग सुसील बानर जिनिहि सुमिरत हानि ।

किये ते सब सखा, पूजे भवन अपने अनि ॥६॥

राम सहज कृपालु कोमल दीनहित दिनदानि ।

भजहि ऐसे प्रभुहि तुलसी कुटिल कपट न ठानि ॥७॥

भावाध—श्रीरघुनाथजी का स्वभाव ही ऐसा है, कि व मन में विशुद्ध और अनय प्रेम समझकर नाच जना के प्रति भी स्नेह करत है ॥१॥

गुह निपाद महान नाच और पायी था, उसका क्या प्रतिष्ठा थी ? किन्तु रघुनाथ जी ने उसका प्रेम पहचानकर उस पुत्र की तरह छाती से लगा लिया ॥२॥

जटायु गीध जिसे ब्रह्मा न हिंसामय है रचा था, कौन-सा दयालु था ? किन्तु रघुनाथजी ने, अपने पिता के समान, उसे अपने हाथ से जनार्जनि दा ॥३॥

शत्रु स्वभाव से ही मली-कुचली थी नीच जाति की था और सभी भवगुणों का शानि थी, परन्तु (उसकी सच्ची प्रीति देखकर) उसका हाथ के फल आपने स्वाद बखान बखानकर बड़े प्रेम से खाये (मूरदासजी ने ता महीं तक लिया है कि उसके जूठे बर खाये, क्योंकि वह चल चलकर मीठे बर देती थी, और खट्टे फेंक देती थी) ॥४॥

राक्षस एवं शत्रु विभीषण को शरण में आया देख, आपन उठकर उसे भरत के समान हृदय में लगा लिया, उस समय प्रमादिकय के कारण आपन शरीर को मुघ-बुघ भी मूल गय ॥५॥

बदर कौल-से सुन्दर और शील-स्वभाववाले थे ? जिनका नाम लेने से भी मनिष्ट हाता है, उन्हें भी आपने अपना मित्र बना लिया । (इतना ही नहीं, वरन्) जब अपने घर पर, अयोध्या में, आये, तब उनका भारी आदर-मत्कार भी किया ॥६॥

श्रीरामचन्द्रजी प्रकृति से ही प्यालु, कोमल स्वभाववाले गरीबों के हितु और सदा दान देनेवाले हैं । इसलिए, हे तुलसी ! तू ता छल-कपट त्यागकर ऐसे ही स्वामी का भजन कर (निकपट भाव से, अनय प्रेम से सदा भजन किया कर) ॥७॥

गद्य—कानि=प्रतिष्ठा । पानि = हाथ । दिन = नित्य ।

विशेष—(१) 'गीध श्रीरामचन्द्रजी ने जटायु के साथ वास्तव में पिता के जसा ही बर्ताव किया था । गाद में धायल मरणासन्न जटायु को लेकर आप कहते हैं—

मेरे जान, तात ! कुछ दिन जीज ।

देखिय आप सुवन-सेवा-मुख, मोहि पितु को मुख दीज ॥

दिग्ग देह इच्छा जीवन जग त्रिधि मगाइ मनि लीज ।

हरिहर-सुजस सुनाइ, दरस ब लाग कृतारय कीज ॥

देखि बदन, सुनि धचन अमिय, तन रामनयन जल भीजे ।

बोलेो बिहग बिहंसि, 'रघुबर बलि कहीं सुभाय पतीज ॥

मेरे मरिबे-सम न धारि फल होहि ती क्यों न करीजे ।'

तुलसी प्रभु दियो उत्तम मौन ही परी मनु प्रेम सहीज ॥'

(२) जिन्हि सुमिरत हानि—स्वयं हनुमान कहते हैं—

प्रात सेइ जो नाम हमारा । तादिन ताहि न मिल अहारा ॥

(३) दिनदानि—महान् उदार । श्रीभगवद्गुणपण में 'श्रीदाय्य' गुण का यह लक्षण मिलता है—

‘पात्रापात्रविवेकेन देशानाद्युपेक्षणात् ।  
यदायत्य विदुर्वेदा जीदाय्य वचसा हरे ॥’

(४) इस पद में गामाइजा न रघुनाथजी के गौशील्य, श्रीगम्य, पत्नि-भावना, वात्सल्य गाम्भीर्य आदि सद्गुणों का वर्णन किया है ।

२१६

हरि तजि और भजिय काटि ?

नाहिनै कोउ राम सो, ममता प्रनत पर जाहि ॥१॥  
वनकवसिपु निरचि वा जन करम, मन अरु वात ।  
सुर्ताहि दुखवत विधि न बरज्यो, काल के घर जात ॥२॥  
सम्भु सेवक जान जग बहु वार दिय दस सीस ।  
करत राम विरोध सो सपनेहु न हटवयो ईस ॥३॥  
और देवन की कहा कही, स्वारथहि के मोत ।  
कवहुँ काहु न राखि लियो कोउ सरन गयउ सभोत ॥४॥  
को न सेवत देत सम्पति, लोकरूँ यह रीति ।  
दासतुलसी दीन पर इक राम ही की प्रीति ॥५॥

भावाय — भगवान् श्रीहरि को छोड़कर और किसका भजन करें ? श्रीरघुनाथजी के समान ऐसा कोई भी नहीं, जिसकी दीन शरणागतता पर ममता हो, जिसने उन्हें प्रेम से अपनाया हो ॥१॥

(उदाहरण लीजिए) हिरण्यकशिपु ब्रह्मा का भक्त था । वह कम, मन और वचन से उनकी भक्ति करता था । किन्तु ब्रह्मा ने उसे पुनः का ताड़ना देने हुए न रोका । (फिर यह हुआ कि) वह यमलोक चला गया (और ब्रह्मा खड़े खड़े देखने रह गये । यदि व पहले से उमे मना कर दते, उसे उसका अपना हित सुभा देत तो क्या वह काल का प्राप्त बनता ? यह तो हुई ब्रह्मा की करतूत अब शिवजी का दखिए) ॥२॥

सारा सभार जानता है कि रावण शिवजी का भक्त था, और उसने कई बार अपने सिर काट-काटकर उनको अर्पित किए थे, किन्तु जब उसने श्रीरघुनाथजी के साथ धर बिसाहा, तब आपने उमे स्वप्न म भी न रोका (चुन वठे वठे देखते रहे और उम यम-घाम भेजवा दिया ।) ॥३॥

(ब्रह्मा और शिव का जब यह हाल है, तब) और देवताओं के विषय में क्या कहा जाय ? वे तो मत्तलकी मिक हैं ही । किसी ने भी मत्तलीत शरणागत की रक्षा नहीं की (जब स्वयं ही वे निभय नहीं हैं, तब दूसरों की क्या रक्षा करेंगे ? ऐसा की शरण में जाना बेकार है ।) ॥४॥

खुशामद करन से कौन धन-दीनत नहीं देता है ? यह दुनिया का चलन ही है (जो सेवा करेगा, वह मेवा पायेगा) । किन्तु हे तुलसीदास ! दीना पर तो एक श्रीरघुनाथजी का ही स्नेह है ॥५॥

‘वार्थ’—वनकसिपु = हिरण्यकशिपु नामक दत्य । जन = भक्त । वात =

धचन । वरज्यो = राका । ईस = शिवजी ।

विशेष—(१) 'देवन मीत'—रामचरितमानस में भा कहा ह—

'सुर नर मुनि सब ही की रीती । स्वारथ लागि करहि मे प्रीती ॥'

(२) 'सरन गये समीति —'समीत श' का अर्थ मू'पु के भय से डरे हुए जीव का ह । मू'पु भय से बचानेवाला भगवान् के अतिरिक्त और कोई भी नहीं ।

२१७

जो पै दूसरो कोउ होइ ।

तौ ही बारहि बार प्रभु कत दुख मुनावी रोइ ॥१॥

काहि ममता दीन पर, काको पतितपावन नाम ।

पापमूल अजामिलहि केहि दियो अपनो घाम ॥२॥

रहे सभु विरचि, सुरपति, लोकपाल अनेक ।

सोक सरि बूडत करीसहि दई काहु न टेक ॥३॥

विपुलभूपति सदसि महे नर-नारि कह्यो 'प्रभु पाहि' ।

सकल समरथ रहे, काहु न वसन दीहा ताहि ॥४॥

एक मुख क्या कही कर्नासिंधु के गुन गाथ ?

भगतहित धरि देह काह न किया कोसलनाथ ॥५॥

आपने कहुँ सौपिये मोहि जापे अतिहि धिनात ।

दामतुलसी और त्रिधि क्यो चरन परिहरि जात ॥६॥

भावाय —हे नाथ ! यदि कोई दूसरा होता, तो मैं बार बार रोकर अपना दुःख आपको ही क्यों मुनाता ? (मैं उसी के आगे अपना रोना रोता, आपको कष्ट न देता । पर क्या करें, आपको छोड़कर ऐसा कोई ही नहीं जो दोन जनों के कष्ट दूर करे) ॥१॥

(आपका छोड़कर) दीना पर किसकी ममता है वीन गरीबा को अपनाता है ? पापियों का उद्धार करनेवाला नाम किसका है ? और महापापी अजामेल को (घोखे से अपने पुत्र नारायण का नाम लेने पर) किसने अपना परम घाम दिया ? (ऐस तो एक आप ही है, दूसरा कोई नहीं है) ॥२॥

शिव ब्रह्मा, इन्द्र आदि अनेक लोकपान थे पर दुःखरूपी नदी में डूबते हुए गजेन्द्र को किसी ने भी सहारा न दिया (आप ही गड को छोड़कर पदन दीडे) ॥३॥

जब अनेक राजाघरा की सभा में यजुन् की पत्नी द्रौपदी ने (दुःखसूत्र द्वारा आज्ञा जाते समय) कहा कि हे नाथ ! मेरी रक्षा कीजिए तब सभी तो समय थे, पर किसने उसे वस्त्र-दान दिया (सब लोग बड़े बड़े देखते ही रहे), किसी ने भी उस भवला की लाज न बचाई) ॥४॥

हे कर्णामागर ! आपके चरित्रा की क्या एक मुह से कमे कह सकता हूँ ? (आपने अनन्त गुणा का बखान अनन्त मुखा से ही हो सकता है एक मुख से नहीं) हे कोशला पीया ! आपने नर शरीर धारण करके भक्तों का क्या-क्या हित-साधन नहीं किया ? ॥५॥



यदि आप भूभ्रम बहुत ही घिनात ह, ता मुझे किसी एत क हाथ सोंप दीजिए, जो आपके ही समान हो (पर, यह अमभव्य ह क्योंकि आपके ममान ता सखार में कोई ह ही नहीं)। तुलसीदास किगा और तरह आपके चरणा का त्यागवर क्या जाने लगा। भाव यह ह, कि म आपके क चरणा का शरण में रहूगा ॥६॥

शब्दाथ—विपुल = बहुत से। सदसि = सभा म। नर नारि = अजुन की पत्नी, द्रोपदी। पाहि = रक्षा करो। करीस = गजेन्द्र। गाथ = क्या।

विशेष—(१) विनय भूपति ताहि—'श्रीकृष्णगीतावलो' में द्रोपदी-वस्त्र-हरण का यह पद प्रसिद्ध ह—

कहा नयो कपट जुआ जो हौ हारी ?

समरधीर महावीर पाव पति, क्या देहें माहि होन उधारी ॥  
 राजसमाज सभासद समरय भीषम दान घमघुरधारी ॥  
 अबला जनघ अनवसर अत्रुचित होति हरि करिहें रखवारी ॥  
 यो मन गुनति दुसासन दुरजन तमथयो तकि गहि दुहैं कर सारी ॥  
 सकुचि गात गोवति कमठी ज्यो हहरी हृदय, बिकल भई भारी ॥  
 अपनेनि को अपना बिलोकि बल सकल आस रिस्वास बिसारी ॥  
 हाथ उठाइ अनाथ नाथ सा पाहि पाहि प्रभु पाहि ? पुकारा ॥  
 तुलसी परलि प्रतीति प्रातिगति, आरतपाल कृपालु मुरारा ॥  
 यसन वेप रावी बिसेखि लखि बिरदावति मूरति नर नारी ॥'

(२) आप प्रतिहि घिनात —घिन क्यों लगगा ? विन तो तब नहीं लगे जब मुह निपात का हृदय में लगा गया। रुधिर में तन हुए जटायु की गोद में बठा लिया, तब भी घिन नहीं लगी। शबरी के जूठ बर खाने समय भी घिन नहीं लगी। तब तुलसी नाम की ही दण्डवत क्या विन लगगे ? टान-टूत का तो फोई और ही काण्ड हूण, जिस स्वामी श्रीराम ही जानत होग।

२१८।

क्याहि देयाइहो हरि चरन ?

समन सकल क्लेश कलिमल सकल मगल करन ॥१॥  
 सरद भव मुदर तरुनतर अरुन वारिज धरन ।  
 लब्धि लानित लनित करतल छवि अनूपम धरन ॥२॥  
 गग-जनक, अनग अरि-पिय, कपटु बटु बलि धरन ।  
 रिप्रतिय नृग बधिव कं दुग्-दाप दारन दरन ॥३॥  
 मिद्ध गुर मुनि वृद्ध-वदित सुखद सत्र कहुं मरन ।  
 मरुत उर आनन जिहि जन हात तारन तरन ॥४॥  
 वृषागिनु मुनान ग्धुवर प्रान आरनि हरन ।  
 दरस-आर-पियाम तुलसीदास चाहन मरन ॥५॥  
 भाषाय—हे हर ! क्या कनी आप भवन उन चरणा का शरण करायेंगे जो समस्त

दु खों और बलि के समस्त पापा का नाश करनेवाले और सबकल्याण के कारण हैं ॥१॥

जिनका रंग शरद् ऋतु में उत्पन्न, सुन्दर और ताजे लाल-लाल कमलों के समान है, जिन्हें लक्ष्मी अपनी सुन्दर हथेलियां से दबाया करती हैं, और जो अनुपम लावण्यमय हैं ॥२॥

जो गंगा के पिता हैं, (अर्थात् जिन चरणा से गंगा की उत्पत्ति हुई है), जो कामदेव को भस्म करनेवाले शिवजी के प्यारे हैं, तथा जिन्होंने कपट-ब्रह्मचारी का रूप धारणकर राजा बलि को छला है। जिन्होंने (गौतम) ब्राह्मण की पत्नी महत्या को शाप विमुक्त कर दिया, राजा नृग को दिव्य देह प्रदान की और हिंसक निपाद (अथवा बाल्मीकि) के सारे दु ख और घोर पापा को दूर कर दिया ॥३॥

सिद्ध, देवता और मुनियों के समूह जिनकी सदा वन्दना किया करते हैं, जो सभी को सुख और शरण देनेवाले हैं, और एक बार भी जिनका हृदय में ध्यान करने से जीव स्वयं तर जाता है तथा दूसरा को भी तार देता है ॥४॥

हे कृपासागर सुचतुर रघुनाथजी ! आप शरणागतों के दु ख दूर करनेवाले हैं । यह तुलसीदास आपके उन चरणों के दशन को आशास्त्री प्यास के मारे मरनेवाला ही है । (अब आप शास्त्र ही अपने चरण-कमल दिखाकर इसकी रक्षा कीजिए) ॥५॥

ग-शाय—तन्मतर—अत्यन्त नवीन । लच्छि—(लक्ष्मी) । लालित = प्यार किये गये । जनक = पिता, उत्पत्तिकर्ता । अनग अरि = कामदेव के शत्रु शिवजी । वटु = ब्रह्मचारी । धरन—छलनेवाले । दरन—दलनेवाले नाशकर्ता । सृष्ट—एक बार ।

विशेष—(१) २१७ पद के अन्तिम चरण तथा चरन परिहरि जात' और इस पद के अर्धे देखाइहो हरि, चरन' में सिंहावलोकन सम्बन्ध है । यहाँ गासाइजी प्रेमाधीर हाकर चरणा का अविलम्ब दशन करना चाहते हैं ।

(२) 'लच्छि करतल'—इस पंक्ति में स्वाभाविक सुन्दर अनुप्रास की छटा के साथ-साथ भाव भी अति कामल और मनोहर अभिव्यक्त हुआ है ।

(३) गासाइजी की श्रीरामचरणारविन्दा के प्रति कैसी सुदृढ़ भक्ति भावना थी यह इस पद से भलीभाँति प्रकट होता है ।

२१६

द्वार हों भोर ही को आजु ।

रटत रिरिहा आरि और न, कौर ही तें वाजु ॥१॥

फलि कराल दुकाल दारुन, सब कुभाति कुसाजु ।

नीच जन, मन ऊँच, जैसी बाढ मे की खाजु ॥२॥

हहरि हिय मे सदय वृमचो जाइ सावु ममाजु ।

मोहु से कहैं कतहुँ बाउ, तिह कह्यो, कोसलराजु ॥४॥

दीनता दारिद दले को कृपाचारिधि वाजु ।

दानि दसरथराय के, तुम दानइत सिरताजु ॥६॥

जनम को भूलो भिलारी ही गरीब निवाजु ।

पेट भरि तुलसिहि जेवाइय भगति-सुधा सुनाजु ॥५॥

भावाय—हे प्रभो ! आज म सवेरे से ही आपने द्वार पर घडकर बठा हूँ । रें रें करके रट रहा हूँ । गिडगिडाकर माँग रहा हूँ । मुझे और किसी वस्तु के लिए हठ नहीं ह । एक कौर टुकड स ही मेरा काम बन जायगा । जरा-भी कृपादृष्टि कर देने से ही मेरी बिगडी करनी सुधर जायगी ॥१॥

(यदि आप यह कहें कि तू काई उद्यम क्या नहीं करता ? तो इसका जवाब यही ह, कि) इस भयकर कलियुग में बडा ही विकराल दुर्मिच्छ पड गया ह जितने उद्यम या उपाय ह, सभी बुरे ह । इन युग म घम कम कुछ भी निर्विघ्न पूरा नहीं हो पाता, इसलिए आपसे भीख मागना ही मने उचित समझा ह । हं तो (कलियुगी) मनुष्य नीचकर्मा, पर मन ह उनका ऊँची वस्तु पाने का । यह तो वही बात हुई, जम कोढ़ में खाज हा जाय ॥२॥

(जो-जो पाप कर चुका था, उनके फल भागने का दु ख तो विलकुल ही भूल गया, और नये-नये विपया के दारिद्र्य सुधा में मग्न हा गया इसका भी कुछ खयाल नहीं रहा, कि इस 'कोढ़ में खाज' से होनेवाला परिणामरूप दु ख अभी और क्या क्या भोगना पडेगा । जब म इन कष्टों से याकुल हा गया, तब) धबराकर कृपालु सत समाज से पूछा कि कहिए मुझ सरीखे पापी को भी कोई शरण में लेनेवाला ह ? सन्तो ने तब यही उत्तर दिया, कि एक कोशलद्र महाराजा रामचद्रजी ही ऐसे ह, जो तुम्हे अपनी शरण में ले सकते ह ॥३॥

कृपासिन्धु रघुनाथजी को छोडकर और कौन दीमता और दरिद्रता को दूर कर सकता ह ? महाराजा दशरथ के पुत्र राम राजा ही (सच्चे) दानी ह, तथा दानिया का बाना रखनेवाला में थपेठ ह ॥४॥

(सत समाज के मुख से श्रीरामजी का यश इस भाँति सुनकर) म आज्ञम का भूला, भिलमगा आपके द्वार पर आया हूँ । आप गरीब को निहाल कर देनेवाले ह । बस अब इस तुलसी को भक्तिरूपी अमृत के समान सुदर भोजन पेटभर खिला दीजिए (अपने घरणा में इतनी अधिक भक्ति दे दीजिए कि फिर मुझे कभी सासारिक भोगों की ओर न दौडना पड) ॥५॥

शदाय—रिरिहा—रें रें करके या गिडगिडाकर मागनेवाला । भरि—घड, हठ । हहरि—डरकर । बाजु = छोडकर, सिवाय ।

विशेष—(१) 'भोर—जीव के क्षय होने की मगल बेला, विपय विरक्ति के प्रादुर्भाव का समय, जो 'भोर ही से सावधान हो गया वही वस्तुत सचेत ह—

'पाव पलक की सुधि नहीं कर काह का साज !

बाल अचानक मारसी, ज्यों तीतर की बाज ॥

[ कवीर

(२) 'कलि करान कुसाज—पूणरूपक इस प्रकार कि, कलि = अवृष्टि घम

~ चेत सत्कम = कृपि अघम = दुर्मिच्छ अश्रद्धा = उद्यम का अभाव ।

(३) कृपा-धारिणि बाजु'—श्रीवजनापजी का अनुसरण करते हुए श्रीमदृजी ने इसका यह अर्थ किया है—

'वे गरीबी और दरिद्रता (रूपी पक्षिया) के नाश करने को बानरूप हैं (जो कहो कि बाज तो निदयी हाथा ह, सो नहीं) वे दया के समुद्र हैं, अर्थात् जीव मात्र पर दया करते हैं) ।

फिर भी बाजु' का स्वाभाविक तात्पर्य सिद्ध नहीं हुआ । 'बाजु का अर्थ बाज चिड़िया नहीं, किन्तु 'धाडकर, बिना' यह ह ।

२२०

करिय सँभार, कोसलराय ।

और ठौर न और गति, अबलम्ब नाम विहाय ॥१॥

भुक्ति अपनी, आपना हितु, आप वाप न माय ।

राम ! राउर नाम गुर सुर, स्वामि, सखा, सहाय ॥२॥

रामराज न चले मानस मलिन के छल छाया ।

कोप तेहि कलिनाल कायर मुएहि घालत घाय ॥३॥

लेत केहरि को वयर ज्यो भेक हनि गोमाय ।

त्योहि राम गुलाम जानि निकाम देत कुदाय ॥४॥

अकनि याके कपट-करतब भ्रमित अनय अपाय ।

सुखी हरिपुर वसत होत परीछितहि पछिताय ॥५॥

कृपासि'बु । बिलोकिये जन मन की सासति साय ।

सरन आयो देव । दीनदयालु । देखन पाय ॥६॥

निकट बोलि न बरजिये, बलि जाउं, हनिय न हाय ।

देखिहैं हनुमान गोमुख-नाहरनि के न्याय ॥७॥

अरुन मुख, भ्रू विकट, पिगल नयन रोप कपाय ।

बीर सुमिरि समीर को घटिहै चपल चित चाय ॥८॥

विनय सुनि बिहँसे अनुज सो बचन के कहि भाय ।

'मली कही' कह्यो लपन हूँ हँसि, वन सकल बनाय ॥९॥

दई दीनहि दादि सो सुनि सुजन-सदन बघाय ।

मिटे सकट-सोच पाच प्रपच पाप निकाय ॥१०॥

पेखि प्रीति प्रतीति जन पर अगुन अनघ अमाय ।

दासतुलसी कहत मुनिगन, जयति जय उरगाय' ॥११॥

भाषाय—हे बोगचंद्र ! मेरी रक्षा कीजिए । आपके नाम को छोड़कर मुझे न तो कहीं और ठौर ठिकाना है, और न किसी का सहारा ही (मेरी तो आपके नाम तक ही दीड ह, सा प्राय नाम के नाते से मुझे बचा लीजिए ॥१॥

आप स्वयं समझ बूझकर अपने मेवका का ऐसा कयाण कर देते हैं, जैसा (सगे) माता पिता भी नहीं करते। (क्याकि माता पिता मोक्ष का परमानन्द नहीं दे सकते।) हे रघुनाथजी ! आपका नाम ही मेरे लिए गुप्त देवता, स्वामी मित्र और बल है। (आपका नाम मेरे लिए जीवन सबस्व है) ॥२॥

हे नाथ ! आपके 'रामराज्य' में मनिन मनवाले कलिकाल क कपट की छाया भी नहीं पड़ सकती। किन्तु यह कायर कलिकाल उसी क्रोध के कारण मुझ मरे हुए को भी अपनी चोटो से घायल कर रहा है। (एक तो या हो म अपने दुष्कर्मों के मारे मर रहा हूँ, दूसरे यह दुष्ट विषय-वासनारूपी भ्राष्ट्रात्मा से मुझे असह्य पीडा दे रहा है। इसे इतना भी तो भय नहीं कि म 'राम राज्य' म बस रहा हूँ) ॥३॥

जसे गौदम मेडक को मारकर शेर के बर का बदला चुकाता है वैसे ही यह मेरे साथ बर्ताव कर रहा है अर्थात् जब इसकी दाल आपक सामने न गली तब आपके छोटे-छोटे दासा को यह सताने लगा। ॥४॥

यद्यपि महाराजा परीक्षित आनन्दपूर्वक भगवान के परमधाम वकुण्ठ में वास कर रहे हैं, पर इसके कपट भरे काम, अनीति और अनेक विघ्न-बाधाएँ सुनकर उन्हें भी पछतावा हो रहा है (इसलिए पछतावा हो रहा है कि इस पकड़कर हमन क्यो जीवित छोड़ दिया ?) ॥५॥

हे वृषासागर ! तनिक वृषादष्टि तो कीजिए जिससे इस दास के चित्त की पीडा शांत हो जाय। हे दोनदयालो ! हे देव ! म आपके चरणों का दर्शन करने के लिए आपकी शरण आया हूँ ॥६॥

यदि आप (दयावश) उसे (कलियुग का) पास बुलाकर रोकना नहीं चाहते या उसकी हाय हाय की पुकार सुनकर उसे मारना नहीं चाहते तो हनुमान्जी को ही थोडा सा सकेत कर दीजिए। वे इसकी ओर वैसे ही तानेंगे जैसे सिंह गाय के मुख को ओर घूरता है ॥७॥

जब हनुमान्जी लाल मुँह, टेढी भौंहें और पीली आँखों को क्रोध से लाल कर लेंगे तब पवन कुमार वीर हनुमान् का स्मरणकर इस चंचल चित्तवाले कलि का सारा चाव चला जायगा (अपना सारा पौरुष भूल जायगा ॥८॥

मेरी यह विनय सुनकर श्रीरघुनाथजी मुस्कराये और अपने अनुज लक्ष्मण को इन बातों का आशय समझाया (कि, देखा, तुलसी कसा चतुर है ! कसी-कसी बात बना रहा है !)। लक्ष्मणजी ने हँसकर कहा कि यह ठीक तो कहता है। बस अब मेरी सारी बात बन गई (क्योंकि वहाँ सिफारिश भी पहुँच चुकी है, और सिफारिश भी किसकी, सगे छोटे-बड़े की) ॥९॥

भगवान् रामचन्द्रजी ने इस शरीर का त्याग कर दिया। (कलियुग को डाँट डपट कर सामने स हटा लिया और अपने भक्त को अपनी शरण में रख लिया) यह सुनकर सन्तों के घर बधाई बजने लगी (कलि की दायादा स छूटकर सब धानद उत्सव मनाने लगे)। इस चिन्ता धन-कपट और पाप-युज सार नष्ट हो गये ॥१०॥

गुडातीत (मायात्मक तीन गुणा स पर) पवित्र और निष्कपट प्रेम एव विरवात अपने सेवक पर देखकर हे सुनमोदास ! मुनि लोग कहने लगे—उत्तर कीर्तिबाने

भगवान् को जय हो, जय हो ॥११॥

गन्धाय—सोभार = रत्ना । विहाय = छोड़कर । भक्त = भेदक । गोमाय = गोदड । कुदाय = कुघात । साय = शांत हो । अकनि = सुाकर । अषाय = विघ्न । सिंगल = पीला । कषाय = लाल । दादि = इसाफ । धमाय = निरूपण । उरुगाय = विष्णु भगवान् का एक नाम ।

विशेष—(१) 'आप माय'

'त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बभ्रुश्च सखा त्वमेव ।

त्वमेव विद्या द्रविण त्वमेव, त्वमेव सव मम देवत्व ॥

(२) 'परोक्षित'—एक दिन महाराजा परोक्षित शिखर खेलते खेलते एक ऐसे जगल में जा पहुँचे, जहाँ एक कृशकाम पुरुष एक माय और एक लँगटे बल को मारता हुआ खड़े रहा था । पूछने पर पता चला कि माय पयित्री ह लँगडा बल घम ह और काला पुरुष ह कलियुग । राजा ने क्या हा कलि का मारने के लिए तनवार म्यान से खींची वह गिडगिडाकर उनक पैरा पर गिर पडा । शरणागत जानकर उसे राजा ने छोड दिया । पर उसने अपने रहने के लिए राजा से १४ स्वान माँग लिये, जिनमें एक सुवर्ण भी था । राजा जब कि सोच रहे थे प्यास कं मार व्याकुल एक ध्यानावस्थित ऋषि के पास पहुँच । जब ऋषि ने कुछ उत्तर न दिया तब राजा उसे पायलडी समझकर उसके गले में एक मग हुआ साँप डालकर चले गये । मुनि के पुत्र ने जब यह सुना तो उसने यह शाप दिया कि वह मदाथ राजा साँप के डमने से सातवें दिन मर जाय । उस दिन राजा परोक्षित सिर पर साने का मुकुट धारण किए हुए थे, और सोने में था कलि का वास । इसी स उनकी बुद्धि मारी गई । श्रीमद्भागवत का सप्ताह पारायण सुनकर महाराजा सातवे दिन स्वर्गस्थ हो गये । यह कथा श्रीमद्भागवत पुराण में आती ह ।

(३) 'उरुगाय—इसका 'उरु गाय' पाठ मानकर श्रीवज्रनायजी तथा कुछ टीकाकारा ने यह अर्थ किया ह कि 'हृदय में राम के गुण गाकर किन्तु 'उरुगाय' पाठ ही ठीक है न कि उरु गाय' । उरुगाय भवान विष्णु भगवान की जय हो जय हा'—ऐसा मुनिजन कह रहे ह । उरुगाय पाठ नागरीप्रचारिणी समा द्वारा प्रकाशित तुलसी ग्रन्थावली की विनयपत्रिका में पाया जाता है । यही पाठ शुद्ध ह ।

(४) 'विनय मुनि—यहा से लेकर पत्र के अन्त तक गोसाइजी ने अपने मनो राज्य का बडा ही सुन्दर चित्रण किया ह और उसमें रहस्यमय विचरण भी । ऊँचे पाठित्य एव कायकला की अभिव्यक्ति भी अनुपम हुई ह ।

२२१

नाथ । कृपा ही को पय चितवत दीन हौ दिनराति ।

होइ धौ केहि काल दीनदयालु । जानि न जाति ॥१॥

सुगुन, ग्यान बिराग भगनि सुमाघननि की पाति ।

भजे त्रिनल त्रिलोकि कलि अघ अक्वगुननि की थाति ॥२॥

अति अनीनि-कुरीति भइ मुई तरनि हौ ते ताति ।

जाउं कहौ ? बलि जाउं, कहौ न ठाउं, मति अकुलाति ॥३॥

आप सहित न आपनो कोउ, वाप । कठिन कुभाति ।  
स्यामघन । सीचिये तुलसी, सालि सफल सुखाति ॥४॥

भाषा—हे नाथ । म दीन दिनरात आपकी कृपा की ही बाट जोहता रहता हूँ (यही टक लगाये बठा रहता हूँ कि कब इस दीन पर आप कृपा कर दें) हे दीन दयालो ! पता नहीं कि किस घड़ी आपकी वह कृपा-दृष्टि मुझ पर हागी ॥१॥

सद्गुण ज्ञान वराम्य और भक्ति तथा अच्छे-बच्छे साधनों के समूह कलि को दखत ही व्याकुल ही भाग गया । रह गये पापो और दुगुणा क समूह ॥२॥

बड़-बड़े अयायो और अनाचारो से पथिवी सूर से भी अधिक तप्त हो गई ह । (एही अंगार के समान पथिवी पर कोई कसे रह सकता ह ?) अब म कहा जाऊँ : आपकी बलया ले रहा हूँ मुझे रहने का कही ठौर ठिकाना नहीं रहा । बुद्धि बड़ी माकुल हो रही ह (कही भागते भी नहीं बनता कि इस पापपूण पथिवी की असह्य ज्वाला से बच सकूँ) ॥१॥

हे पिता ! जब अपनी दह ही अपनी नहीं ह तब दूसरे क्या अपने होंगे ? (साराश, अपना सगा-सम्बन्धी यहा कोई भी नहीं ह ।) सब कठोर दुराचारी ही दिखाई देते ह । (न तो किसी में दया ह और न सदाचार ही) । हे घनश्याम ! तुलसी रूपी पूनी-फली धान की खेती सूखी जा रही ह अब भी मघ बनकर ( भक्ति जल से ) उस सीध दीजिए ॥४॥

शब्दाय—याति = धरोहर । भुइ = भूमि । तरनि = सूर । सालि = धान । सफल = फला हुआ ।

विशेष—(१) पद्य चितवन —

आँखडियाँ झाई परीं, पथ निहारि निहारि ।  
जाहडियाँ छाला परा, नाम पुकारि-पुकारि ॥  
बहुत दिनन की जोषती रटत तुम्हारी नाम ।  
जिउ तरस तुव मिसन को मन नाहीं विधाम ॥

(२) जाउं कहें महुलाति — भक्तवर नलितकिशोरराजो भो दुनिया स उब कर ऐसा ही कह गय ह—

‘बु-दाबन अब रमते हैं दिस दुनिया से धबराया है ।  
मानुष-गन्य न भाती है, सग मरकट मोर मुहाना है ॥

२२२

बलि जाउं, और कासा कहीं ?

सद्गुणमिधु स्वामि सेवक हिन कहें न कृपानिधि-सो लही ॥१॥  
जहँ-जहँ लोभ लाल लालचबस निरहित चित चाहनि चहीं ।  
तहँ-तहँ तरनि तवन उरूव ज्या भटक कुनरुकाटर गहीं ॥२॥  
बाल-मुभाव-करम विचित्र फनदायक मुनि सिर घुनि रहों ।  
मोहा तो मजन सदा एवहि रम दुमह दाह दारन दहों ॥२॥

उचित अनाथ होइ दुखभाजन, भयो नाथ ! किंकर न हौं ।  
अत्र रावरो कहाइ न बूझिये, सरनपाल ! सामति सहौं ॥४॥  
महाराज ! राजीवबिलोचन ! मगन पाप सताप हौं ।  
तुलसी प्रभु जब-तब जेहि-तेहि विधि राम निवाहे निरवहौं ॥५॥

भावाय—बलिहारी ! और किसे जाकर सुनाऊँ ? (अपना रामा और किसके प्रागे रोज ?) आपके समान सद्गुणा का समुद्र सबका ही भलाई करनेवाला और कृपानिधान स्वामा अथवा कहा भी नहीं मिलन का (जा आपका समान ही कोई दूसरा मालिक मिल जाता, ता म उमो का अपनी सारी यथा क्या सुना देता, आपको कष्ट न दता, पर ऐसा कोई मिलता ही नहीं ।) ॥१॥

जहाँ-जहाँ लोभ और लालच से चंचल चित्त में अपने कल्याण की कामना करता है, वहाँ-तहाँ से म इस तरह निराश होकर लौट आता है जमे मूय को देखते ही उल्लू भटकता हुआ पेड़ के खोडर में घुस जाता है ॥२॥

जब यह सुनता है कि काल स्वभाव और कम विचित्र फल देनेवाले है, तब सिर पटक-पटककर रह जाता है (कुछ उद्यम करने का साहस नहीं होता । इसलिए, कि वहाँ कुछ-का कुछ फल न भागना पड़े, क्योंकि कर्मों की गति बड़ी विचित्र है) । म तो सदा एक ही असहनीय और वाग्गु दाह से जना करता है । (काल, स्वभाव और कम कभी मेरे अनुकूल नहीं हुए सदा प्रतिकूल ही रहे ह) ॥३॥

मैं दु खों का पात्र रहा सो ठीक ही है क्योंकि हे नाथ ! म अनाथ था मेरा कोई धनी धीरा नहीं था और न मैं आपका सेवक ही बना था, किन्तु हे शरणागत रक्षक ! अब आपका कहाकर भी म, न जाने क्या दु ख भाग रहा है, यह समझ में नहीं आ रहा ॥४॥

हे महाराज ! हे कमननेत्र ! मैं पाप-सन्ताप में डूब रहा हूँ । हे नाथ ! तुलसी दास का तो तभी निवाह हो सकता है, जब आप उस तसे उमका निवाह करेंगे ॥५॥

गदाय—लाल=चंचल । तरनि=मूय । कोटर = पेड़ की पील । सामति = कष्ट ।

विशेष—(१) वह-तहाँ कोटर गहौं—इसका यह भी अर्थ हो सकता है—  
'मैं ससाररूपी वृक्ष में रहनेवाला हूँ । धनीति रात्रि म धूमना फिरता हूँ । सरस गवस कभी बाहर भी निकलता है ता शानरूपी प्रचण्ड मूय के सामने नहीं जा सकता । चका चौध लगने से फिर अपने उसी विषय-वासना के कोटर में आ घुसता है ।'

२२३

आपना कवहूँ करि जानिही ।

राम गरीबनिवाज राज-मनि, विरद लाज उर आनिही ॥१॥

सील सिधु सुन्दर सजलायक, समरथु सदगुन-भ्वानि ही ।

पाल्यो है, पालत, पालहुगे, प्रभु प्रनत प्रेम पहिचानिहौं ॥२॥



भरोसो और आइहै उर ताके ।

वै कहै लहै जो रामहिं सो साहिव, वै आपना बल जाके ॥१॥

वै बलिकाल कइल न सूझत, माह मार मद छाके ।

वै मुनि स्वामि सुभाउ न रह्यो चित जो हित सब अंग थाके ॥२॥

हो जानत भलिभाति अपनपौं, प्रभु सो सुयो न साके ।

उपल, भोल, खग, मृग, रजनीचर, भले भये करतव ताके ॥३॥

मोको भलो रामनाम सुरतरु सो, रामप्रसाद वृषानु कृपा के ।

तुलसी सुखी निसोच राज, ज्या बालक माय बवा के ॥४॥

भाषाय—उसी व्यक्ति के मन में किसी दूसरे का बल भरोसा हागा जिसे या तो वही श्रीरामचंद्रजी के समान कोई मालिक मिल गया हो या जिसे अपने स्वयं के पुण्याय का बल हो (मुझे न तो कोई वसा मालिक मिला है जो श्रीरघुनाथजी के समान समथ हो और न अपने खुद के पुण्याय पर रक्तो भर भरोसा है। इसलिए मेरी दौड़ तो एक रामजी तक ही है) ॥१॥

अथवा जिन धनान काम और ग्रहकार में मतवाला हो जाने के कारण भाषण बलिकाल न सूझता हो (क्योंकि मदाघा का सामने उपस्थित मत्स्य भी नहीं दिखाई देती है। मुझ पर माह प्रादि मात्रक पदार्थों की इतनी कृपा है कि उहान प्राचा नहीं किया बलिकाल मुझे सूझ रहा है और उमक विक्रान्त भय से डरकर मैं भगवान् की शरण ले चुका हूँ), अथवा जिनके वित्त पर सब प्रकार से धके हुए जागा व हितकारी प्रभु रामचंद्रजी का स्वभाव सुनन पर भी ठीक ठाक न जमा हो (भगवान की पतित-भावना, जन-वसलता प्रादि गुण जिसके हृदय-मन्डल पर अंकित न हुए हो, किन्तु भगवत्कृपा से भर सम्बन्ध में यह बात भी नहीं कही जा सकती।) मुझे तो सदा ही अपने दीनदयानु स्वामी के स्वभाव का ध्यान बना रहता है ॥२॥

मैं अपना पुण्याय अपना बल भलीभाँति जानता हूँ (यह मुझे अच्छी प्रकार पता है कि मैं अपने परिमित पुण्याय से परिमित हरि भक्ति प्राप्ति नहीं कर सकता हूँ)। और मन था रघुनाथजी के अनिश्चित और किसी स्वामी को ऐसी कीर्ति-भाषा भी नहीं सुनी है (जो इस प्रकार महाभाषिया का उदार करता हो) पापाणो (ग्रहत्या) भोल पछा (जटाय) मृग (मारोच) और राधम (विभाषण) इन सब में से किसने शुभकर्म किये थे? (मैं सभी धार पापा थे, किन्तु भगवान न इन सबका उदार कर दिया) ॥३॥

अने तो एक राधनाम ही बन्धुवृक्ष के समान सुख देनेवाला बन गया है और यह कृपानु रामचंद्रजी का कृपा में कृपा। (इसमें भी मरा कोई पुण्याय नहीं, कि राम नाम पर बन्धुवृक्ष के समान मरी थडा भक्ति हो गई है। यह भी भगवत्कृपा से ही बना है)। अब तुमका यह अनुग्रह के कारण एसा मुला और निश्चित है जो कोई जानना अपने माता पिता के राज्य में हाता ॥४॥

भाषाय—जब धन = सब प्रकार से। सारा = यश काँति। उरन = तरप

यहाँ प्रहत्या से तात्पर्य है । निशाच = निरिचत । बवा = बाप ।

विशेष—(१) इस पद में गोसाइजी ने स्पष्टतया जीव की पौरुषहीनता और भगवदनुग्रह का प्राणाय प्रतिपादित किया है । इस पौरुषहीनता में निराशावाद अपना कार्यरता का लेशमात्र भी नहीं है, प्रत्युत आशावाद और वीरता की ही भूलक दोखती है ।

(२) 'मग' मारीच—यह रावण का मामा था । रावण की घाना से मारीच माया-मृग बनकर पचवटी में पहुँचा । वहाँ इसका अत्यन्त मनाहर रूप देखकर सीताजी ने इसका स्वर्णोपम चम लाने के लिए श्रीरामचन्द्रजी से कहा । जब इसे मारने के लिए रामचन्द्रजी गये, और बाद में इसके मरण समय का आत्तनाद सुनकर सीताजी ने लक्ष्मण की भी वही व्याग्रहपूर्वक भेज दिया, तब धक्कर पाकर रावण आश्रम में पहुँचा और सीताजी की रथ पर बिठाकर लका ले गया । मारीच श्रीराम का भवन था, किन्तु रावण की प्रेरणा से उसे यह माया रचनी पड़ी । मायामृग क प्रसंग का गीतावली में निम्न लिखित पद बड़ा ही भावमय है

बढे हैं राम, लपन अरु सीता ।

पचवटी बर परनकुटी तर, कह कुछ क्या पुनीता ॥  
 कपट-कुरग कतक मनिमय लखि प्रिय सो कहति हँसि बाला ।  
 पाये पालिवेजोग मजु मृग, मारेह मजुल छाला ॥  
 प्रिया-बचन सुनि विहसि प्रेमबस गवाहि चाप सर लीहें ।  
 चल्पो भाजि फिरि फिरि चितवत मुनि मख रखवारे चीह ॥  
 सोहति मधुर मनोहर मूरति हेम हरिन के पाछे ।  
 घावनि नवनि, त्रिलोकनि, बियकनि बस तुलसी उर आछे ॥

२२६)

भरोसो जाहि दूसरो सो करो ।

मोको तो राम को नाम कलपसरु कलि कल्याण फरा ॥१॥  
 करम, उपासन, ग्यान, वेदमत, सो सब भाति खरो ।  
 मोहि तो 'सावन के अर्धाहि' ज्यो सूझत रग हरो ॥२॥  
 चाटत रह्या स्वानि पातरि ज्यो कबहुँ न पेट भरो ।  
 सो हौ सुमिरत नाम सुधारस पेखत पटसि धरो ॥३॥  
 स्वारथ औ परमारथ हू को 'नाहि कुजरो नरो ।'  
 सुनियत सेनु पयोधि पपाननि करि कपि-कपट तरौ ॥४॥  
 प्रीति प्रतीति जहाँ जावौ, तहँ ताको काज सरो ।  
 मेरे तो माय-बाप दोउ आखर, हौ सिमु अरनि अरो ॥५॥  
 सकर साखि जो राखि कहौ कछु तो जरि जीह गरो ।  
 अपनो भलो राम-नामाहि तँ तुलसिहि समुझि परो ॥ ६॥  
 भाषाय—जिसे किसी दूसरे का भरोसा हो, सो (धीर साधन) करे । मेरे लिए

तो इस कल्पयुग में कल्याणरूपी फला स फला एक राम नाम ही कल्पवृक्ष ह । तात्पर्य यह कि मुझे तो राम नाम-द्वारा ही भगवद्भक्ति प्राप्त हुई ह । किसी को यदि किसी अथ साधन वा भरोसा ही, तो वह भले ही उसे साधे ॥१॥

कमकाण्ड, उपासनाकाण्ड ज्ञानकाण्ड एव वैदिक सिद्धान्त ये सभी सब प्रकार से सच्चे ह पर मुझे तो सावन के अर्धे को भाँति जहाँ भी देखता हूँ हरा ही हरा रंग दीखता ह । भाव यह है कि जैसे यदि कोई सावन में हरी-हरी घास देखता हुआ अथा हो जाय, तो उस सदा हरियाली का ही भास रहेगा । उसी प्रकार मुझे सदा सबत्र श्रीराम-नाम ही सूझ रहा है । ज्ञान कम आदि मेरे ध्यान में ही नहीं आ रहे, यद्यपि व भी सच्चे हैं ॥२॥

म कुत्ते की नाद अनेक जूठी पत्तना को खाता फिरा, पर कभी पेट नहीं भरा । आज मैं नाम-स्मरण करने स अमतरस परोसा हुआ देखता हूँ । भाव यह ह कि मने अनेक माधन साधे पर किसी से भी परमानन्द की प्राप्ति नहीं हुई । अब राम-नाम के प्रभाव से मुझे ब्रह्मानन्द रस-मान करने को मिल गया है ॥३॥

मेरे लिए राम नाम स्वाय तथा परमाय दोनों का ही माधक ह । यह बात कुजर ह अथवा नर' की-सी दुविधा भरी नहीं है (क्याकि मुझे तो प्रत्यक्ष प्राप्त ह) । सुना ह, कि राम-नाम के प्रभाव से बदरा की सेना पत्थरा का पुन अनाकर समुद्र को पार कर गई थी ॥४॥

जहाँ जिसका प्रेम और विश्वास है, वही उसका काम पूरा हुआ ह (यह अमिट सिद्धान्त ह) मेरे माँ आप तो ये दोना अक्षर 'र' और म — ह । इन्ही के आगे म वा न हठ मे अ रहा है, मचल रहा है (जो भी माँगू गा, ये दोना अक्षर मुझे वही देंगे, इसमें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं) ॥५॥

यदि म कुछ भी छिपाकर कहता होऊँ तो भगवान् शिव साची हैं मेरी जीम मनकर गिर जाय । अर्थात् मने यहाँ कोई 'कवि-कल्पना' से काम नहीं लिया मच सच सुनाया ह । वस तुनसीदास ने तो अपना कल्याण एक रामनाम म ही समझा ह ॥६॥

गब्दाय—फरो=फला है । पातरि=पत्तल । पक्षि = परोसा हुआ । नहि कुजरो नरो = नरा वा कुजरो वा अर्थात् हाथी ह या मनुष्य, एभी कोई दुविधा इसमें नहीं । सरो=पूरा हुआ । आखर = अक्षर । अरनि = हठ । अरो = अड गया हूँ, जिद पकड़ बठाहूँ ।

विनय—(१) नहि कुजरो नरो — कुरक्षेत्र में जब द्राणाचाय, कौरवा का पत्न लेकर पाडवा की सेना का अघाघुघ सहार करने लगे, तत्र कृष्ण भगवान् ने अजुन से कहा कि अब द्राणाचाय का वध करना ही उचित होगा । गुरु-हत्या करने से अर्जुन कुछ हिचका । जब यह न हो सका तब श्रीकृष्ण की सलाह स भीमसेन ने अरवत्यामा नामक एक हाथी को मार गिराया । अरवत्यामा द्रोणाचाय के पुत्र का भा नाम था और वह उन्हें बड़ा प्यारा था । यह सुनते ही द्राणाचाय ने धर्मराज युधिष्ठिर से पूछा कि कौन अरवत्यामा मारा गया है ? धर्मराज ने दबी जवान स कहा—'अरवत्यामा हतो, नरो वा कुजरो वा अथवा अरवत्यामा नर मारा गया था हाथी । नर मारा गया तो आर से कह दया और कुजर यह धीरे से । नीति का पालन करते हुए धर्मराज ने सत्य की रक्षा करनी चाही पर यह न हा मचा । राजनाति और धर्म में भारी अंतर ह । असत्य बोलने का कर्तव्य धर्मराज पर तग ही गया । पुत्र का मरण सुनकर ज्योंही द्रोणाचाय मूर्च्छित-मे

हुए, त्योंही धृष्टद्युम्न ने उनका मस्तक काट लिया । तभी स 'नरो वा कुजरो वा' यह लोकोक्ति के रूप में प्रयुक्त हुआ ।

(२) दाड भाक्षर — रकार' और मकार । श्वोरामानुजाचार्य ने राममंत्र के 'र' और म इन दोनों अक्षरों का यह अर्थ किया है

रकारार्थो राम सगुणपरमशिवयजलधि—  
मकारार्थो जीव सकलविधि ककयनिपुण ।  
तयोन्मध्याकारो युगलमयसब्रधमनयो—  
रनयाह ब्रूते त्रिनिगमसुसारीऽयमनुस ॥

२२७ १

नाम राम, रावरोई हित मेरे ।

स्वारथ-परमारथ-साथिहू सो भजु उठाइ कहीं टेरे ॥  
जननी जनक तज्यो जनमि, करम बिनु विधिहु सुज्यो भ्रवडेरे ।  
मोहैं सो कोउ-कोउ कहत रामहि को, सो प्रसग बेहि बेरे ॥२॥  
फिरयो ललात बिनु नाम उदरलगि, दुखड दुखित मोहि हेरे ।  
नाम प्रसाद लहत रमाल फल अब हीं बबुर बहेरे ॥३॥  
साधत साधु लोर-परलोकाहि सुनि गुनि जतन घनेरे ।  
तुलसी के अबलम्ब नाम वो, एक गांठि कइ फरे ॥४॥

भावाय—हे रामजी ! आपका नाम ही मेरा (सच्चा) हित करनेवाला है । यह बात मैं हाथ उठाकर स्वाथ के और परमाथ के सभी सगी सायिया से पुकार पुकारकर कहता हूँ (धोपखा कर रहा हूँ) ॥१॥

मात पिता ने मुझे जन्म देकर ही धाड़ दिया था । और ग्रहणा ने भी अभाग्य और कुछ बेटव सा बनाया था । फिर भी कोई कोई मुझे 'राम का' कहते हैं, सो यह किस नाते से कहते हैं ? (क्याचित् इसी राम-नाम के प्रभाव से क्योंकि राम नाम स्मरण करने से ही 'भागवत का पद मिलता है, अथवा नहीं) ॥२॥

जब मैं राम नाम के शरण नहीं हुआ था तब पैर भरने को मैं (द्वार द्वार पर) लनाता फिरता था । मेरी आर देखकर दुःख को भी दुःख होता था (मेरी बड़ी ही दयानोय दशा थी) पहले मेरे लिए जो बबून और बहूँ के बृध थे आज उन्ही पेड़ों से आम के फल मिल रहे हैं । (अभिप्राय यह, कि जो लोग पहले मेरा निरादर करते थे, वे ही आज राम-नाम के प्रभाव से मेरा आदर कर रहे हैं) ॥३॥

सतजन तो (शास्त्रों को) सुनकर और मनन कर अनेक साधना से, अपना लोक और परलोक बना लेते हैं (शास्त्रों को सुनने हैं उन पर विचार करते हैं, अनुशीलन करते हैं और तदनुसार चलते हैं तब कही वे अपना लोक-परलोक सुधार सकते हैं), किन्तु तुनसों को तो एक राम-नाम का ही सहारा है । उसे गांठ तो एक ही हाता है, लपेटे चाहे जितने हों (साधन चाहे अनेक हों, पर सबका आधार एक राम-नाम ही है) ॥४॥

भावाय—रावरोई = आपका ही । भवडर = बन्ध । चनात फिरया = लनचाता

हुया दीन-सा जहाँ-तहाँ घूमता रहा । बबुर = बबूल । बहेर = बहेरा । रमान = राम ।

विशेष—(१) 'जननी भवडर—यह किंवदन्ती बहुत कुछ प्रसिद्ध है, कि गोसाइजी की जन्म पत्नी में कुछ एम अनिष्टकारी ग्रह पा गये थे, जिससे उनका माता पिता ने, ज्योतिषी की राय से उन्हें बचपन में ही त्याग दिया था । 'अनिष्ट ग्रहों के कारण त्याग देना यह मत ज्योतिष के किसी प्राचीन ग्रन्थ में नहीं पाया जाना केवल 'मूहूतचिन्तामणि' नामक ग्रन्थ में इसका उल्लेख है । 'महानिन्तामणि' गोसाइजी के बाद की रचना है । इस पद तथा कल्पित एते ही पद्यों से लोकां न यह ग्रन्थ लगा दिया कि गोसाइजी माता पिता द्वारा पतित्यक्त बानधर । साधन का बात है । कथ ही अनिष्ट ग्रह क्या न हो, कोई माँ-बाप अपनी सत्तान को या नहीं त्याग देता है । यह सम्भव है कि इन्हें छाड़कर इनका माता पिता बचपन में ही परसाङ्गामां हा गये हैं, और यह निराश्रय होकर इधर उधर भटकते फिर रहे । और 'विधिहू सृज्या भवडर' इसका ग्रन्थ साधा रणतया यही है कि ब्रह्मा न भी मुझे ऊपटौंग-सा बनाया भाग्यहीन रचा ।

(२) 'फिरयो हेर—इसी प्रसंग का 'कविताबली' में निम्नलिखित कवित्त मिलता है । देखिए—

'जायो कुल भगन, यथावना बजायो सुनि  
भयो परित्याप पाप जननी जनक को ।  
बारे तें सलात बिचलात द्वार द्वार दीन  
जानत हौं चारफल चार ही धनक को ॥  
तुलसी, सो साहिब समय को सुसेवक है  
सुनत सिहात सोच विधिहू गनक को ।  
नाम राम ! रावरा सयानो किधौं बावरो  
जो करत गिरी तें गुह तुन ते तनक को ॥

(३) 'लहत रसान बहरे—श्रीवजनाथजी इसका यह ग्रन्थ करते हैं बबुर बहेरा के वृक्ष तें रसात फल पाया । भाव पूव पिशाच सिद्धि द्वारा राम भक्ति लाभ भई, यह भक्तमाल में प्रसिद्ध है ।

(४) 'एक गाँठि कइ फेर—राम-नाम के आधार पर ही सारे साधन दन्ता-पूवक प्रबलम्बित है ।

। २२८

प्रिय रामनाम तें जाहि न रामो ।

ताको भलो कठिन कलिकालहै आभिषेक-परिनामो ॥१॥

सकुचत समुद्रि नाम महिमा मद-लोभ मोह कोह कामा ।

राम-नाम जप निरत सुजन पर करत द्यह घोर घामो ॥२॥

नाम प्रभाउ सही जो कहै कोउ सिला सरारुह जायो ।

जो सुनि सुमिरि भाग भाजन भइ मुकृतमोल भीन भामो ॥३॥

बाल्मीकि प्रजामिल के कहु हृतो न साधन-सामो ।

उलटे, पलटे नाम महातम गुजनि जितो ललामो ॥४॥

राम तें अधिक नाम-वरतव जेहि किये नगर गत गामो ।

भये वजाइ दाहिने जो जपि तुलसिदास से वामो ॥१॥

भावाय—जिसे राम-नाम की अपेक्षा श्रीरामचंद्रजी भी प्यार नहीं है (जिस स्वयं श्रीरामचंद्रजी में उनका नाम अधिक प्रिय है) उसका इम करान कलिकाल में, आदि, मध्य और अंत तारों का कालों में कल्याण होगा (क्याकि कलियुग में मुक्ति का देनेवाला हरि-नाम-स्मरण ही है) जो नामानुय होगा, वह सदा सर्वथा सुखी रहेगा ॥१॥

नाम की महिमा ममत्कर ग्रहकार, लोभ, प्रानान क्रोध और काम भी सफुचा जाते हैं, सामने नहीं आते । जो सज्जन सदा राम-नाम-स्मरण करते हैं उन पर कड़ी घुप भी छाया कर देती है । (कठिन-से-कठिन अक्षिप्त भी इष्ट हो जाते हैं, बर उड़े दुख भी सुख में परिणत हो जाते हैं) ॥२॥

यदि कोई कहे, कि नाम के प्रभाव से पत्थर पर कमल अकुरित हुआ है, तो उसे सच ही मानना चाहिए । (नाम के प्रभाव से असम्भव वार्ते भी सम्भव हो जाती हैं) जिस नाम को सुनकर और जपकर भीलनी शबरी भी भाग्यवती शीलवती और पुण्य मयी बन गई (ता क्या शिला-कमल वाली असम्भव घटना क्या सम्भव नहीं हो सकती ?) ॥३॥

वाल्मीकि और भ्रजामेल के पाम न तो कोई साधन था और न कोई सामग्री ही (न योगाभ्यास किया था, न यत्न-यागादिक ही) किन्तु उहाने भी, उतने पुण्ड्रे राम-नाम के महात्म्य से, घुषकिया से जवाहरात जीत लिये ॥४॥

नाम का शक्ति श्रीरघुनाथजी से भी बढी है । उसने ग्रामीण मनुष्या को चतुर नागर बना लिया (जिनको बोलने रहने, उठने, बैठने की भी योग्यता नहीं थी, व शिष्ट, कवि और महात्मा हो गये) । अधिक क्या, जिस जपकर तुलसीदास मरीछे बुरे जीव भी डर की चोट से, अर्ध हो गये (कीर्तियाँ भी अर्णियाँ हो गई) ॥५॥

भावाय—परिनामो = (परिणाम) अन्त । कोह = क्रोध । शिला = पत्थर । शरीरह = कमल । जामो = जम उठा, अकुरित हुआ । भाग भाजन = भाग्यवती । भील भामो = भील की स्त्री शबरी । सामो = सामान । जितो = प्राप्त कर लिया । ललामो = (ललाम) यहाँ रत्न से तापय है । नगर-नट = नागर शहर में रहनेवाले चतुर मनुष्य । गामो = ग्रामीण । वजाइ = डका बजाकर ।

विनय—(१) प्रिय रामो—भक्तपुत्र हनुमान्जी ने भी यही वान कही है—  
राम त्वत्तोऽखिल नाम, इति मे निश्चला मति ।

त्वया तु स्तारिताऽप्योष्या नाम्ना तु भुवनत्रम् ॥

रामचरितमानस में—

निगु न ते इहि भानि बड, नाम प्रभाय अपार ।

पहुँचें नाम यह राम तें, निज विचार अनुसार ॥

राम भक्तहित नरतनु धारी । सति सज्जुट किय छाणु सुधारी ॥

नाम सप्रेम जपत अनयासा । भक्त होंहि मुद मगत धासा ॥

राम एक तापस तिय तारी । नाम कोटि खत कुमति सुधारी ॥

रिपिहित राम गुह्य गुणः ॥ सति गत गुण वीर विद्यारो ॥  
 सति शेष दुःख क्षान्त दुरागाः ॥ सतः समन्ति रवि विनि नामा ॥  
 भजेत् राम धाम भव भानु । भवभयभङ्ग नाम प्रानु ॥  
 दृश्य वा प्रभु वात गुहाया । जनमन अमित नाम विप पावन ॥  
 तिसित्त निजर श्वर गुणानु । नाम सारसङ्गि-वगुण निरानु ॥

सपरी गोप गुणवर्ति गुमनि वात गुणाय ।

नाम उपारे तिमि तत, वरविदिनि गुणाय ॥

राम गुह्य विभीषण शोक । रामे सत जान सत शोक ॥  
 राम श्रीर गरीष निधाने । शीर धेर पर विरय विराने ॥  
 राम भातु वपि-वटव बनोर । सेतुनेतु सम वीर त धोर ॥  
 नाम सेत भय सिपु मुषाहीं । बरह विचार गुण मन माहीं ॥  
 राम सकुल रन रावन मारा । सीम सहित निरुपु रपु धारा ॥  
 राजा राम अवध रजधानी । गाधत गुन गुर मुनि बरवानी ॥  
 सेवक मुनिरतनाम सप्रोती । विपुलम प्रयत्न मोह दस जीती ॥  
 किरतसनेहमगन गुण अपने । नाम प्रसाद सोच गति तपने ॥

गोसादनी ने ही नहीं भनक अनुभवी साधु सत्ता न राम-नाम का एसा ही प्रभाव  
 कहा ह । महाप्रभु पत य देन न नाम-कीता को हा सबत अधिब महत्य दिया ह । कबीर  
 साहब ने भी नाम की भारी महिमा गाई ह

राम का नाम ससार में सार है राम का नाम है अमृत धानी ।

राम के नाम ते कीटि पातक टरें राम का नाम बिस्वास धानी ॥

×

×

×

कहाँलौं कहीं अगाध लीला रची, राम का नाम काहू न जानी ।  
 राम का नाम ल कृष्णगीता कबी बांधिया सेत तव मम जानी ॥  
 ब्रह्म सनकादि कोई पार पाव नहीं तामु का नाम कह रामराया ।  
 कहे कबीर बह गुरुस तहकीक कर राम का नाम जो पृथी साया ॥'

अर्थ—

सू द मर अज्ञपा मर अनहद हू मरि जाय ।

नाम सनेही ना मर कह कबीर समुनाय ॥'

(२) वरत छाह धोर धामो —प्रमाण ह—

'किये जाहि छाया जलद सुखव यहै बर बात ।

सस मग भयव न राम कहें जस भा भरतहि जात ॥

[ रामचरितमानस

(३) 'उलटे ललामो

उलटा नाम जपत गग जाना । वाल्मीकि भे ब्रह्म समाना ॥'

[ रामचरितमानस

उलटे नाम की कथा संस्कृत के किसी प्राचीन ग्रन्थ में नहीं पाई जाती ह ।  
 संस्कृत के अनुसार 'मरा मरा' का कुछ अर्थ भी नहीं होता । भाषा म भी 'मारो, मारो

होता है, 'मरा मरा' नहीं। था दबनारायण दिवनी का यह अर्थ ठीक जचना है कि जीवों की रक्षा करना ता सीधा नाम अपने का सार है, और हिंसा करना या बुरा करना उलटे नाम का जप है।

(४) दाहिने 'बामो'—कवितावला में अपने विषय में गोसाइजी ने स्वयं कहा है—

'राम-नाम की प्रभाय पाउ महिमा प्रताप  
तुलसी से जग मनियत महामुनी सो।

अति ही अभागो अनुरागत न रामपद,  
सूझ एतो बडो अचरजु देखि सुनी सो ॥'

२२६ GmE

गरेगी जीह जो कही और को हों।

जानकी-जीवन। जनम-जनम जग ज्यायोतिहारेहि कोर को हों ॥१॥

तीन लोक, तिहुँ काल न देखत सुहृद रावरे जोर को हों।

तुम सो कपट करि कल्प कल्प वृमि हूँ ही नरक घोर को हों ॥२॥

वहा भयो जो मन मिलि कलिकालहि कियो भौतुवा भौर को हों।

तुलसिदास सीतल नित यहि बल, बडे ठेकान ठौर को हों ॥३॥

भावाय—यदि मैं यह कहूँ, कि मैं रामजी का छोड़कर किसी दूसरे का हूँ, तो मेरी यह जीम न जाय। हे श्रीजानकीवल्लभ! मैं तो इस ससार में आपके ही टुबरा से (जूटन से) जी रहा हूँ ॥१॥

तीनों लोकों और तीनों काल में (पृथिवी पातान और स्वर्ग में, तथा भूत वतमान और भविष्यत में) आपकी बराबरी का कोई दूसरा हिन्नु नहीं दिखाई दिया। यदि मैं आपके साथ छल कपट करूँगा तो मुझे धार नरक का, कल्प-कल्प में कीटा होना पना (क्योंकि आप सब-पापी के आगे कपट जान बूझ तक चल सकेगा?) ॥२॥

क्या कहा जो कल्पियुग ने मिनकर मेरे मन का भँवर का भौतुवा बना दिया? प्राण यह है कि भौतुवा जग जन में रहता हुआ भी जल के ऊपर ही तरता रहता है उसमें डूब नहीं सकता बस हा कलि ने यद्यपि मुझे भव नदी में डाल दिया है तो भी मैं आपके प्रताप से, उसमें डूबूँगा नहीं, ऊपर ऊपर ही तरता रहूँगा। विषय भाग मुझ पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकेंगे। इसी बल भरास पर तुलसीदास सदा शान्त रहता है, कि वह बडे ठौर-ठिकाने का रहनेवाला है। (श्रीरघुनाथजी के राजदरवार का गुलाम है। कल्पियुग उसका क्या बिगाड सकता है) ॥ ॥

गद्याय—गरगा=गन जायगी। ज्याया=जिनाया हुआ। जार=(जो) बराबरी। भौतुवा=छोटा-सा बाना काहा जा प्राय जन में नावा के पास रहा करता है।

विशेष—(१) 'जानका' को हों—यदि जीव श्रीजानकी-जीवन का गुलाम होकर नहीं रहा, तो उसका जीना न जाना बराबर ही है—



'तिह सँ एर मूजर स्वान भले, जइयासत जे न बहें बह्युय ।  
तुलसी जेहि राम सों नेह गरी सो सही पमु दूछ विषा नइ ॥  
जननी बत भार मुई दस मास, गई बिन यास, गई बिन प्य ।  
जरि जाउ सो जीवत, जानकीनाथ । जिय जग में तुम्हरा दिन ह्यु ॥'

[कवितावली

भक्त-पर प्रह्लाद न कहा ह —

नाल द्विजस्य वैपत्यमृत्पितृषु वा गुरात्मजा ।  
प्राणनाथ मुकुटस्य न यान न महिमता ॥  
न दान न तपो नेज्या न गोधन न प्रतानि च ।  
श्रीपतेऽमलपाभक्त्या हरिरपद्विदम्ब्याम् ॥

[श्रीमद्भागवत

(२) 'मुहूद — श्रीरामजी के समान कोई दूसरा यथा और हित्तु नहीं है ?  
हनुमान्जी कहत ह—

'बह हम पमु सायामृग चचल ब्रत बहो में विद्यमान की ।

कहें हरि सिव-अज पूज्य प्यानघन कहि बिसरत यह लगनि दान की ॥'

[गीतावली

अकारन को हित्तु और को है

विरद 'गरीब निवाज' कौन का भौह जासु जन जोहै ॥१॥

छोटो बडो चहत सब स्वारथ जा विरचि विरचो है ।

कोल कुटिल कपि भालु पालिवो कौन कृपातुहि सोहै ॥२॥

काको नाम अनख भालस कह अघ अवगुननि विछोहै ।

को तुलसी-से कुसेवक सग्राह्यो, सठ सब दिन साइ-द्रोहै ॥२॥

भाषाथ—बिना ही किसी कारण के हित्तु करनेवाला (श्रीरामचन्द्रजी का छोड कर) और कौन ह ? गरीबो को निहाल कर देन का बाना किसका ह कि जिसकी भूकुटी की ओर यह जन देखा करे ? ॥१॥

छोटे या बडे जो भी ब्रह्मा के रचे हुए ह वे सभी अपना स्वाथ साधना चाहते हैं (बिना स्वाथ के कोई किसी का भला नहीं करता) भला भौल, बदर और रीष प्रादि का पालन पोषण करना किस कृपालु स्वामी को शोभा देता ह ? ॥२॥

ऐसा किसका नाम ह जिसे आगत्य या क्रोध के साथ भी सेन से पाप और दाय दूर हो जाते ह ? (श्रीराम नाम ही ऐसा ह) जिसने सदा मूलतावश अपन स्वामी से द्रोह किया ह, ऐसे तुलसी-सरीखे नोच सेवक को भी किसन अपना लिया ? ॥३॥

न दाय — जोह = देखे । सोह = शोभा देता ह । अनख = क्रोध ।

विशेष—(१) भौह जोह — भौह जोहन का अर्थ कृपा कटाक्ष की प्रतीक्षा करनी, अनुग्रहीत होन की आशा करनी ।

(२) 'छोटो बिरघो ह —कहा भी ह—

सुर नर मुनि सब ही की रीती । स्वार्थ लागि करहि ये प्रीती ॥

तथा—

'जगत में झूठी देखी प्रीत ।

अपने ही सुख सों सब लागे, क्या दारा क्या गीत ॥

मेरो मेरो सभी कहत हैं, हित सो बांध्यो चीत ।

अतकाल सगी नहि कोऊ, यह अचरज की रीत ॥

सन मूरख अजहूँ नहि समुझत, सिख द हारघो गीत ।

'नानक' भव जल पार पर जो, गाव प्रभु के गीत ॥'

(३) 'कोल'—यहाँ निपाद और शबरी दोनों से ही तात्पर्य है ।

(४) अनख आलस'—कहा भी है—

'भाव कुभाव अनख आलसहूँ । नाम जपत मगल दिसि दसहूँ ॥'

[ रामचरितमानस

२३१

श्रीर मोहि को है, काहि कहिहीं ?

रकराज ज्यो मन का नारथ बेहि सुनाइ सुख लहिहो ॥१॥

जम-जातना, जोनि सक्ठ सेव सहे दुगह अरु सहिहो ।

मोमो अगम, सुगम तुमको प्रभु । तउ फलचारि न चहिहो ॥२॥

खेलिवे को खग मग, तरु किंकर ह्वै रावरो राम ही रहिहो ।

यहि नाते नरकहुँ सचु पेहो, या विनु परमपदहुँ दुख दहिहो ॥३॥

इतनी जिय लालसा दास के कहत पानही गहिहो ।

दीजे बचन कि हृदय आनिये तुलसी को पन निबहिहो ॥४॥

भावार्थ—हे नाथ ! मेरे दूसरा कौन है मैं (तुम्हें छोड़कर) किससे (अपनी बात) कहूँ ? मेरी कामना तो ऐसी है जगो रक की राजा बनने की होती है (प्रथवा हूँ तो मैं निपट कमाल, पर ममूवे राजाभा के जमे बांध रहा हूँ । तात्पर्य यह कि साधन तो एक भी नहीं, पर चाहता हूँ मोक्ष से भी महान् मानद । ) सो यह मनोरथ कैसे सुनाऊँ, कौन मेरी सुनकर पूरी करेगा ? ॥१॥

धम-यातनाएँ एवं अनेक योनियों में दास्य दुःख भोगे हूँ और भोगूँगा । हे प्रभो ! मुझे अथ, धम काम और माछ की लालसा नहीं है मेरे लिए तो ये परम दुःख हैं पर तुम यदि चाहा, तो महज मैं ही दे सकते हो ॥२॥

(ता मुझे चाहिए क्या मो मुनिएँ) हे रामजी ! मैं तो तुम्हारे विहार करने का पक्षी, पशु, वृक्ष और वकड पत्थर हाकर ही रहना चाहता हूँ । इस जाने से मुझे नरक में भी सुख मिलेगा और यदि यह कामना पूरी न हुई तो मुझे मोक्ष की भी लालसा नहीं, क्योंकि बिना इस सुख के मा-अद भी तुम्हारी हो जायगा ॥३॥

इस दास व मन म, बस, यही एक कामना है कि वह सदा तुम्हारा जुटी पकड़े

३५८ दिनघ पत्रिका

रहे, (शरण में पना रहे) या तो मङ्ग वचन ने ना (कि हम तरी मङ्ग नामना पूरो कर देंगे) या इन बात का भा में निराम कर ना कि हम तुनना का यह प्रण पूरा कर देंगे ॥४॥

शवाय — राचु=गुण रिथाम । पानही=जूनी ।

धियोय—(१) ललित रहिहो — मुक्त जा रिहग-यानि में जम सेना पडे तो तुम्हारे खेलने के शुक् सारिका, मार भादि हाऊ जा पशु यानि में जाना पडे, तो तुम्हारा घोडा, हाथी, हिरण भादि हाऊ, मीर यानि किसी वृक्ष का ज म लना पडे, तो तुम्हारे विहार-स्थल का बद्ध, रसाल, तमान प्राप्ति बनू । भक्तवर ललितकिशोरी कहते ह—

‘जमुना पुलिन कुज गहवर की पोकिल ह्य द्रुम कूरु मचाऊँ ।  
पद पकज प्रिय लाल मधुप ह्य मधुरे मधुरे गुज गुनाऊँ ॥  
कूकर ह्य बन दीयिन डोली, बचे सोय रसिकन के पाऊँ ।  
ललितकिशोरी’ आस यही अजर रज तज अनत न जाऊँ ॥

मीर रसखानि का भी यह मनोरंज्य उरा देविए

मानुष हीं तो वही रसखानि बसो ब्रज गोकुल गाव के म्वारन ।  
जो पशु हीं तो कहा मधु मेरो, चरीं नित न द की धेनु मँशारन ॥  
पाहन हीं तो वही गिरि को जो घरघी कर छत्र पुर-दर धारन ।  
जो खग हीं तो बसेरो करीं मिलि कालि-दी कूल बद्ध की डारन ॥

(२) यहि नात दहिहो — कविदर विहारो का यो भाव पर एक सरस

दोहा ह

जो न जुगति पिय मिलन की धूरि मुक्ति दुख दीन ।  
जो लहिये सग सजन तो घरक नरक है कीन ॥

मुक्वि अहमद भी अपना स्वर मिला रह ह—

अहमद डाङ सराहिये जो प्रीतम गल बाह ।  
कहा करीं बकुष्ठ ल, कल्पवृच्छ की छाह ॥

२३२

दीनवधु दूसरो कहें पावो ?

को तुल विनु पर पीर पाइहै ? केहि दीनता सुनावो ॥१॥  
प्रभु अकृपालु कृपालु अलायक जहँ-जहँ चितहि डालावो ।  
इहै समुक्ति सुनि रही मौन ही कहि भ्रम कहा गँवावो ॥२॥  
गोपद तूडिव-जोग करम करीं यातनि जलधि थहावो ।  
अनिलालची काम किकर मन, मुख रावरो कहावो ॥३॥  
तुलसी प्रभु जिय की जानत मय, अपनी बछुव जनावो ।  
सो कीजै जेहि भाति छाडि छल, द्वार परो गुन गावो ॥४॥

भावाय — दीना का बधु आपके (जमा) दूसरा वहाँ मिलेगा ? हे नाथ ! आपके

घाटकर पराई पोर ममभनेवाला शीर कीत है ? जिसके घागे म अपना दुःख रोजा फिर ?  
(मिवा श्रीरामजा क' त कोई परोपकार करनेवाला है, त दूसर का दुःख जाननेवाला और उसे साधना देनवाला ह) ॥१॥

जहाँ जहाँ मैं अपने मन को दीजता हूँ, वहाँ-वहाँ कहा ता ऐसे स्वामी मिलत ह  
जिन हृदय में दया नहीं, और कहा ऐस जा दयावान ता ह परतु असमय ह ।  
(तामझा की वृत्ता स क्या ताम ?) यह मुन पमक्कर चुन हो रहता है क्योंकि एसा  
के घागे कुछ कहना अपना भरम गैवाना ह । (भेद खुल जायगा और कुछ हागा भी नहीं,  
इसमे मोन धारण बिण बडा रहता है) ॥२॥

कम तो ऐमे ऐमे किया करता हू कि गाय के खुर भर जल म डूब जाऊँ (चु लू  
भर पानी में डूब मऊँ), पर बातें बनाकर समुद्र का चाह ल रहा हूँ । (कोरी कथनी हो  
कथनी ह, करनी रती भर भी नहीं) । मेरा मन बडा ही लातुप ह और काम का दास  
ह किंतु मुख से आपका सेवक बनता फिरता हूँ (हृदय में कामदास हूँ और ऊपर स  
रामदास । इस पाण्ड का भी कोई ठिकाना ! ) ॥३॥

हे नाथ ! आप तुमसी के मन की ता सभी (बुरी भली) बातें जानने हो ह, तो  
भी म अपना कुछ बातें बतलाना चाहता हूँ । कुछ एसा उपाय कीजिए, जिसमे कपट छोड  
कर सच्चे हृदय स आपन द्वार पर पडा पडा केवल आपके हा गुण गाया करू ॥४॥

गन्दाय—पाह—ममक सकेगा । अनायक—प्रयाग्य ।

विशेष—(१) 'अनि सावची कहावा —करीर साहव कहन है—

'साधु भया तो क्या भया माला पहिरी चार ।

वाहर भेय बनाइया, भीतर भरी भंगार ॥'

(२) द्वार गात्रा कविबर विहारो भी एसा ही कहन ह—

हरि, कौजत तुम सो यहै, तिनती वार हजार ।

जेहि नहि भानि डरयो रहौ, परयो रहौ दरवार ॥

मनोरथ मन को एके भाति ।

चाहत मुनि मन अगम सुकृत फल, मनसा अथ न अघाति ॥१॥

करमभूमि कलि जनम, कुसगति, मति विमाह मद माति ।

करत कुजाग कोटि क्या पैयत परमारथ पद साति ॥२॥

मेइ साधु गुरु, सुनि पुरान खुति नूचयो राग राजी ताति ।

तुलसी प्रभु मुभाउ सुरत सो ज्यो दरपन मुख वाति ॥३॥

भावाय—मन की अभिलाषा भी एक ही प्रकार की ह । वह एमे पुण्यों के फल  
की इच्छा करता ह, तो मुनिया के मन का भी दुःख ह जयात जिन परमपन् के विषय में  
मुनिजन मन में विचार भा नहीं करने । किंतु पाप करने से तपनि नहा हा रही ह (दोना  
काम एक साथ कैसे हा ? पाप भी बमाना जाय और पुण्य पत्र का भी इच्छा करे) ॥१॥

कमभूमि भारतवर्ष में जन्म भी लिया, तो क्या दुःखा ? क्याकि बलियुग में जन्म,

२३३ *Gumbort*

नीचा का सग और प्रहकार तथा अज्ञान से मतवाली बुद्धि एव कराडा बुर-बुर कर्म, इन सब बुयोगा स परमपद और पराशांति कैसे प्राप्त हो सकती ह ? (इन अनिष्टा क कारण शांति-पद दुलभ हो दीखता ह) ॥२॥

सत्ता और गुरु की सेवा करने तथा व पुराणों के पारायण स परम शांति का ऐसा निश्चय हो जाता ह, जमे सारगो के बजत ही राग पहचान लिया जाता ह । (अर्थात् जैसे सारगो छेड़त ही गानशाला राग का स्वरूप पहचान लेता है उसम तनिक भी सत्नेह नही रहता, उसी प्रकार गुरुजना की सेवा से तथा वद-पुराणों के सुनने से मुझे व विश्वास हो गया ह कि मुझे परमपद प्राप्त हो जायगा) हे तुलसी । प्रभु रामचन्द्रजी का स्वभाव तो बल्पवृक्ष के समान अवश्य ह (जो उनसे मांगा जाता ह वह मिल जाता ह) किंतु साथ ही वह ऐसा ह जैसे शीश म चेहर का प्रतिबिम्ब । (भाव यह ह कि जसा मुह बनाकर या विगाडकर हम दपण में देखेंगे वसा ही वह दिखाई देगा । इसी प्रकार भगवान क पवृक्ष तो अवश्य ह किन्तु उस वृक्ष के नीचे बठकर हम जसी इच्छा करेंगे वीना ही फल मिलेगा) ॥३॥

पदाथ — मुकुट=पुण्य । माति=मतवाली । साति=शांति । कांति=कांति, सौंदर्य ।

विशेष — इस पद में भगवत्कृपा और जीव के पुष्टपाय का साथ साथ विवचन किया गया ह । एक ओर कर्मों का विवचन हुआ ह तो दूसरी ओर भगवत्कृपा का सुदढ विश्वास प्रकट किया जाता ह । भक्तिमाग म यह मिद्धात बडा उचा माना गया ह । पहले अत करण शुद्ध करके ही भगवान के सम्मार्ग जाना चाहिए भगवत्कृपा दिय दपण में स्वच्छ मुख का दखना चाहिए । पालडियो का ता उस दपण से दूर ही रहना अच्छा । कबीर साहब कहते ह—

‘ मुखडा क्या देखे दरपन में तेरे दया घरम नहि मन म ?

२३४ गुंफ

जनम गयो वार्दिहि वर वीति ।

परमारथ पाले न परया कछ, अनुदिन अधिक अनीति ॥१॥

खेलत खात छरिक्पन गा चलि, जावन जुबतिन लियो जीति ।

रोग वियोग साग लम सकुल बडि वय वृथहि अतीति ॥२॥

राग दोष इरपा तिमोह वस रुची न साधु ममीति ।

कहे न सुने गुनगन रघुवर के, भइ न रामपद प्रीति ॥३॥

हृदय दहत पछिलाय अनल अय सुनत द्रुसह भवभीति ।

तुलसी प्रभु तें हाइ सो कीजिय समुझि प्रिरद की रीति ॥४॥

भाषाथ—जसा म र यह (मनुष्य) जीवन दय हा धीत गया । परमाथ तनिक भी हाथ न गगा । इन दना राग औगुनी अनीति बढती ही गई ॥१॥

खडकपन ता पवन धान बोन गया और बीवन का स्त्रिया न जीत लिया । (जिस यौवन म प्रतिभा और बुद्धि का विकास होना ह दृष्टियां चलय रहना ह चित्त में उमग

और उत्साह बढ़ता है, उसे युवनिधो ने नयन बाण से छिन भिन कर दिया, सौंदर्य के पाश में बाँधकर गुलाम बना दिया ।) अब रहा बुढ़ापा, सो वह रोग, विधोग और शोक तथा परिश्रम से परिपूर्ण रहने के कारण अकारण बीत गया ॥२॥

राम द्वेष, ईर्ष्या और मोह के कारण न तो सत्ता की सभा अच्छी लगी और न रघुनाथजी की गुणावली का ही कहा और न सुना । श्रीरामजी के चरणा में प्रेम ही नहीं हुआ (साराश, आत्म कल्याण के जितने भी माग ही सकते हैं वे सभी विफल रहे ।) ॥३॥

अब यह हृदय परचात्ताप की भाग में जला जा रहा है, क्योंकि अशहनीय ससार के भय को सुन रहा है । इस तुलसी के लिए अब तो अपने विरुद्ध की रीति को सोच समझकर जो कुछ भी प्रभु से हो सके सो करें । भाव यह है कि मुझसे तो कोई साधन बना नहीं, पर सुना है कि मेरे प्रभु पतित पावन हैं सा व अपने इस नाम के नाते मुझ पापी का भी उद्धार कर ही देंगे ॥४॥

शब्दाय—बादिहि = यद्य ही । पाले न परयो = हाथ न लगा । सोग = शोक । समीति = (समिति) सभा । पछिनाय = परचात्ताप ।

विशेष—(१) 'जनम गयो बीति — कबीर साहब भी चेतावनी दे रहे हैं —

रात गँवाई सोय कर दिवस गवायो खाय ।  
हीरा जनम जमोल या कीडी बदले जाय ॥  
आछे दिन पाछे गये गुरु मे किया न हत ।  
अब पछिताया क्या कर, बिडिया चुग गइ खेत ॥

(२) 'खलत अतीति — श्रीशकराचार्य भी चता गय है—  
'बालस्तावत्श्रीडासवतस्तदणस्तावत्तहणीरक्त ।  
बृद्धस्तावच्चिन्तामान पारेब्रह्मणि कोऽपि न लग्न ॥'

(४) 'प्रभु कीजिय'—सो अब तो—

जवगुन मेरे बापजी बकस गरीबनिवाज ।  
जो मे पूत कपूत हों, तऊ पिता को लाय ॥  
तुम तो समरथ साइयाँ बद्ध करि पकरो बाहु ।  
धुरहीलों पहुँचाइयो जनि छाडो मग माहँ ॥' —कबीर

२१५ gmfb

ऐमेहि जनम समूह मिराने ।

प्राननाथ रघुनाथ-मे प्रभु तजि मेवन चरन मिराने ॥१॥  
जे जइ जीव कुटिन कायर खल, केवल बलि मल-माने ।  
सूखन बदन प्रमसन तिह वहे, हरि तँ अधिक करि माने ॥२॥  
सुरा हित कोटि उपाय निरंतर करत न पाय मिराने ।  
सदा मलीन पथ के मल ज्यो, पगहुँ न हृदय मिराने ॥३॥  
यह दीनता दूर करिये को अमित जतन उर आने ।  
तुलसी चित चिता न मिटे विनु चिन्तामनि पहिचाने ॥४॥

भाषाय—एक ही अनन्य (मर्ष) दीत गय । प्राणनाथ रघुनाथजी मरीसे स्वामी को छात्र-दूसरा व चरणा की गवा करता रहा (शरद्वार पर जाकर सारी सुशामद करता फिरा याचना की उनकी मान कर्तारें गही फिर भी निरुजता के कारण बराग्य का उदय न हुआ) । १॥

जो मूल जीव कपटी कायर और दुष्ट हैं और जा केवल कति क पापा में ही लिप्त हो रहे ह, ऐसा की प्रशंसा करने करते मुझ मूय गया ह (शिव रात्र उनकी प्रशंसा की) उन्हें भगवान से भी बड़ा समझ रखा ह ॥२॥

सुग पाने के लिए सदा बरोडा यत्न करते करते पैर नही दुबने (दिन रात झूठे विषयभोगा के पीछे इधर उधर भटकता फिरा) । रास्ते के जल की तरह अंतर सदा मैला बना रहा, कभी निमल या स्थिर नही हुआ (जमे रास्ते का जन हमेशा उम पर चलते रहन के कारण, कभी स्थिर नही होता बसे ही निरन्तर विषय-वासनामा की उथल-पुथल स हृदय निर्विकार और स्वच्छ नही हो पाता ।) ॥३॥

जीव की इस दीनता को दूर करने के लिए मन में अगणित उपाय सोचे पर हे तुलसी ! चित्त की चिन्ता बिना चित्तमणि (श्रीरघुनाथजी) को पहचाने, दूर होने की नही । (परमात्मा का यथाथ ज्ञान होन से ही सारी चिन्ताओं का समूल नाश होगा ।)

गदाय—सिरान = बोल गये । विराने = पराधे दूसर के । पिराने-पीडा हुई । थिराने = स्थिर हुए ।

विशेष—(१) ऐनहि सिरान —कमे दीत गय सो सूरदास स सुनिए — सब दिन गये विषय के हेत ।

तीनो पन ऐसे ही दीते केस भये तिर सेत ॥  
 रंधी सांस मुन बन न आवत, चन्द्र प्रस्थी त्रिमि बेत ।  
 तजि गगोदक अपयत कूपजल हरि तजि पूजत प्रेत ॥  
 करि प्रमाद गोविंद बिसारयो बूझयो कुटुम समेत ।  
 सूरदास बहु खरच न लागत रामनाम मुन सेत ॥  
 कुछ भी तो न बन पडा —

रचिक सवार नाहि अग भग स्थामा स्थाम

एरी धिक्कार और नाना कम कीव प ।

पापन को धोय निज कर तें न पान कियो

आली अगार पर सोतल पय पीव प ।

बिचरे न वृथावन कुञ्जन लतान तरे

गाज गिर जय फुलवारी—मुख लीव प ।

ललित बिसोरी दीते बरस अनेक हम—

देले नाहि प्रानप्यारे छार ऐस जीरे प ।

(२) 'यह दानना —तब तक दानना जान की नहा जब तक कि प्राशा ने विद  
 महा घोरा, कहा ह —

आगा रागस्य मे दासास्ते दासा जगनामपि ।

आगा दासीहृता येन तस्य दासायने जपन ॥

जोपै जिय जानकी-नाथ न जाने ।

तौ सब करम धरम समदायक ऐसेइ कहत सयाने ॥१॥

जे सुर सिद्ध, मुनीम, जोगविद वद पुरान बसाने ।

पूजा लेत, देत पलटे सुख, हानि-लाभ अनुमान ॥२॥

बाकी नाम धोखेहूँ सुमिरत पातकपुज पराने ।

विप्र, बधिक, गज, गीध, कोटि खल कौन के पेट समाने ॥३॥

मरु से दोष दूरि करि जन के, रेनु से गुम उर आने ।

तुलसिदास तेहि सकल आस तजि भजहि न अजहुँ अयाने ॥४॥

भावाय—अरे जीव ! यदि तूने श्रीजानकी जीवन रघुनाथजी का नहीं जाना, तो तेरे सारे धम धम केवल परिश्रम ही देनेवाले ह (उनमे तुझे कोई सच्चा लाभ होने का नहीं, सारा किया धरा बेकार जायगा) ऐसा जानी पुरुषा ने कहा ह (श्रीरामचन्द्रजी को तत्त्वत जान लेना ही समस्त धम धम का सिद्ध कर लेना ह ।) ॥१॥

वेद एव पुराण कहते हैं कि जितने देवता सिद्ध बड़ बड़े मुनि और यागाम्पासी हैं, वे सब पूजा लेकर उसके बदले में (अनित्य) सुख देने ह । और ऐसा वे अपनी हानि और लाभ का विचार करके करते ह, (या ही बिना विचारे नहीं द डानते) ॥२॥

वह किसका नाम ह जिसे घाव से भी लने से पापा के समूह भाग जाने ह ? अजामेल ब्राह्मण, वाल्मीकि गजेन्द्र, जटायु गोध आदि करोड़ा दुष्टा का किसने अपनाया ? ॥३॥

जिहाने अपने सबका के सुमेरु पर्वत क समान (महान) अपराधा को भुलाकर उनके बालू के कण क समान (छोटे छोटे) गुणा को अपने हृदय में रख लिया ह, हे तुनसीदाम ! हे मूख ! सारी आशाएँ छोड़कर, तू उही का क्यों नहीं भजता ? ॥४॥

भावाय—जोगविद=योगक्रिया जाननेवाले । पराने = दूर हो गये । विप्र = अजामेल से तात्पर्य ह । बधिक=बहेनिया, वाल्मीकि से तात्पर्य ह । कौन के पेट समाने =किसने शरण म लिया । मरु=सुमेरु पर्वत । रेनु=रज का कण । अयाने=मूख ।

विशेष—(१) जो प जाने—इसी भाव के पद्य कवितावली में भी मिलते हैं । श्रीजानकी-जीवन के न जानने स जीव की क्या दशा होती ह—

काम से रूप प्रताप बिनैस से, सोम से सील गनेस से माने ।

हरिचन्द्र से साधि, बड़े विधि-से मघवा से महोप विधि सुख साने ॥

सुकसे मुनि सरद से यकता, चिरजीवन लोमस ते अधिकाने ।

ऐसे भये तो कहा तुलसी जो रागिबलोचन राम न जाने ॥

×

×

×

सुरराज-सो राज समाज समृद्धि बिरवि घनाधिप तो धन भो ।

पवमान सो पावक सो जस सोम सा दूपन सो भवभूषण भा ॥

करि जोग समीरन साधि समाधिक धीर बडो, बसहू मन भो ।

सय जाय सुभाय कहै तुलसी जो न जानकी जीवन को जन भो ॥



निज श्रवणुन, गुन राम रात्रे लखि मुनि मति मन रुम्है ।

रहनि वहनि समुझनि तुलसी की को कृपालु विनु ब्रूमै ॥२॥

भावाय — हे श्रीराम ! हे नाथ ! इस जीव को यदि यह सूझ जाय कि उसकी भलाई आपस प्रीति जोड़ने में हाँ हाँ तो वह शरीर पर सिर रहत हुए तथा स्मरण रहते हुए कब-कब की तरह क्या लड़ता फिरे ? (भाव यह है कि जैसे वीर पुरुषों का मस्तक विह्वल हुए ही जो उसके आगे आता है उसे मारता चला जाता है चेतना रहित होने के कारण यह नहीं देखता कि किस मारना चाहिए और किसे नहीं, वस ही यह जीव कामादि होकर अपना हित तो समझता नहीं, किन्तु सभी के साथ बर बंधता फिरता है, इसे इस बात का ज्ञान ही नहीं, कि मेरा हित मेरा कल्याण आपकी कृपा से ही हो सकता है । इसीलिए यह श्रद्धे की तरह ब्रह्म पीयूष को छोड़कर विषय विष का पान कर रहा है) ॥१॥

अपने दोषों और आपके गुणों को देख सुनकर हे रघुनाथजी ! मेरा बुद्धि और मन रुक जाते हैं । (जी म तो आता है कि आपके चरणारविन्दों की शरण में जाऊँ, पर अपने दोषों की ओर देखकर बुद्धि पगु हो जाती है मन सकाच में पड़ जाता है । सोचता हूँ कि मुझ-सरीखे पापी को वहाँ कस स्थान मिल सकेगा !) तुलसी का आचरण, कथन और रहस्य आपको छोड़कर, हे कृपालो ! और कौन समझ सकता है ? (आप घट घट की बात जाननेवाले हैं, सो अपनी कृपा-दृष्टि से इसका उद्धार कीजिए) ॥२॥

शब्दाय—अद्यत = (अद्यत) जिसका नाश न हो अमर । कबध = घड, हण्ड । जूझ = लड़ । रुम्है = उलझ जाय ।

विनय—(१) निज श्रवणुन — श्रीवज्रनाथजी ने पतित जीव के निम्न मुख्य मुख्य दोष गिनाये हैं—

काम शोष-युत कृपाहत दुर्बादी अति लोभ ।  
 लपट लग्नाहीन गनि विद्याहीन, असोभ ॥  
 आलस्य अति निद्रा बहुत दुष्ट इया कर हीन ।  
 सुम दरिद्री जानिये रागो सदा मसीन ॥  
 देन कृपात्रहि दान पुनि, मरण दान दृढ़ नाहि ।  
 भोगी सय न समुझई कुछ साधन के माहि ॥  
 अति अहार प्रिय जानिये, अहकारयुत देतु ।  
 महा असच्छन पुरुष के ये अटठाइत सपु ॥'

(२) गुन राम रात्रे — वाल्मीकिय रामायण में श्रीराम के शिष्य गुणों का वर्णन इस प्रकार किया गया है —

इन्द्राक्षु वज्रभयो रामो नाम जन श्रुत ।  
 नियताभा मृदाशयो हृदिमाधनिमावनी ॥

दुद्धिमानोतिमात्राम्नी, श्रीमाञ्छत्रुनिबहण ।  
 धमन सत्यसधदच प्रजाना च हिते रत ॥  
 यगस्वी ज्ञानसम्पन्न गुचिन्मय समाधिमा ।  
 प्रजापतिसम श्रीमाघाता रिपुनिपूदन ॥  
 रक्षिता जीवन्वीरस्य धमस्य परिरक्षिता ।  
 वेदवेदागनत्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठित ॥

× × ×

स च सधगुणोपेत कोल्यानदनवद्धन ।

समुद्र इव गाभीर्ये धर्येण हिमवानिध ॥<sup>१</sup>

(३) 'रहित' ब्रूक — क्योंकि धन्तर्जामी ही हृदय की वान जानकर उसका मयेष्ट प्रतीकार कर सकता ह । कबीर साहब विनती करत हैं —

'म अपराधी जनम का, नख सिख भरा बिकार ।

तुम दाता दुखभाना मेरी करो सम्हार ॥

अतरजामी एक तुम आत्म के आधार ।

जो तुम छोडो हाथ तो कौन उतार पार ॥'

२३६

जाको हरि दृढ करि अग करयो ।<sup>१</sup>

सोइ सुसील पुनीत वेदविद, विद्या गुणनि भरयो ॥१॥

उतपति पाहु-सनय की करनी सुनि सतपथ डरयो ।

ते त्रैलोक्य-पूज्य, पावन जसु, सुनि सुनि लोक तरयो ॥२॥

जो निज धरम वेद-बोधित सा करत न कछु विसरयो ।

विनु अरवगुन कृकलास कूप मज्जित कर गहि उधरयो ॥३॥

१ इसी भाव का सूरदासजी का भी यह पद ह

जाको मनमोहन अग कर्यो ।

ताको केश खस्यो नहि सिर तें जो जग बर परयो ॥

हिरनकसिपु परिहारि धरयो प्रह्लाद न नेकु डर्यो ।

अजहें तो उत्तानपाद-सुत राज करत न मर्यो ॥

राखी लाज द्रुपद-सनया की कापित चीर हरयो ।

दुरजोधन की मान भग करि बसन प्रवाह भर्यो ॥

त्रिप्र भक्त नृप अघकूप दिष्ट बलि पड़ि वेद छरयो ।

दीनदयालु कृपानिधि की गुन काप नह्यो पर्यो ॥

जो सुरपति कोप्यो ब्रज उपर कहियो क्यु न सरयो ।

राखे ब्रजजन नद के लाला गिरिपर त्रिरद धरयो ॥

जाको, बिरद है गरबप्रहारी, सो कैसे विसरयो ।

सूरदास' भगवत भजन करि सरन गहे उधर्यो ॥

ब्रह्म विसिद्ध ब्रह्माण्ड-हृत्तम गभ न नृपति जर्यो ।  
 अजर अमर, कूलिसहै नाहिन वध, सौ पुनि फन मरया ॥४॥  
 त्रिभ्र अजामिल अर सुरपति तें कहा जो नाह रिगर्यो ।  
 उनको किये महाय बहुत, उर का सताप हरया ॥५॥  
 गनिवा अरु कदर्य तें जग मेंह अथ न करत उरर्यो ।  
 तिनको चरित पवित्र जाति हरि निज हृदि भवन वर्यो ॥६॥  
 केहि आचरन भला माने प्रभु सा ती न जानि पर्यो ।  
 तुलसिदाम रघुनाथ कृपा को जोवन पय पर्यो ॥७॥

भावाय — जिसे श्रीहरि ने दृढतापूर्वक अंगीकार कर लिया वही सुशोभ ह, पवित्र ह, वेदन ह और समस्त विद्या एव सदगुणों से परिपूर्ण ह (क्योंकि वह राम का प्यारा ह इसलिए बिना बुनाय ही सबगुण उसकी सेवा में उपस्थित रहते ह) ॥ ॥

पांडु के पुत्रों की उत्पत्ति और उनकी करलूत का सुनकर समाग तक डर गया था, किन्तु वे श्रीहरि-कृपा से तीनों लोकों में पूजनीय हो गये और उनका पवित्र यश सुन सुनकर लोग (ससार सागर से) तर गये (मुक्त हो गये) ॥२॥

जो राजा नृग वेद विहित वणाश्रम धर्म से तनिक भी विचलित नहीं हुआ था, और जो बिना ही किसी दोष के गिरगिट होकर कुएं में पड़ा हुआ था, उसे आपन हाथ पकड़कर बाहर निकाल लिया और उसका उद्धार कर दिया (गिरगिट को योनि से छुड़ाकर दि-पलोक को भज दिया) ॥३॥

ब्रह्माण्ड तक की भस्म कर देनेवाले (अश्वत्थामा के) ब्रह्मास्त्र से राजा (परीक्षित) गभ में नहीं जल सवा और अजर एव अमर (नमचि) दय जो वय स भी न मरा था फेन से मर गया ॥४॥

अजामेल ब्राह्मण और इन्द्र से ऐसी कौन सी बात था जो न रिगडो हो ? किन्तु आपने उनकी भारी सहायता का और उनका कष्ट दूर कर दिया ॥५॥

वरया और कामदेव न ससार में ऐसा कौन सा पाप ह जान किया ह किन्तु भगवान् ने उनका चरित्र पवित्र समझकर उन्हें भी अपने हृदय मन्दिर में स्थान दिया ॥६॥

भगवान् किस आचरण से प्रमत्त होने ह, यह समझ में नहीं आता । तुलसीदास सा श्रीरघुनाथजी की कृपा का ही माम सडा-मडा देवता रहता ह (वह और कुछ नहीं जानता, केवल कृपा का ही बात जाहता रहता ह ।) ॥७॥

गदाय — भय करयो = भयना किया पक्ष किया । वासिष्ठ = विहित । कृपास = गिरगिट । धर्म = (धर्म) समय । नृपति = मगाराजा परीक्षित से आशय ह । कल्प = कामदेव । उवरयो = वचा । मरया = मरा ।

विशेष — (१) उनपति पांडु-जनय का — पांडु के पाँच पुत्र पाँच देवताओं के बीच से उत्पन्न हुए थे । मुषिष्टिर धर्मराज न भीम वायु से प्रजुन इन्द्र से और उकुन-सहस्र अश्विनोत्तुमार से उत्पन्न माने जाते हैं ।

(२) 'करनी'—सबसे बुरी करनी तो यहो ह, कि पावा भाइयो ने एक ही स्त्री द्रौपदी के साथ पत्नी सम्बन्ध जोडा ।

(३) 'ब्रह्म' जरयो ब्रह्मत्वयामा ने, पाडवो को निवश करन के लिए परीक्षित को गम में ही ब्रह्मास्त्र से मारना चाहा था, परन्तु भगवत्कृपा से वह ब्रह्मास्त्र से भी बाल-बाल बच गये ।

(४) 'अजर' मरयो —नमुचि दैत्य ने ब्रह्मा से यह वर माग लिया था कि मैं किसी भी अस्त्र शस्त्र से न मारा जाऊँ न शुष्क पन्था स मेरी मृत्यु हो न आद्र से ही । देवामुर-सग्राम में इसने बडा घोर उत्पात किया । इन्द्र इस जब न मार सका, तब आकाशवाणी हुई कि यह किसी भी अस्त्र शस्त्र स नहा मारा जा सकता । इसकी मृत्यु तो समुद्र के फेन से हो सकेगी, क्याकि वह न शुष्क ह और न आद्र । अत वह फेन से मारा गया ।

(५) 'सुरपति'—इन्द्र ने ऋषि पत्नी ब्रह्म्या के साथ सभोग किया, विश्वरूप ब्राह्मण का वध किया, तथा श्रीर भी कई पातक मन्त्र होकर किए । इन्द्र की अनेक पापमयी क्याए पुराणा में प्रसिद्ध ह ।

(६) 'गनिका'—पिंगला से आराय ह श्रीमुख से भगवान् ने उद्धव के प्रति इसकी प्रशंसा की ह ।

२४०

सोइ सुकृती, सुचि, साचो जाहि राम ! तुम रीझे ।

गनिका, गीघ, वधिक हरिपुर गये, ले करसी प्रयाग वत्र सीम्हे ॥१॥

ववहूँ न डग्ग्यो निगम मग ते पग, नग जग जानि जिते दुख पाये ।

गज धा कौन दिद्धित जाके सुमिरत, नै सुनाम वाहन तजि धाये ॥२॥

सुर मुनि विप्र त्रिहाय बडे कुल, गोकुल जनम गोपगृह लीहा ।

बायो दियो बिभव कुरुपति को, भोजन जाइ त्रिदुर घर की हो ॥३॥

मानत भलहि भलो भगतनि ते, वत्रुव रीति पारथाहि जनाई ।

तुलसी सहज सनेह राम वस, श्रीर सत्रै जल की चित्रनाई ॥४॥

भावाय—हे रामजी ! जिस पर आप प्रसन्न हा गये वही सच्चा पुण्यात्मा ह और वही पवित्रात्मा । वरया (पिंगला) गाघ (जटाघु) श्रीर बहलिमा (वा-मोकि) जा बकुण्ठ घाम चल गये त्रिगोन वत्र प्रयाग में जाकर घोर तप किया, और कण्डा की आग में जलकर मर ? (पञ्चानि तप करते हुए मर) ॥१॥

राजा नृग कभी वशक्त माग पर मे नही हटा था किन्तु ससार जानना ह कि उमने कितने दु ख भोगे (गिरगिट की घीनि पाकर हजारो वष कुएँ में पडा सहता रहा) । श्रीर वह हाथी वही का बटा दीक्षित था जिसक एक बार स्मरण करते ही आप अपने वाहन गड्ड को छोडकर चत्र मुमशन लिय दौड प्राय ॥२॥

देवता मुनि श्रीर ब्राह्मणा के ऊचे कुन को धाकर आपने गोकुल में एक ग्वाले के घर में जन्म लिया । कौरवश महाराजा दुर्योधन के ऐश्वर्य का टुकराकर आपने दीन

विदुर के घर जाकर (साग भाजी का) भोजन किया ॥३॥

भगवान् अपने अनन्य भक्तों के साथ प्रेम का ही गीता मानते हैं । (भाव, भक्त का प्रेमाधीन रहत है शय साधना द्वारा वश न नही हुअत ।) इस अनन्य प्रेम भक्ति की रीति कुछ कुछ आपने (अपन समा) मजुन का वताई थी । हे तुलसीदास ! श्रीरघु प्य जी तो सरत सहज प्रेम के अधीन ह दूमर जितने भी साधन ह, व एख ह, जस पानी की चिकनाइ । भाव यह ह कि पानी पडत ही थोडा देर के लिए, शरीर चिकना सा मालूम दता ह पर स्नान पर फिर ज्या का त्यों रूखा हा जाता है । इसी प्रकार अ य साधनों से क्षणिक सुख मिल जाता है, किन्तु दूसरी वासना पैग होते ही, माया की हवा लगते ही वह सुख मिट जाता ह ॥४॥

गन्दाय—सुकृती = पुण्यकमा । करसी = बडी । दिदित = (दीचित) गुरुमुख । सुनाभ = चक्र । बाहन = गरुड से आशय ह । पारय = पयापुत्र मजुन ।

विशेष—(१) ल करसी सीभे — करसी के स्नान पर काशी' पाठ मानने वाले इसका यो अर्थ करत ह —

वेश्या शिद्ध, निपाद को बनूएठ ले गये सो इहाने काशी और प्रयाग में कव शान्त किए थे ?

(२) वाया दियो कीन्हा — एक बार अभिमानी दुर्योधन ने अपना राज्य बभ्रव दिसान के लिए श्रीकृष्ण को निमन्त्रण दिया । भगवान् उसका कपट भाव ताड गये । उसके यहां न जाकर व गरीब विदुर के घर चल गये । विदुर की साध्वी स्त्री से जब कुछ खाने को मांगा तो सूखी साग भाजी खाकर वहां परम सतोष माना । कहते हैं कि विदुर की स्त्री ने परमावश में कल का गूना तो फेंक दिया और दिसके श्रीकृष्ण के हाथ में दे दिया । गुरदासजी कहते हैं —

सत्तन भक्त मित्र हितकारी स्वाम विदुर गृह आये ।

अनिरस बायो प्रीति निरंतर, साग मगन ह्वे खाये ॥'

(३) रीति पारयहि जनाई — श्रीकृष्ण भगवान ने सारथी बनकर मजुन का रथ हाँका, समय समय पर उनकी भली बुरी बात सुनी फिर भी सदा मन्त्री का निर्वाह किया ।

(४) श्रीगुरदासजी भी इसी रीति पर गा रहे हैं —

जाय दीनानाय डरै ।

सोइ कुलीन, बडा सुदर सोइ जापर कृपा कर ।

राजा कौन बडो रावन तें गवहि गर गर ॥

रक सु कौन सुदामा है तें आप समान कर ।

रूपव कौन अधिक साता तें जनम विद्योग भर ॥

अधिक कुरूप कौन कुचजा तें हरि पति पाइ घर ।

जोगी कौन बडा सखर तें, ताकह काम छर ॥

कौन विरक्त अधिक नारत तें निसिन्नि भ्रमत फिर ।

अधम सु कौन अजामिनू तें, जम तहें जान डर ॥

गुरदास भगवत भजन दिनु किरि किरि जठर पर ।

२४१

तब तुम मोहूँ से सठनि को हठि गति देते ।<sup>१</sup>

कैसेहूँ नाम लेहि कोउ पामर, सुनि आदर आग हूँ लेते ॥१॥

पाप खानि जिय जानि अजामिल, जमगन तमत्रि तये ताको भेते ।

लियो<sup>२</sup> ऋडाइ, चले कर मीजत, पीसत दात गये रिस रेते ॥२॥

गोतम तिय, गज, गीध, विटप कपि, ह नाथहि नीके मालुम जेते ।<sup>३</sup>

तिन्ह ति ह काजनि साधु सभा<sup>४</sup> तजि कृपासिधु तब-तब उठि गेते ॥३॥

अजहूँ अधिक आदर यहि द्वारे, पतित पुनीत होन नहि केते ।

मेरे पासगहु न पूजिहूँ हूँ गये, है, होने खल जेते ॥४॥

हौँ अवलो करतूति तिहारिय चितवत हुतो, न रावरे चेते ।

अब तुलसी पूसरो बाधिहूँ, सहि न जात भोपे परिहास एते ॥५॥

भावार्थ — तो आप मुझ-जैसे दुष्टा को भी हठपूर्वक परमगति देते । (जबकि आपने अनेक दुष्टा को परमगति दी है । कोई कसा ही पापी क्यों न हो, पर ज्योंही वह आपका (राम) नाम लता है आप आदर के साथ उसे आगे जाकर लेते हैं (यह तो सिद्ध हो चुका कि आप बड़े बड़े पापियों और दुष्टों को शरण म ले लेते हैं, उन्हें ससार से मुक्त कर देते हैं । पर मुझे अभी तक क्या सुगति नहीं दी ? क्या मैं वसा दुष्ट नहीं हूँ ? सा तो नहा कुछ और ही कारण होगा ।) ॥१॥

(पापियों के उद्धार के प्रमाण लीजिए) यमदूता ने अपने मन में, अजामिल को पापा की खानि समझकर, उस डाँट डपटकर भय दिखाने हुए कष्ट दिया, किन्तु आपने उसे उनके हाथ से छुड़ा लिया । वैचारे यमदूत हाथ मलते और दाँत पीसते हुए काध भरे चले गये । (कुछ भी बश न चला) ॥२॥

गोतम को स्त्री (अहल्या) हाथो, गीध (जटायु) वृष (यमलाञ्जनु), बानर और जो जो आपकी भरोभाँति मालूम ह, उन सबका जब कोई कामपडा, तब आप सत्त समाज को भा छोडकर वहाँ स चल दिये (उनका कष्ट आपको क्षण मात्र भी सहन न ही सका ।) ॥३॥

आपने दरवाज पर आज भी पापियों का बडा आनर है । न जाने कितने पापी यहा नित्य पवित्र बनाये जाते ह । ससार में कितने भी पापी हुए हैं, मौजूद ह, और माने होंगे वे सब मेरे पासग में भी पूरे न हूँगे । (सब तो मेरा उद्धार सबसे पहले हीना चाहिए था, पर अमा तक हुआ नहीं, इसका कारण क्या है ?) ॥४॥

अब तक तो मैं आपने करतब को धोर टक लगाये देव रहा था (कि कब आप मुझे शरण म लेन ह) पर आपने इधर कुछ भी ध्यान नहा दिया । इसलिए अब

१ पाठान्तर 'तो तुम मोहूँ से सठनि को हठि गति न देते ।'

२ पाठान्तर 'लिये ।

३ पाठान्तर 'ते ते' ।

४ पाठान्तर 'ति हने काज साधु-समाज ।'

तुलसीदास भाषण नाम का पुतला बांधिगा, क्याकि मुमस्य भव इतना अधिक उपहास सहन नहीं हो सकता । (लोग तालियाँ पीट-पीटकर कहते हैं, कि देखा, यह क्या पाखंडी है ! बनने चला था रामदास यह । यदि यह रामदास होता, तो क्या इस तरह मारा-मारा फिरा करता ?) ॥१॥

शब्दाय—गति=मोक्ष । पामर = पापी । तमसि = क्रोध बरके । रिस रते= क्रोधित । विटप=यमलाज्जुन से भाषण है । ग तं=वे गय थे । पासग=तराज के पनडा की बसर ।

विशेष—(१) 'कसेहूँ लेते'—विभोषण इस प्रसंग का प्रमाण है । शरण में जाते ही भगवान ने उसका कसा भादर सत्कार किया यह किसी से छिपा नहीं है —

'रामहि करत प्रनाम निहारिक ।

उठे उमगि आन द प्रेम परिपूरन विरद विचारिक ॥  
 भयो विदेह विभीषन उत इत प्रभु अपुनपो विसारिक ।  
 भली भांति भावते भरत ज्यों भँटयो भुजा पसारिक ॥  
 सादर सर्वाहि मिलाइ समार्जाहि, निपट निकट बठारिक ।  
 दूमत छेम कुसल सप्रम अपनाइ भरोसे मारिक ॥  
 नाथ । कुसल कल्याण सुमगत विधि सुख सकल सुधारिक ।  
 देत लेत जे नाम राघरो विनय करत भुख चारिक ॥  
 जो मूरति सपने न बिलोकत मुनि महेश मन मारिक ।  
 तुलसी तेहि ही लियो अक भरि कहत कनू न संबारिक ॥

[गीतावला

(२) पुतरा बांधि है —जब नटा का जो दिगाने पर कुछ भी गहा मिलता, तब वे कपड़े का पुतला बाँस पर लटकाकर कहते हैं कि देखो यह सूम है । सूम इस नकल से लज्जित होकर उनकी कुछ-न कुछ द हो देता है । इसी तरह म भी एक पुतला बना कर लिय फिराया । लोग जन पूछेंगे कि यह क्या है तो महा उत्तर दूगा कि यह सूम शिरोमणि श्योष्याधिप महाराजा रामचन्द्रजी हैं । इससे भाषण भवश्य लज्जित हो जायेंगे, और तब मुझे धपनाना ही पगा ।

२४२

तुम सम दीनवतु न दीन कौउ मोसम, सुनहु नपति रघुराई ।  
 मोसम कुटिल मौलिमन नहि जग, तुमसम हरि न हरा कुटिलाई ॥१॥  
 हौं मन बचन करम पातकरत, तुम वृपालु पतितन-गतिदाई ।  
 हौं अनाथ प्रभु । तुम अनाथ हित, चित यहि मुरति बरहुँ नहि जाई ॥२॥  
 हौं आरत आरति-नासक तुम, कौरति निगम पुराननि गाई ।  
 हौं समीत, तुम हरन सकल भय, करन कवन वृषा विसराई ॥३॥  
 तुम सुखधाम राम लम भजन, हौं अति दुखित त्रिप्रिध छम पाई ।  
 यह जिय जानि दासतुलमी कहै रागहु सरन समुक्ति प्रभुताई ॥४॥

भावाथ—हे महाराज रामचन्द्रजी ! आपने समान तो कोई भा दीनजना का भला करनेवाला बंधु नहीं ह, और मेरे समान कोई दीन नहीं। ससार में मेरी बराबरी का दूसरा कोई कुटिन शिरोमणि नहीं ह, और आपके बराबर हे नाथ ! कुटिलता का नाश करनेवाला कोई नहीं ह ॥१॥

म मन से, धचन से और कम से पापों में निरस्त रहता हूँ और हे कृपालो ! आप पापिया को मात्त देनेवाने ह। हे प्रभो ! मैं अनाथ हूँ मेरा कोई धनी घोरी नहीं, और आप अनाथो का हित करनेवाले ह। यह बात मेरे मन से कभी नहीं जाती ॥२॥

म दुखी हूँ तो आप दुःखा का निवारण करनेवान हैं ! आपका यह यश वेदा और पुराणा ने गाया ह। म ससार से डरा हुआ हूँ (जन्म मरण के असह्य दुःख से डर रहा हूँ) और आप सब भय नाश करनेवाले ह। (जब आपका और मर इतने सारे नाते हैं तब) क्या कारण ह कि आप मुझ पर कृपा नहीं करते ? ॥३॥

हे श्रीरामजी ! आप आनन्द के धाम तथा धर्म के हरनेवाले ह। म भी ससार के तीना (दहिक दहिक और भौतिक) धर्मो से अत्यन्त दुखी हो रहा हू। सो, अपने मन में इन सब बातों पर विचार करके और अपनी प्रभुता को समझकर तुलसीदास को अपनी शरण में भव रख ही लीजिए ॥४॥

शब्दाथ—रत = लगा हुआ। गति=भोक्त। त्रिविध धर्म = दहिक भौतिक और दहिक दुःख।

विशेष—(१) धर्म पद में गोसाइजी ने जोव और ब्रह्म के, दास्यभाव के अनुसार, अनेक सम्बन्ध गिनाये ह। कवितावली में इसी अनेकविध सम्बन्ध को दूसरे ढंग से कहा ह —

‘राम मातु पितु, बधु, सुजन गुरु, पूज्य परमहित।  
साहिब, सखा सहाय, नेह नाते पुनीत चित ॥  
देस कोस कुल धर्म, धर्म, धन, धाम धरनि गति।  
जाति पाति सब भाँति लागि रामहि हमारि पति ॥  
परमारय, स्वारय, सुजस सुलभ राम ते सकल फल।  
कब तुलसीदास अब जब कहहै एक राम ते मोर भल।’

२४३

यहै जानि चरनिह चित लायो।

नाहिन नाथ ! अकारन को हितु, तुम समान पुरान स्रुति गायो ॥१॥  
जननि, जनक, सुत दार, बधुजन भये बहुत जहँ-जहँ हों जायो।  
सब स्वारथहित प्रीति कपट चित काहू नहि हरिभजन सिखायो ॥२॥  
सुर-मुनि मनुा दनुज अहि किरन में तनवरि मिर काहि न नायो।  
जगत फिरत जयताप पापवस काहू न हरि। करि कृपा जुडायो ॥३॥  
जतन अनेक किये सुखकारन हरिपद त्रिमुख सदा दुख पायो।  
अब थाकयो जलहीन नाव ज्यो देखत विपति जाल जग द्वायो ॥४॥



मो कहें नाथ ! तूजिये यह गति सुग निधान निज पति विगराया ।

अथ तजि रोप करतू करणा हरि ! तुलसिदास मरणागत प्राया ॥५॥

भाषार्थ—यहो जाकर मन धारक करणा में गित्त मगया है, कि हे माप ! धापके समान, बिना ही कारण हिन कर। पाना काई दूगरा गहा ह एगा यनों घोर पुराणा ने कहा ह (धापकी ही मन निष्कारण हिनू मुना है अथ एव धार से मन को हटाकर धापक धरणादिकों में समा लिया ह) ॥१॥

जहाँ-जहाँ (जिहा जिग योगि में) म। जग गया यहाँ-यहाँ मेरे बट्टन त निता माता पुत्र स्त्री घोर भाई बंधु हुए । य सब धपना स्वाध साधन के लिए हा प्रेम करते रहे, पर मा में उनके घत-नपत्त रहा । किसी ने भा मुक्त हरिभगत का उपदेश नहीं दिया (सत्कार-ज्ञान म पसा की ही सलाह का घटन की बिना न भी ग दा) ॥२॥

शरीर धारण कर दवता मुनि मनुष्य राघव सप विचार प्रादि विने मेने सिर नहीं नवाया किसक पैरों पर गरी पना ? बित्तु ह हरे ! पाप क परिणामस्वरूप सोनों तापा से जलत हुए मुझे किसी न तो दयाकर शीतलता प्रदान गरी की (वे बेधारे स्वय ही जब जले जा रहे ह तो मुझे क्या शीतलता देंगे) ॥३॥

मने सुत प्राप्ति के अथ धनक उपाय किए पर हरि परणा स विभुय होने के कारण सदा दुःख ही मिला । ससार में विपत्तिया का जान बिधा हुमा दमकर अथ में (सब साधना स) ऐसा एक गया है, जैसे बिना पानी के नौका धक जाती ह (नाव तो तभी चल सकती ह जब पानी हो बिना पानी के वह कसे चलेगी ? इसी तरह भगवद् भक्ति रूपी यदि जल का आधार ह, तो साधनरूपी नौका चलगी । बिना इस आधार के नौका का चलना सम्भव नहीं) ॥४॥

हे नाथ ! मेरी यह दशा इसीलिए हुई ह कि मेने अपने सुग निधान स्वामी को भुला दिया । हे हरे ! अथ मेरे दोषों का विचार छोडकर इस शरणागत तुलसीदास पर दया कीजिए ॥५॥

शब्दाथ—जायो=जम लिया । जुडायो = ठडा किया शांत किया ।

विशेष—(६) जननि हों जायो'—एसे स्वामी माता पिता व भाई-बंधुओं के विषय में गोसाइजी ने कहा ह —

जरउ सो सपति सदन, सुख, सुहृद मातु पितु, भाइ ।

सनमुख होत जो रामपद, करइ न सहज सहाइ ॥'

[दोहावली

(२) हरिपत्त पायो—

बित्तु गुरु होइ कि ग्यान ग्यान की होइ विरग गिनु ?

गार्वाह वेद-पुरान सुख कि लहिय हरिभगति बित्तु ?

[रामचरितमानस

(३) सुगनिधान निज पति'—वास्तव में इस जीव का सच्चा पति तो परमात्मा ही ह । निज पति का भुला देने से जाव का विधवा की तरह, कसो-कमी यातनाएँ भोगनी पडती ह । कबीर साहन परम विरहाकुल होकर सुगनिधान निजपति' स मिलने

के लिए कसे अघोर हो रहे ह —

‘अविनासी दुलहा बब मिलिहो भक्तन के रछपाल ।  
जल उपजी जल ही सो नेहा, रटत पियास पियास ।  
सें टाढ़ी बिरहिन मग जोऊ, प्रियतम तुमरो आस ॥  
छोड़े गेहूँ नेहूँ लागि तुम सो, भईं चरन लीलान ।  
तालाबेलि होत घट भीतर, जसे जल बिन मीन ॥  
दिवस न भूँव रन नहि निदिया, घर अगना न सुटाय ।  
सेजरिया घरिन भइ हमको, जागन रन बिहाप ॥  
हम ता तुमरो दासी, सजना तुम हमरे भरतार ।  
दीनदयाल दया कर आवो, समरथ सिरजनहार ॥  
क हम प्राण तजत है प्यारे, क अपनी कर लेव ।  
दास बबीर बिरह अनिबाडयो, हमको दरसन देव ॥’

२४४ GmP

याहि सैं मैं हरि । ग्यान गैवायो ।

परिहरि हृदय कमल रघुनार्थहि, बाहर फिरत बिबल भयो घायो ॥१॥  
ज्या कुरग निज अग रुचिर मद अति मतिहीन मरम नहि पायो ।  
खोजत गिरि, तरु, लता भूमि, त्रिल परमसुगव कहा तैं आया ॥२॥  
ज्यो सर त्रिमलवारि-परिपूरन, ऊपर बछु सिवार तून छाया ।  
जागत हियो ताहि तजि हौं सठ, चाहत यहि विधि तृपा बुझायो ॥३॥  
व्यापत त्रिविध ताप तनु दाहन तापर दुसह दरिद्र सनायो ।  
अपनेहि धाम नाम-सुरतह तजि विषय-बहुरवाग मन लाया ॥४॥  
तुम सम ग्यान निधान, मोहि सम मूढ न आन पुराननि गायो ।  
तुलसिदास प्रभु ! यह विचारि जिय कीजै नाथ उचित मन भायो ॥५॥

भाषाय—हे हरे ! अपने हृदय कमल में स्थित वस्तु को छोड़कर जो मैं बाहर, इधर इधर अनेक साधनों के पीछे याकुल हाकर दौड़ता फिरा, यही कारण है कि मने (आत्म) ज्ञान की खाँटिया (अज्ञान) में पड़ गया, जिसका फल यह हुआ कि आज तक आपके दर्शन नहीं हुए ।) ॥१॥

जैसे महामूय मूग अपने ही शरीर में (नाभि के भीतर) सुन्दर कस्तूरी के होने हुए भी उसका रहस्य नहीं जानता और पहाड़, पेड़, लता, घरती और बिला में खोजता फिरता है, कि यह उत्तम सुगन्ध का क्या है रहीं है । (उमा प्रकार में इधर उधर सुख पाने के लिए दौड़ रहा है, यद्यपि अखंड आनन्दस्वरूप परमात्मा मेरे अन्दर में ही निवास कर रहे हैं । यह मेरा भ्रम नहीं था और क्या है ?) ॥२॥

सरावर निमल पानी से पूरा भरा हुआ है, पर ऊपर से कुछ गिबार घास छापी हुई है । उस तालाब का स्वच्छ जल छाड़कर मैं दुष्ट अज्ञान हृदय बना रहा हूँ और इस प्रकार अपनी प्यास बुझाना चाहता हूँ ! (भाव यह है कि हृदय-सरोवर में आत्मा-

नदरूपी जल अगाध भरा ह पर माया मोह की सिवार ऊपर छा जाने से यह दिखायो नही देता और यह जीव आनंद जल की उत्कण्ठा से पाकुल हो रहा ह, त्रिविध ताप से जला जा रहा ह ॥३॥

एक तो मने ही शरीर में त्रिविध ताप याप रहे ह जो भसहा ह और तिस पर दारुण दरिद्रता सता रही ह । यह इसलिए हुआ कि अपन ही घर में राम नामरूपी कल्प वृक्ष की छोड़कर मने त्रिपयस्वी बबून के बाग म अपना मन लगा रवा ह ॥४॥

आपके समान तो जानराशि और भरे समान मूख कई दूसरा नही ह यह बात पुराणा ने कही ह । हे नाथ ! इस बात को ध्यान म रखकर आपका जो उचित लगे, वहा इस तुनसीदास के लिए कीजिए ॥५॥

शब्दाथ—गद=वस्तूरी स आशय ह । सिवार = पानी में होनेवाली एक प्रकार की घास ।

विशेष—(१) 'बाहर फिरत घायो—किसी किसी टीकाकार के मत से बाहर शब्द का अर्थ तीर्थ यात्रा मूर्ति पूजा आदि ह । पर यह ठीक नही जान पड़ता क्याकि गासाइजी ने तीर्थ-यात्रा और मूर्ति पूजा का खंडन नही किया बल्कि उन्हें भगवत्प्राप्ति का साधन बताया ह । 'बाहर स तो आशय यह ह, कि भ्रमपूर्ण सासारिक सुखो में परमानंद की इच्छा करना कसे बन सकना ह ? अतः 'विषयासक्ति' ही यहा बाहर ह ।

(२) कुरग —कबीर साहब कहते ह —

तेरा साइ तुझ में, ज्या पुहुपन म बास ।  
कस्तूरी का मिरग ज्यों फिर फिर दूढे घास ॥'

। २४५ । ५

मोहि मूढ मन बहुत विगोयो ।

याके लिये सुनहु करुनामय, मे जग जनमि-जनमि दुख रोयो ॥१॥

सीतल मधुर पिप्लू सहज सुख निकटाहि रहत, दूर जनु खोयो ।

वहु भातिन भ्रम करत मोहवस, वृथाहि मदमति वारि बिलोयो ॥२॥

करम बीच जिय जानि, सानिचित, चाहत कुटिल मलहिमल धोयो ।

तृपावत सुरसरि विहाय सठ फिरि फिरि त्रिकल अवास निचोयो । ३॥

तुलसिदास प्रभु कृपा करहु भव, मैं निज दाप कू नहि गोयो ।

डासत ही गइ वीति निसा सब कबहुँ न नाथ ! नीद भरि सायो ॥४॥

भावाय—इस मूख मन ने मेरा खूब ही नाश किया । मुनि ह करुणामय । इसीके कारण मैं बार-बार जगत में जन्म लेकर राता राता फिर ॥१॥

शीतल मधुर अमृत के समान सहज आमान का जा समाप ही रहता ह, मने इनके फेर में पत्थर यों भूटा गया जम वह बहुत दूर हा । अनानवश मन अनेक प्रकार से भ्रम किया । मन्मूख न पथ हा पाना का मया । (त्रिपय वासनामा का जल मयकर उममें म आमान शनरूपा मन्मयन निकालना चाहा । पर कही पाना में स भी मन्मयन निकलता ह ? वह ता भगवद्मन्त्रिका दूष स हा निकलगा ।) ॥२॥

यद्यपि यह जानता था कि कम काचड ह, फिर भी चित्त को उसी में सान दिया और मल से ही मल को धोया चाहा। (देखते हुए भी अध की तरह विषय वासना के पक् में जा फँसा)। म ऐसा दुष्ट और मूख ह कि प्यास के मारे गगा को छोड़कर बार बार श्यामल हा प्राकाश को निचाड रहा ह। (दु खरूप विषया से चिपटकर आत्मा नन्द प्राप्त करने की चेष्टा करता फिरता हूँ।) ॥३॥

ह नाथ ! मने अपना एक भी अपराध नहीं दिखाया, अत भव इस तुलसीदास पर कृपा कीजिए। विस्तर विद्यान विद्यान ही साग रात बीत गई पर हे नाथ ! कभी नोदभर नहीं सोया। (सुख प्राप्ति के उपाय कर्त करते ही सारा जीवन बीत गया पर सच्चा भरपूर सुख आज तक कभी न मिला। वह प्रसङ्ग सुख निद्रा कवल आपकी कृपा स ही प्रा सकते ह अथवा नहीं) ॥४॥

शब्दाथ—विगोयो=विगडा। सहजमुख=आत्मानन्द। त्रिलोयो=मथन किया। कीच=काचड। निचोयो=निचाड। गोयो=छिपाया। डासत=विद्यैना विद्याने हुए।

विशेष—(१) माहि विगोया—बधाद करेगा ही, क्पाकि—  
बाजीगर का बदरा ऐसा जिउ मन साथ।  
नाना नाच नचाइक राख अपने हाथ ॥'

—कवीरदास

(२) 'कम कीच —इम पत्र मे यह न समझ लिया जाय कि गोसाइजी ने कम योग का खडन किया ह। निष्काम कम का आशेस ता वह यगन्तय द ही रहे ह। यहाँ शकाम और विषयासवन कम से तात्पय ह, जा वास्तव में बधन का कारण ह।

(३) मनहि मल धोयो —

'मल की जाइ मलहि के धोये ?'

[रामचरितमानस

यह तो—

'राम भक्ति जल बिनु खगराई। अभ्यतर मल कबहुँ न जाई।'

(४) तपावत निचोया'—यो भा कहा ह—

सुपितो जाह्लुभीतीरे रूप वाञ्छति दुभग ।'

किन्तु गोसाइजी की यह उक्ति इससे भा बढकर ह। 'प्राकाश निचोयो' में एक निराला ही चमत्कार ह।

२४६

लोक-वेद हूँ विदित वात सुनि समुझि

मोह माहित विकल मति यिति न लहनि।

छोटे बडे, खोटे-खरे, माटेऊ दूवरे,

राम ! रावरे निराह सबही की निबहृति ॥१॥

होती जा प्राणा बग रत ती ली गग,  
 दुःख त हृदय-भात भांगति मरति ।  
 पहली जा जोई-जाइ सतरो मा माइ माइ  
 यह भाति यह यो त ताइमा रहति ॥२॥  
 परम, पात मुभाउ गुण-शोर जीव जग माया तें  
 सा माय गीत विवि-वहति ।  
 ईगति, दिगीमति जागीमति, मुगीमति है,  
 ए-ति छागव तें गटाय तें गहति ॥३॥  
 शतरज का मो राज पाठ का मय ममाज,  
 महाराज बाजी गी प्रथम त हति ।  
 तुलसी प्रभु व हाथ हारिबा-जीतिरो पाथ ।  
 बहु यप, बहु गुण शतरज पटति ॥४॥

भाषाय—छोटे-बड़े घुरे भल भाये धीर दुबल, इन सबका हे धारणमा ।  
 आपके ही निभान स निभगी ह—यह बात शतरज धीर वग में प्रकट ह । किन्तु इन मुन  
 पर धीर विचारवर भी मोहवश मरा बुद्धि एषी भ्यागुन हा रहो है कि यह स्मिर  
 नही हो रहो ह ॥१॥

जो यह धपने वरा में हाना सो सदा एव रस हो न रहती । न किसी को हर्ष  
 हाता न शोक । और न यातना हा भांगती पडती । जो जिस वस्तु की इच्छा करता वही  
 उगे मित जाती । किसी की या भा इच्छा बाधो न रहती (सारी कामनाएँ पूरी हो  
 जाती ) ॥२॥

किन्तु एसा ह नहीं । कम बाल स्वभाज गुण धीर दोष ये सब धापकी माया से  
 ह धीर वह माया भी मारे डर के भौवक्की गो हाकर धापका भ्रुटि की धीर देखना  
 रहती ह (धापके रस पर चलती ह) । यह माया शिव, ब्रह्मा धीर दिगमला की, योगी  
 श्वरो धीर मुनीश्वरो को आपके हां छुडान स छोडती ह धीर धापके हो पकडान स पकड  
 लती ह ॥३॥

इस माया का सारा समाज शतरज का-मा राज्य ह (भूटा ह) सब पाठ का बना  
 है । असल में न तो कोई राजा ह, न कोई बजौर । महाराज । शतरज की यह बाजी  
 आपकी ही गची हुई है । यह पहल नह। थी । तुलसीदास कहते ह, कि हे प्रभो ! इस  
 बाजा की हार जीस आपके ही हाथ म है (बाह हराएए चाहे जिनाइए चाहे बचन में  
 खल दीवार चढ़े गुहन कर दीवार) यह खल सरस्वती न अनक खप धारणकर, फलट  
 मुत्तो से बहो ह ॥४॥

शब्दाय—विनि = (स्थिति) स्थिरता, शान्ति । दुनी—दुनिया । संसति—कष्ट ।  
 लालसा—इच्छा । हति = था ।

विनय—(१) 'राम निबहति कहा ह  
 तू है वहि जो राम रवि राखा । जो करि तक बड़ावहि साखा ॥'

'राम कीह चाह सो होई । कर अयया अस नाह कोई ॥'

(२) 'घोडति गहति'—प्रमाण ह,

'भ्रामयन् सर्वभूतानि घटादृशानि मायया ।'

[भगवद्गीता

तथा,

'उमा वाद-जोपित को नाई । सय नचावत राम गासाइ ॥

(३) 'सतरज हति'—श्रीवैजनापजी का निम्नलिखित प्रथम चमत्कार द्रष्टव्य

ह

'हे रघुनन्दन ! हे महाराज ! मोह दन लख माया, तथा विवेक दल लैक जीव घोऊ बाजी रचे खलि रहे हैं, तथा प्रथम जो मोह का सेना ह सो न हति नही मारे जाते हैं अरु पीछे कहे जो विवेक सेना सो मरत जाती ह अथवा श्रवण, त्वचा नेत्र, रसना, नासिका, हाथ, पद लिंग इति आठ कोठा ह, पुन प्रवृत्ति बुद्धि अहंकार शब्द स्पर्श, रूप, रस, गन्ध इति आठ पातितन के चौंसठि कोठा मये पुन माया के दिशि माह बांशाह लोकी मिथ्या दष्टि आठह दिशि की चाल विवेक-दल को नाश करता ह । काम बजोर पर-स्त्री म रति टेढी चाल विवेक नाश करता ह ।' इत्यादि ।

(४) बहु शेष बहु मुक्त —अनेक भाषायां धीर युक्तिया स तात्पर्य ह ।

२४७

राम जपु, जीह ! जानि, प्रीति सो प्रतीति मानि,

रामनाम जपे जैहै जिय की जरनि ।

रामनाम सो रहनि, रामनाम की कहनि ।

कुटिल-बलि मल-सोक सकट-हरनि ॥१॥

रामनाम को प्रभाउ पूजियत गनराउ,

कियो न दुराव, कही आपनो करनि ।

भव-सागर को सेतु, वासी हूँ सुगति हतु

जपत सादर सभ्नु सहित घरनि ॥२॥

वालमीकि व्याध है, अगाध अपराध निधि,

'मरा मरा जपे पूजे मुनि अमरनि ।

रोक्यो विच्य, सोख्यो सिधु घटजहूँ नाम-वल

हारयो हियेँ, सारो भयो भुधुर डरनि ॥३॥

नाम महिमा अपार सेप सुख वाग-वार

मति अनुसार बुध वेदहूँ वरनि ।

नामरति-कामधेनु तुलसी को कामतरु

रामनाम है बिमोह तिमिर-तरनि ॥४॥

भावाय—हे जीभ ! तू राम-नाम का जप कर, उसे (यथाथ) जान । (नाम-

सम्ब धी यथेष्ट तत्र को प्राप्त कर और प्रेमपूर्वक उसमें विरवास कर । एक राम-नाम के जप से ही तर हृदय की जनन शांत हो सकेगी । राम नाम के परामणु हो (भावत आचरण रामनाम के अनुमूल कर) और राम-नाम ही का कथन किया कर । कुटिल कलि युग के पापा हुआ और अनिष्टों को हरनवाली यह राम-नाम की प्रपन्नता है ॥१॥

राम-नाम के प्रभाव से गणेश (सर्वप्रथम) पूज जात ह । गणेशजी न अपनी करती को स्वयं कहा ह कुछ छिपाव नहीं रखा (किस प्रकार वह सर्वप्रथम पूज्य मान गय यह क्या स्वयं उहोन अपन मुख से सुनाई ह ।) यह राम नाम समारूपी समुद्र का पुत्र ह (इस पर चढकर भक्तजन सहज ही भव-सागर पार हो जात है) । काशी में भगवान शंकर भा पावती के सहित जोधा का मोक्ष प्रदान करत के लिए राम-नाम को जपा करत है ॥२॥

वामीकि बहलिये क अगणित पाप थ किंतु उटा भी नाम मरा-मरा जप कर न एस (महामा) हो गय कि मुनियो और देवतामा न भी उनकी पूजा की । अगस्त्य ऋषि न भी इसी नाम के बल पर विद्याचल का (सप्तम बढने से) रोक दिया और समुद्र को सुखा दिया था । पीछे वह समुद्र उही ब्राह्मण (अगस्त्य) से मन में द्वार मानकर खारा हा गया ॥३॥

नाम की महिमा अपार ह । शप शुकदेव बदा और पण्डिता ने बारबार अपनी बुद्धि के अनुसार इसका वणन किया ह । राम-नाम से प्रीति का होना तुलसीदास के लिए मानो कामधनु ह और कल्पवृक्ष ह । मधिक क्या रामनाम भगवानाधिकार नष्ट करन के लिए साक्षात् सूप ह ॥४॥

शब्दाय—गनराउ = गणेश । धरनि—श्री पावती से तात्पर्य ह । ह=प्र । घटज=घट से उपन अगस्त्य ऋषि ।

विशेष—(१) राम जपु जरनि — दोहाबली म गोसाइजी ने राम-नाम की भूरि भूरि महिमा गाई ह । इस सिद्धांत के पुष्टिरूप कई दोह मिलत ह । जैसे

रामनाम रति राम गति, राम नाम विश्वास ।  
मुमिरत मुभ मगत कुसल दुहै दिसि तुलसीदास ॥  
प्रीति प्रतीति सुराति सो, रामनाम जपु राम ।  
तुलसी तेरी है भली आदि मध्य, परिनाम ॥  
सकल कामनाहीन जे, राय भगति रसतीन ।  
नाम प्रम पीछूष हूद तिनहै किये मन भीन ॥  
हिय निगुन मघनहि सगुन रसना नाम गुनाम ।  
मनहै पुरट सपुट समठ तुलसी सनित सनाम ॥

(२) पूजियत गनराउ = कहत ह कि वानकपन म गणेश बड उत्पाती ये । एक लो हासी के जसे भगवान दूधर शिवजी क गणा के नायक । इहान सकल मुनियो को मारा वृष गिरा लिय जगल उजाड डाल । शिवजी बडो चित्ता म पड गये । श्रीराम का स्मरण किया । प्रकट होकर भगवान न शंकर से अपने भावाहन का कारण पूछा । शंकरजी न धरन पुत्र गणा का क्या कह सुनाई । वान—कुत्र एसा उपाय बतनाइ जिससे मरा पुत्र ब्रह्मदेव से मक्त हो जाय । भगवान न गणेशजी का रामसंन्यास नाम जान का उन देव किया । धनय नि-उ म श्रीराम-नाम-स्मरण मे गणेशजी कुत्र हा वान म भगव

मूर्ति माने जाने लगे । गणेशजी ने स्वयं कहा है—

'ततस्तद्गृह्लादेव निष्पापोऽस्मि तदव हि ।

तेदाविसवदेवानां पुण्योऽस्मि मुनिरत्तम ॥'

इस कथा का ब्रह्मपुराण में उल्लेख है ।

(३) 'सभु सहित परनि —शिवजी ने स्वयं कहा है—

अहो भवनाम जपन वृत्तार्यो वसामि काश्यामनिग भवाया ।

मुमुर्षमाणस्य विमुक्तयेऽह दिशामि मत्र तव रामनाम ॥'

[अध्यात्म रामायण]

(४) 'रोक्या विध्य'—एक पुराण कथा है कि विध्याचल अत्यन्त ऊँचा पर्वत था । सूर्य के प्रचण्ड तेज के कारण जब उसके वृक्ष जलने लगे, तब उसे बड़ा क्रोध आया और सूर्य को ढक देने के लिए वह अपना शरीर बढाने लगा । देवता घबराए । अगस्त्य ऋषि से उन्होंने प्रायना की । महर्षि ने रामनाम का स्मरण कर विध्याचल को मस्तक पर हाथ रखकर उससे कहा, 'देख जब तक मैं लौट न आऊँ, तब तक तू यहाँ ऐसा ही पना रह ।' अगस्त्य फिर कभी न लौटे और न वह उठा । वैसा ही पडा रहा । यह राम नाम का प्रभाव है ।

(५) सोरूपो सिन्धु—पौराणिक कथा है कि एक दिन सध्या समय महर्षि अगस्त्य समुद्र तट पर पाठ-पूजा कर रहे थे । दिन पूर्णिमा का था । समुद्र का ज्वार प्रतिक्षण बढने लगा । उसकी ऊँची ऊँची लहरें महर्षि की पूजा सामग्री बहा ले गई । उन्हें बड़ा क्रोध आया और 'राम' ऐसा कहकर तीन आचमन से सारे समुद्र को सुखा लिया । पीछे देवताओं के सविनय आग्रह से मूत्र के माग से, खारा बनाकर, उसे बाहर निकाल दिया ।

(६) कामतह रामनाम'—

रामनाम कलि कामतह सकल सुमगलवन्द ।

सुमिरत करतल सिद्धि सब पग-पग परमानन्द ॥

नाम राम की कलपतह कलि कल्याण निवास ।

जो सुमिरत भयो भाग तें तुलसी तुलसीदास ॥

[ दोहावली

२४८

पाहि पाहि राम । पाहि रामभद्र, रामचन्द्र ।

सुजस सवन सुनि आयो हौ सरन ।

दीनवधु । दीनता दरिद्र दाह-दोष दुख

दाहन दुसह दर दुरित—हरन ॥१॥

जय जय जग-जाल-व्याकुल करम काल

सब खल भूप भये भूतल भरन ।

तव-तव तनु धरि भूमि भार दूरि करि

थाये मुनि, सुर, साधु, आस्रम-चरन ॥२॥



वेद लोव, सत्र सासी, काहू की रती न रासी,  
 रावन की वदि लागे अमर मरन ।  
 ओक दे विसोव विषे लोभपति लावनाय  
 रामराज भयो धरम चारिहु चरन ॥३॥  
 सिला, गुह, गीध, कपि, भील, भालु, रातिचर,  
 रयाल ही कृपालु कीहे तारन-नरन ।  
 पील उद्धरन । सीलसिधु । डील देखियतु  
 तुलसी पे चाहत गलानि ही गरन ॥४॥

भावाय—हे श्रीरामजी ! कल्याणस्वरूप रघुनाथजी ! रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए । आपका सुयश सुनकर म शरण प्राया हू । हे दीनबन्धो ! आप दीनता, दरिद्रता, सताप, दाय असह्य दुःख, भय तथा पापा का नाश करनेवाले हू । म भी दीन हूँ, दरिद्र हूँ, त्रिताप स जल रहा हूँ, अपराधी हूँ अत्यन्त दुखी हूँ ससार से भयभीत हूँ और महान् पापी हूँ । विरवास हूँ आप मुझे इन दोषों से छुटकारा देकर भगोकार कर लेंगे ससार सागर से पार उतार देंगे ॥१॥

जब-जब आपके भक्त जगज्जाल में फँसकर दुखी हुए, काल और कम वे वरा में जा पड़ और पथिवी पर दुष्ट राजे भाररूप हो गये तब तब आपने भवतार ले-लेकर पथिवी पर का भार दूर किया (दुष्टों का नाश कर दिया) और मुनि देव, साधु सत एव वर्णाश्रम धर्म की स्थापना की ॥२॥

वेदों जोर ससार दोना में ही प्रसिद्ध ह, कि जब रावण न किसी का भी मान न रहने दिया, सबको निस्तेज व ऐश्वर्यहान कर दिया और उसके कारागृह में पड़-पड़े कभी न मरनेवाले दैवता भी मरने लगे तब हे भगवन ! आपन ही लोक-मूर्तियों का, इन्द्र, कुबेर आदि का आश्रय देकर निश्चित किया और उन्हें फिर से लोकों का अधिष्ठाता बनाया (जिसका जो लाज था, उस वह दिला दिया) । आपके राज्य में तब धर्म चारा चरणों स युक्त हो गया (सत्य, तप दया और दान पनप उठे) ॥३॥

हे कृपामूर्ते ! आपने लीलापूवक ही महलया, निषाद, जटायु वानर भील, भालु और राक्षसों को तरण-त्तारण बना दिया (उन्हें तो मुक्त किया ही, साथ ही उन्हें ऐसा पवित्र बना दिया कि उनके ससग मात्र से दूसरे भी ससार-बन्धन से छूट गए) । हे गजेन्द्र उदारक ! हे शीलसागर ! इस तुलसी पर जो आपकी और से ढील सी दिखाई देती ह, उससे वह ग्नाति के मार गना चाहता ह । (उमे इस बात पर लज्जा आ रही ह कि बड़े-बड़े पापी तो तर गये, वहीं क्यों अभी तक बन्धन में पड़ा सड़ रहा ह) अतएव कृपाकर शीघ्र ही उम अपना लीजिए ॥४॥

गणपथ—गहि=रणा करो । दुरित=पाप । मरन=भाररूप । धाये=स्थापित किए । रती=तन । अमर=दैवता । ओक=आश्रय । सिला=पत्थर यहाँ भट्ट्या स तात्पर्य ह । रातिचर=राक्षस । रयाल ही=लीलापूवक, या ही । पील=हाथी ।

विशेष—(१) 'जब जब वरन—यह गीता के निम्नलिखित श्लोकों का

छायानुवाद जान पता है—

‘यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।  
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं स्रजाम्पहम् ॥  
परिनाशाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।  
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥’

२४६

भली भाँति पहिचाने-जाने साहिब जहा लो जग  
जूडे होत थोरे ही थोरे ही गरम ।  
प्रीति न प्रवीन, नीतिहीन, रीति के मलीन,  
मायाधीन सब किये कालहू करम ॥१॥  
दानव-दनुज बडे महामूड मूड चडे  
जीते लोवनाय नाथ बलनि भरम ।  
रीति रीति दिये वर खीझि-खीझि घाले घर,  
आपने निवाजे की न काहू को सरम ॥२॥  
सेवा सावधान तू सुजान समस्य साचो  
सदगुन धाम राम । पावन परम ।  
सुख, सुमुख, एवरस एकरूप, तोहि  
विदित विसेपि घटघट के मरम ॥३॥  
तोसो नतपाल न कृपाल, न कंगाल मो सो  
दया म बसत देव सकल धरम ।  
राम कामतरु-टाह चाई ध्वि मन माह  
तुलसी बिकल, बलि, बलि कुधरम ॥४॥

भाषा—दुनिया में जहाँ तक मानिक हैं, उन्हें मने अच्छी तरह समझ और पहचान लिया है। वे पाठ में ही प्रसन्न हो जाते हैं और पाठ में ही नाराज हो उठते हैं। (यह बात नहीं, कि जिसे बना दिया उसे फिर बिगाड़ना क्या? जरा-सा भूल हो जाने पर, वे अपने सेवकों का सवनास ठक कर हाथते हैं)। न ता वे प्रेम व निभान में ही कुरल हैं, और न नीति को ही समझते हैं। उनका बर्ताव कपट से भरा है, क्योंकि कान, कम और माया ने उन्हें धरने अधान कर रखा है ॥१॥

हे नाथ ! बल के भ्रम में मनुमूड बडे-बडे दत्त गानव शिर पर चढ़ गये थे और उन्होंने सावधानता का भो जोन दिया था। इन लोगों का इनके स्वामियों ने (ब्रह्मा, शिव आदि ने) पहले का प्रयत्न हाथर करदान दिय पर पाँच उनके पर का सत्यानास कर दिया। अपने कृपापात्र का बिगाड़न समय कियों का शम न घाई ॥२॥

हे रामजी ! सबकों को आप ही भना भाँति पहचानते हैं, क्योंकि सच्चे, समय, सदगुणों के स्थान और परम चतुर एक धाम ही हैं। धार सब पर कृपा करनेवाले, प्रसन्न

गुण महा एक रण (म हर्ष में यमुनिन म शाह म विनिन) लोफ परम पुर है ।  
 भागको विद्या रानि म गण पट का हाव मागुण है । (ना जेना हागा है उग यगा हो  
 फव दन है, बहन का धावरवका हा गरी पदना) ॥३॥

भाषा समाप्त मन्मथानावक कृतानु प्रामा कोई दूगण गता है पीर मुक्त-  
 सारागा कोई बगान गता ह । ह्मय । म्वा म हो मार धर्मा का निराग हागा है । (पयः  
 भाग मुक्त दयापाव पर दया कोदित भाग बन्धुपुत्र ४ । धरी अभिजाता है वि भागको  
 छाया में सप्त रू । (शरण म पदा रू यनिहारा । गृह मुन भाग बन्धुग के धर्मो  
 (हिवा मरारम पागण्ड भागि) म म्वा म्वा हा रता ह् (हागए दनको रदा  
 कोदित महा हा यह बचन का गरी) ॥४॥

गन्धाय — जू = शोचन प्रगण । गरम = धर्मगुण । पात = गण विण ।  
 सुदय = कृपा करनवान । प्रननपाव = शरणागत का पावनवान ।

विशेष — (१) 'हिव गरम' — एग मतलब यारो पर विरिधर किराम न  
 क्या पूव कहा ह —

साह मा सतार में मनसब का ब्यवहार ।  
 जब लगि पसा गीठ में तब लगि साको यार ॥  
 तब लगि साको यार यार सगीह सग शोत ।  
 पसा रहान पात यार मुन स महि मोल ॥  
 कह गिरिधर किराय जगन इहि लेखा भारी ।  
 करत बेगरनी श्रोति यार विरता कोई साई ॥

एग स्वार्थी मित्रा म ऊबकर मुकवि किराम कहत ह —  
 भरम गवान शरवेरो सग नीचन तें कटकित देल बेतकीन प गिरत है ।  
 परिहरि भावती सु भावयो सभासदनि प्रथम अरस्त के अथ अमित्त है ।  
 'लछिराम सोभा शरवर म विनास हरि मूरल मलिद मन पल न विरत है ।  
 रामचन्द्र चाद चरनाभ्युज विसारि देस बन वग बेलिन-बसूर में किरत है ॥

( २ ) सद्गुणधाम — श्रीराम क मतक सद्गुणा का बालमकि रामायण म  
 गिनाया गया —

इन्वाकुवशप्रभवो रामो नाम जन धृत ।  
 नियतात्मा महावायो छुतिमाधतिमावगी ॥  
 बुद्धिमा नीनिमान धामो श्रीमानगशुनिवहण ।  
 धमन सत्यसघद्व प्रजाना च हितेरत ॥  
 यशस्वी ज्ञानसप न गुविबन्ध समाधिमान ।  
 सवलाकप्रिय साधुरदोनात्मा विवमण ॥

२५०

तो हीं वार वार प्रभाहि पुकारिके लिझावतो न  
 जा पे माका हातो कहूँ ठाकुर ठहह ।  
 आलक्षी अभागे मोसे त कृपातु पाले पोसे  
 राजा मरे राजाराम अवध सहह ॥१॥

सेये न दिगीस, न दिनेस न गनेस, गौरी ।  
 हित वै न माने विवि, हरिउ न हर ।  
 रामनाम ही सा जोग छेम, नेम, प्रेम पन,  
 सुधा सो भरोसो एहु दूमरो जहर ॥२॥  
 समाचार साथ के अनाथ नाथ । कासो कही,  
 नाथ ही के हाथ सब चोरऊ पहर ।  
 निज काज, सुरकाज अरत के काज राज ।  
 बुधिये बिलब कहा कहूँ न गहर ॥३॥  
 रीति सुनि रावरी प्रतीति प्रीति रावरे सो,  
 डरत ही देखि कलिकाल को कहर ।  
 कहैही वनेगी, वै कहाये, बलि जाउँ, राम,  
 'तुलसी ! तू मेरो हारि हिये न हहर' ॥४॥

भावार्थ—हे नाथ ! यदि मुझे कही कोई दूसरा स्वामी या ( प्राश्रय ) स्थान मिल जाता, तो मैं बार बार आपको पुकारकर नाराज न करता (पर कहीं क्या, ऐसा कोई मिलता ही नहीं, जिसकी शरण में जाकर निभय रह सकूँ। इसीलिए बार बार आपको पुकारता हूँ) । हे महाराज रामचन्द्रजी ! मुझ-सरीखे आलसियों और अभागों को तो आपने ही पाला पोसा है अतः हे कृपालो ! आप ही मेरा राजा हैं और प्रमोदिया ही मेरे रहने के लिए एक नगर है ॥१॥

मैं तो मैंने दिवपाल (कुंवर वरुण आदि), सूर्य, गणेश और पावती की प्रेमपूर्वक सेवा की है, और न श्रद्धा सहित ब्रह्मा, शिव और विष्णु की ही आराधना । मेरा तो योग छेम एक राम नाम से ही है । उसी से मेरा नेम है, उसी से प्रेम है और उसी में मेरी अनाथता है । उसका भरोसा मेरे लिए अमृत के समान है और दूसरे साधन हैं विष के समान ॥२॥

हे अनाथा के नाथ ! मेरे साथी चोर और चौकीदार सब आप ही के हाथ में हैं (काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि चोरों को आप भगाकर विवेक बराम्पल्ली चौकीदारों को सचेत कर देंगे, तो मेरा राम नाम प्रेमरूपी घन बच जाएगा) । हे महाराज ! तनिक विचारिए तो, आपने अपने कामों में देवताओं के कामों में और दान-दुधिया के कामों में क्या कभी देरी की है ? फिर मेरे ही लिए क्यों इतना क्लिप्त हो रहा है ? ॥३॥

आपकी रीति (पतितापावनता, जन-वत्सलता आदि) सुनकर आप पर मेरी प्रतीति और प्रीति हा गई है, किन्तु कलियुग की अनीति को देखकर मैं बहुत डरता हूँ (कि वहाँ यह मुझे आपसे विमुख कराकर विषया में न पँसा दे) । हे रघुनाथजी ! मैं आपको बलयाँ लेता हूँ, मेरी तो आपसे इतना कहने से या किसी के द्वारा कहलाने से ही वनेगी कि 'तुलसी ! तू मेरा है निराश हाकर तू मत घबरा ॥४॥

\*वार्थ—टहर = स्थान । सहर = शहर । हर = हर, शिव । जोग-छेम =



भासाय—हे रामजी ! जिनके हृदयरूपी सुन्दर धा-हे में हरि भक्तिरूपी ऐसा कल्पवृक्ष सुशोभित हो रहा है जिसमें परम सुख के सरस फूल फूलते और मधुर फल पतते हैं ऐसा मित्र हनुमान लक्ष्मण और भरत आपके स्वभाव, गुण, शील और महिमा का प्रभाव (तत्परत) जाते हैं ॥

आपने अपने स्वभाव के बश हाकर शिवजी का स्वामी, हनुमान् को मित्र और लक्ष्मण एवं भरत का अपना भाई माना है, पर व सब आपका अपना स्वामी हो मानते हैं प्रेम म सरा सावधान रहते हैं और आपसे डरा करने हैं (कि वही सब में कोई चूक न पड़ जाय)। यदि स्वामी और सबके इन रीति से प्रेम करते रहें, नीति और नियमों को सदा निवाहते रहें और अपनी टेक से न टलें, तो उनकी प्रीति परम सीमा तक पहुँच जाती है ॥२॥

परम विरक्त होने से ही श्रीरघुनाथजी की महती भक्ति मिलती है—यह शुकदेव, सनकादिक प्रह्लाद, नारद प्रभृति भक्ता ने कहा है। और (परमात्मा के तात्त्विक) ज्ञान के बिना भक्ति प्राप्त नहीं होती किन्तु वह ज्ञान, हे नाथ ! आपके हाथ में है (आपकी ही कृपा से जीव को 'स्वरूप' का ज्ञान प्राप्त होता है) इसी बात को खूब सोच-समझकर चतुर लोग आपने चरणा पर आकर गिरते हैं, (जिन्हें आपकी भक्ति एवं आपके स्वरूप ज्ञान की प्राप्ति की इच्छा है, वे सब छोड़-छाड़कर आपकी ही शरण में आते हैं) ॥३॥

छह शास्त्रों के सिद्धांत भिन्न भिन्न हैं, पुराणा का भी मत एक-सा नहीं है और वेद भी नियम नति, नेति ही कहते रहने हैं। (परमेश्वर के स्वरूप का यथायथ बोध वेद शास्त्र और पुराण नहीं कर सकते)। तब भी उनके सम्बन्ध में तो कहना ही क्या ? मुझे तो बस एक ही बात अच्छी समझ पत्ती है, और उसी से मला हो सकता है। वह यह, कि राम-नाम स्मरण करने से तुम्हारी मरीचे भी (मसार सागर से) तर गये हैं। (राम नाम स्मरण ही सर्वप्रधान साधन है) ॥४॥

गद्याय—परत = फलता है। विरति निरत = वैराग्य में अनुरक्त या परम विरक्त होने से। छ मत = छह शास्त्रों का मत। विमत = प्रतिकूल मत।

विशेष—(१) 'हर'—श्रीरघुनाथजी के ऐश्वर्य को शिवजी ही जानते हैं। ऐश्वर्य का बखान करत हुए आप कहते हैं—

'आदि अत कीड जासु ना पावा। मति अनुमान निगम अस गावा ॥  
पग बिनु चल सुन बिनु बाना। कर बिनु करम कर विधिनामा ॥  
आनन रहित सकल रस भोगी। बिनु बाजी बन्ता बडजोगी ॥  
तनु बिनु परस, नयन बिनु देखा। गहै प्रान बिनु बास असेला ॥  
अस सब भाति अनीतिक करनी। महिमा जासु जाइ नहि धरनी ॥

जेहि इमि गावांह वेद बुध, जाहि धरहि मुनि ध्यान।

सोइ दसरथमुत भक्तहित, कोसलपति भगवान ॥'

[रामचरितमानस

(२) 'हनुमान'—भगवान के सौशील्य के विषय में हनुमान्जी का यह कथन पर्याप्त है—

३८८ । शिष्य-शिक्षा

'बहु ह्येव यन् सात्त्विकं चरन् ध्यात कर्तुं ये शिष्यमात्रेण ॥  
बहुं हरिं भक्त शिष्य-गुण्यं श्यायानं नरं' शिष्यरतिं च तत्कर्मजननी ॥

(३) 'वर्णा'—अथ श्रीरामजी ने वर्णाश्रम को समझाया कि वे कौनसे हैं, तब उन्होंने प्रथम शिष्य शिष्य कहा —  
'परम भीति जावेगिय तागी । बीररति धर्म, गुणरति शिष्य तागी ॥  
ये शिष्य प्रभु तोह प्रजिताया । महर हरे कि बाण मरणाया ॥

(४) मरण — श्रीरामजी ने मरण को तब मरणाश्रम कहा था —  
'मै जाऊँ फिर स्वामि-नृभारु । मरणाश्रम पर कोन न करारु ॥  
मै प्रभु-दया रीति शिष्य कोटी । हारेहु कोन जिजाबहि मोटी ॥

जद्यपि भोने है कुमायु ते हूँ भाई भक्ति बोधी ।  
तनमुग गये सारन शिष्यरति परम गंकोधी ॥

(५) 'मात मान' — भाई — शिष्यजी को श्रीरामजी पूज्य मान ग मानते हैं ।  
यथा —

'भोरो एव मुपुत मत शिष्यरति कर्तुं कर जोरि ।  
सवर भजन बिन मर, भगति न पाव मोरि ॥

भौर सख्यभाव से हनुमाजी से कहते हैं —  
प्रत्युपकार कर्तुं का सोरा । तनमुग हूँ न सबत मन मोरा ॥

[रामपरितमानघ  
[रामपरितमानघ

श्रीराम का सख्यभाव पर जो वात्सल्य था वह अनुपम था शक्ति-भाह्य, सम्मण  
को गोद में लिये श्रीराम कहते हैं —

'भोर निबाहि भली विधि भायप, धत्यो सपन-सो भाई ।  
पुर पितु मातु सकल सुख परिहरि जेहि बन विपति बँटाई ॥  
ता सँग हौँ सुरसोच सोच सजि सखयो न प्रान पठाई ।  
जानत हौँ या उर कठोर तेँ कुलिस बडिनता पाई ॥  
सुमिरि सनेह सुमिश्रा-सुत की दरकि दरार न जाई ।  
तात मरन, तिय-हरन गोप-अप, भुज दाहिनी गवाई ।  
सुलसो में सब भाँति आपने कुल कालिमा लगाई ॥

[गीतावली

(६) 'शुक' — परमहंस शुकदेव कहते हैं —  
'भजति ये विष्णुभक्त यचेतसस्तगेय तत्कर्मपरायणा जना ।  
बिनष्टरागाविबिभत्तरा नरास्तरति सत्तारत्तमुद्रमश्रमम् ॥'

[श्रीमद्भागवत

(७) 'प्रह्लाद'—भक्तवर प्रह्लाद का यह सिद्धान्त है—

वस्माद्भूस्तनुभृतामहमागियोत्त आयु श्रिय विभवमद्रियमाविरञ्चयात् ।  
नेच्छामि ते बिलुलितानुद्विक्रमेण क्वात्तात्मनोपनय [मा निजभृत्यपाश्वम् ॥'

[श्रीमद्भागवत

(८) 'धर्म मत'—साख्य, योग, धरोपिक 'याय पवमीमासा और उत्तरमीमासा ।

२५२

बाप, आपने करत मेरी घनी घटि गई ।

लालची लवार की सुधारिये वारक, बलि,  
रावरी भलाई सबही की भली भई ॥१॥

रोगवस तनु, कुमनोरथ मलिन मनु,  
पर अपवाद मिथ्या-वाद बानी हुई ।

साधन की ऐसी विधि, साधन बिना न सिधि,  
बिगरी बनावै कृपानिधि की कृपा नई ॥२॥

पतित पावन, हित आरत अनाथनि को,  
निराधार को अघार दीनबधु दई ।

इन्ह मे न एकौ भयो, वृक्षि न जूझयो न जयो  
ताहिते त्रिताप-तयो, लुनियत बई ॥३॥

स्वाग सूघो साधु को, कुचालिकलिते अधिक,  
परलोक फीकी मति, लोक रग रई ।

बडे कुसमाज राज । आजुलों जो पाये दिन  
महाराज । केहू भाति नाम ओट लई ॥४॥

राम । नाम को प्रताप जानियत नीचे आप,  
मोको गति दूसरी न विधि निरमई ।

खीशिवे लायक करतव कोटि-कोटि बटु,  
रीशिवे लायक तुलसी की निलजई ॥५॥

भावाय—हे बापजी ! मैं अपने ही हाथ अपनी करनी बहुत बिगाड डाली हूँ । मैं आपकी बलियाँ लेता हूँ इस लोभी और भूठे की बात एक बार सो सुधार दीजिए, क्योंकि जिस जिसके साथ आपने भलाई की उसी उसी की बात बन गई (सो आज मेरी भी बिगडी को बना दीजिए) ॥१॥

शरीर रोगी हूँ मन बुरी-बुरा वासनाप्रा से मैला हो गया है और वाणी दूसरों की निन्दा और बकवाद करते-करते नष्ट हो गई है । रूढ़े कुछ साधन, सो वे भी बिना साधे सिद्ध नहीं होते । भक्त हे कृपानिधि ! आपकी एक कृपा ही ऐसी अनूठी है, जो मेरी बिगडी बात को बना देगी ॥२॥



३६० विनय-पत्रिका

भाप पापियो का उद्धार करनेवाले और दुष्टिया और प्रतापा बं हित ह, जिनका कही ठौर ठिकाना नहीं, उन्हें भाप माथय दते हं और दोना का भला करत ह। पर मैं तो इनम स एक भी नहीं हूँ। (मुझ पर भाप क्या कृपा करेंगे ?)। न ता मने विवक गल से अपने शत्रुओं (काम मोघ लोभ, माह) बं ही साथ युद्ध किया और न उन पर विजय ही प्राप्त की। इसीसे म दहिक भौतिक और दविक इन तीना तापा से जल रहा हूँ। जो बोया सो काट रहा हूँ (किसे दोष हूँ ?) ॥३॥

मन स्वाग ता सीध मादे साधु बं जसा बना लिया ह परतु पाप करन में कलि भी मेरे सामन नगण्य ह। मेरी बुद्धि को परमाय की बातें नीरस जान पडती ह वपाकि वह ससार की वाता म रगी हुई ह (विषय त्रासनाए हा उस अच्छी लगती ह)। हे महाराज ! इस भारी दुष्ट समाज के साथ आज तक जितने दिन बीत, बं व्यय ही गये। आज किसी तरह भापके नाम का सहारा लिया ह (इससे समन पडता ह कि भय मेरे दिन फिरने और करनी सुधर जायगा) ॥४॥

भलीभाति भाप जानत ह कि भापके नाम का क्या प्रताप ह। सिवाय भापके नामरूपी विधाता ने मरे लिए तो दूसरो गति ही नहीं रची ह। भापको भ्रस्तुष्ट करने लायक मेर करोडा कुकम हं किनु सनुष्ट करन लायक तो मरी एक यह निलज्जता ही ह। (मरो निलज्जता पर ही प्रसन होकर कृपा कर दीजिए) ॥५॥

गव्दाय — लवार = मूठा। बारक = (वार + एक) एक वार। हुई = नष्ट की। जायो = जाता। जूफ्या = युद्ध किया। रई = रग गई। निरमई = रचा। निलजई = निलज्जता ही।

विशेष — (१) स्वाग मूपा साधु को रई — कनियुगो साधुमा पर श्री हरिराम यास न एक बडा चुटीला पत् कहा ह — सापत बरागी जड बग।

पातु रसायन औषध सेवत, निसिदिन बढत अनग ॥  
सुक वचनन को रग न लाग्यो भयो न ससय भग ॥

विष बिकार गुन उपज वित लगि सब करत चित भग ॥  
वन में रहत गहत कामिनि कुच सेवत पीन उतग ॥

धनि धनि साधु ! बभ की मूरति, दियो छाडि हरि सग ॥  
सोभ-वचन वाननि अंग-अगनि सोभित निकर निलग ॥

व्यास आस जमपास गरे तिहि भाव राग न रग ॥  
(२) लुनियत बई —

तुमसा कहा न होय, हा हा ! बुझये मोहि ।  
हो है र्हो मोन हो, व्यो सो जानि लुनिए ॥'

राम ! रामिय सरन, राखि भाये सज दिन ।  
विदित त्रिलोक तिहुँ काज न दयालु दूजा,  
भारत प्रनत-पाल को है प्रभु विन ? ॥१॥

लाले पाले, पोपे-तोपे, आलसी, अभागो, अधी,  
 नाथ । पै अनाथनि सो भये न उरिन ।  
 स्वामी समर्थ ऐसो, हौं तिहारो जैसे तैसो,  
 काल-चाल हेरि होति हिये घनी घिन ॥२॥  
 खीझि रीझि त्रिहंसि मनस क्या हूँ एक वार,  
 'तुलसी तू मेरो' बलि, कहियत किन ?  
 जाहि सूल निरमूल, होहि सुन्द अतुल,  
 महाराज राम । रावरी सा, तेहि छिन ॥३॥

भाषा—हे रघुनाथजी मुझे अपनी हा शरण में रखिए क्योंकि आप सदा से (मुझ-जडा का) अपनात आये हूँ । यह सबका विदित है, कि तीना लोको और तीना काना में आपने समान दयालु काई दूसरा नहीं है । हे नाथ ! आपका छाँकर दुखियों और दीना की रक्षा करनेवाला और कौन है ॥१॥

आपने आलसी अभाग और पापा लोग का लालन पालन किया उन्हें पाला पोसा और प्रसन्न रखा, तिस पर भी आप उनमें कभी उच्छेद नहीं हुए, कजदार हा बने रहे । हे प्रभो ! आपनो समर्थ है, पर मजसा कुछ हूँ आपका ही हूँ । बलिकाल की कुटिल चाल देखकर मेरे हृदय में बनी घिन हा रहा है (यह शका है कि कही यह दुष्ट आपके चरणा की धीरे से मर मन का फेर न दे, ता सारी बनी बनाई बात मिट्टी में मिल जाय) ॥२॥

बलिहारी ! एक बार माराजी से अथवा राजो से मुस्कराकर या तेवरी चढा कर किसी भी तरह सही इतना आप क्या नहीं कह दते कि 'तुलसी तू मेरा है ?' इतना कह देन मात्र ही मेरा सारा दुःख जट मून से नष्ट हो जायगा । हे महाराज रामचन्द्रजी ! मैं आपकी शपथ खाकर कहता हूँ उसी क्षण समस्त सुख मेरे अतुल हो जायेंगे ॥३॥

गदाय—अधी—पापी । उरिन—(उच्छेद) बेबाक । घनी—बहुत । मनस = श्रेय ।

विशेष—(१) 'काल चाल घिन—बलिकाल की माया देखकर भक्तवर हरिराम व्यास घबराकर कहते हैं —

‘धम दुर्यो कलिराज दिखाई ।

धीनीं प्रगट प्रताप आपुनो, सब विपरीत चलाई ॥

धन भो मीत, धम भो बरी पतितन सों हितवाई ।

जोगी, जती, तपी, सयासी ब्रत छाँड्यो अकुलाई ॥

बरनात्म की कौन चलाव, सतनहू में आई ।

देवत सत भयानक लागत भावत सगुर जमाई ॥—

सम्पति सुकृत, सनेह मान चित गृह योहार बडाई ।

कियो कुमरी लोभ आपुनो, महामोह जु सहाई ॥

धाम श्रेय मय सोह अरु मत्सर बी-होँ देस दुहाई ।  
दान लेन को बडे पातकी, मचलन को बँभनाई ॥  
लरन मरन को बडे तामसी बारो कोटि कसाई ।  
'ध्यासदास के सुकृत साखरे मे गोपाल सहाई ॥'

(२) जाहि दिन—क्याकि—  
भिद्यते हृदयप्रिय छिद्यते सबसगया ।  
क्षीयते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥'

[श्रीमद्भागवत

२५४

राम । रावरो नाम मेरो मातु पितु है ।  
सुजन सनेही गुरु साहिब सखा सुहृद  
राम नाम प्रेम - पन अविचल वितु है ॥१॥  
सतकोटि चरित अपार दधिनिधि मधि  
लियो काडि वामदेव नाम - धृतु है ।  
नाम को भरोसो बल चारिहूँ फल को फल,  
सुमिरिये छाडि छल, भलो वृतु है ॥२॥  
स्वारथ सावक, परमारथ दायक नाम,  
राम-नाम सारिखो न और दूजो हितु है ।  
तुलसी सुभाव वही, साचिये परेगी सही,  
सीतानाथ-नाम नित चितहूँ को चितु है ॥३॥

भावाथ—ह रघुनाथजी । आपका नाम ही मरा माता पिता सगा सम्बन्धी  
सनेही गुरु स्वामी मित्र और सखा ह । आपने नाम म जो मेरा प्रेम का प्रण ह वही  
मेरा घटल धन ह (और धन तो खच करन स कम हो जात ह पर आपका नाम धन  
दिन-वर दिन बढ़ता ह) ॥१॥

शिवजी ने सी कराइ चरित्ररूपी भगवत दधि मागर स नामरूपी धी मयनर  
निकाल लिया ह (आपक समस्त चरित्रा का सार रामनाम ही माना ह) । आपने नाम  
का बल भरोसा चारा फना का फन भर्षात् धय धम वाम और मोक्ष का साररूप  
ह । प्रत्येक कप-भाव छाँकर इसी का स्मरण करना चाहिए । यहा सर्वोत्तम धन ह ।  
(कलियुग में नाम कीनन न तुय कोई भी धन नहीं) ॥२॥

आपका नाम श्याम का सापनवाला एव परमाथ प्रदान करनेवाला ह । आराम  
नाम के समान हिन्दू दूधरा कोई भी नहीं । यदि यह बात तुनमीनस न स्वभाव स हा  
कही ह तो सचमच हा इस पर सही पडगा । ह जानकारमण । आपका नाम नि य ह  
और वित्त का भी वित्तु है ॥३॥

गणाय—वित्तु = (वित्त) धन । दधिनिधि=दही का समुद्र । वामदेव=शिवजी ।  
कपु=कम धन । स्वारथ = व्यवहार । परमारथ=मोक्ष ।

विशेष—(१) 'नामका भरोसी'—गोसाइजी ने श्रयत्र कहा है —

'राम नाम पर राम तें प्रीति प्रतीति भरोस ।  
सो तुलसी सुमिरत सकल, संगुन सुमगल-कोस ॥  
राम नाम जवलब बिनु, परमारय की आस ।  
बरपत चारिद बूद गहि चाहत चडन अकास ॥'

(२) 'भलो कृतु है — राम नामरूपो यत्र सद्य गुणलदायक है —

तुलसी प्रीति प्रतीति सा, राम नाम जप जाग ।  
किये कोइ विधि दाहिनो, देइ अभागेहि भाग ॥'

(३) 'परमारय—दायक'—यथा—

'अधिकारी विकारी था, सबदोषकभाजन ।  
परमेशपद याति, रामनामानुकीतनात ॥'

[ विष्णुपुराण

२४१ Om - 5

राम । रावरो नाम साधु सुरतर है ।

सुमिरे त्रिविध घाम हरत, पूरत काम,  
सकल मुकृत सरसिज को सर है ॥१॥

लाभहू को लाभ, सुखहू का सुख, सरबस  
पतित पावन, डरहू को डर है ।

नीचे हू को, ऊँच हू को, रक हू को, राव हू को,  
सुलभ, सुखद श्रपनो - सा घर है ॥२॥

वेद हू, पुरान हू, पुरारि हू पुकारि कह्यो,  
नाम - प्रेम - चारिफल हू को फर है ।

ऐसे राम-नाम सो न प्रीति न प्रतीति मन,  
मेरे जान, जानिबो सोई नर खर है ॥३॥

नाम सो न मातु - पितु भीत हित, बधु, गुह,  
साहिव सुधी सुमील सुधाकर है ।

नामसो निबाह नेहू दीन को दयालु दहू,  
दासतुलसी को बलि, बडो बर है ॥४॥

भावाय—हे श्रीरामजी ! आपका (राम) नाम साधुओं के लिए मानो कल्पवृक्ष है, क्योंकि उसके स्मरण करते ही डीना ताप (दहिक भौतिक और दहिक) दूर हो जाते हैं । चित्त शान्त और सुखी हो जाता है सारी कामनाएँ सकल हो जाती हैं । यह पुण्य रूपी कमला का सरावर है (पुण्य के प्रताप से ही त्रिविध ताप दूर होता है और विस में सुख-शान्ति आती है) ॥१॥

यह लाभ का भी लाभ, सुख का भी सुख और (भक्तों का) सयस्व है । यह

पाणिमा का पाया करावाना घोर भय का भी भय, अर्थात् मनुष्य का भाव भयभीत करने याता है। यह ताप का ऊँचा, रंग का गहरा तथा भाव का गुनघन । समा का गुण देवशास्त्र है, घोर भयन जिज्ञा पर य समा धाराम शास्त्र है ॥२॥

य । १, पुगला १ घोर शिवरा । १ पुगलापुगलापुगला कदा है कि रामानुज स प्राति जोन्ना चाग वना का पत्र है (मध मध काय घोर मान का भा सार है) । ऐस श्रीराम नाम पर निगरा प्रम घोर विरवाग तारा , मरी समक में उम मनुष्य का गवा समभता चाटिण (जग मध का नि रात पाठ पर भार तात्पर चना पदज है, उसी प्रकार वह मनुष्य जावन का मार दाता हुमा रात नि इधर म उपर भक्तता विरता है) ॥३॥

पिता माता मित्र, रिनु भाई, गुण घोर स्वामी हमें स काई ना श्रीराम नाम के सदृश गुण देनेवाला ही है । यह परम मुनिन चन्मा य समान मुनिन स्वामी है । हे कृपाला ! बलिहारा, तुमोदाग का यदा दान दाजिण कि धारवा नाम य साव मरा जो प्रेम है यह निभ जाय । (बलिहारा ! इय दान तुवगो व । नए धारवा यः सबसे यदा वरदान है । ) ॥४॥

गन्दाध—रा=नागर । पुरारि=पुर द य व शत्रु निवर्त्री । प=कन । सुधी = बुद्धिमान । वर=वरदान ।

विनय—(१) साध गुरतर है —इमका यह भा मय ही सकना है कि श्रीराम नाम सत घोर कल्पवृक्ष दाता व ही समान सत कना का शास्त्राता है । सत से जा कुष भी माँगा जाय वह दे दता है । यदा स्वभाव कल्पवृक्ष का है ।

(२) 'पुरारि हूँ कक्षा—पुनिए बारी को बाबिया म एक जटिल तपस्वी क्या कहता हुआ घूम रहा है --

येय येय श्रवणपुटके रामनामाभिरामम  
ध्येय ध्येय मनसि सतत तारक प्रह्लादपम ।  
जल्प्य जल्प्य प्रकृति विकृती प्राणिना क्लामूल,  
वीर्या वीर्या अटति जटिल कोऽपि पाणी निवासी ॥

(३) 'सोई तर खरह —भगवद्धिमुख जीव को मध की उपमा धामद्भागवत म भी स्वय श्रीमुख से भगवान ने दी है —

'यथा खरश्च दन भारवाही भारस्य वेता नतु चदनस्य ।  
तथाहि विद्या पटगास्त्रपुक्ता मद्भक्तिहीना खरवद्ब्रह्मि ॥

वह विनु रह्या न परत कहे राम । रस न रहत  
तुमसे सुसाहिव की ओट जन खाटा सरो  
काल की करम की कुसासति सहत ॥१॥

करत विचार सार पैयत न बहूँ कछु,  
 सकल बडाई सब कहाँ तँ लहत ?  
 नाथ की महिमा सुनि, समुधि आपनी ओर,  
 हेरि हारिके हहरि हृदय दहत ॥२॥  
 सखा न, सुसेवक न, सुतिय न, प्रभु, आप  
 माय-बाप तुही साचो तुलसी कहत ।  
 मेरी तो थोरी ही है सुधरेगी विगरियो,  
 बलि, राम रावरी साँ, रही रावरी चहत ॥३॥

भावार्थ—हे श्रीरामजी ! जिना कहे ता रहा नहा जाना, और कह देने पर कुछ रस नहीं रह जाता (मजा विरकिरा हो जाता है) । आप सरोखे सुंदर स्वामी का आश्रय पाकर भी आपका यह सेवक—भले ही वह बुरा हा या भला—गण्ड दु ख भाग रहा है, (यही बात है जो मुह से रोकने पर भी दरबस निकरन हो आती है । यदि किसी दूसरे का यह सुनाऊ ता उसमें क्या रस रहेगा ? क्योंकि कोई मेरा वनेश तो हरेगा नहीं, उलटे हँसो ही उडाएगा) ॥१॥

विचार किया करता हूँ, पर कही रहस्य का कुछ पता नहीं मिनता, कि इन सब लोग ने कहीं से बडप्पन पाया है (वह कौन सा साधन है जहाँ से ये लाग बडे बन बनकर आते हैं) । आपकी महिमा सुन-समझकर जब अपनी दशा की आर देखता हूँ ता निराश हो जाता हूँ और धराराहत ने हृदय जनने लगता है (यह मुनकर कि आप पतित पावन है म आपकी शरण में आना चाहता हूँ पर जब आपकी आर मे कौरा जवाय मिलता है, तब जी में हार मानकर निराश बठ जाता हूँ और हृदय में जलन होने से कुछ-ना कुछ कह बठता हूँ) ॥२॥

सुनि, न तो मेरा कोई मित्र है न सच्चा सेवक है और न मुलबणा स्त्री है, और न कोई स्वामी है । मरे छो सच्चे माई बाप आप ही हैं तुलसी यह भव बात कह रहा है (कवि-कल्पना न समझिग्या) । मेरी तो थोड़ी ही बात है विगहने पर भी सुधर जायगी । किंतु बलिहारी ! मैं आपकी शपथ खाकर बठ रहा हूँ म आपकी बात हो रखना चाहता हूँ (कही संसार में आपकी जन बल्ललता और पतित पावनता की लाज न चनी जाये, मठ यदि आपकी अपन विरद की लाज रखनी है तो मुझे अत्र तार हो दीजिए) ॥३॥

गदशाय—जुसासति—असह्य बट । हहरि—धरारकर ।

२५७

दीनबधु ! हूरि विये दीन को न दूमरी सरन ।  
 आपकी भले हैं मज, आपन को कोऊ कहूँ  
 सब का भला है राम ! रावरी चरन ॥१॥

लिए दुष्ट को मार डालना ही अच्छा है)। प्रायः सब इन दोषों याता पर विचार कर लीजिए। मैं प्रायशः प्रयत्न करता हूँ। बार बार 'कार' शीघ्रतर सुननी ने यह सच्ची बात बतला दी है। जो प्राय (मरा फगना करने में) दरो करण, या म प्राय नाम की महिमा रूपी गोता को टुबो दूंगा। (मेरी दुर्गति का दगतर आगत नाम पर सागा का श्रदा उठ जायगा) ॥४॥

पदाय—गारि=दाय। दोस कोस=प्रतराषा का राजाना। मुवन कोस=घोटा साको स तात्पर्य है। टक्टोरि भाय=गाज भाया। सवार=भूटा। गहदरिहो=मयवर मना कर दूंगा।

विशेष—(१) 'मासो टक्टोरिहो —सूरदासजी भी ऐसा ही कह रहे हैं —  
'हरि, हों सब पतितन को राय।

को करि सके बराबरि मेरी सोपी मोहि घताय ॥  
व्याप, गीष भव पतित पूतना तिनमें बड़ि जो ओर।  
तिनमे अजामेल गरिषा पति, उनमें में तिरमोर ॥  
जहँ-तहँ सुनियत यहै बडाई सो समान रहि आन।  
सब रहे आज-बालिह के राजा, हों तिनमें सुसतान ॥  
अबलों तो तुम बिरद बोलापो भई न मोस भेंट।  
सजो बिरद, के मोहि उधारी सूर गही बटि फेंट ॥

(२) डील विय बारिहो —जीव प्रणु होन के कारण स्वभाव से ही प्रधीर है। गोसाइजी ने तो धमकी ही दी है कि मुझे जल्दी ही तार दा नहीं तो मैं नाम महिमा का नौका का डुबा दूँगा पर कविवर विहारो का धीरज न बधा और यहाँ तक गुस्ताखी कर डाली —

'बच की डेरत दीन हूँ, होत न रयाम सहाय।

तुम हूँ लागो जगतगुरु जगनायक ! जगवाय ?'

२५६

रावरी सुधारी जो विगारी विगरेगी मेरी,  
कहो, बलि, वेद की न, लोक कहा कहैगो ?  
प्रभु को उदास भाव जन को पाप प्रभाव  
दुहै भाति दीनबधु ! दीन दुख दहैगो ॥१॥  
मैं तो दियो छाती पवि, लयो कलिवाल दवि,  
सासति सहत परबस को न सहैगो ?  
दाकी विस्दावली बनेगी पाले ही कृपालु।  
अत मेरो हाल हेरि यौ न मन रहैगो ? ॥२॥  
बरमी घरमी, साधु मेवक विरत रत,  
आपनी बनाई बल कहा कौन लहैगो ?  
तेरे मुह फरे मासे कायर कपूत कूर  
लटे लटपटनि को कौन परिगहैगो ॥३॥

बाल पाय फिरत दसा दयालु ! सब ही की,  
तोहि विनु मोहि कयहूँ न कोऊ चहैगो ।  
वचन करम हिये कहीं राम ! साह किये,  
तुलसी पै नाथ के निराहेइ निरहैगो ॥४॥

भावाय—यदि तुम्हारी वनाई हुई मेरी बात मेरे विगान्ने स विगड जायगी, तो तुम्हारी बलया लेता हूँ, कहा ता ससार क्या कहेगा ? बद का बात नहीं कहता हूँ ! (बल में चाहे जा लिखा हा, उसस कोई मतलब नहा पर ससार क्या कहेगा ? यही कहेगा न कि परमेश्वर तुनसी ही ह, क्योंकि रामजी की वनाई बात उसने विगाड दी । पर, एसा हा कस सकता ह ? मेरी जिसात क्या कि म तुम्हारी बात का विगाड सकू ?) स्वामी की उपासीनता श्रीर मुक्त सेवक का पाप प्रमाव यदि ये दाना ही मिन गये ता हे दीनबचो ! यह दोन दुख के मार जल मरगा (सारास यह कि म तो महापापी हूँ ही, पर तुम मेरे प्रति उपासीन न हो जाओ, तुम्हें ऐसा करना शोभा न देगा) ॥१॥

मने ता अपनी छाती पर वज्र रख लिया ह (हृदय का दुख सहने क लिए वज्र के समान कठोर कर लिया ह) कारण कि कनियुग ने मुझे दबोच दिया ह और भव परावान होकर असह्य कष्ट सह रहा हू । (म ही क्या) जा भी परतन्त्र होगा, वह कष्ट सहगा ही । किन्तु हे कृपानिधान ! तुम्हें अपनी बाँकी विरदावली के वश होकर मुझे पालना ही हागा (यदि मेरा रचा न करोग, ता लोग तुम्हें भूठा कहेंगे) । और, अन्त समय ता मेरा हाल देखकर तुम्हारा यह उदासान भाव रह ही नही सकता तुम्हें अवश्य ही पिघटना पयेगा ॥२॥

कमकाण्ठी घमात्मा, सानु, सेवक, बिरक्त और ससारी जीव, ये सब अपने कर्मों क अनुसार कही-न-कही स्थान पा हा जायेंग । परन्तु तुम्हारे मुँह फेर लेने स, उदासीन हो जाने स मुक्त-जस कायर, कुपूत, दुष्ट नीच और गिर-पडे जीवा की कौन अगोशार करेगा ? ॥३॥

हे दयालौ ! समय आने पर सभी की दशा फिरती ह पर तुम्हें धोउकर मुझे तो कभी कोई नहा चाहेगा । हे रघुनाथजी ! तुम्हारा शपथ खाकर म वचन, कम और मन से कहता हू कि यह जन ता तुम्हारे ही निराहे निमेगा । तुलसी का निर्बाह तो तुम्हारे ही हाथ में ह ॥४॥

पदार्थ — पवि=वच । सायति=कष्ट । करमी=कमकाण्ठी । लटे=नीच, लोटे । लटपटेनि = लयपय, गिर-पडे ।

विनय—(१) बाँकी विरदावली 'कृपालु'—यदि शरण म नहा लोगे, तो प्रापकी विरदावली पर लोग विरवास नहा करगे, और यह सुनता पयेगा कि—

बेद औ पुरानन में की हा हे वज्रान ऐमो  
सतजुग बीच ध्रुव प्रह्लाद की तूटे ही ।  
प्रेता घोव भीच कुल की न करी कानि कष्ट,  
भालनी के साथ प्रभु खाके खेर तूटे ही ॥



द्वार के धात तुम झीपड़ी की रागी साज,  
 पाँच के धात इत बोरप ब बटे ही ।  
 अब कतिबाल में जो बरो ७ सहाय मेरी  
 तुम्हें सोप हतिरें बहेंगे 'हरि भूटे ही ॥'

२६०

साहिय उदास भये दास मास ग्रीम हान  
 मरी बहा चली ? हौं बजाय जाय रह्यो हौं ।  
 लान मे न ठाउँ, परलाव का भरोसो बोन ?  
 हौं तो बलि जाउँ रामनाम ही ते लह्यो हौं ॥१॥

करम, सुभाउ, काल काम, बाह, लोभ, मोह  
 ग्राह अति गहनि गरीबी गाडे गह्यो हौं ।  
 छोरिबे को महाराज, बाधिबे को बाटि भट,  
 पाहि, प्रभु ! पाहि तिहूँ पाप नाप-बह्यो हौं ॥२॥

रोझि बूझि सबकी, प्रतीति प्रीति एही द्वार,  
 दूध को जरघो पिबत फूकि फूकि मह्यो हौं ।  
 रटत रटत लटघो, जाति-पाति भाँति घटघो  
 जूठनि को लालची चहो न दूध नह्यो हौं ॥३॥

अनत चह्यो न भलो, सुपथ सुवाल चल्यो  
 नोके जिय जानि इहा भलो अनचह्यो हौं ।  
 तुलसी समुझि समुझायो मन बार बार  
 अपनो सो नाथ है सो कहि निरबह्यो हौं ॥४॥

भावाय—जब मालिक अपना रुख फेर लेता है तब खास नौकर भी बरबाद हो जाता है, फिर मेरा तो पूछना ही क्या ? मैं तो डके की चोट दु खो में बहा चला जा रहा हूँ, जब मेरे लिए इस दुनिया में ही कहीं ठौर ठिकाना नहीं तब परलोक का क्या भरोसा कहूँ ? हे नाथ ! मैं आपकी बलया लेता हूँ, मैं तो एक राम नाम ही के साथ बिक चुका हूँ (वही मेरे लिए लोक है और वही परलोक है) ॥१॥

कम, स्वभाव काल काम क्रोध, लोभ और मोह रूपी बड़े बड़े ग्राह ने और (साधनहीनतारूपी) दरिद्रता ने जोर से पकड़ रखा है । (तात्पर्य यह, कि जमे आपने गजेन्द्र को ग्राह से छुड़ा लिया था वैसे ही मुझे भी इस विकरान ग्राहा से उबार लीजिए, क्याकि) हे महाराज ! बचन काटने के लिए तो बवल एक आप हैं और बाँधने के लिए करोड़ो योद्धा हैं । अतएव हे प्रभो ! मेरी रक्षा कीजिए । मैं पापरूपी तीना तारों से जत रहा हूँ (अपनी कृपा-श्रुष्टि से इस अग्नि को बुझा दीजिए) ॥२॥

(बदाशित आप यह कहें, कि हमारे ही पास तु धारदार धा जाता है, और वही क्यों नहीं जाता, तो) हे प्रभो ! सबका विश्वास और श्रद्धा तथा रीझ-बूझ तो एक आपके

हो द्वार पर ह । म दूध का जला मट्टा भी फूक फूकवर पीता हूँ । (भाव यह कि मुझे सभी ने धोवा दिया ह इसलिये बहुत ही सारधान होकर चन रहा हूँ ।) विन्नाते चिल्लाते म हार गया हूँ । जाति पानि और चाल चनन सभी से हाथ धो बठा हूँ । अब तो केवल आपके जूठन वा ही लालची हूँ । म दूध से नही नहाना चाहता । भाव, मुझे स्वग के एश्वय की इच्छा नही ह मं तो केवल आपके प्रेम प्रसाद चाहता हूँ ॥३॥

म और वही सुख-सुमाग पर अच्छी चाल चतकर अपना भला नही चाहता हूँ । और यहाँ आपके द्वार पर म तिरस्कृत होकर भी अच्छी तरह रह रहा हूँ । (तात्पर्य यह कि और किसी दबो देवता के समीप रहकर धम-पालन करता हुमा भी नि शक नही रह सकता, क्योंकि वह तनिष सी भून पर दृष्ट हाकर मुझे गिरा देगा पर आप निरादर भी करेंगे तो भी मुझे प्रसन्नता ही होगी, क्योंकि मा-बाप की नाराजगी कल्याण के लिए ही होती ह) । तुनसी ने समझकर अपने मन को बार बार ममज्ञा दिया ह और वह अपने स्वामी से भी कहकर निश्चिन्त हो गया ह कि उसका निर्वाह आपके ही हाथ में ह ॥४॥

शब्दाथ—लीस होत = बरबाद हो जाने ह । बजाय = डके की चाट से । जाय रह्यो हौं = बिगडा जा रहा हूँ । गाडे = दडता से । मह्यो = मट्टा । नह्यो न चहौ = नहाना नही चाहता । अनत = अयत्र ।

विशेष—(१) दूध—नह्यो—श्रीवज्रनाथजी दूधा प्यो हौ, यह पाठ मानकर यह अर्थ करते ह कि— दूध घृतादि उत्तम भोजन चात्ता नही । और श्रीरामेश्वर भट्टजी ने न दूह्यो नह्यो हौं' एसा पाठ मानकर यह अर्थ किया ह कि कुछ दूध मन्नाई नही चाहता हूँ । नह्यो का अर्थ मन्नाई लिखा गया ह । हमें नागरीप्रवारिणी सभी को प्रति ही अधिक शुद्ध जान पडती ह । उसमें 'दूध-नह्यो' पाठ ह, मुहावरा भी ह, कि वह तो दूध से नहा रहा ह अर्थात् बडा भाग्यशाली ह । भारीबाद देता हुई बडो-बूडो स्त्रियाँ वहूँ बेटिया से बहा करती ह, 'दूधों नहाओ, पतो फनो ।'

(२) 'जूठनि को लालची'—इस दुलभ 'जूठन पर भक्तवर हरिराम यास कइ यह पद कितना भावपूर्ण ह —

'ऐसे ही बसिये ब्रज बीधिन ।

साधुन के पनवारे पुनि पुनि, उदर पोषिए सीधिन ॥

घूरन में के बीन दिनगटा रच्छा कीज सीतन ।

कुज-कुज प्रति लोटि लगै रज उडि ब्रज की अगीतन ॥

नितप्रति दास स्याम स्यामा को नित जमुना जल पीतन ।

ऐसेहि 'ध्यास रुचे तन पावन ऐसेहि मिलत अतीतन ॥'

२६०

मेरी न घने, घनाये मेरे कोटि कल्प लो

राम ! रावरे बनाये बने पल पाठ में ।

निपट सयाने हौ कृपानिधान । कहा कहीं ?

लिये वेर बदलि अमोल मन घाउ हैं ॥१॥

मानस मलीन, वरतन बलिमल - पीन  
 जीह हूँ न जप्यो नाम, वक्यो आउ-घाउ में ।  
 कुपथ कुचाल चलयो, भयो न भूलेहैं भला,  
 बाल इसा हूँ न सेत्यो खेलत सुदाउ में ॥२॥  
 देखा देखी दभ तैं, कि सग तैं भई भलाई,  
 प्रगटि जनाई, कियो दुरित दुराउ में ।  
 राग रोप-द्वेष पोषे गोगन समेत मन,  
 इनकी भगति कीही इनही वो भाउ में ॥३॥  
 आगिली पाछिली, अजहूँ की अनुमान ही तैं  
 बूझियत गति, कछु कीहो तो न काउ में ।  
 जग कहै राम को प्रतीति प्रीति तुलसी हूँ  
 झूठे साच आसरो साहव रघुराउ में ॥४॥

भावाथ—मेरी करनी मर बनाने स कराहा कल्प तक भी न बनेगी । किन्तु, हे रघुनाथजी ! आप चाहें तो पाउ पल में ही उस बना दे सकते ह । हे कृपानिधान ! म क्या कहूँ आप तो स्वयं परम चतुर ह मने अनभोग मणि के समान प्रायु के बदले म (विषयरूप) बेर बिसाह लिये । ॥१॥

मन मलीन हो गया और कम बलिपुन के कारण और भी पुष्ट हो गये (नित्य नये-नये पाप बढ़ते गये) रही जाभ सो उसने भी आका नाम नहीं जपा सग प्राये वार्ये साथ ही बकती रही (इस प्रकार मन, वचन और कर्म तीनों स ही बेकार हो गया) बुर बुरे मार्गों पर बुरी चालें चलता रहा । (काम श्रेय में ही निपट रहा) भूलकर भी कभी कोई अच्छा काम नहीं बन पडा । बचपन में भी कभी खेलत समय मने अच्छा दाव नहीं खना ॥२॥

हैं किसी की देखा देखी या सत्सग से कभी कोई अच्छा काम बन गया तो उस जिनोरा पोन्ता हुआ कहता फिरा और पापों को छिपा लिया । राग द्वेष, क्रोध और इन्द्रियो के सहित मन का खूब पोषण किया । इहीं की भक्ति का, और इहा का भाव (सदा श्रिय-नालुपत ही रहा) । ॥३॥

मैंने बीत हुए का भव का और आनेवाले का अनुमान कर लिया ह, कि मन कभी कोई अच्छा काम नहीं किया कि तु ससार कह रहा है कि तुलसी रामजी का ह' और मुझ भी आप पर पूरा विश्वास और प्रेम ह । भव चाहे भूठ हो, चाहे सच, हे स्वामिन् ! म तो आपक ही आसर पडा हुआ हूँ ॥४॥

गठाय—आउ = प्रायु । पीन = पुष्ट । जीह = जीभ । आउ बाउ = प्राय वार्ये घट सट । दुरित = पाप । गोगन = इन्द्रियों का समूह । काउ = कर्म ।

विनय—(१) मेरी न कल्प लों ज्या ज्यों पारमार्थिक साधन साध साधकर छूटने व उपाय करता हूँ क्या या माया-माह में और भी अधिक उलभता जाता ह । इस प्रम से मैं कम अपनी करनी बना सकता हूँ ?

'ज्यों ज्यों सुरक्षण को चाहत, त्यों-त्यों उरझत जात ।'

२६२

कह्यो न परत, विनु वहे न रह्यो परत  
 बडो सुख कहत बडे सो, बलि, दीनता ।  
 प्रभु की बडाई बडी, आपनी छोटाई छोटी,  
 प्रभु की पुनीतता, आपनी पाप-धीनता ॥१॥  
 दुहै ओर समुद्धि सकुचि सहमत मन,  
 सनमुख होत सुनि स्वामि समीचीनता ।  
 नाथ-गुनगाथ गाये, हाथ जोरि माथ नाये,  
 नीचरु निवाजे प्रीति रीति की प्रवीनता ॥२॥  
 एही दरवार है गरव तें सरब हानि,  
 लाभ जोग छेम को गरीबी भिसकीनता ।  
 मोटो दसकध सो न, दूबरो विभीषन-सो,  
 वृद्धि परी रावरे की प्रेम-वराधीनता ॥३॥  
 यहा को सयानप अयानप सहस सम,  
 सूघो सतभाय कहै मिटति भलीनता ।  
 गीघ सिला, सबरी की सुधि सब दिन किये  
 होइगी न साइ सो सनेह हित-हीनता ॥४॥  
 सकल कामना देत नाम तेरो कामतरु  
 सुमिरत होत कलिमल - छल - छीनता ।  
 करुनानिधान । वरदान तुलसी चाहत,  
 सीतापति भक्ति सुरसरि नीर मीनता ॥५॥

भाषाय—हे नाथ ! कुछ कहा भी नहीं जाता और बिना कहे रहा भी नहीं जाता । आपकी बलयाँ लता हैं ! यद्यपि अपनी गरीबी बडा के प्रागे सुनाने में बडा धानद आता ह (क्याकि, यह भाशा रहती ह न, कि बडे लोग गरीबी दूर कर देंगे), तथापि वहाँ तो स्वामी का महान बडप्पन और कहीं मेरी अत्यन्त क्षुद्रता, कहीं स्वामी की पवित्रता और कहीं मेरे पाप की अधिक्ता ॥१॥

दीना और की इन बातों पर विचार करके मन सकाच के मारे सहम जाता ह (कुछ कहने का साहम नहीं पडता) । किन्तु स्वामी की मुन्दर साधुता (पवित्र पावनता, जन-वत्सलता आदि) का सुनकर यह मन फिर फिर सम्मुख जाता ह । हे नाथ ! जो धापवे गुणा और चरित्रा का गान करता और हाथ जोडकर प्रणाम करता ह उस नीच को भी आप, अपनी प्राति और चतुरता से, निहान कर देते ह ॥२॥

इस दरवार में गव करने से सबनाश हो जाता ह । यहाँ तो गरीबी और नजला

से ही योग छेम प्राप्त हो सकता है। रावण-नारीणा तो कोई महाप्रतापी नहीं था और विभीषण के समान कोई दुबल या दीन नहीं था। किंतु यहाँ आपकी प्रेमाधीनता ही स्पष्ट समझ में आती है। (अर्थात् शरणापन भक्त विभीषण को अपनाकर लका का राज्य दे दिया और रावण का सबनाश कर डाला) ॥३॥

आपके सामने जो चतुर धनता है वह हजारों मूर्खों के समान है। यहाँ तो सीधे सादे सच्चे भाव में अपना दोष स्वीकार कर लेने से ही मलिनता मिटती है। यदि तू नित्य जगत् अहल्या और शबरो की स्थिति को स्मरण किए रहगा तो स्वामी के प्रति तेरा प्रेम कभी कम न होगा। भाव यह कि उन बेचारों में अहंकार का लेशमात्र भी नहीं था इसीलिए भगवान् ने उन्हें अपना अनन्य भक्त और कृपापात्र बनाया ॥४॥

आपका नाम कपवृक्ष की तरह सारी कामनाएँ सफल कर देता है। उसका स्मरण करते ही कलियुग के कपट और पाप खोण हो जाते हैं। हे कल्याणनिधान! तुमसे यही वर चाहता है कि वह श्रीसोतारमण रामचंद्रजी की भक्ति भागीरथी के जल मंथनी की तरह सदा दूबा रहे ॥५॥

शब्दार्थ—पीनता = पुष्टि, मोटाई। सहमत = डर जाता है पिछड़ जाता है। छेम = (छेम) रक्षा। मिसकीनता = गरीबी नम्रता। भयानप = अज्ञान।

विशेष—(१) गरीबी — गरीबी पर एक कवि ने क्या सुंदर कहा है —

‘करी है गरीबी तो विभीषण ने राज पायो  
 रावन ने करी खुदी छोई खुबी जान की।  
 ध्रुव ने गरीबी के अटल पद राज पायो  
 केसो कस छेयो, सुधि न रही गुमान की ॥  
 झोपदी गरीबी करी नगन न होन पाई  
 हारे पवि कौरो देवि लीला भगवार की ॥  
 गरीबी और बदगी की चारों बेद स्तुति करें  
 कहै को गरीबी यह बीबी है जहान की ॥’

शोर भी—

ऊँचे ऊँचे सब घल नीचे चल न कोय।  
 जोय, जोउ नीचे घल ध्रुव तें ऊँचे होय ॥’

(२) मिसकीनता— मिसकीन शब्दों का रङ्ग है।

(३) साम जाग-छेम का — जो सारा अभिमान छोड़कर भगवान् की शरण में रहत हैं उन्हें भगवान् यह वचन दे चुक है —

अनयाचिन्तयतो माम ये जना पर्युपासते।  
 तेषां नित्यामिष्टानां योगयोग बहाम्यहम् ॥’

[ नीता

२६३

नाथ । नीके के जानिवी ठोक जन जीय की ।  
 रावरो भरोसा नाह के सुप्रेम नेम लियो  
 रुचिर रहनि रुचि मति, गति, तीय की ॥१॥  
 कुकृत सुकृत बस सबही सो सग पर्यो,  
 परखी पराई गति, आपने हूँ कीय की ।  
 मेरे भले को गोसाइ । पोच को, न सोच सक,  
 होहूँ किये वहाँ सोह साची सिय-पीय की ॥२॥  
 ग्यानहू गिरा के स्वामी बाहर भ्रन्तरजामी,  
 यहा क्यो दुरैगी वात मुख की श्री हीय की ?  
 तुलसी तिहारो तुमही पे तुलसी के हित,  
 राखि कहौ ही जो पे, हूँ ही माखी घीय की ॥३॥

भाष्य—हे नाथ ! आप अपने इस दास के मन की बात ठोक ठोक समझ लीजिए । मेरी बुद्धि एषी सुन्दर (पतिव्रता) स्त्री ने आपके विश्वास को अपना स्वामी मानकर उसी के साथ शुद्ध प्रीति करने का प्रण किया है ॥१॥

पाप और पुण्य के अधीन होकर मुझे सभी के साथ रहना पडा, इसमें मैं अपनी और पराई दाना की चाला की जाँच चुका हूँ । हे प्रभो ! मुझे अपनी भलाई या बुराई की कोई चिन्ता नहीं न कुछ डर है । क्योंकि मेरा तो सभी तरह से मेरे स्वामी ने भला कर दिया । यह मैं श्रीजानकी बल्लभजी की शपथ खाकर सच सच कह रहा हूँ ॥२॥

(यदि मैं बात बनाकर कहता तो वह चलनेवाली नहीं क्योंकि) आप जान और वाणी के अधिष्ठाता हैं । बाहर और भीतर दोनों की बात जाननेवाले हैं । आपके धामे मुँह की और हृदय की बात कस छिप सकती है ? तुलसी आपका हैं और आप ही उसका हित करनेवाले हैं । मैं कुछ कपट भरी बात कहता होऊँ, तो धी की मक्खी हो जाऊँ । (भाव, जस मक्खी भी मैं गिरकर तुरत मर जाती है, उसी प्रकार मेरा भी सवनाश हो जाय) ॥३॥

शब्दार्थ—नाह = नाथ, पति । कुकृत = कुकर्म, पाप । सुकृत = सत्कर्म, पुण्य । कोय की = किये हुए की । पोच = पोच । सोह = शपथ ।

विशेष—(१) गिरा' क्योंकि—

जापर कृपा करीहँ जन जानी । कवि उर-अजर नचावहि बानी ॥

(२) 'ग्यान'—इसी प्रकार—

सो जानहि जेहि बेदु जनार्ई ।'

२६४

मेरो कह्यो सुनि पुनि भावे ताहि करि सो ।  
 चारिहँ विलोचन विलोकु तू तिलोक महँ  
 सरो तिहँ काल बहु को है हितु हरि-सो ॥१॥ -

नये गये नेह अनुभये देह नेह वसि,  
 परमे प्रपची प्रेम परत उधरि सो ।  
 मुहद समाज दगावाजि ही को सौदा सत,  
 जब जाओ काज तज मिलै पायँ परि सा ॥२॥  
 त्रिबुध सयाने पहिचान कैधा नाहीं नीके,  
 देत एक गुन, लेत कोटिगुन भरि सो ।  
 करम धरम स्रम - फल रघुवर विनु,  
 राख को सो होम है, ऊमर केसो बरिसो ॥३॥  
 आदि अत बीच भलो भलो करे सप्रही को,  
 जाको जस लोक वेद रह्यो है बगरि सो ।  
 सीतापति सारिखो न साहिज साल निधान,  
 कैसे कल परे सठ ! वेढो सो बिसरि सो ॥४॥  
 जीव को जीवन प्रान, प्रान को परमहित  
 प्रीतम, पुनीतवृत्त नीचन निदरि सो ।  
 तुलसी ! तोको वृपालु जो कियो कोसलपालु,  
 चित्रकूट को चरित्र चेतु चित्त करि सो ॥५॥

गदाध—र मन ! एक दार तो मरो बात सुन न फिर जा अन्धा लग सो  
 करना । तू अपन चारा नत्रा (दो दार क धीर मा मुड्डिणी दो भीतर के) से देखकर  
 बता कि सीता लाको धीर तीना बाउ म वही भी को दूमरा भगवान् के समान तेरा  
 हित करनवाला न ? ॥१॥

तून शरीर रुपी गृह म रहकर नय-नय (सम्प्रथिमा के) प्रम का अनुभव किया ।  
 धीर उनक कपट भर प्रेम का भी परत किया । अत म सबके प्रम का भेद पुन गया ।  
 धीर, मित्रा का समाज क्या ह ? धोवराजा का लन न ह । जय जिसका काम अटकना  
 है तब वह परा पर गिरन लगना ह ( पर काम निजल जान पर उधर दखता भी  
 नहीं । ) ॥२॥

तून दवताया का मत्रा भीति पहाना या नहा ? व भी व न चनुर ह । देते तो  
 एक गुला ह पर न लज न करोड गुणा । अब रह कम धम तो मित्रा श्रीरामजी  
 (धाधार) क व भी परिश्रम मात्र क ह । उनका करना कराना एसा ह जत राग में  
 हवन कराना या ऊमर उमान पर पाना का बरमना ॥ ॥

जा आदि म मध्य में धीर अन्त म तन न धीर समा का गला कदाण करत  
 है तथा तिनका बीते-बीतना माक धीर व म द्विष्टक रही ह एव आशानका-अनम  
 रपुतापत्री क समान शाननिधान स्वामा दूमरा का, नहा ह । घर मूय ! तू उठ भुता  
 सा बैग ह । तिर मुन्ड को कत पट रहा ह ? ॥५॥

धर ! जा जीव का भा जावन, प्राणा का भी प्राण परमहित, प्रपत त्रिय धीर

नीचों को भी पवित्र धरनवाला ह, उसना तू गिरादर कर रहा ह 'तुनमा ! काशनेत्र  
कृपालु थारामजा ने तर लिए चित्रकूट म जा लोला रबी था, उमे त्रित्त में तू स्मरण  
कर ॥१॥

भावाय—प्रनुभवे=प्रनुभव किए । सीदा-सूत=नेन दन का पहचान । बरिशा  
=वर्षा । धगरि-सो=फला-गा । चतु =याद कर ।

विशेष—(१) 'नये नेह उधरि ग —नागरीदासजी ने क्या खूब चनाबनी  
दी ह —

'कहाँ ये सुत नाती हय, हायी ।

घले निसान यजाइ अकेले तहें कोउ सग न सायी ॥  
रहे बास दासी मुल जोवन कर मोडें सब लोग ।  
काल गह्यो सब सबहीं छांडयो, धरे रहे सत्र भोग ॥  
जहाँ-तहाँ निसिविन जियम यो भट्ट कहत विरहत्त ।  
सो सब बिसरि गये एक रट राप नाम कही सत्त' ॥  
बटन देत दृते नहि माखी चहुँ बिसि चँवर सवान ।  
लिये हाय में लटठा ताकी कूत्त मित्र कपाल ॥  
सौषण भोगी गात जारिक करि आये बन देरी ।  
चर आये तें भूलि गये सब धनि माया हरि तेरी ॥  
नागरीदास बिसरिये माहीं यह गति अनि जमुहानी ।  
काल यान की बरट निवारन भजि हरि जनम सवानी ॥'

(२) चित्रकूट को चरित्र —क्या ह कि एक दिन चित्रकूट में तुनसीवासजा  
को घोड़ों पर सवार दो प्रत्यंत सुन्दर राजकुमार जिन्दाई दिये । गोसाइजी कुछ ध्याना-  
वस्थित से थे । ध्यान म विधन पडन की आशका से उन्होंने अपने नेत्रों का बन्द कर  
भूमि की ओर कर लिया । कुछ दर बाद हनुमानजी ने दशन देकर पूछा, 'क्या श्रीराम-  
लक्ष्मण के दशन मिले या नहीं ? जो दा राजकुमार अभी घोड़ी पर सवार इतर से निकले  
हैं, वे ही तो थाराम और लक्ष्मण ह । गामाइजी पछताने लगे —

'लोचन रहे बरी होय ।

जान बूझ अकाज कीना गये भ्र म गोय ॥  
अविगत जु तेरी गनि न जानी, रह्यो जागत सोय ।  
सब छवि की अवधि में हैं निकसि गे गि होय ॥  
करम हीन में पाइ हीरा दिया पल म छाया ।  
'दास तुलसी राम बिछुरे, कहो कसी होय ॥

इसी प्रत्यक्ष दशन का आर गामाइजी का इन पर म सबैत जान पन्ता ह ।

तन सुचि मन रुचि मुख कहा जन हौं गिय पी को' ।

केहि अभाग जायो नही जो न होइ नाय सो नातो नेह न नीतो ॥१॥



जल चाहत पावक लहो, विप होत अमी को ।  
कलि युचाल सतनि वही सोइ सही, मोहि वछु फहम न तरनि तमी को ॥२॥

जानि अघ अजन कहै वन-बाधिनि घी को ।  
मुनि उपचार विकार को सुबिचार करौं जब-तब बुधि बल हरे ही को ॥३॥

प्रभु सो कहत सकुचत हौं, परो जनि फिरि पीको ।  
निकट वोनि, बलि घरजिये परिहरे दयाल अत्र तुलसिदास जड जीको ॥४॥

भाषाय—हे प्रभो ! म शरीर को पवित्र रखता हूँ मन में भी बचि हूँ और मुँ  
से भी कहता हूँ, कि म श्रीजानकीवल्लभ का सेवक हूँ किन्तु समझ में नहीं आता, कि  
किस दुर्भाग्य के कारण नाथ के माप भली भाँति मेरा सर्वोत्कृष्ट सम्बन्ध और प्रेम नहीं  
हो रहा (तन मन वचन से ध्याना बनाया चाहता हूँ और यथाशक्ति बनता भी हूँ, पर  
न जान किस दुर्भाग्य से विघ्न बाधाएँ बीच में आ जाती हैं, जो सारा किया कराया  
मिथी में मिला देती हैं) ॥१॥

चाहता था हूँ पानी पर मिलती हूँ घाग (शक्ति जन के बन्ने में अशक्ति का  
दाह मिलता है) । इसी प्रकार अमृत का विष बन जाता है (अमृत रूपी सत्कर्म दम के  
संपर्क में विपाक हो जाते हैं) । सता न कलियुग की जितनी कुछ कुटिल चाल कही है  
व सत्र ठीक ही है । म यह नहीं आता कि क्या तो मूय हूँ और क्या राति (म जान  
और गान को ठीक-ठीक नहीं पहचान पाता । मुझ तो सता का वचन ही सच जचता  
है) ॥२॥

कलियुग मुझ प्रथा समझकर वा की सिद्धियों के घी का अजन भोजन की सलाह  
देता है । (निहितो हो जान हाँ खा जायगी । घी उसके दूध का कहीं म मिलगा और  
कम-कम अजन बनगा ? तयार कानन म माया रूपी सिद्धिना रखती है । काम-वायना  
ही उपाय दूध का पूत है । कम अजन म क्या काई बचगा ? कलियुग उपचार क्या बता  
रहा है ? गणुधानक विष का प्रयोग ।) जब म यह विचार भरा उपचार मुता २ और  
इस पर विचार करता हूँ तब धार का बुद्धि बन नष्ट हो जाता है साक्ष्य छूट जाता है  
बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और बन पराक्रम शीघ्र हो जाता है ॥३॥

(बुद्धि बन नष्ट हो जान म भरे कलियुग का बनाया उपचार प्रच्छा सगता  
है । माया में पड़ जाता हूँ । बापी हाथ विषयापमोग करता हूँ । इगतिण प्राप्तने साथ  
निविघ्न नाता नहीं जुड़ पता और न धारके चरणों में प्रेम ही होता है) हे नाथ !  
ध्याय कृप कहता है पर करने मुँहाच जाता है कि कदा मरत बात शोकी न पड़ जाय ।  
इस म ध्याना बननी सता हूँ (बान यहा कहती है कि) पात बुनाहर इस (कलियुग  
को) राह शत्रिए विषय म्द तुवना मराने मराना जोवा का ध्यान छोड़ दे ॥४॥

भाषाय—अमी=अमृत । फहम=जान समझ । तमी=संपर्क, सत् । उ  
चार=प्राप्त ।

विषय—(१) म म में यह सिद्धाया गया है, कि भगवत्प्रति व उपाय करा  
ए न त्र व निरन्तर और भा गतिन हाता जाता है । प्रत्येक मत्कर्म में दुःखम  
परक म्द से वन म्दमन्वय म ध्यान रखता है । त्राय म्द पटना है कि इस गुण्य कर

रहे हैं किन्तु हमारे मुष्ट-वस्त्र का छिपे छिपे अभिमान भूषक कुतर-काट डालता है या कमरगी दोषों उसे छिन भिन्न कर देता है। छिप छिपे ये बुचालों कलियुग धन रहा है। धतएव जने-तन भगवन्वरणा की शरण में जाना ही श्रेयस्कर है।

ग्रह !

‘वस्यामल वृषदस्तु यगोऽघनापि गाय त्यघघ्नभृषयो दिग्भेदपट्टम ।

तनाकपाल धमुपाल किरीट जुष्ट पादाम्बुज रघुपते शरण प्रपद्ये ॥

[ श्रीमदभागवत

२६६

ज्यो-ज्यो निकट भयो चहों कृपातु त्यो त्या दूरि परयो हों ।

तुम चहुँजुग रम एव राम । होंहूँ रावरा, जदपि अघ अवनुननि भरयो हों ॥१॥

बीच पाइ नीच बीच ही छरनि छरयो ही ।

हों सुप्रन कुवरन कियो, नृप तें भित्तिरि करि सुमति ते कुमति करयो हों ॥२॥

अगनित गिरि वानन फिरयो, बिनु आगि जरयो ही ।

चित्रकूट गये ही लखी कलि की कुचाल सब अघ अपडरनि डरयो हों ॥३॥

माय नाइ नाथ सो वहाँ हाथ जोरि खरयो ही ।

चीन्हा चोर जिय मारिहै तुलसी सो क्या सुनि प्रभु सा गुदरि निवरयो ही ॥४॥

भावाथ—ह कृपानिधान ! ज्यो-ज्यो मैं आपके निकट घाना चाहता हूँ त्या-त्या दूर हाता जाना हूँ (प्रापका सान्निध्य पान के जितने भी उपाय करता हूँ वे माया मोह के मसग से एने बाधक हा जाने हूँ कि मैं लक्षण प्रतिक्षण पीछे रह जाना हूँ) हे रामजी ! आप चारा युगों में सदा एक मे हूँ और मैं भी आपका रहा प्राया हूँ, यद्यपि मैं पापा और दोषों में भरा हूँ ॥१॥

आपमें पयक रहने का मौका पाकर इस नीच कलियुग ने मुझे बीच हा में छलों से छिन लिया (या हा मैं जीवत्व प्राप्त कर अविद्यावश भगवान से विमुक्त हुआ इसी दुष्ट कलि ने अपना इद्रजाल फनाकर मुझे भूल भुलया में डाल दिया) । मैं सुवर्ण था पर इमने कुवण कर दिया सारे स रंगों में परिणत कर दिया । राजा से रक बना डाला, और पानी से अनानी कर डाला । (पहले मैं शुद्ध सच्चिदानन्द का अशक्तरूप था, पर कलि ने इन्द्रियपरायण करके दो कौड़ी का कर डाला ) ॥२॥

तब से मैं (अनेक योनियों में) अगणित पहाड़ा और जंगलों में भटकता फिरा और वहाँ बिना ही आप के जलता रहा । परन्तु जब मैं चित्रकूट गया, तब इस कलि की सारी बुचालों तो समझ गया तो भी अब मैं अपने ही डर से डर रहा हूँ ॥३॥

मैं हाथ जोड़कर प्रभु के सम्मुख खड़ा मस्तक नवाकर कह रहा हूँ कि पहचाना हुआ चोर जीता नहीं छोड़ता मार ही डालता है (कलियुग पहचाना हुआ चोर है, वह मौके की ताक में बठा है) इस बात की सुनकर तुलसी अपने स्वामी से विनय प्रायना कर चुका (अब आगे जो आपकी मरजी हो सो उपाय कीजिए) ॥४॥

शब्दाथ—छरनि छरयो हों = छलो से छला गया हूँ । अपन्नि = अपने

मरगा, और हानि-लाभ और सुख दुःख सबका एक समान देखेगा भलाई बुराई में समभाव रखेगा और कलिकाल का कुचाला का छाड़ देगा, ॥३॥

जब मेरा मन प्रभु का गुणानुवाद सुनकर पुलकित होने लगेगा और नेत्रों से प्रेमाश्रुधारा बहने लगेगी, तभी तुलसीदास का यह विश्वास होगा, कि अब वह श्रीरामजी का दास हो गया। तब उस अनन्य प्रेम का दायकर ध्यान उस हृदय में उमड़कर फूला नहीं समायेगा ॥४॥

गव्दाय—फिर परिह—फिर जायगा। दरिह—बहायगा।

विनये—(१) 'तुम परिह—जा जीव भगवान् की अनन्य भक्ति को प्राप्त कर लता है, उसकी मनादशा प्रलौकिक हो जाती है उसका सभी कुप्य बदल जाता है। न वह तन रहता है न वह भान। मुख पर उसके दिव्य सौंदर्य झनकने लगता है। वाणी अमृतमयी हो जाती है। आँसों में प्रेमानाम की लहर उठती दिखाई देती है। विषया की धार से मन एकत्र फिर जाता है। वह दशा विलक्षण और भगवत्पर है।

(२) चातक दरिह—चातक का प्रेमानयता पर गोताश्री की प्रत्येक प्रकृति भावगुण उत्तियाँ मिलती है, जग—

‘डोलत विपुल बिहग बन पिपन पीलरनि मारि ।  
गुगल घवल चातक गवल, सुहो भुवन वसचारि ॥  
घष्या बधिक परयो पुष्यजल उत्तटि उठाई खोंच ।  
तुलसी धानक प्रेम पट मरतहु सगी न खोंच ॥’

(३) प्रभु गुन दरिह—नागरीदासजी ने प्रेम त्याग का क्या ही समीच विन सीपा है।

बहु दुगवाई हासनी मोबा विरह अपार ?  
राम रोप उठि दोरिहो बहि-बहि जित मुकुवारि ॥  
ता गिन हा तें दूटिहें लान-वान अह सन ।  
छीन बेह जोरन बगन, किरिहो हिये न खेन ॥  
नन द्रव जलधार बह टिन टिन सत उसात ।  
रनि भयेरी दानिहो पावन जुगन उपात ॥  
हरन-देरन होतिहो बहि-बहि स्याम मुमान ।  
दिरन गिरत बन सघन में योही छुटिहें प्रात ॥

राम ! कबसे प्रिय नागरी, तेरा नीर मीन का ?  
तुम नीरन ज्वाजीव का मति ज्वाफनि का त्रिज्वाधन लाम-नीन को ॥१॥  
ज्वा मुनाय प्रिय मति नागरी तागर नवीन का ।  
रसा मेर मा लानन बरिद रगनासर । पावन प्रेम पात का ॥२॥  
मनसा का दाता कसे मुक्ति प्रभु प्रसीत का ।  
मुक्तिदात की मानना बनि ताजे स्वानधि । नीचे लान दीन को ॥३॥

भावाय—हे श्रीरामजी ! क्या कभी मुझे एम प्यारे लगेंगे, जैसे मछली को जल प्यारा लगता है, जीव को सुखमय जीवन प्यारा लगता है अथवा मणि साँप का प्रिय जान पड़ता है या अत्यंत कजूग को घन ? ॥१॥

अथवा, जैसे विसो नवयुवक नायक को स्वभाव से ही नवयुवती नायिका प्यारी लगती है, उसी प्रकार, हे करुणालय ! मेरे मन में अपने चरणारवि श में पवित्र श्री मनय प्रेम की ही एकमात्र उत्कृष्टा उत्पन्न करदें ॥२॥

वेद कहते हैं कि प्रभु मनोवाङ्मन्य पन देनेवाले हैं, और बड़ ही चतुर है (वे मन की बान तुरन्त ताड़ लेते हैं कहने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती)। हे दयानिधे ! मैं आपकी बलियाँ लेता हूँ, इस दीन तुलसीदास को भी उसकी मनचाही वस्तु दे दीजिए ॥३॥

शब्दाय—पनि=साँप । सुभाय=स्वभाव से ही । पीन=पुष्ट, मोटा । भावतो =मनचाहा ।

विशेष—(१) 'जमे नीर मोन को —मछली को जल के साथ कभी मनय प्रीति है, इसे बताने की आवश्यकता नहीं । और पशु पत्नी तो जब के सुखते ही घ यत्र चले जाते हैं, पर मछलियाँ उसीके साथ सूखकर प्राण दे देती हैं । कविवर रहीम ने क्या कहा है —

‘सर सूखे, पछी उड, और सरनि समाहि ।

दीन मोन विन पख के, कहु रहीम कहै जाहि ॥

गोसाइजी ने मोन की अनयता का दाहावली में बखान इस प्रकार किया है —

देउ आपने हाथ जल मोनहि मातुर घोरि ।

तुलसी जिय जा वारि बिनु तौ तु देहि कबि खोरि ॥

मकर उरग दादुर फमठ जल जीवन जल गेह ।

‘तुलसी’ एक मोन को है साचिलो सनेह ॥

(२) इस पत्र का निचोड़ गोसाइजी ने इस दोहे में भर दिया है —

‘कामिहि नारि पियारि जिमि लोभी के जिमि दाम ।

तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहुँ मोहि राम ॥’

२७०

बचहुँ कृपा करि रघुबीर । मोहैं बितैहो ।

भलो बुरा जन आपनो जिय जानि दयानिधि । अलगुन अमित बितैहो ॥१॥

जनम जनम हँ मन जित्यो, अब मोहिं जितैहो ।

हा सनाथ हूँहो सही, तुमहैं अनाथपति जो लघुतहि न भितैहो ॥२॥

विनय करी अपभयहु तैं तुम्ह परम हितैहो ।

तुलसिदास कासा कहै तुमही सब मेरे प्रभु-गुरु मातु पितैहो ॥३॥

भावाय—हे रघुबीर ! मेरी ओर भी कभी कृपाकर आप देखेंगे ? हे दय निधान ! भला या बुरा जो कुछ भी हूँ आपका सबक हूँ, अपने मन में ऐसा समझूँ

क्या मेरे अपार दोषा को न ट कर दें ? ॥१॥

अनेक जन्मा स मुझे यह मेरा मन जीतता क्या प्राया ह (मुझे अपने वश में चलाता प्राया ह), अबकी बार क्या आप मुझे भी जितायेंगे ? (क्या वह आपकी कृपा से मेरे वश में होगा ?) तब ता स सचमुच ही सनाय हा ही जाऊंगा । पर यदि आप भा मेरी क्षुद्रता से नहीं डरते ता प्राय भी 'अनाय प्रति पुकार जाने लगेंगे (भाव, मरी क्षुद्रता पर ध्यान न देकर मुझ अगोकार कर नीजिए और 'अनायपति' यह उपाधि भी धारण कर ले) ॥२॥

मैं अपने हा डर स इस प्रकार आपसे विनय कर रहा हूँ । आप तो मेरे परमहित हूँ । यह तुलसीदास अपना राता और किसके आगे राने जाय ? (ससार में कोई सुनने वाला भी ता नहीं ह सब हँसी ही उडानेवाले ह) । भर तो स्वामी गुरु, माता, पिता आदि सब आप ही ह ॥३॥

नञ्चाय—जित्यो = जीता गया । भितहो = डरोगे । अपभयहूँ तें = अपने हो भय से ।

२७१

जैसो ही तैसो राम । रावरो जन जानि परिहरिये ।

कृपासिधु कोसलधनी । सरनागत-पालक, डरनि आपनी डरिये ॥१॥

हा तो विगरायल और को विगरो न विगरिये ।

तुम सुधारि आये सदा सजकी सबही विधि, अब मेरियो सुधरिये ॥२॥

जग हँसिहै मेरे सग्रहे कत इहि डर डरिये ।

कपि, केवट कीहे सखा जेहि सील, सरलचित्त, तेहि सुभाउ अनुसरिये ॥३॥

अपराधी तउ आपनी तुलसी न बिसरिये ।

दूटियो वाह गरे परे पूटेहूँ त्रिलाचन पीर होत हित करिये ॥४॥

भाषाय—हे रघुनाथजी ! मैं (अच्छा बुरा) बसा भी हूँ पर हू, तो आपका दास हूँ । इसलिए मुझे त्यागिए नहीं । हे कोशलेंद्र ! आप कृपा के समुद्र और शरण में आये हुए जीवा को रक्षा करनेवाले ह । अपनी इस शरणागतवत्सलता की रीति पर ही बनिए ॥१॥

मैं तो घोरों के हाथ स बिगाडा हुआ पहल स ही हूँ (माया मोह मुझे पहले ही बवाद कर चुक है इन्द्रिया और मन ने मेरा सबनाश कर ही डाला ह), अब आप इस बिगड हुए का घोर न बिगाडिए, आप ता सदा स ही सबकी करनी सब तरह से सुधारते आये ह सो अब मरी भी सुधार दाजिए ॥२॥

क्या आप हम डर स डर रहे ? कि मुझे अगाकार करने से ससार आपका उपहान परण (हि, क्या कहना इस 'याम पर' बही तुनसो मरीगे पापिया का भी अपनेना उचित था ? पर आप हम कर स डरें नही, क्योंकि आपने तिए पापियों का अपनेना काई नई दाउ उहा) मानन जिस शान और सरल भाव स बंदरा और केवट का अपना निव बनाया था उमी स्वभाव स मुझे भा अपना लीजिए ॥३॥

यद्यपि मैं अपराधी हूँ, तथापि हूँ तो आपका ही। तुलसी को आप न भुलाइए। अपना दूटा हुआ भी हाथ गने बंध जाता ह (कोई उमे काटकर फेंक नहीं देता) और फूटी हुई शीतल में भी जय पीडा होती ह तब उसका भी इलाज किया जाता ह (इसी प्रकार मैं यद्यपि आपके किसी काम का नहीं हूँ, पर हूँ तो आपका ही अंग। अतएव उस मा हा न छोड़ दजिए) ॥१॥

गदाय—हरिनि—वृषा करने की प्रकृति। विगरायल—विगडा हुआ। सग्रहे—सग्रह करने से, अगीकार करने से। गरे परै—गने बंध जाती ह।

विनय—(१) 'जसी परिहरिय—भगवच्चरणारवि दो स एक क्षण के लिए भी पयक होना अरुह्य हो जाता ह। जमे मछली पलमात्र भी जल से अलग नहीं होना चाहती वमे ही भक्त भगवान से अलग होने में दाख्य दुख का अनुभव करता ह। मुनिए, एक अज्ञाना क्या कह रही ह —

'गिरि से गिरावो, कारे नाग से उसावो हाहा  
प्रोति ना छुडावो प्रानप्यारे नदलाल सों।'

कविकर विहारा भी यही प्रार्थना करते ह —

हरि कीजत तुम सो यहै, विनती बार हजार।  
जेहि-तेहि भाँति डरयो रहों परयो रहो दरवार ॥'

२७२

तुम जनि मन मैली करो, लोचन जनि फेरो।  
सुनहु राम। विनु रावरे लोकहु परलोकहु काउ न कहूँ हितु मेरो ॥१॥  
अगुन अलायक आलसी जानि अघम अनेरो।  
स्वारथ के साथिह तज्यो तिजराको सो टोटक, श्रीचट उलटि न हेरो ॥२॥  
भगतिहीन, वेद बाहिरो लखि कलिमल घेरो।  
देवन हू, देव। परिहरयो, अयाव न तिनको, हौँ अपराधी सब केरो ॥३॥  
नाम की ओट लै पेट भरत हौ पै कहावत चेरो।  
जगत विदित बात हूँ परी, समुझिये धो अपने, लोक कि वेद बडेरो ॥४॥  
हूँ है जब तब तुम्हहि तैं तुलसी की भलेरो।  
दिन दिनहुँ देव। विगरिहै, बलि जाउँ, विलव बिये, अपनाइये सवेरो ॥५॥

भावाय—हे श्रीरामजा। आप मेरे लिए मन को मला न करें, मेरी ओर से अपनी नजर न फेंकें। हे नाथ। इस लोक में और परलोक में भी आपको छाडकर मेरा क्याण करनेवाजा कही कोई दूसरा नहा ॥१॥

स्वार्थी मित्रा ने मुझे मूल, नागायक, आनसा नीच और निक्कमा समझकर, तिजारी के टोटके की तरह छोड़ दिया, और फिर भूलकर भी पलटकर मेरी ओर नहीं देला। (एसा छोटा वि फिर कभी मेरी याद तक नहा की।) ॥२॥

मुझे भक्तिहीन, वेदोक्त माग से बहिष्कृत एव कनिका के पापा से घिरा हुआ देखकर, हे नाथ। दजनाओं ने भी छोड़ दिया (यदि मैं आपका भक्त होता, बदिब,

भाग पर चलता होता और कलि के पापा स विमुनन हाता तो देखा मेरी बलयाँ लते, खुशामद करते, पर म बैसा नही हूँ। इसलिए उन लोग ने भा मुझे त्याग दिया) यह उनका काई अयाय भी नही ह क्याकि मैं सभी का अपराधी हूँ ॥३॥

यद्यपि म आपके नाम की आट लबर पेट भरता हूँ, इतने पर भी लोग मुझे 'रामदास कहते ह। यह वान जगत्प्रसिद्ध हा गई ह। आप विचार तो कोजिए, कि ससार बडा ह या येद ? (बंदो को देखा जाय तो म आपका सेवक नही हूँ किन्तु ससार जब मुझे आपका सेवक कहता ह, तो काई हजार में एक मिलेगा पर लोक की रीति प्राय सभी मानते है। जब लोक म यह दिडोरा पिट चुका ह कि—तुलसी रामदास ह तब आपकी यहो सिद्ध करना होगा झूठो बात भी सब साबित करनी पडगी) ॥४॥

तुलसी का भला चाहे जब हो और जसे हो, पर हीगा आपके ही हाय से। (जब आपको भला करता ही ह, तो शीघ्र कर देना अच्छा ह।) म आपकी बलयाँ लेता हूँ यदि आप देर करेंगे तो यह गरीब दिन पर दिन बिगडता ही जायगा। (-प्राधि का उच्चार आरम्भ में ही कर लेना अच्छा ह पीछे बडा कष्ट उठाना पडता ह) मतएव मुझे शीघ्र ही अपना लोजिए ॥५॥

नन्दाय—अगुन=मूर्ख। मलायक=मालायक अयोग्य। अनेरो=बकाम। तिजरा=तिजारी। टोटक=टोटका। भलेरो=भला कल्याण। सवेरो=जल्द ही।

विनय—(१) तिजरा को-सो टोटक—जिसे तिजारी प्यर आता ह उमके ऊपर मिट्टी के कूडे में आटे के सात दोपक जलाकर और उसम खीर हल्दी सेंदुर और रफेद पत्र रखकर आधी रात क समय लोग उतारत ह और उस कूड को चौराहे पर रखकर चल घाते हैं। उसकी तरफ नोटकर देखना भी नही होना ह। कहते है यदि उस टोटक की आर रखनवाला देखले, तो उमे तिजारी धाने लगता है। कुछ हैर-फेर के साथ भारत क प्राय कई प्रान्तों में एमे ऐसे टोटके प्रचलित ह।

२७३

तुम तजि हों कामो, कहीं और का हितु मेरे ?  
दीनप्रधु ! सेवन, सखा, आरत अनाय पर सहज छाह बेहि वेरे ॥१॥

बहुत पतित भवनिधि तरे बिनु तरि त्रिनु वेरे ।  
कृपा कोप-सतिभायहैं घोखेहैं निरछहैं राम । तिहारेहि हेरे ॥२॥  
जो चितवनि सीधी लगे, चितइये सवेरे ।

तुलसिदास अपनाइय, कीजे न डील, अत्र जीवन अवधि अति नेरे ॥३॥

भाषाय—हे नाम ! आपका छोडकर मैं और किसम कहूँ ? मेरा सच्चा हितु और कौन ह ? (जहाँ-उहाँ स्वार्थों ही मित्रों। व दूसरों का मम कसे समझेंगे ? मेरा भला ठा धाने हो हागा। इसीसे मैं बार बार आपन ही कहता हूँ) हे दीनप्रधु ! सेवन पर मित्र पर, दुनिया पर और अनाय पर स्वभाव म ही किसकी क्या ह, निन्धारण और निन्धाम स्नेह और कौन करता ह ? ॥१॥

बहुत मारे पापा इस ससार सागर का बिना ही नाव और बिना ही बेडे के पार

कर गये । हे रामजी ! उनको और कृपा से या क्रोध से, सच्चे भाव से या तिरछी दृष्टि से ही घापने देख भर लिया था ॥२॥

इन दृष्टियाँ में स जो भी घापका अच्छी लगे उसीसे देव बोजिए (चाहे कृपा दृष्टि से, चाहे काप दृष्टि से अथवा प्रेम दृष्टि से या तिरछी दृष्टि से जो घापको पनाद हो, उससे मुझे दखिए । मेरी बात तो किसी भी दृष्टि से देव देने मात्र से बन जायगी) । तुलसीदास को अब धपना ही लोजिए । दर न बोजिए, क्याकि अब जीवन का अरत बहुत समीप आ गया ह । (जीवन-ज्योति टिमटिमा रही ह, न जाने किस क्षण बुझ जाय) ॥३॥

भावाय—छाह = कृपा । तरि=नीका । वर = वेदा । सौधी = भली ।

विनेप—'कृपा काप हेर —

कृपा-दृष्टि स ग्रहल्या जटायु आदि को मुक्त किया कोप-दृष्टि से, रावण, कुम्भकण आदि को मुक्त किया । सतिभाव अथवा सत्यभाव से निराद सुग्रीव विभीषण आदि को अपनाया और घाये की दृष्टि से यवन आदि का अगीकार कर लिया ।

(२) 'चित्तद्वय—नरे — न जाने किम घने क्या नो जाय, इग्रिनए हे नाय । मुझे शीघ्र ही शरण में लाजिए । कबोर साहज कहन हूँ —

'साथी हमरे चरि गये हम नी आयापहार ।

बागद में बाकी रही तानें लागे वार ॥

'कबिरा रसरी पाव में, कह सोन मुख-पैत ।

स्यास नगाडा कूच का बाजत है दिन रन ॥'

भारते-दु हरिश्चन्द्र भा जीवन अवधि समाप जानकर अपने प्राणनाथ प्रियतम कृष्ण से अत्यन्त प्रेमाधीर हाकर कह रहे ह —

'याकी गति अगन की मति परि गई मद,

सब झानरी सो ह्व क देह लागी पिपरान ।

बावरी सो बुद्धि भई हसी काहू छोन लई

मुख क समाज जित तित लागे दूर जान ॥

हरीचद रावरे बिरह जग दुखमयो

भयो कछु और होनहार लागे दिवराज ।

नैन बुम्हिनान लागे, बनहु अथान लागे,

आओ प्राननाथ ! अब प्रान लागे मुग्धान ॥

२७४

जाउं कहा, ठोर है कहा देव । दुखित गीन की !

को कृपालु स्वामी सारिगो राखै सरनागत सत्र अंग प्रत प्रिगिन को ॥१॥

गनिहि गुनिहि माहित लहै, सेवा ममो भाग गा ।

अधन, अगुन आलसिन को पालिवा फनि आया गृतायक नवीन को ॥२॥

मुख के कहा कहीं प्रिदित है जो की प्रतु प्रीन का ।

तिहूँ काल, तिहूँ सोम म एक टक रासरी तुजगी म मन मलीन को



भावाय—हे दत्त ! कहीं जाऊँ ? मुझ दुगो घोर दारुण व लिए धन्य कर्तुं टोका टिकता है। धान्य समाप्त दयालु दयाला घोर कर्तुं निराला, जो सब मायों में सब भाँति व-श्याय गवक का धन्य ही शरण म धान्य द ? ॥१॥

सगार म जो दुगुण दयाला वि (१) म सब ग्या गवक का धन्यता है, जो धनी हा दुगो हा घोर भीमोति गवक कर्ता जाऊँ हा) म न गुरोम निपता, दुगो घोर काहिता का पाता हा) निराला उगाहा श्रीरपुतापाता का हा दयाला दया है ॥२॥

मह म क्या कहूँ ! प्रमा ! धान्य ता (वर्ष धनुर । धान्यता भी गारा करनी प्रबट है । गुणघो सराग मनिन मनकाम व लिए तागो सारा (दया पुनिनी घोर पाताम) तथा हीता बापा म सब दयाला ही महाग है ॥३॥

भावाय—गतिहि = (गती) यो वा । मयापाय = धन ॥

विनोद—(१) जाऊ कहीं—मकनवर हरिराम ध्याम भी सगार व प्रपचा से उरपर कहन ह —

जए कीन के अय द्वार ।

जो त्रिप होय भीति काहू व दुल सतिप सो मार ॥  
 घर घर राजस तामस बाधो घन जीवन की मार ।  
 काम विमल ह्य दान देत नीवन की होत उजार ॥  
 सायु न सुखत पात न सुखत, यह कलि के खीहर ।  
 ध्यासदास वत भाजि उवरिये, परिवे मरिती मार ॥

(२) गतिहि —गना यह घरवा भापा का शब्द ह ।

(२) विनोद ह जोकी—आपने क्या दिया ह ? काई अच्छी करनी की हा तो आपसे कहूँ भी ! धन ता एम एम नारकीय कम किए ह कि बहुत लज्जा मारती ह । म अपनी बात क्या मुह लेकर कहूँ ? धान्य स्वय ही चतुर ह मन की बात स्वय हा जान जायेंगे ।

२७५ :

द्वार द्वार दीनता कही काहि रद परि पाहूँ ।  
 हे दयालु दुनी दस दिसा दुख-दोष इतन छम  
 क्रिया न सभापन काहू ॥१॥  
 तनु जयो\* कुटिल कीट ज्या तज्यो मातु पिता हूँ ।  
 काह को रोप, दोष काहि धौ मेरे ही  
 अभाग मौसो नकुचत छुइ सब छाहूँ ॥२॥  
 दुग्धित दखि सतन कह्यो, सोचै जनि मन माहूँ ।  
 तामे पसु पावर पातकी पग्हिरे न,  
 सरन गये रघुवर और नियाहूँ ॥३॥

\* पाठान्तर 'जगतेउ तनु तनेउ' ।

तुलसी तिहारो भये भयो सुखी प्रीत प्रतीति विना है ।

नाक की महिमा, सील नाथ को,  
मेरो भलो जिलोकि अदत्त सकुचाहूँ, सिंहाहूँ ॥४॥

भावाथ—हे नाथ ! म द्वार द्वार पर दौत निकालकर और पैर पड पडकर अपनी दोनता कहना फिरा । (यह बात नही, कि ससार में कोई मेरी गरीबी दूर करने योग्य नही ह) ससार में ऐसे ऐसे दयावन्त मौजूद है, जा दशा दिशाया के टुपों और दोपा का नाश करने में समथ ह, किन्तु मुझम तो किसी ने बात भी नही की (माँख उठाकर भी मेरी और न दखा ) ॥१॥

माता पिता ने मुझे ऐसा त्याग दिया, जमे कुटिल कौडा अथात सपिणो अपने ही शरीर से जने हुए (बच्चे) को त्याग देती ह । किसलिए तब क्रोध करूँ, और किसे दाप लगाऊँ ? यह सब मेरे ही दुर्भाग्य से हुआ । आज लोग मेरी छाया तक छूने में सकोच करते हैं ॥२॥

(मेरी यह दुदशा हाने पर) सता ने मुझे खबर कहा 'तू अपने मन में चिन्ता न कर । तेर समान भयम और पापी पशु पक्षियों तक का शरण में जान पर शौरधुनाथ-जी ने अत तक निर्वाह किया ह । (भाव तू भी उन्ही को शरण में जा, वे तेरो करनी सुधार देंगे और अत तक तुझे निभाएँगे) ॥३॥

मै (तुलसी) आपका हा गया और जब से आपका हुमा हूँ, तब से म सुख में हूँ मद्यपि मेरी प्रीति और प्रतीति नही ह (जो कही प्रीति प्रताति हो जाय तब तो भ्रानन्द का कोई सीमा ही न रहे) हे नाथ ! आपके नाम की महिमा तथा सील से मेरा जो भला हुमा उम दखकर म लजित हाता हूँ (इसलिए कि मने कृपा-पात्र होने योग्य तो एक भी काम नही किया फिर भा मुझ कृतघ्न पर प्रभु को ऐसी कृपा ह) और प्रशंसा करता हूँ (कि धय पतित-मानन प्रभा ! जिस तुलसी का कहीं ठौर डिकाना भी न था, उसे भी आपने कृताय कर दिया ।) ॥४॥

गन्दाय=काढि रद=दौत निकालकर दोन बनकर । पा=पैर । दुनी=दुनिया । छम= (चम) समथ । ओर=अत तक । सिंहाहूँ=सराहना करता हूँ ।

विनेय—(१) तनु जया—भा बजनाय जा ने 'त्वचा तजत' और मट्टजी ने 'तनु तजेउ पाठ मानर यह अथ किया, कि जने साँप अपनी कँचुन को छोड देता है । बजनायजी ने ता 'त्वचा लिखकर स्पष्ट ही कर लिया ह । मट्टजी तनु का अथ 'काँची कर रहे ह । नागरी प्रचारिणी सभा की प्रति क प्रनुसार हमने तनु जया पाठ शुद्ध माना है । सपिणो अपने बच्चे को जनते ही छोड देती ह । प्रचार ता यह ह कि सपिणो उन्हें जमन हा म्वा जानी है जा भागकर निकल जाते ह वें ही बचत्र ह ।

श्रीत्वनारायण द्विधरी ने दूसरा यह अथ किया ह— माता-पिता न मुझे अपने शरार म इम प्रकार पदा किया जम दुष्ट कौडा अर्थात् माना मैं दुष्ट कौडा था कि माता पिता न अपने शरीर म पत्ता करके मुझे छाड लिया, स्वय सिधार गये । ' यह भी समीचीन अथ हा सकता ह ।

(२) काहे अभाग—सच्चे बचपव न ता किसा का

न शोष देत ह । वैष्णवा के लक्षण भवनवर भगवतरनिकजा न इम प्रकार बहे ह—

‘हिता, लोभ, दम छल त्याग, विष-नम देत माया ।  
हरि की भजन, साधु की सेवा, सबभूत पर दाया ॥  
सहनशील आसप उदार अति धीरज सहित विवेकी ।  
सत्य बचन सबकी सुलबायक गहि अनप द्रत षकी ॥

(३) ‘दुखित बह्या’—व्याकि स्वभाव स हा सत दयालु होत ह—

कोमल बानी सत की खव अपतमय आइ ।  
‘तुलसी ताहि कठोर मन, मुनत में होइ जाइ ॥  
जड जीवन को कर सचेता । जगमाहीं विचरत एहि हेता ॥’

[ वैराग्य-सदोपिनी

२७६

कहा न कियो, कहा न गयो, सीस काहि न नायो ?

राम । रावरे दिन भये जन जनमि जनमि,

जग दुख दसहैं दिसि पायो ॥१॥

श्राम विवस खास दास हूँ नीच प्रभुनि जनाया ।

हाहा करि दोनता कही द्वार-द्वार वार वार

परी न छार मुह बायो ॥२॥

असन बसन विनु बावरो जहँ तहँ उठि धायो ।

महिमा मान प्रिय प्रान ते तजि खोनि खलनि,

आगे खिनु खिनु पेट खलायो ॥३॥

नाथ । हाथ कहू नाहि लग्यो लालच ललचायो ।

साच कही, नाच कौन सा जा न मोहि लोभ,

लघु हौं निरलज्ज नचायो ॥४॥

सखा नयन-मन मग लगे, सब थलपति ताया ।

मूड मारि, हिय हारिके हित हरि,

हहरि अब चरन सरन तकि आयो ॥५॥

दसरथ के समरथ तुही, निभुवन जसु गायो ।

तुलसी नमत अवलोकिये, बलि,

बांह बोल ते विरदावली बुलायो ॥६॥

भावाय—मने क्या करन का छाडा ? कौन छी जगह थी जो जाने का बची ?

धीर किसके आगे सिर नही झुगाया ? (जितने भी उपाय हा सकत ह वे सभी कर चुका हूँ ।) किंतु हे श्रीरामजा ! जब तक आपका सबक नही हुमा तब तक समार में जम ल-लैकर मने दक्षा दिशाभा में कवन दुख ही पाया (सुख किस कहत ह यह आज तक नही जाना) ॥१॥

आपका खास दास होकर भी सुख पाने की आशा से अपने आत्मा कुछ प्रभुआ के आगे जाता फिरा, (यद्यपि जन्म से ही मैं आपका दास हूँ, तत्काल जीव परमात्मा का अशस्वरूप है किन्तु भूठा आशा को लेकर कुछ मनुष्या को अपना स्वामी मान उनसे अपनी रामकहानी सुनाता फिरा ।) द्वार-द्वार पर अपनी गरीबी सुनायी, पर सब यथ गया ॥२॥

भोजन और वस्त्र के बिना पागल के जसा जहाँ-तहाँ दौड़ता फिरा । प्राणा से भी प्यारी मानप्रतिष्ठा का भी त्यागकर दुष्टों के आगे क्षण क्षण पर यह पेट खोल-खान-कर दिव्याया ॥३॥

हे प्रभो ! लोभ के मारे बहुत लालच की पर हाथ कुछ भी न लगा । सब कहता हूँ ऐसा कौन सा नाच बबा ह जो कुछ लाभ ने मुझे निलज्ज को न नचाया हो ? (जितने पेट भरने के स्वाग रचे और पालण्ड किए उन्हें कहा तक गिनाऊँ !) ॥४॥

काना, आँखों और मन का अपने अपने माग पर लगाया पर सभी जगह गिरावट ही होती गई । (सब राजे महाराजे भी जाँच लिये) जब कही किसी के द्वारा सुख-शान्ति न मिली, (तब) सर पीटकर निराश हो गया । अब धवराकर आपके चरणा की शरण तककर आया हूँ, क्याकि यहाँ पर मुझे अपना हिन खिलाई देता ह । (मुझे निश्चय हो गया ह कि आपकी शरण में जाने से ही मेरी जन्म जन्मांतर की दरिद्रता दूर हो जायगी) ॥५॥

हे दशरथे ! आपही समय ह । त्रिनोक में आपका ही मश गाया जाता है । देखिए, तुलसी आपके चरणा में विनत हो रहा ह । मैं आपकी बलया लेता हूँ । आपकी विरदावली न ही मुझे बाँह और (अभय) वचन कर बुनाया ह (यह न कहिएगा कि मैं बिना बुलाये ही चला आया अतएव उपेक्षणीय हूँ । यदि दया ह, तो आपकी विर दावली क्याकि वही मुझे यहाँ तक खीचकर लाई ह ।) ॥६॥

गदाय—छार—राव धून । असन = भाजन । सिनु बिनु = क्षण गण ।

विनोप—(१) कहा न कियो दिसि पाया—भारते दु हरिश्चन्द्र ने इस पर क्या ही मम भरा पद कहा ह —

तुम विन प्यारे, कहूँ सुख नाहीं ।

भटक्यो बहुत स्वाद रस-लपट ठोर ठोर जग माहीं ॥

प्रयम घाव करि बहुत पियारे, जाइ जहाँ ललचाने ।

तहें तें फिरि ऐसो जिय उचटत आवत उलटि ठिकाने ॥

जित देखौ तित स्वारय हो की निरस पुरानी बातें ।

अतिहि मनिन व्यवहार देखिक, घिन आवन है तातें ॥

जानत भते तुम्हारे बिनु सब, बादिहि बीतत सातें ।

हरीचंद नहि दूटति तउ यह कठिन मोह की फातें ॥

(२) 'सब धलपति ताया —थी ब्रजनाथजी ने 'सब धन पतिताया पाठ मानकर

यह अर्थ किया ह 'विपयनवश सब धन पतियाया सब स्यान पर अधिक पतित होत गयो ।

यही पाठ माते हुए श्रीरामेश्वर भट्ट 'ओ निगा है कि 'सब जगह पर  
वहिले यह भावमिया को लाया जाना ।

२७७

राम राम ! विदु रावने मेर को हिनू साँगे ?  
स्वामी सहित भव मा वहाँ गुनि गुनि,  
विशेषि कोउ रेत दूगरी साँगे ॥१॥  
देह-जीव जोग के सगा मृषा टाँचा टाँगे ।  
विये विचार मार - बदली ज्यो,  
मनि बनवसग लघु लसत चौच विच बाँगा ॥२॥  
'विनय-पत्रिका' दीन की बापु ! आप ही बाँचा ।  
हिमे हेरि तुलसी गिराओ मो सुभाष,  
सही परि बहुरि पूछिण पाँचो ॥३॥

भाषा—हे महाराज रामचद्री ! आपने छोड़कर मेरा सच्चा हिन्दू दूसरा  
कौन है ? मैं अपने स्वामी सहित यही मैं कहता हूँ उगे मुन समझकर यदि कोई और  
बड़ा है, तो दूसरी लकीर लोच दीजिए । (मेरी बात का बाटकर दूसरा सिद्धांत बता  
दीजिए, मुझे भूटा साबित कर दीजिए ।) ॥१॥

(यदि आप यह कहें कि 'ससार में तर बहुत सग सम्बन्धी है क्या व तेरा हित  
न करेंगे, त) शरीर और जीवात्मा व सम्बन्ध के जितने सगा या हितपी मिलते हैं वे  
सब मिथ्या टाँको से सिले हुए हैं । (जा टाँके ही मिथ्या हैं, जिनका वास्तविक अस्तित्व  
ही नहीं उनसे सिला हुई चीज कहा तब सब हो सकती है ? जसा कारण, वसा बाप ।)  
विचार करने पर 'मे सबा' केले कं बुच के सार क समान है । (ऊपर से दखने पर जान  
पडता है कि भीतर भूदा भरो हाया पर छोलेने पर अत तब उद्यम से सिवा धिलके के  
कुछ भी नहीं निकलता जैसे ही जान दष्टि से देखने पर ससार के सारे ही सबध वसे ही  
हैं) । ये सुदर जान पडते हैं जैसे, मणि सुवरा के संयोग में बीच बीच में तुच्छ काँच भी  
शोभा देता है (यहा, मणि ईश्वर है और सुवरा है जीव दोनों के संयोग से काचपी  
ससारी सबध भी सुदर भासित होते हैं वस्तुतः व तुच्छ काँच ही हैं) । मणि तो उनसे  
सबधा भिन्न है) ॥२॥

हे पिताजी ! इस दीन की लिखी 'विनय पत्रिका स्वयं आप ही पत्रिका (किसी  
पेशकार से न पढवाईएगा । सम्भव है वह कुछ का-कुछ पढ जाये या कुछ गल ही छोड  
दे । अत आप ही पढिए) । तुलसी ने इसमें अपने हृदय की सच्चा सच्चा बाते ही निररी  
हैं । पहले आप अपने स्वभाव से इस पर 'सही बना दीजिएगा । फिर पीछे पचो से  
पूछिएगा (क्योंकि यदि आपने उनसे पहल ही सलाह ली तो शायद व यह कहें कि  
'पत्रिका' का मजमून बिगड गया है, यह राजदरवार के माग्य नहीं है तो मेरा सारा  
किया-कराया मिट्टी में मिन जायगा) ॥३॥

गवदार्थ—टाँचण=टाँक । पाँचा = पचों स ।

विनय—(१) देह टाँचा—इसका यह अर्थ न लगाया जाए कि गोमाइ जो समाज प्रेम, देश प्रेम या विश्व प्रेम के विरोधा थे। प्रायः इतना ही है कि ईश्वर प्राप्ति या सत्यावेपण के माग म जो कष्ट या बाधक हैं, व असन है, अतः परित्याग्य है। किन्तु जो मित्र और मवधी सत्या वेपण के साधक हैं, वे सत्य और प्रिय हैं। कहा है—  
 'तुलसी तो सब भाति परमहित पुज्य प्राण तें प्यारो ।  
 जासा होय सनेह रामपद एतो मतो हमारो ॥'

२७८

पवन सुवन । रिपुदहन । भरतलाल, लखन । दीन की ।  
 निज निज अक्षर सुधि किये, बलि जाऊँ,  
 दास प्राप्त पूजिहै खास खीन की ॥१॥  
 राज-द्वार भली सत्र कहैं साधु समीचीन की ।  
 सुकृत सुजस साहिव कृपा स्वारथ परमारथ  
 गति भये गति विहीन की ॥२॥  
 समय मैंभारि सुधारिनी तुलसी मलीन की ।  
 प्रीति रीति समुचाइनी नतपाल,  
 कृपालुहि परमिति पराधीन की ॥३॥

भावार्थ—हे पवनकुमार ! हे शत्रुघ्नजी ! हे भरतलालजी ! हे लखनलालजी ! अपने अपने अवसर में इस दीन तुलसी की याद रखना । मैं आप लोग की बलवाँ लेता हूँ । आपके ऐसा करने से इस अत्यन्त दुबल दास की आशा पूरी हो जायगी (श्रीरघुनाथ जी मेरी 'पत्रिका' पर 'सही कर दगे) ॥१॥

राज-द्वार में सच्चे सज्जना की बात तो सभी अच्छी कहने हैं (इसमें कोई विशेषता नहीं है) पर यदि आप लोग इस शरणागत दीन की सिफारिश कर देंगे तो इसे भगवान् की शरण मिल जायगी आनको पुष्ट्य प्राप्त होगा और आपका सुवश फलगा, आपने स्वामी आप पर कृपा करेंगे (क्याकि जा उनकी पतिव्रता-व्रतता व विरम में सहायक बनेगा, उनसे मुझ मरोखे पापिया की सिफारिश करगा उन पर वे और भा कृपा करेंगे) आपके स्वार्थ और परमाय दोनों बन जायेंगे ॥२॥

इसलिए मौका ग्यकर (क्याकि राज दरवार में वे मौके बात नहीं करना हानी है) इस पतिव्रत तुलसी की बात सुधार देना (सिफारिश करके मेरी 'विनय-पत्रिका' पर सही लिखवा दना) भक्तवत्सन दयालु रघुनाथजी से मुझ परतत्र जीव की प्रेम पद्धति की परमिति समझाकर कह दना ॥३॥

भावार्थ—खीन = (धीछ) दुबल । परमिति = मोमा ।

विनय—(१) पवन-सुवन दीन की—इस पद में गोमाइजा पत्रिका भेजने के पूर्व ही अपनी तरफ राज दरवारियों को विनती कर कर मिला रहे हैं। सासब भी उन्हें काफी दी गई है ।

(२) समुभाइवी -- इस शब्द पर थावजनायजी लिखते हैं -- "समुभाइवी" यह वाचक स्त्रीलिंग में है, ताते यह प्रायना किशारीजूमा है ।'

यह युक्ति ठीक नहीं जच रही । समुभाइवी वचनखण्डी प्रयोग है । 'करवा', जायपी समुभाइवी' आदि क्रिया प्रयोग आत्र भी वहाँ प्रयुक्त हात है । यह प्रयोग पुल्लिङ्ग और स्त्रीलिंग दोनों के लिए होता है ।

२७६ ]

मारुति मन, रुचि भरत की लखि लपन कही है ।

कनिवालहुँ नाथ । नाम सो प्रतीति प्रीति

एक किकर की निवही है ॥१॥

सकल सभा मुनि ल उठी, जानी रीति रही है ।

टूपा गरीबनिवाज की, देसत

गरीब की साह्य बाँह गही है ॥२॥

विहँसि राम कहा सत्य है, मुधि मे हूँ लही है ।'

मुदिन माय नावत, बनी तुलसी अनाथ की

परी रघुनाथ हाथ गही है ॥३॥

भावार्थ -- हनुमान् और भरत की रचि दृग्कर लक्ष्मण न थोरामचन्द्रजा से कहा है नाथ । कलिपुत्र में भी आनेके एक सबके को आपक नाम न प्रीति और प्रतीति निभ गर्ई (दत्तिल उक्तकी यह 'विनय पत्रिका भा आद है ।') ॥१॥

यह मुनकर सारी राज-गमा एक स्वर मे कह उठा हौ यह सब है साग मो उमका रचि को जानत है । गरीबनिवाज थोरामचन्द्रजा की उम पर भारा हुआ है । स्वामी न गयन गयन गयन उक्तकी बाँह पकटकर अपना निमा है ॥२॥

ये भी वे अच्छा समझते थे । अतः उन्हीं से सिफारिश कराई गई ।

(२) मुधि मैं हू लही ह —कदाचित् श्रीजानकी ने कहा होगा, क्याकि गोसाइजी नये पहले ही निवेदन कर चुके थे,

कबहुँक अब ! अवसर पाइ ।

मेरिओ मुधि छाइवी कछु करन-कथा जलाइ ।

विनय-पत्रिका

समाप्त





## अन्तर्कथारों

धामर—यह बड़ा उन्मादी भी प्रबल शैव था। शिवरात्रि का पुत्र था यह। प्रजा से इसे यह धर मिला था कि गात्र प्राप्त हान पर हा इगता सराराम हान। इगने भय से दवगण मन्त्राचन पर चन ग। पर यह वर्त भी उद्ध गता गगा। देवताओं की प्रायश पर शकर भगवान् म उगवा निगन के वष क्रिया क्रिगण उा गान प्राप्त हुआ, धीर उगा था य भविष का परगात पाकर सरार श्याम शिया।

अम्बरीष—महाराजा अम्बरीष परमात्मा थे। एतासी का विपत्ति वन करावाने तो एक ही थे य। एक बार एतासी क शिव मन्त्रा प्राभा दुवागा श्रुति था पहुँचे। राजा न उन्े भाजन का गान्तर निमन्त्रण शिया। अम्बरीष एतासी क शिव श्राद्धों की भोजन कराकर गान् में प्रमात्मा सते थे। उग शिव श्राद्धा शोरी ह्रीं थी उरारत गया दशी लग जानवानी थी। अमशास्त्र क अनुमान एतासा में पारण कर सना था। श्राद्धों क कान पर राजा ने यह दार मिताने के लिए भगवान् का परणोत्त से लिया। इतन में दुर्वासा भा गए। यह जानकर कि राजा ने बिना मर पाए एतासा कर शिया है य आगवयूता हो गए, धीर राजा की शाप शिया कि तुम्हें जो यह धमड ह कि मैं इसी जन्म में मृत हो जाऊँगा, वह मृषा है अभी जन्म नमकर, मनुष्य भादि क तुम्हें दस सहस्र शरीर धारण करन हाने। दुर्वासा ने दुर्वासा गग की एक राक्षसी भी उत्पन्न का। वह राजा की पान की दीदी। उषा श्रीहरि न चक्र दगुशन की प्राणा दी। चक्र ने कृपा की भाकर दुर्वासा का पीछा शिया। श्रुति तीता साको में भागने क्रिरे पर किगी ने भी उन्हे शरण न दी। तब लानार होकर अम्बरीष की ही शरण ली। राजा ने मुशान चक्र की शाप कर दिया। भगवान् ने दुर्वासा ने कहा कि 'तुमने मेरे भक्त की जी शाप शिया है उसे म प्रहण करता हूँ। म स्वयं दस शरीर धारण करूँगा।'

अगस्त्य—निष्ठा ह कि समस्त तट पर टिटहरा का एक जोग रहता था। उाके अने समद अपनी लहरो से बहा ले जाता था। मन्त्रा विषय से वे समुत् पर क्रुद्ध हो गए। अपनी भोच में बालू भर भरकर वे समुत् की पाटन की कोशिश करते लगे। यह देखकर अगस्त्य मुनि का उनकी दशा पर दया भा गई। मुनि ने उन्हे सात्वता देने हुए राम कहकर तीता आत्मना से ममुत् की मुखा दिया। बाद म देवताओं की प्रायना पर उम खारा करके पेट से बाहर निकाल दिया।

अगस्त्य मुनि की एक धीर भा गया ह। लिखा है कि विष्णु पवत बड़ा उँषा था। सूर्य के प्रचण्ड तेज के कारण जब उसके वृक्ष जलने लगे तब मूय की टक देने के लिए वह धपना शरीर बनाने लगा। देवता यह देखकर बहुत घबराए। अगस्त्य श्रुति से साकर उ हान प्रायना की। श्रुति ने रामनाम का स्मरण शिया धीर विष्णु पवत के मस्तक पर

हाथ रखकर उससे कहा, 'देख जब तक मैं लौटकर न आऊँ तू यहाँ ऐसे ही पड़ा रहना।' न अगस्त्य कभी लौट और वह न उठा। वैसा ही पड़ा रहा।

**अजामिल**—यह बड़ा दुराचारी ब्राह्मण था। इसके कनिष्ठ पुत्र का नाम 'नारायण' था। मरते समय जब यम क दूत इससे जाने गये, तब इसने भयभीत होकर चार-पाँच बार 'नारायण' को पुकारा। नारायण तो न आया पर भगवान नारायण के पापद आ पहुँचे। उन्होंने हठपूर्वक यमदूतों का डाँटकर इस धुंढा लिया, क्योंकि अत समय इसने 'नारायण' का नाम स्मरण किया था।

**अनसूया**—चित्रकूट में महर्षि अत्रि और उनकी परम पतिव्रता सात्री पत्नी अनसूया ने पुत्र-कामना से घोर तप किया। ब्रह्मा, विष्णु और शिव ने उनका दर्शन दिए और वर माँगने को कहा। अनसूया ने यह वर माँगा कि मेरे गर्भ से तुम्हारे सत्स पुत्र जन्म लें। त्रिदेव को 'तथास्तु' कहना पड़ा। तीनों ने भगवती अनसूया के गर्भ से जन्म लिया। ब्रह्मा के अश से चंद्रमा, विष्णु के अश के दत्तात्रेय और शिव के अश से दुर्वासा जन्मे।

**अहत्या**—अनिन्द्य सुदरी महर्षि गौतम की पत्नी थी। उनके रूपावण्य पर मुग्ध हो एक दिन इंद्र जब गौतम सध्या-वदन करने के लिए गये हुए थे गौतम का रूप धारण कर अहत्या के पास पहुँचा और उसने उससे रनिदान माँगा। कुसुमय म अहत्या ने पहले तो उनकी प्रायश्चित्त कर दी परन्तु पतिव्रता होने के कारण कपटवशधारी इंद्र के साथ उस अनिन्द्या से सभोग करना पड़ा। तने में गौतम आ गए। उन्होंने योगदृष्टि से सारा रहस्य जानकर इंद्र का यह शाप दिया कि तू शरीर में एक सहस्र भग हो जाएँ। अहत्या का भी शाप दिया कि तू पापाण्य मूर्ति हो जा। बाद में ब्राह्म शांत होने पर दोनों के शाप का प्रतीकार ऋषि ने इस प्रकार कर दिया कि श्रीराम के चरखा व स्पर्श से पापाण्य अहत्या का उद्धार हुआ जायगा और जब रामचंद्रजी शिव का धनुष तोड़ेंगे, तब इंद्र के सहस्र भग सहस्र नत्रा में परिणत हो जाएँगे।

**उग्रसेन**—कस के पिता का नाम उग्रसेन था। यह श्रीकृष्ण के नाना थे। प्रात-तायी कस अपने पिता को कद में डालकर राजसिंहासन पर बठा था। श्रीकृष्ण ने कस को मार्कर उग्रसेन को पुन राजा बनाया और स्वयं उनके द्वारापान बने।

**करनघट**—यह ब्राह्मण था और भगवान शिव का अनय भक्त था। शिव के प्रतिरिक्त किसी देवता का नाम तक नहीं सुनना चाहता था। जा कोई विष्णु आदि का नाम उसके आगे ल देता तो वह दूर भाग जाता था। उसने अपने बाना में घट बाँध रख थे, जिससे विष्णु आदि का नाम न सुनाई पए। जहाँ वह रहता था उस स्थान को वाशी में मान भी लोग करनघटा के नाम से जानते हैं।

**कालकूट**—दवों और दत्यो न मिलकर एक बार अमृत निकालन के लिए समुद्र का मथन किया। सबसे पहले उसमें से हालाहल निकला। विष का प्रचंड ज्वालाला से व जलन लगे। सबने एक साथ आत बाणी से शिव का आवाहन किया। शिव शिव के किसमें सामर्थ्य था जो उसे पान कर सकता था? उस व पी गया। किन्तु तत्काल उन्हें स्मरण आया कि हृदय में तो श्रीराम का निवास है अत हालाहल का कण्ठ के नीचे नहीं उतरने दिया। विष के प्रभाव से कण्ठ नीला हुआ गया। तभी से व 'नीलकण्ठ' कहे जाने लगे।

भगवत्सल भगवान् शंकर न इम प्रकार विष की ज्वाना से जलन हुए दवा तथा दवा की रक्षा की ।

कालनेमि—यह बड़ा ही मायावी था । जब लक्ष्मण मथनाथ की शक्ति से घाहत हो गया श्री-हनुमान सजोवनी लेन जा रह थ तब रावण की सलाह से दमन साधु का वश धारण कर हनुमान के साथ छत्र किया । किंतु भगवत्सुल जान पर हनुमान ने इस पक्ष में लपेटकर तत्काल यमलाक का भज लिया ।

कालिय—यमुना में कालिय नाम का एक भयकर नाग रहना था । उसके विष से वहाँ का जल सदा सौलता रहता था । श्रीकृष्ण ने कालिय नाग की नायकर भयन वश में कर लिया और वह यमुना की छाड़कर समुद्र में जाकर रहन लगा ।

कुबरी—यह कस की दासी थी । यह कुबड़ी थी । जब श्रीकृष्ण मथुरा में राजा कंस के दरवार में जा रह थ तब यह रास्ते में कंस के लिए चन्दन का लप लिये हुए मिली । भविष्यवश चन्दन का वह गुदर तब श्रीकृष्ण के मस्तक पर लगा दिया । वह कृत-वृत्त्य हो गई । श्रीकृष्ण ने इसका कूबड़ हटा दिया । गांधिया ने सीतिया डाहवश इसे हजारों कृतकियाँ और व्यग्य सुनाए पर प्रेम पथ पर न वह तनिक भी न डिगी ।

गजेन्द्र—एक वार एक सरोवर में एक बड़ा मदो-मत्त हाथी हथिनिया के साथ जल विहार कर रहा था । स्तने में एक मगर ने उसका पर पकड़ लिया । हाथी ने अपनी सारी शक्ति लगा दी । तब मगर को पकड़ न नि शक्त और निराश हा उसने श्रीहरि को पुकारा । हर कहन ही गरुड की सवारी छाटककर भगवान् तुर त उस सरोवर पर पहुच श्री चक्रमुञ्चल से गजेन्द्र का फटा काट दिया । गजेन्द्र मुक्त हो गया । श्रीमदभागवत में यह गुदर क्या गजेन्द्र-भाच क नाम से आई ह ।

गुणनिधि—गुणनिधि नामक एक ब्राह्मण महान चोर था । एक दिन वह एक शिवालये में घटा चुराने चला । घण बहुत ऊचा बधा था । वहाँ तक वह न पहुच सका ता शिवालिक के ऊपर चक्कर उमे खोलन लगा । भगवान् शिव प्रकट हो गये और प्रसन्न हाकर उससे बोले— जा वर तुम मोगना हा मोग ल म तुम पर परम प्रमय हूँ क्योंकि तू न मरु पर प्रपना सबस्व चडा दिया ह । शिव की कृपा से वह कनास-लाक की चना गया और कवच पद का अधिकारी हुआ ।

जटायु—गौराणिक क्या के अनुसार यह सयनारायण के सारथी ब्रह्मण का पुत्र एवं सम्पत्ति का बड़ा भाई था । इसन रावण द्वारा हरा गई सीता की छुडान के लिए रावण के साथ धार युद्ध किया और मारा गया । धाराम न भयन पिता के ममान जटायु का दाह सम्कार स्वयं अपने हाथ में किया ।

जयन्त—जयन्त का पुत्र जयन्त एक दिन चित्रकूट में सीताजी के दिव्य लोड्य पर भाग्यि हो गया । कोरे का रूप करकर उसन उनके स्तन पर दाक मारी । स्तन में रंधन रहना दख रघुनाथजा न उम पर एक मौक का बाण मारा । बाण के भय से वचारा साधु ब्रह्मणाथ में भागना गिरा, पर वही भी उस बाण न मिला । लाचार रामचन्द्रजा का शरण में आया । प्रभु न उमका प्राणान्त न कर एक भाव पाकर उम छात्र दिया । नृननादामजा न रामचरितमानम में स्तन के स्थान पर चरणा में चौंच मारना तिया ह, जा भाउ हो मरणा क पनुहुन ह ।

जलघर—इसका जन्म समुद्र से माना जाता है। बड़ा प्रतापी राजा था यह। इसने सार देवताओं को अपने अधीन कर लिया था। शिवजी इसे मारने के लिए उद्यत हुए पर जीत न सके, क्योंकि इसकी स्त्री वृद्धा बड़ी पतिव्रता थी। छत्र पृथक् विष्णु न जब इसका सतीत्व नष्ट कर लिया, तब शिव जलघर का वध कर सका। वृद्धा ने इस छत्र पर विष्णु को शाप दिया, कि 'कालांतर में मेरा पति रावण का रूप लेकर तुम्हारी पत्नी का हरण करेगा।

जह्नु कन्या वा जाह्नुवी—जब महाराजा भगीरथ गंगा को हिमालय से उतारकर अपने रथ के पीछे-पाछे ला रहे थे उस समय माग म ध्यानावस्थित जह्नु ऋषि आसन लगाए बैठे थे। गंगा न ज्या ही उनके आश्रम में प्रवेश किया, वह उठे चुल्लू में भरकर पा गए। परचाण भगीरथ के बहुत अनुनय चिनय करने पर ऋषि ने गंगा को जघा के द्वार से निकाल दिया। तभी से गंगा का नाम जाह्नुवी या 'जह्नु-बालिका पड़ गया।

दक्ष यज्ञ—शिवजी की प्रथम पत्नी सती दक्ष प्रजापति का पुत्री थी। एक बार दक्ष ने एक व्रत मन रचा। कुछ वमनस्य हा जाने के कारण दक्ष ने अपने जामाता शिव को निमंत्रण नहीं दिया। पित स्नेहवश बिना बुलाए ही सती यज्ञ देखने चली गई। वहाँ सत्र देवताओं के बीच में शिव का वनिभाग न दक्ष उन्हें अत्यन्त ब्राध घाया और पिता को दुबचन कहती हुई वे योगाग्नि में जनकर भस्म हा गई। यह सुनत हा शिवजी न अपन गणराज वीरभद्र को वहाँ भेजा। वीरभद्र न दक्ष का सपूण यज्ञ विध्वंस कर दिया। बाद में शिवजी ने प्रसन्न हाकर यज्ञ का पुनरुद्धार किया।

त्रिपुर—दनु का पुत्र त्रिपुर बड़ा अत्याचारी दत्व था। जब उसके अत्याचारा से तीनों लोकों का नाशक दम आ गया, तब प्रार्थना करन पर भगवान शंकर ने उस एक ही वाण से मार गिराया। तभी से शिवजी को त्रिपुरारि कहा जान लगा।

द्रौपदी—जब दुर्योधन ने पाण्डवा का सवस्व जुग म जीत लिया तब द्रौपदी का भी दाँव पर रखवा लिया। दुःशासन द्रौपदी के केश पकड़कर उस भरी सभा म ले घाया और लगा उसको सान्नी खीचन। पाचों पाण्डव, द्रोणाचार्य वरुण आदि सभी चुनचाप बंध रहे किसी ने भी दुर्योधन के डर के मारे द्रौपदी की मर्दाना बचाने का प्रयत्न नहीं किया। तब वह कर्णासिंघु द्वारकानाथ को खार खार से पुकारने लगा। भगवत्कृपा से उसकी साडी दतनी लम्बी हो गई कि दुःशासन खाबते खीचत थक गया, पर उसका और-खार न पा सका। इस प्रसंग पर अनक कवियों ने अतिशयोक्ति का प्रयोग कर अनेक पद्य लिख हैं। ऐसा ही एक कवित्त है—

'पाय अनुमासन दुमासन के कोप धायो  
द्रुपद-मुना को चीर गह भीर भारी है।

भीषम, करन, द्रान बैठे अतधारी तहाँ,  
कामिनी की और बाह नक न निहारी है ॥

सुनिक्के पुकार धाये द्वारका तें जदुराई  
वाहन दुकूल खचे भुजवन हारी है।

मारी बीच नारी है कि नारी बीच सारी है,  
कि सारी ही की नारी है कि नारी ही की सारी है ॥

ध्रुव—महाराजा उत्तानपात्र की दो रातियाँ थी—एक का नाम था सुनीति और दूसरा का सुर्चि । राजा छोटी रात सुर्चि को ही अधिक मानत थे । एक दिन सुनीति के पुत्र भुव न सुर्चि के पुत्र उत्तम के साथ राजा को गोद में बैठना चाहा । उस पर विमाता सुर्चि ने उसे व्यग्र के साथ ढाटकर हटा दिया । बेचारा बालक रोता हुआ अपनी माँ सुनीति के पास गया और उनके उपदेश से कटोर तपस्या कर सर्वोच्च पद का अधिकारी हो गया ।

नल—राजा नल जुष्ट में अपना सारा राज्य हार गये और उन्हें वन वन भटकना पड़ा । चित्रकूट में ध्यान पर ही उनकी विपत्ति दूर हुई । बृहदामायण में लिखा है—

दमयन्तीपतिर्वीरो राज्य प्राप्य हताशुभ ।

मदाकिनी पुण्यतमा गगा नलोक्ष्यविधुता ॥

निषादराज गृह—यह जाति का कंवट था । रघुनाथजी इमे सखा या भ्राता के समान मानते थे । लक्ष्मण और सीता के साथ वन जात समय गया पात्र उतारन क लिए जब गृह से नाव भेगाई तब यह गद्गद कठ में बोला—

मागी नाव, न कंवट आना । कहइ, तुम्हारे मरम में जाना ॥

चग्गन-कमल रज कहैं सब कहई । मानुष - करनि मूरि कटु अहई ॥

जुवत मिला भई नारि सुहाई । पाहन ते न बाठ कठिनाई ॥

तरनिउ मुनि घरनी होइ जाई । वाट परे मोरि नाव उडाई ॥

जो प्रभु पार अवसि गा चहुळ । माहि पद पदुम पखारन कहुळ ॥

×

×

×

‘बह तार भारहु लखन प, जबलगि न पाव पखारिहो ।

तबलगि न तुलसीदास,’ नाथ कृपालु पार उतारिहो ॥’

दुग्—राजा नग महान दानी था । यह नित्य एक करोड़ गोबों का पालन करता था । एक बार इसने एक ब्राह्मण को एक गाय दान में दी । वह गाय किसी तरह भाग कर फिर राजा की गायों में जा मिली । दूसरे दिन राजा ने उस न पहचानकर एक दूसरे ब्राह्मण को दान में दे दिया । पहला ब्राह्मण अपनी गाय की त्राज में घुम ही रहा था । उसने इस ब्राह्मण के पास गाय देखकर इसे चोर समझा और दाना में भगाडा होने लगा । दाना ही राजा के पाम पाय करने पहुँचे । राजा ने उन्हें राजी करना चाहा, पर वे राजी न हुए । गाय छोड़कर यह शाप देकर चले गये कि तू न हमें घोषा दिया है । जा, गिरगिट की शक्ति का प्राप्त हो । राजा गिरगिट हो गया । एक सहस्र वर्ष तक द्वारिकानरी के एक कुएँ में पड़ा रहा । श्रीकृष्ण ने उस निकालकर उसका उद्धार कर दिया और वह नित्य शगर पारक बैकुण्ठ चला गया ।

पारथ (पांडव)—जब त्र्योम्ब न जुष्ट में पाटवों का सबस्व जीव लिया, और उनका नगर में निकाल दिया तब बवार भटकत भटकत विश्वकूट पहुँच । वहाँ तप सानता कर चित्रकूट के प्रभाव में युगा हुए । बृहदामायण में लिखा है—

‘चित्रकूटे गुणे क्षेत्रे धौरामपद भूयिने ।

नपरचचार विधिवदमराज्ञो सुधिच्छिर ॥’

एक ही स्त्री द्रौपदी के साथ युधिष्ठिर आदि पाँचों पांडवा का सयाग यही उनके पतन का कारण था। इनका उद्धार श्रीकृष्ण ने सत्यप्रेमवश किया। (पृ १०६)

पांडवा क हित-साधन क अथ भगवान् कृष्ण ने क्या-क्या नहीं किया। उनके लिए वे दूत बनकर दुर्योधन के पास गये उससे भला-बुरा भी सुना। द्रौपदी की आत्त पुकार सुनकर उसकी सहायता की। भारत-युद्ध म अर्जुन के रथ के स्वयं सारथी बने, और अपना प्रतिष्ठा भा तोड़ी।

पिगला—पिगला नाम की एक वरया थी। एक दिन जब उसका प्रेमी प्राथी रात तक न आया, और वह शृङ्गार किए उसकी बाट जाहती रही, तब उस मन में भारी ग्लानि हुई। “जितने समय तक म इसकी राह देखती रही यदि उतना समय भगवद्भजन में लगाया होता तो मेरा उद्धार ही न हा जाता।” उस दिन स वरयावत्ति छोड़कर पिगला सच्चे हृदय स रामनाम जपन लगी। फलत उस माँच-लाभ हा गया।

पूतना—यह किमी पूवजन्म में अप्सरा था। भगवान् वामन का सुदर रूप देख कर वात्सल्य-स्नेहवश इसके मन म आया, कि मैं इस बालक को पुत्र मानकर अपने स्तना का दूध पिलाऊँ। अन्तर्यामी भगवान् उसक मन की भावना जान गये। वही अप्सरा पूतना नाम से किसी घोर पाप के कारण, राक्षसी हुई। श्रीकृष्ण ने मान् भक्ति भावना स उसे स्वर्ग-धाम भेज दिया।

प्रद्युम्न—श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न कामदेव र अवतार थे। कामदेव ने सारे जगत को पाप वासना में निप्ट कर रखा था, तथापि भगवान् ने उसे अपने पुत्र के रूप म वात्सल्य प्रदान किया।

✓ प्रह्लाद—प्रह्लाद का सत्याग्रह प्रसिद्ध ह। पिता हिरण्यकशिपु प्रह्लाद का राम नाम जपने स राकता था, पर यह निरंतर ‘राम राम ही कहा करत। यह न माने, न मान। अन्त में, उसने इन्हें एक गरम सन्धे से बाध दिया और तलवार लेकर मारने का तयार हो गया। भक्तवत्सल भगवान् नसिंह रूप में बम्भा चारकर निकल पन् और दम्बते देखन हिंष्यकशिपु का चोर-फाड़ डाला। प्रह्लाद की गणना महाभागवता में ह। कवित्त रामायण में तुलसीदासजी न प्रह्लाद पर एक सुदर सबया लिखा ह—

आरत-पाल कृपाल जो राम जुही सुमिरे तेहि को तहँ ठाढ़े।

नाम प्रताप महामहिमा अकरे किये छोटेउ छोटेउ बाढ़े ॥

सेवक एकते एक अनेक भये तुलसी तिहँनाप न माडे।

प्रेम बडो प्रह्लादहि को जिन पाहन तँ परमेमुर काडे ॥’

चक्र (पद १४६)—वा-मीकीय रामायण म उल्लूक का प्रसंग आया ह, बगुने का नही। श्री अयोनायजी ने बक’ के स्थान पर खग पाठ शुद्ध माना ह। समक ह बक की क्या का उल्लेख किसी अन्य रामायण में हो। वातमीकीय रामायण में उल्लूक और गीघ की क्या इस प्रकार लिपी ह—एक वन में एक उल्लू और एक गीघ दाना एक ही घर में रहते थे। एक दिन गीघ न, श्रुत्वावण घर पर आना अधिकार करना चाहा। उसन उल्लू से कहा— हमारा घर खाली कर दो, इस पर तुम्हारा कोई हक नही। दोनों में भगडा बढ़ गया। अंत में श्रीरामचन्द्रजी स फसला कराने क लिए, दाना, दरबार में

पहुँचे। रामचन्द्रजी ने उल्लू ने पूछा—'घर किसका है? तू उसमें बस रहा है?' उल्लू ने उत्तर दिया—'महाराज, जहाँसे बूँदा की सृष्टि हुई, तबसे मैं उसी घर में रहा हूँ। गोधन कहा कि जबसे मनुष्यों का सृष्टि हुई, तबसे मैं उसमें रहा हूँ।' भगवान् ने निश्चय किया कि 'मनुष्यों से बूँदा का सृष्टि पहले हुई है, मत वह घर उल्लू का ही है सक्ता है, गोधन का नहीं।' घर उल्लू को देना ठिया गया।

बलि—जब राणा बलि ने वापस भगवान् को तीन पग पृथ्वी देने का वचन दिया, तब शुक्राचार्य ने विष्णु भगवान् का धन समझकर, बलि को दान देने से बहुत कुछ रोका। परन्तु सत्य-सकलकाला राजा बलि अपनी प्रतिज्ञा से पीछे नहीं हटा। उस समय उसने अपने गुरु शुक्राचार्य का भी सत्य को हत्या होने का कारण, परित्याग कर दिया।

भगीरथ-र्षिद्वी—सूर्यवंशी महाराजा नगर के माठ हजार पुत्र थे। उन्होंने भोजनवश योगेश्वर कपिलदेव पर यह दोषारोपण कर दिया कि उन्होंने हमारे पिता का अश्वमेध का घोड़ा चुरा लिया है, यद्यपि उस चुराया या मायावी इंद्र ने। इन पर कपिलदेव ने उन सबको अपनी योग ज्ञाना से भस्म कर दिया। उनके उद्धार के लिए उनका पौत्र महाराजा भगीरथ कठोर तपस्या कर शिवजी की जटायों से गंगा को भूतन पर उतार लाये। इसीलिए गंगा का भगीरथी कहे हैं।

मय—यहूँदा तो दत्त पर पूरा भगवान् भक्त था। 'सकी स्वागत्य रत्ना की प्रशंसा महाभारत, रामायण आदि ग्रंथों में यत्र-यत्र मिलती है। गरुड का स्वर्ण लका का निर्माण इसीने किया था। इसीने महाभारत में धर्मिन पांडवों के इंद्रप्रस्थ नगर का निर्माण किया था जिसमें दुर्वासन का जल में स्वतः का और स्वयं म जन का भ्रम हुआ गया था।

महिषासुर—यह शिवजी का अश से उपात्र हुआ था। बड़ा ही प्रबल और प्रचंड दत्त था यह। जब इसे देवगण ने जात सके, तब कानिका ने इसका संहार कर पृथ्वी पर शान्ति स्थापित का।

माकण्डेय—माकण्डेय ऋषि ने कठोर तप करने के पश्चात् भगवान् ने प्राथना का कि मुझ प्राण प्रत्यय का दर्श ठिया होजिए। बिना ही कर्पात के भक्त इन भगवान् का प्रत्य-बोला रचनी पडे। माकण्डेय ने उस समय सार हाँ प्रत्याण्ड का जल मय दत्ता, बरत नारायण शिररूप में एक बट-वत्र पर खलते हुए दृष्टि-नाचर हो रहे थे।

मवन—किसी मवन ने कहते हैं मूमर के आधान से मरत समय हराम कहा था। बिना जान ही उस शब्द में राम आ जान का उसका मुक्ति हो गई।

रत्नबीज—यह एक दत्त था। इस शिवजी से मय वर मिला था कि उसका रत्न धरती पर गिरने से ठमका प्रत्यय बूद से उसीके समान पताक्रमा हजारों राक्षस पत्नी हो जायेंगे। इस वर का प्रभाव से तोना लाक मयमोत हा गया। अंत में, स्वतामा ने भगवती कानिका से प्राथना का। कानिका ने प्रकट हाकर रत्नबीज से मद्ध किया। एक एक बूँद रत्न का गिरने से जब महर्षियों ने राक्षसपत्नी हान लगे तब भगवती काती ने अपनी जीम इतना लम्बी बडा ली कि उसका सारा रत्न भूमि पर गिरने से पहुँचे हा आम से बाट दिया। इस तरह नय-नये राक्षसों का उत्पत्ति राक्कर उठोंन रत्नबीज का वध किया।

राहु—जब समुद्र मयन से धमूत निकला, तब देव और दत्त उस पाने का ठिया

भ्रमर में लडने लगे । विष्णु भगवान् ने मोहिनी रूप धारण कर भ्रमर का घड़ा अपने हाथ में ले लिया । राक्षस उनके असौकरिक रूप पर मोहित हो गये । एक ओर देवता और दूसरी ओर दत्य पक्षियों में बिठा दिये गये । भ्रमर का वितरण देवताओं को पत्नि से आरम्भ किया गया । राहु नामक एक दत्य विष्णु का कपट समझ गया और वह सूय और चन्द्रमा के बीच में आ बठा । घांसे से मोहिनी ने उसे भी भ्रमर पिला दिया । पर सूय चन्द्र के इशारे से कि यह दत्य है, भगवान् ने अपने चक्र से उसका मस्तक उड़ा दिया । मुग्ध का बन गया राहु, और रुद्र का केतु । कहते हैं उसी पुराने वर से, राहु, ग्रहण के समय चन्द्र और सूय को दुःख दिया करता है ।

लवणामुर—यह मथुरा का राजा था । अपने घोर अत्याचारों से इसन गो ब्राह्मणों को जब बहुत कष्ट दिया तब श्रीराम की आज्ञा से शत्रुघ्न ने जाकर इस अपने भ्रतृन् पराक्रम से मार डाला ।

धारामुर—यह राजा बलि का पुत्र था । इसके एक हजार हाथ थे । यह परम-शत्रु था । इसकी पुत्री उषा, श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध का मनोहारी रूप स्वप्न म दबकर, उन पर मोहित हो गई । अपनी सखी चित्रलेखा के विद्यो द्वारा अनिरुद्ध कुमार का पता लगाकर चुपके से उन्हें अपने अंतपुर में ब्रूला लिया । जब यह बात बाणामुर को मानुस हुई तो उसने अनिरुद्ध को कद में डाल दिया । श्रीकृष्ण के साथ युद्ध होने पर कटते कटते जब इसके केवल चार हाथ रह गये, तब यह भगवद्भजन हो गया । तत्पश्चात् इसने अनिरुद्ध के साथ उषा का विवाह कर दिया ।

वामन—दानवीर राजा बलि से तीन पग भूमि के बदले त्रिलोक लेने के लिए विष्णु भगवान् ने वामन अवतार धारण किया था । उन्होंने पृथ्वी का साम्राज्य देवताओं को दिया, क्योंकि वे अचार बलि के आगे तेजवीन हो गये थे । साथ ही बलि को वामन भगवान् ने निद्रा द कर अपना परमभक्त बना लिया । उसका दानाभिमान भी चूर चूर हो गया । एक काय के करने में कई काय सघ गये ।

बाल्मीकि—पहले इनका नाम रत्नाकर था । ब्राह्मण होकर भी यह व्यापक काम करते थे । जंगल में पशुघ्ना का शिकार करने के साथ ही उस माग से जानेवाला को भी लूट लिया करते थे । एक दिन दक्षरा देवर्षि नारद उधर से जा निकले । उनको भी लूटना चाहा, पर बाद में उनके उपदेश से जीवहिंसा छोड़कर रत्नाकर भगवद्भजन करने लगे । अम्यास न होने से सीधा 'राम राम' तो जपत बना नहीं, उलटा 'मरा मरा' जपते रहे । किंतु इसी के प्रताप से वे ब्रह्मर्षि हो गये । कहा भी है—

'उलटा नाम जपत अथ जाना । बाल्मीकि भे ब्रह्म-सपाना ॥'

विदुर—यह दासी-पुत्र थे, पर भगवद्भक्त होने के कारण स्वभाव समझे गये । श्रीकृष्ण भगवान् जब हस्तिनापुर गये, तब दुर्योधन के घर पर न जाकर विदुर के ही प्रतिपि हुए । विदुर उस समय घर पर नहीं थे, वहाँ उनकी स्त्री थी । वह प्रम में इतनी बेसुख हो गई कि भगवान् को जब भित्ताने बैठे तो कन छील-छीलकर गोबे गिराता गई और पिलके उनके हाथ में देती गई । भगवान् ने उन छिनका को बड़ प्रेम से खाया । भगवान् ने विदुर के कुन शील पर ध्यान न द कर उनकी भक्ति भावना का ही प्रधानता दी ।



को देग हनुमान् उन्हें भी खाने को दौड । इतने में इन्द्र ने डाँकी हनुमान् ठोड़ी पर ऐसे जोर से बज्य मारा कि वह मुन्चिठ हो गय । बज्य भी टूट गया । इसी कारण हनुमान् नाम पड़ गया ।

(२) एक बार शिवजी ने श्रीराम से कहा मैं धापकी दास्य भाव से सेवा करना चाहता हूँ मुझ पर क्या कर दीजिए । रघुनाथजी ने पर द निया । कानान्तर में हनुमान् के रूप में शिवजी ने श्रीरामचन्द्र को दास्यभक्ति प्राप्त की । इसीलिए हनुमान् को ग्यारहवाँ रुद्र माना गया है ।

(३) हनुमान् न सुयनारायण से विद्या प्राप्त की थी । दशिणाण्य में सुय न हनुमान् से यह वर माँग लिया था कि तुम सदा मर पुन सुपीय की रक्षा करना । जब तक सुपीय को राज्य नहीं मिलता वह बराबर उसकी रक्षा करते रह ।

(४) भीम और हनुमान् के सम्बन्ध की महाभारत में दो कथाएँ मिलती हैं— बनवास काल में एक दिन भीमसेन की माग में एक महान् वानर भ्रष्टा लटा हुआ मिला । भीमसेन की गजना से वानर न आँखें खोली । भीमसेन न उससे कहा— भाई रास्त से हट जाओ । वानर का उत्तर था— म वृद्ध हूँ, उठन-बठन में बन्ट होता ह तुम्ही मरो पूछ हटाकर क्यों नहीं चले जाते ? भीमसेन न अपनी सारी शक्ति लगाकर पूछ उठाई पर वह टस से मस न हुई । यह जानने पर कि वह वानर साक्षात् हनुमान् हैं भीमसेन न उसे सात्वाग प्रणाम किया ।

एक बार भीमसेन ने हनुमान् से कहा— मुझे धाप अपना वह रूप दिखाइए जो राम रावण युद्ध में धारण किया था । हनुमान् ने कहा— मरा वह रूप बड़ा ही विकराल है । तुम देखते ही डर जाओगे । भीमसेन न जब बहुत धारण किया तब हनुमान् प्रबल रूप में देखत देखत प्रकट हो गये । भीमसेन की आँखें बंद हो गई देह धर धर काँपन लगी । हाथ जाडकर व हनुमान् कं चरणों पर गिर पडा ।

(५) महाभारत के युद्ध में अजुन कण के रथ पर बाण चलात तो उनका रथ कोसा दूर हट जाता और कण क बाण से अजुन का रथ जरा-सा ही खिसकता । यह देख अजुन को अपने बल-पराक्रम पर बड़ा गव हुआ । अन्तर्धामि श्रीकृष्ण इस रहस्य को समझ गये । श्रीकृष्ण ने हनुमान् से रथ की ध्वजा पर स हट जान का कहा । हनुमान् हट गय । अत्र कर्ण के बाण से अजुन का रथ बहुत दूर जा गिरा । अजुन न धवराकर पूछा— यह हुआ क्या ? श्रीकृष्ण ने कहा— तुम्हारा बल ही कितना है ! यह सा-पराक्रम तो हनुमान् का था । इस समय व तुम्हारा रथ की ध्वजा पर नहीं है । यदि भी यहाँ से हट जाता तो न जाने तुम्हारा रथ कहा गिरता ! अजुन लज्जा से पानी-पान हो गया ।

(६) एक बार भगवान् विष्णु न गरुड को हनुमान् को बुला लान की आज्ञा दी । हनुमान् ने गरुड से कहा— धाप चलिए । म पीछे आ रहा हूँ । आपम पहले ही पहुँच जाऊंगा । गरुड को अपनी वायु-शक्ति का बड़ा गव था । उड़ते हुए भगवान् के पास पहुँचे तो देखते क्या है, कि हनुमान् तो वहाँ पहले से ही बठ है । गरुड का सारा गव चूर चूर हो गया । यह कथा 'स्कन्द पुराण' में है ।

(७) हनुमान् ने सूर्य भगवान् से विद्याए पढी थी । वेदों और शास्त्रा पर भाष्य, पिंगल पर टीका, वाग्भ्यो पर टिप्पणियाँ तथा वेदाङ्गा पर भी कई ग्रन्थ उहोने रचे थे । हनुमन्नाटक हनुमत् ज्योतिष आदि कुछ ग्रन्थ आज भी प्राप्य हैं । कहने ह, चित्रकाय के आदि आविष्कर्ता भी हनुमान ही थे ।



## पद-सूची

अकारन की हित्ता और की ह	३५६	कट्टु कहिय गाढे परे	७६
अजहुँ आपने राम के करतब	३०३	कर्महि दिखाइहो हरि चरन ?	३३८
अति भारत अति स्वारथी	७५	कबहुँक भव अवसर पाइ	८४
अब चित, चति चित्रकूटहि चलु	६३	कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो	२७३
अबलौ नसानो अब न नसैहौं	१७८	कबहुँ कृपा करि रघुवीर	४१३
अस कछु समझि परत रघुराया	२००	कबहुँ रघुवभमनि ।	३२६
आपनो कबहुँ करि जानिहौं	३४१	कबहुँ समय सुधि लाइवी	८५
आपनो हित रावर सा जो पै सूझ	३६५	कबहुँ सो कर सरोज रघुनायक	२२६
इह कह्यो सुत, बेद नित चहै	१५७	कबहुँ मन विद्याम न माग्यो	१५६
इह परमफलु परमबडाई	१२५	करिय सभार कौसलराम	३४१
ईस सीम बसति	५८	कलि नाम कामतरु राम को	२५०
एक सनहो साँचिलो	२६६	कस न करहु कइना हर	१८३
एक दानि सिरोमनि साँचो	२६०	कस न दीन पर द्रवहु उमावर	४३
ऐसी धारती राम रघुवीर की	६३	कहा न किया कहाँ न गया	४२०
ऐसी कथा प्रभु की रीति	३२	कहाँ जाऊँ कासो कहीं	
ऐसी सोहि न युक्तिये हनुमान हठोले	७३	घोर ठोर न मेरे	२४२
ऐसी भूकता या मन की	१६१	कहाँ जाऊँ वासा कहीं	
ऐसी हरि करत दास पर प्राति	१७०	का मुन दीन की	२८२
एष राम दीन हितकारी	२६४	कहुँ कहि कहिय कृपागिये	१८४
ऐमहि जनम ममूह विराने	३६१	कहे विनु रह्या न परत	३६४
एमह साहब की सेवा	१३६	कह्या न परत विनु कहे	४०३
ऐमा की अन्तर जग माहौं	२५६	कहौँ कौन मुह साँच	२४१
और कह ठोर रघुवस मनि । मर	३२८	काज कहाँ नरतनु घरि छारयो	३१४
घोर बाहिँ माँगिए	१५१	काहे की किरत मन	३०७
घोर मोहिँ की है बाहिँ कहिहौं	३५७	काह की किरत मूँ मन	२११
कछु हँ न आय गया	१४४	काहे ते हरि, माहिँ बिसारो	१६६

बाहे न रमना, रामहिं गावहि ?	३६४	जागु जागु जीव जड	१४२
कीज मोको जम जातनामई	२७१	जांचिये गिरजापति कासी	४२
कृपासिंधु जन दीन दुवारे	२३७	जानकी जीवन जग जीवन	१४८
कृपासिंधु, ताते रहीं	२३६	जानकी-जीवन की वलि ज्यों	१७७
कृपा सो धौ कहां बिसारो राम	१६५	जानकी नाथ, रघुनाथ	१००
बेसव कहि न जाइ का कहिये	१८५	जानकीस की कृपा जगावती	१८३
बेसव, कारन कौन गुसाइ	१८६	जानत प्रीति रीति रघुराई	२६१
बहू भाति कृपासिंधु	२८५	जानि पहिचानि में बिसारे हो	३६७
कैसे देठें नाथहि खोरि	२५४	जिय जब तें हरि ते बिलगाया	२१६
को जांचिये समु तजि भान	३६	जसो हो तसो राम	४१४
कोसलाधीस जगदीस	१०२	जो अनुराग न राम सनेही सों	३०५
कौन जतन बिनती करिये	२६२	जो तुम त्यागो राम, हौं तो नहि	२७६
खोटो खरो रावरा हौं	१४५	जो पै कृपा रघुपति कृपालु की	२२४
गाइये गनपति जगवदन	३७	जो प चेराई राम की	२४५
गरंगी जोहू जा कहीं और को हौं	३५५	जा पै जानकि नाथ सा	३०२
जनम गयो बादिहि बर वीति	३६०	जो प जिय जानकी-नाथ न जाने	३६३
जमुना ज्यो-ज्यों लागी बाढ़न	५६	जो पै जिय घरिही	१६८
जय-जय जगजननि देवि	५४	जो पै दूसरो कोउ होइ	३७
जय जय भगीरथ-नदिनि	५५	जो प रहनि राम सा नाही	२७७
जयति सच्चिद्-यापकानंद	८५	जो पै राम चरन रति होती	२६८
जयति भ्रजनी-गभ	६८	जो प हरि जन क भौगुन गहते	१६६
जयति जय सुरसरो	५६	जो मन लाग रामचरण अस	३२०
जयति निभरानंद सद्गोहू	७१	जो मोहि राम लागत मोठे	२६६
जयति वातसजात	६६	जो निज मन परिहर विकारा	२०१
जयति मगनागार	६८	जो मन भग्यो चहु हरि सुरतघ	३२१
जयति मकटाधीस	६६	ज्यों ज्या निकट भयो चहों	४०६
जयति लक्ष्मनानत	७६	तऊ न मेर प्रथ भवगुन गनिहैं	१६७
जयति भूमिजा रमन	८०	तन सुवि, मन रचि मुख कहीं	४०७
जयति जय-सशु करि-कैसरी	८२	तब तुम माहैं से सठनि को	३७१
जयति राज राजेन्द्र राजीवलोचन	८७	ताकिह तमकि ताकी शोर को	७२
जरातें बहूँ खोर हू बहूँ देव !	४१७	खाले हौं खार-खार दब !	२११
जाउं कहां तजि चरन तुम्हारे	१७४	ताहि त आया सरन सबेर	२६३
जाकी गति हू हनुमान की	७२	तावे-भो पीठि मनहूँ तनु पाया !	३१२
जाके प्रिय न राम-बदहो	२७५	तुम भ्रपनायो तब जानिहों	४११
जाको हरि दृढ़ करि भग करयो	३६७	तुम जानि मन मलो करो	४१५

तुम तजि, हौं कासा कहौं	४१६	नाहिन नाथ ! प्रबलब	३२६
तुम मम दोनबधु न दीन कोउ	३७२	नौमि नारायन, नर, कल्याण	१२०
तू दयालु, दोन हौं	१५०	पन करि हौं हठि धाज तें	४१०
त नर नरक रूप	२२६	पवन-भुवन ! रिपु दवन !	४२३
सा सौ प्रभु जो प कहें बोट होतौ	२५८	पावन प्रेम रामचरन कमल	५०६
तो मा हौं किरि किरि	२१०	पाहि पाहि राम ! पाहि,	२८१
तो तू पछितह मन मोजि हाथ	१५६	प्रिय रामनाम तें जाहि न रामो	३५२
तो हौं बार-बार प्रभुहि पुकारिके	३८४	बदौं रघुपति कल्याणियाण	१३१
दनुज-वन-दहन	६६	बलि जाउँ, हौं राम गुसाद	३०६
दनुज-भूखन दया निवु	११२	बलि जाउँ, धौर कासौं कहौं ?	२४८
दानी कहें सर सर नाही	४०	बाप आपने करत मेरी	३८६
द्वार द्वार दीनता कहौ	४१८	बारक बिनोकि, बलि,	२८३
द्वार हौं भोर ही को आनु	३३६	बावरो रावरो नाह भवानी	४१
दान उठरन रघुवय	११८	बिरद गरोब निवाज राम को	१७१
दीन का दयानु दानि	१४६	बिख बिख्यात, बिखस	१०८
दीनयानु दिवाकर देवा	२८	भक्ति सायब, गुमदायक	३२४
दीनयानु दुरित तारिद	२२६	भयूँ उगास राम	२८
दीनयधु दूगरो बट पात्रौं	३१८	भरागो जाहि दूगरो गा बरा	३४६
दीनयधु ! दूरि किय	१६५	भरोगो धौर साँ उर तार	३४८
दीन यधु गुणनिधु	१५२	भनो भक्ति पदिका-जात	३८३
दुग्ध दाय-दुग्ध-दन्ति	५३	भनो भसो भक्ति है	१५८
दगा दगा बल बाया	५१	भानुतुल-कमल रवि	६८
दव दूगरो कौन नात को दयानु	२५०	भायनाकार भैरव	४७
देह बर लता बर मकर बर भार	४३	भक्त-भूति भाग्य-जान	७७
देहि अन्नब करबस	११६	मा इतार्द मा तनु का	१२६
देहि मंगल निर दग	११४	मन पतिनेहू अन्नर का	३०६
मायब हा निर्मि निम मरया	१६२	मा मायब का महु तिहारहि	१५६
माद लालाय मुनि	२८६	मन मर मानहि निम मरा	५०६
माग गौं बोन बिना बं गुनायी	३२४	माग्य मा का एह भक्ति	३५६
माग, कृत हा का दय	३६३	माग्य राम रामारयो धाय गार्द	१७२
माग न दे है कतिब,	४०५	मायबतु ! मा-गम माग न काऊ	१६३
माग राम रामारदो रिम मर	३५१	मायब सुब न द्रवतु कति मग	१८७
मायब कायब कायब मर का	२७६	मायब मे गुमात जग माह	१८६
मायब कायब रवि	३०८	मायब ! मायब का मर	१६०
मायब धौर काय मर मायब	३७१	मायब धमि शूरारि मर माया	१६१

मारुति मन, रवि भरत की	४२४	राम सनेही सा	२१३
मेरी न बन बनाये मेरे	४०१	रामचन्द्र । रघुनायक ।	२३०
मेर रावरियै गति ह रघुपति	२४६	राम राम, राम राम, राम राम, जपत	२०७
मेरे कहा सुनि पुनि भाव	४०५	राम जपु जीह । जानि प्रीतिभा	३७६
मेरो भनो कियो राम	१४१	राम । रावरो सुभाव गुन	३८६
मेरो मन हरिजू । हठ न तज	१६०	राम ! राखिय सरन	३६०
म केहि कहौ विपति प्रति भारी	२०३	राम रावरो नाम मरा	३६२
मैं जानी हरि-पद रति नाही	२०५	राम, रावरो नाम साधु-सुरतह	३६३
म तोहि अब जान्यो ससार	२६४	राम ! कबहु प्रिय लागिही	४१२
मैं हरि पतिष्ठ-पावन सुने	२५७	राम राय ! विनु रावर	८२२
म हरि, साधन करइ न जानी	१६६	रावरो सुघारी जो विगारो	३६८
माह-जानित मल लाग	१५३	रचिर रसना तू राम राम	२०७
मोह तम-सरनि,		लाज न भावत दास कहावत	२६०
हरिहर सकर सरन	४५	लाभ कहा मानुष-तनु पाये	३१२
मोहि मूढ मन बहुत बिगायो	७६	साल लाडिम लखन हित	७८
यह बिनसी रघुबीर गुसाइ	१७६	लोक बेदहैं विदित बात	३७७
यहै जानि चरनि चित लाया	३७३	विस्वास एव राम नाम को	२५१
याहि तैं म हरि । ग्यान गवाया	३७५	बीर महा भवराधिय	१८२
यो मन कबहू तुमहि न लाग्यो	२७०	श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन	६०
रघुपति भगति करत कठिनार्द्र	२६६	श्रीरघुबीर की यह बानि	३३४
रघुपति विपति दवन	३३०	श्रीहरि गुरु पदकमल भजहु	३१५
रघुवर रावरि यह बडाई	२६३	सकल-सुख-कन्द	१२२
रघुवरहि कबहुँ मन लागिह ?	३४६	सकल सौभाग्य प्रद	१०६
राख्या राम सुत्वामा सा	२७८	सकुचत हौं प्रति राम	२
राम राम रहु राम राम रहु	१३२	सकर सप्रद सज्जनान-दद	४६
राम जपु, राम जपु राम जपु वावर	१३४	सग राम जपु, राम जपु	६१
राम नाम जपु जिय	१२५	स-स-ताप हर	११०
राम राम राम जीह जौनी	१३६	सब साच बिमोचन चित्रकट	६२
राम मलाई आपनी	२४७	समरथ सुघन समीर के	७४
रामभद्र । मोहि आपना	२४३	सहज सनही राम सों	२६७
राम प्राति की रीति	२८८	साहिब न्यास भय	४००
राम-नाम के जप जाइ	२८६	सिव सिव, होइ प्रसन्न कइ दाया	४४
राम कहत चनु राम कहतु चलु	२६५	सुन मन मूढ । सिखावन मेरो	११८
राम को गुलाम	१४६	सुनि सोतापति-धील-सुभाउ	१७२
राम से प्रीतम की प्रीति रहित	२०६	सुनहु राम रघुबीर गुसा	२३४









